इस ग्रथके कर्त्ताका सक्षिप्त जीवन चरित्र

मारवाड देशके मेडते शहरके रहीस, मदरमार्गी वडे साथ ओस-
कॉसटीया गोतके, भाइ कस्तुरचंदजी व्यापार निमित्ते मालवाके
ग्राममें आ रहेथे, उनका अकस्मात आयुष्य पूर्ण होनेसे उनकी
नी जवारावाइने वैराग्य पाकर ४ पुत्रोंको छोड साधमार्गी जैन
दीक्षा ली और १८ वर्ष तक संयम पाला मातापिता व पत्नी के
गकी उदासी से शेठ केवलचंदजी भोपाल शहरमें आ रहे, और
के धर्मानुसार मदीमार्गीयोंके पच प्रतिक्रमण, नव स्मरण, पूजा
कंठाग्र किये उस वक्त श्री कुनरजी ऋषिजी महाराज भोपाल
उनका व्याख्यान सुननेको भाइ फूलचंदजी वाडीवाल केवलचं
को जवरदस्तीसे ले गये महाराजश्रीने सुयग डागजी सूत्रके च-
उद्देशकी दशमी गाथाका अर्थ समझाया जिससे उनको व्याख्यान
देख सूननेकी इच्छा हुइ शने शने प्रतिक्रमण पच्चीस वोलका
इत्यादि अभ्यास करत २ दिक्षा लेनेका भाव हा गया परंतु भो
की कर्मके जोरसे उनक मित्रोंने जवरदस्तीसे हुलासावाइके साथ
लग्न कर दिया दो पुत्रको छोड वो भी आयुष्य पूर्ण कर गइ
पालनार्थ, सम्बन्धीयोंकी प्रेरणासे तीसरी वक्त व्याव करनेके लिये
ड जाते, रस्तमें पूज्य श्री उदेमागरजी महाराजके दर्शन करन-
तलाम उतर, वहा बहुत शास्त्रके जाण, भर यूवानीमें सजोड शी
धारन करनेवाले भाइ कस्तूरचदजी लसोड केवलचदजीको मिले
नका कहने लगे कि, 'विषका प्याला सहज ही गिरगया, तो
उसको भरनेको क्यों तैयार होते हो ?' यों कहते उनको पूज्य
पास ले गये पूज्यश्रीने कहा 'एक वक्त वैरागी बने थे, अब
(चर) वननेको तैयार हुये क्या ?' इत्यादि वचनों सुण केवल
ब्रम्हचार्यव्रत धारण कर भोपाल गये दिक्षा लेनेका विचार स्व

जनोंको दर्शाया परंतु आज्ञा नहीं मिलनेसे एक मास तक भिक्षाचारी कर आज्ञा सपादन करी, और १९४३ चेत सुदी ५ के रोज श्री पुनाऋषिजी महाराज के पास दिक्षा ले पूज्य श्री खुबाऋषिजी महाराज के शिष्य हूवे और ज्ञान अभ्यास कर तपश्चर्या करनी सुरू करी १,२,३,४,५,६,७,८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५,१६,१७,१८,१९,२०,२१,३०,३१,४१,५१,६१,६३,७१,८१,८४,९१,१०१,१११,१२१, यह तपश्चर्या तो छठके आधारसे करी, और इसके सिवाय छ- महीनेतक एकान्तर उपवास वगैरा बहूत तप किया तथा पूर्व, पंज्जाव, मालवा, गुजरात् मेवाड, मारवाड, दक्षिण, वगैरा बहुत देश स्पर्शे

श्री केवलचदजी के ज्येष्ट पूत्र अमोलखचद पिताकी साथ ही दिक्षा लेनेको तैयार हुवा, परंतु बाल्वयके सबबसे स्वजनोने आज्ञा नहीं दी, और मासालमें पहुंचा दिया एकदा कवीवर श्री तिलोकऋषिजी महाराज के पाटवी शिष्य पंडित श्री रत्नऋषिजी महाराज और तपस्वी श्री केवलऋपिजी महाराज इच्छावर ग्राम पधारे वहासे दो कोश खेडी ग्राममें मामाके यहा अमोलखचद थे वा पिताके दर्शनार्थ आये दर्शन से वैराग्य पुन जागृत हुआ, और १० वर्प जितनी छोटी वयमें दीक्षा धारण कर ली (सवत् १९४४ फाल्गुन वदी २) श्री अमोलख ऋषि श्री केवलऋपिजीके शिष्य होने लगे, परतु उनोंने कहा कि मेरा अभी शिष्य करनेका इरादा नहीं है तव पूज्य श्री खुवाऋपिजी महाराज के पास ले गये, पूज्य श्रीने अमोलख ऋषि जीको अपने ज्येष्ट शिष्य श्री चेना ऋपिजी महाराज के शिष्य बनाये थोड ही कालमें श्री चेनाऋपिजी और श्री खुवा ऋपिजीका स्वर्गवास होनसे, श्री अमोलख ऋपिजीने श्री केवल ऋपिजीके साथ तीन वर्प विहार किया, फिर श्री केवल ऋपिजी एकल विहारी हुवे, और श्री रत्न ऋपिजी दूर ग्राम रहे, इस लिय अमोलख ऋपिजी दो वर्प तक श्री

मेरू ऋषिजी के साथ रहे, उस वक्त (सं १९४८ फाल्गुनमें) ओस-वाल ज्ञातीके पन्नालाल नामके ग्रहस्थने १८ वर्ष की उम्मर म दिक्षा धारन कर अमोलख ऋषिजी के चेले हुवे, उनको साथ ले जावरा ग्राममें आये, वहांभी कृपारामजी महाराजके शिष्य श्री रुपचदजी गुरुके वियोगसे दु खी हो रहे थे उनको सतोष उपजाने पन्ना ऋषिजी का समर्पण किये, देखिये एक यह भी उदार ता ? पीछे श्री रत्नऋषिजीका मिलाप होनेस उनके साथ विचरे इन महापुर्षने उनको योग्य जान, बहुत खतसे शास्त्राभ्यास कराया, जिसके प्रसादसे गद्य—पद्यमें कितनेक ग्रंथ बनाये और बना रहे है तथा अनेक स्वमति—परमतियोंको सत्य धर्ममें द्रढ किये और कर रहे है

श्री अमोलख ऋषिजी के, संवत १९५६ में मोतीऋषिजी नामके एक शिष्य हूए, कि जिनोंने बंबइ में काल किया

यह " जैन तत्व प्रकाश " ग्रंथ संवत् १९६० में घोडनदी (दक्षिण) में चातुर्यमास रह कर अनेक शास्त्र और ग्रंथोके आधारसे शीर्फ तीन महीने में लिख दिया उस वक्त (संवत् १९६०) श्री केवल ऋषीजी महाराज ठा २ का चातुर्यमास अहमदनगर था, चातुर्यमास उतरे बाद चार ही ठाणे मिल बबइ पधारे मुनि श्री की शुद्ध क्रिया और अच्छे उपदेशसे प्रसन्न हो बबाइ सघने महाराजको हनुमान गलीमें चातुर्यमास कराया यहां " रत्न चिंतामनी मित्र मंडल " की स्थापना हुइ, और जैन शाला खोली गइ, उक्त मंडलकी तर्फसे महाराज श्री अमोलख ऋषिजी कृत " जैनामुल्य सुधा " नामका पद्यबध ग्रंथ छपाया

इस वख्त (१९६१) हैदाबादके साधुमार्गी श्रावक पन्ना

ल्लाजी कीमती बंबइ आये और महाराजश्रीको विनंती करने लगे कि हैद्राबादमें "जैनीयोंके घर तो बहुत है, परन्तु कोइ मुनिराज पधारे नहीं है जो आप पधारेंगे तो नया क्षेत्र खुलेगा और बहुत ही उपकार होगा" महाराजश्रीको भी यह बात पसद आइ

चातुर्मसेक बाद बबइसे विहार कर इगतपुरी पधारे वहांके उदार प्रमाणी भाइ मूलचदजीटंटीया ने अति आग्रह कर महाराजको चातुर्यमास कराया और श्री अमोलख ऋषिजी कृत "धर्मतत्त्व सग्रह" ग्रंथ छपाकर १००० प्रतों मुफतमें बांट दिया घोटी गामके श्रावकोने भी यह पुस्तककी ५०० प्रतो अपने खर्चसे मुफत बाटी

चातुर्मास बाद वेजापुर आये वहाके भाइ भीखुजी संचेतीने 'धर्मतत्त्व सग्रह' की गुजराती आवृति १२००प्रतों छपाकर सघको अर्पण करी वहांसे औरगाबाद जाल्ने पधारे वहा आगे विहार करने लगे तब श्रावकोने कहा की आगे कोइ साधू गये नहीं है रस्ता विकट है, परन्तु ये शूरवीर मुनिवरों क्षुधा तृषादि अनेक परिसह सहन करते आगे के आगे ही विहार करते गये, और हैद्राबाद आपहुचे, चारकमानमें लालानेतरामजी रामनारायणजीके दिया हुवे मकान में मुकाम किया और सेंकडो लोगोको द्रढ जैनी बनाये

सेक्रेटरी,
ज्ञानमयी खाता

प्रथमावृती प्रसिद्ध कर्त्ताका संक्षिप्त जिवन चरित्र

दक्षिण हैद्राबादमें दिल्ली जिल्लेके कानोड (महेंद्रगड) से आकर निवास करनेवाले अग्रवाल वंशमें शिरोमणि धर्म-न्याय-विनय दया-क्षमा आदि गुणों युक्त लालाजी सहेब मेतरामजी के पुत्र रामनारायण जीका जन्म संवत् १८८८ पोष वद ९ का हुवा, और उनके पुत्र सुखदेव शाहजीका जन्म संवत् १९२० पोष सुद ११ का हुवा और उनके पुत्र ज्वालाप्रसादजीका जन्म संवत् १९१० के श्रावण वदी १ का हुवा उक्त तीनो लालाजीने सनातन जैन धर्मके पुज्य श्री मनोहरदासजी महारा जकी सम्प्रदायके पूज्य श्री मंगलसेनजी स्वामी पास सम्यक्त्व धारण करी है परन्तु यहां हैद्राबादमें आये पीछे साधुदर्शन न होनेसे जैन म दिरमें जाते थे और हजारो रुपे खर्चकर मनहर मन्दिर भी यहा बनाया है तथा प्रभावना स्वामीवत्सल आदि कार्योंमें अच्छी मदद करते हैं; यहांके जौहरी वर्गमें अग्रेसर है और राज्यदरबारमें लाखो रुपेका लेन देन करते है

लालाजीके तर्फसे एक दानशाला हमेश चालु है और भी सदाव्रत अनाथोंकी सहायता वगैरा पुण्य कार्य अछी तरह करते हैं सांसारिक प्रसगोंमें भी लक्खो रुपेका व्यय उन्होने किया है ऐसे श्रीमंत होने पर भी बिलकुल अभिमानी नहीं है

महाराजश्री अमोलख ऋषिजीका उपदेश श्रवण करनेसे लालाजीको ज्ञानका ज्यादा प्रेम उत्पन्न हुवा, और ज्ञानाभ्यास कर तन-मन-धनसे जैन धर्म दीपाया दीपमालिकाके दूसरे दिन मुनि श्री अमोलख ऋषिने संपूर्ण उत्तराध्ययन सूत्रकी सज्झाय प्रपदाके बीचमें सुनाइ और ज्ञानवृद्धि के लाभका वर्णन सुनाया जिसको सुन लालाजीने ज्ञानभक्तिकी इच्छामे इस जैन तत्त्व प्रकाश ' ग्रंथकी १ प्रत और केवलानंद छंदावली की २१०० प्रत छपवाकर श्री संघको अर्पण करी ११० प्रतोंमेंसे ७० प्रतों ' जैन समाचार ' साप्ताहिक पत्रके ग्राहकोंको भेट देनेके लिये अह मदावाद भेजनेका और ९ प्रतों म य स्थलोंके श्री संघको भेजनेका ठराव किया लालाजी साहबकी धर्मज्ञान फैलावकी ऐसी उत्कंठा हर एक श्रीमंतोंको अनुकरणीय है ऐसे उदार कृत्योंसे धर्म दीपता है ज्ञानके फैलावसे अपने भी ज्ञानावरणीय कर्मोका नाश होता है और पढनेवालेकों भी लाभ पहुचता है

द्वितीयावृत्ती प्रसिद्ध कर्ताका संक्षिप्त जीवन चरित्र

१ दक्षिण सिकन्द्राबाद (हैद्राबाद) में मारवाडमें देश जेतारण पट्टीके मोहरा ग्रामसे आकर निवास करनेवाले ओसवाल वशमें मुखिये सेठ सागर मलजी गिरधारीलालजी सांवला (जन्म संवत् १९१० कार्तिक) यह भाइजी बचपनसे ही साधू मार्गी जैन धर्म के श्रद्धालु हैं इनो नो पुज्य श्री जयमलजी महाराज की सम्प्रदायके मुनिराजके पास सामा यिक प्रतिक्रमण आदि जैन धर्मका ज्ञान कठाग्र किया है और नित्य सामायिक व्रत आदि धर्म करणी कर यथा शक्ति लाभ लेते है और इनकी सिकन्द्राबाद बिंगलोर वगैरा स्थानमें दूकानो है लाखो रुपेका लेन देन होता है, यह प्राप्त लक्ष्मीका जीव दया पिंजरा पोल परोपकार व गैरा कार्यमें यथा शक्ति सदा व्यय करते है, सरलता नम्रता आदि अ नेक गुण सपन्न है

१ दक्षिण सिन्कद्राबाद (हैद्राबाद) मे मारवाड देश जेतारण पट्टीके पिरांदिया ग्राम से आकर निवास करने वाले ओसवाल वशमें मुखिय सेठ सह थमलजी जुगराजजी अलीजात [जन्म १९४८ श्रावण] यह भाइ इत्नी छोटी उम्मरमे भी साधुमार्गी जैन धर्म के बडे प्रेमी है सामा यिकादि व्रत और त्याग पचखाण यथाशक्ति करते है और बेपारी व र्गमें श्रेष्ट है प्राप्त लक्ष्मीका सद्व्यय जीव दया परोपकार आदि कार्यमें सदा करते है और नम्रता आदि अनेक गुण सपन्न है,

यह दोनो सद्‌गृहस्थो हदराबाद में विराजत महाराज श्रीके दर्शनार्थ पधारे और ज्ञान वृद्धी का खाता व पुस्तको का सग्रह और प्रसार होता देख इनका भी उत्साह जगा और " जैन तत्त्व प्रकाश बडे " ग्रथकी दू सरी आवृत्ति की १००० प्रत अपने खरच से छपाकर सर्व सघको अमू- ल्य भेट दी जो महा लाभ उपार्जन किया है सो यथा पर सराहनीय है

ग्रंथ कर्ता को तो क्रोडो धन्यवाद है ही, परन्तु जो अपने द्रव्य का सदव्यय कर ऐसे १ बडे ग्रथभी अपने स्वधर्मीयों को अमूल्य ज्ञानका लाभ देते है वोभी धन्य वाद के पात्र हैं यह अनुकरण अन्य विद्वान मु निवरो और श्रीमत श्रावको कर यथा शक्ति ज्ञानका प्रसार जरूरही करना चाहिये

सेक्रेटरी,

ज्ञानवृद्धी खाता

द्वितीयावृती की प्रस्तावना

पुराण मित्येव न साधु मर्व । नचापि काव्य नव मित्य वर्ध ॥
सन्त परिक्षा न्यन्तरद्भजन्ते । मुढ परपत्यनेय बुद्धि ॥ १ ॥

अर्वाचीन (वर्तमान) कालमें बहुत से लोक प्राचीन (जूने) कालकी बातों पर विशेष भरोसा रखते हुये जो नवीन उत्पन्न हुइ मालूम पडती है उसको मान्य कम करते हैं, उनको कु-मार्ग में जाते रोक सत्य-न्याय मार्ग में प्रवृती कराने की उपकारिक बुद्धीसे वरोक्त श्लोकके कर्ता सुचित करते हैं कि 'प्राचीन कालकी जुनी बातें कुछ सर्व सत्य नहीं होती है, और अर्वाचीन कालमें उत्पन्न हुइ दिखती बातें कुछ सर्व असत्य-झूटी नहीं होती है, परन्तु जो सद्बुद्धीसे सत्शास्त्र द्वारा सत्य पक्ष धारन कर परिक्षा के नन्तर निर्णय करनेसे सार-सत्य भूत मालुम पड़े उसेही सन्त पुरुष भजते हैं—स्वीकार करते हैं और जो मुढात्म—मूर्ख जन होते हैं वो निर्णय करनेकी दरकार नहीं रखते, सत्यासत्य का कुछ निर्णय नहीं करते, रुढी मार्गानुसार-देखादेखी बाप दादा गये उस ही रस्ते से चले जाते हैं हट्ट ग्राही बन गधेव पुंछ ग्रहने वाले की माफिक लाते खाते हुवे भी असत्य पक्ष का त्याग नहीं करते हैं' यह सत्पुरुष के सद्बोध को ग्रहण कर धर्मेच्छुओं को चाहिये कि यह जूना है और यह नवा है इस झगेड़ में नहीं फसते सद्बुद्धी द्वारा निर्णयात्मक बन सत्य का स्वीकार और असत्य का त्याग कर सुखी बने

अब अपन जो शास्त्रके न्यायसे विचार करके देखते है तो इस जगत्में ऐसा कोइ भी धर्म व कोइ भी पदार्थ नहीं है कि जो नवा उत्पन्न होवे, क्यों कि शास्त्रका फरमान है कि इस जक्त मे जितने जीव और जितने जड़—अजीव के प्रमाणुओं है उतने ही सदा रहेंगे वो कमी व ज्यादा कदापि हुवे नहीं, और होनेके भी नहीं। जो प्रत्यक्षमें अपने का घट पटादि पदार्थ उत्पन्न होते और नाश होते दिखते हैं

सो फक्त पर्याय का तो पलटा होता है, परन्तु वस्तूका कदापि नाश नहीं होता है, जैसे घडा का नाश होता है, परन्तु मट्टीका नहीं जो मट्टी एक वक्त घडे के रुप में थी वाही मट्टी किसी प्रयोगसे घडेका रुप पलटकर किसी अन्य प्रयोगसे सरावलेका रुप धारन करलेती है तैसे ही इस जगत्में धर्म और अधर्म के बाबतमें भी समजना चाहिये, अर्थात् सत्य धर्म भी अनादीसे और असत्य धर्म-पाखन्ड भी अनादी से ही है, क्यों की एकेक का प्रति पक्षी हुवे विना दूसरे की पहिचान होती ही नहीं है, जैसे रात्री और दिन इस लिये जो प्राचीन को मान ने वाले हैं उनके त्यागने जोग कुछ भी नहीं रहा ! परन्तू सत्पुरुषोंका यह कर्तव्य नहीं है, सत्पुरुष तो वरोक्त श्लोकमें कहे मुजब सद्बुद्धि और सत्शास्त्र द्वारा निर्णयात्मक बन असत्य, अधर्मका त्याग कर, सत्य धर्मको ही ग्रहण करेंगे

इस वक्त प्राय सभी धर्मके नेताओं अपने २ धर्म को अनादी सिद्ध करते हैं जो अपने ध्यानमें जचा सो अन्य के ध्यान में जचाने अनेक स्वमत परमतके शास्त्रसे, तर्क वितर्क बुद्धिसे, दाखले द्रष्टांतोंसे सिद्ध करने प्रयास करनेमें कच्चास नहीं रखते हैं ऐसे प्रत्येक मतान्तरियोंका अलग २ प्ररुपना—बोध होनेसे, बहुतसे अल्पज्ञ मुमुक्षुओं—धर्मार्थीयों बडे घोटाले—गडबडमें पडगये, सत्यासत्यका निर्णय करना मुशकिल होगया उन सत्य—धर्माभिलाषियोंके घोटाले—गडबड का निकन्द करने, और सत्यासत्य—धर्माधर्मका निर्णय मुमुक्षुओं अपनी प्राप्त सद्बुद्धीसे अपने हृदय में ही कर सकें इस हेतुसे ही मानो इस 'जैन तत्वप्रकाश' ग्रन्थ के कर्ताने इस की रचना रची हो ऐसा मालूम होता है हम कबूल करते हैं कि ऐसे बल्के इस से अत्युत्तम केइ ग्रंथ इस जमानेमें भूत कालमें प्रसिद्ध हो चुके हैं तो भी कपाले २ बुद्धी अलग २ होती है, और जो सत्य जिनको मालुम पडे उसको प्रसिद्धता में लाना यह प्राचीन कालसे परमार्थिक पुरुषोंका रिवाज चला आता है तदनुसारही इस ग्रन्थ को प्रसिद्ध किया गया है परन्तु अन्य कितनेक ग्रन्थ कर्ताओं की तरह इस ग्रन्थ कर्ताने आग्रह नहीं किया है

कि मेरी मानताको कबुल करोही करो ग्रन्थ कर्ताने तो ग्रन्थमें स्थान २ अनेक दाखले दलीलों के साथ निर्णय कर अपनी श्रद्धा मुमुक्षुओं के सन्मुख रजु करी है उसे मान्य करना या नहीं करना यह पाठकोका इक्त्यार है हमने बहुदा इस ग्रन्थ के कर्ताका उपदेश द्वारा श्रवण किया है कि—अहो श्रोता गणों ! में कहु सो सब सचा है ऐसी अन्ध श्रद्धापर दोरनेका मेरा बिलकुल आग्रह नहीं है परन्तु में जो बोध तुम्हारे सन्मुख रजु करता हुं कि,, ‘ विषय और कषायका जिनों ने सर्वथा नाश किया हो वोही देव हैं और विषय कषायकी प्रवृतीयोंका त्याग कर अंत करण से निर्वृती करने जो उद्यम वत हुवे हो सो गुरु हैं और जिन २ कामोंसे विषय कषाय का नाश होता हो वोही धर्म है यह तीनों ही तत्व जहा जिस महजबमें द्रष्टी आवे वो ही संसारसे पार होनेका मार्ग मुजे निश्चय से मालुम होता है जो तुम्हारा हृदय इस बोधको सत्य जानता हो तो ही मान्य करो दे खिये पाठ कों ! सक्षेप में निरापक्षतासे कैसा तत्व !!

और भी एक सूचनाकी जाती है कि—इस ग्रन्थका नाम ‘जैन तत्वप्रकाश ’ पढकर जैन सिवाय अन्य मतावलम्बियोंको चोंक कर इस के पठन करने का त्याग नहीं करना चाहिये क्यों कि इस ग्रन्थकी रचना कुछ एकही जैन मतके शास्त्रको अवलम्ब कर नहीं की गइ है इसमें हरेक मुख्य बात सिद्ध करने जैन सिवाय अन्य अनेक मतके धर्मशास्त्रोंके दाखले भी रजु कर जिसपर अनेक तर्कवितर्क के साथ स्याद्वादका आवलम्बनसे संवाद कर सत्यार्थ सिद्ध किया है और विशेष खूबी यह है कि मतान्तरोंका निर्णय करनेमें भाषाकी ऐसी सर लता और मधुरता वापरी है कि जो किसी भी मतान्तर का सत्पुरुष निरापक्ष बुद्धिसे पठन करेगा तो बिलकुल हृदय दु खित न होते असर कर्ता ही होगा इस लिये सर्व मतान्तरीयोंको यह ग्रन्थ अवश्य पठन मनन करने लायक है और निर्णय करते जो सत्य मालुम होगा तो सुखार्थी आत्मा आपही स्वीकार करेगा

प्रथम आवृती प्रसिद्ध करने हमने इस ग्रन्थ की इतनी प्रसशा

नही करिथी इसका कारण यह है कि इस श्रेष्टी में अनेक विद्वानों धर्म रत्न हैं, वो देखे इस ग्रन्थ का पठन कर कर का अभि प्राय जाहिरकरते हैं [एकेकके विरूध पुस्त कें हेन्ड विल छपाने का रिवाज अवी अधिकचालूहे] इस लिये प्रथम अवृती की सक्षिप्त प्रस्तावनाके साथ २००० प्रतें छपाकर अमुल्य ❀ प्रसार किया था जिससे इसके पठन मनन का अनेक मतान्तरी यों को लाभ हुवा, और अत करण में परम हर्षित हो जैन के तीनों (साधूमार्गी, मन्दिरमार्गी, दिगम्बर) मतान्तरके अनेक साधु श्रावकों विद्वानोंके तरफमे, और शिव विष्णव—राम स्नेही, रामानन्दी, आदि अनेक हिन्दू सम्प्रदायों के सिवाय मोमीनों भाइयों के भी अनेक पर सशा पत्र (सार्टिफिकेट) हिन्दी, गुजराती, मारवाडी, मराठी, उरदू, इंग्लिश वगैरा अनेक लिपीयोंमें आफ्रिका नैरोबी वगैरा जैसे दूर दूर देशोंसे सेंकडो पत्र आये, और अभीतक आ रहे हैं कितनेक अखवारोंमे भी परसंशा छपी थी, वो प्राय २००० प्रतों ही थोडे अरसे में सव खपगइ और सेंकडो याचना (मागणी) पत्रे आते ही रहे तव जाना गया कि ऐस ग्रन्थ की इस जमानेमें बहूतही आवश्यकता—है परन्तु इतना वडा ग्रन्थ वारम्वार छपना और अमूल्य दनेका साहस करना यह सहज नहिं यह विचार हमारे हृदयमें रमण कर रहा था कि उस वक्त यहा वृद्धवस्था के कारण से विराजते तपश्वीजी श्री केवल ऋषिजी महाराज और उन के सेवामें रहे वाल ब्रह्मचारी श्री अमोलख ऋषिजी महाराज (इस ग्रन्थ आदि के रचिता) के दर्शनार्थ यहासे नजिकमें वसता हुवा, सिकन्दराबाद के निवासी उदार प्रणामी धर्मेन्दु भाइजी जुगराजजी सहश्र मलजी और उदार प्रणामी धर्मात्मा भाइजी सागरमलजी गिरधारीलालजी से महाराज श्री के दर्शनार्थ आय और महाराज श्री का सद् वोध सुन उनका भी कहना हुवा कि हमारा इरादा ज्ञान खातेमें कुछ द्रव्य लगानेका है, महाराजने फरमाया कि जैन तत्वप्रकाशकी

❀ १० प्रता जैन समाचार अखवार के मालकने अपने नामसे छापीथी उसमसे कितनेके मुल्य लेकर भी दीगइ है

दूसरी अवृती प्रसिद्ध होनेसे वडा उपकार होने जैसा दिखता है इन दानों सद्ग्रस्थोंने जैन तत्वप्रकाशकी दूसरी अव्रतीका १००० पुस्तकों का सर्व खरच देना स्विकार किया, जिससे हमारेको वडी खुशी हासल हुई, और दूसरी आव्रती में विशेप शुद्धता करने के लिये उसी वक्त जाहीरात छपवाइ की—जैन तत्वप्रकाशमें किसीको किसी प्रकार की विरूद्धता या अशुद्धी द्रष्टीगत विचारगत हुइ हो तो एक महिनेके अन्दर हमको खवर दीजिये जो महाशय विद्वानों सूचना करेंगे उसे उपकार सहित स्विकार योग्य सुधारा कर एक प्रत उनको भेट भेजेंगे ऐसी ५०० जाहिरात छपवाकर प्रसिद्ध२ सर्व,स्थान भेजी, परन्तु प्राय • किसीने भी कुछ अशुद्धि व अयोग्य लेख बद्दल उत्तर नहीं दिया तब जाना गया कि यह ग्रन्थ सर्व मान्य निर्दोष है फिर प्रथमावृती ही मुजब कुछ शुद्धी व्रद्धी करके दुसरी आवृती छपवानी सुरु करी

ऐसे सद्ज्ञान की वृद्धी जितनी हो उतनाही अधिक लाभका कारण जान वरोक्त ५०० जाहीरातों के पृष्ट पर ऐसा जाहिर किया गया था कि १००० पृष्ठ पक्के पूठे वाला जैन तत्वप्रकाश नामक ग्रन्थ की जो १०० प्रत लेवेगा उनको (१००) रुपमें दी जायगी और प्रसिद्ध कर्ता उनपर उनका नाम छापा जावेगा

ऐसी जाहिरात सहर्प वधाकर यहा (हैद्राबाद) के तथा सिकद्राबादके सद्ग्रहस्थोंने ५०० प्रतो लेना स्वीकार किया, और इन सिवाय, घोडनदी (पुणे) के श्रावकोंने ३२५ प्रतों तथा भुसावल के श्रावकोंने १०० प्रतों यों सब २००० प्रतों के लेवाल हुवे [जिनोंके नाम आगे पुस्तकोंके लिष्ट में अलग २ छापे गये हैं] इस लिये २००० प्रतो छपवाकर अमुल्य प्रसार किया जाता है

इस स्थान प्राय शब्द लगाने का यह प्रयोजन है कि– पंजाब (पंजाब)देश पावन कर्ता परम पुज्य श्री अमरसिंहजी माहराज के सम्प्रदाय के गुण रत्नागर पूज्य श्री सोहनलालजी माहाराज ने कितनीक अशुद्धियो दर्शाइ थी सो सभार स्विकार कर योग्य सुधारा किया है जी

और प्रथम अवृती करते प्रथम खन्डके प्रथम प्रकरणमें ७२० तीर्थंकरोंके नाम, २८ तीर्थंकरके परिवार का यन्त्र, दूसरे प्रकरणमें परमाधामी कर्त वेदना का विस्तार, कालचक्र, ७२ और ६४ कला, १८लिपि, ३६ कोम, चक्र वृती यलवेव वासुदेव कायंत्र, सिद्ध के ८ गुण, तीसरे प्रकरण में १६ वचन, तपस्याके १२ यत्र, भाषाके ४२भेद, ८ कर्म बन्धके १८० कारण चौथे प्रकरण में-शिष्यके ५ अगुण ८ गुण, अविनीतके १५ अवगुण, १४ वगुण, धर्म तत्व सग्रहमें सेइग्रेजी फक्रे,पचमें प्रकरण मेंसाधू की ८४ औपमा, ॥ दूसर खन्डके प्रथम प्रकरण में निगोदका वरणव, उपदेशी श्लोक, धम के कशछेद श्रोताके ८ गुण, १४ प्रकारके श्रोता दूसरे प्रकरण मेंसप्तभङ्गी, मतिज्ञानके३३६ भेद,पचइन्द्रियोंकी विषय, अवधी ज्ञान मन पर्यव ज्ञान का खुलासा, छे लेशा का यत्र तीसरे प्रकरण में पाखन्डीके लक्षण, धर्म यज्ञ करनेकी रीति इश्वरवादीकी चर्चा, मुह पती बधनेके दाखले, चौथे प्रकरण में उपदेशी श्लोक सवैया, पुराणका दाखला, पांचमें प्रकरण में ८ प्रकारके श्रावक, दुर्व्यसन, तीन जनोंसे उरण न होवे सो, श्रावक के ११ विश्वादया, मैथुनसे अनर्थ उपदेशी श्लोक सवैय छट्ट प्रकरण में १७ प्रकारका मरण, श्लपणाका हेतू श्लोक आदि यों सब प्रकरणोंमें वृद्धी की गइ प्रथमावृती से दूसरी अवृतीमें सुम्मोर ७–८ फारम जितना सम्मास अधिक वढाया गया हैं

☞ हमारी सर्व धर्मार्थियोंसे नम्र विनंती हे कि इस अत्युत्तम ज्ञानसागर तत्व आगर सन्मार्ग दर्शक ग्रन्थका यतना युक्त स्थिरऔर शुद्धचित्त से पठन श्रवन निध्यासन करके गुणोंही गुणोंके अनुरागी होना, दोषोंको छोड दना, हितकारक वचनोंका हृदय कागंभ सग्रह कर गुनी जन वनना इम भवमें और आगे, परमानन्दी परम सुखीवनना ?

विज्ञपु किमधिक

सुभेच्छक

सेक्रेटरी–ज्ञानवृद्धी खाता

दक्षिण हैद्राबाद

श्रीवीर सं २४४८

विक्रमाब्द १९६८

मधस्मरी पर्व पत्र

☞ बाल ब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलखऋषिजी रचित पुस्तके ☜

आज तक प्रसिद्ध मे आइ उनके और प्रसिद्ध कर्ताके

नाम व प्रतों

जैनामुल्य सुधा प्रत १०००

इसमें छंद स्तवन लावणी सवैया व मराठी भाषा में कविता वगैरा १०१ विषय है डेमी सोलह पेजी १११ पृष्टकी पुस्तक यह जैन स्थानक वासी रत्न चिन्तामणी मित्र मंडल कि जो उक्त महाराज के सद्बोध से स्थापन हुवा उनने प्रसिद्ध करी

२ धर्म तत्व संग्रह प्रत १५००

इसमें क्षमा निर्लोभता आदि १० धर्मो के तत्वका विस्तारसे बयान किया है, यह डेमी ८ पेजी १८२ पृष्टकी पुस्तक इगतपूरी (नाशीक) निवासी उदार प्रणामी भाइ मूलचंदजी हजारीमलजी टांटीयाकी तरफसे १००० प्रत और घोटी (नाशीक) निवासी भाइ सिरदारमलजी पूनमचंदजी तरफसे ५०० प्रत प्रसिद्ध करी

३ धर्म तत्व संग्रह की गुजराथी अवृती प्रत १२००

यह रायल ११ पेजी ११ पृष्टकी वैजपुर (औरंगाबाद) निवासी भाइ भीकमचंदजी वच्छराजी सचेती की तरफसे प्रसिद्ध करी

४ नित्य स्मरण प्रत २०००

इसमे सामायिक अनुपूर्वी साधुवंदना स्तवन हितशिक्षाके बोल वगैरा है, यह रायल सोल्ह पेजी ११ पृष्ट की इगतपूरी निवासी लालचंदजी हम्वीरमलजी टांटीयाने प्रसिद्ध करी

५ जैन तत्वप्रकाश प्रत २०००

इसमें जैन धमके मुख्य २ तत्वोंका अनेक शास्त्र व ग्रन्थोका दोहन कर मानुसमुद्रका कुजमे समावेश कर दिया है, डेमी ८ पजी ९३१ पृष्ट की इसे दक्षिण हैद्राबाद निवासी जैन संघके आधिपती श्रीमन्त उदार प्रणामी अनेक उत्तम गुण संपन्न लालाजी नेतरामजी रामनारायणजी सुख्देव सहाजी ज्वालाप्रसादजीकी तरफसे ११०० प्रत और घोडनदीवाले

धर्म धुरधर उदार प्रणामी कुदनमलजी घूमरमलजी थापणा, इगतपुरीवाल मूलचंदजी हजारीमलजी दांटिया, घारोडी (पुणे) वाले तेजमलजी भीखमदासजी की तरफसे ३०० प्रत और अमदावाद जैन समाचार आफिसकी तरफसे १ • प्रत प्रसिद्ध करी

६ तत्त्व निर्णय प्रत २०००

इसमें इश्वरस्वादीकी चरचा बडी असरकारक है, डेमी ८ पेजी ११ पृष्ठ की पुस्तक भाइ रामलालजी पन्नालालजीकी तरफसे प्रसिद्ध करी

७ भीमसेण हरीसेण चरित्र प्रत १०००

कर्म और धर्मका हुबहु चित्र दर्शाने वाली रसीली ढाल इसे रायल ११ पेजी १२१ पृष्टकी पुस्तक लालाजी नेतरामजी रामनारायणजी, रामलालजी पन्नालालजी कीमती और यादगिरी (हैद्राबाद) वाले उदार प्रणामी भाइ नवलमलजी सूर्यमलजी, और सोरापूर (हैद्राबाद) वाले चौथमलजी मुलतानमलजी, इन की तरफसे प्रसिद्ध करी

८ ध्यानकल्पतरु प्रत १२५०

इसम आर्त रौद्र धर्म सुक्ल इन ध्यानका विस्तार से बयान किया है, आत्मध्यानका खजाना है यह डेमी ८ पेजी ११ पृष्ट की पुस्तक लाला जी नेतरामजी रामनारायणजी रामलालजी पन्नालालजी कीमती सीकंद्राबादवाले गुलाब चंदजी गणेशमलजी समदरिया और घोडनदी (पुणे) वाले कुदनमलजी घुमरमलजीथापणा इनकी तरफसे प्रसिद्ध हुइ

९ जिनदा सुगुणी चरित्र प्रत १ •

इसम श्रावकाचारका तथा स्वदया और परदया का स्वरुपको हुबहु दरसाने वाली रसीली ४०ढालो है यह रायल १२पेजी १८ पाने (१२६पृष्ठ) है इसे बारकस (हैद्राबाद) निवासी दृढ धर्मी भाइश्री जवारमलजी मानचंदजी दुगड और यादगिरी (हैद्राबाद) निवासी भाइजी नवलमल जी सूर्यमलजी बोकाने छपवाकर प्रसिद्ध करी

१ श्री तिर्थंकर सहस्री प्रत १५••

इसमें ९ तीर्थंकराके अलग २ नाम की ११ ढालोंमे कथन है नित्यस्मरण करने लायक है इसे रामलालजी पन्नालालजी कीमती और गुलाब चदजी गणेशमलजी समदरीयाने छपाकर प्रसिद्ध करी

११ सिंहल कुंवर चरित्र प्रत १०००

इसमें दानाल्तरायसे पचनेका असरकारक बोधकी ११ ढालों है, यह लाला जी नेतरामजी गमनारायणजी पन्नालालजीरामलालजीकीमती और धर्मभ्धु श्रीमदासजी हेमराजजी म्हासीदाल (हैद्रायाद) वालेने प्रसिद्ध करी,

१२ भुवन सुंदरी चरित्र प्रत १०००

इसमें मत्यास्विकार और व्यभिचार से पचनेका असर कारक बोध की ११ ढाला है इसे गुलाबचंदजी गणेशमलजी समदरिया और गुप्त परमार्थ की इच्छक सौभाग्यवती भाविकाबाइ दक्षिण हैद्रायाद वालीने प्रसिद्ध करी

१३ मदन श्रेष्ठ चरित्र प्रत १०००

इसमे सत्पात्र दान से होते हुवे पुण्य प्रताप का दरशानेवाला महाहि रसीला चरित्र १ ८ ढालो म कथन किया है, इमे सीकंद्रायाद (हैद्रायाद) निवासीउदार प्रणामी श्रीमत भाइजी शिवराजजी रघुनाथ मलजी प्रासि द्ध किया

१४ चंद्र सेण लीलावती चरित्र प्रत १०००

इममें सीस्पृत की प्रवता के उपर अत्यन्त रसीली कथाका वर्णनकी९१ ढालों में कथन किया यह जैनतत्व प्रकाशकीद्वितीया प्रति छपा ने को आये हुवे द्रव्य मेंसे पडे हुवे द्रव्य से हैद्रायाद ज्ञान वृद्धि ग्वातकी तरफसे छपाकर प्रसिद्ध किया

१५ जैनतत्व प्रकाश द्वितीयावृती प्रत २०००

प्रथ्यमा मती से भी इसे बहुत शुद्ध पुद्धी के साथ छपाया रा यल८ पेजी १८० पृष्ठ प्रसिद्ध कर्ता —

५ प्रत उदार प्रणामी भाइजी मागरमलजी गिधारीलालजी अक्षराजजी साकला सिकन्द्राबाद (दक्षिण हैद्रायाद)

५०० प्रत उदार प्रणामी भाइजी सहश्रमलजी जुगराजजी अ लीजात सीकंद्रायाद (हैद्रायाद)

१०० दक्षिण हैद्रायाद के परम परमार्थिक श्रीमन्त जेष्ट श्रावकजी

१७५ प्रत जैन ज्ञान कोविद गुप्त पर्मार्थ की इच्छक सौभाग्य वती एक श्राविका बाइ ५० गुप्त परमार्थ की इच्छक जैन धर्मी ओसवाल

ज्ञाती की सौभाग्यवती श्राविका बाई दक्षिण हैद्राबाद

१५० प्रत धर्म धुरदर उदार प्रणामी जैन शास्त्रके जाण भाइजी कुदनमलजी घुमरमलजी बापणा घोड नदी (पुणे)

१०० प्रत जैन शास्त्र के कोविद उदार प्रणामी भाइजी गुलाब चदजी गणेशमलजी समदरिया सीकद्राबाद (हैद्राबाद)

१०० प्रत तपस्वी उदार प्रणामी भाइजी जीतमलजी बादरमल जी समदरिया हैद्राबाद

१७५ प्रत जैन साधू मार्गी संघ घोडनदी (पूना) वाले –५० प्रत, धर्मी वर भाइजी जीवराजजी भीखूजी फूलफगर, ५० प्रत, विद्वर भाइजी पूनमचदजी ताराचंदजी बोरा, २५ प्रत धर्मात्मा भगवानदासजी नानचदजी दूगड २५प्रत धर्म दीपक गुलाबचंदजी बृद्धीचदजी दूगड,१० प्रत गुलाबचंदजी खुशालचदजी दूगड, ८ प्रत, वृद्धिचदजी घेवरचंदजी दूगड, और७प्रत लालचदजी रामचदजी की विद्वा जमनाबाइ सर्व १७५ (यह मदत धर्मदलाल छोटमलजी हजारीमलजी बह्रोसराकी दलालीसे हुइ है)

१०० प्रत 'जैन साधू मार्गी संघ भुसावल' (खानदेश) वाले ४० प्रत भाइजी पन्नालालजी कोटेचा, ३० भाइजी हसराजजी रोडमलजी धन्य १५ भाइजी दानमलजी चोरडीया और १५ हीरालालजी चोरडीया सर्व १००

१०० प्रत जैन धर्मी सघ पनवेल बंदर (बबइ) ४० विद्याप्रसारक नवलमलजी खेमराजजी की मातेश्वरी २१ राजारामजी नंदरामजी मुणोत, २१ प्रत इन्द्रभानजी आणन्दरामजी बांठीया ७ गुलाबचदजी भीकमदासजी बाठीया, ५ रामदासजी सोमचदजी मुणोथ ४ मेंघरा जजी आसकरणजी बाठीय। २ रतनचदजी तेजमलजी २ रामचदजी वगहूजी मूथा १ गुलाबचदजी चुन्नीलालजी गुगल्या सर्व १००

यों सब २ प्रत द्वीतियावृती की छापी गइ और खरच उप्रात रुपे बचे उससे चन्द्र मेण लीलावती का चरित्र छपवाया

—— इस सिवाय ——

और भी अन्य कृत्य पुस्तको उक्त ग्रन्थ कर्ता महाराज श्रीके हाथसे शुद्धी वृद्धि के साथ पुनरावृती लिखवाकर छपवाये जिसके नाम

१६ केवलानन्द छन्दावली तीन आवृती प्रत ३५००

इस पुस्तक में तपस्वी राज महाराज श्री केवल ऋपिजी के रचित अनेक स्तवन पद लावणियो का सग्रह किया है और नित्य स्मरण के लिये सामयिक अनापूर्वी साधु वंदन वगैरा भी रखा है यह रायल १६ पेजी १३५ पृष्टकी पुस्तक हैद्राबाद के ज्ञान वृद्धिक खातेकी तरफसे प्रसिद्ध करी

१७ जैन सुबोध हीरावली प्रत १०००

इस पुस्तक में पूज्य श्री हुकमीचदजी महाराज के सम्प्रदायके कवीवरेंद्र मुनिराज श्री हीरालालजी महाराज कृत अनेक छन्द लावणी स्तवन सवैयेका समावेश किया यह रायल १६ पेजी २१६ पृष्टी पुस्तक श्रीमन्त रामलालजी पन्नालालजी की तरफसे प्रसिद्ध करी

१८ जैन शीघ्र बोधनी १५०० प्रत

यह प्रवर पण्डित महंत मुनिराज श्री रत्न ऋपिजी महाराज कृत डेमी १६ पेजी ४४ पृष्ट इसकी १०००प्रत तो चीचोंडी (अहमद नगर) निवासी किस्तुरचन्दजी चदनमलची गाधी की तरफ से और ५०० हैद्राबाद के ज्ञान वृद्धिक खाते ती तरफसे प्रसिद्ध हुइ यों १९०

१९ सार्थ भक्तामर स्तोत्र २००० प्रत

श्रीमन मान तुङ्गाचार्य कृत जिसका नविन ढयसे हिन्दी भाषा मे अनुवाद के साथ १००० प्रत तो किस्तुरचंदजी चवनमलजी गाधी चीचोंडी (अहमद नगर) वाले की तरफसे और १००० प्रत ज्ञान वृद्धिक खाता हैद्राबाद की तरफसे यों २

२० जैन गणेश बोध १५०० प्रत

इसे श्री अमोलख ऋपि जी की सहायतासे जैन शास्त्र के कोविद गुलाबचदजीके पुत्र गणेशमलजी समदरियाने बनाइ और १००० प्रत, छपाइ

तथा ५०० प्रत भाइ रामलालजी पन्नालालजी कीमती यों ११०

२१ अनुपुर्वी बडे अक्षरों की २०००

यह भाइ नवलमजी मूलचंदजी कातरेला और भाइ भीखमदासजी हेमर जजी खाडी वाल की तरफसे

२२ नित्य स्मरण ५०० प्रत

सामायिक अनुपुर्वी वगैरा लालाजी नेतरामजी रामनारायणजी की तरफसे प्रसिद्ध करी

यों सर्व ११२१ पुस्तको प्राय सर्व * अमुल्य भेट दीगइ है

☞ और भी —खुश खबर ☜

१ श्री परमात्म मार्ग दर्शक प्रत १०००

यह कच्छ देश पावन करता जैना चार्य श्री कर्म सिंहजी महा राज के शिष्य वर्य कवीराज श्री नागचंदजी महाराजके हुकम से बाल ब्रम्हचारी मुनि श्री अमोलख ऋषिजी लिख रहें हैं इस में तीर्थंकर गोत्र उपार्जन करने के २० बोल पर बहुत विस्तार से वर्णन किया हैं इस के अंदाज ५० फारम होनेका सभव हैं यह ग्रन्थ लालाजी नेत रामजी रामनारायणजी की तरफसे प्रसिद्ध हो अमुल्य दिया जायगा

२ मन्दिरा सती चरित्र प्रत १०००

यह सती यों के सत्यत्व बताने हूबहू चित्र रुप छोटासा चरित्र अग्रवाल वंशी भइ शिवकरणदास अर्जुनदास की तरफसे प्रसिद्ध हो अमुल्य दिया जायगा

☞ लालानेतराम रामनारायण जवेरी

चारकमान दक्षिण हेद्राबाद

इस पत्तेसे यहां छपी हुइ पुस्तको टपाल खरच भेज कर मंगाइये यहां १ नम्बर से ७ नम्बर तक की और १६—१७ नम्बर की पुस्तके अब ज्यादा सिलकमें नहीं है

---

* 'जैनामुल्य सुधा' और जैन समाचार आफिस की तरफसे छपी हुइ जैनसत्वप्रकाश का प्रथमा वृती की १०० प्रत मेंसे कितनी प्रत फक्त मूल्य लेकर दीगइ हैं

श्री जैन तत्वप्रकाश द्वितीयावृती का शुद्धि पत्र

☞ पाठक गणो ! अवस्य इस मुजब सुधारा करके फिर यत्ना युक्त पढिये, और सार ग्रहण कीजीये,

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	नोट	मोक्षपधारे	मोक्ष पधारे	४०	१७	यशामय	•
५	नोट	देवता बल	देवताका बल	,,	१८	सुंधर	सुगन्धी
६	नोट२	प्रभु	१ प्रभू	४२	११	कर्माकर्मी	कर्मी कर्मी
,,	,,११	देवताकी	देवता	,,	१२	मान	नाम
,,	,, ,,	ज्याति	ज्योतिर्क	,,	नोट ४	अन्न	अन्न
,,	,,१८	बानके	बनाकर	,,	,, ६	बाले कोइ	बाले
८	नोट	वरर्ण	वएण	,,	,,१०	बिहर के पीछे	•
११	नोट	गुर्णोक	गुर्णोका	४३	७	अन्ततर्कतमी	अनन्त कृतमी
११	,,	ऋर्यवत	एश्वर्यवंत	,,	१४	दुष्क	दुष्कर
,,	,,	११	३१	,,	२१	तिर्थकरों	तिथकरो
११	१३	दुगमर्ति	दुर्गति	४४	९	२१	१२
१७	१	अथात्	अर्थात्	४६	नोट	अपन२हाथलतो	अपने हाथसे ते
१७	६	देखतेहे	दोखते हैं	४६	,,	कडे २	टुकडे २
,,	१४	चेतनोकी	चेतनेकी	६०	८	बिन्द	बिन्दू
,,	१९	मानेहर	मनोहर	६६	१९	११० •	१६०००
२	२	मंगवत	मगवंत	,,	२१	२५	२५ •
,,	९	श्रीदामोहरजी	श्री दामोदरजी	७२	१	बाग	बगा
११	२	ससिरे	तीसरे	७६	५	प्रमतम	प्रमतम
२७	धा.६	पूर्व पाठा	पूर्व पठी	७८	नोट	एकके	एकक
,,	,,०४	१९० •	१९०००	८१	नोट	वासुदव	वासुदेव
,,	,,०५	१८४ •	१८४०	८५	८	नव	नव २
३०	१	प्रभाकर	दिवाकर	,,	२१	उमे	इकर
३१	२०	१४	१४	८६	नोट	बीचमें	बीचमे
,,	,,	निर्थकर	तीथकर	८७	२४	यह	हैं
३४	७	भज्ज	अम्म	८८	६	पेवत	पर्वत
,,	१९	नुम्पाम	मुम्पाम	,,	१९	पीछ	पीछे
३६	३	पूर्व	हत	,,	२१	राईता	ऐहीता

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९	२१	पक्षिण	दक्षिण
"	"	वश्चिम	पश्चिम
९२	१२	मात्पत	मान्यक्त
९१	११	भार	और
,	नोट	९१ और९४ पृष्ठ की नोट एकही है अलग२ नहीं जानना	
०४	१	भोठ	आ
"	१	*	
"	नोट ५	२१८४१	२१२४२,२/११
,	" ६	"	"
८९	७	मतर	मरत
"	१०	पाठा	पौठा
"	११	भार	और
९१	१	राजध्यानी	राजध्यानी जिसके
"			पास एक वैसकुंट नला ए पर्वत
९७	१	सीव	सीता
	८	पद्मक्ती	पद्मावती
"	११	रामध्यानी	राजध्यानी जिसके पास भीतर बाहुनो नदी
"	१८	वमपती	वेजपति
	२१	रामध्यानी	राजध्यानी जिसके पा-
९८			भीमामाझ्नी नदी
९८	७	हुआ	हुआ *
"	८	इस *	इस
९०	११	दासाब	दोसास
१	२	बहत २९१	बहते बदसे९१
	१२	ब है	? हजार आजमका मुख और एक
"	११	कान्द	कन्द
"	१	पले	परिह

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
"	२१	मरती	मरती भावी
"	२४	कच्छ	कुब्ले
१०१	१	गम	रूप
१ २	१	ठंब छंब	ऊंचे
११४	१	वध	वध
"	८	वसमण (कुबरे)	वेसमण (कुबेर
११५	११	इगा २	इग्यार में
११९	"	हव	हवके
"	१५	इन	इनकी
१२६	७	गूमकको	मूषककी
१२८	१८	जी	जीव
११९	१	लाकका	लोककी
१२०	७	(मु मिन)	(गुरुमिन
१२५	१९	दानसे	देनेसे
११४	४	[वर्ण	पूर्ण
१२६	९	उसका	उनको
"	११	हथिम पाहीसे-	आचार्य
१२७	१	मवि	गणी
"	९	वे	रमे
"	११	(ना मूर्छिम	(मोसमूर्छिम)
१२९	१	विश	मिश
,	१०	माननई	मानतई
"	१	सूक्ष्म	सुसम
११	१८	क्याकि	क्योंकि
११२	नोट १	समसम वा	अगालमे भो
	"१	संसम्य	ससमी
११५	१२	हा नार	हानामा बार
"	"८	मथुन सघनसे	मैथुन सेवनसे
१४१	११	अन्न	अनेक प०
१११	७	निर्णयका	निर्णय कर
१४४	नो १५	पम	मम
१५२	१६	मण	०

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६६	१२	छ्याता	ठयाता	१८४	२	मुत्रा	मुत्ता
१६७	१	लेवूंगा	लवूंगा) ७"उत्त	"	९	मये	गये
			णिए अवणिए	"	१४	हांवशीव	हयशीव
			वरिए" दूसरे	,	१९	मे	के
			को व पीछा ले	१८८	९	मवे	भेव
			कर मरेका देवे	१९१	१७	कुव	कुम्भ
			भा लेवूंगा.	"	२०	कहो	ठोहो
१६८	१५	पणिएपर	पणिएरस्स	१९८	१	स्सव	स्व
"	१०	खावा	खा	२०२	८	स्विकार	तिरस्कार
१६	"	ठड	ठड	२०३	१९	करन	करणकरण
१६१	नोट ३	पारे	चोर	"	२१	बाह	बाह्य
"	" ४	मच नहीं	मचन है।	"	२२	मासको	मसको
१६४	७	सहव	सहेव	२०९	२३	संवती	तुम्बी
१६६	२१	मिटमम्मे	मिटसम्मे	२ ९	१०	मार्पो स्त्रि	मार्पो-स्त्री
"	११	अपवद	अपवाद	"	१२	८०००	८००००
१६७	९	पणतस्सम	पणतस्स	,	१८	८०००	८००००
१७	१	उपप्पा	उपाध्याय	२ ७	१८	गुण स्तन	गुणरत्न
"	नोट	वेश	इवेश	२०९	नो ९	करणकर्ता	कारणकर्ता
१७१	२५	मीक्रय	मक्रिय	"	" १४	भाकरणी	अ-करणीय
"	१	गुरुको	गुरु	२११	" १	हावा	होवा
१७४	२	तिप	तिर्थ	२१९	" १	माणिकिका	माणकको
१७८	१	व	वा	"	" २०	पधारे	पधारे
१७६	१८	परपस	परवश	२१९	" १	अनिाभिगम	जीवाभिगम
"	१७	केर	करे	२१९	१७	मेद	मेंद
"	"	तनको	तनको	२२८	२१	पारसान	पसारन
"	नोट ४	परस्या	परांस्या	२१०	१	सोड	सोहे
१७७	" १९	धारपण	धापण	२१३	४	पचाका	पचानेकी
"	" २४	वाल	पाले	"	१२	चा	ओवारेहीभावना
१७९	" १	औौर	पों १४	२१७	१	वाके	वाल
१८१	" ४	सीन	मीन	२१९	नो १	वेसत	वेषत
"	१९	मीरम	मीरव	२१०	९	मंसका	अन्दरका
"	२१	नारकते	नारकेत	२१०	१०	कभी	कभी नहीं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
,,	नो ४	ममत्री	ममतमी	१८६	१०	सद्योष	सद्योषस
२४४	१४	केमका	कामका	१८७	१४	स्थिद्योषादि	सद्योषादि
२४९	२	छमी	रूपमी	१८८	११	मैन	मैसे
२४६	१	कहीं	नहीं	,,	१८	लया	साय
२४८	१२	कुब्जी	कुब्जी	१८९	१७	कुरा	डेरा
,,	१३	बाल	बक	१९१	६	सद्रीष	सद्रीष
२५१	१६	बचर्यके	अमझचार्यके	१९३	१२	साधुर	साधू
,,	१०	नन्म में	जन्मसे	१९८	नो १	सर्न	सर्प
२५५	९	सही	नहीं	२०१	१९	२सेमसे	२क्षेमसेणाय्र
२६०	११	संयम	संशय	२०३	१	बेट	बेडे
२६३	१	२	०	२०४	नो १	उसमेंसे	
,,	१२	होमियाशियार	होश्यार	२००	२२	धम	धर्म
,,	२६	हेशका	वेषका	२११	११	इस सो बक	इस बकसो
२६७	९	फासवि	कायति	२११	नो १	दद्रा	बद्रा
२६८	२१	दांह	कोई	२१५	१२	होमुर	हुमुर
२६९	११	पूयाग	पूणा	२१६	१९	सम्बोष	सद्रीष
,,	२०	आस्मत्व	आत्मतत्व	,,	नो २	त्वाम्कूर	त्वामेर
,,	,,	मात्नके	मतके	२१७	,, ९	नर्ककूड	नर्ककुन्ड
२७२	,१	संदपराम	संपराय	२१९	११	सबमे	रक्षमे
,,	१६	क्षमार्थत्व	क्षमार्थत्व	,,	२०	सुन	सुने
२७४	नो १	नर्ज	मर्ज	२१	१२	सद्मग	रहेमा
२७९	११	अहरम	अहरत	१२३	नो ४	निरड	मिहर
२७६	,, १	फिनमी	फिनकी	१२७	१८	चाहा	चेष्ठा
२७७	१६	कटक	कटुक	,,	२१	सुर्य	सुर्य
,,	१२	वोणक	वोणको	१२८	१२	सम्बोध	सद्रीष
२७८	१९	मोमन	मानम	,,	२	भरणहान	भरणहार
,,८	१	८१०००	९२००	१३१	१	सदव	सदेव
,,	८	प्रमाण	प्रणाम	१३६	६	दनर	दोनो
२८१	१	कमके	काटक	१४१	९	आवुर	आतुर नके
,,	१९	मवो	आवे	१४७	नोट	प्रकर्षों	प्रकर्षों
२८४	८	पासत्यर	पसथा	१५१	११	परिमृहीया	७ परिमृहिया
२८५	२४	सेरांव	सेरांव	,,	१४	ममस्त	ममत्व

आभार पत्र

हमको सब से ज्यादा खुशी इस बातकी है, कि हमारे गरीब परवर नेक दिल सखी बादशाह खुदावंद न्यामत हुजुरे पुरनुर बदगाने आली निजामउल मुल्क निजाम-उदौला फतेह जग नवाब मीर उसमान अली खां बहादुर बादशाहे दख्खन रईस हैद्राबादके जेर सायेमें हम बहोत अमन और आमानसे रहकर अपने श्री श्वेतांबर स्थानकवासी (साधू मार्गी) जैन धर्म को दीपा रहे हैं हमारे नेक नामदार बादशाह आलम पनाहके रिआसतमें हर मजहब (धर्म) वाले अपने धर्मानुसार बरतते है किसीको किसिके धर्म में दखल देनेका अथवा खलल डालनेका कोइ हक्क नहीं और न कोइ ऐसे काम करनेकी हिम्मत करता है, यह सब प्रताप और रौब हमारे निजाम सरकारके इकबालका है इन रिआया परवर हातिम मिजाज सरकारके राज्यमें अच्छर इनसाफ है किसीका किसी बातका गिकायत या फरियाद नहीं है ईश्वा हरएक को एसे नेक बादशाह के साय म रखे इनके राज्यमें रैयत को बहुत आराम हे और हर तरहकी हमेशा तरकी हो रही है एसे बादशाह का भगवान हमारे सरोंपर हमेशा कायम ओर यम रखे,हमको खुश होना चाहिये के बादशाही बस्तीमें रह कर श्री स्थानक वासी जैन धर्म का बड उत्साहसे फर्रा रहे हैं

जहा वर्षोंसे इस धर्मको ऊँचा [illegible] वाला इस तरफ कोइ उत्साही नजर [illegible] आताथा ओर न कोइ साधू मुनी [illegible] परीसह सहन करके इतनी दूर आ[illegible] ख्याल फरमाते थे वहां हमारे सुभाग्[illegible] य से तपश्वीजी महाराज श्री श्री १[illegible] श्री केवल रिखजी महाराज ओर [illegible] वान भाग्यवान पंडितराज बाल [illegible] चारी मुनी श्री श्री १००८ श्री अ[illegible] लख रिखजी महाराज के पधारने [illegible] विराजनेसे जैसा साधू मार्गी जैन [illegible] का प्रकाश इस तरफ हुवा है, वा उ[illegible] तारेस रोशन है, ओर ज्ञान वृद्धि के [illegible] जो उपाय होरहे हैं व किये जार[illegible] वोही साबित करते हैं कि इस तरफ [illegible] तना जैन धर्म का उद्योत हुवा है ह[illegible] नसीब से ऐसे नर रत्न इधर हाथ [illegible] गये हैं कि जिनके सबबसे हम [illegible] मार्गी जैन धर्मका शक्ती मुजब दि[illegible] नेका साहस कर रहे हैं, यह तमाम [illegible] गुणवान मुनी राजों काही प्रताप [illegible]

चार कमान हैद्राबाद दक्षिण

श्री श्वेताम्बरस्थानक वासी जैन धर्म के अनुयायी
सेवक - लाला नेतराम रामनारायण जवेरी

श्री जैन तत्वप्रकाश द्वितीयावृतीकी विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठांक	विषय	

विषय	पृष्ठांक

विषय

विषय	पृष्टांक	विषय	पृ.

विषय — पृष्ठांक

इति जैनतत्व प्रकाश विती यावृती की अनुक्रमणिका समाप्तम्

श्री

जैन तत्व प्रकाश.

प्रवेशिका

गाथा सिद्धाणं नमो किच्चा, सञ्जयाणं च भावउ ।
अत्थ धम्म गइतच्च, अणु सुठी सुणहमे॥

श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र अ २०

अर्थ—"सिद्ध" (अरिहंत-सिद्ध) और "संजती" (आचार्य-उपाध्याय—साधु)को विशुद्ध भावसे नमस्कार करके, सर्व अर्थकी सिद्धि करे ऐसा यथातथ्य [सत्य] धर्म ग्रहण करने योग्य अनुक्रमे कहता हू, सो हे भव्यों ! मन-वचन कायाके योगको स्थिर करके श्रवण करो !

प्रथम खन्डम्

"सिद्धाण नमो किच्चा"

॥ विशेषार्थ ॥

सिद्ध भगवान दो प्रकारके हैं — १ भापक सिद्ध और २ अभापक सिद्ध भापक (बोलते) सिद्ध सो अरिहत भगवान, कि जो इस भवके अतमें सिद्ध होनेवाले हैं होनेवाले सिद्ध भी सिद्ध ही कहे जाते हैं,

जैसे श्री उत्तराध्ययनजी सूत्रके १९ में अध्ययनमें मृगापुत्रको "दमीसरे" अर्थात् जुगराय पद भोगतेही "दमीश्वर (ऋषीश्वर)" कहा क्योंकि मृगापुत्र आगेको ऋषीश्वर होवेंगे, इस लिये उनको ऋषीश्वर का है तैसे ही अरिहंत भगवान आगेको सिद्ध भगवान होनेवाले हैं, इस लिये उनको भी सिद्ध भगवत कहते हैं

अभापक सिद्ध उनको कहते हैं, कि जो सर्व कार्यकी सिद्धि करके सिद्ध स्थानमें सच्चिदानद—सिद्ध स्वरूप—निजात्म पदको प्राप्त हुवे हैं इन दोनों प्रकारके सिद्धका वर्णन अनुक्रमे किया जायगा

प्रकरण १ ला

"अर्हत"*

जो चैतन्य अर्हत वा अरिहत पदको प्राप्त होते हैं, वह पहिले तीसरे भवमें वीस बोलकी आराधना करते हैं

गाथा अरिहंत सिद्ध पवयणे, गुरु थेरे बहु सुय तवसीसु ॥ वच्छलयतीस, अभिखनाण मुवगय॥१॥ दंशण विणे आवसय, सील वयनिरायारो ग्विणाल्वे । तव चेइए, वयावच्चा सम्माहीए ॥२॥ अपुव्व नाण गाहणे, सुयभती पवणे पभावणीया ॥ एयेही कारणे ही, तित्थयर लहे जीयो ॥३॥

—श्री ज्ञाताजी सूत्र

* अरिहंत सिद्ध सूत्र गुरु, स्थिवर बहुसूत्री जाण; गुण करतां तपस्वी तणा, उपयोग लगावत ज्ञान॥१॥ शुद्ध सम्यक्त्व नित्य आवश्यक, व्रत शुद्ध शुभ ध्यान; तपस्या करता निर्मली, देत सुपात्र दान ॥२॥ वयावच्च सुख उपजावता, अपूर्व ज्ञान उद्योम; सूत्र भणत मारग दिपत, बन्धे तीर्थंकर गोत॥३॥

॥अर्हत पद उपार्जन करनेके २० बोल॥

१ अरिहंत, २ सिद्ध, ३ प्रवचन वा शास्त्र, ४ गुरु, ५ स्थिवर वहुसूत्री वा पंडित, ७ तपस्वी ये सातका गुणानुवाद करनेसे ८ नमें वारंवार उपयोग लगानेसे, ९ सम्यक्त्व निर्मल पालनेसे, १० गुरु दिक पूज्य जनोंका विनय करनेसे, ११ निरंतर पंच आवश्यक अर्था [देवसी–रायसी–पख्खीं–चौमासी और सवत्सरी,] प्रतिमक्रण करनेसे, १ शील अर्थात् ब्रह्मचर्य प्रमुख व्रतप्रत्याख्यान निरतिचार अर्थात् दोष हित पालनेसे, १३ सदा निवृत्ति [वैराग्य] भाव रखनेसे, १४ वाह्य अ त् प्रगट और अभ्यंतर अर्थात् गुप्त तपस्या करनेसे, १५ सुपात्र दान नेसे, १६ गुरु–रोगी–तपस्वी और नवदीक्षितकी वयावच्च [सेवा भक्ति] नेसे, १७ समाधि भाव अर्थात् क्षमा रखनेसे, १८ अपूर्व (नित्य या) ज्ञानका अभ्यास करनेसे, १९ जिनेश्वरकी वाणी वहु मानपूर्वक खनेसे, और २० जैन धर्मकी तन–मन–धनसे उन्नति करनेसे, प्राणी र्थंकर गोत्र उपार्जन करते हैं

तीर्थंकर गोत्र उपार्जन हुवे पीछे एक भव स्वर्ग [देवलोक] का या नर्कका[1] वीचमें करके मनुष्य लोकमें (कर्मभूमिके १५ क्षेत्रमें) आ देशमें, निर्मल कुलमें, मातेश्वरीको १४ उत्तम स्वप्न * प्राप्त होनेके द, सवानव मास पूर्ण हुवे चंद्रवलादिक शुभ योगमें शुभ महुर्तमें माते,

[1] कृष्ण महाराज तथा श्रेणिक राजा वत्

* चौदह स्वप्नके नाम:— ऐरावण हाथी, २ धोरी बैल, ३ शार्दूल सिंह, ४ लक्ष्मी देवी, ५ पुष्पकी दो माला, ६ चंद्रमा, ७सूर्य, ८इन्द्रध्वजा, ९ पूर्ण कलश, १० पद्म सरोवर, ११ क्षीर समुद्र, १२ देव विमान, १३ रत्नराशी अर्थात् रत्नोका ढगला, १४ निर्धूम अग्नीकी शिखा अर्थात् ज्वाला र्गसे आते हैं उन्की माता बारमा देव लोकके विमानके पदले भवनप तिका भवन देख्ती हैं

श्रुति, ओरअवधि, यह तीन ज्ञानसहित अवतार लेते हैं **उस वक्त छप्पन कुमारिका देवी जन्म महोत्सव करती है, फिर(१० भवनपतिके २०, १६ वाणव्यतरके ३२, ज्योतिषीके २, १२ देवलोकके १० ऐसे) ६४ इन्द्र मिलकर मेरु पर्वतके पंडग वनमें जन्ममहोत्सव बहुत उमग और धूम धामके साथ करते हैं यह इद्रोंका जीत व्यवहार है अर्थात् परंपरा से चला आता रिवाज है फिर पिता जन्ममहोत्सव करते हैं और गुणनिष्पन्न उत्तम नामकी स्थापना करते हैं

वालक्रीडा कर फिर यौवन प्राप्त हुये, जो भोगावली कर्म भोगवणे होवे तो पाणी ग्रहण (लग्न)कर शुष्क [लुख] वृतिसे भोग भोगते हैं

दिक्षाके अव्वल, १२मास तक नित्यप्रति एक क्रोड आठ लाख सोनैये [मोहरका] दान दते है जैनी लोगोंको यह उदारता अनुकरण करने योग्य है

फिर नव लोकातिक देव आके चेताते हैं, तब आरंभ परिग्रह त्रिविध त्रिविध (३ करण ओर ३योगसे) त्यागके दिक्षा ग्रहण करते हैं, उस वक्त चैाथा मन पर्यव ज्ञानकि प्राप्ति होती है

दिक्षाके वाद थोडे काल तक छद्मस्त रहते हैं तव तक अनेक प्रकारके देव–दानव–मानव के उपसर्ग* महन कर अनेक प्रकारकी दुष्कर तपस्या कर चार घनघाती कर्मको खपाते हैं, अर्थात् क्षय करते हैं

प्रथमदर्शन मोहनीय और चारित्र मोहनीय, कर्म क्षय होनेसे अनंत यथाख्यात चारित्रवंत होते हैं मोहनीय कमके क्षय होनेसे, ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, और अंतराय इन तीनो कर्मोका शीघ्रमेव नाश

** अवतारको च्यवन कल्याण जन्मको जन्म कल्याण, दिक्षा को दिक्षा कल्याण केवल ज्ञान उत्पन्न होवे उस ज्ञान कल्याण और मोक्षपारे उस निर्वाण कल्याण कहते है

* किसनक, विना उपसर्ग उत्पन्न हुये भी कर्म खपाते हैं

होता है जिससे तीन गुणकी प्राप्ती होती है १ ज्ञानावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत केवल ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल भावको जानने वाले होते हैं [२] दर्शनावरणीय कर्मके क्षय होनेसे, अनंत केवल दर्शनकी प्राप्ति होती है, जिससे सर्व पदार्थके देखनेवाले होते हैं (३) अंतराय कर्मके क्षय होनेसे अनंत दान लब्धि, लाभ लब्धि, भोग लब्धि, उपभोग लब्धि और अनंत वीर्य लब्धिकी, प्राप्ति होती है

और शेष ४ कर्म रहें सो निरंकुर (अर्थात भवांकुर उत्पन्न करने की सत्ता रहित) होतेहैं जैसे भुंजा हुवा धान्य (अनाज) भक्षण करने से पेटतो भरता है, परन्तु वो उग सकता नहीं है, एकका अनेक करने के काममें नहीं आता है तैसे ही (१)साता वेदनिय कर्म, (२)आयुष्य कर्म, (३) नाम कर्म, और (४)गोत्र कर्म रह जाते हैं, कि जो नये कर्मको जन्म नहींदेते हैं आयुष्य कर्मके क्षय होनेसे चारों कर्मोंका क्षय आपसे ही होजाता है

पूर्वोक्त चार घनघाती कर्म क्षपानेसे ही अर्हत अरुहंत अथवा अरीहंत *पदकी प्राप्ती होती है

अरीहंत भगवान १२ गुण ३४ अतिशय, ३५ वाणी गुण युक्त, और १८ दोष रहित होते हैं, इसका विस्तार नीचे लिखे प्रमाणें है

॥अरीहंतके १२ गुण॥

१ अनत ज्ञान २ अनत दर्शन ३ अनत चारित्र ४ अनत तप ५

* तीर्थंकरके बलका प्रमाण–दो हजार सिंहका बल एक अष्टापद पक्षीमें; १० लाख अष्टापदका बल एक बलदेवमें; दो बलदेवका बल एक वासुदेवमें; दो वासुदेवका बल एक चक्रवर्तीमें; क्रोड चक्रवर्तीका बल एक देवतामें; क्रोड देवता बल एक इंद्रमें; ऐसे अनंते इंद्र मिलकर भी तीर्थंकरकी चिट्टी अंगुली नहीं नमा सक्ते हैं

* १ राग द्वेष रूप शत्रुको नष्ट करे सो अरिहंत; २ इन्द्रनरेन्द्रादिक के पुज्यसे अर्हंत; और ३ कर्मांकुर का नाश किया सो अरुहन्त

अनंत बल वीर्य, ६ अनंत क्षायिक सम्यक्त्व, ७ वज्रऋषभ नाराच संघयण ८ सम चोरस संस्थान, ९ चौतीस अतिशय १० पेंतीस वाणीगुण, ११ एक हजार आठ उत्तम लक्षण, १२ चौसट इंद्रके पुज्यनीक यह बारह* गुण युक्त श्री अरिहंत प्रभु होते हैं

॥अर्हंतके ३४ अतिशय॥

(१) मस्तकादिक सर्व शरीरके रोम(केश)मर्यादा उपरांत अशो-

* कितनेक अनंत चतुष्टय और अष्ट प्रतिहार्य मिलके १२ गुण कहते हैं ये अष्ट प्रातिहार्य इस मूजब हैं:—प्रभु मणिरत्नमय सिंहासनपर विराजते हैं २ पिछे १२ गुणा उंचा आशोक वृक्ष शोभता है ३ शिरपर एकपरएक ऐसे तीन छत्र ४ दोनो तरफ चौसट जोडे चामर ५ पीछे भामंडल ६ चारों तरफ अचेत (धत्रिय) फूलोंकी वृष्टि ७ एक योजनमें वाणीका विस्तार और ८ अंतरिक्षमें गैबी बाजे

यह ८ प्रतिहार्ययुक्त प्रभु बारह प्रषदामें विराजते हैं, वह प्रषदा इस तरह बैठती हैं श्रावक, श्राविका, विमानिक देवता, ये तीन ईशान कूणमें बैठते हैं साधु साध्वी, विमानिक देवकी देवियों, ये तीन अग्नि कूणमें बेठते हैं भवनपति वाणव्यंतर ज्योतिषी, ये तीन वायू कुणमें बैठते हैं भवनपतिकी देवी वाणव्यंतरकी देवी, ज्योतिषीकी देवी, ये तीन नैरूत्य कूणमें बैठती हैं (चार जातिके देवताकी, चार जातिदेवांगणा और चतुर्विध संघ, इस तरह १२ प्रषदा होती हैं कोई ऐसाभी कहते हैं कि चार जातिके देवता, चार जातिकी देवांगना और मनुष्य-मनुष्यणी-तिर्यंच-तिर्यंचणी ऐसी १२ प्रषदा)

ऐसी १२प्रषदाको उपदेश देते वक्त समवसरणका ठाठ अलौकिक होता है जिस क्षेत्रमें अन्यमतियोंका जोर ज्यादे होता है और बहुत प्रषदा आनेका अवसर होता है तब देवता समवसरणकी रचना करते हैं पहिला कोट चांदीका पानके सोनेके कांगुरे करते हैं, उसके भीतर १३००धनुष्यका अंतर छोडके सोनेका कोट और रत्नोंके कांगुरे बनाते हैं, और उसके भीतर १३००धनुष्यका अंतर छोडके रत्नोंका कोट और मणिरत्नके कांगुरे बनाते हैं पहिले कोटमें चढनेके १०००० पंक्तिये और दूसरे तीसरे कोटपर चढनेको पांच २ हजार पंक्तिय या सर्व २०००० पंक्तिय, एकेक हाथके अंतरमे है जिसके ०० धनुष्य एप १० धनुष्यका एक कोशके हिसाबसे २॥ कोशका उंचा समवसरण होता है (ऐसा दिगम्बर आमनाके ग्रन्थमें लिखा है)

भनीक बढे नहीं २ शरीरको रज, मेल प्रमुख किसी प्रकारका अशुभ लेप लगे नहीं ३ रक्त और मास गायके दुधसेभी आति उज्वल, और मधुर होता है ४ पद्म कमल जैसा सुगंधी श्वासोश्वास होता है ५ प्रभु आहार (भोजन) करे, और निहार [दिशा] करे सो, चर्म चक्षुवालेसे देखा जाय नहीं (अवधिप्रमुख ज्ञानका धणी देख सके) ६ प्रभु विहार करे तब उनके आगे २ आकाशमे देदिप्यमान गरणाट शब्द करता चक्र चले, और भगवान विराजे तब खडा रहे ७ भगवानके शिरपर आकाशमें तीन छत्र लबी २ लटकती हुई मोतियोंकी झालर यु क्त दिखते हैं ८ प्रभूके दोतरफ अति उज्वल कमलके तंतु गायका दूध और चांदीके पत्रे जैसे रत्न जडित दडीयुक्त चमर वींझते हुये दिखते हैं ९ प्रभु विराजे वहा मणरित्नका-स्फटिक जैसा निर्मळ देदिप्यमान सिंहके स्कंधके सठाण अनेक रत्नोंसे जडा हुवा, अंधकारका नाश कर-ने वाला पादपीठिका युक्त सिंहासन प्रभूसे ४ अंगुल नीचे दिखता है १० प्रभुके आगे बहुत छोटी २ ध्वजाका परिवार सहित अति उंची रत्न स्थभ युक्त इद्रध्वजा दिखती है ११ जहां २ अरिहत भगवान खडे रहे अ थवा विराजे, वहा २ अशोक वृक्ष अनेक शाखा-प्रतिशाखा-पत्र पुष्प-फल-सुगंध-छाया ध्वजापताका करके सुशोभित भगवतके शरीरसे १२ गुणा ऊँ चा दिखता है १२ अरिहत भगवानके पीछे चोटीके ठिकाणे, शरद ऋतुके जाज्वल्मान सूर्यमडलकी तरह, सूर्यसे १२ गुणा अधिक तेजस्वी, अधका रका नाश करनेवाला 'प्रभामडल'*दिखता है १३ प्रभु जहा जहा विच रते है वहा २ भूमि (पृथ्वी) बहोत सम [बरोबर] और खड्डे टेकरे रहित हो

*प्रथमें लिखा है कि भामंडलके प्रभावसे प्रभुके ४ मुख चारों दिशा में दिखते हैं, जिससे देशना सुननेवाले सर्व जनोंको ऐसा भास होता है कि प्रभु हमारे सन्मुखही देख रहे हैं ऐसे प्रभुको चतुर्मुखी कहनेका भी यह ही कारण होगा

जाती है १४ बंबूलादिकके काँटे उलटे होजाते हैं १५ शीतकालमें उष्णता और उष्णकालमें शीत होकर ऋतु सर्वको सुखदायी होजाती है १६ प्रभु विराजमान होवे वहां चौतरफ एक योजन (४कोस) तक मंद शीतल सुगंधी वायू चलती है जिससे अशुचिमय सर्व वस्तु दूर हो जाती है १७ बारीक बारीक सुगंधी अचेत जलकी एक योजन प्रमाणे वृष्टि होती है, जिससे धूल दट जाती है १८ चौतरफ देवताके वैक्रिय बनाये हुये अचित पंचवर्णी पुष्प की वृष्टी ढींचण (गोडे) प्रमाणे एक योजनमें होती हैं, जिनोंकेमुखउपर औरबींट नीचे रहते हैं १९ अमन्योग्य (खोटे) वर्ण–गंध–रस–स्पर्श उपसमे अर्थात् नाश पावे २० मन्योग्य [अच्छे] वर्ण गंध–रस–स्पर्श प्राप्त होवे २१ देशना [व्याख्यान] देवे तब एक योजन तक भगवन्तका शब्द सर्व प्रपदा बराबर श्रवण कर सके, और सर्वको प्रिय लगे २२ अर्धमागधी ❀ (आधी मगधदेशकी और आधी सर्व देशकी मिली हुई) भाषामें धर्मदेशना फरमावे २३ भगवानकी भाषाको आर्यानार्य, सब देशोंके द्वीपद अर्थात् मनुष्य, चतुष्पद अर्थात् पशु और पक्षी–सर्प इत्यादि सब अपनी २ भाषामें समझ जाते हैं, २४ भगवतकी देशना सुनकर जातिवैर (जैसाके सिंह बकरीका, कुत्ता बिल्लीका इत्यादी) और भवांतरके वैर नष्ट होजाते है २५ अन्य दर्शनी और अन्यमति भगवंतको देखके अभिमान छोडकर नम्र हो जाते है २६ वादी प्रतिवादि विवाद करनेके लिये भगवानकी पास आते हैं परन्तु उत्तर देनेको अशक्त हो जाते हैं २७ भगवान विचरे उनके चारों तरफ २५ योजन तक 'इति' अर्थात् मुषक–तीड इत्यादिका उपद्रव न होवे २८ मर की–प्लेग–हजेकी बिमारी न होवे २९ स्वदेशके राजाका तथा शैन्यका उपद्रव न होवे ३० परदेशके राजाका तथा शैन्यका उपद्रव न

❀ "भगवंचणं अधमागधीए भासाए धम्ममाइक्खति"

होवे२१अति वृष्टि न होवे २२अनावृष्टि न होवे २३ दुर्भिक्ष दुष्काळ न होवे २४ जहां तीड—महामारी—स्वचक्र परचक्र का भय इत्यादि होवे वहां भगवानके पधारनेसे सर्व उपद्रव तत्काल ही नाश पावें [यह सर्व बोल पचीस २ योजनमे न होव]यह३४ मेंसे ४ जन्मसे, १५ केवल्य ज्ञान उत्पन्न हुवे बाद, और १५ देवताके किये हूवे होते है

॥ अर्हतकी वाणी के ३५ गुण ॥*

१ संस्कारयुक्त वचनबोले, २ उच्च स्वरसे बोले, जिसको एक यो जन तक बैठी हुई परिषद् अच्छी तरहसे श्रवण करती है, ३ सादी भाषामें परंतु मानपूर्वक शब्दोंमें बोले, "रे,तुं' " इत्यादि तुच्छकार वाचक शब्द नहीं बोले ४जैसे आकाशमें महा मेघका गर्जारव होता है, ऐसे ही प्रभुकी वाणी भी गभीर होती है, और वाणीका अर्थ भी गंभीर-गहन—उंडा होता है, अर्थात उच्चार और तत्व दोनोमें गंभीर वाणी बोलते हैं, ५ जैसे गुफामें व शिखरव प्रसादमें जा कर बोलनेसे प्रतिछंद अर्थात् प्रतिध्वनि होती है, ऐसे ही प्रभुकी वाणी भी प्रतिध्वनी करती है (Thundering tone) ६ सरस अथवा स्निग्ध वचन बोले ७ राग-युक्त बोल-६ राग और ३० रागणीमें उपदेश देवे जिससे श्रोतागण तल्लीन हो जावें, (Harmonious tone) जैसेकी वीणासे मृग और पुंगीसे सर्प तल्लीन हो जाता है [यह सात अतीशय उच्चारके बारेमें कहे अब अर्थ सम्बन्धी अतीशय] —८ थोडे शब्दोमे विशेष अर्थका समास करके बोले, इस लियेभगवानके वाक्योंको'सूत्र' कहे जाते हैं, ९ परस्पर विरोध रहित वचन बोले, एक वक्त 'आहिंसा परमो धर्म' ऐसा कह कर,

*प्रभुकी वाणीके ये गुणोंकी तरफ हरएक उपदेशकको ध्यानलगाना चाहिये युरोपीयन वक्ताओं श्रोतागणपर प्रबल असर करते हैं उसका सबब यह है कि वे लोग उपदेश देनेकी रीतिका अभ्यास करते हैं

धर्म निर्मित्ते हिंसा करनेंमे दोप नहीं" ऐसा विरोधवाला वाक्य प्रभु कभीनहीं बोलते हैं, १० जुदा २ अर्थ प्रकाशे, जो परमार्थ चला है उसको पूरा करके फिर दूसरा प्रकाशे, परंतु गडबड करे नहीं ११ संशय रहित वचन कहे, ऐसे खुलासे से फरमावे कि सुननेवालेको बिलकुल संदेह नहीं रहे १२ दोषरहित वचन बोले, अर्थात् स्वमति-अन्यमति बडे २ पंडित जनभी प्रभु के वचनमें किंचित् मात्र दोप नहीं निकाल सके १३ सर्वको सुहाता॰ वचन कहे कि जिसको सुनतेही श्रोताका मन एकाग्र हो जाय १४ देश-काल उचित बोले अर्थात् बडे विचक्षणतासे समय विचारके बोले १५ मिलते वचन कहे, अर्थका विस्तार तो करे, परतु अट्टम सट्टम कह कर वख्त पूरा न करे १६ तत्व प्रकाशे, जीवादि नव पदार्थका स्वरूप से मिलता वचन कहे, तथा सारसार कहे, असारको छोड दे १७ संक्षेपसे कहे, अर्थात् पदके अगाडी दूसरा पद थोडेमें पुरा करदे, तथा निसार बात संसारिक क्रियादिककी थोडेमें पुरी करे, विस्तार नहीं करे १८ बात रूप कहे-ऐसा खुला अर्थ प्रकाश करे कि छोटासा बालकभी मतलब समझ जाय १९ स्वश्लाघा और परनिंदा रहित प्रकाशे, देशनामें अपनी स्तुती और अन्यकी निंदा नहीं करे ('पाप'की निंदा करे परंतु 'पापी' की निंदा नहीं करे) २० मधुर वाणीसे उपदेश करे, दूध और मिश्री सभी अधिक मिष्टता माधूर्यता प्रभुकी वाणीमें है, इस लिये श्रोता जन व्याख्यान छोडकर जाना पसद नहीं करते २१ मार्मिक वचन न कहे, जिससे किसीकी गुह्य बात खुली होवे ऐसी बात न करे २२ योग्यता देखकर गुणकी प्रशंसा करे, खुशामद न करे, योग्यतासे अधिक गुण न कहे २३ सार्थ धर्म प्रकाशे, जिससे उपकार होवे, तथा आत्मार्थ

*वेद भी कहता है कि-"सत्य ब्रूहि, प्रिय ब्रूहि" अर्थात् सत्य ऐसा बोलो कि जो सुननेवालेको प्रिय भी लगे

ुद्ध होवे ऐसा कहे २४ अर्थका तुच्छपणा न करे अर्थात् छिन्न भिन्न
रके न फरमावे २५ शुद्ध वचन कहे, व्याकरणके नियमानुसार शुद्ध
ाषा प्रकाशे,* २६ मध्यस्थपणे प्रकाशे अर्थात् बहुत जोरसे भी नहीं,
हुत जलदीसे भी नहीं, और बहुत धीरेसे भी नहीं, इस तरह बोले
७ श्रोताजनोंको प्रभूकी वाणी चमत्कारी लगे कि "हा हा! प्रभूके
रमानेकी क्या चातुरी और क्या शक्ति है!" २८ हर्षयुक्त कहे, जिस
ो सुननेवालेको हूबहु रस प्रगमें २९ विलंब रहित कहे, विचमें विश्रा
ा नहीं लेवे ३० सुननेवाला जो प्रश्न मनमें धारकर आया होवे, उस
का विना पूछे ही खुलासा हो जावे इस तरह प्रकाशे ३१ अपेक्षा वच
न कहे, एक वचनकी अपेक्षासे दूसरा वचन कहे, और जो फरमावे वो
श्रोताके हृदयमें ठसता जावे ३२ अर्थ–पद–वर्ण–वाक्य सर्व जुदे २
फरमावे ३३ सात्विक वचन प्रकाशे इंद्रादिक बडे तेजस्वी प्रतापी आ
जावे तो भी डरे नहीं ३४ जो अर्थ फरमाते हैं, उसकी सिद्धी जहा
तक न होवे वहा तक दूसरा अर्थ निकाले नहीं, एक बात दृढ करके
दूसरी बात पकडे ३५ चाहे कितना लंबा समय उपदेशमें चला जावे
तो भी थके नहीं, उत्साह बढता ही रहे

॥अरिहंत प्रभु १८ दोष रहित होते हैं॥

१ मिथ्यात्व नहीं–अर्हत प्रभुकी समझमें जो जो पदार्थ आये हे
वो सर्व सत्यहै,अर्थात् जैसे पदार्थहैं वैसी उनका श्रधानहैं परन्तु विप्रीत
नहीं २ अज्ञान नहीं –सर्व लोकालोककी कोईभी वस्तु प्रभुसे गुप्त न-
हीं है, सर्व चराचर पदार्थको जान रहे हैं–देख रहे हैं ३ मद नहीं –प्रभु

*व्याकरणकी कितनी जरूरत है सो इस परसे ध्यानमें लेना चाहिये
मधुर वाणीमें अर्थ हितकारक होने पर भी श्रोतागणके हृदयमें पात जच
ती नहीं है इस लिये उपदेशक वर्गको लाजिम है कि भगवानके गुणोंका
अनुकरण करना और व्याकरण भी पढना

सर्व गुण संपन्न होने पर भी सब तरहके अभिमानसे रहित हैं, क्योंकि "सं
पूर्ण कुंभो न करोति शब्द" संपुर्णताका यह ही चिन्ह है तथा मद अभि
मान रहित हो कर भी "विनयवंत भगवंत कहावे(तो भी)ना का हूं को सीस न
मावे" अर्थात् विनय के सागरहो के भी किसी की खुशामदी नही करते।
लघुता नहीं वताते है ४ क्रोध नहीं —प्रभु महाक्षमावत हैं "क्षमा सूर अरि
हंता" कहे जाते है ५ माया नहीं —प्रभु सदा सरल स्वभावी निष्कपट
रहते है ६ लोभ नहीं—ज्ञानरूपी अखूट लक्ष्मीका भंडार जिनके पास है
ऐसे प्रभुको किसी बातका लोभ नहीं होता है ७ रति नहीं —मन्योग
वस्तुके संयोगसे प्रभु हर्षित नहीं होते हैं, क्योंकि वो तो 'वीतराग, क
जाते हैं, अवेदी—निष्कामी हैं, इस लिये उनको रतीमात्र 'रति, नहीं है
८ अराति नहीं —अनीष्ट—अमन्योग्य वस्तुके संयोगसे मनमें किंचित् खे
द नहींउत्पन्न होता है ९ निद्रा नहीं —दर्शनावरणीय कर्मका क्षय होनेसे
निद्राका नाशकर दिया है प्रभु तो सदा काल जागृत ही रहते हैं १
शोक नहीं —भूत—भाविष्य—वर्तमानकालके ज्ञाता होनेसे प्रभुको किसी व
तका आश्चर्य भी नहीं है, और किसी बातका शोकभी नहीं है ११
लिक नहीं —कभी झूठ नहीं बोले, वचन नहीं पलटे, सदा एकात स
त्य के प्रकाशक हैं १२ चोरी नहीं करे —कोइ वस्तु किसी की आज्ञा वि
ना ग्रहण नहीं करे १३ मत्सर भाव रहित —जिनेश्वरसे अधिक गुणके
धारक कोई है ही नहीं तो भी गोशालावत् कोइ ढोंग करके अपनी प्र
भूता बढावे तो भी प्रभु मत्सर भाव कभी धारण न करे १४ भय नहीं
इस लोकका भय,(मनुष्य तरफका भय)परलोक भय,(मनुष्यका तिर्यंच दे
वताका भय,) आदान भय (धनादिका भय), आकस्मात भय, आजी
विका भय, मरण भय, पूजाश्लाघाका भय, यह ७ प्रकारके भय होते हैं
परन्तु इन सबसे प्रभू विरक्त हैं, अर्थात अभय है १५ प्राणीवध न करे,

महा दयालु प्रभू सर्वथा प्रकारे त्रस स्थावरोंकी हिंसासे निर्वृते हैं, सदा "माहणो, माहणो"(मत मारो, मत मारो) ऐसा उपदेश फरमाते हैं, किंचित् मात्र हिंसाकी सम्मति नहीं देते हैं १६ प्रेम नहीं—शरीर–स्वजनका तो प्रभुने त्याग ही कर दिया है, फिर उनपर प्रेम करनेका तो कुछ कारण ही नहीं रहा, और वंदनीक निंदनीक दोनोको समान गिनते हैं, ऐसा नहीं है की जो पूजा करे उसपर तुष्टमान होकर उसके कार्य सिद्धि करें, और जो असातना करे उसको कुछ दु खदें, नि रागी प्रभु पुजाश्लाघा नहीं इच्छते हैं, न किसीको किसी प्रकारका फल देते हैं १७ क्रीडा नहीं —सर्व प्रकारकी क्रीडासे प्रभु निर्वृत हुए हैं, गाना बजाना रास खेलना–रोशनी प्रमुख करना–मंडप बनाना–भोग लगाना इत्यादिक हिंशक क्रियासे प्रभूको प्रसन्न करने वाले लोग भारी मोहदिशामें हैं, क्यो कि सर्व प्रकारकी क्रीडासे प्रभु निर्वृत हुए हैं १८ हसे नहीं हास्य तो कोई अपूर्व वस्तु देखने सुननेसे आता है, परंतु प्रभुसे तो कोई वस्तु गुप्त नहीं है, इस लिये कोइ वस्तु वा वचन प्रभुको अपूर्व और आश्चर्यकारक नहीं लगता है, इस लिये प्रभूको हसनेका क्या कारण है यह १८ दोप रहित अरिहंत प्रभु होते हैं

॥नमोथ्थुणं [जिनराजको नस्कार रूप स्तवन]॥

ऊपर कहे मुजव अनेक गुणोके धरणहार अरिहताणं अरिहंत प्रभु भगवताणं भगवंत•"आदीग राणं"अर्थात् श्रुत धर्म और चारित्र धर्मकी

*"भगवंताणं" इस 'भग' शब्द के १४ अर्थ होते हैं— १ ज्ञानवत २ महात्म्यवंत यशस्वी ४ वैराग्यवत ५ मुक्तवत–निर्लोभी ६रूपवंत७वीर्यवत ८प्रयत्नवत –उत्साही९मोक्षकी इच्छावत १ श्रीमत आतिशययुक्त११धर्मवत और ऐश्वर्यवत –सर्वपुज्य; यह १२अर्थतो अर्हत भगवंतके लागु होतेहैं १३अर्क-सुर्य, और १४ योनी यह २ अर्थ लागु नही होतेहैं

आदिके कर्त्ता हैं (धर्मकी स्थापना आदिमे श्री अरिहंत प्रभु क
ते है, फिर गणधर, आचार्य प्रमुख आगे चलाते है) "तीथ्ययराणं"
अथार्त् तीर्थके* कर्त्ता भी अरिहंत भगवान ही हैं "सहसबुद्धाण" अथार्त
प्रभु स्वयमेव प्रति बोध पाके स्वयमेव दिक्षा लेते हैं (भगवानके सिरप
कोई ग्रुरु नहीं होता हैं, उनको तो कर्तव्य कर्म का ज्ञान अवधि ज्ञानसे उ
ज्वल मे ही होता है) "पुरुषोतमाणं" अथार्त् प्रभू सृष्टिके सर्व पुरुषों
उत्तमोत्तम हैं "पुरुष सिंहाणं" अथार्त् ये संसाररुपी वनमें प्रभु निडर सि
ह समान हैं, जैसे सिंह किसीसे पराभव नहीं पाता है, वैसे ही प्रभूके
पास भी किसी पाखंडीका जोर नही चलता है, सिंह सरीखे सूर वीर प्र
भु अपने प्रवर्तावे मार्गमें निडर प्रवर्तते हैं "पुरुषवर पुंडरीयाणं" अथार्
जैसे पुडरिक कमल रुपमें और सुगधीमें अनुपम है, ऐसेही अरिहंत प्र
भी महा दिव्य रुपवंत और यशरुप सुगंधयुक्त है **पुरिस वर गंधहत्थी
णं अथार्त् जैसे चतुरंगी सैन्यामें गंध हस्ती श्रेष्ठ और अपनी गंधसे
शत्रुकी सैन्यको भगानेवाला होता हैं, तैसेही प्रभु चतुर्विध तीर्थमें श्रे
और अपना सद्गुपदेशरुप पराक्रमसे और कीर्त्तिरुप सुगंधसे पाखंडी ज
नों को भगाते हैं, और जैसे गध हस्ती अस्त्रशस्त्रका प्रहारकी दरका

* 'तीर्थ' उसे कहते हैं कि जो संसारके तरि (पार) पहोंचावे, कुछ ग्राम
पहाड-नदी-घर ये संसार के पार नहीं पहुंचा सकते हैं इसलिये भगवान
साधु-साध्वी-श्रावक श्राविका ये चार तीर्थकी स्थापना की है

** श्री उत्तराध्ययनजी सूत्रके २६ वे अध्ययनमें कहा है —

गाथा: जहा पउम जले जायं, नेव लिप्पइ वारीणा,
तेवं अलित कामेयं, तं वयं बुम माहण

जैसे पद्म कमल कीचड (कादव) में उत्पन्न हो कर जलसे लिपाता (लिप्त होता) नहीं है; तैसे ही प्रभू भोगादिक कीचडमें पैदा होकर संसार त्याग कर पुन: ससारके भोगमे लुब्ध नहीं होते है

नहीं करता आगे आगे ही चलता जाता है, तैसे ही अरिहंत प्रभु ज्यों ज्यों परिसह पडत हैं, त्यों त्यों कर्म शत्रुको विदारनेमें ज्यादा २ सुरपणा धारण करते हैं "लोगुतमाणं" अर्थात् सर्व लोकमें अरिहत प्रभु ही उत्तम हैं 'लोगनाहाण' अर्थात् सर्व लोकके नाथ अरिहंत प्रभू हैं "लोगहियाणं" 'अर्थात् सर्व लोकके हितके कर्ता अरिहंत हैं "लोग पइवाणं" अर्थात जैसे अंधारेमें दीपक होनेसे प्रकाश होता है, और वस्तु शुद्ध दिखती है, तैसे ही अरिहत भगवान के विचरनेसे भव्योंके हृदयमेसें अनादि काल का मिथ्यात्व रूप अधकार भगवानकी वाणी रूप दीपकके प्रकाशसे नष्ट होता है, और सत्यासत्य धर्माधर्म यथातथ्य मालूम होता है "लोग पज्जोयगराणं" अर्थात् लोकमें प्रद्योत वा प्रकाश करनेवाले अरिहत प्रभु हैं [आगेका पाठ द्रष्टात युक्त कहते हैं]

दृष्टांत—कोई धनवंत पुरुष धनप्राप्तिके लिये देशान्तर जाता था, रस्ता में चोर लोगोंने उस्को रस्ता भुलाकर एक भयंकर अटवीमें ले जाकर सर्व धन छीन लिया, और आंखोपरपट्टी बाधकर वृक्षके साथ उसको बांधकर चले गये, वह विचारा मुसाफिर बहुत दु खी हुआ, इतनेमे उसके सुभाग्यसे एक महाराजा चतुरंगी सैन्याके साथ उस जंगलमें आ पहुंचे उस दु खी मुसाफिरको देखकर दया आई,इस लिये बोलेकि"डरो मत' ऐसा अभयदान दिया, (शिव नगरी अर्थात् मोक्ष पुरीमें जानेके लिये चलता हुआ यह आत्माको कर्म रूप चोरोंने घेर लिया, और ज्ञानादि द्रव्य लूटके मोह रूप वृक्षके साथ बांध दिया,और अज्ञान रूप पट्टा आंखों पर बाध दिया, सुभाग्यसे अरिहत प्रभु रुप महाराजा पाखंड रूप वनचरों के शिकारके लिये आ पहुचें, और जगजतुओं का दु खी दखकर उनकोदया उत्पन्न हुई, इस लिये बोले "मत डरो!" क्योंकि" माहणो, माहणो" ऐसे दयामय शब्दोच्चार एकेले येही प्रभु कर रहे हैं, इस लिये इनको "अभय दयाण" कहे जाते हैं

परंतु वो विचारे धनाढ्यकी आँखोंपर पट्टी होनेसे उसको महारा जाके शब्दका विश्वास नहीं आया, तब महाराजाने उसकी आंखोंकी पट्टी खोली, जिससे वो महाराजा–तीर्थंकर भगवान "चक्खुदयाणं" अर्थात् ज्ञानरूप चक्षुके देनेवाले कहे जाते हैं

आँखों खुलनेसे वो धनाढ्य चौतरफ देखने लगा और बहुत आनंद पाया, जब उसने अपना सब हाल महाराजाको विदित किया, तब महाराजाने उसको रस्ताभी बता दिया, इस लिये वो महाराजा–तीर्थंकर भगवान "मग्गदयाण" अर्थात् मोक्ष मार्गके दिखानेवाले कहे जाते हैं

जब वो मुसाफिर महाराजाका बताया हुवा मार्ग स्विकार करके चलता है तब परम कृपालु महाराजा उसको अटवीके पार उतारनेके लिये ज्ञानरूपी सिपाईका शरण देते है, इस लिये 'सरण दयाणं' कहे जाते हैं

इतना ही नहीं परन्तु मुसाफिरको 'जीवत' अर्थात् खाने खर्चनेके लिये धन भी देत हैं, इस लिये यह महाराजाका-(अरिहंत प्रभुको)"जीवदयाणं" अर्थात संमय रुपी जीवित देनेवाले कहे जाते हैं

आखिर, जब वो मुसाफिरचला जाता है, तब उसको कहते है, कि, "देख 'अब तुमको सब तहरकी सामग्री दीगई है इससे तुम सुख समाधीसे मुसाफिरी खत्म करोगे, परन्तु देखो ! गफलत नहीं करना, चोरोंसे चेतना, रस्ता बताया है वो मत चूकना" इस तरह कीमती बोध, देत है, इस लिये यह महाराजाको (अरिहत प्रभूको) बोहिदयाण अर्थात् बोध वा सम्यक्त्व देनेवाले कहे जाते हैं (यहां द्रष्टांत खतम हूवा)

"धम्मदयाणं' आर्थात प्रभु ऐसा 'धर्म' बताते हैं कि जो जीवोंको दुर्गतिमें जाने रोकता है

"धम्मदेसियाण" अर्थात् द्वादश जातिकी प्रपदामें बेठकर व्या-

ाद नि शंकित श्रुत धर्म और चारित्र धर्मका यथातथ्य स्वरुप दर्शा
र धर्म देशना करने वाले एक अरिहंत देव ही हैं "धम्मनायगाणं"
थात् धर्म रूप रस्तेमें चलनेवाले सम्यक् द्रष्टियोंके नायक (मालक)एक
रिहत देव ही हैं "धम्मसारहीणं" अथात् जैसे गाडीको सीधे रास्ते चे
लनेवाला सार्थी होता है, तैसे ही अरिहत प्रभु चार तीर्थको सीधे रस्ते
ाडाते हैं, मेघकुमार वत् जो कभी कोई कु रस्ते जानेको तैयार होवे तो
पदेश रुप चाबुक लगा कर मोक्ष रुप सीधे रस्ते चलाते हैं, इस लिये
को 'धर्मके सार्थी' कहे जाते हैं यहा एक द्रष्टात कहते हैं —

कोइ एक वडा सार्थवाही वहोत जनोंको साथ ले कर विदेशमें
नप्राप्तिके लिये चला सार्थवाही कि जो सर्व रस्तेसे वाकिफ था, उसने
र्वको चेता दिया कि, "हे वन्धुओं " मरुस्थलकी अटवी (जंगल) जब
आ पहुंचेगी तव, जल, वृक्ष, कुछ द्रष्टिगोचर नहीं होंगे, परन्तु तुमको चा
हिये कि समभाव रख कर दु ख सहन करना, और होंशियारीसे अटवी
पसार करना, एक और भी बात चेतनोकी जरूरत है कि जब
थाडी अटवी बाकी रह जायगी, तव एक आति मानेहर बाग दिखेगा
वो देखनेमें आति मनोहर होगा, परखु अंदर जानेवालेके प्राण जायगें, इस
लिये मैं पाहिले ही से जताता हूँ "जब सार्थवाहीके कहे मुजब वगीचा आ
या, तव क्षुधा, तृषा, और तापसे आकुलव्याकुल हो गये हुवे वहुत लो
ग वगीचमें गये, और फल खाने लगे, यद्यापि ये फल खानेमें तो मिष्ट
थे, परंतु खावेनालेको शीघ्र ही हजारों बिच्छूके डंस जितनी पीडा हुई
तब सार्थवाहीका उपदेश याद आया, परखु अब पश्चतानेसे क्या होता
है ?थोडीदेरमें सबके प्राण चले गये, और जिन लोगोंने सार्थवाहीके चेता
ने मुजब वगीचेकी तरफ द्रष्टि भी नहीं कीथी, और आगे मुसाफिरी-

करने लगे थे, वो थोडी देरमें अटवीके पार हो गये इस द्रष्टातमे सार्थ वाही सो अरिहंत प्रभु, साथके लोक सो चार तीर्थ, अटवी सो योवना वस्था, वगीचा सो स्त्री समझना

"धम्म वर चाउरंत चक्क वट्टीण" अर्थात् जैसे चक्रवर्ती राजा अपने पराक्रमसे चारों दिशामें शत्रुओंका नाश करके अपना एक छत्र राज करते हैं, और अखंड आज्ञा प्रवर्ताते हैं, तैसेही अरिहंत प्रभु स्वयमेव प्रतिबोध पाकर अपने पराक्रमसे चार घनघाती कर्मशत्रुओंका नाश करते हैं, अथवा चार गतिका अत करते हैं, और तीनो लोकमें अखंड आज्ञा प्रवर्ताते हैं प्रभूको इन्द्र नरिन्द्र वगैरा सर्व पूजते हैं, प्रभू चक्रवर्तीकी तरह (अपनी अतिशयादि रिद्धीसे) आति ही शोभनीय दिखते हैं, इस लिये प्रभू धर्ममें वर (प्रधान) चक्रवर्ती महाराजा जैसे हैं 'दीवोत्ताण-सरण गइ पइठाण" अर्थात् अरिहंत प्रभु संसार रुप समुद्रमें पडे हुवे प्राणियोंको, द्वीप [बेट] समान आधारभूत हैं, शरण रुप हैं, डूबते प्राणियोंको अवलबन रूप हैं यहा संसार सागरका यत्किंचित् वर्णन किया जाता है —ससारसमुद्र जन्ममरण रूप जलसे सपूर्ण भरा है, जिसमें संयोग-वियोग रुप तरंग अहोनिश उठती है, चिंता रूपगंभीरपणा है, वधबन्धनादि कलोल उठती है, मान-अपमान रूप फेण उठता है, अष्ट कर्म रुप वडवानल अग्नि है, चार कषाय रूप चार पाताल कलश हैं, तृष्णा रूप वेल चडती है, मोह रूप भमर पडता है, अहंकार रूप पाणी उछलके पीछा पडता है, प्रमाद रूप अजगर हैं, पंच इन्द्रिय रूपमगर मच्छ हैं, कुगुरु रुप मच्छीगर कुबोध रुप जाल डालते है, क्लेश रुप कीचड है, सत्य व्रत नियम रूप मोती हैं इत्यादि अनेक शुभाशुभ वस्तु इस संसार समुद्रमें भरी है, इसमें पडे हुवे जीव आति दुःख पाते हैं,

जिसको देखकर दयालु अरिहत प्रभुने सत्तरह भेद संमय रुप पाटियेको, वारह भेद तपरुप कीलेसे जडकर जहाज वनाई है, जिसमें संवेग रुप कुवा ध्यान रुप ध्वजा, उपदेश रूप चाढुवे, समाकित रूप सुकान, आदि स र्व सामग्री रक्खी गइ है, यह जहाज वैराग्य रुप पवनके जोरसे चलता है, केप्तन श्री अरिहत प्रभु कैवल्य ज्ञान रूप दूरवीन लगाकर दूरतक देख ते हैं और मोह रुप पहाड व तृष्णा रुप भमरसे जहाजको वचाते हैं, यह कप्तान ऐसे उदार हैं, कि दु खी जीवोंको विनाभाडा लिये जहाज में वैठाते हैं, और खानापानादि देकर मोक्ष द्विपमें पहुंचाते हैं

"अपडिहय-वर-नाण-दंसण धराण" अर्थात् अप्रतिहत (किसीसे नहीं हणाय ऐसा) और वर (उत्तम) कैवल्य ज्ञान और कैवल्य दर्शन के धारक श्री अरिहंत प्रभु हैं, जिससे सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावको यथातथ्य जानते हैं, और देखते हैं "वियट्ट छउमाणं" अर्थात् श्री अरि हंत भगवान विशेप करके छद्मस्थपणेसे निर्वृते हैं " जिणाण " अर्थात् कर्म रूप शत्रु कि जिनोंने सर्व जगत्को हैरान किया है, उनको श्री जिनराजने सर्वत पराजय किया है "जावयाणं" अर्थात् प्रभु तो कर्म को जीत गये हैं, परंतु उनके अनुयायियोंको भी कर्मका पराजय करने की शक्ती देते हैं "तिन्नाणं—तारयाणं" अर्थात् प्रभू इस दुस्तर ससार सागरको तिरते हैं और अन्य जनोंकोंभी तारते हैं "वुद्धाण-वोहियाण' अर्थात् प्रभु तत्वके जाणकार हैं, और अन्य जनोंकों तत्व वताते हैं, "मुत्ताणं मोयगाणं" अर्थात् प्रभु रागद्वेपादि कर्मोंसे मुक्त हुए हैं, और अपने अनुयायियोंको भी कर्मसे मुक्त करते है "सव्व नुणं-सव्व दरिसी णं" अथार्त् इस जगतमे जितने सुक्ष्म-वादर-त्रस-स्थावर-कृत्रीम-अकृतीम नित्य अनित्य पदार्थ हैं, सवके द्रव्य क्षेत्र-काल-भाव भवको प्रभु जानते हैं,

और देखते हैं

ऐसे २ अनत गुण युक्त श्री, अरिहंत भगवंत होते हैं

❋ ❋ ❋ ❋ ❋ ❋

॥ दश कर्म भूमीयों के क्षेत्र के तीन चोवीसी के ७२० तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ जम्बू द्विप के भर्त क्षेत्र के अतीत (गये) कालके २४ तिर्थंकर १ श्री केवल ज्ञानीजी २ श्री निर्वाणीजी ३ श्री सागरजी ४ श्री मह शयजी ५ श्री विमल प्रभुजी ६ श्री सर्वानु भूतिजी ७ श्री श्रीधरजी ८ श्री श्रीदत्तजी ९ श्री दामोदरजी १० श्री सूतेजजी ११ श्री स्वामि नाथजी १२ श्री मुनि सुव्रत जी १३ सुमति जिनजी १४ श्री शिवगति जी १५ श्री अस्तांगजी १६ श्री नमीश्वरजी १७ श्री अनिलनाथजी १८ श्री यशोधरजी १९ श्री कृतार्थाजी २० श्री जीनेश्वरजी २१ शुद्धमतिजी २२ श्री शिवंकरजी २३ श्री स्यन्दननाथजी २४ श्री संप्रातजी

॥ जबु द्विप के भरत क्षेत्र के वर्त मान २४ ॥

॥ तिर्थंकरों के नाम और अंतर ॥

१ गत चोवीसीके चोवीसमे तीर्थंकर मोक्ष पधारे पीछे १८ क्रोडाक्रोडी (अर्थात् क्रोड वक्त क्रोड) सागरके पीछे वर्तमान चोवीसीके प्रथम तीर्थंकर 'श्री ऋषभदेवजी' (आदिनाथजी) हुवे इक्षाग भूमी (सांठेके खेतके किनार) में जन्म लिया ❋ पिताका नाम नाभी राजा, माताका नाम मरुदेवी राणी, उनका शरीरका वर्ण सुवर्ण जैसा, लक्षण ❋❋ वृषभ (बैल)

❋ उस वक्त ग्राम नहीं था

❋❋ लक्षण अर्थात् चिन्ह पांवमे है, कोइ छातीमें भी कहते हैं

का, देह ५०० धनुष्यकी, आयुष्य ८४ लाख पूर्वका,* जिसमें से ८३ लाख पूर्व तर्क ससारम रहे और एक लाख पूर्वका संयम पाल, तसिरे आरेके तीन वर्ष साडे आठ महीने बाकी रहे तब महा वदी तेरसको दश हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे

२ फिर पचास लाख क्रोड सागर पीछे दूसरे 'श्री अजितनाथजी' तीर्थंकर हुवे अयोध्या नगरीमें जन्म हुवा पिताका नाम जितशत्रु राजा माताका नाम विजयादेवी राणी, देहका वर्ण सुवर्णवत्, उंचाई४५० धनुष्यकी, लक्षण हाथीका, आयुष्य ७२ लाख पूर्वका, जिसमेंसे ७१लाख पूर्व ससारमें रहे, और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे

३ फिर तीश लाख क्रोड सागर के पीछे, तीसरे श्री संभवनाथजी भगवान हुवे सावत्थी नगरी में जन्म हुवा पिताका नाम जीतारी राजा, माताका नाम सेन्यादेवी देहका वर्ण सुवर्ण वत, उचाई४००धनुष्यकी, लक्षण अश्वका, आयुष्य ६०लाख पूर्वका, जिसमेंसे ५९ लाख पूर्व संसारमें रह, और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे

४ फिर दश लाख क्रोड सागर पीछे चौथे श्री अभिनंदनजी तीर्थंकर हुवे वनिता नगरी में जन्म हुवा, पिताका नाम संवर राजा, माताका नाम सिद्धार्था राणी देहका वर्ण सुवर्ण वत, उचाई ३५० धनुष्य की, लक्षण बदरका, आयुष्य ५० लाख पूर्वका, जिसमेंसे ४९ लाख पूर्व संसारमें रहे, और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल एक हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे

*एक पूर्वके वर्ष सीत्तर लाख, छप्पन हजार को क्रोड से गुणे तो ७०५६ ००००००००, इतने वर्ष एक पूर्व के होते हैं

५ फिर नव लाख क्रोड सागरके पीछे, पाचमें श्री' सुमतिनाथजी
भगवान हुवे कंचनपुर नगरमें जन्म हुआ, पिताका नाम मेघरथ राजा
माताका नाम सुमंगला राणी, देहकी वर्ण सुवर्ण वत्, उंचाई३००धनुष्यकी,
लक्षण क्रोच पक्षीका, आयुष्य४०लाख पुर्वका, जिसमेंसे ३९लाख पूर्व स
सारमें रहेऔर एक लाख पूर्व, दिक्षा पाल१हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे

६ फिर ९० हजार क्रोडसागरके पीछे, छट्ठे 'श्री पद्मप्रभु' तीर्थंक
हुवे कौसंवी नगरीमें जन्म हुआ, पिताका नाम श्री धरराजा, माताका
नाम सुसिमाराणी देहका वर्ण लाल, उंचाई २५० धनुष्यकी, लक्षण
पद्मकमलका, आयुष्य ३० लाख पूर्वका, जिसमेंसे २९ लाख पूर्व संसारमें
रहे, और एक लाख पूर्व दिक्षा पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे

७ फिर नव हजार क्रोड सागरके पीछे सातमे 'श्री सुपार्श्वनाथ
जी' भगवान हुवे वणारसी नगरीमें जन्म हुआ, पिताका नाम प्रतिष्ठ
राजा, माताका नाम पृथ्वीदेवीराणी, देहका वर्ण सुवर्ण वत्, उचाई२००
धनुष्यकी, लक्षण स्वस्तिक (साथिया)का, आयुष्य २०लाख पूर्वका, जि
समेंसे १९ लाख पूर्व ससारमें रहे, और एक लाख पूर्व दिक्षापाल ५००
साधुके साथ मोक्ष पधारे

८फिर९००क्रोड सागर पीछे आठमें 'श्री चंद्रप्रभूजी तिर्थंकर हुवेज
न्मभूमि चंद्रपुरी, पिता महासेन राजा, माता लक्ष्मणा देवी राणी देहका
वर्ण श्वेत (उज्वल,) उंचाई १५०धनुष्यकी, लक्षण चंद्रमाका आयुष्य १०
लाखपूर्वका, जिसमेंसे ९लाख पूर्व संसार में रहे, और एकलाख पूर्व दिक्षा
पाल एक हजार साधूके साथ मोक्ष पधारे

९ फिर९० क्रोड सागर पीछे नवमे 'श्री सुविधिनाथजी' भगवा
न हुए जन्मभूमि काकंदी नगरी, पिता सुग्रीव राजा, माता रामादेवी

ेहका वर्ण श्वेत (उज्वल) उचाई १०० धनुष्यकी, लक्षण मगर मच्छ
। आयुष्य दो लाख पूर्वका, जिसमेंसे एक लाख पूर्व संसारमें रहे, और
क लाख पूर्व दिक्षा पाल १००० साधूके साथ मोक्ष पधारे

१० फिर नव क्रोड सागर पीछे 'दशमे श्री शीतलनाथजी' भगवा
। हुए जन्मभूमि भद्दिलपुर पिता द्रढरथ राजा, माता नंदादेवी राणी,
हेका वर्ण सुवर्णवत्, उचाई ९० धनुष्यकी, लक्षण श्रीवत्स साथियाका
ायुष्य एकलाख पूर्वका, जिसमेंसे ०।। पौण लाख पुर्व संसारमें रहे,
ौर ०। पाव लाख पूर्व दिक्षा पाल १००० साधूके साथ मोक्ष पधारे

११ फिर एक क्रोड सागरमेंसे एक सो सागर छासठ लाख छव्वी
। हजार वर्ष कमी थे, तव इग्यारमे 'श्री श्रेयासनाथजी' भगवान हुए
न्मभूमि सिंहपुरी, पिता विष्णु राजा, माता विष्णु देवी राणी, देहका
र्ण सुवर्ण वत्, उंचाई ८० धनुष्यकी, लक्षण गेंडाका आयुष्य८४ लाख
र्षका, जिसमेंसे६३ लाख वर्ष संसारमें रहे, और २१ लाखवर्ष दिक्षा पा-
ळ १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे

१२ फिर चौपन्न सागर पीछे, बारवें 'श्री वासुपुज्यजी' तीर्थंकर
ुए जन्मभूमि चपा पुरी, पिता वसुपुज्य राजा, माता जया देवी राणी,
ेहका वर्ण लाल, उचाइ ७० धनुष्य, लक्षण पाडे (भेंसे) का आयुष्य७२
ाख वर्षका, जिसमेंमे १८ लाख वर्ष संसारमें रहे, और ५४ लाख वर्ष
दिक्षा पाल ६०० साधुके साथ मोक्ष पधारे

१३ फिर तीस सागर पीछे, तेरवें 'श्री विमलनाथजी' तीर्थंकर हुए ज
न्मभुमि कपिलपुर नगर, पिता कृतवर्म राजा, माता श्यामा देवी राणी,
देहका वर्ण सुवर्ण वत्, उचाई ६० धनुष्यकी, लक्षण वराह (सूव्वर) का,
आयूष्य ६० लाख वर्षका, जिसमेंसे ४५ लाख वर्ष संसारमें रहे, और१५

लाख वर्ष दिक्षा पाल, ६०० साधूके साथ मोक्ष पधारे

१४ फिर नव सागर पीछे चउदवें 'श्री अनंतनाथजी' भगवान हुए जन्मभुमि अयोध्या नगरी, पिता सिंहसेन राजा, माता सुयशा राणी देहका वर्ण सुवर्णवत् उंचाई ५० धनुस्यकी लक्षण सिकरे पक्षीका आयूष्य ३० लाख वर्षका, जिसमेंसे २२॥ लाख वर्ष संसारमें रहे और ७॥ लाख वर्ष दिक्षा पाल, ७०० साधूके साथ मोक्ष पधारे

१५ फिर चार सागर पीछे पन्द्रवे 'श्री धर्मनाथजी' तीर्थंकर हुए जन्मभूमि रत्नपुरी नगरी, पिता भानू राजा, माता सुव्रता राणी देहका वर्ण सुवर्ण वत् उंचाई ४५ धनुष्यकी लक्षण वज्रका आयूष्य१० लाख वर्षका, जिसमेंसे ९ लाख वर्ष संसारमें रहे, और एक लाख वर्ष दिक्षा पाल, ८०० साधुके साथ मोक्ष पधारे

(१६) फिर तीन सागरमें पौण पल्य कमी पीछे सोलहवें 'श्री शान्तिनाथजी, तिर्थंकर हुए,जन्मभुमी हस्तिनागपुर, पिता विश्वसेन राजा माता अचरादेवी राणी, देहका वर्ण सुवर्ण वत्, उंचाई ४० धनुष्यकी, लक्षण मृग (हिरण) का आयुष्य एक लाख वर्षका, जिसमेंसे ०॥। लाख व र्ष संसारमें रहे, और ०। लाख वर्ष दीक्षा पाल, ९०० साधुके साथ मोक्ष पधारे

(१७)फिर आधा पल्योपम पीछे सत्तरवें 'श्रीकुथुनाथजी' भगवान हुवे, जन्मभुमि गजपुर नगर, पितासुर राजा, माता श्रीदेवी, देहका वर्ण सुवर्ण वत्, उचाई ३५ धनुष्यकी, लक्षण छाग (बकरे)का, आयुष्य ९५ हजार वर्षका, जिसमेंसे ७१। हजार वर्ष संसारमें रहे, और २३॥। हजार वर्ष दिक्षा पाल एक हजार साधुके साथ मोक्ष पधारे

१८ फिर ०।० पल्यमेंसे एक क्रोड और एक हजार वर्ष कमी पी

,अठारवें 'श्री अर्हनाथजी' [अरनाथजी] प्रभू हुवे जन्मभुमि हस्तिना पुर [गजपुर], पिता सुदर्शन राजा, माता देवी राणी, देहका वर्ण सुव वत्, उंचाई ३० धनुष्यकी, लक्षण नंदावर्त्त साथियेका, आयूष्य ८४ह ार वर्षका, जिसमेंसे ६३ हजार वर्ष ससारमें रहे, और २१ हजार वर्ष क्षा पाल, १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे

१९ फिर एक क्रोड एक हजार वर्ष पीछे, उगणीमवें 'श्री मल्ली ाथजी' भगवान हुवे जन्म भुमि मिथिला नगरी, पिता कुंभराजा, मा- ा प्रभावती राणी, देहका वर्ण हरा, उंचाई २५ धनुष्यकी, लक्षण कळ- का, आयूष्य ५५००० वर्षका, जिसमेंसे १०० वर्ष समारमें रहे, और ५४९०० वर्ष दिक्षा पाल, ५०० साधु और५००साध्वीके साथ मोक्ष पधारे

२० फिर ५४ लाख वर्ष पीछ वीसमें 'श्री मुनीसुव्रतजी' भगवान ुए जन्मभुमि राजग्रही नगरी, पिता सुमित्र राजा, माता पद्मावती रा ी, देहका वर्ण श्याम (आसमानी) उंचाई २० धनुष्यकी, लक्षण कूर्म (काछवा) का, आयूष्य ३० हजार वर्षका, जिसमेंसे २२॥ हजार वर्ष ंसारमें रहे, और ७॥ हजार वर्ष दिक्षा पाल, १००० साधुके साथ मोक्ष धारे

२१ फिर छे लाख वर्ष पीछे इक्कीसवें 'श्री नमीनाथजी' भगवान हुवे जन्मभूमि मथुरा नगरी, पिता विजय राजा, माता वप्रा राणी, दे हका वर्ण सुवर्ण वत् ऊंचाई १५ धनुष्यकी, लक्षण निलोत्पल कमल- का, आयुष्य १० हजार वर्षका, जिसमेंसे ९००० वर्ष संसारमें रहे, और एक हजार वर्ष दिक्षा पालके १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे

२२ फिर पाच लाख वर्ष पीछे वावीसवें 'श्री नेमनाथजी' (रिष्टने मी) भगवान हुए जन्मभूमि सौरिपुर, पिता समुद्र विजय राजा, मा- ता सिवा देवी राणी, देहका वर्ण श्याम (आसमानी) उचाई १० धनु

प्यकी, लक्षण संखका, आयुष्य १००० वर्षका, जिसमेंसे ३०० वर्ष संसारमें रहे, और ७००वर्ष दिक्षा पालके ५३६ साधुके साथ मोक्ष पधारे

२३ फिर पौणे चौरासी हजार वर्ष पीछे तेवीसवें 'श्री पार्श्वनाथजी' भगवान हुए जन्मभूमि वणारसी नगरी, पिता अश्वसेन राजा, माता वामादेवी राणी, देहका वर्ण हरा, उंचाई नव हाथकी, लक्षण सर्पका आयुष्य १०० वर्षका, जिसमेंसे ३० वर्ष संसारमें रहे, और ७० वर्ष संयम पाल १००० साधुके साथ मोक्ष पधारे

२४ फिर अढाइसो वर्ष पीछे चौवीसवें 'श्री महावीर' प्रभु हुए, जन्म भूमि क्षत्रीकुड ग्राम, पिता सिद्धार्थ राजा, माता त्रिसला देवी राणी, देहका रग सुवर्ण वत्, उंचाई सात हाथकी, लक्षण सिंहका, आयुष्य ७२ वर्षका, जिसमेंमे ३० वर्ष संसारमें रहे, और ४२ वर्ष संयम पाल, अकेलेही मोक्ष पधारे (उस वक्त चौथे आरेके ३ वर्ष ८॥ महिने बाकी थे)

प्रथम श्री ऋषभ देवजीसे लगाकर चोवीसवे श्री महावीर स्वामी तक एक कोडा कोड सागरसे कुछ विशेष, उसमें ४२००० वर्ष कमी अतर जाणना

यह जो वर्त्तमान चौवीसीके अतर कहेसो सदा शाश्वते हैं गये कालमे अनत चौवीसी हुई सो इतने इतने ही अतरमे हुई, इतना ही आयुष्य और अवघेणा सर्व तीर्थंकरोकी समझनी और आगामिक कालमें जो अनत चौवीसी होगी सा भी इसी तरह समझनी अतर, आयुष्य, अवघेणा प्रमुख सर्व एकही अपेक्षासे जानना उत्सर्पणीमें पहिलेसे आखिर तक और अवसर्पणीमें आखिरसे पहिले तक उलट पुलट जानना

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

३ जंबुद्विपके भर्त क्षेत्रकें अनागत (आवते) कालमें जो २४ तीर्थंकर होगें उनके नाम —

१ श्री पद्मनाभजी (श्रेणिक राजाका जीव, प्रथम नर्कसे निकल कर), २ श्री सूरदेवजी (महावीर स्वामीके काका सुपार्श्वका जीव, देव लोक्से आयेंगे) ३ श्री सुपार्श्वजी (कोणिक राजाका पुत्र उदाइ राजाका जीव * देवलोकमे) ४ श्री स्वयंप्रभूजी (पोटिला अणगारका जीव, तीसरे देवलोकसे) ५ श्री सर्वानुमुतीजी (द्दढ युद्ध श्रावकका जीव पाचवें देवलोकसे) ६ श्री देवश्रुतिजी (कार्तिक शेठका जीव, पहिले देवलोकसे) ** ७ श्री उदयनाथजी [शंख श्रावकका जीव[1] देवलोकसे] ८ श्री पेढालजी [आणंदजी श्रावकका जीव,[2] देवलोकसे] ९ श्री पोट्टिलजी (सुनंद श्रावकका जीव[3], देवलोक्से)१० श्री सतकीर्तिजी (पोखलीजीके धर्म भाई सतक श्रावकका जीव[3], देवलोक्से)११ श्री मुनीव्रतजी (कृष्णजीकी माता देवकीजीका जीव,नर्क्से), १२ श्री अममजी श्री कृष्णजीका जीव,[‡] तीसरी नर्कसे),

---

* पाटली पुरपति

** इनको इन्द्र नहीं जानना क्या कि इन्द्रका आयुष्य दो सागर का है, और इनका अमर थोडा है, इस लिये कोई दूसरे कार्तिक शेठका जीव है

१ यह भगवतीजीमें कहे हुये संख श्रावक नहीं परन्तु दूसरा कोई समझना

२ यह महावीर स्वामीके श्रावक नहीं परन्तु दूसरे कोई समझना चक्रवर्ती आदि छ पद्वी पायेंगे

३ चक्रवर्तीआदि छे पद्वी पायेंगे

‡ इनको कितनेक नरहय कहते हैं परन्तु यह बात मिलती नहीं है क्योंकी नरयका अमर १६ सागरका होता है, परन्तु पच्छानु पुर्वी गिणनेसे ११ व हो जाते हैं

१३ श्री नि कषायजी (सुजेष्ठ्यजीका पुत्र सत्यकी रूद्रका जीव नर्कसे १४ श्री निष्पूलाकजी (कृष्णजीके भाई बलभद्रजीका जीव, पंचम देव लोकसे] १५ श्री निर्ममजी [राजग्रहीके धन्ना सार्थवाहकी बन्धुपत्नि तुलसाजी श्राविका का जीव, देवलोकसे] १६ श्री चित्रगुप्तजी [बलभद्र जीकी माता रोहिणीजी का जीव, देवलोकसे] १७ श्रीसमाधिनाथ जी [कोलापाक वेहराया सो रेवती गाथापतिणीका जीव, देवलोकसे] १८ श्रीसंवरनाथजी (सत तिलक १ श्रावका का जीव, देवलोकसे) १९ श्री यशोधरजी (द्वारकाको जलानेवाला दिपायन तापसका जीव देवलोकसे) २० श्री विजयजी (करणका जीव, २ देवलोकसे) २१ श्री मल्यदवजी (निग्रय पुन कहा सो, मल्ल नारद ३ का जीव, देव लोकसे] २२ श्री देवचंद्रजी [अबड श्रावकका जीव, ४ देवलोकस] २३ श्री अनंतवीर्यजी [अमरका जीव, देवलोकसे] २४ श्री भद्रकरजी [सत्तकजीका जीव, सवार्थ सिद्ध विमानसे]

॥ जंबुद्विप एराम्न क्षेत्र के अतीत २४ तिर्थंकरो के नाम ॥

१ श्री पंचरुपजी २ श्री जिनधरजी ३ श्री संमतकजी ४ श्री उपमतजी ५ श्रीआदीछांयजी ६ श्री अभीनदजी ७ श्रीरत्नसेनजी ८ श्री रामेश्वरजी ९ श्रीरगोजितजी १० श्रीविनपासजी ११ श्रीआरोवसजी १२ श्रीशुभध्यानजी १३ श्रीविग्रदत्तजी १४ श्रीकुँवारजी १५ श्रीसर्व

१ कितनेक गांगली तापसको सत तिलक कहते हैं, सत्य ज्ञानी जाने

२ इनको कितनेक तो कौरवोंके भाई कहते हैं; कितनेक चंपापती श्री वासुपुज्यजीके परिवारके कहते है सत्य ज्ञानी जाने

३ इसको कितनेक रावणके वक्तका नारद कहते हैं

४ उववाइजीमें कहा हुआ अंबड श्रावक नहीं परन्तु जिनने सुलसाजीकी परीक्षा करी है सोही हैं,

सहेलजी १६श्री परभंजनजी १७ श्रीसोभाग्यजी १८ श्रीदिवाकरजी १९ श्री वृतविन्दूजी २० श्रीसिद्धकान्तजी २१ श्रीज्ञानसरीगी २२ श्रीकल्प द्रुमजी २३ श्रीतीर्थफलजी २४ श्री बृम्हप्रभुजी

॥ ५ जबु द्विप एरावत क्षेत्र के वृतमान २४ तिर्थकरों के नाम ॥

१ श्री वालचंद्रजी २ श्रीसुवृतजी ३ श्री अग्नीसेनजी ४ श्री नन्दसेनजी ५ श्री दत्तजी ६ श्री वृतधरजी ७ श्रीसोमचन्द्रजी ८ श्री धर्तीधीरजी ९ श्रीशातीपद्दोयजी १० श्रीशिवमतीजी ११ श्रीश्रेयांसजी १२ श्रीसुतजलजी १३ श्रीश्रियसेनजी १४ श्रीउरपशातजी १५ श्रीसत्य सेनजी १६ श्री अनतवीयजी १७ श्रीपार्श्वनायजी १८ श्रीअभीधानजी १९ श्रीमरूदेवजी २० श्रीधरजी २१ श्रीशाकठजी २२ श्रीअमीप्रभुजी २३ श्रीअमीदत्तजी २४ श्रीवीरसेनजी

॥ ६ जंबुद्विप के एरावत क्षेत्र के अनागत के २४ तिर्थकरो के नाम॥

१ श्री सिद्धार्थजी २ श्री विमलसजी ३ श्रीजयघोसजी ४ श्रीआन न्दमेनजी ५ श्रीसुरमगलजी ६ श्रीवज्रधरजी ७ श्रीनिर्वाणजी ८ श्री धर्म ध्वजजी ९ श्रीसिद्धसेनजी १० श्रीमहासेनजी ११ श्रीरवीमित्रजी १२ श्री शांतीसेनजी १३ श्री चन्द्रदेवजी १४ श्रीमहाचन्द्रजी १५ श्रीसुतांजनजी १६ श्रीनिकरणजी १७ श्रीसुवृतजी १८ श्रीजिनेद्रजी १९ श्रीसुपार्श्वजी २० श्री सुकोशल्ययजी २१ श्रीअनंतजी २२ श्रीविमलप्रभूजी २३ श्रीअमृ तसेनजी २४ श्रीअमीदत्तजी

॥ ७ पूर्व धातकी खन्ड के भरत क्षेत्र के अतीत २४ तिर्थकरों के नाम।

१ श्रीरत्नप्रभजी २ श्रीअमितदेवजी ३ श्रीसंभवजी ४ श्रीअक लङ्कजी ५ श्रीचंद्रनाथजी ६ श्रीशुभकरजी ७ श्रीतत्वनाथजी ८ श्रीसुंदरजी ९ श्रीपुरन्दरजी १० श्रीस्वामीदेवजी ११ श्रीदेवदत्तजी १२ वासदत्तजी १३ श्रीश्रेयनाथजी १४ श्रीविश्वरूपजी १५ श्रीतप्ततेजजी १६ श्रीप्रतिबोध

जी १७ श्री सिद्धार्थजी १८ श्रीअमलप्रभुजी १९ श्रीसयमजी २० श्रीदेवेन्द्रजी २१ श्रीप्रयनाथजी २२ श्रीविश्वनाथजी २३ श्रीमेघनन्दजी २४ श्री त्रयनेत्रकायजी

॥ ८ पूर्व घातकी खन्ड के भरत क्षेत्र के वृतमान २४ तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्री युगादी देवजी २ श्री सिंहदत्तजी ३ श्रीमहासेनजी ४ श्रीपरमार्थजी ५ श्री वरसेनजी श्री समुद्ररायजी ७ श्री बुद्धरायजी ८ श्रीउद्योतजी ९ श्री आर्यवजी १० श्री अभयजी ११ श्री अप्रकम्पजी १२ श्री प्रेमनाथजी १३ श्रीपद्मानन्दजी १४ श्रीप्रियकरजी १५ श्रीसुकृतजी १६ श्री भद्रसनजी १७ श्रीमुनीचन्द्रजी १८ श्रीपचमुष्टीजी १९ श्रीगगेयकजी २ श्रीगणधरजी २१ श्रीसर्वांगदेवजी २२ श्रीब्रम्हदत्तजी २३ श्रीइंद्र त्तजी २४ श्रीदयानाथजी

॥९ पूर्व घातकीखन्ड के भरत क्षेत्र के अनागत २४ तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्रीसिधनाथजी २ श्रीसमकितजी ३ श्रीजिनेन्द्रनाथजी ४ श्री सपतनाथजी ५ श्रीसर्वस्वामीजी ६ श्रीमुनीनाथजी ७ श्रीसुविष्टजी ८ श्रीअद्दतनाथजी ९ श्रीब्रम्हशातीजी १० श्रीपरेवनाथजी ११ श्रीआकासुपजी १२ श्रीध्याननाथजी १३ श्रीकल्पजिनेशजी १४ श्रीसवरनाथजी १५ श्री सुचीनाथजी १६ श्रीआनन्दनाथजी १७ श्री रवीप्रभुजी १८ श्री चंद्रप्रभुजी १९ श्रीसुनन्दजी २० श्रीसूकरणनाथजी २१ श्रीसूकर्मजी २२ श्रीअनुमायजी २३ श्रीपार्श्वनाथजी २४ श्रीसरश्वतनाथजी

॥१० पूर्व घातकी खन्ड परावत क्षेत्र के अतीत १४ निर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्रीवृषभनाथजी २ श्रीप्राएमित्रजी ३ श्रीसातीनाथजी ४ श्री सुमहाजिनजी ५ श्रीअक्कुजिनजी ६ श्रीअतिताजिनजी ७ श्रीकल्सेणजी ८ श्री सर्वजिनजी ९ श्रीप्रबुद्धनाथजी १० श्रीप्रवृजिनजी ११ श्रीसोधर्माजिनजी १२ श्रीतमोघारिपुजी १३ श्रीवज्रजिनजी १४ श्रीप्रबुद्धसेणजी १५ श्री

प्रबन्धजी १६ श्रीअजितजिनजी १७ श्रीप्रमुखजिनजी १८ श्रीपल्योपमजी १९ श्री अक्रोपजिनजी २० श्रीनिष्टातजी २१ श्रीमृगनाभीजी २२ श्रीदेवजिनजी २३ श्रीप्रायछनजी २४ श्रीशिवनाथजी

॥ ११ पूर्व धातकी खन्ड एरावत क्षेत्रके वृतमान २४ तिर्थंकरोंके नाम॥

१ श्रीविश्वचंद्रजी २ श्रीकापिलजी ३ श्रीवृषभजी ४ श्रीप्रयातेजजी ५ श्रीप्रशमजी ६ श्रीविसमागजी ७ श्रीचारित्रनाथजी ८ श्रीप्रमादित्यजी ९ श्रीमंजुकजी १० श्रीपितवासजी ११ श्री सुरेशपुण्यजी १२ श्री दयानाथजी १३ श्री सहस्रभुजजी १४ श्रीजिनसिंहजी १५ श्री रेफनाथजी १६ श्री बाहुजीनजी १७ श्री यमालजी १८ श्री अजोगीजी १९ श्रीअभागीजी २० श्री कामरिपुजी २१ श्री अरणीबाहूजी २२ श्री तमनाशजी २३ श्री गर्भज्ञानीजी २४ श्रीएकराजजी

॥१२ पूर्व धातकी खन्ड एरावत क्षेत्र के अनागत २४ तीर्थंकरों के नाम॥

१ श्रीरत्नकोपनी २ श्रीचउस्नजी ३ श्रीप्रभुनाथजी ४ श्रीपरमेश्वरजी ५ श्री सुमुक्तीकजी ६ श्री मुहत्तजी ७ श्री नाकेशजी ८ श्री प्रमस्तजी ९ श्री निराहारजी १० श्री अमूर्तीजी ११ श्री दयावरजी १२ श्री सेतीगन्धजी १३ श्री गरुड़नाथजी १४ श्री सहस्रचितजी १५ श्री ऐवनाथजी १६ श्री दयाद्विपजी १७ श्री पुफनाथजी १८ श्री नरनाथजी १९ श्री नगराजनाथजी २० श्रीतपोधिकजी २१ श्रीदशाननजी २२ श्रीअरणकजी २३ श्रीदशानिकजी २४ श्रीमोतिकजी

॥१३ पश्चिम धातकी खन्ड भरत क्षेत्र के अतित २४ तीर्थंकरोंके नाम॥

१ श्री वनस्वामीजी २ श्री चन्द्रदत्तजी ३ श्री सूर्य स्वामीजी ४ श्री पुरुषजी ५ श्री स्वाम स्वामीजी ६ श्रीअव बोधजी ७ श्रीविक्रमजी ८ श्री निघटजी ९ श्री कराइजी १० श्रीमतरीजी ११ श्री निर्वाणजी १२ श्री धम हेतुजी १३ श्रीचउमुखीजी १४ श्री कलेन्द्रजी १५ श्री स्वयं

१जी १६ श्रीविमलदिव्यजी १७ श्रीदेवप्रभजी १८ श्रीवग्णेन्द्रजी
श्री सतीस्वामीजी २० श्रीउदयामदजी २१ श्री सिद्धार्थजी २२
धिवर्मोपदेशजी २३ श्री क्षेतस्वामीजी २४ श्री हरीश्चन्द्रजी
॥ पश्चि मधातकी खन्ड भरत क्षेत्रके वृतमान २४ सिर्थकरोंके नाम॥

१श्री पाश्रमिजिनजी २ श्री पुष्पदंतजी ३ श्री अर्हतजी ४ श्रीसुचरि
जी ५ श्रीसिद्धानन्दजी ६ श्रानन्दक्जी ७ श्रीपद्मरूपजी ८ श्रीउदयना
जी ९ श्रीरकमोढजी १० श्रीकृपालजी ११ श्रीपोटल्जी १२ श्रीसिद्धेश्वरजी
३ श्रीअमृतेन्द्रजी १४ श्रीश्वामीनाथजी १५ श्रीभोगीलगजी १६ श्री
र्थिसिद्धर्ज। १७श्रीमेघानन्दजी १८ श्रीनदीश्वरजी १९ श्रीहरहरनाथ-
। २० श्रीअनिकश्वाकजी २१ श्रीश्वांतिकजी २२ श्रीनन्दश्वामीजी २३
कुडपासजी २४ श्री वारोचनजी

१५ पश्चिम धातकी खन्ड भरत क्षेत्रके अनागत २४ तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्रीवीराजी २ श्रीविजयप्रभुजी ३ श्रीमहामृगेन्द्रजी ४ श्रीचिन्तामणी
ी ५ श्रीआशोकजी ६ श्रीविमृगेन्द्रजी ७ श्रीउपवासजी ८ श्रीपद्मचं-
जी ९ श्री वोधकेंद्रजी १० श्रीहितहीमजी ११ श्रीउत्तराहिकजी १२ श्री
ापासिक्जी १३ श्रीदेवजयजी १४ श्रीनारीकजी १५ श्रीअनोघजी
६ श्रीनागिन्द्रजी १७श्रीनीलोत्फलजी १८ श्रीअप्रकम्पजी १९ श्रीपरोहि
जी २० श्रीउमेन्द्रजी २१ श्रीविश्वनाथजी २२ श्रीतीववजी २३ श्री
रहजिनेन्द्रजी २४ श्रीजयजिनेन्द्रजी

१६ पश्चिम धातकी खन्ड परावत क्षत्रके अतीत २४ सिर्थ करोंके नाम ॥

१श्रीसुमेरूजी २ श्री जिनरक्षितजी ३श्रीअतीर्यजी ४ श्री प्रसस्तदत्तजी
श्री निरदमजी ६ श्री फूरुादीर्ज ७ श्री वृषमानजी ८ श्री समृतेन्द्रजी ९
श्री संखानंदजी १० श्री कल्पकीर्तजी ११ श्री हरीदानजी १२ श्री वाछुश्वामी
ी १३ श्री मार्गचजी १४ श्रीशूभेंद्रजी १५ श्रीपावपतिजी १६ श्री वीपोपीतजी

१७ श्री वृषभचारीजी १८ श्री आसवन्तजी १९ श्री चारित्रसपन्नजी २० श्री परिनामकजी २१ श्री धर्मेशजी २२ श्री कर्तांजिनजी २३ श्री नीतीनाथजी २४ श्री कामिकजी

॥१७ पश्चिम धातकी खन्ड एरावत क्षेत्रके वर्तमान २४ तिर्थंकरोंके नाम॥

१ श्री ओमाटिनजी २ श्री जिनस्वामीजी ३ श्री स्मिमितनंदजी ४ श्री अभीवानजी ५ श्री पुष्पकजी ६ श्री मन्डिकजी ७ श्री प्रहरजी ८ श्री मदनसिंहजी ९ श्री हस्तोदजी १० श्री चंद्रपार्श्वजी ११ श्री अश्वबोधजी १२ श्री जिनाधारजी १३ नीतिमृतिकजी १४ श्री कमुरपयजी १५ श्री सुवर्णजी १६ श्री अश्वानिकजी १७ श्री [illegible]नामजी १८ श्री त्रयरामीजी १९ श्री धर्मदेवजी २० श्री [illegible]चन्द्रजी २१ श्री [illegible]नाथजी २२ श्री [illegible]ननजी २३ श्री पार्श्वनाथजी २४ श्री चित्रस्वामीजी

॥१८ पश्चिम धातकी खन्ड एरावत क्षेत्रके अनागत २४ तिर्थंकरोंके नाम॥

१ श्री सुमंगलजी २ श्री पल्गुनाथजी ३ श्री पुर्वोमजी ४ श्री सौदर्यजी ५ श्री गार्गीजिनजी ६ श्री त्रिविक्रमजी ७ श्री नरसिंहजी ८ श्री मृगवसुजी ९ श्री सोमेश्वरजी १० श्री सुधामाजी ११ श्री अपापमल्लजी १२ श्री विविधसिन्धजी १३ श्री जीमकजी १४ श्री मानवाताजी १५ श्री अश्वमनजी १६ श्री विद्याधरजी १७ श्री मुलोमनजी १८ श्री मानविजनजी १९ श्री पुडरिकजी २० श्री चित्रगणजी २१ श्री मणकद्धिजी २२ श्री सर्वकालजी २३ श्री भूगमजी २४ श्री तुन्यागजी

॥१९ पुष्कराध पुर्व भरत क्षेत्र के अतीत काल के २४ तिर्थंकरोंकेनाम॥

१ श्री मदनकाय जी २ श्री सुरुपामाजी ३ श्री निरागायजी ४ श्री प्रलम्बनाथजी ५ श्री पृथर्वापतीजी ६ श्री चारित्रनाथजी ७ श्री अपराजितजी ८ श्री सुबोधकायजी ९ श्री बुद्धकायजी १० श्री वनान्मायजी ११ श्री त्रीमुटजी १२ श्री मुनीबोधकजी १३ श्री मनस्वामीजी १४ श्री वर्मवीग

ा१५ श्रीधरणीशजी १६ श्रीप्रभादेवजी १७ श्रीआनन्ददेवजी १८ श्रीआ न्दप्रसुजी १९ श्रीसर्वतीर्थजी २० श्रीनिरुपमाजी २१ श्रीकुंवरायजी २२ ाविहारगृहजी २३ श्रीधरणीशरायजी २४ श्रीविकसायजी

२० पूर्व पुष्करार्ध भरत क्षेत्रके वृतमान कालके २४ तिर्थकरोंके नाम ॥

१ श्रीजगनाथजी २ श्रीप्रभासजी ३ श्रीसुरश्वामीजी ४ श्री भारतिसजी ५श्री द्रगनाथजी ६ श्रीविजीतकृतजी ७ श्री अवसाननाथजी ८ श्री प्रबो नाथजी ९ श्री तपोनिधीजी १० श्रीपावकायजी ११ श्रीत्रीपुरेशजी १२ श्री ाक्तायजी १३ श्रीवासजी १४ श्रीमनोहरजी १५ श्रीशुभकर्मजी १६ श्री ष्टस्वामजी १७ श्रीअमलेन्द्रजी १८ श्रीधर्मवक्षजी १९ श्रीप्रसादजी २० श्री ामामृगाकजी २१ श्रीअकलङ्कजी २२ श्रीसकटप्रभजी २३ श्रीगागेन्द्रजी २४ श्रीघ्यानजिनजी

॥ २१ पूर्व पुष्करार्ध भरत क्षेत्रके अनागत २४ तिर्थकरोंके नाम ॥

१ श्रीवसतधुजजी २ श्रीप्रियजयतजी ३ श्रीस्रीजयतजी ४ श्री त्तमायजी ५ श्रीपरब्रह्मजी ६ श्रीअम्लीशजी ७ श्रीप्रबाधकजी ८ श्रीतीनयनजी ९ श्रीवहूसायजी १० श्रीप्रमातमप्रसगजी ११ श्रीसुमप्रा यजी १२ श्रीगोश्वामीजी १३ श्रीकल्याणप्रकाशजी १४ श्रीमहलायजी १५ श्रीमहावंशजी १६ श्रीतेजोदयजी १७ श्रीदिव्यजोतीजी १८ श्रीप्रबोध- जी १९ श्रीअभयंकरजी २० श्रीअप्रामितजी २१ श्रीदिव्यसक्रजी २२ श्रीवृतस्वामीजी २३ श्रीविधानजी २४ श्रीनिःकर्मकजी

॥ २२ पूर्व पुष्करार्ध एरावत के अतीत कालके २४ तिर्थकरोंके नाम ॥

१ श्रीकंतनायजी २ श्रीउपादिष्टजी ३ श्रीआदित्यदेवजी ४ श्रीअस्थान कजी ५ श्रीप्रभाचद्रजी ६ श्रीवेणुकायजी ७ श्रीत्रिभानुजी ८ श्रीब्रह्म ङ्मायजी ९ श्रीवज्रुगजी १० श्रीअविरोधनाथजी ११ श्रीअपापजी १२ श्रीलोकंतरजी १३ श्रीजराधिशजी १४ श्रीबोधकजी १५ श्री सुमरनाथजी

१६ श्रीप्रभादित्यजी १७ श्रीवच्छलजी १८ श्रीजिनालयजी १९श्री लुपारनाथजी २० श्रीसुवनश्वामीजी २१श्रीसुक्कमायजी २२ श्रीदेवाधीदेवजी २३ श्रीअकारमजी २४ श्रीविनतायजी

२१ पूर्व पुष्करार्ध खन्ड एरावत क्षेत्रके वृर्तमान २४ तिर्थंकरोंके नाम।

१ श्री।पकरजी २ श्रीअहवसाजी ३ श्रीनगनायजी ४ श्रीनगनाढिपंजी ५ श्रीनष्टपापन्डजी ६ श्रीस्वप्नदेवजी ७ श्रीतपोधनजी ८ श्रीपुष्पकेतजी ९ श्रीधर्मनायजी १० श्रीवीतरागजी ११ श्रीचंद्रकीर्तीजी १२ श्रीअनुकृतजी १३ श्रीउद्योतकजी १४ श्रीतमोवासजी १५ श्रीमधुनाथजी १६ श्री मरुदेवजी १७ श्री दयामयजी १८ श्रीव्रषभेश्वरजी १९ श्रीशीतलतनजी २० श्री विश्वनाथजी २१ श्री महाप्रायजी २२ श्रीनदनायजी २३ श्रीतमानिभजी २४ श्रीव्रक्षवरजी

॥२२ पूर्व पुष्करार्ध द्विप एरावत क्षेत्र के अनागत २४ तीर्थंकेराके नाम॥

१ श्रीजसोवरजी २ श्रीसुकृतजी ३ श्रीआविघोषजी ४ निवार्णजी ५ श्रीवृतवमजी ६ श्रीअतीराजजी ७ श्री विश्वाजिननाथजी ८ श्रीअर्जुननाथजी ९ श्रीतपेश्वरजी १० श्रीसरीरकायजी ११ श्रीमाहिसायजी १२श्रीसूग्रीवजी १३ श्री दृढप्रयायजी १४ श्री दयानितायजी १५ श्री अवसरायजी १६ श्रीतुवरायजी १७ श्री सर्वसीलजी १८ श्री प्रतिजातकजी १९ श्री जीतेन्द्रजी २० श्रीतपवितजी २१ श्रीरत्नाकिरणजी २२ श्रीलछननायजी २३ श्रीदिव्यमायजी २४ श्री सुप्रसादजी

॥ २५ पश्चिम पुष्करार्धद्विप भरत क्षेत्र के अतीत २४तिर्थंकरों के नाम ॥

१ श्रीपद्मचन्द्रजी २ श्रीरत्नसरीरजी ३ श्रीअजोगजी ४ श्रीसिद्धार्थजी ५ श्रीवृषभनायजी ६ श्रीहरीश्चन्द्रजी ७ श्रीगुणाधिपजी ८ श्रीपत्रकायजी ९ श्रीब्रह्मनाथजी १० श्रीकुलदीपजी ११ श्रीमुनीश्वचद्रजी १२ श्री रायकतिजी १३ श्री विमवायजी १४ श्री आन्नददितजी १५ श्री रवी

श्वामीजी १६ श्रीसोमदत्तजी १७ श्रीजयश्वामजी १८ श्रीमोक्षनाथजी १९ श्रीअग्रमानजी २० श्रीधनुवागजी २१ श्रीमुक्तनाथजी २२ श्री रोमं चकजी २३ श्रीप्रसिद्धनाथजी २४ श्रीजिनश्वामीजी

॥२६ पाश्चिम पुष्करार्ध द्विप भरत क्षेत्र के वृतमान के २४ तिर्थंकरोंके नाम॥

१ श्रीसर्वांगजी २ श्रीविषतप्रभजी ३ श्रीपद्मकरजी ४ श्रीवल नायजी ५ श्रीयोगेश्वरजी ६ श्रीसुवसुमगजी ७ श्रीचलापितजी ८ श्री क्रमलकजी ९ श्रीमतन्नायजी १० श्रीनीमेदकजी ११ श्रीपापहरजी १२ श्रीमुक्तीचंद्रजी १३ श्रीअवकासजी १४ श्रीजयचंद्रजी १५ श्रीमलवग जी १६ श्री सुसजितजी १७ श्रीमलसिन्धुजी १८ श्रीअवधरायजी १९ श्री जतधरजी २० श्रीगणाधिपजी २१ श्रीअकर्मीकजी २२ श्रीवनीमायजी २३ श्रीवीतरागजी २४ श्रीरतनदायजी

॥२७ पाश्चिम पुष्करार्ध द्विप भरत क्षेत्रके अनागतके २४ तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्रीप्रभावकजी २ श्रीविनयचद्रजी ३ श्रीसुभावकजी ४ श्री दिनकरजी ५ श्रीअनततेजजी ६ श्रीधनदत्तजी ७ श्रीपोग्पजी ८ श्री जिनदत्तजी ९ श्रीपार्श्वनाथजी १० श्रीमुनीसिन्धुजी ११ श्रीआस्तिकजी १२ श्रीभवनक्रायनी १३ श्रीनृपनाथजी १४ श्रीनारायणजी १५ श्रीपर स्यमोक्षजी १६ श्रीमुपतजी १७ श्रीसुद्रष्टजी १८ श्रीभवभीरजी १९ श्री नदजी २० श्री मारवायजी २१ श्रीवासवसायजी २२ श्रीपरवामवनी २३ श्रीप्रमाशिवजी २४ श्रीमरतेशजी

॥ २८ पाश्चिम पुष्करार्ध द्विप एरावत क्षत्रके अतीत २४ तिर्थंकरोंके नाम ॥

१ श्रीउपशातकजी २ श्रीफाल्गुणजी ३ श्रीपुर्वामजी ४ श्रीसु न्दरजी ५ श्रीगोरवजी ६ श्रीविविक्रमजी ७ श्रीनरसिंहजी ८ श्रीभग्ना सजी ९ श्रीपरमसौम्यजी १० श्रीसुखदावरजी ११ श्रीअपायजिनग ॥ १२ श्रीविविधायजी १३ श्रीसिद्धकजिनजी १४ श्रीमायाभियनी १५

श्रीअश्वपायजी १६ श्रीविद्याधरजी १७ श्रीसुलोचनजी १८ श्रीमुनिधं
जी १९ श्रीपुंडरिकजी २० श्रीचित्रगणजी २१ श्रीमतइन्द्रजी २२ श्री
वेंक लाजी २३ श्रीसुरस्वायजी २४ श्रीपुन्यागजी

॥ २९ पश्चिम पुष्करार्ध द्विप एरावत क्षेत्रके वृतमान २४ तिर्थकरों के नाम

१ श्रीगगकेयजी २ श्रीमल्लीवासजी ३ श्रीभीमजी ४ श्रीदयाना
जी ५ श्रीमदनाथजी ६ श्रीस्वामीजिनजी ७ श्रीहनकनाथजी ८ श्रीनन्दं
य जी ९ श्रीरूपवीजयजी १० श्रीवज्रनाभजी ११ श्रीसतोपजी १२ श्रीसुव
जी १३ श्रीफनेश्वरजी १४ श्रीवीरचद्रजी १५ श्रीसिद्धानकजी १६ श्री
स्वच्छ नाथजी १७ श्रीकोपच्छायजी १८ श्रीअमुकामुकजी १९ श्रीध
वामजी २० श्रीसुक्रसेनजी २१ श्रीक्षेमकरजी २२ श्रीदयानाथजी २
श्रीकीर्तीसायजी २४ श्रीशुभंकरजी

॥ ३० पश्चिम पुष्करार्ध द्विप एरावत क्षेत्रके अनागत २४ तिर्थंकरोंके नाम

१ श्रीअदोशजी २ श्रीवृषभायजी ३ श्रीविनयानन्दजी ४ श्र
मुनीभर्तजी ५श्री इन्द्रकायजी ६ श्रीचन्द्रकेतूजी ७ श्रीध्वजदंतजी ८ श्र
वस्तुबोधजी ९ श्रीमुक्तीगतीजी १० श्रीधर्मबोधजी ११ श्रीदेवाग
१२ श्रीमरिचजी १३ श्रीजीवनाथजी १४ श्रीजसोधरजी १५ श्रीगोत
जी १६ श्रीनमीसुधाजी १७ श्रीप्रबोधकजी १८ श्रीसदानिकजी १
श्रीचरित्तनाथजी २० श्रीसदानन्दजी २१श्रीवेदरथकजी २२ श्रीसुधानव
जी २३ श्रीज्योतीमूर्तीजी २४ श्रीसुराराधजी

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

इस अढाइ द्वीपमें जघन्य (कमसे कम) तो २० तीर्थंकर हों
हैं और उत्कृष्ट (ज्यादासे ज्यादा) १७० तीर्थंकर होते हैं १७० त
श्री अजितनाथ भगवानके वक्तमें हुवे थे, और २० तो पचमहाविदे
क्षेत्रमें अबभी विचरते हैं

॥ २० विहरमान के नाम, इत्यादि ॥

१ श्री सीमधर स्वामी, पिता श्रेयास राजा, माता सत्यकी राणी, त्नी रुक्मिणी, लक्षण वृषभ (बैल) का यह जंबु द्विपके सुदर्शन रु से पूर्व महाविदह की ८ मी पुष्कलावती विजयमे विचरते हैं

२ श्री युगमंधर स्वामी, पिता सुसढ राजा, माता सुतारा राणी, त्नी प्रियगमा, लक्षण छाग (बकरे) का यह ज्बु द्विप के सुदर्शन रु से पश्चिम की महा विदेहकी २५ मी वप्राविजय में विचरते हैं

३ श्री बाहू स्वामी, पिता सुग्रीव राजा, माता विजयादेवी रा- ी, पत्नि मोहना, लक्षण मृग (हिरण) का यह जंबू द्विप के सुदर्शन रु से पूर्व महाविदेहकी सीतामुख वनके पास ९ मी वच्छ विजय ं विचर ते हैं

४ श्री सुबाहु स्वामी, पिता निसढ राजा, माता वियजा राणी, पत्नि किंपुरिषा, लक्षण मर्कट (बंदर) का यह जंबू द्विप के सुदर्शन मेरु से पश्चिम महाविदह, की २४ मी नलीनवती वि- जय मे विचरते हैं

५ श्री सुजात स्वामी, पिता देवसेन राजा, माता देवसेना रा_ ी, पत्नि जयसेना, लक्षण सूर्यका यह पूर्व धातकी खंड के विजय रु मे पूर्व महा विदहकी ८ मी पुष्कलावती विजयमें मे विचरते है

६ श्री स्वयप्रभ स्वामी, पिता मित्रभुवन राजा माता सुमगला रा णी पत्नि वीरसेना, लक्षण चद्रमाका यह पूर्व धातकी खंड के विजय मेरु के पश्चिम की महा विदकी २५ मी वप्रविज में विचते है

७ श्री ऋषभानद स्वामी, पिता कीर्तिराजा माता वीरसेणा रा- णी, पत्नि जयवती, लक्षण सिंहका यह पूर्व धातकी खड के विजय मे- रु से पूर्व महा विदेहकी ९ मी वच्छ विजय में विचरते है

८ श्री अनतवीर्य स्वामी, पिता मेघराजा, माता मंगला राणी-पत्नि विजयवती, लक्षण छाग (बकरे) का यह पूर्व घातकी खंड के विजय मेरु से पश्चिम महा विदेह की २४ मी नलीन वती विजय मे विचरते है

९ श्री सुरप्रभू स्वामी, पिता नागराजा, माता भद्राराणी, पत्नि विमलाजी, लक्षण सूर्यका यह पश्चिम धातकी खड के अचल मेरु से पूर्व महा विदहकी ८ मी पुष्कल वति विजय में विचरते है

१० श्री विशालधर स्वामी, पिता विजयराजा, माता विजयादवी, पत्नि नदमेना, लक्षण चंद्रमाका यह पश्चिम धातकी खंड के अचल मेरु से पश्चिम महा विदेहकी २५ मी व प्राविजयमे विचरते हैं

११ श्री विजयधरस्वामी, पिता पद्मरथ राजा, माता सरस्वती राणी, पत्नि विजया, लक्षण वृषभ का यह पश्चिम धातकी खड के अचल मेरु के पाम पूर्व महा विदेहकी ९ मी वच्छ विजय मे विचरते हैं

१२ श्री चन्द्रानन स्वामी, पिता वाल्मिक राजा, माता पद्मावती राणी पत्नि लीलावती, लक्षण वृषभका यह पश्चिम धातका खड के अचल मेरु से पश्चिम महा विदेहकी २४ मी नलीनावति विजय म विचरते है

१३ श्री चद्रबाहु स्वामी, पिता देवनन्द राजा, माता यशोगवणुन्त राणी, पत्नि सुधर लक्षण पद्म कमलका यह पूर्व पुष्करार्ध द्विपके मन्दिर मेरु के पश्चिम महा विदहकी ८ मी पुष्कलावती विजयमे विचरते है

१४ श्री इश्वर स्वामी, पिता कुलसेन राजा, माता यशोज्वला राणी पत्नि भद्रवती, लक्षण चन्द्रमाका यह पूर्व पुष्करार्ध द्विप के मदिर मेरु से पश्चिम महा विदेह की १० मी वप्रा विजयमे विचरते हैं

१५ श्री भुजग स्वामी पिता महाबल राजा, माता महिमावती राणी, पत्नि गधसेना लक्षण पद्मकमलका यह पूर्व पुष्करार्ध द्विप के मदी

रुसे पश्चिम महा विदेह की ९ मी वच्छ विजयमे विचरते हैं

१६ श्री नेमप्रभू स्वामी, पिता वीरसेनराजा, माता सेनादेवी राणी, पत्नि मोहना, लक्षण सूर्यका यह पूर्व पुष्करार्ध द्विप के मंदिर मेरु के पास पश्चिम महाविदेह की २४ मी नलनावती विजयमे विचरते हैं

१७ श्री वीरसेन स्वामी, पिता भूमिपाल राजा, माता भानुमति राणी, पत्नि राजसेना, लक्षण वृषभका यह पश्चिम पुष्करार्ध द्विपके विद्युमाली मेरूसे पूर्व महाविदेह की ८ मी पुष्कलावती विजयमें विचरते हैं

१८ श्री महाभद्र स्वामी, पिता देवसेन राजा, माता उमा राणी पत्नि सूर्यकाता, लक्षण हाथीका यह पश्चिम पुष्करार्ध द्विपके विद्युत माली मेरूसे पश्चिम महाविदेह की २५ मी वप्राविजय में विचरते हैं

१९ श्री देवसेन स्वामी, पिता सर्वभुति राजा, माता गंगादेवी राणी, पत्नि पद्मावती लक्षण चंद्रमाका यह पश्चिम पुष्करार्ध द्विपके विद्युत माली मेरु से पूर्व महाविदेह की ९ मी वच्छविजय में विचरते हैं

२० श्री अनतवीर्य स्वामी, पिता राजपाल राजा, माता कनीनी राणी, पत्नि रत्नमाला, लक्षण स्वस्तिक [साथिये]का यह पश्चिम-पुष्करार्ध द्विप के विद्युतमाली मेरु से पश्चिम महा विदेह की २४ मी नलीनावती विजयमे विचरते हैं

इन २० विहरमान प्रभुजीका ८४ लाख पूर्वका आयुष्य है, जिसमेंसे ८३ लाख पूर्व तो गृहवासमें रहेते हैं, फिर दिक्षा लेकर एक मास छद्मस्थ रहते हैं, फिर केवल ज्ञानकी प्राप्ति होती है

२० विहरमानका देहमान ५०० धनुष्यका, आयुष्य ८४ लाख पूर्वका, और दिक्षा एक लाखपूर्व तक पालते हैं यह २० तीर्थंकर भरत क्षत्र की वर्तमान चौवीसीके सत्तरवें तीर्थंकर श्री कुंथुनाथजीके निर्वाण गये

पीठे उनके सासनमें एक समय जन्मे वीसवें तीर्थकर श्री मुनीसुव्रत स्वामीके निर्वाण पधारे पीठे उनके सासन में वीसोंने ही एक ही समय दिक्षा ली, एकही समय एक मासपीठे कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ वी सोंही के चोरासी २ गणधर, दश २ लाख केवल ज्ञानी, सोसो क्रोड साधू सोसो क्रोड साध्वी यों वीसोंही के दो क्रोड केवल ज्ञानी दोहजार क्रोड साधू और दो हजार क्रोड साध्वी यों की संख्या है और यह वीसही तिर्थकरों आगामिक चौविसीमें सातवें तीर्थकर श्री उदयनाथजीके निर्वाण बाद उनके सासनकी वक्तमें वीसोंही एक समय मोक्ष पधारेंगे किंतुर्त दुसरी विजयमें जो तीर्थकर पैदा हुये होंगे वह दिक्षा ग्रहण कर तिर्थकर पदको प्राप्त होंगे इस तरह अनादि कालसे चला आता है और आगे अनादिकाल चलेगा, परतु २० तीर्थकरसें कमी कभी नहीं होंगे।

॥श्रीअजीतनाथजीके वक्तके उत्कष्ठ १७० तिर्थकर हुये उनके नाम॥

(३२)१ जबु द्विपकी ३२ महाविदेहके ३१ तिर्थकरोंके नाम

---

* जघन्य २० तिर्थकर से कभी कम नहीं होते हैं, तो यह २० विहर मानमोक्ष पधार जायगे तब उसही वक्त दुसरे तिर्थकर पद को प्राप्त हुयेही चाहीये इस लिये एक तिर्थकर गृस्थावासम एक लक्ष पूर्व के होवे तब दूसरे क्षेत्र में दूसरे का जन्म जरूर हुवा ही चाहीये यों कोई लक्ष पूर्व आयूष्य वाले कोई दो लक्ष पूर्व आयूष्य वाले आवत कोई ८१ लक्ष पूर्व आयुष्य वाले कोई यों ८१ तिर्थकर ससारमें हुये चाहिये जब चोरासीमें तिर्थकर मोक्ष पधारे तब तिर्यासीमें तिर्थकर पद को प्राप्त होवे यों ऐकेक तिर्थकर पीछे तिर्यासी तिर्थकर गृस्थवास के हिसाब से वीसही १६६ तिर्थकर ससार अवस्थामें और १० तिर्थकर पद भोगवते सब मिलकर के पीछे १८८ तिर्थकर कमसे कम एक वक्त हुये चाहिये, और इतने तिर्थकर हा जर भी आयतन मिलते नहीं हैं यह अनादि की रीति हैं

१ श्री जयदेवजी, २ श्री करणभद्रजी, ३ श्री लक्ष्मीपातिजी ४ गंगाधरजी ५ श्री विशालचंद्रजी, ६ श्री प्रियंकरजी श्री अमर जी, ८ श्री कृष्णनाथजी, ९ श्री अनंतहृदयजी, १० श्री गुणगुप्तजी श्रीपद्मनाथजी १२ श्रीजलधरजी १३ श्री यूगादित्यजी १४ श्री व, ाजी १५ श्री चंद्रकेतुजी, १६ श्री महाकायजी १७ श्री अमरकेतू १८ श्रीअरण्यावासजी१९ श्री हरीहरजी, २० श्री रामचन्द्रजी २१ श्री ीदेवजी २२ श्री अन्नतर्कतजी, २३ श्री गजेंद्र प्रभुजी २४ श्री सागर दजी २५ श्रीमहेश्वरजी, २६ श्री लक्ष्मीचंन्द्रजी, २७ श्री ऋषभनाथजी, ८ श्री सौम्य कातजी, २९ श्री नेमीभद्रजी, ३० श्री अजितभद्रजी, श्री महीधरजी,१ श्री राजेन्द्रश्वरजी

(१०) धातकी खडंकी पहली महाविदेहके ३१ तिर्थंकरोंके नाम

१ श्री वीरचंद्रजी, २ श्री वत्ससेनेजी, ३ श्री नलकातजी ४ श्री भुज सजी, ५ श्री ऋकमाकजी ६ श्री क्षेमंकरजी, ७ श्री मृगाकजी, ८ श्री नीमूर्तीजी, ९ श्री विमलचंदजी, १० श्री आगमिकजी, ११ श्री दुष्क रजी, १२ श्री वसुद्धिपजी, १३ श्री महलनाथजी, १४ श्री वनदेवजी, १५ नलभृतजी, १६ श्री अमृतवाहनजी, १७ श्री पर्णिमभद्रजी, १८ श्री रेवां त्तजी, १० श्री कल्पशाकजी, २० श्री नलणदित्तजी, २१ श्री विद्यापति- ी, २ श्री सूपार्श्वजी, २३ श्री भानुनाथजी, २४ श्री प्रभंजनजी, २५ विशिष्टनाथजी, २६ श्री जल प्रभजी, २७ श्री महा भीमजी, २८ श्री पीपालजी, २९ श्री कुंडदत्तजी, ३ श्री महवीरजी, ३१ श्री मृतानदजी, १ श्री तिर्थेश्वरजी

(११) धातकीखडकी दुसरी महाविदेहके ३२ तिर्थकरोंके नाम

१ श्री दत्तजी, २ श्री भूमीपातिजी ३, श्री मेरूदत्तजी, ४ श्री सू- मित्रजी, ५ श्री सेननाथजी ६ श्री प्रभानंदजी ७ श्री पद्माकरजी ८ श्री-

महाघोपजी, ९ श्री चंद्रप्रभुजी, १० श्री भूमिपालजी, ११ श्री सुमतीसेन जी, १२ श्री अतीअच्युतजी, १३ श्री तीर्थभूतजी, १४ श्री ललीतागर्ज १५ श्री अमरचन्द्रजी, १६ श्री समाधीनाथजी, १७ श्री मुनीचंद्रज १८ श्री महेन्द्रजी १९ श्री शशाकजी, २० श्री जगदी श्वरजी, २१ श्री देवेंद्रजी २२ श्री गुणनाथजी, २३ श्री नारायणजी २४ श्री कपीलनाथज २५ श्री प्रभाकरजी २६ श्री जिनरक्षितजी २७ श्री सकलनाथजी २८ श्री सीलारनायजा, २९ श्री उद्योतनाथजी, ३० श्री वज्रांगजी, ३१ श्री सहस्र धरजी, ३२ श्रीअशोकदत्तजी

२२ पुष्करार्ध द्विपके पहलीमहाविदेहके ३२ तिर्थकरकोंके नाम

१ श्री मेघवाहनजी, २ श्री जीवरक्षकजी, ३ श्री महापुरुषजी, ४ श्री पापहरजी, ५ श्री मृगाकजी, ६ श्री सुरसिंहजी, ७ श्री जगत्पुज्यजी, ८ श्री सुमतीनाथजी, ९ श्री महामहेंद्रजी, १० श्री अमरभूतिजी, ११ श्री कुमारचंद्रजी, १२ श्री वीरसेनजी, १ श्री रमणनाथजी १४ श्री स्वयम्‌ नाथजी, १५ श्री अचलनाथजी, १६ श्री मकरकेतुजी, १७ श्री सिद्धार्थ नाथजी, १८ श्री सफलनाथजी, १९ श्री विजयदेवजी, २० श्री नरसिंहना थजी, २१ श्री सितानदजी, २२ श्री वृदारकजी २३ श्री चंद्रतपजी २४, श्री चद्रगुप्तजी- २५, श्री प्रदरथनाथजी, २६, श्री महायशजी, २७ श्री उर्पा कजी, २८ श्री प्रद्युम्नजी, २९, श्री महातेजजी, ३०, श्री पुष्पकेतुजी, ३१, श्री कामदेवजी, ३२ श्री समरकेतुजी

(२८) पुष्करार्ध द्विपके दुसरी महाविदेशके ३२ तिर्थकरों के नाम

१, श्री प्रश्नचद्रजी २, श्री महासेनजी ३, श्री वज्रनाथजी, ४, श्री सुवर्णवाहुजी ५ श्री कुरुविंदजी ६, श्री वज्रवीर्यजी, ७, श्री विमलचंद्रजी, ८ श्री यशोधरजी, ९, श्री महाबलजी, १०, श्री वज्रसेनजी, ११, श्री विमल बोधजी, १२, श्री, भीमानाथजी, १३, श्री मेरुप्रभजी, १४, श्री भद्रगुप्तजी

१५ श्री सुद्रढसिंहजी, १६ श्री सुव्रतनाथजी, १७ श्री हरिश्चन्द्रजी, १८ श्री प्रतिमाधरजी, १९ श्री मतिश्रेयजी, २० श्री प्रतिश्रेणजी, २१ श्री कनककेतुजी, २२ श्री आजितवीरजी, २३ श्री फाल्गुमित्रजी, २४ श्री ब्रह्ममूतिजी, २५ श्री हितकरजी, २६ श्री वरुणदत्तजी, २७ श्री यशकीर्तिजी, २८ श्री नागेंद्र कीर्तिजी, २९ श्री महीकृतब्रह्मजी, ३० श्री महेंद्रजी, ३१ श्री वृधमानजी, ३२ श्री सुरेंद्रदत्तजी

(१०) पाच भरत और पाच ऐरावतके १० तिर्थंकरोंके नाम

१ जम्बुद्वीपके भरत क्षेत्रमे श्री अजितनाथजी और

२ ऐरावत क्षेत्रमें श्री चन्द्रनाथजी

३ धातकी खडके पहिले भरत क्षेत्रमें श्री सिद्धात नाथजी और ४ ऐरावत क्षेत्रमें श्री जयनाथजी

५ धातकी खंडके दूसरे भरत क्षेत्रमें श्री कर्पटनाथजी और ६ ऐरावत क्षेत्रमें श्री पुष्पदंत्तजी

७ पुष्करार्ध द्वीपके पहिले भरत क्षेत्रमें श्री प्रभासनाथजी और ८ ऐरावत क्षेत्रमें श्री जयनाथजी

९ पुष्करार्ध द्वीपके दूसरे भरत क्षेत्रमें श्री प्रभावकनाथजी और १० ऐरावत क्षेत्रमें श्री वलभद्र स्वामीजी

यह सर्व मिलकर १७० तीर्थंकर हुए, जिनमेंसे १६ नीलम जैसे श्याम वर्णके, ३८ पन्ने जैसे हरे वर्णके, ५० हीरे जैसे उज्वल वर्णके, ३० माणक जेसे लाल वर्णके, और ३६ सुवर्ण जेसे पीले वर्णके हुवे

तीर्थंकरोंका देह सूर्य जैसा महाप्रकाशी होता है और मल, प्रस्वेद, खेल, मल, दुष्ट लक्षण, [नागेरस्सा प्रमुख] और तिल-ममादिक दुष्ट व्यंजनसे रहित होताहै, चंद्र, सूर्य, ध्वजा, कुंभ पर्वत, मगर सागर —— सस, स्वस्तिक, इत्यादिक उत्तमोत्तम १००८ लक्षणसे [illegible]

ही मनोहर निर्धूम अग्नि जैसा देदिप्यमान शरीर होताहै, ज्यादे क्या व
र्णन करूं श्री मानतुंगाचार्य एक श्लोकमें वर्णन करते हैं कि —

श्लोक — स्त्रीणा शतानि शतसो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपम जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानु सहस्ररश्मिं
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥

अर्थात् इस दुनियामें हजारों स्त्रियों पुत्रोंको जन्म देती है, परन्तु
तीर्थंकरकी माता समान जन्म देनेवाली दूसरी माता कोई है ही नहीं
जैसे नक्षत्र ताराओंको तो सर्व दिशा जन्म देती है, परन्तु सूर्यको तो
अकेली पूर्व दिशा ही जन्म देती है

सर्व तीर्थंकरोंकी अवघेणा जघन्य ७ हाथकी, और उत्कृष्टी ५००
धनुष्यकी होती है* आयुष्य जघन्य ७२ वर्षका और उत्कृष्ट ८४लाख
पूर्वका होता है. और गुण सर्व तीर्थंकरोंके एक सरिसेही होते हैं

ऐसे अनंत २ गुणधारी अनंत अरिहंत भगवानको मेरा नमस्का
र सदा त्रिकाल हो !

परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराजकी सम्प्रदायके
बालब्रह्मचारी मुनी श्री 'अमोलख ऋषिजी' विरचित
श्री 'जैन तत्व प्रकाश' ग्रंथका 'अरिहंत' नामक
प्रथम प्रकरण समाप्तम्

* यह अवघेणा पांचमे आरेके १ ९ ०० वर्ष जायेंगे उस वक्त जो
मनुष्य होंगे उनके हाथसे गीनी गई है अपने १ हाथसे तासपकी अवघेणा
१ २ अंगुलकी ऊंची होती है

जम्बुद्वीप

प्रकरण २रा.

'सिद्ध'
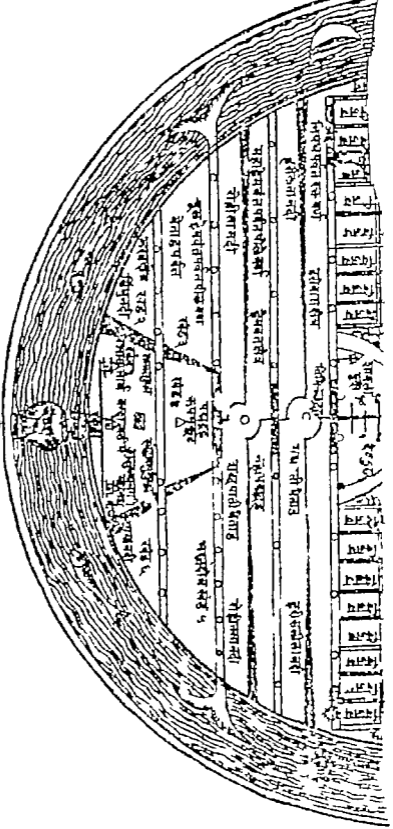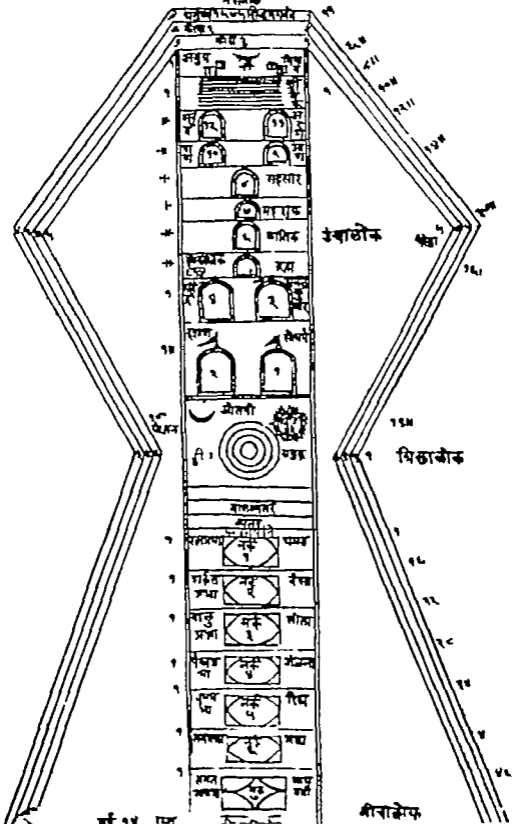
"सिव मयल मरुय, मणंत मख्खय मव्वाबाह,
मपुणरावर्ति, सिद्धि गइ नामधेयं"

अर्थात—उपद्रव रहित, अचल, जन्म कर्म अंकूर रहित, अत रहित अक्षय पीडा रहित, पुन जन्म रहित, ऐसे धामको "सिद्धगति" कहते हैं, और जिसमें रहनेवालोंको "सिद्ध" भगवान कहते है

श्री उववाइजीमें प्रश्न किया है —

कहिं पडिहया सिद्धा, कहिं सिद्धा पतिठिया ।
कहिं बोंदि चइत्ताण, कत्थ गताणु सिझइ ॥

अर्थात—सिद्ध प्रभु कहा जाके अटके हैं? कहां जाके स्थिर रहे है? किस जगह शरीरका त्याग किया है? और कहां जाके सिद्ध हुए हैं?

इस प्रश्नका उत्तर ऐसा दिया है कि?—

अलोय पडिहया सिद्धा, लोयग्रेय पतिठिया ।
इह बोंदि चइत्ताण, तत्थ गतूण सिझइ ॥

अर्थात्—सिद्ध प्रभू अलोकसे अडके रहे है, लोकके अग्र भागमें स्थिर रहे हैं, यहा (मनुष्य लोकमें) शरीरका त्याग किया है, और मोक्षमें जाके सिद्ध हुए हैं

अब ऐसा प्रश्न स्वभाविक रीतिसे होता है कि, सर्व लोकके उपर अग्र भागमें सिद्धभगवान विराजते हैं तो लोकालोकका हाल कैसा है?

'लोका लोकका बयान'

अलोक अनत है, अखंड है, अमूर्तिक है, फक्त एक आकाशति

काय (पोलार)करके भरा हुवा है, जैसे चौक (चौगान) में छींका लटकता होय तैसे अलोकके मध्यमें लोक है जैसे एक दीवा उलटा, उस पर दूसरा दीवा सुलटा, और उसपर तीसरा दीवा उलटा रखनेसे जैसा आकार होता है, तैसा इस लोकका आकार है, ऐसा श्री विवाह पन्नंती जी (भगवतीजी) सूत्रमें फरमाया है यह लोक नीचे सात राजू* चौडा है, वहां से सात राजू आवे वहां अनुक्रमे घटता२ मध्यमें दोनों दीवेकी संधीके स्थान एक राजू चौडा रह गया है, उपर अनुक्रमे बढता २ दूसरे तीसरे दीवेकी संधीके स्थान ३॥ राजू आवे वहां पाच राजू चौडा है, और उपर अनुक्रमे घटतां २ तीसरे उलटे दीवेके संधीस्थान ३॥ राजू आवे वहा एक राजू चौडा हैं, सर्व घनाकार मपतीसे ३४३ राजूका होता है अर्थात् एक जोजन‡ का लम्बा और एक योजनका चौडा ऐसा सं

---

* एक राजू क्षेत्र (जमीन) का प्रमाण १, ८१, २७, ९७ मण भार (वजन) का लोहेका एक गोलेको एक भार कहते हैं ऐसे हजार गोलेका एक गोला बनाके, कोई देवता बहुत उपरसे उसे नीचे डाले, वो गोला६ महिने, ६ दिन, ६ पहर, ६ घडीमें जितना आकाश (क्षेत्र) उल्लंघके नीचा आवे, उतनी जगह को एक राजू जगह कही जाती है

‡ योजन का प्रमाण–अनंत सुक्ष्म प्रमाणु मिलनेसे एक बादर प्रमाणु होता है जिसके दो टुकडे करनेकी शक्ती अति तिक्षण शस्त्रमें भी नहीं है, ऐसे अनंत बादर प्रमाणू जितना जाडा एक उष्ण श्रेणियां [गरमीका पुद्गल]होता है ८ उष्ण श्रेणियां जितनां जाडा एक शीत श्रेणियां (जाडा, ठन्डका पुद्गल) होता है ८शीत श्रेणियां जितनी जाडी-एक उर्ध्वरेणू [तर घलेमें उडती दिखता सो रज] होती है ८उर्ध्वरेणु जितना जाडा-एक रथ रेणु [रथ चलते धूल उडे सो] होती है, ८ रथ रेणु जितनी जाडी-एक देवकुरु उत्तर कुरु क्षेत्रके मनुष्य का बालाग्र, ८ देवकुरु उत्तर कुरु क्षेत्रके मनुष्यके बालाग्र जितना एक हरीवास रमकवास क्षेत्रके मनुष्यका बालाग्र, ८हरी वास रमकवास क्षेत्रके मनुष्यका बालाग्र जितना एक हेमवय एरण्यवय क्षेत्रके मनुष्यका बालाग्र, ८हेमवय एरण्यवय क्षेत्रके मनुष्यके बालाग्रजितना

पूर्ण लोकके खड्वे (टुकडे) की कल्पना करे तो ३४३ टुकडे होवें

जैसे वृक्ष त्वचा (छाल) करके वेष्टित होता है, तैसे सम्पूर्ण लोक तीन वलिये कर विष्टित (वींटा हुवा) है पहिला वलिया घनोदधी (जमे हुवे पानी) का, यह नीचे २००० जोजन का चौडा है, नीचेके दोनो कोनेपर ७ जोजन चौडा, मध्यमें ५ जोजन चौडा, उपर दोनो दीवेकी संधी स्थान ७ जोजन चौडा, उपरके दोनो कोनेमें ५ जोजन चौडा, और उपरके दोनो कोनेके मध्यमें २ कोस चौडा है दूसरा वलिया घनवात (जमी हुइ हवा) का, नीचे २०००० जोजन चौडा, नीचे के दोनो कोने पर ५ जोजन चौडा, मध्यमें ४ जोजन चौडा, उपर दोनों दीवेकी संधीमें ५ जोजन चौडा, उपरके दोनों कोनोंपर ४ जोजन चौडा, और दोनों कोनेके मध्य में १ कोस चौडा तीसरा वलीया तनुवात (तनी हुइ हवा) का, नीचे २०००० जोजन चौडा, नीचेके दोनो कानोंपर ४जाजन चोडा मध्यमें ३ तीन जोजन चोडा, उपरके मध्यमें ४ जोजन चौडा, उपर के दोनो कोनेपर ३ जोजन चौडा और दोनो कोनेके मध्यमें १५७५ धनुष्य चौडा है यहा सिद्ध भगवंत विराजमान हैं

जैसे घरके मध्यमें पोला स्थंभ खडा हो, तैसे लोकके मध्यमें एक

जाडा एक महा विदेह क्षेत्रके मनुष्यका बालाग्र ८ महा विदेह क्षेत्रके मनुष्यके बालग्र जितनी जाडी-एक लीक्ष, ८ लीख जितनी जाडी एक यूका (जू) ८ यूका जितना जादा एक यव मध्य, ८यव मध्यजितना जाडा एक उत्सेध अगुल,६ अंगुलका एक पउ [मुट्ठी], २ पउकी एक विहथी, २ विहथीका एक हाथ, २ हाथकी एक कुछ, २ कुछका एक धनुष्य, २००० धनुष्य का एक कोस [गाउ] ऐसे चार गाउका एक [अशाश्वती वस्तुका] जोजन और ८ ०० गाउका [पाठंतर १६० गाउका] शाश्वती वस्तु मापणेका एक जोजन, यह निरछालोक शाश्वते जोजनसे १८०० जोजनका उंचा है,

राजूकी चौडी और १४ राजुकी लंबी-उंची एक त्रस नाल है, इस त्रस नालके अंदरही त्रस और स्थावर दोनों प्रकारके जीव हैं, और बाकीका सर्व लोक फक्त (Only) स्थावर जीवहीसे भरा है ❋

"नीचा लोकका बयान"

सातमी नरक

"अलोक" के उपर सातमी "तमतमा प्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजूकी उंची और घनाकार ४९ राजुके विस्तार जितनी जगह है, जिसमेंसे एक लाख आठ हजार योजनका जाडा पृथ्वी पिंड है उसमेंसे ५२॥ हजार योजन नीचे छोडना और ५२॥ हजार योजन उपर छोडना, बीचमें तीन हजार योजनकी पोलार है, उस पोलारमें एक ही • पाथडा (गुफाके आकार जगह) है, उसमें पाच नरकावासे "नेरीए" (नरकके जीव)को रहनेके लिये हैं, काल, महाकाल रुद्र, महारुद्र, अइपइठा, ये पाच नरकावासेमें असंख्यात कुंभियें और असख्यात नेरिये हैं ये नेरियोंका ५०० धनुष्यका उत्कृष्ट शरीर व और आ

❋ कोइ त्रस जीवने त्रसनालके बाहिर स्थावर में उपजने का आयूष्य बांधा और मरणांतिक समुद्घात होते उसके आत्म प्रदेश त्रस नालके बाहिर तद्रूप भणिकरे तब २ त्रस जीव मरके त्रसमें उपजना हो वो विग्रह गती कर त्रस नाल बाहिर निकलजाय तब और १ केवली समुद्घात करे तब ४ थे ५ मे समय सब लोक में प्रदेश पूरे होवे तब यह १ कारण मे त्रस नालके बाहिरत्रास जीव रहते हैं

• जैसे मकानमें मजले होते हैं वैसे ही नरकमें मजले होते हैं जिनको 'आंतरे' कहते हैं और बीचमें जो थर (मट्टीका पिंड) होता है उसको 'पाथडे' कहते हैं आंतरे खाली है, और पाथडे पोले होते हैं, जिसमें नरकावासे है और उसमें नेरिये रहते हैं

पुष्य जघन्य १२ सागरका * उत्कृष्ट २२ सागरका होता है

छट्टी नरक.

सातमी नरकके उपर छट्टी " तम प्रभा " नामक नरककी हद
क एक राजु उंची और ४० राजू घनाकार विस्तार जितनी जगह है,
जेसमें १, १६,००० योजनकापृथ्वीपिंड है उसमेंसे १००० योजन नीचे
और १००० योजन उपर छोडना, वीचमें १,१४,००० योजनकीपोलारहे,
समें तीन पाथडे और दो आंतरे हैं पाथडेमें ९९,९९५ नेरकावासे हैं,
जेसमें असंख्यात कुमीयें और नेरिये हैं, यहनेरियेका शरीर उत्कृष्ट २५० धनु
यका ऊंचा और आयुष्य जघन्य १७ सागरका उत्कृष्ट २२ सागरका होता है

पांचमी नरक

छट्टी नरककी हदके उपर पांचमी ' धूमप्रभा " नामक नरककी
हद तक एक राजकी उंची और ३४ राजुके विस्तार जितनी जगह है,
जेसमें १,१८,००० योजनकाजाडा पृथ्वीमय पिण्ड है, जिसके १०००यो-

* एक योजन लंबा चौडा [गोळ] और एक ही योजनके उंडे कूवेमें
देवकुरुके मनुष्यके एक दो यावत् सात दिनके भीतरके बच्चे (लडके) के
केश एकके दो टुकडे न होवे एसे बारीक कतर के भरे ऐसे भरे कि वो
बालाग्र विणसे नही ऐसा भरे फिर १०० वर्ष जाये तब कूवेमेंसे १ बाला
ग्र निकाले; इसतरह निकालते २ जब वो कूवा पूरा खाली होवे उतने व
र्षको एक पल्योपम कहते हैं और ऐसे १ [illegible] १० [illegible]
कुवे खाली होवें तब एक सागरोपम होता है अब वर्षका हिसाब-आंख
मीचके तुर्त उघाडे इतनमें असख्यात समय होवे एस असंख्यात समयकी
एक आवलिका होती है ३७७१ आवलिकाका १ श्वासाश्वास [निरोगी मनु
ष्यका]; १७७१ श्वासोश्वासका का १ मुहूर्त [कच्ची दो घडी]; १ मुहुर्तकी
१ अहोरात्री (रात्री और दिवस); १५ अहोरात्री का १ पक्ष, २ पक्षका
१ मास; दो मासकी-१ ऋतु; [वसंतादिक , ३ ऋतुकी-१ अयन [उत्तरायन
दक्षिणायन]; २ अयनका-१ संवत्सर; [५ संवत्सरका १ युग]

जन नीचेके और १००० योजन उपरके छोडकर बीचमें १,१६,००० यो
जनकी पोलार है यह पोलारमें पाच पाथडे और चार आतरे हैं आंतरे
तो खालीहैं, और पाथडे में तीन लाख नरकावासे हैं, जिसमें असंख्या
त कुभीयें और नेरिये हैं यह नेरियेका देहमान उत्कृष्ट १२५ धनुष्यका
और आयुष्य जघन्य १० सागर ओर उत्कृष्ठ १७ सागरका है

चौथी नरक

पांचमी नरककी हदके उपर चौथी "पंकप्रभा" नरककी हद तक एक
राजू उची और २८ राजुके विस्तार जितनी घनाकार जगह है, जिस
में १,२०,००० योजनका जाडा पृथ्वीपिंड है उस्मेंसे १, २०,००० योज
नका उपरके और १००० नीचेके छोडनेसे बीचके १,१८,००० योजनकी
पोलार है जिस्में ७ पाथडे और ६ आतरे हैं पाथडेमें १०,००,००० नरका
वासे हैं, जिसमें असख्यात कुभीय और नेरिये हैं यह नेरिये का उत्कृष्ट
देहमान ६२॥ धनुष्यका, और आयुष्य जघन्य ७ सागर और उत्कृष्ठ१०
सागरका है

तीसरी नरक

चौथी नरककी हदके ऊपर तीसरी " वालुप्रभा " नामक नरक
की हद तक एक राजु उची और २२ राजूके विस्तार जितनी घनाकार
जगह है, जिसमें १,२८,००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिंड है उसमेंसे
१००० योजन उपरके और १००० नीचेके छोडनेसे बीचके १,२६,०००
योजनकी पोलार है, ९ जिसमें पायड और ८आतरे हैं पायडेमें १५,००,०००
नरकावास है जिसमें असख्यात कुभीये और नेरिये हैं, जिनका उत्कृष्ठ
देहमान ३१ धनुष्यका, और आयुष्य जघन्य ३ सागर और उत्कृष्ठ ७
सागरका है

दूसरी नरक

तीसरी नरकके हद ऊपर दूसरी " सकर प्रभा " नामक नरककी हद तक एक राजू ऊंची और १६ राजूके विस्तार जितनी घनाकार जगहहै, जिसमें १,३२,००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिंड है, इसमेंसे१००० योजन उपरके और १०००योजन नीचेके छोडनेसे १, ३०,००० योजनकी पोलार है, जिसमें ११ पाथडे और १० आतरे हैं, पाथडेमें २५,००,००० नरकावासे हैं, जिसमें असंख्यात कुंभीयें और नेरिय हैं, जिनका देहमान उत्कृष्ट १५॥ धनुष्य, १२ अंगुलका है, और आयूष्य जघन्य एक सागर, उत्कृष्ट तीन सागरका है

पाहिली नरक

दूसरी नरकके हद ऊपर पहिली 'रत्नप्रभा" नामक नरककी हद तक एक राजूमें १८०० योजन कमी इतनी ऊंची और१० राजू जितनी घनाकार जगह है, जिसमें १,८०,००० योजनका जाडा पृथ्वीमय पिंड है इसमेंसे १००० उपरके-१००० नीचेके योजन छोडनेसे बीचके १,७८,००० योजनकी पोलार है, जिसमें १३ पाथडे और १२ आतरे हैं एक नीचेका और एक ऊपरका आंतरा तो खाली है, और बीचके १० आतरेमें १० जातिके भवनपति देव रहते हैं और पाथडेमें ३०,००,००० नरकावासे हैं, जिसमें असख्यात कुंभिये और नेरियें हैं, जिनका देहमान उत्कृष्ट ७॥। धनुष्यका और ६। अंगुलका, और आयुष्य जघन्य १०००० वर्ष-उत्कृष्ट एक सागरका है

नरकोंका सविस्तार बयान

सातों नरकके सर्व मिलके ४२ आतरे, और ४९ पाथडे, और ८४,००,००० नरकावासे हैं, सर्व नरकावासे भीतरसे गोलाकार और बा

हिरसे चोखुणे हैं, सर्वका धरतीका तला पाषाणमय और अत्यंत ..
मय है, वहाकी मट्टी एक तिल जितनी यहाके मनुष्य लोकमें लाके
रक्खे तो जघन्य आधा कोस और उत्कृष्ट चार चार कोसके पशु-पक्षी
सकी दुर्गन्धसे तत्काळ मर जाय

८४,००,००० नरकावासेमें पहिली नरकके पहिले पाथडेका सीमं
नामे नरकावासा ४५,००,००० योजनका लंबा चौडा है, सातमी न
का अपइठा नामे नरकवासा १,००,००० योजनका लंबा चौडा है, औ
बाकीके सर्व नरकावासे तीन ३ हजार जोजनके ऊंचे हैं, उसमें १ह
जोजन नीचे और १ हजार जोजनउपरके पृथ्वीपिंड है, बीचमें १ हज
जोजनकी पोलार है, और असंख्यात योजनके लंबे चौडे हैं

प्रत्येक नरकके नीचे पहिले तो "घनोदधी"का पिण्ड २०,०
योजनका है, उसके नीचे "घनवाय" का पिण्ड उससे असंख्यात गु
है, उसके नीचे "तनुवाय" का पिंड उससे असंख्यात गुणा है, उस
नीचे "आकाशास्तिकाय" असंख्यात गुणा है सातों नरकके नीचे इ
तरह हैं. इनके आधारसे नरक ठेहरी है, जेसे के पारे पर पथ्थर ठेहर
है, और हवामें बेलुन (गुब्बारा) ठेहरता है, तेसे ही नरक घनवाय-
तनुवाय-घनोदधि और आकाशास्तिकायके ऊपर ठेहरी है

१ रत्नप्रभा नरकमे काली रत्नमय भयंकर जगह है २ शर्करप्र
नरकमें तीक्ष्ण पत्थर हैं ३वालुप्रभा नरकमें उष्णरेती है ४पंकप्रभा-न
में लोही मासका पंक (कादव) है ५ धूम्रप्रभा नरकमें धुंवा (धुमा
है ६ तमप्रभा नरकमें अंधकार है और ७ तमतमा प्रभा नरकमें इस
भी ज्याद भयंकर अंधकार है

प्रश्न—नर्गियेका जन्म केसे होता है?

उत्तर-नरकके नरकावासेकी उपरकी भींतमें विल* हैं, वहां उ
न होनेकी योनि (स्थान) है, वहां पापी जीव जाके उपजते हैं, और
तमुहुर्तके अदर पाच प्रजा वांधते हैं – (१) प्रथम अशुभ पुद्गलका
हार कर (२) शरीर बांधते हैं, (३) फिर इंन्द्रिये फूटती हैं, (४) फिर
सोश्वास चलता है, (५) फिर मन और भाषा भेली वाधकर वहांसे गि-
हैं, जहां ४ प्रकारकी कूंभी पडी रहती है (१) ऊंटकी गर्दनके जैसी
(२) घृतके सीदडेकी तरह पेट और मुख सकडा, (३) डब्बेकी तरह
र नीचे बराबर, (४) तिजारे या अफीम के डोडे की तरह पेट चौडा
र मुख सकडा और भीतर चारों तरफ तिक्ष्ण धारा इनमेसे हरेकमें
नेरिया आकर पडता है के तुर्त उसका शरीर फूल जाता है सकडी
गह है और तिक्ष्ण धार लगनेसे वहोत दु खी हो बूम पाडता है, तब प
ाधामी आके संडासी आदि शस्त्रसे उसे खेंचते हैं, तब टुकडे २ होके
हिर निकलता है अत्यत वेदना होती है परन्तु वो मरता नहीं है, क्यों-
बचे हुए कर्म भुक्तनेके हैं, इस लिये वा मरता नहीं है परंतु दु खी
ता है

फिर थोडी देरमे उसका शरीर बराबर जम जाता है, जैसा पारा
खरा हुवा पीछा मेला हो जाता है फिर वो क्षुधा तृषा अत्यत ल
नेसे बूम पाडता है, तब

"परमाधामी (यम) कृत वेदना"

१ "अम्ब" नामक परमाधामी, जैसे कोइ आमके फलको मशल
उसका रस ढीला कर डालते हैं, तैसे नेरियेको परिताप उपजाके उसकी

* कितनेक कहते हैं कि कुंभियें ही उत्पत्तिस्थान हैं परंतु प्रश्न व्या करणजीसूत्रमें और सुयगडांगजी सूत्रमें उपरसे पडनेका लिखा है ज्यादे खुलासा दिगंबर ग्रंथोंमे है

सब नशा ढीली कर निर्बल बना देते हैं २ 'अम्बरस' नामे परमाधामी जैसे यहां सिपाई चोरको मारते हैं, तैसे नेरीयोंकी हड्डी,* मास, रक्त, अगो पाग, अलग २ कर फेंक देत हैं ३ 'शाम' नामक परमधामी, जैसे यह सिपाई चोरको मारते है तैसे नरिये को जवर प्रहार करते हैं, ४ 'सवल नामक परमाधामी जैसे यहा सिंह रींछ कुत्ते बिल्ली आदि क्रूर जानव अपना भक्ष (मनुष्य पशु) को पकड चीर फाड मास निकाल लेते है, तैरे रुप परमाधामी बना के, नेरियेको चिर फाड कर मसा निकालते है 'रुद्र' नामक परमाधामी, जैसे यहा दवीके भोपे बकरे आदि जीवों के त्रिसूल से छेदत हैं, सुली चडाते हैं, तैसे नेरियेको त्रिशूल भाल सुर्ल आदिसे छेदते हैं ६ ,महा रुद्र' नामक परमाधामी जैसे यहां कसा जीवोका मार खड २(टुकडे २) करते हैं, तैसे नेरिये के ‍टुकडे२ करते है ७ 'काल' नामक परमाधामी, जैस हलवाई कडाई मे तैलादि गरमकर भ जिये पुडी तलते है, तैस नेरियों को तलते हैं, ८ 'महा काल' नामव परमाधामी नेरियोका मास चिमटेसे तोड २ उसेही खिलाने हैं ९ 'असिपत्र नामक' परमाधामी, जैसे यहा सूरवीर पुरुष वीर रसमें च के संग्राम में कत्ला करताहै तैसे तिक्षण तलवारसे नेरियोंके तिल२ जि तने कडे करते है १० 'धनुष' नामक परमाधामी, जैसे सिकारी ता क २ के जंगली जानवरों के शरीरके आरपार बाण निकालता है, तैसे सहस्रो बाणों कर नेरिये का शरीर छेदते है ११ 'कुंभ' नामक परमाधामी, जैसे यहा निम्बू मिरची केरी आदि मे मशाला भर आचार(अथाणा डालते है, तैसे नेरीयोंका सरीर चीर फाड क्षारे तिक्षण मशाला भ कुंभमें बन्ध करदेते हैं, १२ 'वालु' नामक परमाधामी, जैसे भड भूंजा उ

---

*नारकीयोंका वैक्रय शरीर है इसलिये रक्तमांस हाड तो नहीं होता है परन्तु रक्तमास हाड जैसेही मर अशुचि पुद्गल होते हैं

गरेती (वालु) में अनाज भुंजता है तैसे नेरिये को अत्यत उष्ण वाल्द
भुज डालते है १३ ' वेतरणी ' नामक परमाधामी, जो धोवी वस्त्रको
ते कूटते निचोते हैं, तैसे नेरिये को अत्यत तिक्षण उष्ण वेतरणी नदी
पाणीमें धोते कूटते निचोते है, १४'खरस्वर' नामक परमाधामी, वैक्र
शामली वृक्ष वनाके उसके नीचे नेरिये को वैठाते हैं, वो पत्र वरछी
धार जैसे तिक्षण है सो शरीरके आरपार निकल जाते हैं, १५
महाघोष' नामक परमाधामी जैसे वाघरी वकारियों भेडियोंको कोठेमें भ
ता है, तैसे नेरियोको अंधेरे सकडे कोठेमें अनमावते खीचोखीच भर देतेहैं

और भी वो नेरिया अहार मागता है तब उसीक शरीरका मास
तोड तल भूंज उसे खिलाते हैं, और कहते है कि, तेन पूर्व जन्ममें वहुत
प्राणियोंके मासका आहार किया था, ता अव यह भी तुझ पसंद पड
ना चाहिये ! जव वो नरिया पानी मांगता है तव उसे लोहे सीसे तरू
पे वगेरा धातुओंका गरमागरम (उकलता) रस, सडासीस उसका मुख
फाड उसमें डाल दतें है और कहत हैं, तुझे मदिरा और विन छाना
पानी वहुत पसंद था ता लीजीये ! यह भी लहजत दार है ! वेस्या औ
र परस्त्रीके लंपटको लोहेकी तप्तकी हुइ पुतलीसे आलिंगन कराके कहते
हैं कि, अय दुष्ट! तुझे परस्त्री वहुतही प्यारी थी, तो अव यह सुदर लाल वर्ण
की स्त्रीका आलिंगन करते क्यों रोता है, रस्ता छोड कू रस्ते चले वा अ
धर्म मार्गमें भोले लोकोंको चलाये उनको इंगार त अगारपर चलाते है
गाडी पोठी हम्माल आदिपर वहुत वजन लादा, उसके पास लख्खों टन वजन
की गाडी खिचवाके डोंगरेंमें घाटीमें सूलो पे चलाते हैं, उपर चावुक
मारोंके जवर प्रहार(मार)करत हैं नदी तलाव आदिमें मस्ती करनेवाल
को और अप्रमाण विन छाणे पाणीम नहाने वालको वेतरणी नदीक उष्ण
तिक्षण पाणीमें डाल शरीर छिन्न भिन्न करते हैं, साँप विच्छु-पशु पक्षी वगे

रा प्राणियोंको मारने वालको वैसेही क्षुद्री जानवरोंका परमाधामी रूपव नाके उनको डश करके महा वेदना त्रास उपजाते हैं वृक्ष काटने वाले का शरीर फाडते हैं श्रोतेंद्री के अत्यत गृधी के कान, चक्षु इन्द्रीके गृधिकी आँख, घण इन्द्रीके गृधीके नाक मूलसे छेदते हैं रसना गृधीकी जबान छेदते हैं चुगल निंदक के मुखमें कटार मारते हैं, ऐसेही घाणी में पीलते हैं, आगमें पचाते हैं, पहाड उपरसे पटक देते हैं महा वायूमें उडा देते हैं, इत्यादि पूर्व कृत्योंके अनुसार अनेक तरह उपद्रव करते हैं, सताते हैं, त्रास देते हैं, तब वो नेरिये अनेक प्रकारकी आजीजी लाचारी दीनता करते हैं, पांवमें पडते हैं, दशही अङ्गलियों मुखमें डालते हैं, अरडाते हैं, महा आक्रंद रुदन करते हैं परन्तु उनकी परमाधामीयों (परम अधर्मीयों) को बिलकुल दया नही आती हैं, उसकी अर्जी पर बिलकुल ही लक्ष नहीं देते है

दो प्रश्न स्वाभाविक रीतिसे होते हैं — १ परमाधामी इस तरह क्यों नेरियोंको सताते हैं? और २ परमाधामीको यह भयंकर मारकूटका दोष लगता होगा कि नहीं ?

यह प्रश्नोका खुलासा-१ परमाधामी पूर्व भवमें अज्ञान तप कि जिसमें असंख्य प्राणियोंका क्षय होय उसके प्रभावसे ही होते हैं इस लिये वह परमाधामी होकर नरियेको सतानेमेंही आन्नद मानते हैं जैसेकि यहां कितनेक निर्दय लोग शिकारमें आन्नद मानते हैं कितनेक पाडेकी लडाइ आदिमें आन्नद मानते हैं २ परमाधामीको दोष नहीं लगता है, ऐसा नहीं है दोष तो अवश्यमेव लगताही है, जिसके प्रभावसे वे भी नीच योनीमें मकर कूकड होके अधूरे आयुष्यसे मरते हैं

प्रश्न—तीसरी नरक के नीचे—४—५—६—७ नरकमें किस तरह उपद्रव है?

उत्तर—चौथी—पाचमी नरकमें दो प्रकारकी आपसकी वेदना है १ सम्यक् द्रष्टिकी और २ मिथ्यात्व द्दष्टिकी सम्यक् द्रष्टिवाले नेरिये तो अपने पूर्वके किये हुये पापके फल प्राप्त हुवे हैं, ऐसा जानकर एक ठिकाणे पडे २ तडफडते हैं परन्तु दूसरेको सताते नहीं दूसरे उस का सतावे तो वो समभावसे सहन करते हैं २ मिथ्यात्व द्रष्टिवाले जो नेरिये हैं वोतो (जैसे यहा कोइ नवीन कुत्ता आनेसे दूसरे कुत्ते उसपर टूटपडते हैं, और दात, पंजा आदिसे त्रास उपजाते हैं तैसेही) नये आनेवाले नेरियेकी साथ मुक्के, लात, शस्त्र आदिस मारामारी करते हैं (नेरियोंको मरजी मुजब कनिष्टरुप धारण करनेकी भी सत्ता मिली है)

छट्ठी-सातमी नरकके नेरिये आपसमें अति द्वेषी होकर लाल कुंथुवे जैसा गोबरके कीडे जैसा बडे छोटे वज्रमय मुखवाले वैक्रिय शरीर करके एक एकके शरीरमें प्रवेश करके आरपार निकलते हैं, और सारे शरीर में चालणी जेसे छीद्र बना देते हैं जिससे महा भयकर वेदना होती हैं

१०प्रकारकी क्षेत्रवेदना

नरकमें उपर कहे मुजब छेदन—भदन होता है, इतना ही नहीं परन्तु और भी वहा १० प्रकारकी क्षेत्रवेदना है —

१अनंत क्षुधा—जगत्में जितनी खानेकी वस्तु है वो सब एकही नेरियेको देनेसे भी उसको तृप्ति नहीं होवे इतनी उसको क्षुधा रहती है २ अनंत तृषा—सर्व जगत्का पाणी एक नेरियेको पीला देवे तो भी उसकी तृषा शात नहीं होती है ३अनंत शीत—लक्षमण लोहेका गोला उस स्थानमें पडतेही विखर जाय और नेरियेको वहांसे उठाकर कोइ हिमालयके वर्फमें सुला देवे तो उसको आनंद होवे कि वहा से यहा बहुत शीत कमी है ४ अनंत उष्णता—लक्षमण लोह का गोला गलके पानी होजाय और जलती भट्टीमें नेरियको सुलावे तो नरककी उष्णताके प्रमा

णमें उसको वहा बहुत कमी उष्णता लगतीहै ५ अनत दाह ज्वर ६अ नत खुजली ७ अनंत रोग, (जलोधर, भगन्दर, कुष्टरोग, इत्यादि १६ प्र कारके मोटे रोग, और ५,६८,९९, ५८५ प्रकारके छोटरोग उसको हमेश ही लगे रहते हैं) ८ अनत अनाश्रय किसीका आश्रय—दिलासा मदद नहीं है ९ अनतशोक हमेश चिंता ग्रस्त रहते हैं १० अनंत भय नरकमें सर्वत्र भयकर अधकार व्याप्त हो रहा है, और नेरियेकी देह भी काली—भ यंकर होती है, और चारों तफरसे मार२ का पुकार पड रहा है, इस लिये नारकी के जीव प्रतिक्षण भयसे आकुलव्याकूल रहते हैं और क्रोडोंबिच्छ ओके दंशसेभी नर्ककी जमीनका अती विषमय दु ख कारी स्पर्श है, इत्या दि महा भयकर दु खों कर नर्कके जीव सदा पीडित हो रहेहैं आँख मीच के उघाडे इत्नाभी आराम नहीं है

प्रश्न—नर्कमें कौन जाता है ?

उत्तर—श्री सुयगडाग सूत्रके प्रथम श्रुतस्कधके पाचमें अध्यायमें कहा है कि —

निन्चतसे पाणिणो थावरेय । जे हिंसती आयसूह पडुच्चा ॥
जे लुसअे हाइ अदत्तहारी । न सिक्खति सेय वियस्सकिंची ॥४॥
पागभ्भी पाणे बहुणाति वाति । अनिव्वते घात मूवेति बाले ॥
णिहोणी सगच्छाति अतकाले । अहो सिर कट्टु उवेइ दुग्ग ॥५॥

अर्थात्—निर्दयतासे सदा त्रस जीव (बेंद्रिय, तेंद्रिय, चौरेंद्रिय, पचेंद्रिय), स्थावर जीव, (पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायू वनस्पति), की जो हिंसा करता है, फक्त अपना ही सुख इच्छता है, और जीवोंकी आज्ञा विना उनका मर्दन करता है, धर्ममार्गमें कभी नही प्रवर्तन करता है, खु शी होके प्राणियोंको मारता है, वृत प्रत्याख्यानस रहित है, ऐसे अज्ञानी जीव घात से निवर्ते विना मृत्यू पाके नीचा सिर करके नर्कमें पडकर महा कष्ट भोगवते हैं

भवनपतिका वर्णन

जो पहली नरकके १२ आतरे हैं, उसमें ११,५८३ योजन झाझेरी (कुछ ज्यादा) जगहहै, जिसमेंसे एक आंतरा उपरका और एक नीचेका छोडके वीचके १० आतरेमें १० भवनपति देव रहते हैं, इन आतरेमें २ विभाग हैं, दाक्षिण और उत्तर, यह दोनो दिशाके देवताकी जात अेकही है परन्तु दोनोंके इन्द्रके नाम अलग २ हैं

दक्षिण दिशामें ४,०६,००,००० भवन हैं, और उत्तर दिशामें ३,६६,००,००० भवन हैं, यह भवन जघन्य (छोटेसे छोटे)तो जम्बूद्वीप प्रमाणे (एक लाख योजनके), मध्यम अढाइद्वीप प्रमाणे (४५ लाख योजनके), और उत्कृष्ट (वडेसे वडे) असंख्याते द्विप समुद्र जितने (असंख्यात योजनके) हैं सब भवन बाहिरसे गोलाकार और भीतरसे चतुष्कोणाकार है संख्याते योजनके भवनमें संख्याते देव, और असंख्याते योजनके भवनमें असंख्याते देव रहते हैं

दक्षिण दिशाके मालिक असुरकुमारके राजा चमरेन्द्र हैं, इनके ६४,००० सामानिक देवता हैं, २,५६,००० आत्मरक्षक देवता हैं, ६ अग्रमहिषी इन्द्राणी एकेक छे छे हजार रूप बणावे ७ अणिका है* ३ प्रषदा है, (१) अभ्यंतरके २४,००० देव, (२)मध्यके २८,००० देव, (३) बाह्यके ३२,००० देव हैं, और अभ्यंतर की ३५० मध्यकी ३०० बाह्य की २५० देवी हैं, इन्द्रका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट एक सागरका और इन्द्राणीका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ठ साढेतीन पल्योपमका होता है

दक्षिण दिशाके अन्य भी जो नागकुमारादिक ९ जातके देवता

* सात अणिका अर्थात् ७ तरहकी फोज'–गंधव नाटक,अश्व हस्थी रथ, पायक (पायदळ), पाडे (भेंसे)

हैं, इनके इन्द्रके छे ठे हजार सामानिक देवता, चोवीस २ हजार आत्म रक्षक देवता, पाच २ अग्र महिषी, इन्द्राणीयों एकेक पाच २ हजार रुप बनावे, सात२ अणिका, तीन २ प्रपदा, १ अभ्यंतरके ६०,००० देव, २ मध्यके ७०,००० देव, ३ बाह्यके८०,००० देव हैं और अभ्यतरकी १७५ मध्यके १५० बाह्यके १२५ देवीयों हैं, आयुष्य जघन्य १० हजार वर्ष का, उत्कृष्ट १॥ पल्योपमका, और इनकी देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट ०॥। पल्योपमका होता है

उत्तर दिशाके मालिक असुरकुमारका राजा बलेन्द्रके ६००००सामानिक देवता, २,४०,००० आत्मरक्षक देवता, ६ अग्र महिषी इन्द्राणीयों एकेक छे छे हजार रूप बनावे ७अणिका ३ प्रपदा, [१] अभ्यंतरके २०,००० देव, [२] मध्यके २४००० देव, [३] बाह्यके २८,०००दव हैं और अभ्यंतरकी ४५० मध्यकी ४ बाह्यकी ३५० देवीयों है, इनका आयुष्य जघन्य१०,००० वर्षका झाझेरा (कुछ ज्यादा) और उत्कृष्ट एक सागरका, इनकी इन्द्राणी का जघन्य १०,००० वर्षका उत्कृष्ट ४॥ पल्योपमका है

उत्तर दिशाके अन्यभी जो नागकुमारादिक ९ जातिके देवता हैं इनके इन्द्रके छे छे हजार सामानिक देवता, २४,००० आत्मरक्षक देव ५ अग्र महिषी इंद्राणी, एकेक पांच २ हजार रुप वणावे, ७ आणिका, ३ प्रपदा (१) अभ्यतरके ५०,००० देव, (२) मध्यके६०,००० देव, (३) बाह्यके ७०,००० देव हैं और अभ्यंतरकी २२५, मध्यकी २००, बाह्य १७५ देवी, आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट देश उणा (कुछ कमी) दो पल्यापमका और दवीयोंका आयुष्य जघन्य १०,०० वर्षका उत्कृष्ट देश उणा १ पल्योपमका है

यह देवता कुमार (बालक) की तरह क्रीडा करनेमें रति मानते हैं, इस लिये इनको 'कुमार' कहते हैं महापुण्यवंत प्राणी हैं

	भवनपतीके नाम	दक्षिण दिशाके इन्द्रके नाम	उत्तर दिशाके इन्द्रके नाम	शरीरका वर्ण	वस्त्रका वर्ण×	मुगटका चिह्न ××	दक्षिण दिशा के भवन	उत्तर दिशा के भवन
१	असुरकुमार	चमरेन्द्र	बलीन्द्र	कृष्णवर्ण	लाल	चूडामणी	३४ लाख	३० लाख
२	नागकुमार	धरणेन्द्र	भूतेन्द्र	श्वेतवर्ण	हरे	नागफण	४४ लाख	४० लाख
३	सुवर्णकुमार	वेणुदेव	वेणुदालीन्द्र	कनकवर्ण	श्वेत	गरुड	३८ लाख	३४ लाख
४	विद्युतकुमार	हरीकान्तेन्द्र	हरीशिखेन्द्र	लालवर्ण	हरे	वज्र	४० लाख	३६ लाख
५	अग्निकुमार	अग्निशिखेन्द्र	अग्निमाणवेन्द्र	लालवर्ण	हरे	कलस	४० लाख	३६ लाख
६	द्वीपकुमार	पूर्णेन्द्र	विशिष्टेन्द्र	लालवर्ण	हरे	सिंह	४० लाख	३६ लाख
७	उदधीकुमार	जलकान्तेन्द्र	जलप्रभेन्द्र	श्वेतवर्ण	हरे	अश्व	५० लाख	३६ लाख
८	दिशाकुमार	अमितेन्द्र	अमितवाहनेन्द्र	लालवर्ण	श्वेत	हाथी	४० लाख	३६ लाख
९	वायुकुमार	वेलंबेन्द्र	प्रभंजनेन्द्र	हरावर्ण	सांझसंध्या फूलेजैसा	मगर	४० लाख	३६ लाख
१०	स्थनितकुमार	घोषेन्द्र	महाघोषेन्द्र	कनकवर्ण	श्वेत	वृधमान सरावले	४० लाख	३६ लाख

× इस रंगका वस्त्र पहरनेका ज्यादा शोक है. ×× यह चिन्ह देवता के मुगटमें होता है इससे जातिकी पहछान होती है

यह सर्व मिलकर ७ राजू माठेरा [कुछ कमी] उंचा और १६९ राजू घनाकारके प्रमाणसे नीचे लोकका अधिकार सम्पूर्ण हुआ

तिरछा लोकका वर्णन

रत्नप्रभा पहली नरकके उपर जो पृथ्वीपिंड १००० योजनका छो़डा था, उसमेंसे १०० योजन नीचे छोडना और १०० योजन उपर छोडना, वीचमें ८०० योजनकी पोलाड है, जिसमें ८ जातिके व्यंतर देवके असंख्य नगर [ग्राम] हैं, और उपर जो १ योजन छोडे उसमेंसे १ योजन नीचे छोडना, १० योजन उपर छोडना, बीचमें ८ योजनकी पोलाड है, जिसमें भी असंख्यात वाणव्यंतरके नगर हैं

यह नगर जघन्य (छोटेसे छोटे) भरत क्षेत्र प्रमाणे [५२६ योजन झाझेरे] मध्यम महाविदेह प्रमाणे [३३,६८४ योजन झाझेरे], उत्कृष्ट (वडेसे बडे) जंबुद्विप प्रमाणे [एक लाख योजन के] हैं उनमें असंख्यात देवता रहते हैं

इन दोनो पोलाडमे दो दो विभाग हैं १ दाक्षिण और २ उत्तर इनमें एकेक जातके दो दो इन्द्र रहते हैं [इनका वणन नीचेके यत्रमे दिया गया है]*

यह दोनो प्रतर(भूमि) के मिलके ८व्यतर और ८ वाणव्यतर यों १६ जाति के देव रहतेहैं, इनके ३२ इन्द्रके प्रत्येकके चार २ हजार सामानिक देव, सोले २ हजार आत्मरक्षक देव, चार २ अग्रमहिषी इन्द्राणी एकेक हजार २ रुपकरे, ७ आणिका, ३ प्रपदा, १ अभ्यतरके ८००० देव, २ मध्यके १०,००० देव, ३ बाह्यके १२,००० देव हैं आयुष्य जघन्य १०,०० वर्षका, उत्कृष्ट एक पल्योपमका, इनकी देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०,००० वर्षका, उत्कृष्ट आधी पल्योपमका है यह देवता मनोहर नगरोंमें देवीयोंके साथ गाने वजानेमें और क्रीडामें आनद मानते हुये पुन्यफल भोगवते है

व्यंतरका यन्त्र

८० योजनकी प्रथम परतरके ८ जातके व्यंतरोंका यंत्र			८ योजनकी दूसरी परतरके ८ जातके पाण व्यंतरोंका यंत्र			दोनों परतरके देवोंका वर्ण और चिन्ह	
व्यंतरके नाम	दक्षिणके इंद्र	उत्तरके इंद्र	पाणव्यंतरके नाम	दक्षिणके इंद्र	उत्तरके इंद्र	शरीरका वर्ण	मुगटका चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महाकालेन्द्र	आनपन्नी	सन्नीहितेन्द्र	समानेन्द्र	काला	कदंब वृक्ष
भूत	सुरूपेन्द्र	प्रतिरूपेन्द्र	पाणपन्नी	धातेन्द्र	विधातेन्द्र	काला	शालीवृक्ष
यक्ष	पूर्ण भद्रेन्द्र	माणी भद्रेन्द्र	इसीवाइ	इसीन्द्र	इसीपालेन्द्र	काला	वड वृक्ष
राक्षस	भीमेन्द्र	महाभीमेन्द्र	भूइवाइ	इश्वरेन्द्र	महेश्वरेन्द्र	श्वेत	पाडलिवृक्ष
किन्नर	किन्नरेन्द्र	किंपुरुषेन्द्र	कंदीये	सुवछेन्द्र	विशालेन्द्र	हरा	अशोकवृक्ष
किंपुरुष	सुपुरुषेन्द्र	महापुरुषेन्द्र	महाकंदीये	हास्येन्द्र	हास्यरतिन्द्र	श्वेत	चंपकवृक्ष
महोरग	अतिकायेन्द्र	महाकायेन्द्र	कोहंडग	श्वेतेन्द्र	महाश्वेतेन्द्र	काला	नागवृक्ष
गंधर्व	गीतारतेन्द्र	गीतरसेन्द्र	पड़गवेय	पड़गेन्द्र	पड़पतीन्द्र	काला	टींबरुवृक्ष

तिरछा लोकका वर्णन

रत्नप्रभा पहली नरक्के उपर जो पृथ्वीपिंड १००० योजनका
दा था, उसमेंसे १०० योजन नीचे छोडना और १०० योजन उपर छो
ना, वीचमें ८०० योजनकी पोलाड है, जिसमें ८ जातिके व्यतर देव
असंख्य नगर [ग्राम] हैं, और उपर जो १ योजन छोडे उसमेंसे
योजन नीचे छोडना, १ योजन उपर छोडना, वीचमें ८ योजन
पोलाड है, जिसमें भी असंख्यात वाणव्यंतरके नगर हैं

यह नगर जघन्य (छोटेसे छोटे) भरत क्षेत्र प्रमाणे [५२६ योज
झाझेरे] मध्यम महाविदह प्रमाणे [३३,६८४ योजन झाझेरे], उत्कृष्ट (
से बडे) जम्बुद्विप प्रमाणें [एक लाख योजन के] हैं उनमें असंख्या
देवता रहते हैं

इन दोनो पोलाडमे दो दो विभाग हैं १ दाक्षिण और २ उत्त
इनमें एकेक जातके दो दो इन्द्र रहते हैं [इनका वर्णन नीचेके यत्र
दिया गया है]•

यह दोनो प्रतर(भूमि) के मिलके ८व्यतर और ८ वाणव्यतर
१६ जाति के देव रहतेहैं, इनके ३२ इन्द्रके प्रत्येकके चार २ हजार सामानि
क देव, सोले २ हजार आतमरक्षक देव, चार २ अग्रमहिषी इन्द्राणी ए
केक हजार २ रुपकरे, ७ आणिका, ३ प्रपदा, १ अभ्यतरके ८००० देव, २
मध्यके १०,००० देव, ३ बाह्यके १२,००० देव हैं आयुष्य जघन्य १०,०००
वर्षका, उत्कृष्ट एक पल्योपमका, इनकी देवीयोंका आयुष्य जघन्य १०,०००
वर्षका, उत्कृष्ठ आधी पल्योपमका है यह देवता मनोहर नगरोंमें देवीयों
के साथ गाने वजानेमें और क्रीडामें आनंद मानते हुये पुन्यफल भो
गवते हैं

व्यंतरका यन्त्र

८०० योजनकी प्रथम परतरके ८ जातके व्यन्तरोंका यत्र			८ योजनकी दूसरी परतरके ८ जातके वाण व्यंतरोंका यत्र			दोनों परतरके देवोंका वर्ण और चिन्ह	
व्यंतरके नाम	दक्षिणके इन्द्र	उत्तरके इन्द्र	वाणव्यंतरके नाम	दक्षिणके इन्द्र	उत्तरके इन्द्र	शरीरका वर्ण	मुगटका चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महाकालेन्द्र	आनपन्नी	सन्नीहितेन्द्र	समानेन्द्र	काला	कदंब वृक्ष
भूत	सुरूपेन्द्र	प्रतिरूपेन्द्र	पाणपन्नी	धातेन्द्र	विधातेन्द्र	काला	शालीवृक्ष
यक्ष	पूर्ण भद्रेन्द्र	माणी भद्रेन्द्र	इसीवाइ	इसीन्द्र	इसीपालेन्द्र	काला	पद वृक्ष
राक्षस	भीमेन्द्र	महाभीमेन्द्र	भूइवाइ	इश्वरेन्द्र	महेश्वरेन्द्र	श्वेत	पाडलिवृक्ष
किन्नर	किन्नरेन्द्र	किंपुरुषेन्द्र	कंदीये	सुवछेन्द्र	विशालेन्द्र	हरा	आशोकवृक्ष
किंपुरुष	सुपुरुषेन्द्र	महापुरुषेन्द्र	महाकंदीये	हास्येन्द्र	हास्यरतिन्द्र	श्वेत	चंपकवृक्ष
महोरग	अतिकायेन्द्र	महाकायेन्द्र	कोहंडग	श्वेतेन्द्र	महाश्वेतेन्द्र	काला	नागवृक्ष
गंधर्व	गीतारतेन्द्र	गीतरसेन्द्र	पतंगदेव	पतंगेन्द्र	पतंगपतीन्द्र	काला	टींबरवृक्ष

मनुष्य लोकका वर्णन

रत्नप्रभा पृथ्वीपिंडके ऊपर यह जो अपन रहते हैं, सो पृथ्वीके
ध्य भागमें (वहुत ही बीचमें) मेरु पर्वत है, और मेरु पर्वतके म
बीचमे नीचे गोस्तन (गायेके बोबे) के आकार ८ रुचक प्रदेश हैं
हासे ९०० योजन नीचे और ९०० योजन उपर ऐसे १८०० योजन
उचा और १० राजूके घनाकार विस्तारमें तीछा लोक है उसमेंसे ९
योजन नीचे जो वाणव्यतर देव रहते हैं उनका तो बयान हुआ ३
१० योजन जो उपर पृथ्वी रहीथी उसके उपर मनुष्य लोक तथा
समुद्र पर्वत नदी हैं उनका वर्णन चलता है

मेरुपर्वतका वर्णन

सर्व पृथ्वीके मध्यमें मेरु पर्वत है कि जो मलस्थंभके आका
नीचे चौडा और उपर सकडा गोलाकार है सर्व एक लाख योजनका ऊ
चा है, उसमें से १००० योजन तो पृथ्वीमें हैं, और ९९,००० योजन पृथ्वी
के उपर है, पृथ्वीके भीतर १००९ $\frac{1}{11}$ योजन जितना चौडा है पृथ्वीके ऊपर ब
रावर पूरा १,०० योजनका चौडा है, यों कमी होता होता आखिर १००
योजनका चौडा रह गया है, उसके ३ कान्ड [विभाग] किये हैं पहला
कान्ड पृथ्वीमें १००० योजनका सो मिट्टी, पाषाण, कंकर, और वज्र
रत्नमय है दुसरा काड पृथ्वी उपर ६३०० योजनका स्फटिक रत्न
अंक रत्न, रुपे, और सुवर्णमय है तीसरा कान्ड वहासे आगे ३६,००
योजनका लाल सुवर्णमय है

इस मेरु पर्वतके उपर ४ वन [बगीचे]हैं १ भद्रसाल वन पृथ्वी
के बराबरमें है, पूर्व-पश्चिममें २२,०० योजन लबा और उत्तर-दक्षिण
में २५ योजन चौडा है, इसके चार गजदंता पर्वत और सीता सीत

। नदीसे आठ खड विभाग होगये हैं २ इस भद्रसाल वनसे मेरु प
तपर ५ • योजन उचा जावे वहा दूसरा नदनवन है सो ५ योजन
। चौडा, मेरुके चारों तर्फ वलिया (चुडी) के तरह फिरता हुवा है (३)
॥ नदन वनसे ६२,५ •योजन उपर जावे वहा तीसरा सोमानस वन है,
ो ५०• योजन चौडा, मेरु पर्वतके चारों तर्फ वलिया के तरह फिरता
ुवा है ४ सोमानस वनस ३६ ० योजन उपर जावे वहा चौथा पा
ुक वन है, सो ४९४ योजन चौडा चारों तर्फ वलियां की तरह फिरता
ुवा है, यहां तीर्थकरोका जन्माभिषेक करनेकी चार दिशामें चार शिला
अर्जुन सुर्वणमय अर्ध चंद्राकार है पूर्वमें पाडूक शिला, और पश्चिममें
रक्तशिला इन एक एक पर दो दो सिंहासन हैं यहा पूर्व—पश्चिमके
महाविदेह क्षेत्रके चार तीर्थकरोंका जन्माभिषेक होता है दक्षिणमें पाडू
कंवल शिला, उत्तरमें रक्त कंवल शिला, इनपर एक एक सिंहासन है
दक्षिणमें भरत क्षेत्रके और उत्तरमें ऐरावत क्षेत्रके तीर्थरोंका जन्ममोछव
होता है इस वनके वीचमें एक उची चुलीका (चोटीके आकार डुंगरी)
निकली है, वो चालिस योजनकी उंची, नीचे वारह योजन, वीचमें आठ
योजन, और उपर चार योजनकी चौडी सर्व वेडूय (हरे) रत्नमय है

जंबुद्विपका वर्णन

मेरु पर्वतके चारों तर्फ थालीके आकार में पृथ्वीपर जवु द्विप है
सो पूर्वसे पश्चिम तक, और दक्षिणसे उत्तर तक, एक लाख योजनका
लम्बा चौडा है, इस्के वीचके १ योजनका मेरु पर्वत है

दक्षिण और उत्तर के क्षेत्रोंका वर्णन

मेरु पर्वतसे दक्षिण दिशाकी तरफ पैंतालीस हजार योजन वि
जयवत नामक दरवाजा है इसके पास जम्बुद्विपके भीतर भरत क्षेत्र है, यह

मेरुकी तरफ ५२६ योजन और ६ कलाका* चौडा है, और १४,४७ योजन चूलहेमवत के पास लंबा है, इसके मध्य बीचमें वेताड पर्वत डा है, सो १,७२ योजन और १२ कला लंबा है उत्तर दक्षिणमें ५ योजन चौडा है, २५ योजनका ऊंचा है, ६। योजन धरतीमें है, सर्व र्वत रूपाका है इस पर्वतमें दो गुफा है – पूर्वमें खंडप्रभा गुफा, और प श्चिममें तमस गुफा, यह गुफा ५० योजनकी लंबी, १२ योजनकी चौडी ८ योजनकी ऊंची, और महा अंधकार युक्त है॰

समभूमिसे वेताड पर्वतपर १ योजन ऊंचा जाना वहां उत्तर-दक्षिण दोनो तरफ १० योजनकी चौडी पर्वत जितनी लंबी दो श्रेणी है, दक्षिण दिशामें गगनवल्लभ प्रमुख ५० नगर (मोटे २ शहर) हैं, और उत्तरकी तरफ रथपूर चक्रवाल प्रमुख ६० नगर हे वहां विद्याधरोंका राज्य है वहांके रहनेवाले विद्याधर मनुष्योंने रोहिणी प्रज्ञप्ति-गगनगामिनी प्रमुख हजारों विद्याकी सिद्धी की है

यहासे ऊपर वेताड पर्वतपर १ याजन जावे वहां दो तरफ दो श्रेणी (खुली जगह) है १० योजनकी चौडी, और उतनी ही लंबी है। यह वहुत अभियोगी देवताको रहनेके भवन (महेल) हैं, महा १ सोम (पुर्व दिशाके मालिक), २ यम (दाक्षिण दिशाके मालिक), ३ वरुण (पश्चिम दिशाके मालिक), ४ विसमण (उत्तर दिशाके मालिक), यह चारों लोकपालके आज्ञामें रहनेवाले१ त्रिम्भक देवता रहते हैं १ आण जृम्भक [अन्नके रखवाले], २ पाणजृम्भक [पानीके रखवाले], ३ लेण जृम्भक [सुवर्णादिक धातुके रखवाले], ४ सेणजृम्भक (मकानके रखवाले), ५ व

* एक योजनके १९ भाग करना उसमसे १ भाग लेना; उसको एक कला कहते है

॰ इन गुफाके मध्यमे उमग्ग जला और निमग्ग जला नामकी दो नदी गुफा की भीतमेंसे निकल तीन २ योजनपे गंगा और सिन्धुनदी मे जाके मिली है

त्य झमक (वस्त्रके रखवाले), ६ फल झमक (फलके रखवाल), ७ फूल झमक (फूलके रखवाले),८ फलफूल झमक, ९ अवीपत्तीया झमक [पान भाजीके रखवाले], १ वीज झमक (वीज धानके रखवाले), यह दश ही सर्व जगत्की वस्तुकी रखवाली करते हैं, जो यह नहीं होवें तो वाणव्यतर देवता वस्तुका हरण कर लेवे इस लिये ये त्रिकाल (सन्ध्या, सवेर, दोपहर) फेरी देनेको निकलते हैं इस लिय त्रिकाल अवश्य धर्म ध्यान करना चाहिये

अभियोग श्रेणिकी समभूमिसे पाच योजन उपर जावे वहा १० योजन चौडा, पर्वत जितना लंबा, वैताड शिखरतला है, वहां वहूत वाणव्यतर देवता देवागना क्रीडा करत हैं यहा ९ कूटह*सो ६। योजनके उचे हैं, इसका मालिक वेताडगिरी कुमार देवता माटी रिद्धिका धणी रहता है

भरत क्षेत्र के उत्तर के किनारे पर जो चूल हीमवंत नामक पर्वत है, उसके मध्य वीचमें पद्मद्रह(कुंड)है, उसके पुर्व के और पश्चिमके द्वारसे, गगा और सिंधु नामक दो नदी निकलके भरत क्षेत्रमें दक्षिण दिशा तरफ, वेताड पर्वत के नीचे होके दक्षिणमे लवण समुद्रमें जाके मिली है उससे भरत क्षेत्रके छे भाग हुव हैं उनको छे खंड कहते है

भरत क्षेत्रके मध्य भागमें वेताड पर्वत आनेसे भरतके दो नाम हुये हैं १ दक्षिणकी तरफ दक्षिणार्ध भर्त, और २ उत्तरकी तरफ उत्तरार्ध भरत कहते हैं भर्तके दक्षिणके किनारेपर जो लवण समुद्र है उसके नालमेंसे पाणी होकर भरत क्षेत्रमे आया है जिसस एक खाडी नव जोजनकी लंबी हो गई है इस खाडीक तीर [किनारे] पर तीन तीर्थ [दवभवन] हैं, पूर्वकी तरफ मागध, वीचमें वरदाम, और पश्चिममें प्रभास

* पहाडपे छोटी २ डुगरी होती है उसे कूट कहते हैं

पश्चिममें खाडी, पूर्वमें वताड, दक्षिणमें गगा, और उत्तरमें सिंधु, इन चारोंके ११४ योजन और ११ कला चारही तरफ छोड अतर-मध्य भागमें नव योजन चौडी और बारे योजनकी लंबी अयाध्या नगरी है•

आरोंका वर्णन

इस भरत क्षेत्रमे वीस क्रोडाक्रोडी [क्रोडको क्रोडसे गुणे इत्ला] सागरका कालचक्र बारह आरे करके फिरता है, जिनमेंसे छे आरेको 'सरपिणी' [सुलटा] और छे आरेको 'उत्सर्पिणी' [उलटा] काल कहते है

पहला आरा सुखमासुखमी (एकातसुख) नामें चार क्रोडा क्रोडी सागरका - इस आरे के मनुष्यका तीन कासका शरीर ऊचा और तीन पल्योपमका आयूष्य होता है मनुष्यके शरीरमें २५६ पांसली होती हैं और तीन दिनसे आहार की इच्छा होवे तब शरीर प्रमाणें❋ आहार करे, इस आरेके मनुष्यका वज्रऋषभ नाराच संघयण और समचउरस संठाण स्त्री पुरुष महा दिव्य रूपवत और सरल स्वभावी होते है इस आरेमें पृथ्वीकी सरसाइ मिश्री जैसी होती है

इस आरे के मनुष्य की दश प्रकारके कल्पवृक्ष इच्छा पूरी करते हैं—१ मतगा वृक्ष-मधूर फल देवे, २ भिंगावृक्ष-सुवर्ण रत्नके भाजन (वरतन) देवे, ३ तुडियंगा वृक्ष ४९ जातके वाजिंत्रके मनोज्ञ शब्द सुनावे, ४ जोइ वृक्ष रात्रीमें सूर्य जैसा प्रकाश करे, ५ दिव वृक्ष-दीवेकी रोशनी करे, ६ चितंगा वृक्ष-सुगन्धी फूलोंके भूषण देवे, ७ चित्तरसा

* एसो कहते है कि, अयोध्या नगरीके ठिकाण पृथ्वीमें वज्रमय शाश्वता साथिया है नवे कर्म भूमियों की प्रवृत्ती होती है तब इंद्र महाराज उस साथिये पर पहले नगर वसाके उसका अयोध्या नाम देते हैं

❋ ग्रन्थकार कहते है कि पहले आरेमें तूर जितना, दूसरे आरेमें बार जितना, और तीसरे आरेमें आंवले जितना आहार करते हैं
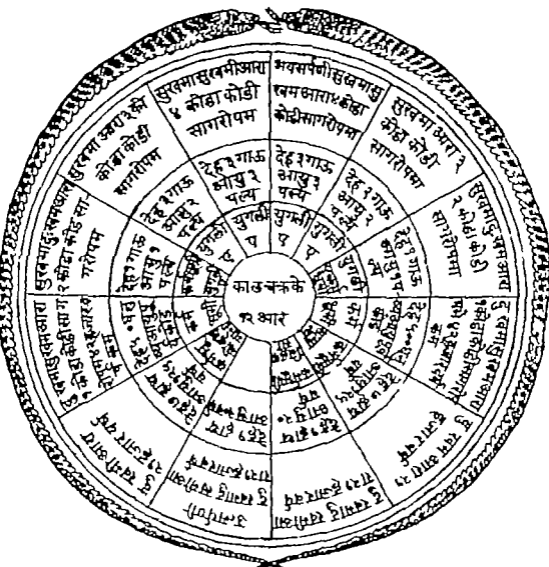
जैसे गाडीका चक्र (पइडा) बारे आरे करके फिरताहै तैसेही पंचभरत औरपंचएरावत क्षेत्रमे कालचक्र छे सरपणीके और छे उत्सर्पणीके यो बारे आरेकरके २० कोडाकोडी सागरमे एक चक्र (आटा) खाताहै ऐसे अनत कालचक्र व्यतीत होगये और अनतही होजायगे [यह पृष्ठ ७० के ७ मी ओलीकी टीपहै]

वृक्ष १८ प्रकारके मनोज्ञ भोजन देवे, ८ मणवगा वृक्ष-सुवर्ण रत्नके भू
ण (गहने दागीने) देवे, ९ गिहगारा वृक्ष ४२ भोमिये (मंजिल) महेल
जैसा होवे १० अनियगणा वृक्ष-उत्तम वस्त्र देवे

इस आरेके मनुष्य मनुष्यणीका आयुष्य छे महीने रहे तब ए
पुत्र पुत्रीका जोडा होवे बच्चेकी प्रतिपालन ४९ दिन करे, फिर वो द
पती हो सुख भोगवे, और उनके मावापको एकको छीक और एकको बगास
आनेसे मरके देवता होवे, उनके शरीरको क्षेत्रके अधिष्टायक देवता
उठाके क्षीर समुद्रमे डाल देवे

दूसरा सुखम (सुख) नामे आरा तीन कोडा कोडी सागरका ल
तब वर्ण गन्ध रस स्पर्श के पर्यायों में अनंत गुणी हीनता होती है
घटना २ इस आरेमें दो कोशका शरीर ऊंचा, और दो पल्योपमका आ
युष्य होता है, शरीरमें १२८ पासली होती हैं, दो दिनके अंतरसे आ
हारकी इच्छा होती हैं पृथ्वीका स्वाद सकर जैसा इस आरेके मनुष्य
की भी दश प्रकारके कल्प वृक्ष इच्छा पूरी करते हैं छे महीनेका आयु
ष्य रहे तब जुगलनी एक पुत्र पुत्रीका जोडा प्रसवती है बच्चेकी प्रति
पालन ६४ दिन करते हैं फिर वो दंपती वन जाते हैं, और सब पहि
वत् जाणना

तीसरा आरा सुखमा दु खमी (सुख बहुत और दु ख थोडा) दो
कोडा कोडी सागरका लगे, तब वर्णादिक की पर्यायोंमें अनंत गुण
हीनता होती है इस आरेमें मनुष्यका एक कोशका ऊंचा शरीर, औ
एक पल्योपमका आयुष्य होता है मनुष्योंके शरीरमें ६४ पांसली ए
दिनके अंतरसे आहारकी इच्छा होवे पृथ्वीका स्वाद गुड जैसा इन

* युगालियामरके एक देव गतीमें जाते हैं यहां यहा जिसका या यहां से कुछ कम आयुष्य पाते हैं

योंकी भी दश कल्पवृक्ष इच्छा पूरी करते हैं ठे महीने आयुष्य रहे पुत्र पुत्रीका जोडा होवे बचेकी प्रतिपालन ७९ दिन करे, फिर हुयार होकर आपसमें क्रीडा करते हैं इनके मावाप छीक ओर वाग आनेसे मरके देवता होवे, इनके सरीरको देव, क्षीर समुद्रमें डाल हैं*

इस तीसरे आरेके पहले दो भाग तक यह रचना रहती है फिर सरा भाग अर्थात् छासठलाख कोड, छासठ हजार कोड, छासठ सो को छासठ कोड छासटलाख, छासट हजार, छेसो, छासट(६६,६६,६६,६६,६६,६६,६६,६६,६६,६६) सागर वाकी रहे, तव कालके दोपके स्वभावमे प्रकारके कल्पवृक्ष इच्छित वस्तु अपूर्ण देने लगते हे तब जुगल युष्य आपसमें लडने लगते हे, उनको समझाने पन्नरे कुलकर अनुक्रमे होते हे, उनमे पहलेसे पाचमे तक 'हकार' दड चलता है, छट्ठेसे दमें तक मकार' दंड चलता है, ओर इग्यारमेसें पन्नरमे तक 'धिक्कार' ड चलता है, अर्थात् लडते हूये जुगलियोंका 'हें' 'मत' 'धिकार' कहने से वो शरमा कर भग जाते हें०

यहा तक तो अकर्म भूमी पणारहा, अर्थात् १ 'अस्सी'=हथीया-

---

* इन तीनही आरोंमे तिर्यंच पचेन्द्री होते हैं वह भी युगलीये ही होते हैं

० पहले कुलकरका एक पल्योपमके दशमे भाग दूसरेका सोमे भाग तीसरेका हजारमे भाग चौथेका दश हजारमे भाग, पाचमेका लाखमे भाग छट्ठेका दश लाखमे भाग, सातमेका कोडमे भाग आठमेका दश कोडमे भाग, नवमेका सो कोडमे भाग दशमेका हजार कोडमे भाग इग्यारमेका दश हजार कोडमे भाग, बारमेका लाख कोडमे भाग तेरमेका दशलाख कोडमे भाग चौदमेका कोडा कोडमे भाग, और पन्नरमेका ८४ लाख पूर्वका आयुष्य जाणना—पद्मपुराण

रस, २ 'मस्सी'—व्यापारसे, और ३ 'कस्सी'—कृषी कर्मसे इनको कुछ ज रुर नहींथी, क्योंकि कल्पवृक्ष इच्छा पूर्ण करतेथे तीसरे आरेके चोरास लाख पूर्व झाझेरे (कुछ ज्यादा) बाकी रहे तब पश्चरमें कुलकर सा पह ले तिर्थंकर, अयोध्या नगरीमें होते हैं उस वक्त कालके दोपसे वो क ल्पवृक्ष सर्वथा फल देने बंद हो जाते हैं तब मनुष्य क्षुधासे पीडित ह कर अकुलाते हैं उनकी दया लाके तिर्थंकर भगवान् उनको वहां स्वभा सेही उत्पन्न हुवा हुवा चोवीस प्रकारका अनाज खाना बताते हैं क अनाज खानेसे पेटमें दु खे तब अरणीकी लकडीसे अमी पाड उस पचानेकी कहते हैं, भले प्राणी अमीको अनाज जलाती देख कहते की इसकाही पट नहीं भराय तो यह हमें क्या देगी ? तब प्रथम कुंभकारक स्थापना करते हैं यों अनुक्रमें ४ कुल, अठारे श्रेणी, अठारे प्रश्रेणी, य ३६कोमं और ७२काला पुरुषकी ६४ स्त्रीकी १८लिपी, १४ विद्या,वगैरा प

---

१ चार कुल— १उग्र कुल कोटवाल न्यायाधीशादिका, २ भोगकुल—गुरुस्था नी उच पुरुषका, ३ राज्य कुल—तिर्थंकरने मन्त्री पणे स्थापे, सो और ४ क्षत्री कुल—सर्व प्रजा

२ क्षत्रिकुलकी १८ श्रेणी १८ प्रश्रेणी मिल ३६कोम हुइ सो—कुंम्भार, मा ली कृषाण, तुणार, चितारे, लम्भारे, दरजी, कलाल, तंबोली, रंगारे, गवा ळ पटाइ, तेली धोबी हलवाइ, नाइ, कहार, चमार सीसगरे, सपरी काछी, कुंदीगर, कागजी, रेपारी ठंठेरी पटवा, सिलावट, भडभूजा, सु नार चमार, सुतार, धीवर गिरा सिकलीगर कसारे, पणीया

३ पुरुषकी ७२ कला—लिखत, गणित रूपपरावृत, नृत्य, गीत, ताल, वाजि त्र, पघरी नरलक्षण नारीलक्षण गजलक्षण, अश्वलक्षण दंडलक्षण, रत्न परिक्षा धातुवाद मंत्रवाद, कवीत्वशक्ती, तर्कशास्त्र नीतिशास्त्र, तत्त्ववि चार, (धर्म शास्त्र) ज्योतिषशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, षड्भाषा योगाभ्यास, रसा यण, अंजन, स्वप्नशास्त्र इन्द्रजाल, कृपीकर्म, वस्त्रविधी, जूवा व्यापार, रा जासेवा शकुन विचार वायूस्थंभन, अग्नीस्थंभन मेघवृष्टी विलेपन, मर्दन उर्ध्वगमन सुवर्ण सिद्धी, रूपासिद्धी, घटबंधन, पत्रछेदन, मर्म भेदन लोका

रस, २ 'मस्सी'–व्यापारसे, और ३ 'कस्सी'–कृषी कर्मसे इनको कुछ ज-रुर नहींथी, क्योंकि कल्पवृक्ष इच्छा पूर्ण करतेथे तीसरे आरेके चौरासी लाख पूर्व आसेरे (कुछ ज्यादा) बाकी रहे तब पश्नरमें कुलकर सा पहले तिर्थंकर, अयोध्या नगरीमें होते हैं उस वक्त कालके दोषसे वो कल्पवृक्ष सर्वथा फल देने बंद हो जाते हैं तब मनुष्य क्षुधासे पीडित हो कर अकुलाते हैं उनकी दया लाके तिर्थंकर भगवान् उनको वहा स्वभावसेही उत्पन्न हुवा हुवा चौवीस प्रकारका अनाज खाना बताते हैं कचा अनाज खानेसे पेटमें दु खे तब अरणीकी लकडीसे अग्नी पाड उसमें पचानेकी कहते हैं, भले प्राणी अग्नीको अनाज जलाती देख कहते हैं की इसकाही पट नहीं भराय तो यह हमें क्या देगी ? तब प्रथम कुंभकारकी स्थापना करते हैं यों अनुक्रमें ४ कुल, अठारे श्रेणी, अठारे प्रश्रेणी, यों ३६कोंम और ७२काला पुरुषकी ६४ स्त्रीकी १८लिपी, १४ विद्या वगैरा की

१ चार कुल– १उग्र कुल कोटवाल न्यायाधीशका, २ भोगकुल–गुरुस्थानी उच्च पुरुषका, ३ राज्य कुल–तिर्थंकरनें मन्त्री पणे स्थापे, सो और ४ क्षत्री कुल–सर्व प्रजा

२ क्षत्रिकुलकी १८ श्रेणी १८ प्रश्रेणी मिल ३६कोम हुइ सो–कुम्भार, माली कृषाण, लुणार, चितारे, सुथार, दरजी, कलाल, तंबोली रंगारे, गवाळ मछार, तेली धाबी हलवाइ नाइ, कहार, चमार सीसगरे, संयही काछी, कुंदीगर, कागजी, रेबारी ठठेरी पटवा, सिलावट भडभूजा, सुनार, चमार, सुतार, धीवर गिरा सिकलीगर कसारे, पणीया

१ पुरुषकी ७ कला=लिखत गणित रूपभाष्व नृत्य, गीत ताल, वाजिंत्र, धंशरि नरलक्षण नारीलक्षण गजलक्षण, अश्वलक्षण दंडलक्षण, रत्नपरिक्षा धातुवाद मंत्रवाद, कवीत्वशक्ती, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, तत्वविचार, (धर्म शास्त्र) जोतिषशास्त्र, वैद्यकशास्त्र षड्भाषा योगाभ्यास, रसायण, अंजन, स्वप्नशास्त्र इन्द्रजाल, कृषीकर्म, वस्त्रविधी, जूवा व्यापार, राजासेवा, शाकुन विचार वायुस्थंमन, अग्नीस्थंमन मेघवृष्टी विलेपन, मर्दन उर्ध्वगमन, सुवर्ग सिद्धी, रूपसिद्धी, घटबंधन, पत्रछेदन मर्म भेदन लोका

स्थापना कर सबको छोड दिक्षा ले मोक्ष पधारते है [तीर्थंकर भगवान्‌का
स्तारसे बयान पहले प्रकरणमें हुवा है]इसी वक्त पहले चक्रवर्ती भी माता
उत्तम १४ स्वप्न देक जन्म लेते है युवा अवस्थामें राजपद प्राप्त
ता है इनके शरीरमें ४० लाख अष्टापद जित्ना बल होता हैं ये १३
ष्टमतम (तेला)कर भरत क्षेत्रके छे खंड साधते हैं

"चक्रवर्तीकी ऋद्धि"

चउदा रत्न

७एकेंद्री (पृथ्वीमय) रत्न १ चक्र रत्न, छेखंड साधनेका म
बताता है २ छत्र रत्न, बारे योजन लंबी, नव योजन चौडी छाया
ता है, धुप, ठन्ड, हवासे बचाता है, ३ दंड रत्न–रासस्तेमें सडक क
ता है, वेताडकी दोइ गुफाके किंवाड उघाडता है (यह तीनो रत्न
२ हातके लंबे होते है) ४ खड्ग रत्न–पचास अगुल लंबा, सोले अं
चौडा, और अध अगुल जाडा, अति तिक्षण धार, यह हजारों कोस
शत्रुका सिर काट लाता है (यह चारही रत्न आयुध्य शालामें पैदा
ते है) ५ मणी रत्न–चार अगुल लंबा दो अगुल चौडा, यह बारे
जनमे चंद्रमाकी तरह प्रकाश करता हैं, ओर हाथीके कानको बाध
विघ्न हरता है ६ कागणी रत्न–चार अगुल चारही तरफसे होता है,
नारकी एरणके आकार, आठ सोनैये जितना वजनमें, इससे तमस
फामें ओर खडप्रभा गुफामें एकेक योजनके आंतरसे ४९ मडल पाच
धनुष्यके गोल करते है उसमे चक्रवर्ती जीवे वहां तक
प्रकाश रहता है ७ चर्म रत्न दो हातका ल
जेसी बडी नदीमें १२ योजन लंबी चौ
के जेसे होजाता है, इसमें सब सेन्या
रत्न लक्ष्मी भडारमें पैदा होते हैं.

स्थापना कर सबको छोड दिक्षा ले मोक्ष पधारते है [तीर्थंकर भगवान्‌के विस्तारसे बयान पहले प्रकरणमे हुवा है]इसी वक्त पहले चक्रवर्ती भी माता उत्तम १४ स्वप्न देक जन्म लेते है युवा अवस्थामें राजपद प्राप्त होता हैं इनके शरीरमें ४० लाख अष्टापद जित्ना बल होता हैं ये १ अष्टमतम (तेला)कर भरत क्षेत्रके छे खंड साधते हैं

"चक्रवर्तीकी ऋद्धि"

चउदा रत्न

७एकेंद्री (पृथ्वीमय) रत्न १ चक्र रत्न, छेखंड साधनेका मार्ग बताता है २ छत्र रत्न, बारे योजन लंबी, नव योजन चौडी छाया करता है, धुप, ठन्ड, हवासे बचाता है, ३ दंड रत्न–रासस्तेमें सडक बनाता है, बेताडकी दोइ गुफाके किंवाड उघाडता है (यह तीनो रत्न चार २ हाथके लंबे होते हैं) ४ खड्ग रत्न–पचास अंगुल लंबा, सोले अंगुल चौडा, और अध अंगुल जाडा, अति तिक्षण धार, यह हजारों कोसे शत्रुका सिर काट लाता है (यह चारही रत्न आयुध्य शालामें पैदा होते है) ५ मणी रत्न–चार अंगुल लंबा दो अंगुल चौडा, यह बारे योजनमे चंद्रमाकी तरह प्रकाश करता हैं, और हाथीके कानको बांधनेसे विघ्न हरता है ६ कांगणी रत्न–चार अंगुल चारही तरफसे होता है, सुनारकी एरणके आकार, आठ सोनैये जितना वजनमें, इससे तमस गुफामें और खडप्रभा गुफामें एकेक योजनके आतरसे ४९ महल पाचसे२ धनुष्यके गाल करते है उससे चक्रवर्ती जीवे वहा तक चंद्रमा सरीखा प्रकाश रहता है ७ चर्म रत्न दो हातका लम्बा होता हैं, यह गंगा सिंधू जैसी बडी नदीमें १२ योजन लंबी और नव योजनकी चौडी नाव के जैसे होजाता है, इसमें सब सैन्या बैठके पार होजाती है, (यह तीन रत्न लक्ष्मी भंडारमें पैदा होते हैं

स्थापना कर सबको छेड दिक्षा ले मोक्ष पधारते हे [तीर्थंकर भगवान्‌रा स्तारसे वयान पहले प्रकरणमें हुवा है]इसी वक्त पहले चक्रवर्ती भी म उत्तम १४ स्वप्न देक जन्म लेते है युवा अवस्थामें राजपद प्राप्त हो ता हें इनके शरीरमें ४० लाख अष्टापद जित्ना वल होता हें ये १३ अष्टमतम (तेला)कर भरत क्षेत्रके छे खड साधते हें

"चक्रवर्तीकी ऋद्धि"

चउदा रत्न

७एकेंद्री (पृथ्वीमय) रत्न १ चक्र रत्न, छेखंड साधनेका मा वताता है २ छत्र रत्न, वारे योजन लंवी, नव योजन चौडी छाया क ता हे, धुप, ठन्ड, हवासे वचाता है, ३ दंड रत्न—रासस्तेमें सडक वन ता है, वेताडकी दोइ गुफाके किंवाड उघाडता हे (यह तीनो रत्न च २ हाथके लंवे होते हे) ४ खड्ग रत्न—पचास अंगुल लंवा, सोले अंगुल चौडा, और अध अंगुल जाडा, अति तिक्षण धार, यह हजारों कोसके शत्रुका सिर काट लाता है (यह चारही रत्न आयुध्य शालामें पैदा हो ते हे) ५ मणी रत्न—चार अंगुल लंवा दो अंगुल चौडा, यह वारे यो जनमे चंद्रमाकी तरह प्रकाश करता हें, और हाथीके कानको वांधनेसे विघ्न हरता हे ६ कागणी रत्न—चार अंगुल चारही तरफसे होता हे, सु नारकी एरणके आकार, आठ सोनैये जितना वजनमें, इससे तमस गु फामें और खडप्रभा गुफामें एकेक योजनके आतरसे ४९ मडल पाचसे धनुष्यके गोल करते हे उससे चक्रवर्ती जीवे वहा तक चंद्रमा सरीसा प्रकाश रहता हे ७ चर्म रत्न दो हातका लम्वा होता हें, यह गंगा सिं धू जैसी वडी नदीमें १२ योजन लंवी और नव योजनकी चौडी नाव के जैसे होजाता है, इसमें सब सैन्या बैठके पार होजाती है, (यह तीन रत्न लक्ष्मी भंडारमें पैदा होते हें

स्थापना कर सबको छेड दिक्षा ले मोक्ष पधारते हैं [तीर्थंकर भगवान्का
स्तारसे वयान पहले प्रकरणमें हुवा है]इसी वक्त पहले चक्रवर्ती भी माता
उत्तम १४ स्वप्न देक जन्म लेते है युवा अवस्थामें राजपद प्राप्त
ता हैं इनके शरीरमें ४० लाख अष्टापद जित्ना वल होता हैं ये १३
ष्टमतम (तेला)कर भरत क्षेत्रके छे खंड साधते हैं

"चक्रवर्तीकी ऋद्धि"

चउदा रत्न

७एकेंद्री (पृथ्वीमय) रत्न १ चक्र रत्न, छेखंड साधनेका मा
वताता है २ छत्र रत्न, बारे योजन लंवी, नव योजन चौडी छाया क
ता हैं, धुप, ठन्ड, हवासे बचाता है, ३ दड रत्न—रासस्तेमें सडक वन
ता है, वेताडकी दोइ गुफाके किंवाड उघाडता है (यह तीनो रत्न च
२ हाथके लंबे होते हैं) ४ खड्ग रत्न—पचास अगुल लवा, सोले अंग
चौडा, और अध अगुल जाडा, अति तिक्षण धार, यह हजारों कोस
शत्रुका सिर काट लाता है (यह चारही रत्न आयुध्य शालामें पैदा
ते है) ५ मणी रत्न—चार अगुल लवा दो अगुल चौडा, यह बारे य
जनमे चंद्रमाकी तरह प्रकाश करता हैं, और हाथीके कानको बांधने
विघ्न हरता है ६ कागणी रत्न—चार अगुल चारही तरफसे होता है,
नारकी एरणके आकार, आठ सोनैये जितना वजनमें, इससे तमस
फामें और खडप्रभा गुफामें एकेक योजनके आतरसे ४९ मडल पाचसे
धनुष्यके गोल करते हैं उससे चक्रवर्ती जीवे वहां तक चंद्रमा सरी
प्रकाश रहता है ७ चर्म रत्न दो हातका लम्वा होता हैं, यह गगा
धू जैसी वडी नदीमें १२ योजन लंबी और नव योजनकी चौडी ना
के जैसे होजाता है, इसमें सव सैन्या बैठके पार होजाती है, (यह
रत्न लक्ष्मी भडारमें पैदा होते हैं

सर्व प्रकारके रत्न जवाहरातकी प्राप्ति होवे ५ महापद्म निधिसे—सर्व प्र कारके वस्त्रकी तथा रंगने धोनेकी वस्तुकी प्राप्ती होवे ६ काल निधिसे अष्टांग निमित्तक इतिहासके या कुंभकारादिकके कर्मके पुस्तकोंकी प्राप्ति होवे ७ महाकाल निधिसे सुवर्णादि सर्व धातुकी प्राप्ति होवे ८ माण वक निधिसे-संग्रामकी विधिके पुस्तक, और सूभटोंकी प्राप्ति होवे ९ शंख निधिसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी विधी बतानेवाले तथा, संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंस, संकीर्ण, गद्य, पद्य इनकी रीति बतानेवाले शास्त्रकी प्राप्ति होवे और सर्व प्रकारके वाजिंत्रकी प्राप्ति होवे

यह ९ निध्यान पेटी (सन्दुक) के जैसे १२ योजन लम्बे, ९ यो जनके चौड, ८ योजनके ऊंचे, और आठचक्र युक्त होतेहैं यह ९ निध्यान जहा गंगा नदी समुद्रमें मिलती है, वहा रहते है, चक्रवर्ती इनको साथे पीठ उनके पगके नीचे चलते हैं, इन ९ निध्यानमेंसे द्रविक वस्तु तो साक्षात् निकलती है, और कर्मीक वस्तु बनानेकी विधिके पूस्तक नि कलते हें उनको पढके इच्छित कार्य सिद्ध करते हे

☞ इन ९ ध्यान १४ रत्नके एकेक हजार देव अधिष्टायक हैं, सो कार्य करते हे

फक्कर रिद्धि —आत्मरक्षक देव दोहजार, छे खंडका राज देश बत्तीस हजार, इत्नही मुकुटबंध राजा, राणी[1] चौसट हजार, हाथी, घोडे,

---

१-२८-पुरुष १ स्त्री या १० मनुष्यका एक कुल घर होता है, एसे दश हजार कुलका एक ग्राम, ऐसे तीस हजार ग्रामका एक देश, ऐसे बत्तीस हजार देश चक्रवर्तीके होते हैं उसमे से पच अनार्य खंड मे प्रथक (अलग ५ खंड) मे [illegible] देश होते है और एक मध्यक आर्य खंडमे [illegible] देश होते है, इसमेसे [illegible] ॥ तो आर्य देश और बाकी के सब अनार्य देश है

[1] [illegible] हजार स्त्री रहते है सो एकेक राजकन्या [illegible] प्रधान और [illegible] की कन्या आती है

सर्व प्रकारके रत्न जवाहरातकी प्राप्ति होवे ५ महापद्म निधिसे–सर्व
कारके वस्त्रकी तथा रंगने धोनेकी वस्तुकी प्राप्ती होवे ६ काल निधि
जयोग निमित्तक इतिहासके या कुंभकारादिकके कर्मके पुस्तकोंकी प्रा
होवे ७ महाकाल निधिसे सुवर्णादि सर्व धातुकी प्राप्ति होवे ८ मा
वक निधिसे-संग्रामकी विधिके पुस्तक, और सुभटोंकी प्राप्ति होवे
शख निधिसे-धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी विधी बतानेवाले तथा, संस्कृ
प्राकृत, अपभ्रंस, संकीर्ण, गद्य, पद्य इनकी रीति बतानेवाले शास्त्र
प्राप्ति होवे और सर्व प्रकारके वार्जित्रकी प्राप्ति होवे

यह ९ निध्यान-पेटी (सन्दुक) के जैसे १२ योजन लम्बे, ९ यो
जनके चौड, ८ योजनके ऊचे, और आठचक्र युक्त होतेहैं यह ९ निध्या
जहा गंगा नदी समुद्रमें मिलती है, वहा रहते है, चक्रवर्ती इनको सा
पीछे उनके पगके नीचे चलते हैं, इन ९ निध्यानमेंसे द्रविक वस्तु त
साक्षात् निकलती हैं, और कर्मीक वस्तु बनानेकी विधिके पुस्तक नि
कलते हैं उनको पढके इच्छित कार्य सिद्ध करते हैं

☞ इन ९ निध्यान १४ रत्नके एकेक हजार देव अधिष्टायक
सो कार्य करते हैं

फुटकर रिद्धि—आत्मरक्षक देव दोहजार, छे खंडका राज, दे
बत्तीस हजार, इत्नेही मुकुटबंध राजा, राणी[२] चौसठ हजार, हाथी, घोडे

१–२८–पुरुष १ स्त्री या ६ मनुष्यका एक कुल घर होता है,
एसे दश हजार कुलका एक ग्राम; ऐसे तीस हजार ग्रामका एक देश,
ऐसे बत्तीस हजार देश चक्रवर्तीके होते हैं उसमें से पंच अनार्य खंड
में प्रत्येक (अलग २ खंड) में ५११३ देश होते हैं और एक मध्यक आर्य
खंडमें ५११३ देश होते हैं इसमेसे फक्त २५॥ तो आर्य देश और बाकी
के सब अनार्य देश हैं

२ काइ एक लाख बाणू हजार स्त्री कहते हैं सो एकेक राजकन्या
के साथ एकेक प्रधान और मांडलिककी कन्या आती है

सर्व प्रकारके रत्न जवाहिरातकी प्राप्ति होवे ५ महापद्म निधिसे—सर्व प्रकारके वस्त्रकी तथा रंगने धोनेकी वस्तुकी प्राप्ती होवे ६ काल निधिसे अष्टांग निमित्तक इतिहासके या कुंभकारादिकके कर्मके पुस्तकोंकी प्राप्ति होवे ७ महाकाल निधिसे सुवर्णादि सर्व धातुकी प्राप्ति होवे ८ माणवक निधिसे-संग्रामकी विधिके पुस्तक, और सुभटोंकी प्राप्ति होवे ९ शंख निधिसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्षकी विधी बतानेवाले तथा, संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंस, संकीर्ण, गद्य, पद्य इनकी रीति बतानेवाले शास्त्रकी प्राप्ति होवे और सर्व प्रकारके वार्जित्रकी प्राप्ति होवे

यह ९ निध्यान पेटी (सन्दुक) के जैसे १२ योजन लम्बे, ९ योजनके चौडे, ८ योजनके ऊंचे, और आठचक्र युक्त होतेहैं यह ९ निध्यान जहा गंगा नदी समुद्रमें मिलती है, वहां रहते है, चक्रवर्ती इनको साधे पीछे उनके पगके नीचे चलते हैं, इन ९ निध्यानमेंसे द्रविक वस्तु तो साक्षात् निकलती है, और कर्मीक वस्तु बनानेकी विधिके पूस्तक निकलते हैं उनको पढके इच्छित कार्य सिद्ध करते है

☞ इन ९ ध्यान १४ रत्नके एकेक हजार देव अधिष्टायक हैं, सो कार्य करते हैं

फुटकर रिद्धि —आत्मरक्षक देव दोहजार, छे खडका राज, देश[1] बत्तीस हजार, इत्नही मुकुटबंध राजा, राणी[2] चौसट हजार, हाथी, घोडे,

१–२८–पुरुष १ स्त्री यों १ मनुष्यका एक कुल घर होता है ऐसे दश हजार कुलका एक ग्राम; ऐसे तीस हजार ग्रामका एक देश, ऐसे बत्तीस हजार देश चक्रवर्तीके होते हैं उसमें से पंच अनार्य खंड में प्रत्येक (अलग २ खंड) में ११२१६ देश होते हैं और एक मध्यक आर्य खंडमे ११२ देश होते है इसमेसे फक्त २५॥ तो आर्य देश और बाकी के सर्व अनार्य देश है

२ क्रोड एक लाख बाणू हजार स्त्री कहते हैं सो एकेक राज कन्या के साथ एकके प्रधान और प्रोहितकी कन्या आती है

रथ, चौरासी २ लाख, पायदल छिन्नुक्रोड, नाटकियें बत्रीसहजार राजधानी सोलह हजार, द्वीप सोले हजार, द्रोणमुख (बंदर) निन्याणु हजार, ग्राम छिन्नुक्रोड, बगीचे उगण पचासहजार, बडे भवी चउदेहजार, म्लेच्छराजा सोलह हजार, रत्नागर सोलह हजार, सोना चादीके आगर बीस ह- जार, पाटणे[१] अडतालीस हजार, गोकुल[२] तीन क्रोड रसोइये तीनसेसाठ, अगमर्दक छत्तीस लाख, दासदासी निन्याणु क्रोड, अगरक्षक निन्याणु लाख, आयुद्ध शाला तीन क्रोड, हकीम तीनक्रोड, पंडित आठहजार, बयालीस भूमिये महल चौसट हजार, चार क्रोड मण अन्न नित्य खपे, दश लाख मण लूण नित्य लगे, बहोत्तर मण हींग नित्य लगे, इत्यादि औरभी बहुत रिद्धि जाणनी *इसको छोडके संयम लेवे तो स्वर्ग तथा मोक्ष पधारे, और राजमें मरे तो नर्कमे जाय ❀

इस आरेमें साधु केवली होते है और पांच (नरक–तिर्यंच–मनु ष्य–देव–मोक्ष) गतिमें जानेवाले जीव होते हैं

चौथा दुखम सुखम नामे (दु ख बहुत सुख थोडा) आरा, एक कोडा कोडी सागरमें बयालीस हजार वर्ष कमीका होता है तब वर्णादि के पर्यायमें अनत गुणी हीनता होती है, और घटते२ पांचसो धनुष्यका सरीर ऊंचा, और क्रोड पुर्वका आयुन्य रहता है ३२ पांसली दिनमें १

---

१ पाटण में कुत्रीयावणकी दुकान होती है कुत्रियावण मनुष्यी सम ष्टी होता है उनके भडारका धिमायिक देव अधिष्टायक होता है सो इ च्छित वस्तु देता हैं

२ दश हजार गायका एक गोकुल होता है

* यह सर्व रिद्धि संपूर्ण भरत क्षेत्रमे होती हैं

इस सर्पणी काल में हुवे हुवे १२ चक्रवर्ती के नाम वगैरा

चक्रवर्ति-नाम	ग्राम	पिता	माता	स्त्री	आयुष्य	अवगाहना	गती	किनकेवारेमें हुवे
भरत	अजुध्या	ऋषभदेव	सुमंगला	सुभद्रा	८४ लक्ष पूर्व	५०० धनुष्य	मोक्ष	ऋषभदेवजी
सागर	,,	सुमति	जसवती	भद्रा	७२ लक्ष पूर्व	४५० धनु	,,	अजितनाथजी
मघवा	सावत्थी	विजय	भद्रा	सुनंदा	५ लक्ष वर्ष	४२ ध०	,,	धर्मनाथजी पीछे
सनतकुमार	हस्तिनापुर	समुद्र	शिवा	रत्ना	३ लक्ष वर्ष	४१ ध०	,,	धर्मनाथजी पीछे
शांतिनाथ	,,	विश्वसेन	अचिरा	विजिया	१ लक्ष वर्ष	४० ध	,,	शांतिनाथप्रभुहुवे
कुंथुनाथ	,,	सुरराय	श्रीदेवी	कन्हश्री	९५ हजार वर्ष	३५ ध०	,,	आपहीहे
अरहनाथ	,,	सुदर्शन	देवी	सुरश्री	८४ हजार वर्ष	३० ध	,,	आपहीहे
सुभूम	,,	पोमत	तारा	पद्मश्री	६० हजार वर्ष	२८ ध	,,	अरहनाथजीपीछे
महापद्म	बनारसी	कीर्तवीर्य	तारा	सुंदरी	३० हजार वर्ष	२० ध	नर्क	मुनिसुव्रतजी
हरिषेण	कंपिलपुर	महाहरी	मेरा	वप्री	१० हजार वर्ष	१५ ध०	मोक्ष	नमीनाथजी
जयसेण	राजग्रही	पद्म	वपरा	लक्ष्मी	३ हजार वर्ष	१२ ध०	,,	नमीनाथजीपीछे
ब्रह्मदत्त	कंपिलपुर	ब्रह्म	चूलणी	कुरुमती	७०० वर्ष	७ ध०	नर्क	रिष्टनेमीजीपीछे

क भोजनकी इच्छा होती है इस आरेमें छे संघेण, और छे संठाण[3]
ते हैं गती पाच ही जाणनी

इस आरेमें २३ तिर्थंकर, ११ चक्रवर्ती, और ९ बलदेव, ९ वासु
व, ९ प्रति वासुदेव, होते हैं इनमेंसे[तिर्थंकर चक्रवर्तीका बयान तो
हिले कहा है]

वासुदेव पूर्व भवमें निर्मल तपसंयम पालके नियाणा करके एक
व वीचमें स्वर्ग नरकका करके अवतरते हैं, तब माता ७ स्वप्न देखती
थ्रुम वक्त जन्मले, योग्य अवस्था प्राप्त हुये राजपद प्राप्त होता है,
व सात रत्न पैदा होते हैं १ सुदर्शन चक्र २ खड्ग, ३ कौमुदी गदा
पुष्पमाल ५ धनुष्य अचूकवाण [शक्ती] ६ मणी ७ महारथ यह
ताड पर्वतके दक्षिण दिशाके तीन खडका राज करते हैं इनके सरीर
वीस लाख अष्टापदका बल होता है, और सर्व रिद्ध चक्रवर्तसे आधी
ाननी यह नियाणा करके होते हैं, इसलिये सयम नहीं लसक्ते हैं इन

---

(१) जिसके हाड हाडकी सधी और उपरका वेष्टन वज्रका है, सो वज्र
ऋषभनाराच संघेयण २ जिसके हाड और कीली तो वज्रकी होय पर
न्तु उपरका वेष्टन सामान्य होय सो ऋषभ नाराच संघेयण ३ जिसके की
ली वज्रकी होय, और हाड और वेष्टन सामान्य होय सो नाराच संघयन
४ जिसकी हाड सन्धीमे कीली पार नहीं गइ होय, आधी पेटी होय
सो अर्ध नाराच संघेयन ५ जिसके हाडकी सन्धीमें कीली नहीं होय फक्त
उपरका वेष्टन मजबूत होय केलेकी हाडकी तरह हाड नर्म सो कीलिका सघ
येन ६ जिसके हाड अलग २ होय और चमडे कर बन्धे होय सो स्फटिक
या छेवटा संघयन संघेयन नाम हाडका है, ऋषभ नाम ६ बनका है और
नाराच नाम सन्धीका जाणना

(२) समचौरस सठाण—सुन्दर २ निगोपरिमंडल सठाण—उपरसे अच्छा
३ सादिय सठाण—नीचेसे अच्छा ४ वावना (ठिंगणा)-संठाण ५ कुब्ज (कू
बडा) सठाण ६ हुंड सठाण (सर्व अंग खराब)

की गति एक नर्क ही की जाणनी ❀

बलदेव (राम) वासुदेवकी तरह माताको चार स्वप्न देके वासुदेव मे पहिले जन्म लेते हैं, वासुदेव हुय पीछे दोनो भाइयोंके आपसमें प्रेम बहुत होता है दोनो मिलके राज्य करते है इनमें दशलाख अष्टपदका पराक्रम होता है, यह वासुदेवका आयुष्य पूर्ण हुवे पीछे संयम ले करणीकर, स्वर्ग तथा मोक्षमें जाते हैं❀

इस आरेके तीन वर्ष साडे आठ माहिने बाकी रहे तवचोवीसमे तिर्थकर मोक्ष पधारते हैं दिनमें दो वक्त आहारकी इच्छा होती है

पांचमा दु सम नामे (अकेला दु स) आरा इकीस हजार वर्षका लगता है, तव वर्णादिककी पर्यायमें अनत गुणी हीनता होती है और घटते २ उत्कृष्ट सवासो वर्षका आयुष्य और सात हाथका देहमान तथा १६ पासली रहजाती है

इस आरेमे दश बोल विच्छेद जाते हैं-१ केवल ज्ञान, २ मनःपर्यव ज्ञान ३ परम अवधी ज्ञान (४-५-६) परिहार विशुद्ध-सुक्ष्म सपराय—यथाख्यात यह ३ चारित्र ७ पुलाक लब्धी, ०८ आहारिक शरीर ९ क्षायिक समकित १० जिनकल्पी साधु, यह दशबोल नहीं रह

❀इन वासुदेव के हुये पहिले प्रति वासुदेव होते हैं वो भरतके तीन खड साधते हैं फिर वासुदेव इन्हे मारके उस राजके मालक बन जाते हैं यह रीति अनादी से चली आती है

१ चोथे आरेके जन्म हुयेको पांचमें आरेमें केवल ज्ञान होवे, परन्तु पांचमें आरेके जन्मेको केवल ज्ञान न होवे

२ सर्व लोक और लोक जैसे अलोकमे असख्यात खडवे देखे उसे परम अवधी कहते हैं सो पांचमें आरेमे न होवे किंचित किसीको हो जाय परन्तु पुरा बोल सके नहीं

❀ इनने चकारीं की दीया जलाकर भस्म कर

इस सर्पणी काल में हुये बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव के नाम वगैरा

बलदेवके नाम	अचल	विजय	भद्र	सुप्रभ	सुदर्शन	आनंद	नंदन	पद्मरथ(राम)	बलभद्र
वासुदेवके नाम	त्रिपृष्ट	द्विपृष्ट	सयंभू	पुरुषोत्तम	पुरुषसीह	पुरुषपुंडरिक	दत्त	लक्ष्मण	कृष्ण
दोनोंके ग्राम	पोतनपूर	द्वारावती	द्वारावती	द्वारावति	अश्वपुर	चक्रपूर	बणारसी	राजगृही	मथुरा
दोनोंके पिता	प्रजापति	ब्रह्म	रुद्र	सोम	शिव	सहश्व	अग्रश	दशरथ	वासुदेव
बलदेवकी माता	भद्रा	सुभद्रा	सुप्रभा	सुदर्शणा	विजया	विजयती	जयंती	अपराजीता	रोहणी
वासुदेवकी माता	मृगावति	पद्मावती	पृथ्वी	सीता	अम्मा	लक्षमा	सुसवती	सुमित्रा	देवकी
दोनोंका अवगेणा	८० धनुष्य	७० धनुष्य	६० ध	५० ध०	४५ ध	२९ ध०	२६ ध	१६ ध	१० ध०
बलदेवका आयुष्य	८५लक्षवर्ष	७५लक्ष वर्ष	६५ ल व०	५५लक्ष वर्ष	१७लक्षवर्ष	८५हजारव	६५हजारवर्ष	१३हजारव	१२०० वर्ष
वासुदेवका आयुष्य	८४लक्षव०	७२लक्षवर्ष	६० ,,	३० लक्षव०	१० ,,	६५ ,,	५६ ,,	१२ ,,	१ हजारवर्ष
बलदेवकी गती	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	मोक्ष	ब्रह्मदेवलोक
वासुदेवकी गती	७ नर्क	६ नर्क	६ नर्क	६ नर्क	६ नर्क	६ नर्क	५ नर्क	४ नर्क	३ नर्क
प्रतिवासुदेवके नाम	सुग्रीव	तारक	मेरक	मधूकीट	नसुम	बल	प्रल्हाद	रावण	जरासिंध
प्रतिवासुदेवका आयुष्य	८४लक्ष वर्ष	७२लक्ष वर्ष	६० लक्षवर्ष	३० लक्षवर्ष	१० लक्षवर्ष	६५हजार व	५६हजारव	१२ह व०	१२सा वर्ष
किसके वारेमें हुये सा	श्रेयांसजी	वासपुज्यजी	विमलजी	अनंतजी	धर्मजी	अरह पीछे		मुनीसुव्रतजी	नेमीजी

और तीस बोल पाचमें आरमें प्रवर्त्ते—१ शहर गांमडे जैसे होवे, २ गामडे स्मशान जैसे होवे ३ उत्तम कूलके दास दासी हावे ४ राजा यम जैसे कठोर दंड देनेवाले हावे ५ कुलीन स्त्री दुराचारिणी होवे ६ पुत्र पिताकी आज्ञा भंग करने लगे ७ शिष्य गुरुकी निंदा करने लगे ८ खराब मनुष्य सुखी हावे ९ अच्छे लोग दु खी होवे, १० क्षुद्री (सर्प विच्छू, डांसादि) जीवोकी उत्पत्ती बहुत होवे ११ दुष्काळ बहुत पडने लगे १२ ब्राम्हण लालची हावे १३ हिंशाके उपदेशक बहूत होवे १४ एक धर्मके अनेक भेद होवे, १५ मिथ्यात्वकी वृद्धि होवे १६ देव दर्शन दुर्लभ होवे १७ वेताढ पर्वतके विद्याधरोंकी मंत्रशक्ति घट जाय १८ सरस वस्तुकी सरसाइ कम होवे १९ पशूवोंका आयुष्य कमी होवे २० मिथ्यात्वियोंकी पूजा होवे २१ साधूको चोमासे करने जैसे क्षेत्र थोडे रहे २२ साधुकी १२ पडिमा और श्रावककी ११ पडिमा विच्छेद जाय, २३ गुरु चेलेको ज्ञान नहीं देवे, २४ चेले अविनीत, क्लेशी होव २५, अधर्मी ठग, कपटी, क्लेशी, इत्यादि दुर्गुणी मनुष्यकी उत्पाति बहुत होवे २६ शांत, मिलापी, सरल ऐसे मनुष्यकी उत्पति कमी होवे २७ कितने क धर्मी नाम धराके उत्सूत्र परूपकर लोगोंको भरमाने लगे २८ आ चार्य अपने २ धर्मकी परंपरा अलग २ स्थापने लगे २९ म्लेछ राजा बहुत होवे ३० धर्मपर प्रीति घट जाय

इसी तरह पाचमा आरा होवेगा ऐसे इकीस हजार वर्ष पूरे हुये पीछे छेले दिनको, पहले देवलोकके सक्रेन्द्रजीका आसन चले (अंग फरु के) तब वो यहांके सब लोगोंको कहेंगे कि, होशीयार हो जावो, कल पांचमा आरा उतरके छट्टा आरा बेठेगा, सुक्रत करना होसो कर लो जो उत्तम पुरुष होयेंगे सो सथारा करके स्वर्ग जायगे, फिर संवतक नामे महावायु चलेगा, जिससे सर्व पाहाड, नदी, किले, घर, टुट पडेंगे! फ

क्त वेताढ पर्वत, गगा सिंधू नदी, रुपभ कूट, लवण समुद्रकी खाइ, इनके सिवाय और सर्व क्षय होजायेंगे उस वक्त पहले पहरमें जैन धर्म विच्छेद जाय, दूसरे पहरमें सर्व धर्म विछेद जाय, तीसरे पहरमें राज्यनीति विछेद जाय, और चौथे पहरमें वादर अग्नी विछेद जायगी

छट्ठा 'दुशमा दुशम '(दु खमें दु ख) आरा इक्कीस हजार वर्षका वैठेगा, उस वक्त भर्त क्षेत्रका अधिष्टायक देवता, फक्त बीजरुप मनुष्य पशूको उठाकर गंगा, और सिंधु नदीके वेताड पर्वतके, उत्तर और दक्षिण चार २ कांठे यों आठ, एकेक काठेमें नव विल * सर्व बोहतर विल है, एकेक विलमें तीन २ मजिल, उनमे उन मनुष्योंको रख देवेंगे, उस वक्त वर्ण गंध रस स्पर्शके पर्यायोंमें अनन्तगुण पुद्गलकी हीनता हो जायगी उन मनुष्योंका उत्कृष्ट वीस वर्षका आयुष्य और एक हाथका शरीर रह जायगा आठ पासली और आहारकी इच्छा अप्रमाण अर्थात् इच्छा तृप्त होवेगी नहीं, उस वक्त रातको ठंड बहुत पडेगी, दिनको ताप बहूत पडेगा इसलिये मनुष्य बाहिर निकल नहीं सकेंगे, फजरको सूर्य उदयके दो घडी पहले, और स्यामको सूर्य अस्तके दो घडी पीछे तक विलके बाहिर रह सकेंगे तव गगा, सिंधूका पाणी चलते सर्पके जैसा आका वाच्या वहेगा गाडेके जितना चौडा और आधा पइया डूवे जितना ऊडा रहेगा उसमें मच्छ, कच्छ, बहुत होंगे, उमे वो मनुष्य पकडके नदीकी रेतीमे गाड देवेंगे, और जल्दी विलमें चले आवेंगे वो शीत तापसे पक जायेंगे तव उसे लावेंगे और सब जणे उसपर टूट पडेंगे, टुकडे२कर खाजायगे, उनकी हड्डीयोंको पशू चाटके रहेंगे यह मनुष्य मरे मनुष्यकी मस्तक की खोपरीमें पानी पीवेंगे यह मनुष्य अति निर्बल, कुरूप, दुर्गंधी, रोगिष्ट सूगले, अपवित्र नग्न, पशूके तरह रहेंगे जैसे तिर्यचमें माता या भगिनीका कुछ विचार नहीं है, ऐसेही उनको भी

* उधर घूमके होते है जैसे

कुछ विचार नहीं रहेगा छे वर्षकी स्त्री गर्भ धारण करेगी, लडका लडकी बहुत होयेगे, भंडसूरी जैसा परिवार लेके फिरेगी, महा क्लेषी और महा दु खी होवेंगे धर्म पुन्य रहित एकांत मीथ्यात्वी मरके नर्क तिर्यंच गतिमें जावेंगे

यह अवसर्पणीके दश क्रोडा क्रोडी सागरके छेआरोंका वर्णन पूर्ण हुवा

उत्सर्पणीका वर्णन

उत्सर्पणीका पहिला आरा 'दु खमादु खमी' श्रावण वदी १ के दिन बेठताहैं इस्का सर्व स्वरूप सर्पणीके छट्टे आरे जैसा जानना

उत्सर्पणीका दूसरा 'दु-खमा' आरा श्रावण वदी एकमको बैठता है उस दिन वादल गाज वीज होकर पहिला पुष्कर नामक मेघ सात दिन सात रात एक सरीखा पडता है, उससे जमीनकी उष्णता मिट जाती है फिर दूसरी वक्त क्षीर [दूध] जैसा मेघ सात अहो रात्री बरसता है सो दुर्गंध मिटा देता है यहां सात दिनका उघाड देकर फिर घृत नामक (घी जैसा) तीसरा मेघ सात अहोरात्री तक वरसता है जिससे धरतीमें स्निग्धता [चिगटाइ, सरसाइ] पैदा होती है, फिर चौथा अमृत नामक मेघ सात अहोरात्री वर्षताहै जिससे चौवीस प्रकारके अनाज और सर्व विनास्पतिके अंकूर प्रगटते हैं फिर सात दिनका उघाड देकर पाचमा रस नामक [सोटा—सेलडीके रस जैसा] मेघ सात अहोरात्री लग वर्षता है, जिससे खाटा, मीठा, तीखा, कडुवा, कसायला इत्यादि स्वाद विनास्पीतिमे प्रगमता है यह पांचहों वर्षाद * भरत क्षेत्र जितने

* पांच सत्ते वर्षाद और दो सत्तेका उघाड यों सात सत्तेके ४९ दिन तो श्रावण वदी एकम से भाद्रपद सुदी पांचम तक ४९ दिन आते है इसलिये ४९—५ दिनमें छमछरी की जाती है यह छमछरी (संवत्सरी) पर्व अनादी कालसे शाश्वता है

बीचमें दो सत्तेका उघाड कहा सो भयसे जानना

े घोडे पडते, हैं उस वक्त वो बिल वासी मनुष्य बिलके वाहिर नि
लकर प्रथमतो चमकके भीतर भराते हैं, और दुर्गंधीसे घबराकर फिर बा
र आते हैं यों निडर होते २ वृक्षके पास आते हैं, फलादिकका भक्षण
रते हैं वो स्वाद लगते हैं, तब मांस आहारका त्याग कर, आपसमें
सा नियम (बंदोबस्त) बाधते हैं कि " आज पीछे जो मांसाहार
रेगा उसकी छायेंमें भी खडे नहीं रहना " फिर यों करते जाती भेद
ोगा, सब रीति अभी पाचमे आरेमे चल रही है वैसी ही होजानी है
देनोदिन आयुष्य अवघेणा सुखकी वृद्धि होने लगती है यों इकीस
ज़ार वर्ष पूरे होते हैं तब—

तीसरा आरा " दु खमसुखम" नामक लगता है, उसकी रचना
सब चौथे आरे जैसी जाननी इसके तीन वर्ष ८॥ महिन जायेंगे तब
पाहिले तिर्थंकर होते हे, पाहिले प्रकरणमें आतरे कहे हैं उसी तरह इस आ
रेमे तेवीस तीर्थंकर, इग्यारे चक्रवर्त, नव बलेदेव, नव वासुदेव होते है ऐ-
से एक कोडाकोडी सागरमें बयालीस हजार वर्ष कमी पूरे होत हे—तब—

चौथा "सुखम दु खम" नामक आरा लगता है चोरासी लाख
पूर्वके अंदर चोवीसमे तीर्थकर मोक्ष पधार जाते हे बारमे चक्रवर्त भी
आयुष्य पूर्ण करजाते हे फिर क्रोड पूर्व मोठेरे (कुछ कमी) गये पी-
छे कल्प वृक्षकी उत्पति होने लगती हे तब मनुष्य उनसे इच्छा पूर्ण
होती देखके, काम धंधा सब छोड देते हें यों बादर अभी ओर सर्व
प्रकारका धर्म विछेद जाते हैं जावत तीसरे आरेका एक भाग व्यती
त होवे तब, सब अकर्म भुमि बन जाते हें ओर जूगल (यूग्म) उपज
ने लग जाते हे ऐसे दो क्रोडाक्रोड सागर पूर्ण हुये पीछे—

पाचमा "सुखम" नामक आरा लगता है उसके सब हाल दु
सरा आरा जैसा जानना यों तीन क्रोडाक्रोड सागरपूर होते यह तब

छठ्ठा आरा "सुखमा सुखम" पहले आरे जैसा चार क्रोड क्रोड सागर पूर्णकरताहैं आयुष्य अवघेणा रीति भाति सब वैसीही जाणनी

☞ यह दश कोडाक्रोड सागरकी उत्सरपणीका वर्णन सपूर्ण हुवा

इसी तरह भरत क्षेत्रमें वीस कोडाकोडी सागरका कालचक्र फिरता है

वेताढ पर्वतसे उत्तर दिशा और चूल्हेम वत पर्वत से दक्षिण दिशा, गंगा सिंधु नदीके मध्यमें ऋषभ कूट गोल भवृत-१२ जोजनका ऊंचा हैं जिसमें चक्रवृतीनाम लिखते हैं

जम्बू द्विपके उत्तर दिशामें अपराजिता दरवाजेके भीतर ऐरावत क्षेत्र हैं, जिसकी सर्व रचना भरत क्षेत्रजैसी जाननी विशेपइतनाही है कि, ऐरावत क्षेत्रकी मर्यादाका करने वाला शिखरी पर्वतसे रक्ता औररक्तवती दोइ नदीयों निकलकर वेताड पर्वतके नीचे होकर उत्तरके लवण समुद्रमें जाकर मिली हैं जिससे ऐरावत के भी छे खंड हुवे हैं.

मेरुमे दक्षिणमे भरत क्षेत्रकी मर्यादा करने वाला मेरुकी तरफ उत्तरमे "चूली हेमवत" नामक पर्वत पीछे सोनेका है १०० योजनका ऊंचा पचीस योजन पृथ्वीमें पूर्व पश्चिममें २४,९२५ योजन, उत्तरकी तरफ लंबा है, १०५२ योजन १२ कला चौडा है, इस पर्वतके मध्यबीचमें 'पद्म' नामक द्रह (कुंड) है, एक हजार योजन लंबा, पाचसो योजन चौडा दश योजन उंचा है, इस कुंडमेंसे तीन नदी निकली है गंगा, सिंधू दो नदी तो चउदे २ हजार नदियोंके परिवारसे भरत क्षेत्रमें गई है, और रोहिता नदी उत्तरकी तरफ हेमवत क्षेत्रमें होकर आठावीस हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली है, 'पद्म' द्रहके बीचमें रत्नमय कमल है, इसपर 'श्री देवी' सर्व परिवारसे रहती है इस प्रवत पर ११ कूट पाचसो २ जोजन के उंचे हैं

मेरुसे उत्तर दिशामें ऐरावत क्षेत्रके पास 'शिखरी' नामक पर्वत है, इसकी रचना सब चूली हेमवत पर्वत जेसी जाननी पद्म द्रह जेसा इसपर 'पुंडारिक' द्रह है, इसमेंसे तीन नदी निकली है, रक्ता और रक्तवती नदी तो चउदे २ हजार नदीके परिवारसे ऐरावत क्षेत्रमें गइ है और सुवर्णकूला नदी दक्षिणकी तरफ एरण्यवय क्षेत्रमें होकर अट्ठावीस हजार नदी के परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमे जाके मिली है पुंडरिक द्रह के वीचमे रत्न मय कमलपर लक्ष्मी देवी सपरीवार रहती है

मेरुसे दक्षिणमें "चूली हेमवत" पर्वतके पास उत्तरकी तरफ 'हेमवय' नामे युगलिये मनुष्यका क्षेत्र है इसमें रहनेवाले मनुष्योंका हेम (सुवर्ण) जैसा शरीर है यह पूर्व पश्चिममें ३७,६७४ योजन १६ कला उत्तरकी कोरपे लम्बा, और २१५५ योजन ५ कला उत्तर दक्षिणमें चौडा है, इसके वीचमें एक शब्दपातीवृत वेताड नामका गोल पर्वत है यहा सदा तीसरे आरेके पहलीके दो भाग जैसी रचना रहती है इस क्षेत्र के मध्य भागमें रोहिता और रोहितंसा नदीके वीच एक शब्द पति नामे वृत (गोल) वेताड पर्वत १ हजार जोजन का ऊंचा और १ हजारही योजन चौडा है

मेरुसे उत्तरमें शिखरी पर्वतके पास दक्षिणकी तरफ 'एरण्यवय' नामक जुगलियाका क्षेत्र है, इसमेंके मनुष्यका एरण्य (चादी) जैसा उज्वल सरीर है इसकी सव रचना हेमवय क्षेत्र जैसी जाणनी इसमें वीकट पाती गोल वेताड, शब्द पाती जैसा है

मेरुसे दक्षिणमें हेमवत क्षेत्रके पास उत्तरकी तरफ 'महाहेमवत' नामक पर्वत सोनेका है, २०० योजन ऊंचा, ५० योजन धरतीमें, पूर्व पश्चिम ५३९३१ योजन १६ कला लम्बा है और उत्तर दक्षिणमें ४२१० योजन १० कला चौडा है इसके मध्यमें 'महापद्म' द्रह (कुंड) है, दो

हजार योजन लम्बी, एक हजार योजन चौडी, और दश योजन उंडी, इसमेंसे दो नदी निकली है, 'रोहिता' नदी दक्षिणके तरफसे निकल हे मवत क्षेत्रमें होकर अट्ठावीस हजार नदीके परिवारसे पुर्वके लवण समुद्रमे मिली है और 'हरीकता' नदी उत्तरकी तरफ से निकल हरीवास क्षेत्रमें होकर छप्पनहजार नदीके परिवारसे पुर्वके लवण समुद्रमें जाके मिली है इस द्रहके मध्यमें रत्नकमल है उसमें 'ह्री' नामक देवी सर्व परिवारसे रहती है इस पर्वत पर ८ कुंट पाचसे २ योजन के ऊचे है

मेरुसे उत्तर दिशामें ऐरण्यवय क्षेत्राके पास दक्षिणकी तरफ 'रुपीवंत' पर्वत रुपेका है इसकी रचना सब महाहेमवत पर्वत जैसी जाणनी इसके मध्यमें 'महा पुंडरीक द्रह' महापद्म द्रह, जैसी जाणनी इसमेंसे दो नदी निकली है 'रुपकला' नदी उत्तरसे निकलकर ऐरण्यवय क्षेत्रमें हो अट्ठाइस हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली है, और 'नरकंता' नदी दक्षिण दिशाकी तरफसे निकल रम्यकवास क्षेत्रमें होकर छप्पनहजार नदीके परिवारसे पूर्वके लवण समुद्रमें जाकर मिली है इस द्रहके मध्यमें रत्नमय कमल है उसपर 'बुद्धी' नामे देवी रहती है आठ कूंट महाहेमवंत प्रवर्ते जैसेही हैं

मेरुसे दक्षिणमें महा हेमवत पर्वतकी उत्तरकी तरफ 'हरीवास' नामक युगलियोंका क्षेत्र है इसमें रहनेवाले मनुष्योंका हरा पन्ना जैसा शरीर है रह पर्वत पुर्व पश्चिममें ७३,९०१ याजन १७ कला लम्बा है और उत्तर दक्षिणमें ८४२१ योजन १ कला चौडा है इसके मध्यमें 'विकटापाति' वृत वेताड पर्वत है इसमे सदा दूसरे आरे जैसी रचना जाणनी

मेरुसे उत्तरमें रुपी पर्वतके पास दक्षिणमें 'रम्यकवास' युगलियोंका क्षेत्र है इसमेके मनुष्योंका स्वरूप रम्य (रमणिक) है,इसकी रचना

सब हरीवास क्षेत्र जैसी जाणना, इसके मध्यमें गध पातीका वृत वताढ पेवत है

मेरुके दक्षिणमें हरीवास क्षेत्रके पास उत्तरमें 'निषेध' पर्वत है ४०० योजन ऊंचा, १००योजन धरतीमें, पूर्व पश्चिम ९४१५६ योजन २ कला लम्बा है, उत्तर दक्षिणमें १६८४२ योजन चौडा है, इसकें मध्यमें 'तिगिच्छ' द्रह है, चार हजार योजन लंबा, दोहजार योजन चौडा, दश योजन उंडा, इसमेंसे दो नदी निकली है, 'हरीसलीला' नदी दक्षिणसे निकलकर हेमवय क्षेत्रमें होकर, छप्पनहजार नदीके परिवारसे, पूर्वके लवण समुद्रमें जाकर मिली है, और 'सितोदा' नदी उत्तरसे निकलकर देवकुरुक्षत्रे के मध्य भागमें होकर चित्त, विचित्त, पर्वत और निपेध, देव कुरु, सूर, सुलस, विद्युत्प्रभ,* इन पांच महाद्रहके मध्य भागमेंसे निकलकर भद्रशाल वनमें होकर, मेरु पर्वतसे दो योजन अन पहोंचती विद्युतम म गजदताके नीचे होकर यहा पश्चिममे फिरकर, पश्चिम महाविदेह क्षेत्र-के दो भाग करती, सर्व पाचलाख वतीमहजार नदीयोंके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमे मिलती है इस तिगिच्छ द्रहके कमलमें 'घृती' देवी सकल परिवार सहित रहती है इस प्रवत पर नव कूट चूल हेमवत जेसे ही है

इस निपध पर्वतके पास उत्तरमें पुर्वकी तरफ 'विद्युतप्रभ' नामक गजदंता पर्वत लाल सोनेका है और दक्षिणमें 'सोमानस' नामक गजदता पर्वत रुपका है यह दोनो हाथीके दांत जैसे वाके हैं, निपेधके पाससे बांके होकर मेरुको जा अडे है, तीसहजार दोसे नव योजनके लंवे हैं, निपेधके पास चारसो योजन ऊंचे, और पाचसे योजनके चौडे हैं,

* इन एकेक द्रहके पास दश १ पूर्वमें औरदश २ पश्चिममें यों वीम २ पर्वत हैं पांचही द्रहके ?० पर्वत हैं

आगेके ऊचपणेमें वृद्धि पाते और चौडेपणमें घटते २ मेरुके पास पांच सो योजनके ऊचे, और अंगुलके असंख्यातमें भागके चौड रहे हैं इन दोनोंपे सात २ कूट हैं

मेरुसे उत्तरमें रम्यक वास क्षेत्रके पास दक्षिणमें 'नीलवंत' नामक पर्वत हरे सोनेका निषेध पर्वत जैसा है इसके मध्यमें 'केसरी' नामक द्रह तिगिच्छ द्रह जैसी है इसमेंसे दो नदी निकली है 'नारीकता' नदी उत्तरसे निकलके रम्यक वास क्षेत्रमें होकर छप्पन हजार नदीके परिवारसे पश्चिमके लवण समुद्रमें मिली है और 'सीता' नामक नदी दक्षिणसे निकलकर, उत्तर कूरु क्षेत्रके मध्य भागमें होकर, झमक समक, पर्वत और नीलवत, उत्तर कूरु, चंद्र, ऐरावत, माल्यवान, इन पांच द्रह● के मध्य भागमें होकर भद्रशाल वनमेंसे मेरुको दो योजन दूर रखती हुइ, माल्यत गजदंताके नीचेसे निकल, पूर्वकी तरफ होकर, पूर्व महा विदेहके दो भाग करती पांचलाख बचीस हजार नदीके परिवारसे, पूर्वक लवणसमुद्रमें मिलीहे इस केसरी द्रहके कमलमें 'कीर्ति देवी' सब परिवारमे रहती है● इस पर्वत पर भी ९ कूट है

इस नीलवंत पर्वतके पास पूर्व माल्यवत गजदंत पर्वत हरे सोनेका और पश्चिममें गंन्ध मादन गजदंता पर्वत पीले सोनेका, विधुत प्रभ जगदंता

● यहां भी पूर्वकी तरह १० पर्वत जाणना

● यह द्रहके मध्य कमलपर रहनेवाली छेही देवीयों भवन पतीके जातीकी एक पल्योपमके आयुष्य वाली है इनके चार हजार सामानीक देव हैं सोले हजार आतम रक्षक देव है अभ्यंतर परपदा के ८ हजार मध्य परषदा के १० हजार और बाह्य परपदा के १२ हजार देव है सात आणिकाके स्वामी चार महतरिक देवी एक कोडी २ लाख अभीयोगी देव इन सबके रहनेके अलग २ रत्नमय कमल हैं और १ ८ भूषण धरनेके कमल हैं सब १२,०५, १२ कमल हुवे

जैसा जाणना

मेरुसे दक्षिणमें निषेध पर्वतके पास उत्तरमें विद्युत प्रभ और सोमाणस गजदंताके बीचमें देवकुरु क्षेत्र युगीलयाका है पूर्व पश्चिम दोनो गजदंताके बीचमें (अर्धचन्द्रकार) त्रेपन हजार योजन लंबा, और उत्तर दक्षिणमें ११८४२ योजन और २कलाका चौडा है, इसमें सदा पहिला आरा प्रवर्तता है, इस क्षेत्रमें जम्बूवृक्ष रत्नमय साडे आठ योजनका उंचा है, जिसपर जंबू द्विपका मालक 'अणादी' नामे देव महा रिद्धिवंत रहता है

मेरुसे उत्तरमें नीलवंत पर्वतके पास दक्षिणमें दोनो गजदंताके बीचमें उत्तर कुरु क्षेत्र है, सो देव कुरु जैसा जाणना, इस क्षेत्रमें जंबुवृक्ष जैसाही सामली वृक्ष है इसपर गरुड देवता है यह उत्तर दक्षिणके लाख योजन पूरे हुवे *

मेरुसे पुर्व और पश्चिम दिशाका वर्णन

मेरु पर्वतके दोनो तरफ पूर्व पश्चिममें महाविदेह नामक क्षेत्र है, यह महाविदेह क्षेत्र निषध और नीलवंत पर्वतके बीचमें तेतीस हजार छे सो चोर्तास योजनका चौडा है, और मध्य बीचमें भद्रशाल वन मेरु पर्वत मिलाकर एक लाख योजन लंबा है

इस महाविदेह क्षेत्रके बीचमें मेरु होनेसे दो भाग हुए हैं, एकका नाम पूर्व महाविदेह, और दुसरेका नाम पश्चिम महाविदेह है, इस

* उत्तर दक्षिणके लाख योजनका हिसाब

क्षेत्र	योजन	क्षेत्र	योजन
मेरु पर्वत	१०० ०	महाहेमवतपर्वत	४२१ $\frac{१०}{१९}$
दक्षिण भद्रशालवन	१००	रुपी पर्वत	२११ $\frac{?}{१९}$

पूर्व महाविदेहमें सीता नदी, और पश्चिम महाविदेहमें सीतोदा नदी पढनेसे इसके दो दो भाग हुवे हैं, एक उत्तरकी तरफ और दूसरा दक्षिणकी तरफ यों दोनो महाविदेहके चार भाग हुवे हैं, एकेक भागमें आठ २ विजय है, यों चारही भागकी बत्तीस विजय हुई ❋

मेरुके दोनोतरफतो भद्रशाल वन बावीस २ हजार योजनका है नीलवंत पर्वतके दक्षिण दिशा, माल्यवंत गजदंता पर्वतके पूर्व दिशा, शीतानदीके उत्तर दिशा, पहली कछ नामा विजय है, उत्तर दक्षिणमे (नीलवत पर्वतके और सीता नदीके बीचमें) ८२७१ योजन एक कलाकी लंबी, और पूर्व पश्चिममें वीस हजार दोसो तेरह योजनमें कुछ कम (एक योजनके आठ भाग करना इसमेंका एक भाग कमी) चौड़ी है, इस कछ विजयके मध्य बीचमें एक बेताड पर्वत है, पूर्व पश्चिममें विजय जितना (२२१२$\frac{७}{८}$ योजन) लंबा, २५ योजन उंचा, ५० योजन चौडा, इसपर उत्तर और दक्षिण दो श्रेणीमें विद्याधरोंके५५ नगर हैं, उपर अभोगी देवताकी श्रेणी दो गुफा वगैरा सर्व अधिकार भरत क्षेत्रके बेताढ जैसा जाणना

कच्छ विजयके बेताडके उत्तरके विभागमें नीलवंत पर्वतके नि

क्षेत्र	योजन	क्षेत्र	योजन
उत्तर भाद्रशाल वन	८०	हेमवय क्षेत्र	२१ ५ $\frac{५}{१९}$
देव कुरुक्षेत्र	११८४२ $\frac{२}{१९}$	ऐरण्य वय	क्षेत्र२१०५ $\frac{५}{१९}$
उत्तर कुरुक्षेत्र	११८४२ $\frac{२}{१९}$	चुल्लहेमवंतपर्वत	१ ५२ $\frac{१२}{१९}$
निषेध पर्वत	११८४२	शिखरी पर्वत	१०५२ $\frac{१२}{१९}$
नीलवंत पर्वत	११८४२	भरतक्षेत्र	५२६ $\frac{६}{१९}$
हरीवास क्षेत्र	८४२१ $\frac{१}{१९}$	ऐरावत क्षेत्र	५२६ $\frac{६}{१९}$
रमक्यास क्षेत्र	८४२ $\frac{१}{१९}$	सर्व जोड	१०००० ०

तवम (पास) पूर्वे सिंधू कुड बीचमें * ऋषभ कूट, और उत्तरमें गंगा कुंड है, इन दोनों कुंडमेंसे सिंधू और गंगा दो नदी निकलकर वेताड की दानों गुफाके नीचे होकर इस विजयके भरत क्षेत्रकी तरह छे भाग करती हुइ अट्ठावीस हजार नदीके प्रवारसे सीता नदीमें आकर मिली है

वेताडकी दक्षिण दिशाकी कच्छ विजयमें गंगा सिंधुके बीचमें, क्षेमंकरा नाम राजाधानीकी नगरी है, इसमें कच्छ नामे चक्रवर्ती राजा होकर भरतकी तरह छे ही खंड साधते हैं और राज्य करते हैं

इस कच्छ विजयके पास चित्रकूट नामक वखारा (हद करनेवाला) पर्वत है, पूर्व पश्चिममें १६५९२ योजन, और दो कलाका लंबा, और पांचसे योजन चोडा, नीलवंत पर्वतके पास चारसे योजन ऊंचा, आगे वडता २ सीता नदीके पास पांचसे योजनका उंचा है इस प चार कूंट हैं

इस पर्वतके पास पश्चिममें दूसरी सुकच्छ नामक विजय है, इसमें क्षेमपुर राजधानी है, और सब कच्छ विजय जैसी रचना जाणनी इस विजयके पास नीलवंत पर्वतके मूलसे ग्रहावती कुडसे ग्रहावती नदी निकलकर उत्तर दिशामें सीता नदीमें मिली है यह निकली वंहासे और मिली वहातक एक सरीखी (पानीके नेहर जसी) दश योजन उंडी और सवासो योजनकी चोडी है

इसके पास पूर्वमें तीसरी महाकच्छ नामक विजय अरिष्टा राजधानी, और सब कच्छ विजय जैसा वेताड दो नदी छे खड जाणना, इस विजयके पास ब्रह्मकूट वखारा पर्वत चित्रकूट जैसा जानणा इसके पास चौथी कच्छावती विजय, अरिष्टवती राजधानी जिसके पास ग्रहवतीनदी ग्रहवती नदी जैसी जाननी जिसके पास पाचमी आवर्त विजय पद्मा

* ये ऋषभ कूट ८ योजनका ऊंचा है

राजधानी, जिसके पास नलीनिलकूट वखारा पर्वत जिसके पास छ्ठी मंगलावर्त विजय, मंजूषा राजधानी जिसके पास वेगवती नदी जिसके पास सातमी पुष्करविजय, ऋषभपुरी राजधानी जिसके पास पुष्कलावती विजय पुंडरीगणी राजधानी यह आठही विजय मेरूसे पूर्वमें निलवंतसे दक्षिणमें और सीतनदीसे उत्तरमें आइ है

पुष्कलावती विजयके पास पूर्वमें सीतामुख नामक बाग, पूर्व पश्चिममें विजय जितना (१६५९२२) और उत्तर दक्षिणमें सीतानदी के पास दो हजार नवसे बावीस योजन चौडा, उत्तरमें घटता २ नीलवंत पर्वत के पास उगणीसिया एक भाग जितना चौडा है

इस वनके पास ही बरोबरसे सीता नदीके दक्षिणकी तरफ इस जैसा ही सीतामुख नामकवन है, वो निषध पर्वतके पास एक उगणीसिया भाग जितना चौडा है

इस वनके पास पश्चिममें मेरूके तरफ नवमी वत्स विजय, सुसीमा राजधानी, इसके पास त्रिकूट वखारा पर्वत, इसके पास दशमी सुवत्स विजय, कूंडला राजधानी, इसके पास तप्तासर नदी, इसके पास इग्यारमी महात्सव विजय, अपरावती राजधानी, इसके पास वैश्रमण वखारा पर्वत, इस के पास बारहमी वत्सावर्त विजय, प्रभंकरा राजधानी, इसके पास मंतातरी नदी, इसके पास तेरहमी रम्यविजय, अंकावती राजधानी, इसके पास अजनकूट वखार पर्वत, इसके पास चौदहमा रम्यक विजय पद्मावती राजधानी, इसके पास उन्मातातर नदी, इसके पास पंद्रहमी रमणी विजय, शुभा राजधानी, इसके पास मैताजल कूट वखरा पर्वत इसके पास सोलहमी मंगलावती विजय, रत्नसचय राजधानी यह आठ विजय मेरुसे पुर्वमें, निषेध पर्वतसे उत्तर में सीतानदीसे उत्तरमें है, इसके पास मेरूका भद्रशाल वन २२००० योजनका आ गया है

यह पुर्वे महा विदेहका अधिकार हुवा

अब मेरुसे पश्चिम महाविदेहका वर्णव, कहते हे मेरुसे पश्चिम दिशा विद्युत प्रभ गजदंता और भद्रसाल वनके पास, निषेध पर्वतसे उत्तर दिशा सीतोदा नदीसे दक्षिण दिशा यहासत्तरमी पद्मविजय, अश्वपुरी राजधानी इसके पास पश्चिममें अकावती वखारा पर्वत, जिसके पास अठारमी सूपद्म, विजय सिंहपुर राजधानी जिसके पास क्षिरोदा नदी, जिसके पास उगणीस महापम विजय महापुरा राजधानी जिसके पास पद्मावती वखरा पर्वत जिसके पास वीसमी पष्मवती विजय विजय पुर राजधानी जिसके पास इकीसमी शख विजय, अपराजिता राजधानी जिसके पास असी विषय वखरा पर्वत, जिसके पास अंतर वाहिनी नदी जिसके पास बावीसमी नलीन विजय * अपरा राजधानी तेवीसमी कुमुद विजय आसोका नगरी जिसके पास सुकवाहा वखरा पर्वत जिसके पास २४ मी नलीनावती विजय, वितशोका नगरी

यह आठ विजयके पास पश्चिममें सीतोदा मुखवन, सीतामुख वन जैमाही आ गया हे

इसके पास उत्तर दिशामें भी सीतोदा मुखवन ऐसा ही हे जिसके पास पूर्वदिशा मेरुकी तरफ २५ मी वप्र विजय विजया नगरी, जिसके पास चंद्रकूट वखरा पर्वत, जिसके पास २६ मी सुवप्र विजय वंजायती राजधानी, जिसके पास उन्मी मालनी नदी जिसके पास २७ मी महावप्र विजय, जयती राजधानी जीसके पास सूरकूट वखरा पर्वत जीसके पास २८ मी वप्रावती विजय, अप्राजिता राजधानी, जिसके पास २९ मी वल्युविजय, चक्रपुर राजधानी, जिसके पास नागकूट वखरा पर्वत, जिसके पास ३० मी सुवलगु विजय, खड्गीपुर राजधानी, जिसके पास फेंनमा

* नलीनावती विजय उगरती १ मध्यमें हजार योजनकी ऊंडी है

ल्नी नदी जिसके पास ३१ मी गर्धीला विजय, अवध्या •
जिमके पास देवकूट बखारा पर्वत जिसके पास ३२ मी गधीलावती
जय है, जिसके पास भद्रशालवन गंधमादन गजदंता पर्वत और उत्त
कुरुक्षेत्र आ गया है

यह सर्व विजय कच्छविजय जैसी, सर्व पर्वत चित्त कूट जैसे, औ
सर्व नदी ग्रहवती जैसी जाणनी यह पूर्व पश्चिमके लाख योजन व
बयान हुवा

इस * जंबूद्विपके चार ही तरफ गोलाकार जगती (कोट)
आठ योजनका ऊंचा नीचे बारे योजन, बीचमें आठ योजन, और ऊपर च
योजन चौडा है इसके चार ही दिशामें चार दरवाजे है, पूर्वमें विज
दक्षिणमें विजयंवन, पश्चिममें जयत, उत्तरमें अपराजित य चार ही दरवा
आठ याजन ऊंचे, और चार योजन चौड हैं, इस जगतीकी परधी (च
र ही तरफका फिरत) ३१६२० योजन ३ कोश १२८ धनुष्य साढे
रह अगुल झाझेरी है

लवण समुद्रका वर्णन

जम्बूद्विप के बाहिर चारही तरफ वलिया (चूडी) जैसा दो लाख

---

* जम्बू द्विपके पूर्व पश्चिमके लक्ष योजनका हीसाब

एकेक विदेह ११२-- योजन, तो १६ विजयके ३५४०६ याजन हुये
एकेक वखरा पर्वत ५०० याजन तो ८ वखारके ४००० याजन हुये
एकेक अंतर नदी १२५ योजन की तो ६ नदीके ७५० याजन हुये
एकेक सीता मुखवन २९२२ याजन, का तो २ वनके ५८४४ योजन हुये
एकेक भद्रशाल वन २२००० योजन का तो २ वनके ४४००० योजन हुये
मध्यमें मेरु पर्वत .... १०००० योजन का
यों सर्वयोजन १०००० हुये

नका चौडा लवण समुद्र है, जिसका पानी लून जैसा है, यह समुद्र
ारेपर तो वालाग्रह जितना उंडा है, और आगे उंडासमें वढते २९५
र योजन जावे तव मध्यमें एक हजार योजन उंडा आता है

जंबूद्विपमें भरतक्षेत्रकी मर्यादाका करनेवाला चूली हेमवंत पर्वत
जसके दोनों तरफसे छेडेसे जगती के वाहिर समुद्रमें पूर्वमें दो और
ममें दो एसी चार दार्दें (डागरी) हाथीके दात जैसे वॉकी एक
णकी तरफ और एक उत्तरकी तरफ मुडती हुइ निकली हैं, एकेक
 सात २ अतरद्विप [वेट] हैं, चारही तरफके पहिले चार द्विप-
तीसे तीनसो योजन दूर हैं, जिनके नाम —१ एकरुक,२ अभासिक ३
गीक, ४ लांगुली, ये तीनसो योजन के लंवे चौडे हैं इनके आगे
सो योजन चारही तरफ दूसरे द्विप हैं—१ हयकर्ण, २ गयकर्ण, ३ गो
, ४ सैकुलीकर्ण, ये चारसो योजनके लंवे चौडे हैं इनके आगे पाच-
योजन चारही तरफ तीसरे द्विप हैं —१ अदर्शमुखा, २ मेढमुखा, ३
गोमुखा, ४ गोमुखा, ये पाचसे योजनके लंवे चौडे हैं इनके आगे छ-
योजन चारही तरफ चौथे द्विप हैं —१ हयमुखा, २ गयमुखा, ३ ह-
मुखा, ४ व्याघ्रमुखा, ये छेसो योजन के लंवे चौडे हैं इनके आगे
तसो योजन चारहीतरफ पांचमेद्वीपहै —१ अश्वकर्ण, २सिंहकर्ण,
अकर्ण ,४गोकर्ण, ये सातसो योजनके लंवे चौडे यहा से आठसे-
जन आगे छट्ठे द्वीपहैं— १उल्कामुख, २ मेघ मुख ३ वीद्युन्मुख,४
मुखा ये आठसे योजनके लंवे चौडेहैं यहासे नवसे योजन आगे
तमे द्वीपहै — १ घनदंत २ लष्टदंत ३ गुढदंत ४ सुधदंत ;ये नवसे
जनके लंवे चौडे हैं यह अठ्ठाइस हुवे यह वांकेहैं, इस लिये जगती
तो २८ ही तीन २ सो योजन दूर है *

* इन द्विपोका जैसा नाम है वैसेही आकार के मनुष्य यहां वसते है
ऐसा दिगांबर मत के ग्रन्थमें लिखा है

ऐसे ही उत्तर दिशाकी तरफ एरावतके शिखरी पर्वतमेंसे दो तरप
चार दाढों और २८ द्विप हैं, उनके येही नाम और प्रमाण जाणना इनमें
सब मिथ्या द्रष्टी मनुष्य रहते हैं ।

इन ५६ अतर द्वीप पर जुगालिये मनुष्य रहते है उन्का पल्यं
असख्यातमे भाग आयुष्य, और पोणे आठसे धनुष्यकी अवघेणा है
६४ पसली, एकातर अहारकी इच्छा होवे, ७९दिन बालक को पाले, य
मरकर देवता होते हैं.

जबु द्विपके चारोंही दरवाजेसे लवण समुद्रमें चार ही दिश
९५००० योजन जावे, वहा चारही दिशा वज्रमय चार पाताल कलशे हैं
१ वडवाय पूर्वमें, २ युग दक्षिणमें, ३ केतू पश्चिममें, ४ इश्वर उत्तरमें
यह चार ही एकेक लाख योजनके ऊडे, बीचमें ५०००० योजनके चौ
डे हैं, हजार, योजनकी ठीकरी जाडी हैं, इन्के तीन काड हैं, एकेक
काड तेतीस हजार तीनसे तेंतीस योजन झाझेराका है, पहले कान्डमें
वायू (हवा), दूसरेमें वायू पानी भेला, तीसरेमें फक्त पानी भरा है, चा
ही कलसेके बीचमें नव २ छोटे २ कलशोंकी लडें हैं, पहली दोसो पदर
कलसोंकी लड, दूसरी दोसो सोलेकी, यावत् नवमी दोसो तेवीसकी ल
है लडके कलसे हजार योजनके ऊंडे बीचमें पांचमें योजनके, मूख औ
र तले सा योजनके चौडे, और दश योजनकी ठीकरी जाडी है, इन्के
तीनसे तेतीस योजन झाजेरेका एकेक कान्ड ऐसे तीन कान्ड हैं, पले
में हवा, दूसरेमें हवा, पानी भेला, तीसरेमें पानी भरा है, सर्व कलशे
७८८८ हुये इन्में नीचेके कान्डकी हवा गुंजायमान होवे तब उसमें पा
नी उछल्के दो कोश आठम पखीको ऊंचा जाता है जिससे भरती
है इसमें एकेक कलशेपर १७४००० नाग कुँवार देवता सोनेके कुडछेसे
पानी दावते हैं, इने वेल वर देवकहते हैं. परंतु इनका दावाया हुवा पानी

रहता नहीं है, जिससे लवण समुद्रके मध्य भागमें पानीकी गडमाला (दग) सोलह हजार योजनका ऊंचा और दश हजार योजनका चोडा है जम्बू द्विपकी जगती स लवणसमुद्र में ४२००० जोजन जावे वहा चार दिशामें और चार विदिशामें ८ प्रवत १७२१ योजन ऊचे और मूलमे १०२२ योजन चोडे उपर ४२४ जोजन चोडे है, इसपे वेलंधर देवके आवास हैं, उसमें वह सपरिवार रहते हैं लवण समुद्रमे १२५०० योजनका गौतम द्विर है इसपर लवण समुद्रके मालक सुस्थित नामे देव सपरिवार रहते है इस गौतम द्विप के चौतरफ १२ चन्द्रमाके और १२सूर्य के द्विप साडी अठ्यासी जोजन झाझेरे उचे हैं, यहा जोतषी देव क्रिडा करते हैं *श्री महा वीर स्वामीसे गौतमजीने पूछा है कि—लवण समुद्र जंबू द्विपमें झलक डाले या नहीं? प्रभुने फरमाया है कि, तिर्थंकर त या चार ही तीर्थके तप सयम धर्मके अतिशय करके गये कालमें झलका नहीं, वर्तमान काल में झलक नहीं, आवत कालमें झलकेगा नहीं

लवण समुद्रके चार ही तरफ वलिया कार फिरता चार लाख योजनका धातकीखड द्वीप है, इसमें दो इक्षुकार नामक पर्वत दक्षिण और उत्तरके दरवाजेस निकले हैं,पाचस योजनके उचे और धातकी खड जीतने लबे हैं इससे धातकी खडके दो विभाग हुये हैं

पुर्वके धातकी खडके मध्यमे विजय मेरु और पश्चिमके धातकी खडके मध्यमे अचल नामक मेरु चोरासी २ हजार योजनके उचे हैं सम भूमीसे ५००योजन उपर नदनवन है,वहांस ५,५५,०० योजन उपर मा

* पूर्वमें गोथुभ दक्षिण मे दिगभास पश्चिममें शख और उत्तरमे दिसीम इन चार पर रहने वाले को वेलंधर देव कहते हैं, और चार दिदिसामें क कोंटक विद्युत्प्रभ, कैलाश और अरुणप्रभ इन पर रहने वाले को अणुवेलंधर देव कहते है

मानस्य वन है वहासे २८,००० योजन पद्मक वन है ९,५०० योजन म
ल में चौडा ९४०० योजन भूमीपर चौडा,९३५० योजन नद वन के वह
३८०० योजन सोमानस्य वन के वहा, और एक हजार योजन सिखरप
चौडा है, और सव रचना जम्बूद्विपके मेरु जैसी जाणना एकेक मेरु
पास सर्व क्षेत्र, नदी, पहाड, द्रह का लम्वापणा उंडापणा, जवुद्विपसे दुगुणे
और चौडे उच, लवे द्विप जित्ने जाणना धातकखिडमें जवुद्विपसे
दुणे पदार्थ है

धातकीखडके चारही तरफ आठलाख योजनका चौडा कालोदधी
समुद्र है, यह इस किनारेसे उस किनारे तक एकसा हजार योजनका
उंडा वरावर पानी भरा है, इस पानीका स्वाद पाणी जैसा है, इस समुद्रमें
गौतमद्विप दो है और १०८ चद्र सूर्य के द्विप हैं

कालोदधी समुद्रके चारही तरफ सोलह लाख योजनका चौडा पु
ष्करद्वीप है, इसके वीचमें वलिया (चुडी) की तरह फिरता चारही तरफ
मानु क्षेत्र नामक पर्वत सतरहसो एकवीस (१७२१) योजन ऊंचा और
मूलमें (नीचे) एक हजार वावीस योजन तथा शिखरमें चारसे चोवि
स योजनका चौडा है इस पर्वतके भीतर मनुष्योंकी वस्ती है, धातकीख
ड की तरह इसके वीचमें इखूकार पर्वत पडके दो भाग किये है, पूर्वमें
मदीर मेरु और पश्चिममें विद्युत माली मेरु चौरासी १ हजार योजनका ऊं
चे हैं, इसमें भी धातकीखड जितने सर्व पदार्थ जाणना यह * पेंतालीस

---

* जंबुद्विप १ लाख योजनका लवण समुद्रके दोनों तरफके ४ लाख योजन धातकीखडके दोनो तरफके ८ लाख योजन कालोदधी समुद्रके दोनों तरफके १६ लाख योजन और पुष्करार्ध द्विपके दोनों तरफके १६ लाख योजन सर्व ४५ लाख योजनका अढाइद्विप (मनुष्यलोक) है

लाख योजनका चौडा मनुष्य लोक तथा अढाइ द्विप हुवा इस अढाइ द्विपमें उगणतीस § अंक जितने मनुष्य हैं अढाइद्विपके बाहिर १ मनुष्यकी पेदास, २ बादर अग्नी ३ द्रह [कुंड] ४ नदी ५ गर्जारव, ६ बीजली, ७ बादल, ८ वर्षाद, ९ खेड़ १० दुष्काल, ये दश बोल नही है

मानु क्षेत्र पर्वतके बाहिर पुष्कर द्विपमें देवताकी वस्ती है पुष्कर द्विपके बाहिर चार ही तरफ फिरता ऊडा पुष्कर समुद्र बत्तीस लाख योजनका है यों आगेक द्विप समुद्र एकेकको फिरते एकेकसे दुगणे जाणना ७ मा वारुणी द्विप, ८ मा वारुणी समुद्र * ९ मा क्षीर द्विप, १० मां क्षीर समुद्र ** ११ मां घृत द्विप १२ मा घृत समुद्र § १३ मा इक्षु द्विप १४ मा इक्षु समुद्र + १५ मा नंदीश्वर द्विप ++ १६ मा नंदीश्वर समुद्र १७ मा अरुण द्विप १८ मा अरुण समुद्र १९ मा रुण द्विप २० मा रुण समुद्र २१ मा पवन द्विप २२ मा पवन समुद्र २३

§ अनुयोग द्वार सूत्रमें कहा है कि एकके अंकको ९६ वक्त दूणे करने से २९ अंक आवे उतने मनुष्य अढाइ द्विपमें है सो उगणतीस अंक—७९२ ८१६ [illegible] ५४३,९५०३३६ उत्कृष्ट इतने स्त्री पुरुष होते हैं क्षेत्रके हिसाबसे इत्ने मनुष्योंका समावस होना मुशकिल है; इसलिये स्त्रीकी योनीमें ९ लाख सन्नी मनुष्य उपजते हैं उनकुं मिलाकर उपरके अंक जित्ने मनुष्य होते हैं और कितनक कहते हैं कि श्री अजितनाथजी के वक्तमें उत्कृष्ट मनुष्यकी सख्या हुइथी तब ९ नवके अंक जितनी जानना और छठे आरा-विफेक प्रसंगसे जो कमसे कम मनुष्य हुये तो भी २९ एक के अंकसे कमी न होयेंगे

अढाइ द्विपमे जो मनुष्यका आयुष्य है, उतनाही हाथी और सिंहका आयुष्य मनुष्यके चौथे भाग घोडेका आयुष्य आठमे भाग बकरे, गाडर और सियालका पांचमे भाग गाय भैंस ऊंट और गधेका, दशमे भाग कुत्तेका आयुष्य जाणना

* इसमें मदिरा जैसा पानी है ** इसमें दूध जैसा पानी है § इसमें घृत जैसा पानी है + इसमे इक्षुरस जैसा पानी है ++ यहां अठाई महोत्सव इंद्रादिक देव करते हैं

मा कुडल द्विप २४मा कुडल समुद्र २५ मा संख द्विप २६ मा संख समुद्र २७ मा रुचक द्विप+ २८ मा रुचक समुद्र २९ मा भुजग द्विप ३० मा भुजग समुद्र ३१मा कुस द्विप ३२ मा कुस समुद्र ३३ मा कुचे द्विप ३४ मा कुचे समुद्र इस तरह एकेकको फिरते और एकेकसे दूणे असंख्यात द्विप समुद्र हैं आखरीमें स्वयंभू रमण समुद्र अर्ध राज जितना दोनों तरफसे चौडा है ❋ उसके आगे १२ योजन चार ही तरफ अलोक है, और जोतपी चक्र से ११११ योजन अलोक हैं

"ज्योतिष चक्रम्"

मेरु पर्वतके पास सम भूमि हैं, वहासे ऊपर ७९० योजन तारा मंडल है, ताराके विमान आधे कोसके लंबे चौंडे और पाव कोस के ऊंचे पाच ही रंगके रत्नोंमें हैं इन विमानमें रहने वाले देवताओंका आयुष्य जघन्य (कमसे कम) पाव पल्यका, उत्कृष्ट (ज्यादासे ज्यादा) पाव पल्य झाझेरा, और इनकी देवीयोंका आयुष्य जघन्य पल्यके आठमे भाग उत्कृष्ट पल्यके आठमे भाग झाझेरा है, इनके विमानको दो हजार देव उठाते हैं❋

+ यहां तक जंघाचारण मुनी जाते है तथा रुचक द्विपके मध्यमें वालेयाकार रुचक पर्वत है उसमें छप्पन दिग कुमारीयोंकी ४ रहती है आठ नदनवन और आठ गज दंतायों सब ५६ होती हैं ❋अढाइ सागरोपम अर्थात् पचीस कोडा कोडी उद्धार पल्योपमके जितने समय होते है उतने ही द्विप समुद्र हैं शुभसरस [अच्छी] वस्तु के जितने नाम है उतने एकेक नामके असंख्य द्विप समुद्र हैं जैसे यह सब के मध्य प्रथम जंबू द्विप है, इसके नाम के और भी असंख्य जंबू द्विप हैं ऐसे सर्व वस्तु के नाम के जानना

❋ यह जो ज्योतीषीके विमानको जो उठानेवाले देवता कहे है उनके चार भाग करना जिसमेंका एक भाग पूर्वमें सिंहके रूपसे, दूसरा भाग दक्षिणमें हाथीके रूपसे तीसरा भाग पीश्चममे बैलके रूपसे और चौथा भाग उत्तरमे घोडेके रूप धारण कर विमान उठाते हैं

तारा मंडलसे दश योजन ऊंचा सूर्यका विमान अंक रत्न
।, एक● योजनके ६१ भाग करना, जिसमेंके ४८ भागका लंबा
डा और २४ भागका ऊंचा है, सूर्य विमानवासी देवका आयुष्य जघन्य
। पल्यका उत्कृष्ट एक पल्य एक हजार वर्षका, इनकी देवीका जघन्य
युष्य पाव पल्यका, उत्कृष्ट आधी पल्य पांचसो वर्षका, इनके विमानको
हजार देव उठाते हैं ❋

सूर्यके विमानसे ८०योजन ऊपर चंद्रमाका विमान स्फटिक र-
मय ,एक योजनके ६१ भाग करे उसमेंके ५६ भाग का लंबा चोडा
र २८ भागका ऊंचा है, चंद्र विमानवासी देवका आयुष्य जघन्य
। पल्यका, उत्कृष्ट एक पल्य एक लाख वर्षका, और इनकी देवीका ज-
य आयुष्य पाव पल्य उत्कृष्ट आधी पल ५० हजार वर्षका इनके
मानको सोलह हजार देवता उठाते हैं

चंद्रमासे चार योजन ऊपर, नक्षत्र माल है, नक्षत्रके विमान पा
ही वर्णके एक कोसके लंबे और चौड, आधे कोसके ऊंचे होते हैं,
क्षत्रका आयुष्य जघन्य पाव पल्य का उत्कृष्ट आधी पल्यका, इनकी
वीका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्ट पाव पल्य झाझेरा, इनके
विमानका चार हजार देव उठाते हैं

नक्षत्र मालसे चार योजन उपर ग्रहमाल है ग्रहके विमान पा-
। वर्णके रत्नोंके होते हैं, दो कोसके लंबे चोडे और एक कोसके ऊंचे

❋ यह जोजन ४ हजार कोशका जितनेक १६०० कोशका भी कहते हैं

● सूर्य के विमानसे १ योजन नीचे केतु का विमान है, और चंद्रमा के नीचे, १ योजन राहु का विमान हैं ऐसा दिगम्बर आमना के चरचा सागर ग्रन्थमें है

होते है, ग्रहका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका, उत्कृष्ठ एक पल्यका, इ
की देवीका आयुष्य जघन्य पाव पल्यका उत्कृष्ठ आधी पल्यका इन
विमान को आठ हजार देव उठातेहैं

ग्रहनालक चार योजन ऊपर बुद्धका तारा हरे रत्नमय है, बु
के तीन योजन उपर शुक्रका तारा स्फटिक रत्नमय है शुक्रसे तीनयोः
न उपर बृहस्पतिका तारा पित रत्नमय,बृहस्पतिसे तीनयोजन उपरमग
का तारा रक्त रत्नमय है मगलसे तीन योजन उपर शनीका तारा जंब
रत्नमय है इन चारही तारेका आयुष्य सर्वग्रहजैसा जाणना यह सब
वसे योजनमें ज्योतिषीचक्र सदा फिरता रहता है चद्रमा और सूर्य दोज
तिषीके इद्र है • एकेक चंद्र सूर्यका परिवार ८८ ग्रह,•

• यह चन्द्रमा सूर्य जम्बू द्विप में है सो ही इन्द्र अन्य नहीं ऐसा खुलासा दिगंबर ग्रन्थ में है

• ८८ ग्रह—अगारक—विकाल—लोहीताक्ष—शनेश्चर— आधुनिक प्रधुनिक—कण कणक—कणक कणक—कणवितानि— कणसतानि— साम—सहीत—अश्वासन—कार्योपेग—कर्बुरु—भजकरक—दुदुभक—शन्व—शंखनाम शम्खवर्ण— कश—कशनाम—कशवर्णाभ—नीला —नीलावभास—रुप—रुपाव भास—भस्म—भस्मरास—तिल—तिलपुरुवर्ण— दक—दकवर्ण— काय—वध्य—इद्राग्नी—धूमकेतु—हरी—पिंगलक—बुध—शुक्र—बृहस्पत—राहु—अगस्ती—माणक—कामस्फर्शी—धुरक—प्रमुख—विकट—विसंधकल्प—प्रकल्प—जयल—अरुण—अनिल—काल—महाकाय—स्वास्तिक—सौवास्तिक—वर्धमानक—पर्लंबा क—नित्योद्योतक—स्वयंप्रभु—अवभास—श्रेयस्कर—क्षेमकर—आभंकर—प्रभंकर—अरज—विरज—अशोक—समोक—विमल—वितत्त—वियत्त—विशाल शाल—सुवृत—अनीवृत—एकजटी द्विजटी—करी—करिक—राजा—अगल— पुष्पकेतु—भावकेतु—॥ ये ८८ ग्रहमें जो राहु ग्रह है उसका पांचही वर्णाका विवमान है राहु दो तरहके होते हैं (१) नित्य राहु सदा कृष्णपक्षमें चद्रमाकी कला ढांकता है और शुक्लपक्षमें उघाडता है ओर ( )पर्व राहु फिरता चद्र सूर्यके विमानके आगे आवे तब ग्रहण होताहै परंतु इस से चद्र सूर्यको बिलकुल दुःख नहीं होताहै चद्रमाका ग्रहण जघन्य ६ महिनेमे उत्कृष्ट ४२ महिनेमे होता है, और सूर्यकाग्रहण जघन्य ६ महिनेमें उत्कृष्ट ४८ वर्षमे होताहै

२८ नक्षत्र * छासट हजार नवसे पिचतर कोडा कोडी (६६९७५००००० ००००००००००) तारा ,चार अग्र महिषी—इंद्राणी एकेक चार २ हजार रुप बनावे और चार हजार समानिक देव, सोलह हजार आत्मरक्षक देव तीन प्रपदाअ भ्यंतरके ८०००देव, मध्यके १००००,देव, वाह्यक १२०००, देव, इाते हैं, सात अणिका (शैन्या) इत्यादि बहुत परिवार है

यह मर्व ज्योतिषि मेरू पर्वतसे चारही तरफ ११२१ योजन दूर फिरते हैं इनके विमान उर्ध्व मुख आधा कवीटके सस्थानेस है जबुद्विपमें २ चंद्रमा, २ सूर्य, लवण समुद्रमें ४ चंद्रमा, ४ सूर्य, धातकी खडम १२चद्रमा, १२ सूर्य, कालोदधी समूद्रमे, ४२ चद्रमा, ४२ सूर्य, पुष्करार्धद्विपमें ७ चद्रमा, ७२ सूर्य, अढाइ द्विपमें, सर्व १३२ चद्रमा, और १३२ सूर्य, सदा पाच मरु प्रवतके आसपास फिरतेहैं, और अढाइ द्वीपके बाहिर ऐसे, ही बढते २ असख्यात चंद्रमा, और असख्यात सूर्य +सदा स्थिर रहते है अढाइ द्विपके वाहिरके ज्योतिषीके विमान अढाइ द्वीपके भीतरके ज्योतिषीके विमानसें लवाइ चोडाइ ऊचाइमें आधे हें और ईट जैसा संठाणहै इन विमानोंका तेज मन्द ऊगते चद्र सुर्य जैसा होता है अढाइ द्विपके वाहिर जहा दिन है वहा दिन, और रात है वहा रात, हमेशा वनी रहती है

---

* २८ नक्षत्र –अभीच–श्रवण–धनिष्टा –शतभिषा –पूर्वभाद्रपद–रेवती अश्वनी–भरणी –कृतिका –रोहणी –मृगसर – आद्रा–पुनर्वसु —पुष्य—अश्लेशा–मघा–पूर्वाफाल्गुणी–उत्तराफाल्गुणी–हस्त चित्रा –स्वांत–विशाखा जेष्टा–मूल–पुर्वाषाढा–उत्तराषाढा

+असंख्य द्विपके चद्र सूर्य गिणनेकी रीत—धातकी खडमें बारे चद्र और बारे सूर्य कहे इसे तीन गुणा करनेसे १२×३=३६ हुये और उसमें जंबूद्विप के २और लवण समुद्रके ४ यह ६ मिलानेसे ४२ कालोदधी समुद्रमे जाणना और ४२का तीन गुना करनेस १२×=१२६ हुए उसमें जबुद्विपके २ लवण समुद्रके ४ और धातकी खडके १२मिलाय तब १४४ चद्र और १४४सूर्य पुष्कर द्विपम जानने [जिसमेंसे मानुषोत्तर पर्वतकेअंदर आधेपुष्कर द्विपमे १४४का आधे ७२ चद्र और ७२ सूर्य जाणना]यों ही आगके द्वीप समुद्रके चद्रमा सूर्य की गिनती करना और सर्वका परिवार अलग पहिले मुजब ही समजना

यह ९०० योजन नीचे और ९०० योजन ऊपर यों १८०० यो
जनमें तिरछे लोक्का बयान पूरा हुवा मेरु तीनही लोक फरसताहै

ऊंचे लोकका वर्णन

शनीश्वरके विमानकी ध्वजा पताकासे १॥ राजू ऊपर, ११
राजू घनाकार विस्तार जितनी जगहमें, पहिले दूसरे देवलोक की *
है जम्बूद्विपके मरुसे दक्षिणीदशामें पहला सुधर्मा देवलोक, औ
उत्तरमें दूसरा ईशाण देवलोक, लग्गड (कुंभारके वर्तन रखनेका) जैसा
घनोदधी (जमे पाणी) के आधारसे है पहिले देवलोकमें तेरहप्रतर
ओर बत्तीस लाख वीमान है और दूसरे देवलोकमें तेरेप्रतर औ
अट्ठाइस लाख विमान हैं, यह विमान पांचसे २ योजनक उंचे
और २७०० योजनकी अंगणाई (नीव—भूतलिया) है, पहिले देव
लोकके शक्रेंद्रजीकी आठ और दूसरे दवलोकक इशाणइंद्रजी की न
अग्रमहिषी—इंद्राणियें सोले २ हजार रूप बनावें है पाहिल देवलाके
देवका आयुष्य जघन्य एक पल्य, उत्कृष्ट दो सागरका है, और परिग्रहि
(पतिवाली) देवीका जघन्य एक पल्यका, उत्कृष्ट सात पल्यका आ
युष्य और अपरिग्रही (वेश्या जैसी) देवीका जघन्य एक पल्य
उत्कृष्ट पचास पल्यका आयुष्य है यहाके देवोंको एक पल्यके ही
आयुष्यवाली देवी भोगमें आती है दूसरे देवलोकके देवका जघन्
एक पल्य झाझेरा उत्कृष्ट दो सागरका झाझेरा आयुष्य है इनके
परिग्रह देवीका जघन्य एक पल्य झाजेरा, उत्कृष्ट नवपल्यका, और अपरि
ग्रही दवीका जघन्य एक पल्य झाजेरा, उत्कृष्ट पचावन पल्यका, जिसमें
यहाके देवका तो एक पल्य झाजरे आयुष्यवाली देवी उपभोगमें आती है

* जैसे मकानमें मजले होते है ऐसो ही देव लोक में मजल हैं
उसे प्रतर कहते हैं उनमें अलग २ घर जैसे देवताओंके रहनेके विमान हैं

इन दोनो देवलोकमें मनुष्य जैसे भोग है *

इन दोनों देव लोककी हदसे एक राजू उपर १६॥ राजू घनाकार विस्तार जितनी जगहमें तीसरे चौथे देवलोककी हद है दक्षिणमें तीसरा सनत्कुमार देवलोक और उत्तरमें चौथा महेन्द्र देवलोक लग्गड के जैसा घनवाय (जमीहुइ हवा) के आधारसे हैं तीसरे देवलोकमें बारहप्रतर और बारहलाख विमाण है, और चौथे देवलोकमें बारहप्रतर और आठलाख विमान है यह विमान छेसो २ योजनके ऊंचे, और २६०० योजनकी अगणाइ है तीसरे देवलोकके देवका जघन्य दो सागर, उत्कृष्ट सात सागरका आयुष्य है और चौथे देवलोकमें, जघन्य दो सागर झाजेरा उत्कृष्ट ७ सागर झाझेरा आयुष्य है तीसरे देवलोकमें पहिल दवलोककी अपरिग्रहही देवी एक पल्यसे एक समय अधिक दश पल्यके आयुष्य वाली और चौथे देवलोकमें दूसरे दवलाककी अपरिग्रही देवी एक पल झाजेरास एक समय अधिक पन्नरे पल्यक आयुष्यवाली उपभोगमें आता है यहाक देव स्पर्श मात्रसे तृप्त होते हैं

इन दोनो देवलोककी हदसे अर्ध राजु उपर पाचमा ब्रह्म देवलोक और वहा से आधा राजू उपर छट्ठा लातक देवलोक ३॥ राजु घनाकार जितनी जगहमें है यह दोनो देवलोक मेरु पर्वतके बराबर ऊपर घागर (घडे) बेवडे के जैसे पाचमा घनवायके और छट्ठा घनवाय और घनोदधी दोनोके आधारसे रहे हैं पांचमेमें छे प्रतर और चार लाख विमान है, छट्ठेमे पांच प्रतर और पचास हजार विमान है, यह विमान ७०० योजनके ऊंचे, और २५०० योजनकी अगणाइ है पाचमे देवलोकमें जघन्य सात सागर उत्कृष्ट दश सागरका, और छट्ठे दे वलोकमें जघन्य दश सागर उत्कृष्ट चउदे सागरका आयुष्य है पांचमे

* दूसरे देवलोकके आगे देवीयाकी उत्पत्ति नहीं हैं

देवलोकमें पहिले देवलोककी अपरिग्रही देवी दशपलसे एक समय अधिक बीस पल्वाली और छट्ठे देवलोकमें दूसर देवलोककी पन्नरे पलसे एक समय अधिक पच्चीस पलके आयुष्यवाली देवी भोगमें आती है यह दवता देवीका शब्द सुननेसे ही तृप्त होते हैं इस पाचमे देवलोक की तीसरी अरिष्ट परतर (मजल) के पास दक्षिण दिशामें त्रसनाल के भीतर पृथ्वी प्रणामरूप कृष्णवर्ण आठ कृष्ण* राजी है

नवलोकातिक देवके नव विमान हैं —१ इशान कुणमें अर्ची विमान जिसमें सारस्वत देव, २ पूर्व दिशामें अर्चीमाली विमान, जिसमें आदित्य देव, (इन दोनोके ७०० देवोंका परिवार है) ३अमी कूणमें वैरोचन विमान, जिसमें वन्ही देव, ४ दक्षिण दिशामें प्रभकर विमान, जिसमें वरुण देव, (इन दोनोके १४००० देवोंका परिवार है) ५ नैरुत्य कुणमें चंद्राभ विमाण, जिसमे गर्दतोय देव, ६ पाश्चिममें सूर्याभ विमान जिसमें तुपित देव, (इन दोनो के सात हजारदेवों का परिवार है,) ७ वायू कुणमें शुक्राभ विमान, जिसमें अवाबाध देव ८ उत्तरमें सूप्रतिष्ठविमान जिसमें अमीदव, और ९मध्य मेंरिष्टाभ विमान, जिसमें अरिष्टनामे देव रहते हैं (इनदोनोके९०० देवका परिवार है)यह नवही दवता एकात सम्यक् द्रष्ठि, श्री तीर्थकरका दिक्षाके अवसरमें चेतानेवाले, थोडे ही भवातरसे मोक्ष जानेवाले लाकके किनारेपर (रहत) हैं, इस लिये ‘ लोकातिक ’ कहे जाते है इनका सर्व अधिकार पांचमे देवलोक जैसा जाणना

छट्ठे देवलोककी हदसे पाव राजु ऊपर सातमा महा शुक्र देव

* यहां म असख्यातमे अरुण वर समुद्रमसे अप कायका महा अन्धकार मय तमस्काय १७२१ योजन की चौडी, भींत जैसी निकल कर ऊपर गई है चार देवलोकको उलांघ पांचमें देवलोककी तीसरी प्रतरपर्यत नीचेसे सरावला और ऊमपरसे पीजरे जैसी रही है असख्यात योजनमें है, सो कृष्ण राजी है

लोक और वहासे पाव राजु उचा आठमा सहसार देवलोक ये दोनोकी १४॥ राजू घनाकार जितनी जगमें हद है, ये दोनो घनोदधी घनवायके आधार है सातमेमें चार प्रतर और चालीस हजार विमान है, आठमेमे चार प्रतर और छे हजार विमान है, यह विमान आठसे योजनके ऊचे, और २४०० योजनकी अगणाइ है सातमे देवलोकके देवताका जघन्य १४ सागरका उत्कृष्ठ सतरह सागरका आयूष्य है और आठमे देवलोकके देवका जघन्य सतरह सागर उत्कृष्ट अठरह सागरका आयूष्य है सातमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी वीस पलसे एक समय अधिक तीसपलके आयूष्यवाली और आठमे देवलोकमें दुसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पचीस पलसे एक समय अधिक पेंतीस पलवाली भोगमें आती हैं यहा के देव, रुप देख तृप्त होते हैं

आठमे देवलोककी हदसे पाव राजु उपर १२॥ राजु घनाकार जितनी जगहमें दक्षिणमें नवमा 'आण' देवलोक और उत्तरमें दशमा 'प्राण' देवलोककी हद है ये दोनो देवलोक लग्गडके जैसे आकासके आधार से है इन दोनो देवलोकमें चार प्रतर और ४०० विमान ९०० योजनके ऊंचे और २३०० योजनकी अगणाइ है नवमे देवलोकके देवका जघन्य १८ सागर, उत्कृष्ठ १९ सागरका आयुष्य, और दशमे देवलोकका जघन्य १९ उत्कृष्ट २० सागरका आयूष्य है नवमे देवलोकमे पहिले देवलोककी अपरिग्रही देवी तीस पलसे एक समय अधिक चालीसपलवाली और दशमे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही पेंतीस पलसे एक समय अधिक पेंतालीस पलवाली देवी उपभोगमें आती है. यहा के देव देवीका विकारिक मनसे मन मिले तृप्त होजाते है.

इन दोनो देवलोककी हदसे आधा राजू उपर और १०॥ राजू

देवलोकमें पहिले देवलोककी अपरिग्रही देवी दशपलसे एक समय अधिक बीस पल्यवाली और छट्ठे देवलोकमें दूसरे देवलोककी पन्नरे पलसे एक समय अधिक पचीस पलके आयुष्यवाली देवी भोगमें आती है यह दवता देवीका शब्द सुननेसे ही तृप्त होते हैं इस पांचमे देवलोककी तीसरी अरिष्ट परतर (मजल) के पास दक्षिण दिशामें त्रसनालके भीतर पृथ्वी प्रणामरुप कृष्णवर्ण आठ कृष्ण❀ राजी है

नवलोकातिक देवके नव विमान हैं –१ इशान कुणमें अर्ची विमान जिसमें सारस्वत देव, २ पूर्व दिशामें अर्चीमाली विमान, जिसमें आदित्य देव, (इन दोनोके ७०० देवोंका परिवार है) ३अमी कूणमें वैरोचन विमान, जिसमें वन्ही देव, ४ दक्षिण दिशामें प्रभकर विमान, जिसमें वरुण देव, (इन दोनोके १४००० देवोंका परिवार है) ५ नैरुत्य कुणमें चंद्राभ विमाण, जिसमें गर्दतोय देव, ६ पाश्चिममें सूर्याभ विमान जिसमें तुपित देव, (इन दोनो के सात हजारदेवों का परिवार है,) ७ वायू कुणमें शुक्राभ विमान, जिसमें अवाबाध देव, ८ उत्तरमें सुप्रतिष्ठविमान जिसमें अग्नीदव, और ९मध्य मेंरिष्टाभ विमान, जिसमें आरिष्टनामे देव रहते हैं (इनतीनोके९००•देवका परिवार है)यह नवही दवता एकात सम्यक् द्रष्टि, श्री तीर्थकरको दिक्षाके अवसरमें चेतानेवाले, थोडे ही भवातरसे मोक्ष जानेवाले लोकके किनारेपर (रहत) हैं, इस लिये ' लोकातिक ' कहे जाते हैं इनका सर्व अधिकार पाचमे देवलोक जैसा जाणना

छट्टे देवलोककी हदसे पाव राजु ऊपर सातमा महा शुक्र देव

❀ यहा म असख्यातमे अरुण वर समुद्रमेंसे अप कायकी महा अन्धकार मय तमस काय १७२१ योजन की चौडी, भींत जैसी निकल कर ऊपर गई है चार देवलोकका उल्लंघ पांचमें देवलोककी तीसरी प्रतरयहां नीचेसे सरावला और ऊसपरसे पीजरे जैसी रही है असख्यात योजनमे है, सो कृष्ण राजी है

लोक और वहासे पाव राजु उचा आठमा सहसार देवलोक ये दोनोकी १४॥ राजू घनाकार जितनी जगमें हद हे, ये दोनो घनोदधी घनवा यके आधार हे सातेमें चार प्रतर और चालीस हजार विमान हे, आठमेमे चार प्रतर और छे हजार विमान हे, यह विमान आठसे योजनके ऊचे, और २४०० योजनकी अगणाइ हे सातमे देवलोकके देवताका जघन्य १४ सागरका उत्कृष्ठ सतरह सागरका आयुष्य हे और आठमे देवलोकके देवका जघन्य सतरह सागर उत्कृष्ट अठरह सागरका आयुष्य हे सातमे देवलोकमें पहले देवलोककी अपरिग्रही देवी वीस पलसे एक समय अधिक तीसपलके आयुष्यवाली और आठमे देवलोकमें दुसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पचीस पलसे एक समय अधिक पेंतीस पलवाली भोगमें आती हे यहा के देव, रुप देख तृप्त ोते हें

आठमे देवलोककी हदसे पाव राजु उपर १२॥ राजु घनाकार जि नी जगहमें दक्षिणमें नवमा 'आण' देवलोक और उत्तरमें दशमा ण' देवलोककी हद हे ये दोनो देवलोक लग्गडके जेसे आकासके ाधार से हे इन दोनो देवलोकमें चार प्रतर और ४०० विमान ९०० ोजनके ऊचे और २३०० योजनकी अगणाइ हे नवमे देवलोकके वका जघन्य १८ सागर, उत्कृष्ठ १९ सागरका आयुष्य, और दशमे वलोकका जघन्य १९ उत्कृष्ट २० सागरका आयुष्य हे नवमे दव ाकमे पहिले देवलोककी अपरिग्रही देवी तीस पलसे एक समय अ धेक चालीसपलवाली और दशमे देवलोकमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही तीस पलसें एक समय अधिक पेंतालीस पलवाली देवी उपभोगमें आती हे यहा के देव देवीका विकारिक मनसे मन मिले तृप्त ोजाते हें.

इन दोनो देवलोककी हदसे आधा राजू उपर और १०॥ राजू

घनकार जितनी जगहमें दक्षिणमें इग्यारमा अरुण, और उत्तरमे, बारमा अच्युत देवलोककी हद है इन दोनो देवलोक लगडके जैसे आकसके आधारसे रहे इन दोनो देवलोकके चार २ प्रतर और ३०० विमान ९०० योजनके ऊंच, और २३०० याजनकी अगणाइ है इग्यारमे देवलोक्के देवका जघन्य २० सागरका, उत्कृष्ट २१ साग रका और बारमे देवलोकका जघन्य २१ सागर, उत्कृष्ट २२ सागरका आयुष्य है इग्यारमे देवलोकमें पहिले देवलोक की अपरिग्रही देवी चालीस पल्से एक समय अधिक पचास पलवाली और बारमें देवलो कमें दूसरे देवलोककी अपरिग्रही देवी पेंतालीस पलसे एक समय अ धिक पिचावन पलवाली उपभोगमें आती हे यहा मनसा भोग है*

* जैसे नागर बेल के पान हजारों कोश चले जाने पर भी यहां उसकी बेलकी कुछ नुकशान पहोंचनेसे यो दूर रहे हुये पान सब आते हैं तैसे ही बारमें देवलोक में यद्यपि शारीरिक संयोग नहीं होता है, तो भी मानसिक संयोग होता है; एक विमान का देव दुसरे विमान की देवो से मानसिक संयाग (विचार मात्र से (BY THOUGHT POWER) करते हैं

देवलोकके नाम	इन्द्रके नाम	समानीक देव	आत्मरक्षक देव	अभ्यंतर प्रषदाके देव	मध्यप्रषदा के देव	बाह्यप्रषदा के देव	चिन्ह	अवघेणा
सुधर्मा	सक्रेंद्र	८४०००	३३६०००	१२०००	१४	११	मृग	७ हाथ
ईशाण	ईशाणेंद्र	८०००	३२०००	१००००	१२ ०	१४ ०	महिष	७ „
सनत्कुमार	शनतकुमारेंद्र	७२०००	२८८०००	८	१०	१२ ०	वराह	६ „
महेन्द्र	महेन्द्र इंद्र	७००००	२८०० ०	६ ००	८०	१ ०	सिंह	६ „
ब्रह्म	ब्रह्मेंद्र	६०० ०	२४ ०००	४०००	६ ०	८ ०	बकरा	५ „
लांतक	लांतक इंद्र	५० ००	२०० ००	२०००	४ ०	६ ०	दादुर	५ „
महाशुक्र	महाशुक्रेंद्र	४०००	१६०० ०	१ ००	६	४ ०	अश्व	४ „
सहस्रार	सहस्रारेंद्र	३ ०००	१२००००	५००	१०	२	हाथी	४ „
आण पाण	दोनों देवलोक के एक पाणेन्द्र	५००००	८ ०००	२५०	५	१ ०	सर्प गेंडा	३ „ ३ „
अरण अच्युत	दोनोंके एक अच्युतेंद्र	१ ००	४००००	१२५	२५	५	वृषभ शाखामृग	३ „ ३ „

इन बारे देवलोकके १० इन्द्रके सात अणिका (सैन्या) होती हैं १ गधर्व (गानेवाले) की, २ नाटक नाचनेवाले) की, १ हाथीकी, २ घोडेकी, १ रथकी, १ पायककी, और ७ वृषभकी, इन एकेकके हजार १ देव होतेहैं

भवन पतिके २०, वाण व्यंतरके ३२, ज्योतिषीके २, बारे देवलोकके १०, मर्व ६४ इन्द्रके तीन प्रपना होती है अभ्यतरकी प्र दाके देव बुलावे तव आते हैं, मध्यम प्रपदाके दव बुलाये विना बुल ये दोनो तरह आते हैं बाह्य प्रपदाके देव बिना बुलाये वक्तपर हाजि रहते हैं, सामानीक देव सा बरोबरी के उमराम जैसे, आत्म रक्षक द मो सदा हुकममें रहेनेवाले सब इद्रके ३३ देव होते हैं सो राजा पुरोहित जैसें और चार लोकपाल होत हैं—पूर्वके सोम नामक, दक्षि णके यम नामक, पश्चिमके वरुण नामक, और उत्तरके वेसमण (कुबेर) नामक, ये चारही दिशाके रखवाले हैं सर्व इन्द्रोंका उत्कृष्ट आयुष्य होता है

उपरोक्त स्थानमें तीन प्रकारके किल्मीषी देव होते हैं १ 'तीन पल्या तीन पलके आयुष्यवाले तो भवन पती देवतासे लगाकर पहिले देव लोक तकहैं २ 'तीनसागर्या' तीन सागरके आयुष्यवाले चौथे देवलो लोक तक, और ३ 'तेरेसागर्या' तेरे सागरके आयुष्यवाले छट्टे देवलो क तक ये देव, जैसे मनुष्यमें चाण्डालकी जाति निन्दनिय होती है तैसे देवताओंमें निन्दनिय, कूरुपे, मिथ्या द्रष्टी, अज्ञानी हैं ये तप संयम और धर्मके चोर तथा निंदक मरके होते हैं

प्रत्येक ठिवाणे जो संख्यात योजनके देवस्थान हैं, उसमें संख्या ते और असख्याते योजनके देवस्थान हैं, उसमें असख्यात उपपात (देवताके पेदाहोनेकी) शय्या (पलंग) है, उसपर एक देवदुप वस्त्र ढांका हुवा होता है

यहा मनुष्य तिर्यचमें* नियम—व्रत—तप सयमादि करणी कर वहा उपजते है, तब वो शय्या फूलती है (जैसे अगारपर गेहूकी रोटी)

*तिर्यंच आठमे देवलोक तक जाता है

सेज फुलती देख उस वक्त विमानवासी देव देवी मेले होकर खमा२ करते हैं, वो देव एक मुहूर्तमें पाच प्रजा (आहार, शरीर, इंद्री, श्वासोश्व, स, और मन भाषा भेली) बाध कर और सर्व भूषण वस्त्र युक्त तरुण वय जैसे बैठे हा जाते हैं, तब दूसरे देव उनको पूछते हैं "— आपनेक्या करणी की थी जिससे हमारे नाथ हुवे?" तब वो देव अवधि ज्ञान** लगाकर देखते हैं, पूर्व भव देखके कोइ यहा खबर देनेको आनेका इरादा करें, तब वो देव कहते हैं कि, आप वहा जाके यहाकी क्या बात करोगे ! इसलिये थोडा नाटक देखके पधारो तब नाटककी आणिकाके देव वांई (जीमणी) भूजासे १०८ कुंवर और डावी भुजासे १०८ कन्या वैक्रिय कर ४९ वार्जित्र युक्त ३२ प्रकारका मनोहर नाटक करते है एक घडीके सामान्य नाटकमें यहाके २००० वर्ष बीत जाते हैं फिर देवता वहाके सुखमें लुब्ध होकर पुन्यफल भोगवने लग जाते हैं

इग्यार—बारमें देवलोककी हद एक राजू उपर आठ राजू घनाकार जितनी जगहमें नवग्रीवेककी हद है नवही गागर बेवडेक जैसे एकेक के उपर आकाश के आधारसे हैं इन ९ प्रतर और तीन त्रिकक री है पहिले त्रिकमें १ भद्द, २ सुभद्दे ३ सुजाए, इन तीनों ग्रीवेकके १११ विमान हैं दूसरी त्रिकमें ४ सुमाणस, ५ सुदंशन ६ प्रियदशन इन तीनोंके १०७ विमान हैं, तीसरी त्रिकमें ७ अमोह ८ सुपाडिभद्दे ९ सुजसोधर, इन तीनोके १०० विमान हैं ये विमान १००० योजनके ऊचे और बावीससो याजन की अंगणाइ है, यहा के देवताकी दो हाथकी अवगणा हैं इन देवको भोगकी इच्छा नहीं होती है आयुष्य यत्र प्रमाणे —

** देवताको अवधि ज्ञान जन्ममे स्वभाविक ही होता है

नवग्रीवक के नाम	भद्र	सुभद्र	सुजात	सुमाणस	सुदंसण	प्रियदसण	आमोह	सुपडिभद्र	यशोधर
जघन्य आयुष्य	२२ सागर	२३ ,,	७४ ,,	२५ ,,	२६ ,,	२७ ,,	२८ ,,	२९ ,,	३० ,,
उत्कृष्ट आयुष्य	२३ सागर	२४ ,,	२५ ,,	२६ ,,	२७ ,,	२८ ,,	२९ ,,	३० ,,	३१ ,,

नव ग्रयेककी हदसे एक राजू उपर ६॥ राजुके विस्तार जितनी जगहमे पाच अनुत्तर विमानकी हद हे, पांचही आकाशके आधरसे है, १ वि जय, २ विजयत, ३ जयंत, ४ अपराजित, ये चारही चार दिशामे अर्ध चद्रमा जैसे असस्यात योजनके लंबे चौडे हैं, और चारहीके मध्यमें संपूर्ण चंद्रमा जैसा गोल एक लाख योजनका लंबा चौडा सर्वार्थ सि द्ध विमान है ये पांचहा विमान के एक प्रतर हे और यह पांचही विमान ११०० योजनके उचे और २१०० योजनकी अगणाइ है चार अनुत्तर विमानके देवताका जघन्य आयुष्य ३१ सागर, मध्यम ३२ सागर और उत्कृष्ट ३३ सागरका हे आर सर्वार्थ सिद्धका जघन्य उत्कृष्ट ३३ सागरका आयुष्य हे पांचहीके एक एक हाथकी अवघेणा हे सर्वा वीमानसे ये पांच विमान श्रेष्ट है, इसलिये अनूतर विमान नाम हैं सर्वार्थ सिद्ध विमान के मध्य बीचमें छतमें एक मोताका चं द्रवा है, उसमें सर्वके मध्यका एक मोती ६४ मणका हे, इसके चार ही तर्फ चार मोती बतीस २मण के हैं, उसके पास आठ मोती सो लह २ मण के हैं, उसके पास सोलह मोती आठ २ मणके हैं, उसके पास बतीस मोती चार २ मणक ह, उसके पास ६४ मोती दो २ म णके हैं, उसके पास १२८ माती एकेक मणके है, सर्व २५६ मोतीका झूमका अति शोभनीक हे हवामे मोतीमे मोती अथडाये हैं तब

नसमेसे अनेक प्रकारकी राग रागणी निकलनी है सर्व विमानवासी देवताको अपने २ सिरपर दिसता है, कि जैसेंअपने सिरपर मध्यानका सूर्य दिखता हैं यहा एकाता शुद्ध सयम पालनेवाले चौदह पूर्वके पाठी साधु उपजते हैं सदा ज्ञान ध्यानमें मग्न रहते हैं किसी प्रकार का संदेह पडे तो वहासे श्री तिर्थकरजीको वंदनाकर प्रश्न पूछते हैं, श्री तिर्थकर भगवान उत्तर देते हैं सो वो अपने मनमे समझ जाते हैं सर्व पुद्‌गली सुखसे यहां अनत गुणा अधिक सुख है

यह नवग्रीयवेक और पाचअनुतर विमानवासी देव अहमेन्द्र हैं अर्थात इनके सिरपर कोई मालिक (इद्र) नहीं है यहा उत्पति स्थान तो देवलोक जैसा ही है, परन्तु सामानिक, आत्म रक्षक, प्रपदा, नाटक चेटक कुछ नहीं है सर्व अपने २ ज्ञानमें मग्न हैं क्योंकि फक्त साधु जी ही आयूष्य पूर्ण कर यहा उपजते है

जिस देवताका जितना सागरका आयूष्य है उन्हे उतनेही हजार वर्षमें आहारकी इच्छा हाती है, तब वो रोम२ से शुभ२ रत्नोंके पुद्गल खेंच कर तुर्त तृप्त हो जाते हैं और उतनेही पक्षमें श्वासोश्वास लते हे जैस सवार्थ सिद्धमें ३३ सागरका आयुष्य है, उन ववत ३३ हजार वर्षमें भूख लगती है, और ३३ पक्षमें श्वास लेतें हे

यह सर्व छब्बीस स्वर्गके ६२ प्रतरें और८४९७०२३ विमानहुवे सर्व विमान रत्नमय अनेक स्थभ और अनेक चित्रसे युक्त हैं अनेक सूत्री, अनेक पूतलियों, लीला युक्त शोभनीक है, मघमघायमान सुगंध महकती हैं, महलोंके चारही तरफ बगीचे हैं, जिनमें रत्नोंकी बावडी और रत्नोंके आति सुंन्दर वृक्षादि हैं, वो हवासे हिलें तब अनेक राग रागणी निकल्नी हैं धागमें सोने चांदीकी रती बिछी है, अनेक

आसन पडे हैं, वहा देवता पुन्यफल भोगवते विचर रहे हैं सर्व देवता ओंका सरीर महा दिव्य रूपवंत महा सुगधी तेजस्वी सदा यौवन वंत सम चौरस सस्थानवाले होते हैं

सर्वार्थसिद्ध की हदसे इकीस योजन उपर ११ राजुके विस्तार जितनी जगहमें बाकी रहा सो सर्व लाक है.

सर्वार्थ सिद्धकी ध्वजा पताकासे १२ योजन ऊपर सिद्ध शिला अरज्जुन (श्वेत) सोनेमें पेंतालीस लाख योजनकी लबी चोडी (गोल) मध्यमें आठ योजनकी जाडी और चारों तरफ कमी होती २ किनारे पर अगुलके असख्यातमे भाग पतली, सीधे छत्र तथा तेल पूरित दीवे जैसी संस्थानसे संस्थित, मक्खनसे भी अधिक सुहाली अति ही निर्मल है, इसकी १४२३०२४९ योजन की झाझेरी परिधी है इसके १२ नाम है, (१) इसीतीवा (छोटी,] २ इसीपभारेतिवा (बहुत छोटी,) ३ तणुतिवा (पतली,) ४ तणुपभारेतिवा (बहुत पतली) ५ सिद्धा तिवा (सिद्ध स्थान,) ६ सिद्धालयतिवा (सिद्धका घर) ७ मुत्तितिवा (मुक्ति स्थान) ८ मुत्तालयतिवा (मोक्ष घर) ९ लोयग्रेतिवा (लोकाग्र रही,)१० लोयग दुसिया तिवा (प्राप्त होना दुर्लभ) ११ लागय पडि वुझमान तिवा (शाती देनेवाली,) १२ सव्व प्राणा भूत जी सत्व सुहावातिवा (सर्वको सुख देनेवाली)

इस सिद्ध सिलाके उपर एक योजनके ऊपरके कोसके छट्टे भागमें शुद्ध मनुष्य लोकके उपर पेंतालीस लाख याजन जितनी लंबी चौडा और ३३२ धनुष्य ३२ अंगुल जितनी उंची जगहमें अनंत सिद्ध भगवंत बिराजते हैं

यह तीन लोकके ३४३ राजू * घनाकार राजू और ऊंचे १४ राजू जिसमें एक राजूकी चौंडी और १४ राजूकी ऊंची जितनी जगहमें त्रस स्थावर दोनो जीव मेले भरे हैं बाकी सर्व लोक्की जगहमें स्थावर जीवही ठीचोठीच भरे हैं इसके उपांत अनत अलाक है, जिसमें फक्त एक आकाश (पोलाड) भरा है

॥ इति तीन लोकका यत्किंचित् वर्णन ॥

* घनाकार ३४३ राजूका हिसाबः—

निगोदसे सातमी नर्क तक घनाकार राजू	४९
सातमी नर्क से छठी नर्क तक „ „	४०
छठी „ „ पंचमी „ „ „ „	३४
पंचमी „ „ चौथी „ „ „ „	२८
चौथी „ „ तीसरी „ „ „ „	२२
तीसरी „ „ दूसरी „ „ „ „	१६
दूसरी „ „ पहली „ „ „ „	१०
तीछा लोकके ....„ „	१०
पहिला दूसरा देवलोक „ „	१९॥
तीसरा चौथा देवलोक – „ „	१६॥
पांचमा छठा देवलोक– – „ „	१०॥
सातमा आठमा देवलोक .... „ „	१४॥
नवमा दशमा देवलोक– ....„ „	१२॥
इग्यारमा बारमा देवलोक.......... „ „	१ ॥
नवग्रीवेग ... . „ „	८॥
अनुत्तर विमान „ „ „	६॥
सिद्ध क्षेत्र .... „ „	१२
सर्व लोकके घनाकार राजू	३४३

पन्दरह प्रकारसे सिद्ध होते हैं.

सिद्ध क्षेत्रमें सिद्ध पन्दरह प्रकारसे होते हैं —

१ तीर्थंकर सिद्धा—तिर्थंकरकी पदवी भोगवके सिद्ध होवे २ अतिर्थंकर सिद्धा—सामान्य केवली सिद्ध होवे ३तीर्थ सिद्धा—तीर्थ (साधू—साध्वी—श्रावक—श्राविका) में से सिद्ध होवे ४ अतीर्थ सिद्धा॰ तीर्थका विच्छेद होवे उस वक्त जाति स्मरणादिक ज्ञानसे बोध पाव॰ सिद्ध होवे ५ स्वयबुद्ध सिद्धा—स्वत (गुरुविना) जाति स्मरणा॰ ज्ञानसे पूर्व भवका सबध देखके स्वत दिक्षा लेके सिद्ध होवे ६ प्रत्य॰ बुद्ध सिद्धा—वृक्ष, वृषभ, स्मसान, बादल, वियोग, रोग, इत्यादिक दे॰ के अनित्यादि भावसे स्वयमेव दिक्षा ले सिद्ध होवे ७ बुद्ध बोधि॰ सिद्धा-आचार्यादिकके प्रतिबोधसे दिक्षा ले सिद्ध होवे ८ स्त्री लिंग सि॰ द्धा स्त्री वेद (विकार) का क्षय करे, फक्त अवयव रुप स्त्री लिंग रहे॰ दिक्षा ले सिद्ध होवे ९ पुरुष लिंग सिद्धा ऐसे ही पुरुष विषय वां॰ त्याग दिक्षा ले सिद्ध होवे १० नपुसक लिंग सिद्धा ऐसे ही नपुस॰ वेद क्षय हुये फक्त लिंग [रुप] रहे सो दिक्षा ले सिद्ध होवे ॰ स्वलिंग सिद्धा—जो रजोहरण मुहपति आदिक साधुका लिंग धार ॰ प्रमाणकी विशुद्धि होनेसे सिद्ध होवे १२ अन्य लिंग सिद्धा—अन्॰ तमें किसीको अज्ञान तपसे विभग ज्ञान उत्पन्न होवे, उससे जैन सा॰ की क्रिया देख अनुराग जगे, जैन शैली आवे, तब विभग ज्ञान ॰ अवधि ज्ञान होवे, ज्यों ज्यों प्रणामकी विशुद्धि होती जाय त्यों ॰

---

*इस चौविसीके नवमे सुबुधीनाथ भगवानसे सत्तरमें कुथुनाथ भ॰ वान तक मोक्ष पधारे पीछे बीचमे तीर्थका विच्छेद होताथा उसवक्त जो सिद्ध होवेसो अतीर्थ सिद्धा

ानकी वृद्धि होते१ परम अवधि [सब लोक और लोक जैसे अलो
में असंख्य खंडवे देखे] की तुर्त चार घन घातिक कर्म खपा केव-
ी होकर मोक्ष पधार जाय (जो आयुष्य जास्ती होता तो लिंग(भेष)
दलते) यह अन्य लिंग सिद्धा १२ ग्रहलिंग सिद्धा—गृहस्थी धर्म
िया करत प्रणामकी विशुद्धता होते तुर्त केवल ले मोक्ष पधारे, आयु
य थोडेके कारण भेष (लिंग) नहीं बदल सके, सो ग्रह लिंग सिद्धा
४ एक सिद्धा—एक समयमें एकही सिद्ध होवे सो एक सिद्धा ओर
५ अनेक सिद्धा—एक समयमें दोसे लगा कर एकसो आठ तक
सिद्ध होवे सो अनेक सिद्धा

औरभी चउदे प्रकारसे सिद्ध होवे

१ तीर्थ प्रवर्ते उस वक्त एकसो आठ सिद्ध होवे * २ तीर्थका
वेच्छेद हुये दश सिद्ध होवे ३ तीर्थंकर वीस सिद्ध होवे ४ सामान्य
केवली एकसो आठ सिद्ध होवे ५ स्वयं बुद्ध १०८ सिद्ध होवे ६ प्र
त्येक बुद्ध ६ सिद्ध होवे ७ बुद्ध बोधित १०८ सिद्ध होवे ८ स्वलिंग
१०८ सिद्ध होवे ९ अन्यलिंग १० सिद्ध होवे १० गृहस्थलिंग ४ सिद्ध
होवे ११ स्त्री लिंग २० सिद्ध होवे, १२ पुरुषलिंग १०८ सिद्ध होवे, १३
नपुसकलिंग १० सिद्ध होवे ओर१४ सर्व भेले उत्कृष्ट एक समयमें १०८
सिद्ध होवे

पहली—दूसरी—तीसरी नर्कके निकले दश सिद्ध होवे चौथी न
र्कके निकले ४ सिद्ध होवे पृथ्वी पानीके निकले ४ सिद्ध होवे व
नस्पतिके निकले ६ सिद्ध होवे पचेंद्री गर्भेज तिर्यंच तिर्यंचणी ओर

* यह सर्व बोल १ समय आश्रीय जाणना एक समयमें उत्कृष्ट
इतने सिद्ध होते हैं

मनुष्यके आये दश सिद्ध होवे मनुष्यणीके आये २० सिद्ध होवे भ
वनपती वाणव्यंतर ज्योतिषी देवताके निकले १० सिद्ध होवे भवन
पिकी वाणव्यतरकी देवीके निकले ५ सिद्ध होवे ज्योतिषीकी देवीके नि
कले २० सिद्ध होवे विमानिक देवक निकले १०८ सिद्ध होवे विमा
निककी देवीके निकले २० सिद्ध होवे

ऊंचे लोकमें ४ सिद्ध होवे, नीचे लोकमें २०, त्रीठे लोकमें १०८
समुद्रमें २,* नदी प्रमुखमें ३,* प्रत्येक विजयमें जूदे जूदे २०(ताभी
१०८ से ज्यादे नहीं होवे), मेरु पर्वतपर–भद्रशाल, नदन, सोमानस,
वनमें ४, पडग वनमें २, अकर्म भूमीमें १०● कर्म भूमीमें १०८, प
ले–दूसर–पांचमें–छट्टे आरेमें● १०, तीसरे चौथ आरेमें १०८, जघन्य
अवघेणा (२ हाथ वाले) ४, मध्यम अवघेणावाले १०८, उत्कृष्ट
(५०० धनुष्यकी) अवघेणावाले २ सिद्ध होवे

इस मध्य लोकक पन्दरहकर्म भूमिके क्षेत्रमें आठही कर्मका क्षय
कर उदारिक–तेजस–कारमाण शरीरका सर्वथा छोड, जैसे एरंडके
फल फटनेसे उस्का बीज, स्वभावसेही उडके ऊंचा जाता है, तथा तुंबे
का पत्थर बाध पाणीमें डाला, वा बंधन टूटनेस ऊंचाही जाता है, तथा
अग्नीमेंसे धुम्र ऊंचाही जाता है, तैसेही कर्मबंधनसे मुक्त हुवा जीव
शीघ्र सिद्ध श्रेणी, उर्धगती, जितने आत्माके प्रदेश हैं, उतनेही आका
श प्रदेशका अवलंबन करते विग्रह (बाकी) गति रहित एक समय
मात्रमें सिद्ध शिलाके उपर लोकके अग्र भागमें जाकर ठेहरते हैं

सिद्ध स्थानमें पहासे तीसरे भाग हीणी (कमी) अवघेणा के

* सह ४ ही ठिकाणे कोई देवता किसीका उठा कर, डाल देवे और
वो मुक्ति जावे इस आश्रय जानना

● * बाकी–तउगवाला सिद्ध होवे सो

जाती है, अर्थात् यहा आत्माके और जीवके प्रदेश क्षीर नीरकी तरह से मिल रहे हैं, जब सिद्ध अवस्था प्राप्त होती है, तब कैवल्य आत्माके प्रदेशही घनरुप होकर रह जाते हैं, तब यहांके शरीरसे वहा तीसरे भाग कमी अवघेणा रहती है, जैसे यहासे जो पाचसे धनुष्यकी अवघेणा वाले सिद्ध हुये हैं उनकी वहां तीनसे तेंतीस धनुष्य और बत्तीस अंगुलकी उत्कृष्टी अवघेणा रहती है, जो सात हाथकी अवघेणावाले सिद्ध हुये हैं, उनकी वहा चार हाथ सोलह अंगुलकी अवघेणा रहती है; और जो दो हाथ (वावना संस्थानी) वाले सिद्ध हुवे उनकी वहा एक हाथ चार अंगुल आत्म प्रदेशकी निराकार अवघणा रहती है

"सिद्ध भगवान के आठ गुण"

१ ज्ञानावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनंत ज्ञानी हुय, जिससे लोकालोककी सर्व रचना जानते हैं २ दर्शनावरणीय कर्मके क्षय होनेसे अनत दर्शी हुय, सर्व लोकालोकका स्वरुप हस्तावलकी तरह दो-ख रहे हैं ३ वेदनीय कमके क्षय होनेसे निराबाध (व्याधि–वेदना रहित) हुयं ४ मोहनीय कर्मक क्षय हानेसे अगुरु लघू [भागीपणे हलकपणे रहित] हुये ५ आयु य कर्मके क्षय होनेस अजरामर [वृद्धपणे रहित और मृत्यू रहित] हुये ६ नाम कर्मके क्षय होनेस अमूर्ती [निराकार] हुये ७ गात्र कर्मक क्षय होनसे खोड (अपलक्षण–दोष) रहित हुये ८ अंतराय कर्मके क्षय होनेसे अनत शक्तिवत [खामी रहित] हुय

"औरभी दुसरी तरह सिद्ध भगवंतके ८ गुण"

१ अनेक वस्तु स्वभावको लिये होवे सो आस्तित्व कहीये २ अनेक वस्तु स्वभाव सहित होवे सो वस्तुत्व कहीये ३ अपनी मर्याद लिये होवे मो प्रमेयत्व कहीये ४ न भारी और न हलके होय सो अगुरु

लघुत्व कहिये ५ अपने गुण पर्याय लिये होवेसो द्रव्य कहिय ६ अपनी सत्तामेंही रहे सो प्रवशी कहिये ७ अपना चैतन्य स्वभाव [ज्ञान] लिये हो सो चैतन्य कहिये ८ चैतन्य स्वभाव[ज्ञान दर्शन] सहित और पुद्गल क २० [पृवर्ण २ गंध ५ रस ८ स्फर्श] रहित होयसो अमूर्तिक कहिये सिद्ध भगवंतमें यह ८ गुण निर्मळ हैं, चैतन्य द्रव्यके स्वभाविक है,

सिद्ध भगवान कैसे हे।

श्री आचाराग सूत्रमें कहाहै कि—

॥ सव्वे सरा णियट्टंति ति, तका जत्थ ण विज्जाति,
मती तत्थ णगाहिणा, ओए अप्पाति ट्ठाणस्स खेयन्ने ॥

॥ सेण दीहे, ण हस्से, ण वट्टे, ण तंसे, ण चउरंसे, ण परि मंडले, नआइंतसे ण किन्हे, ण णीले, ण लोहिए, ण हालिद्दे, ण सुकिले, ण सुराहिगंधे, ण दुरहिगंधे ण तित्ते, ण कडुए, ण कसाते, ण अंबिले, ण महुरे, ण कक्खडे, ण म उए, ण गरुए, ण लहूए, ण सीए, ण उण्हे, ण णिद्धे, ण लुक्खे, ण काउ ण रुहे, ण संग, ण इत्थी, ण पुरिस, ण अन्नहा, परिण्णे, सण्णे ॥ उवमा ण विज्जती। अरुवी सत्ता। अपयस्स पयणात्थि से ण सद्दे, ण रुव ण गंधे, ण रसे, ण फासे, इच्चेतावंति त्ति बेमि॥अध्ययन ५ उदेशा ६

अर्थ -सिद्धकी अवस्थाका वर्णन करनेको कोई भी शब्द समर्थ नहीं है, कल्पना उधर जा सक्ती ही नहीं है, मति उधर पहोंच सक तीही नहीं है, वहा सकल कर्म रहित आत्मा ही संपूर्ण ज्ञानमय विराजमान है, मुक्ति स्थित जीव, नहीं है दीर्घ (लंबा), नहीं ह्रस्व (छोटा) नहीं गोलाकार, नहीं त्रिकोणाकार, नहीं चतुष्कोणाकार, नहीं मंडलकार, नहीं काला—निला—रक्तावर्णी—पीला—श्वेत, नहीं

धी दुर्गंधी, नहीं तीखा—कडुआ—कसायला—खट्टा—मिट्टा, नहीं र्कश—सुकुमाल, नहीं भारी—हलका—ठंडा—गरम—स्निग्ध—रुक्ष, नहीं रीरवाला, नहीं, जन्म धरनेवाला, नहीं, संग पानेवाला, नहीं स्त्री रुप, हीं पुरुष रुप, नहीं नपुंसक रुप मुक्त जीवोंके लिये कोइ उपमा नहीं, क्युं कि वो तो अरुपी है, उनको अवस्था विशेष भी नहीं इस लिये उनका वर्णन करनेकी कोई शब्दमें शक्ति नहीं है, वो हीं है शब्द रुप, नहीं रुप रुप, नहीं गंध रुप, नहीं रस रुप, और हीं है स्पर्श रुप

श्री भक्तामर स्तोत्रमें कहा है कि —

त्वामव्यय विभु मचिन्त्य मसंख्य माद्य। ब्रह्माण मीश्वर मनंत मनंगकेतुं॥
योगीश्वर विदितयोग मनेक मेकं। ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदंति संत॥२४॥

अर्थात् हे प्रभो ! संत पुरुषों आपको अव्यय (स्थिरैक स्वभा ी), वीभु [पर्मऐश्वर्ययुक्त]अचिन्त्य [जिसकी कल्पना न हो सके ऐसा] असंख्य [गुणोंसे असख्य] आद्य, ब्रह्म, ईश्वर, अनत [अत नहीं है जिसका],अनगकेतु [कामदेवकानाश करनेवाला] योगीश्व र, विदितयोग [ज्ञानदर्शन—चरित्ररूप योगजिनको विदितहै] अने क [ज्ञानसे सर्वगत हो इसालिये सर्वव्यापक हो, अर्थात पर्यायसे अन क हो],एक [अनन्य स्वरूप],ज्ञान स्वरूप, अमल (अष्टादशदोष र हित)कहते हैं एसे श्रीसिद्धभगवंत कों मेरा त्रिकाल नमस्कार हो।

॥ इति पर्मपूज्यश्री श्री कहानजी ऋषिजी महाराजके सम्प्रदायके
बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित
श्री 'जैनतत्त्व प्रकाश' ग्रंथका सिद्ध"
नामक दूसरा प्रकरण समाप्तम ॥

"सज्जयाणचभावउ"

॥ विशेषार्थ ॥

अर्थात् सयंति (आचार्य उपाध्याय और साधूको विशुद्ध भावं नमस्कार करताहूं

पुस्तकके मंगलाचरणमें अरिहंत, सिद्ध और संयति ये तीनपदक नमस्कार किया है जिसमेंसे अरिहंत और सिद्धका वर्णन तो किया ग या, अव रहा संयतिका वयान संयतिकी सामान्य व्याख्या ऐसी कि " स्वय आत्मान् जयति इति सयति " अर्थात अपनी आत्म को वशमें करे उतको संयती कहना ' याति ' शब्दमें 'यम 'धातु है, क जिस्का अर्थ काबुमें रखना (to restrain) ऐसा होताहैं नरक तिर्यचाद स्थितिमें परवश्यताके लिये या क्रोध मान माया लोभ मोह ममत्व त्यादिके वसमें हो यहां प्रत्यक्ष हरएक जीव दु स सहते हैं, उनको स ती नहीं कहे जाते हैं परन्तु शक्ति मान मनुष्य होकर, ज्ञान वैराग्यसे क्षुधा तृष दिक परिसह उपसर्ग कष्ठ सह कर, आत्माको अपने काबूमें रखनेवाले ही सयति 'कहेजाते है, ऐसे सयति तो थोडे ही होते हैं

'संयति' ३ प्रकारके हैं --आचार्यजी ,उपाध्यायजी और साधुजी इन तीनोंका अलग २ विस्तारसे वर्णन कियाजायगा

प्रकरण २ रा

आचार्य उनको कहे जाते हैं, कि जो आदरने योग्य अं गीकार करने योग्य वस्तुको आपतो अंगिकार करें और दूसरेको करावे

। आचार्यजी

आचार्यजीके ३६ गुण

गाथा पचिंदिय संवरणो, तह नव विह बभचेर गत्ति धरो ।
चउ विह कस्साय मुक्को, इइ अठारस्सगुणेहिं स जुत्तो॥१॥
पच महव्यय जुत्तो, पच विहायार पालण समत्थो॥
पंच समिय तिगुत्तो इइ छत्तीस गुणेहिं गुरुमझ्झ ॥२॥

अर्थ—पाच महाव्रत , पांच आचार पाच सुमति, तीन गुप्ति कर सहित, च इंद्री वशकरे, नव वाड विशुद्ध ब्रम्हचार्य पाले, और चार कषाय व १ ये ३६ गुण संयुक्त होवे उनको आचार्यजी[गुरु] कहना

पच महाव्रत

"पहिला-महाव्रत"

" सव्वं पाणाइ वायाउ वेरमणं " अर्थात् सर्वथा प्रकारेप्रणाति त [जीवहिंसा]से निर्वते

दश प्राणके धरणहारको प्राणी कहना – १ श्रोतेन्द्रि (कान),२ क्षु इंद्रि (आँख), ३ घार्णेद्रि (नाक), ४ रसेंद्रि (जिव्हा), ५ स र्शेन्द्रि (त्वचा), ६ मन, ७ वचन,८ काया, ९ श्वासोश्वास और,१० आ ायुष्य, यह,१० प्रकारका प्राणीयोंको बल (जोर) है

इसमेंसे एकेन्द्रिय [पृथ्वी पाणी अग्नी, वायु वनस्पति] में४ ाण १ स्पर्शेन्द्रि, २ काया, ३ श्वासाश्वास, और ४ आयुष्य वेन्द्रिय काया और मुख दो इंद्रि होवे उन) मे प्राण ६, ५ रसेन्द्रि और ६ चन जास्ती हुवा तेन्द्रि (नाक जास्ती) में ७ प्राण ७मी नाक ा,चौरिंद्रिमें ८ प्राण, ८मी आख वढी असन्नी पचेंइंद्रिय (जोमूर्छिम

स्त्रीपुरुषके सयोग विना पदा होते हैं सा जीव) में ९ प्राण ९मां का नवदा सन्नी पंचेंद्रिय (नर्क दव तथा मात पिताके सयोगसे पेदा हुवा मनुष्य तिर्यंच) मे१० प्राण १०मा मन वडा इन१० प्राणके धरनेवाले प्राणीयोंका सर्वथा प्रकारे त्रिविध त्रिविध (९ कोटिसे) वध करे नही,करावे नही, और करनेवालेको अच्छा जाने नही, मनवचन-कायामे

पाहिले महावृतकी पाच भावना

१ इरिया सम ही भावणा — खाने पहरनेकी वस्तु विना देख नही वापरे, तथा चलतीं वक्त देखकर चले

२ ' मणपरिनाणाइ भावणा —शत्रु—मित्र, धर्मी-अधर्मी इन सवपर समभाव रक्खे जो धर्म करे उनको भला जाने, और जो पाप करे उनकी दया लावे कि विचारे पापका वदला कैसी मुशकिलसे सहन करेंगे

३ ' वत्ति परिजाणाइ भावणा ' —हिंसक, असत्य, सदोष, अयोग्य वचन नहीं बोले.

४ ' आयण भड निक्खेवणा समिए भावणा '— भड-उपगरण वस्त्र पात्र आदि यत्नासे वापरे *

५ ' आलोय पाण भोइ भावणा—' वस्त्र-पात्र भोजन इत्यादि नित्य देख कर वापरे

पहिले महावृतके ३६ + भागे

* कितनेक चौथी एषणा भावना, अहार वस्त्र, पात्र स्थानक निर्दोष भोगवे और पाचमी निक्षेपणा भावना कहते है परंतु आचारांगजी सूत्रके २४ में अध्यायमें तो ऐसेही है

+ पहिले महाव्रतके नीचे लिखे मुजब ८१ भांगे भी हो सकते है पृथ्वी, आप, तेज, वायु वनस्पती, बेन्द्रिय,तेन्द्रिय चौरेन्द्रिय, पचेन्द्रिय, ए ९ को ९ कोटिसे गिणनेसे ९×९=८१ होते है

चार प्राणसे लगा कर दश प्राण तकके धरणहारको 'प्राणी' हते हैं, परंतु यहा विशेपमें १ 'प्राण' बेन्द्रिय-तेन्द्रि-चौरेन्द्रियको प्रा- ो कहे जाते हैं क्यों कि उनकी मुख, नाक, आख इन प्राणोंके विश णसे ही पहिचान होती है २ 'भुत' भूतादिक त्रिकालमें जो एकसा है उसे भूत कहते हैं, परन्तु यहां विशेषणमें वनस्पतिको भूत कहते , क्यों कि यह त्रिकालमें एक ही जगह रहती है ३ जीव सदा जी ता रहे किसीका मारा मरे नही उसे जीव कहते हैं, सो सव जीव अ र हैं, जीवका विनाश नहीं है, फक्त शरीरका विनाशहोता है, परन्तु यहा शेशपमें पचेन्द्रियको जीव कहा है, क्यों कि सब लोक पचेन्द्रियको ही जिव ानने हैं, हास्पिटल, धर्मशाला, पिंजरापोल वगैरा करके जीवरक्षण कर हैं ४ सत्व सर्व जगतमें एक जीव ही सत्व हैं, परंतु यहा विशेपमें पृ वी-पाणी-अग्नि-वायुको सत्व (मूल पदार्थ) कहा हे, क्यों कि पृथ्वी ाधारभुत है पाणी तो जीवन रूप ही है, अग्नि पचनादिक क्रियामें उप ोगी है, वायूसे श्वासोश्वास और शुद्धि होती हैं, दूसरा कारण यह भी है कि, विष्णुवाले इन चारोंका 'तत्व' कहते हैं, इन चार ही से शरीर ना बताते हैं पृथ्वीकी अस्थी [हड्डी] आदिक, पाणीका मूत्र, प्रस्वे (पसीना) आदिक, अग्निका जठरादिक, वायूका श्वासोश्वास, और पाचमा आकाश मिलाकर पाच तत्व कहते हैं

प्राण-भुत-जीव-सत्व यह चारको ९ कोटिस नव गुणे करणेसे ३६ हुए, ये पहिल महाव्रतके ३६ भागे हुऐ

दूसरी तरहसे भी पहिले महाव्रतके ३६ भांगे हो सक्ते हैं शूक्ष्मे बांदर

' सूक्ष्म जीव इतने छोटे हैं कि जो द्रष्टिमें नहीं आ सकते। वो किसीके मारे मरते नहीं है, वज्रमय भीतमेंसे भी निकल सक्ते हैं १४। राजू रूप संपूर्ण लोकमें ठसाठस भरे है १ जो प्रत्यक्ष द्रष्टिमें आते हैं ऐसे जीवको बादर कहते हैं

त्रर्स, और स्थावंर ये मार प्रकारके जीव इनको ९ कोटीसे नव गूणे करेनसे ३६ भंगि हुवे

" दूसरा महावृत "

२ 'सव्व मुसाइ वायाउ वेरमणं, सर्वथा प्रकारे मृषावाद (झूठ बोलने)से निवृत्ते, क्रोध, लोभ, भय, हंसी, ये चारोंके वस हो झूट बोले नहीं, बोलाव नहीं और बोलतेको भला जाने नहीं, मन-वचन कायासे

दूसरे महाव्रतकी पांच भावना

(१) 'अणु वीइ भासी'—विचारके बोले, (with delibeyation) अर्थात् बोलनेके पहिले मनमें ऐसा सोचे कि इस मेरे बोलनेसे मेरी या दुसरेकी आत्माको कुछ तकलीफ (दुःख) तो न होगी-बुरातो न लगेगा ऐसा विचारकर निर्दोष मधुर और कार्य पडे इतना ही बोले

(२) 'कोहं परीजाणाइ'—क्रोधके वसमें हो न बोले. क्रोधके जोशमें झूठ बोला जाता है, इस लिये मुनीको क्रोध करना ही नहीं, और जो क्रोध आवे तो तुर्त क्षमा करे

(३) 'लोभं परिजाणाइ'—लोभके वशमें हो न बोले लोभ (तृष्णा) में झूठ बोला जाता है, इस लिये कभी तृष्णा आवे तो तुर्त संतोष धारण करे

(४) 'भयं परिजाणाइ'—भयके वस हो न बोले, क्यों कि जब भय (डर) पैदा होता है, तब सत्यासत्यका विचार नहीं रहता है, इस लिये भय आनेसे धैर्य धारण करे

(५) 'हासे परिजाणाइ'—हांसीके वस न बोले, हांसी आवे तब मौन [चूपकी] धारण करे

१ बेन्द्रियादिक हलते-चलते जीवोंको 'त्रस' जीव कहते हैं
४ पृथ्वी आदि पांच ही को स्थावर कहते हैं

दूसरे महाव्रतके ३६ भांगें

क्रोध-लोभ भय और हंसी ये चार कारणसे न बोलना, इनको ९ कोटिसे ९ गुणे करनेसे दूसरे महाव्रतके भी ३६ भांगे होते हैं

"तीसरा महाव्रत"

३ " सव्वं अदीन्नं दाणाउ वेरमणं "—अर्थात् सर्व प्रकारे, विना दी हुई वस्तुसे निवृते ग्राम-नगर और रण (जंगल) ये तीनो स्थलमें ६ प्रकारकी वस्तुकी चोरी करे नहीं (१) 'अप्पवा' अर्थात् अल्प-थोडी वस्तुकी अथवा अल्प मुल्यकी वस्तुकी, (२) 'बहुअवा' अर्थात् बहुत वस्तुकी अथवा बहु मुल्यकी वस्तुकी, (३) 'अणुवा' अर्थात् छोटी वस्तुकी, (४) 'स्थूलंवा' अर्थात् बडी वस्तुकी, (५) 'चितमंतंवा' अर्थात् सचेत जीव सहित वस्तुकी, (६) 'अचितमंतं वा' अर्थात् अचेत-निर्जीव वस्तुकी इन ६ प्रकारकी वस्तुकी चोरी करे नहीं, करावे नहीं, और करतेको भला जाने नहीं, मन-वचन-कायासे

अदत्तके और भी ४ प्रकार होते हैं (१) 'स्वामी अदत्त' अर्थात् कोई वस्तु या मकान उसके मालिकको बिना पूछे लवे सो, (२) 'जीव अदत्त' अर्थात् हिंसा करेसो (क्यों कि कोई जीव ऐसी रजा नहीं देता है कि मेरा बध करो) [३] तीर्थंकर अदत्त अर्थात् तीर्थंकर भगवानने शास्त्रमें साधुका कल्प [आचार] कहा है, उसे उलंघ कर भेष बनावे, तथा आहार वस्त्र-मकान सदोष भोगवे सो, [४] 'गुरु अदत्त' अर्थात् गुरुकी आज्ञा का उलंघन करे अथवा बिना आज्ञा कुछ काम करे सो, इन चारों प्रकारकी चोरीसे साधू निर्वृते

तीसरे महाव्रतकी पांच भावना,

१ 'मिउगाहजाती'—निर्दोष स्थानकमें रहनेके लिये मकानके

मालककी या नौकरादिककी आज्ञा लेकर भोगवे ❀

२ 'अणुणविहपाण मेयणे मोती'–गुरु तथा बडे साधुकी आज्ञा विना आहार प्रमुख कोई वस्तु वापर नहीं

३ 'उग्गह सिउग्गाहिसति'–नित्य प्रत्ये काल-क्षेत्रकी मर्याद बांधकर-आज्ञा लेवे

४ "उग्गहं वउग्गहिंसा अभीखणं २"—सचेत (शिष्यादिक अचेत (तृणादिक) मिश्र उपगरण युक्त शिष्यादिक सदा आज्ञा ल मर्यादा युक्त ग्रहण करे

५ 'अणवीइ मित्तोग्गह जाती'– अपने स्वधर्मी एक ठिकाने रहनेवाले साधुके वस्त्रपात्रादिक उनकी आज्ञा लेकर भोगवे, तथा गुरु वृद्ध-रोगी-तपस्वी ज्ञानी और नवदिक्षितकी वैयाव्र करे

तीसरे महाव्रतके ५४ भागे

थोडी, बहुत, छोटी, मोटी सचेत, अचेत ये ६ प्रकारकी वस्तुकी चोरी ९ कोटीसे नहीं करनी अर्थात ९×६=५४ भांगे हुए

'चौथा महाव्रत'

४ ❀ सव्व मेहुणाउ वेरमणं देवागना, मनुष्यणी और तिर्यन्चणीक साथ साधु, और देव मनुष्य तिर्थचके माथ साध्वी सर्वथा प्रकार मैथुन सेवे नहीं, सेवावे नहीं सेवताको भला जाने नही, मन वचन कायासे

❀ जगल्मे जा दुसरा आज्ञा देनेवाला न होवे और जो अप्रतित उपज ऐसी वस्तु न होवे तो शक्रेन्द्रजीकी आज्ञा लेकर वापरे

❀ श्री दशवैकालिक सूत्र–अध्ययन ६ में कहा है कि–

मूलमेय महम्मस्स। महादोस समुस्सय ॥
तम्हा मेहुणससग्ग। निग्गन्था वज्जयान्ति ण ॥ ❀

❀ अपात–अब्रह्मचर्य है सो सर्व अधर्मका मूल है सर्व महादोषका समुह है इसलिये साधू उसको मन–वचन–कायासे वर्जते है (एक वक्तके मथुनसेवनसे ९ लाख सभी पचेन्द्रिय और असंख्यात असन्नीकी घात होती है)

चौथे महाव्रतकी पांच भावना

१ 'णो णिग्गंथे अभिखणं २ इत्थीणं कह कहइत्तए'—स्त्रीके हा
ाव श्रृंगारकी वारंवार कथा करे नहीं

२ 'णो णिग्गंथे इत्थीणं मणोहराइ इंदियाइ आलोएतए णि
ाइतए'—स्त्रीके अंगापाग विकारद्रष्टिसे देखे नहीं

३ 'णो णिग्गथे इत्थीणं पुव्वकिलियाइ सुमारतिए'—गृहस्थाश्रम
 जो स्त्रीसंग किया था उसको याद करे नहीं

४ 'णातिमत्तपाण भोयण भोइ'—मर्यादा (भूख) उपरांत तथा
ामोत्तेजक स-रस आहार नित्य भोगवे नहीं

५ 'णो णिग्गंथे इत्थी पसु पंडग संसतोइ सयणा सणाइ सेवि-
ाए'—जिस मकानमें स्त्री [मनुष्यनी वा देवागना], पशु [गाय घो
ी प्रमुख], पडंग (नपुसक) रहते होवे वहा रह नहीं

ये पाच कामसे चित्तचपल और व्रतका भंग होता है ऐसा जा-
ा कर इनका त्याग करे

चौथे महाव्रतके २७ भांगे

स्त्री, पशु, नपुसक ये तीनको ९ कोटीसे गिणनेसे २७ भांगे
चौथे महाव्रतके हुए

"पांचमा महाव्रत"

५ "सव्वाउ परिग्गहाउ वेरमण" अर्थात् सचेत, अचेत और

मिश्र य तीन प्रकारका परिग्रह रक्खे* नहीं, रखावे नहीं, रखत
भला जाणे नहीं, मन-वचन-कायसे

पांचमें महाव्रतकी पांच भावना

१ शब्द, २ रूप, ३ गंध, ४ रस, ५ स्पर्श ये पांच ही अ
का सयाग होनेसे रागभाव नहीं करे, प्रसन्न न होवे और बुरेका सं
ग मिलनेसे द्वेष नहीं करे, नाराज न होवे

पांचमें महाव्रतके ५४ भांगे

थोडा, बहुत, छोटा, मोटा, सचेत, अचेत यह छे प्रकारके प
ग्रहको ९ कोटिसे निषेदे इस लिये ९×६=५४ भांगे हुए*

पांच महाव्रतके अलग २ प्रकारके भांग में जो जो क
कहे गय हैं, उनको 'दीया वा' (दिनको), 'राउ वा' [रात्रीको
'एगेउ वा' (अकेला), 'परिसागेउवा' (प्रपदामें), 'सुत्ते वा' (

* श्री दश वैकालिक सुत्रके छठे अध्ययनमें कहा है कि —

* ज पि वत्थ च पाय वा । कम्बल पायपुछण ॥
त पि सजम लज्जट्ठा । धारन्ति परिहरन्ति य ॥२०॥
नसो परिग्गहो वुत्तो । नायपुत्तेन ताइणा ॥
मुछा परिग्गहो वुतो । इइ वुत्ते महेसीणा ॥ २१ ॥

अर्थ—साधू सयम (लौकिक) लज्जाके लिये वस्त्र-पात्र-कंबल
छाना रजोहरण मुर्छा (ममत्व) का त्याग करके रक्खे (रखनेसे साधुपना
भंग नहीं होता है) छेकायके रक्षण करनेवाले श्री महावीर देवने पूर्वो
वस्त्र-पात्रादिकको परिग्रह' नहीं कहा है परन्तु धर्मोपगरण' कहा है
तथापि जो वस्त्रादिकपर ममत्व भाव रक्खा जावे तो महान ऋषीश्वर
उसका परिग्रह कहा है

:), 'जागरमाणे वा' (जागृतावस्थामें) ये ६ प्रसंगमें करे नहीं सर्व
ोगेको ६ गुणे करनेसे, पहिले महाव्रतके ३६×६=२१६ 'तणावे' हुवे
ुरे महाव्रतके ३६×६=२१६ तीसरेके ५४×६=३२४ चौथेके २७×६
१६२ और पाचमेके ५४×६=३२४ यों सब मिलाकर १२४२ 'तणावे'
ो जैसे तंबूका एक 'तणावा' (नाडा) ढीला पडनेसे भीतर पाणी,
कने लगता है, वैसे ही साधूके पंचमहाव्रतके १२४२ 'तणावे' में-
एक भी ढीला पडजाय तो संयम रुप तबूमें पाप रुपी पानी आने
गता है

'पंचाचार'

१ ज्ञानाचार २ दर्शनाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, और
वीर्याचार, इन पांचोहीका खुलासा

१ ज्ञानार

द्वादशांगी भगवानकी वाणीको आठ दोष रहित आप पढे और
ान्यको पढावे

गाथा — काले विणये बहुमाणे, उवहाणे तहय निन्हवणे ।
वज्जण अत्थ तदुभये, अठविहो नाण मायारो ॥

'(१)'काले'--असझाइको वर्जके सूत्रोक्त कालाकाल मज्झाए

(ज्ञानाभ्यास] करे असझाई ३४ॐ

* ३४ असझाईके नामः-(१) 'उक्कावाय'–तारा टुटे तो एक मुहूर्त अ सझाई, (२) 'दिशादाहा'–फजर और शामको दिशा लाल रंगकी तो वहां तककी असझाई (३) 'गज्जिया'–गर्जना होवे तो एक मुहुर्तकी अस झाई (४) 'विज्जुए'–विजली होनेसे एक मुहुर्तकी असझाई, [गाजे और विजलीकी आदृरा नक्षत्रसे स्वांत नक्षत्र तक असझाइ न गिणना और सा गिणना] (५) निग्घाए'–कडके तो आठ प्रहरकी असझाइ, (६) 'जुवे'- बालचंद्र शुक्ल पक्षकी प्रथमा द्वितीया त्रितिया ये तीन रातमें चंद्रमा तो वहां तककी असझाई, (७) 'जक्खाले'–आकाशमें मनुष्य पशु पीशाच दिकके चिन्ह दिखे वहां तक, (८) 'धुम्मीए'–काली धूयर (धूंह) पडे वहां तक, (९) 'महिये'–श्वेत धूवर (मेगरघा) पडे वहां तक (१०) रयघाए'- आकाशमें धूलका गोटा चढा हुआ दिखे वहां तक, (११) मंस'–मांस द्रष्टिमें आवे वहां तक (१२) सोणी'–रक्त (लोही) द्रष्टिमें आवे वहां त (१३) 'अठी –अस्थी (हड्डी) द्रष्टिमें आवे वहां तक (१४) 'उच्चार'-वि द्रष्टिमें आवे वहां तक (१५) 'सुसाण'–स्मशानके चारों तर्फ १००-१० हा (१६) 'रायमरणे'–राजाके मृत्युकी हडताल रहे वहां तक (१७)'रायवुग -राजाओंका युद्ध होवे वहां तक, १८ 'चंदवरागे'–चन्द्रग्रहण होय तोचा प्रहर खग्रास ग्रहण होनेसे ११ प्रहर थोडा ग्रहण होनेसे कमी काल स झना)'९ सुरो वरागे'–सूर्यग्रहण होय तो १२ प्रहर, २ 'उवसंतो' पंचेन्द्रियका कलेवर निर्जिव देह पडा हावे तो चारों तर्फ १० –१० हा २१ आश्विन सुदी पूर्णीमा २१ कार्तिक वदी प्रतिपदा(प्रथमा) २१ कार्ति सुदी पूर्णीमा २४ मृगशीर्ष वदी प्रतिपदा, २५ चैत्र सुदी पूर्णीमा २६ शाख वदी प्रतिपदा २० आषाड सुदी पुर्णीमा, २८ श्रावण वदी प्रतिपा २९ भाद्रपद सुदी पुर्णीमा ३ आश्विन वदी प्रतिपदा ये ८ दिनरात पुर्ण असझाइ पालना क्यों कि उसी वक्तमें देवताका आगम होता है; उ युद्ध उत्पात होय तो विघ्न प्राप्त हो जावे ११ फजर, ३२ दोपहर, ३३ शा ३४ और मध्य रात्री–ये ४ वक्त एकेक मुहुर्त ये ३४ असझाइ टालक शास्त्र पढना यह भगवतकी आज्ञाका भंग करनेसे आज्ञाभंगका दो और कमी उन्माद आदि मानसिक विकृति भी होती है

(२) 'विणए '— जिनसाशनका मूल ही विनय है, इस लिये विनय (नम्रता) सहित ज्ञान ग्रहण करे, ज्ञानी ज्ञान प्रकाशे तब 'तहेत प्रमाण वचन' कहकर वचनको ग्रहण करे ज्ञानीकी आज्ञामें रहे, सन्मान देवे, आहार वस्त्रकी साता उपजावे तथा ज्ञानके साहित्योंको नीचे और अपवित्र ठिकाने रखे नहीं, ऐसे विनय पुर्वक ग्रहण किया हुवा ज्ञान सुप्राप्य हो है, और चिरस्थायी होता है

(३) 'बहू माने '—गुरवादिक जो ज्ञान देनवाले होवे उनका बहुमान करे, और उनकी ३३ आसातना *वर्जे

---

* १-२-३ गुरु महाराजके आगे पीछे बराबर बैठे नहीं [४-५-६] गुरु महाराजके आगे पीछे बराबर खडे रहे नहीं ७-८-९ गुरु महाराजके आगे पीछे बराबर चले नहीं १० गुरुसे पहिले शुची नहीं करे ११ गुरुके पहिले इरियावही पडिक्कमे नहीं १२ कोई आवे तो गुरुके पहिले आप ही बुलावे नहीं १३ सूते हुवे शिष्यको गुरु बुलावे और जागता होवे तो तुर्त उठकर उत्तर देवे १४ गुरुके आगे सब आलोयणा करे [बीती हुइ बात सब कह दे] १५ वस्तु लावे सो पहिले गुरुको दिखावे १६ पहिले गुरुको आमन्त्रे [देवे] १७ फिर गुरुको पूछके दूसरेको देवे १८ अच्छी वस्तु गुरुको देवे १९ गुरुका वचन सुना अनसुना करे नहीं [चुप न रहे] २० बिछानेपर बैठे बैठ उत्तर देवे नहीं २१ गुरुके साथ उच्च शब्द [बहु वचन] से बात करे जैसे कि जी आप, इत्यादि रे! तू! इत्यादि नीच शब्द बोले नहीं २२ गुरुकी शिक्षावचन हितकारी जान कर ग्रहण करे २४ रोगी तपस्वी ज्ञानी नवदिक्षित की गुरुके हुकुमसे भक्ति करे २५ गुरुकी चूक भूल किसीके आगे प्रकाशे नहीं २६ गुरुके हुकुम बिना आप किसीके प्रश्नका उत्तर देवे नहीं २७ गुरु की महिमा सुन खुशी होवे २८ यह मेरी प्रपदा और यह गुरुजीकी ऐसा भेद नहीं पाडे २९ व्याख्यान बहुत देर तक चलावे तो आप अन्तराय देवे नहीं ३० व्याख्यानमें गुरुजीने प्रकाशा हुवा अधिकार आप पीछा उसी प्रपदामें विस्तारसे प्रकाशे नहीं ३१ गुरुके उपकरण [वस्त्रादिक] को पग लगावे नहीं ३२ गुरुके उपकरण बिना आज्ञा वापरे नहीं ३३ गुरुसे ऊंचे से [आसन नीचा रखे] और सदा साथ नम्रतासे रहे, गुरुका सदा भला चाहवे

(४) उवहाणे'—उपध्यान युक्त शास्त्र पढे, किसी शास्त्रकोप ढना शुरु करे उस्के पहिले और पढ रहे बाद आंबिलादिक करे और यथाविधि पढे

(५) 'निन्हवणे'—अपनेको विद्याभ्यास करानेवाले छोटे वाया अप्रसिद्ध होवेतो उनका नाम छिपाके दूसर विद्वान और वडेका नाम लेवे नहीं

(६) 'वंज्जणे '—शास्त्रके व्यंजन -स्वर-अक्षर-पद-गाथा-अनुस्वर-विसर्ग कमी जास्ती जाणकर न प्रकाशे (व्याकरणका जाण होवे) आचारांगजी सूत्रके दूसरे श्रुतस्कंधके तीसरे अध्यनमें मुनीको १६ वचनके जाण होना लिखाहै ❀

७ 'अत्य' अर्थको विपरीत न करे, मनकल्पित अर्थ न करें, गोपे नहीं+

❀ 'एगवयणं' एक वचन जैसे घोडा २ 'दुवयण' द्विवचन जैसे घोडे, ३ 'बहुवयणं' बहुवचन जैसे घोडों, ४ 'इत्थी वयण' स्त्री जाति वचन जैसे गाय ५ 'पुरिसवयण' पुरुष जाति वचन जैसे बैल, ६ णपुंसगवयण नपुंशक जाति वचन जैसे घर, ७ अज्झत्थवयणं' अध्यात्म वाक्य (मनमे होवे सो बोला जाय) जैसे स्हके वैपारी ने पानी पिलानेके बदले रुइ पिला कहदीया, ८ उवणीत वयणं' उत्कर्ष वचन [गुणानुवाद] जैसे रूपवंत ९ अवणीत वयणं' अपकर्ष वचन (दुर्गुणानु वाद) जैसे कुरुपा १० 'उवणीया वणीय वयण उत्कर्षापकर्ष वाक्य प[हिली निंदा फिर स्तुती] जैसे रुपवत परन्तु कुशीली या ११ अव [illegible] उवणीय वयण [पहिली स्तुती फिर निंदा] जैसे कुरुप परन्तु सुशीलिया १२ तीय वयण' भूतकाल वचन जैसे होगया १३ पडुप्पन्न वयण' वृतमान काल वचन जैसे होता है १४ 'अणागत वयण' अणागत [आते] काल वचन जैसे होवे गा १५ पच्चक्ख वयणं प्रत्यक्ष वचन जैसे यह देखो और १६ परोक्ख वयण परोक्ष वचन जैसे वो वैसा है यह १६ वचनमें से जिसस्थान जैसा वचन उच्चारना योग्य होवे वहां वैसाही उच्चारे व्याकरणका जाण जरूर ही होवे

+ कहवत है की—अपने ये आम्बेरखो, तो बात पूरी देखो।

८ 'तदुभये' मूल पाठ और अर्थ विपरीत न करें

२ दर्शनाचार

दर्शनके २ भेद. १ सम्यक् दर्शन अर्थात सत्य पदार्थका सत्य वरुप और असत्यका असत्य स्वरुप हृदय (अत करण)में दर्शे सो म्यक दर्शन, और २ मिथ्या दर्शन अर्थात् सत्यका असत्य और अ त्यका सत्य स्वरुप भापे सो मिथ्या दर्शन जैसे पीलियेके रोगीको वेत पदार्थका भी पीला रंग भाप होता है वैसे मिथ्या दर्शन वालेको मसत्य ही भाप होता है.

आचार्यजी मिथ्या दर्शनका संपुर्ण नाश करते हैं, और सम्यक र्शनके ८ अतिचार टालते है.—

गाथा : निसकीयं निकखीय, निविति गिच्छा अमुढ दीठीय ।
अवुवुह थिरकरणे वच्छलप्पभावणा अठ ॥ १ ॥

१ 'नसिकीय' जिनेश्वरके वचनमें शंकालावे नहीं अर्थात अ पनी कमसमजसे शास्त्रकी कोइ बातका मतलब समझनेमे नहीं आवे तो उस सूत्र नहीं जाने क्यों कि अनंत ज्ञानी प्रभूने जैसा ज्ञानमें देखा है वैसा ही फरमाया है [वो कभी असत्य प्रकाशनेवाले नहीं है,) परन्तु अल्पज्ञकी समझमें न आवे इसमें ज्ञानीका क्या दोष ? समझने वालेके कर्मका ही दोष है ? जैसे, किसी जोहरीने कहा कि यहरत्न को ६ रुपेका है, परन्तु अपनेको रत्नकी परिक्षा नहीं है तो भी जो हरीके वचन पर विश्वास रखना पडता है

(२) 'नीकखीय'—अन्य मतकी कांक्षा [वांछा] नहीं क रनी अन्य मतके कई ढोंग [गान तानादि फितूर] देख कर ऐसा नहीं कहना कि, अपन मझहबमें ये मजा होती तो कैसा अछा था?

बराबर विश्वास रखना कि बाह्य और अभ्यंतर त्याग और आत्मदमन विना कोई काल मोक्ष नहीं है

३ 'निवितिगिच्छ'—करणीके फलका संदेह नहीं लाना "मुझे संयम पालते-तपस्या करते इतने वर्ष हो गये तो भी फल अभी तक मिला नहीं, तो अब मिलेगा कि नहीं?" ऐसा कभी नहीं कहना, करणी कदापि अफल नहीं होती है जैसे खेतमें बीज बोया और वृष्टि हुइ तो परिपक्व वख्तपर अनाज दिखता है, तैसे हि आत्मारुप जमीनमें क्रिया [करणी] रूप बीज बोया, उसपर शुभ भाव रूपपाणीकी वृष्टि हुई तो, जैसे वो खेत कालांतरमें फलीभूत होता है, तैसेही करणी भी अवश्य फल देगी

(४) 'अमुद दीठी—मूर्खके जैसी द्रष्टी न रख्खे जैसे मुर्ख भली-बूरी सब वस्तुको एक सरिखी जाने, तैसे सब मतको एकसा नहीं जाननी 'दया' * येही सच्चा धर्म है.

(५) 'उववुह—साधर्मिकासत्कार करना अर्थात् अपने जैसे रजोहरण मुहपति आदिक चिन्हके धरणहार शुद्ध श्रद्धावंत शुद्ध क्रियावंत शुद्ध व्यवहारी जो साधु है उनका विनय करे—वयावच करे—आहार पाणी वस्त्र पात्र अभेलण करे—जो मांगे सो याचके ला देवे—गुणग्राम, वंदना, आदि जो करने जैसा होयसो करे

---

* श्लोक— श्रुयतां धर्म सर्वस्व श्रुत्वा चैवाव धार्यताम् ॥
आत्मन प्रातिकूलानि परेषां न समाचरेत ॥ १

अर्थ—धर्म के सर्वस्व [सारभुत रहस्य] को श्रवण करो और श्रवण करके धारण करो यह धर्म का रहस्य यह है कि अपने प्रातिकूल दूसरों को मत करो अर्थात् जो तुमको बूरा लगे वह कार्य तुम दूसरे के लिये भी मत करो ॥१॥

६ ' स्थिर करण '—धर्मसे चलित हुये होवे उनको स्थिर करे, र्थात् कोई धर्मात्मा उपसर्ग उपजनेसे, तथा अन्यमतियोंके प्रसगसे व धर्मसे विमुख—चलित हुवे होवे तो उनको उपदेश द कर, और ला कर दृढ श्रद्धावत करे, साता उपजाकर पुनरपि प्रमाण स्थिर रावे

७ ' वच्छल '—वत्सलता करे, अर्थात् जो कोई दु खी और गाधिग्रस्थ होवे तो यथाशक्ति उनको औषध—आहार—वस्त्र स्थानक ादि दे कर साता उपजावे, जिससे वो धर्ममें दृढ रह सकें

८ 'प्रभावणा'—जैन धर्मकी प्रभावना करे जैन धर्म तो स्व णसे ही प्रकाशित है, तो भी आप दुक्कर व्रत—अभिग्रह, सत्य बोध, वित्व शक्ति, इत्यादिसे धर्मको दिपावे

३ "चारित्राचार"

चार गतिसे तार पांचमी (मोक्ष) गतिको पहुंचाने वाले 'चारि-त्र' आचारक ८ अतिचारको आचार्यजी टालते हैं—

गाथा— पणिहाण जोग जुत्तो, पच समिइहिं तिहिं गुत्तीहिं॥
एस चरित्तायारो, अठविहो होइ नायावो॥

पाच सामिति और तीन गुप्ति अच्छी तरह निर्दोष खडन—वि राधना रहित पाले

१ "इर्या समिति" चलती वक्त यत्ना रखे इसके चार भेद —१ 'आलंबन'—इर्या समिति (यत्ना) वंत साधूको सदा ज्ञान दर्शन चा रित्रका आधार है २ 'काल'—इर्या पालनेवाले दिन होय वहा तक ही स्थानकके बाहिर तथा ग्रामादिकके बाहिर ग्रामादिकमें विचरे, रात्री होवे वही मकान या वृक्षादिकके आश्रय रहे, रात्रीको चलनेस अन्ध कारके योगसे तथा चन्द्रादिकके प्रकाशमें एकेंन्द्रियादिक जीव द्रष्टि

आवे नहीं उनकी विराधना होनेका संभव है, तथा रात्रीका सुक्ष
अपकाय (पाणी) की वृष्टि होती है, इस लिये उनकी विराधना हो
वे जो उच्चारादिक निवर्तनेको जाना पडे तो शरीर वस्त्रसे आच्छाद
करके, रजोहरणसे भुमिका पूजते हुये, दिनको देखी हुइ भूमिमें क
रणसे निवर्तन हो, पीछा तुर्त स्थानकमें आकर रहे ३ 'मार्ग'-इर्या
भ्रितिवत स्ववससे रस्ता छोड उवट (जगल) में न चले, क्यों कि
णादिकके कारणसे इर्या नहीं पले, तथा अफरसी भुमिकामें सचि
पृथ्वीका संभव है, उदाइयों के घर फूटे, उसमेंके जीव मरे, काया
कर लगनेसे असमाधि-व्याधि उपजे इत्यादि दोप जाण कुमार्ग ज
ना वर्जे ४ 'जयणा' के ४ भेद —(१)द्रव्यसे सदा नीचे देख च
(२) क्षेत्रसे सदा दह प्रमाणे (३॥ हाथ) पृथ्वी देखके चले (३)का
दिनको देखकर रातको पूजकर चले (४) भावसे १० बोल ❀ वर्जकर च
क्यों कि ये १० काम चलती वक्त करनेसे यत्ना पूरी पलती नहीं
एक समय दो काम हो सक्के नहीं हैं

२ "भाषा समिति"-बोलती वक्त यत्ना रखे इसके ४ भेद
१ द्रव्यसे-सोलह❀ भाषा वर्जे, २ क्षत्रसे-रस्ते चलता बोल नहीं

❀ १ 'शब्द' (राग-रागणी करे नहीं सुने नहीं २ 'रुप' तमाशा आ
दि देखे नहीं ३ 'गंध' कोई वस्तु सूंघे नहीं ४ 'रस' कोई वस्तु खाव
नहीं ५ 'स्पर्श' कोमल या कठिन मार्ग आनेसे राग द्वेषकरे नहीं
६ 'वायणा' शास्त्रा दिक पढे नहीं ७ 'पूछणा' प्रश्न पुछे नहीं ८
'परियटना' ज्ञान फेर नहीं ९ 'अणुपेहा' सुत्ता ज्ञान याद करे नहीं
१० 'धर्मकथा' उपदेश करे नहीं

❀ करकस कठोर छेदक भेदक पीडाकर हिंशाकर, सावद्य, मिश्र
क्रोधकारी मानकारी मायाकारी लोभकारि रागकारी द्वेषकारी मुख
था (अप्रतितकारी सुनीदेखी) विकथा(निरर्थक कथा-स्त्री कथा, भक्त
कथा राज्यकथा देशकथा.)

ल्से–प्रहर रात्री गये पीछे जोरसे शब्दोच्चार करे नहीं, क्यों कि पा-
मी जागृत हो जावे तो विविध प्रकारके आरभ समारंभ करनेको
ग जावे ४ भावसे–बोलती वक्त पूरा उपयोग रखे, देश–काल उचि
निर्वद्य मधुर सत्यतथ्य पथ्य बोले

३ 'एषणा सामिति:'—सेज्या [स्थानक] वस्त्र, आहार, पात्र
इ चारोंकी प्रथम 'एषणा' करे अर्थात् द्रष्टि करके देखे कि सदोष है
क निर्दोष, फिर 'गवेषणा' करे अर्थात् मालिकको पूछकर निर्णय का
ग्रहणा' अर्थात् निर्दोष ठहरनेसे यथायोग्य वस्तू ग्रहण करे 'एषणा'
मितिके ४ भेद—१ द्रव्यसे १६ दोष टाल सेज्या आहार वस्त्र, पात्र
हण करे* २ क्षेत्रसे दो कोस उपरांत आहार भोगवे नहीं ३ कालसे

---

* ९१ दोष सक्षेपमें कहे जाते है–१ 'आहाकम्मं' साधूके लिये बनाकर देवे सो २ 'उदेसीयं' एक साधु निमित्ते आहार बनाकरदेवे कि यह मेरे मित्र या सगे हैं ३ पुइकर्म्म' अपने लिये और साधूके लिये जुदा २ आहार निपजाया होवे परन्तु साधूके निमित्त निपजाये हुये आहारमेंसे एक दाणा भी अपने निमित्ते निपजाया आहारमें पड आवे तो वो भी साधूको काम नहीं आवे ४ 'मीसिज्जाए' साधुके लिये और अपने लिये भेला निपजाया होवे ५ 'ठवणा' यह तो साधु जीको ही देउंगा ऐसा जाण स्थाप रक्खे ६ 'पाहुडीए' कल महाराज मेरे घरको बेहरनेको आवेंगे इस लिये मैं भी प्राहुणाको कल जिमांवुगा ऐसा विचारकर साधू को आमन्त्रे ७ पाउर' दीवा मणी प्रमुखसे अं धारेमें उजाला करके देवे ८ 'कीयगडे' कोई वस्तू दामसे (मोल) ला कर देवे ९ 'पामीचे' किसीके पाससे उधार लेकर देवें १० प रियट्टे' किसीकी पाससे वस्तूका अदला बदला करके देवे ११ 'अ भीहडे' स्थानकमें या रस्तेमे सामे लाकर देवें १२ भिन्न घडेका या कोठीका या किसीपरतनका मट्टीमे या लाख से मुख बंद किया होवे उसे उखाडके देवे १३ 'मालोहडके' साधुको चढके रखके मेडी उपरसे

~प्रथम प्रहरमें लाया हुवा आहार चौथे प्रहरमें भोगवे नहीं ४ भा

तथा तलघरमेंसे लाकर देय सो न लेवे; क्यों कि शुद्ध मजूरकी मार नहीं पडे १४ 'अछीजे' निर्बलके हाथमेंसे सबल छीनकर देवे तो नं लेवे क्यों कि उसको दुःख होवे, और अंतराय लगे १५ 'अणीसिठे मालककी तथा भागीदार की आज्ञा विना दूसरे देवे तो न लेवे क्यों कि अप्रतित उपजे और क्लेश होवे १६ अज्झोयरे रसोइ निपजाते वक्तमें साधुका आवागमन सुन कर आलमें आटा दालमें दाल जास्ती मिलाकर निपजाकर साधुको देवे तो न लेवे ये १६ उद्गमन के दोष रागी गृहस्थ भाविक भावसे दान देनेकी उत्सहतासे लगावे, परन्तु साधु उनको कर्मबंधका हेतु समझकर कहे कि अहो आयुष्यवंत ! यह मेरे लेने योग्य नहीं।

१ 'धाइ'—धात्री कर्म करके लेवे अर्थात् गृहस्थके बालकको रमावे-खिलावे कि जिससे गृहस्थ अच्छा आहार देवे परन्तु इससे साधुके ब्रह्मचर्य बारेमें लोकोंको शंका उत्पन्न होवे ८ 'दूइ' दुती कर्म करके लेवे अर्थात् गृहस्थकी बात दूसरे ठिकाणे पहोंचनेका कह कर गृहस्थको प्रसन्न करके आहार लेवे तो दोष लगे १९ निमेत गृहस्तको भूत भविष्यकीबात और स्वप्न फल समुद्रिक व्यंजन (तिलमसादिक) का फल, तेजी मंदी इत्यादि कह कर लेवे तो दोष लगे २ 'अजीव' अपनी जात संबंध कर आहार लेनेसे दोष लगे ११'वणीमग' भिक्षुकी तरह दीनतासे मांगे तो दोषलगे १२ तिगिच्छ-औषध प्रमुख बताकर आहार लेनेसे दोष लगे १ 'कोह'—क्रोध करके लेवे १४ 'माणे'—अभिमान करके लेवे १५ 'माया'—कपट करके लेवे १६ 'लोहे'—लोभ करके लेवे १७'पुव्व पच्छ सतव'—दान देनेके अव्वल और पीछे दातारके गुणग्राम करके लेवे १८ विद्या मनोज्ञ पदार्थ देख दूसरी वक्त लेनेकी इच्छा कर विद्याके प्रभावसे रुप परावर्त करे और पुनरपि आहार लेवे १९ मंत्र-मंत्र—वशीकरण इत्यादि करके तथा पढाके लेवे १ 'चुन्ने'—पाचक चूर्णादि करके देवे और करनेकी विधि बताके आहार लेवे ११ जोगें तंत्र विद्या अर्थात् इंद्रजाल करके लेवे ३२ 'मूल कम्म'— गर्भपात औरग

संजायणादिक पाच दोप कहे सो वर्जकर आहार करे आहार वस्त्र

मेघारणकी औपधि बताके लेवे ये ११ दोप उत्पात के कहे अर्थात् रसलंपटी साधू ये दोप लगाते हैं, या गृहस्थ से भी खराब है यह ११ दोप नशीतसूत्रमें कहे हैं

११ 'संकीये'—दोपित—आधाकर्मी आदि दोपित होनेकी शंका पडने परभी आहार आदिक लेवे तो दोप लगे १२ 'मक्खीये' – हाथकी रेखा या भाजन सचित जलादिकसे किंचित भी भरा होवे तोउससे आहार लेवेतो दोष लगे १३ 'निखिते' सचीत (पृथ्वी पाणी अग्नि वनस्पति) या कीडी आदिक के नगरे उपर कोई वस्तु रखी होवे सो लेवे तो दोप लगे १४पे हीये'– अचित वस्तु सचित के नीचे रखी होवे सो लेवे तो दोपलगे १७ 'साहरीये'– सचित (धान प्रमुख) के बीचमें वस्तू रखी होय सो लेवेतो दोप लगे १८ 'दायगो'– अयोग्य दाता' जैसे अत्यंत वृद्ध–बाल नपूसक बीमार – अन्ध–उन्मत्त — बधीवान— सूजलीकेदर्दवाला—बालकको स्तनपान कराती माता–सात मासके उपरकी गर्भवती स्त्री इत्यादिक के हाथसे लेवे तो दोप १९ 'मिश्सीए' मिश्र कुछ सचित कुछ अचित लेवे तो दोप, जैसे होला (चणेका) ऊंबी (गेहूंकी) २० अप्राणित– सचित वस्तु अचित की गई हो, परन्तु पूर्ण अचित न हुई होवे सो लेवे तो दोप (आहूणो ओसण बीयअय) तत्कालका धोवण पाणी (एक मुहूर्त पहिले का) लेवे नहीं, ऐसेही चटनी प्रमुख दूसरी वस्तुके लिये भी समझना २१ 'लित' तर्तके लिपे हुवे स्थलपर जाकर लेवे, तो दोप, क्यों कि कितनेक ठिकाणे गोबरमें मिट्टी मिलाते हैं, इससे मिश्र रहनेका संभव है तथा वो उखड जायतो पीछा आरम्भ करना पडे २२ 'छडुए' छांडते १ डोलते २ वस्तु लाकर देवे सो लेवे तो दोप ये १० (एषणा) के दोप गृहस्थ और साधु दोनों मिलकर लगावे

४१ 'संजायणे' ठिकाणे आये पीछे, विना कारण, स्वाद निमित्त वस्तुका संयोग मिलावे, जैसे दूध आया और सक्कर लाओ (४२) 'पमाण'—प्रमाण उपरांत आहार करे [४३] 'इंगाल'—मन पसंद आहार की प्रशंसा करे तो कोयले जैसा संयम होवे ४४ ['धुम्म –अप्रिय आ

पात मकान पर अधीपणा (ममत्व) धारण करे नहीं फक्त संयम निर्वाहके हारकी निंदा करता थूव जैसा सयम होय [१७] 'कारण'–साधू ६ कारणसे आहार करे; क्षुधा वेदिनी उपसमान करनेके, गुरुआदिककी वयावच करनेके लिये, इर्या समिति पालनके लिये, सयमका निर्वाह करनेके लिये प्राणीयोंकी रक्षा करनेके लिये, और धर्म ध्यान ध्यानके लिये और ६ कारणसे साधू आहार छोडते हैं—रोग पेदा होनेसे, उपसर्ग पेदाहोनेस ब्रह्मचर्यमें द्रढ रहनेके लिये, दया पालनेके लिये, तपस्या करनेकी इच्छा के लिये, और सथारा करनेके लिये

ये ५ दोष मांडलेके (आहार करनेको बैठे हुवे साधु) लगावे

४८ 'उधार कामाइ'–धूलीयेके कामाइ (भार) उधारके देवे तो दोष ४९ 'मडपाहुडीए'—देव–देवी निमिसे किया हुवा आहार लेवे तो दोष ५० 'यस्ल पाहुडीए'– बलबकुला उछाल नेको किया हुवा आहार उछाले पहिले लेवे तो दोष ५१ 'अविइ' –बिन देखाती जगासे [भींत–पडदेके अंतरसे] लाकर देवे वो लेवे तो दोष ५ 'परिया'—खराब आहार पठो [फेंक दे] कर अच्छा आहार लेवे तो दोष। यह ५२ दोष श्री आवश्यक सुत्रमें कहे हैं

५३ 'दानठा'—दान देनेको किया हुवा आहार लेय तो दोष ५४ "पुनठा'— मृत्युगत मनुष्यके पीछे पुन्य निमित्त बनाया हुआ आहार लेये तो दोष ५५ 'समण्ठा'— बावा जोगी –अतीतके लिये बना हुआ आहार लेवे तो दोष ५६ 'वणीमगठा'– दानशाला [सदाव्रत] का लेवे ता दोष ५७ 'नियाग' सदा एक ही घरसे लेव तो दोष ५८ 'सेज्जातर' स्थानक की आज्ञा देनेवाले के घरसे लेवे तो दोष ६० 'राय पिंड' – चार महाविगय मांस–मदिरा–मध अर्थात सेहत और मक्खन भोगवे तथा विषय (काम) की वृद्धी होवे ऐसा आहार औषध्य की मो गवे तो दोष ६ 'किमिछीर' – बिना कारण मनोज्ञ वस्तु माग २ के ले वे तो दोष ६२'संघट्टेसे'सचित कसघटसे(धका लगाकर लेवे तो दोष ६२'पछुज पि–खाना थोडा और फेंक देना ज्यादे ऐसी वस्तु लेवे तो दोष ६१ 'परद्दवी' – वेश्या आदिक निन्द्य कुलका आहार लेवे तो दोष ६१ मांमग' – जिसमे ना काही उसके घरका लेवे ता दोष ६५ 'पूम्य

कारण जाण जैसा मिला वैसे सेही आत्माको संतोप देवे और सूत्रोक्त

पच्छ कम्म ' ग्रहस्थ आहार देनेके पहिले या पीछे दोष लगावे, ऐसा आहार लेवे तो दोष ६६ ' अचितकुल ' – अप्रतीतकारी कुलका लेवे तो दोष ये ६१ दोष श्री दश वैकालिक सूत्रमें कहे हैं

६८ ' सयाणपिंड ' – समुदाणी (१२ कुलकी) भिक्षा करे नहीं परन्तु सिर्फ स्वजातिकी ही भिक्षा लेवे तो दोष ६९ परीवाडी जीमने को बहुत लोग बैठ होवे उनको उल्लघकर जावे तो दोष ये २ दोष उत्तराध्ययन सूत्रमें कहे हैं

७० ' पाहुणाभत ' – पाहुणाके लिये निपजाया आहार उनके जीमे पहले लेवे तो दोष ७१ 'मस' असका मांस लेवे तो दोष ७२ 'ससखी' बहुत लोक(न्यात)जीमती है उसमे जाकर आहार लेवे तो दोष ७३ भिक्षा घरको अंतराय देकर लेवे तो दोष ७४ ' सागरघयग ' गृहस्थीका काम करनेका वचन देकर लेवे तो दोष यह ५ दोष श्री ठाणांगजी सूत्रमें कहे हैं

७५ ' कलाइकत ' – सूर्योदय पहिले और सूर्यास्त पीछे लेवे तो दोष ७६ 'आणाइकंत प्रथम प्रहरका चोथे प्रहर भोगवे तो दोष ७७ ' मग्गाइकत – चार ही आहार दो कोश उपरांत भोगवे तो दोष ७८ ' आउप आमन्त्रणसे जावे तो दोष ७९ ' कतारभत ' अटवी उल्लंघनेको आहार निपजाया हुवा लेवे तो दोष ८० ' दुभिख दुष्कालमें गरीबो को देनेका रक्खा हुग आहार लेवे ता दाष ८१ गीलाणभते ' रोगी तथा वृध के लिये निपजाया हुवा आहार उनके भोगवे पहले लेवे तो दोष ८२ ' वादलिया भते ' बहुत वर्षादमें गरीबाको देनेकोनिपजाया हुवा आहार लेवे तो दाप ८३ ' रय दोष' सचित रजसे भरा आहार लवे तो दोष ये ९ दोष श्री आचारांग सूत्रमें कहे हैं

८४ रयस दोष '–वर्ण गध रस स्पर्श पलट जानेसे भी लेव तो दाप ८५ ' सयगही ' –अपने हाथस आहार उठा कर लेवे तो दाप ८६ ' वा हीच '– घरक बाहीर लाकर देव सो लेवे तो दाप ८७ मोरंच ' –दाता रकी कीर्ति करके लव ता दाप ८८ ' वालठा ' –बालकके लिय बनाया सा ल्व ता दाप ये ५ दोष श्री प्रश्न व्याकरण सूत्रमें कहे हैं

क्रिया, कालोकाल ,समाचरे

४ "आदान भंड निक्षेपना समिति"—आदान=ग्रहण करते निक्षेपना=रखते भंड=उपगरणकी यत्ना करे यह भंड-उपगरण दो प्रकारके होते हैं—१ 'उगहीक'—साधूको सदा उपयोगमें आवे सो २ 'उपग्रहीक'—प्रयोजन उपने काम आवे सो

शास्त्रोंमें साधूके उपगरण इस प्रकारे कहे हैं—पात्रे ३ प्रकारके काष्टके तूम्बेके और मट्टीके होते हैं रजोहरण, जो जमीन झाडनेके काममें आता है, जिससे कोइ जीव पांव नीचे दबे नहीं, वो ऊन, अंबाडी, सणका बनता है. मुहपति, कि जो वायूकाय तथा सूक्ष्म त्रस जीवकी रक्षाके लिये हैं मुहपतिको ८ पट कपडेके चाहिये, और डोरे अहो निश मुखपर बान्धर खना चाहिये उघाडे मुहसे छींक उबासी औ श्वासो श्वास लेनेसे हिंशा होती है ऐसा श्री आचारागजी सूत्रमें फरमया हैं ऊन-सूत या रेशमकी पछेवडी ज्यादेमें ज्यादे ३ रखी जाती है

८९ गुधाणेठा'-गर्भ घातिके लिये बनाया आहार उसक जीम पहिले लेव तो दाप ९ 'किमी' —है की कोई देने वाला यों हाक मारकर लेव ता दोप ९१, भउधीमत्त '- भटधीक किनार दानशाला हावे उसका लेव ता दोप (९२) 'अतिथमत्त'-कोइ भिक्षा करके लाया हावे उसके पाससे लेवे तो दोप (९१) पासस्था भत्त' भपधारी होकर उपजीविका करनवालसे भिक्षा लेवे तो दोप (९४) 'दुगंछमत्त—अजाग (अभक्ष) आहार लेव ता दोप (९५) 'सागरीये भिक्षाप'—गृहस्थके साथसे आहार लेव तो दोप. य ७ दाप श्री निसीथ सूत्रमें कहे हैं

९६ पारियासी ये दाप'—भिक्षुक लागोंके निमितसे बहुतकाल समय करके रक्खा हुवा वो तो नहीं के गया और वा आहार साधू लेवे तो दोष निसीथ और ब्रहत्कल्पमें ये दाप कहा हैं

यह ९६ दाप वरज कर साधुको अहार आदिक लेना चाहीए

ोलपट (पहरनेका वस्त्र) संथारा [बिछोणा] (गुच्छकं)अर्थात् गोच्छा
रजोहरण जैसा परन्तु छोटा] मातरिया अर्थात् लघुनितिके लिये
त्र [जमीनपर लघुनिति करनेसे दुर्गंध पैदा हो कर प्रजाजनोंको
पी दर्द होता है, और जंतु उत्पन्न होते हैं, इस लिये एक पात्रमें ल
निति करके फासुक भूमिकामें परठवे,] झोली पाणी छाणनेके लिये
लणा इत्यादि ऊपगरण साधूको सदा उपयोगमें आते हैं, सो उघी-
हैं. और सेज्जा, स्थानक, पाट-पाटला,-पराल-इत्यादि कारणसर उपयोग
लिये जाते हैं, सो उपग्रहीक कहे जाते हैं ३ पातरे, ३ पिठोवडी, १
ोलपटा, १ ओघा, १ गोच्छा, १ मुहपति, १ मातरीआ, १ बिछवणा
झोलि, १ गलणा ये १४ ऊपगरण स्थैवरकल्पी साधूके रखनेमें आते
इसमेंस पातरा पिठोडी कमी करे तो 'उपगरण उणोदरी तप' होता है

इन उपगरणोंको १ द्रव्यसे, यत्नासे ग्रहण करे और धरे किसी
ो उपगरणको बिनको देखे बिना और रात्रीको पूंजे बिना हाथ न लगा
२ वस्त्रपात्रादि कोईभी वस्तु साधुके नेसरायकी ग्रहस्थके घरमें रख
र ग्रामानुग्राम विहार नकरे' क्योंकि प्रतिबंध होता है, और प्रतिलेहण_
हीं होती हैं इत्यादी बहोत दोष हैं २ कालसे 'ऊभयकाल भंडोपगर
पडीलेहणाए 'अर्थात् दोनोवक्त (शामसवेरे) भंड-उपगरणकी पडि
हणा करनी प्रतिलेखना २५ प्रकारसे होती है सो विचक्षण मुनी व-
के ३ विभाग करे, एकेक विभागमें ऊपर, बीचमें और नीचे द्रष्टी ल
ाकर देखे यों ३ विभागको देखे उसे ३×३ =९ अखोडे ऐसेही दूसरी
रफ देखे सो ९पखोडे ये १८ हुवे तीन इधर के और तीन उधर के
वेभागमें जीवादिककी शंका होवे तो गोच्छेसे पूंजे, ये ६ पुरिमां ये
२४ हुवे, तथा पच्चीसमा शुद्ध उपयोग रक्खे पलेवण करती वक्त बोले
हीं, इधर उधर चित्त फिरता रखे नहीं पडीलेहे और बिन पडीलेहे व

स्त्र भेले करे नहीं अनुक्रमे मुहपति–गोच्छा–चोलपट–पछेवडी–र
हरणा दिककी प्रतिलेहणा करे ४ भावसे, यत्नावंत–करुणाभाव रख व
एकांत स्वपर हितार्थ, संयमनिर्वाहार्थ उपकरण धारण करे श्री उत्त
ध्ययन सूत्रके २३ मे अध्ययनमें श्री गौत्तम स्वामीने फरमाया हैं कि
लोगलिंग पवुचती " अर्थात् साधु लिंग (भेष)धारण करते हैं सो ल
गोंको प्रतीत उपजानेके लिये, कुछ अभिमानका या देह रक्षका कार
मे नहीं सर्व उपगरण मूर्छा ममता रहित वापरे

५ "पारिठावणिया समिति "–निर ऊपयोगी वस्तुको यत्नासे प
ठवे (एकात स्थलमें रख देवे) निरऊपयोगी वस्तुके नाम —ऊचार
वडीनीत (भिष्टा), पासवण लघूनीत (मुत्र), 'षण'–चमन (उल्टी
जल–पसीना, सिंघेण–नाकका मेल, –सरीर का मेल, नख, केश
प्रमुख अजोग वस्तुको १ 'द्रव्यसे' ऐसे ठिकाने परिठवे कि जो ऊंच
जगह न होवे, कि जहासे वो चीज पड जावे, नीची जगह न होवे
कि जहा मेला हा रहे, अप्रकाशिक खड्डा न होवे कि उसके आश्र
रहे हुवे जीव मर जावे कीडे उदाइ के नगरे, दाणे, हरी, त्रणे न होवे
कि जिससे उन्के जीवको त्रास या मृत्यु निपजे ऊंचेसे निचे न डाले
नीचेसे उपर न फेंके, इत्यादि यत्नासे परिठवे २ 'क्षेत्रसे' जिसकी ज
गह हो उनकी आज्ञा प्रथम ग्रहण करे आज्ञा देनेवाला कोई न होवे
और उस जगहमें अप्रतीत क्लेश उपजता न होवे तो *सकेन्द्र महा
राजकी आज्ञा ग्रहण करे ३ "कालसे" दिनको तो द्रष्टिसे अच्छी तरह
भुमिका देखकर परिठवे, और रातके लिये शामको जगह देख रखे कि

* श्री महावीर स्वामीका परम उपासकके सकेन्द्रजी फर माये है कि चार
ही तीर्थ निरवद्य काममें मेरी हकी [मेरुसे दक्षिण दिशाकी] जगह वापर
तो मेरी आज्ञा है

हा कीडी, नगरे, हरी, प्रमुख कुछ न हो तो वहां रातको यत्नासे प-
ठवे. ४ 'भावसे' शुद्ध उपयोग युक्त परठवे स्थानक मे बाहिरनिक
ते 'आवस्यही २' शब्द कहे (मेरेको यह काम अवस्य करना है
रिठोवती वक्त "अणु जाणह मिमीउगह" कहे (वरतीके मालिककी
गाज्ञा है), परीठवे पीछे 'वोसिरे' ३ वक्त कहे (ये मेरी नहीं), पीछा
थानक्में प्रवेश करता 'निसइ २' कहे (अब कामसे निवृत्त हो आ
॥) फिर ठिकाणे आकर इरियावही प्रतिक्रमे

अब तीन गुप्तीगुप्त अर्थात् तीन गुप्तीको गोपवकर आचार्य-
जी स्ववसमें रक्खे सो कहते हैं

१ मनगुप्ती—मन एक विचार रुप बडा जबर राक्ष है महा
पापी भी काम नाहि करे ऐसा २ कोई २ वक्त विचार कर लेता है इस
लिये मनको तीन प्रकारके विचारसे निवारे—१ 'सारभ' दुसरेको
दु ख देनेकी इच्छा २ 'समारभ'—परीताप उपजानेकी इच्छा ३ 'आरभ'
जीव काया जुदा करनकी इच्छा इन तीनी कामोसे निवारके धर्म
और शुक्ल ध्यानमें लगावे

(२) वचन गुप्ती —वचनसे भी अनत प्राणीयोंका सत्यानाश
होजाताहै इस लिये तीन प्रकारके वचन नहीं बोले, सारभ (दु खका
रि,) समारभ [परितापकारि,]आरंभ [मृत्यूकारी] यह तीन प्रका
रके वचन नबोले तथा देशकी कथा, राजाओंकी कथा, स्त्रीयोंकी कथा
भोजनकी कथा, इत्यादी कू कथा वर्जकर अवस्य काम हुये सत्य मधुर
निर्दोष वचन उच्चारे

[३]"काया समिति,' कायासे या कायानिमित्त अनेक जीवों
की घात हाती है, ऐसा जाण तीन कर्मसे काया बचावे, सारभ [दु ख देने
से], समारंभ [किसीको परितापऊपजाणेसे,]आरभ [किसीके प्राण ह

रण करनेसे]और तप संयम ज्ञान ध्यानादिक सत्कार्य कायासे करे यह चारित्र आचार के आठ अतिचार वर्जकेशुद्ध चारित्र पाले.

४ " तपाचार "

कर्म रूप मेलको तपसे दूर कर चैतन्यको निर्मल करेसो तप १२ प्रकारका श्री उत्तराध्ययनजी सूत्रमें फरमाया है

गाथा— सो तवो दुविहो वुत्तो,बाहिरब्भंतरो तहा ।
बाहिर छविहो वुत्तो, एवं अभ्यंतर तवो ॥

इस तपके दो भेद किये हैं (१) बाह्य [प्रगट] और (२) अभ्यंतर (गुप्त—देखनेमे न आवे ऐसा,)

बाह्य तपके छे भेद —

गाथा— अणसण, मुणोयरिया, भिक्खायरियाय रसपरिच्चाउ ।
कायाक्लेसो सलिणयाय बाह्य तवो होइ ॥

१ „अणसण "अन्न प्रमुख चारही आहारके त्याग करे सो अणसण अणसणके दो भेद [१] इतरिया (थोडा-मर्यादा युक्तकालका) २ अवकाहिया (जावजीवका)

इतरिया तपके छे भेद— १ श्रेणी तप २ प्रतर तप ३घन तप ४ वर्ग तप ५वर्गावर्ग तप ६ प्रकीर्ण तप

[१]श्रेणी तपके अनेक भेद चोथ [१उपवास] छट्ट(बेला) अठम (तेला), यों चडता २ जावत् पक्ष १ मास २ मास जावत छ मास तक की तपस्या करे, इसे 'श्रेणी तप' कहना छ मासके उपर तपनहीं

२ ' प्रतर तप ' यह सोले कोठेमें आंकडे भरे हैं वेसी तपस्या करे.

कोष्टक ११ प्रतर तप

१	२	३	४
२	३	४	१
३	४	१	३
४	१	२	३

१ उपवास २ बेला,३ तेला, ४चोला, २ बेला ३ तेला ४चोला योंसोलेहि कोठेका तप करे सो 'प्रतरतप'

(३) ऐसेही ८×८=६४ कोठेका तप को

न'तप कहते हैं

(४) ऐसेही ६४×६४=४०९६ कोठेका तप करेसो 'वर्ग ' तप

(५) ऐसेही ४०९६×४०९६=१६७७७२१६कोठमें आक आवे सा तप करेसो ' वर्गा वर्ग ' तप

(६) ' प्रकीर्ण तप ' के अनेक भेद— १ कनकावली २ रत्नावली ३ एकावली और ४ मुक्तावली ५ बृहत् सिंह ६ क्रिडा, लघुसिंह क्रीडा, ७गुण रत्न सवत्सर तप, ८ सर्वेतोभद्र तप, ९वज्र मध्य पडिमा, १० जव मध्य पडिमा, ११ भद्र पडिमा, १२महाभद्र पडिमा, १३आंविलवर्धमान तप (एक आंबिल करके एक उपवास करे, फिर दो आंबिल —एक उपवास, फिर तीन आंबिल-एक उपवास, यों सो आंबिल तक चढावे) इत्यादि अनेक प्रकारके तप करें वह सब ' प्रकीर्ण ' तप कहे जाते हैं *

अवकाही [जावजीव] के तपके दो भेद — १ ' भत्तपच्चख्खाण ' सो फक्त आहारका त्याग करे, और २ ' पादोगमन ' सो आहारका और सरीर का दानोका त्याग करे;संथारा करे, पीछे काटी हुइ वृक्षकी डालकी तरह पडे रहे, हले चले नहीं, यह अवकहिया 'अणसण तप' किन्तेक मुनी उपसर्ग उत्पन्न हुये करते है, और किन्तेक मूनी आयूष्यका अंत जाण करते हैं

२ " उणोदरि तप " आहार उपधी कमी करसो उणोदरी तप उणोदरी के दो भेद — १ द्रव्य उणोदरी ओर २ भाव उणोदरी द्रव्य उणोद्रीके दो भेद = १ उपगरण उणोदरी सो वस्त्र पात्र कमी रक्खे, जिससे ज्ञान ध्यानकी वृधी होती है, विहार सुखमे होता है, इत्यादिक बहुत गूण हैं २ आहार उणोदरी, पुरुषके बत्तीस कवल का आहार है उसमेंसे आठही खाके रहेतो पाव उणोदरि, सोलें खायेतो आर्धी उणा

* इन तप का स्वरूप देखिये ग्रंथ में

कनकावली तपकी एक परपाटी
(लड़) के तपदिन ४३४ पारणे ८८
जिसके महिने १७ और दिन १२ होते हैं
चार परपाटीके ५ वर्ष ९ महिने १८ दिन
रत्नावली तपकी एक परपाटीके तपदिन ३८४
पारणे ८८ जिसके महिने १५ और
दिन २२ होते हैं चार परपाटी ५ वर्ष
२ मास २८ दिनमें होती हैं
एकावली तपकी एक परपाटीके तपदिन
३३४ पारणे ८८ जिसके मास १४ दिन २
होते हैं चार परपाटीके ४ वर्ष ८ महिने
८ दिन लगते हैं
मुक्तावली तपकी एक परपाटीके तपदिन ३०० पारणादिन ६० जिसका पूरा एक
वर्ष होता है चार परपाटीके ४ वर्षमें पूरी होती हैं

दरी, चोवीस खावेतो पोंण उणोदरी और एकतीस खावेतो किंचित
णोदरी कमी खानेमे निरोगता, बुद्धीकी प्रबलता 'अप्रमादिपणा इ
दि बहुत गुण प्राप्त होते है

' भाव उणोदरी ' सो क्रोध, मान, माया, लोभ कमी कर
चपलता कमी करना

३ ' भिक्षाचारी "—सामूदाणी (बहुत घरोंकी) भिक्षासे
अपना निर्वाह करे, इसे गोचरी भी कहते है जैसे गाय जंगल
चरनेको जाती है,वो बहुत ठिकानेसे थोडा २ घास उपरसे खाकर
भग्ती है, पीछा उगणे जैसा रखती है तैसेहि मुनी बहुत घरसे थोडा
आहार लेकर अपनी आत्माका निर्वाह करते है, सो गोचरी

गाथा— वयचविती लब्भामो, नय कोइ उवाहमइ ।
आहागडे सु रयत, पुर्फे सु भमरो जाहा ॥ दश

जेसे गृहस्थ अपने शोख [आराम]निमित्त वाडी लगता
ओर उसमें भ्रमर पक्षी आकार फूलको किंचित् ही किलामणा नहीं दे
अपनी आत्मा तृप्त करताहै,तैसही गृहस्थने अपन खानेको या कु
निमित जो आहार निपजाया है, उसमेंमे साधू थोडा २ ग्रहण
अपने शरीरको भाडा देवे

भिक्षाचारी तपके ४ भेद १ द्रव्यसे, २ क्षेत्रसे, ३ कालसे, ४ भाव

(१) द्रव्यसे भिक्षाचारीके छब्बीस भेद १ 'उखित चरिये'(
र्तनमेंसे वस्तू निकालकर देवेतो लेवुंगा) २ ' निखितचरिये ' (
नमें वस्तू डालता हुवा देवेतो लेवूंगा) ३ 'उखितनिखित चरिए,
र्तनमेंमे वस्तू निकाल पीछी उसमें डालता होवे सो लेवूगा) ४'
खिन ऊखित चरिए' [वर्तनमें वस्तू डाली पीछी निकालता होवे सो
वूगा] ५ 'वट्टीजमाण चरिए' (दूसरेको परुसता होय उसमेंसेलेवुंग

'साहारिज माण चरिए' (किमीको देनेको लेजाता होयसो लेवूंगा) 'अवाणिजमाण चरिये' (दूसरेको दकर पीछा आता होवेसो लेवूंगा) 'उवणिज अवाणिज चरिए' (दूसरेको देकर पीछी ले मेरेको देव सो वूंगा) १० 'अवणिज उवणिज चरिए' दूसरेके पासमें लेकर मेरेको मो लेवूगा] ११ 'ससठचरिए' (भरे हाथसे देवेतो लेवूगा) १२ अ सठचरिए' (विनभरे हाथसे देवेसो लेवुं)- १३ 'तज्जाए संमठ चरिए' स वस्तुसे हाथ भरे सोही वस्तु देवेतो लेवु) १४ अन्नाए चरीए हा मुझेपिछाने नहीं वहासे लेवुं] १५ 'मोण चरिए'(विना बोलेदेवे लेवुगा) १६ 'दिठ्लाभिये' (वस्तु मुझे दिखाकर देवेतो लेवुं) ७ 'आदिठ लाभिए' (विन देखाये देवेतो लेवू) १८ 'पुठ लाभए' असुक वस्तु लोगे यों पूछकर देवेतो लेवु) १९ 'अपुठ लाभिए, (वि पूछे देवे तो लेवु) २० 'भिकलाभए ' मेरी निंदा करके देवेतो ले) २१ 'अभिखलाभिए' [मेरी स्तुती करके देवेतो लेवुं] २२ 'अ गिलाऐ' (शरिरको दु ख होव ऐसा अहार लेवूं) २३ 'उवणिहिए' गृहस्थ खावें उस्मेंसे लेवुं) २४ 'परिमितापिंढ वतिय '[सरस] (अच्छा आहार लेवूं) २५ 'शुद्धे सणीए' (चोकस करके लेवु) २६ 'सं- ादतीए, (कुडचीकी तथा वस्तुकी गिणती करके देवेसो लेवुगा) ह २६ प्रकारे साधू अभिग्रह धारण करते हैं

२ क्षेत्रसे भिक्षाचारिके ८ भेद—१ संपूर्ण पेटीकी जैसे गोचरी रे (चार खुणके चार घरसे) २ अर्ध पेटीकी तरह गोचरी करे दो खूणेके दो घरसे)३ गोमुत्रकी तरह गोचरी करे (एक घर इधर का दूसरा उधरका तीसरा इधरका यों) ४ पंतगिया गोचरी छूटे २ घरसे आहार लेव ५ अभ्यंत्र संखावृत गोचरि —पहिली नीचेका फिर ऊपरका फिर नीचेका यों घरका आहार ले) ६ बाह्य संखावृत गोच

री (पहिली उपरका फिर नीचेका घरका आहार ले) ७ जाते हुए आहार ले पीछे आते हुए न ले ८ आते हुए आहार ले जाते हुए न ले, यह भी अभिग्रह धारण करते है

३ कालसे भिक्षाचारीके अनेक भेद — १ पहिले पहेरका ला या तीसरे पहेरमें खाय २ दूसरे पहेरका लाया चौथे पेहरमें खाय ३ दूसरे पेहरेका तीसरेमे ४ पहले पेहेरका दूसरे पेहेर, यों आहार भोगवनेका अभिग्रह करे

४ भावसे भिक्षाचारीके अनेक भेद —सर्व वस्तु जुदी २ लाय और भेली करके खाय, इच्छित वस्तुका त्याग करे,इत्यादि

८ " रसपरित्याग, ' जिभ्याकोस्वाद लगे, बल बदे, ऐसी व स्तुका त्याग करे [छोडे,]सो ' रसपरित्याग ' तप [रसाणी सो रोगा णी] रसपरित्यागके १४ भेद —१निव्वितिए (दूध दही घी तेल मि ठाइ ये पाच विगयको छोड)२ ' पणिएपर परिचए ' (चार विगय त था उपरसे विगय लेना छोडे) ३ ' आयमसित्थभोए ' (चावलादिक का ओसावणमें का कण लेवे) ४ 'अरसआहारे' (रस रहित मसाले रहित आहार लेवे) ५ 'विरस आहारे ' (जूना धान सीजा हुवा ले वे) ६ 'अतआहारे ' [वटला चीणे प्रमुख उवाले (वाकले) लेवे] ७ ' पत आहारे ' (ठंडा वासी आहार लेवे) ८ ' लुह आहारे ' (लु खावा आहार ले)९ 'तुच्छ आहारे '(नीसार तुच्छ आहार लेवे) १० ' अरस ' ११ 'वीरस ' १२ 'अंत' १३ ' प्रांत ' १४ ' लुख' आहार क रके संयमका निरवाह करे

५' काया क्लेश तप ' स्ववशमें होकर ज्ञान तप करके अपनी आ त्माको क्लेश [दु ख] देव सो कायक्लेश तप काया क्लेश तप के अनेक भेद —१ ' ठाणठितिय '—कायुत्सर्ग करके ऊभा रहे २ 'ठणाइये'

काउत्सर्ग विन ऊभा रहे ३ 'ऊकडासणीये'—दाइ गोढके वीचमें सिर [माथा] रखकर काउमग करे ४ पडिमा ठाइये' — वारे प्रतिमा साधूकी धारण करे सो १ एक मास तक एक * दात आहारकी और एक दात पाणीकी २ दो मास तक दो दात आहारकी और दो दात पाणीकी, यों वदते २ सातमी प्रतिमामें सात महिने तक सात २ दात आहार पाणीकी लेवे ८ मी सात दिन चोविहार एकांतर उपवास करे, दिनको सुर्यकी आतापना † लेवे, रातको कपडे रहित रहे, तीन प्रकारके आसन करे १ चारही पहेर रात्रीमें चित्ता (सुल्टा) सोवे, २ या एक पसवाडे सोवे, ३ या काउसग करके बेठा रहे,, देवता मनुष्य तिर्यंचके ऊपसर्ग सहे ९ मी सात अहो रात्री चौवीहार एकातर ऊप वास करे, दिनको सूर्यकी आतापना ले, रातको वस्त्र रहित तीन प्रका रके आसन करे १ 'दहासन'(ऊभारहे) २ 'लंगडासन' (पगकी एडी और चोटी धरतीको लगा कवानकी तरह नमा हुवा रहे) ३ 'ऊकडु आसन' [दोइ गोडे विच सिर धरके रहे) तीन प्रकारके उपसर्ग सहे १० मी सात दिन एकातर चोवीहार उपवास करे, दिनको सुर्यकी आ तापना लेवे, रात्रीको वस्त्र रहित तीन आसन करे, गोदु आसन [गाय गेणेको बेठ वेसे बेठे रहे] विरासन वेत्रासन' पर बेठ वेत्रासन [खुरसी] नि काल लेवे वेसाही बेठ रहे] 'अवखूजासण' सिर नीचे पग उपर रखे ११ मी बेला करके, बेलेके दिन ग्रामके बाहिर आठ पहरका काउसग करे, तीन उपसर्ग सहे १२ मी पडिमा, अठम (तेला) करके तेलेके

---

* आहार साधूका वसी यक पातरेमे एक यक्त पडे (एक खास लका दाणा या आस्ती) उसको एक दात आहार कहते हैं दो पस पडे सो दो दात कहते हैं और पाणीकी धार ग्वाडेस नहीं होय यहां तक एक दात

† सूयका आताप सहन करे सो आतापना

दिन महाकाल स्मशानमें काउसग करे एक पुद्गल पर द्रष्टी रक्खे देवता म
नुष्य तिर्यंच के परिसह होवे, जो चलायमान होवे तो उन्माद पावे
(वावला होवे) दीर्घ कालका रोग उपजे, केवलीपरूप्या धर्मसे भ्रष्ट
होवे, और निश्चल रहे तो अवधी, मन पेर्यव, केवल ज्ञानकी प्राप्ति
होवे और भी लोच करना, ग्रामानुग्राम फिरना, जाण के ठंड ताप
सहना, लाज नही रखणे, इत्यादि कष्ठ सहन करे सो काया क्लेश तप

६ ' पडिसलिहणा, ' शरीरको आश्रवके कामसे रोके सो प्रतिस
लिनता प्रतिसालिनता तपके ४ भेद १ इंद्री पडिसलिहणाके पांच भेद १
श्रोतेंद्री पाडिसलिहणा—कानसे राग द्वेप पैदा होवे ऐसा शब्द सुणना
नहीं, और जो सुनाजाय तो राग द्वेप न करे २ चक्षुइद्री पडि०—आंखसे
रागद्वेप पैदा होवे ऐसा रुप देखना नहीं, जो देखा जाय तो रागदेष
करना नहीं ३ घ्राणेंद्री प०—नाकसे रागद्वेप पैदा होवे ऐसी गंध लेना
नहीं, जो आजाय तो राग द्वेप करना नहीं, ४ रसेंद्री प०—जबानसे
राग द्वेप पैदा होय ऐसा खानानहीं, रागद्वेप पैदा होयतो निषेधना
५ स्पर्शेन्द्री प०—राग द्वेप पैदा होय ऐसी वस्तु भोगमें लेना नहीं,
जो आजाय तो राग द्वेप करना नहीं

(२) कपाय पडिसलेहणाके ४ भेद — १क्रोधको क्षमा से २
मानको विनयसे ३ कपटको सरलतासे और ४ लोभको संतोषसे जी
ते —पराजय करे इन उपायसे चार ही 'कषाय' को जीत उसका ना
म " कपाय प्रती संलेहणा "

३ योग प्रतिसलेहणा—दूसरेसे जुडेसो जोग ओर जोग ती
न प्रकारके १ मन योग, २ वचन योग ३ काया योग १ मन चार
प्रकारका — १ सत्य मन योग (सच्चा विचार) २ असत्य मन योग

खोटा विचार) ३ मिश्र मन योग (सच्चा खोटा दोनों मेला) ४ व्यवहार मन योग (सच्च भी नहीं झूट भी नहीं)
ऐसे ही वचनके४प्रकार समझना इनमें असत्य और मिश्र वर्जक सत्य॰
१ 'दीवा जले गाम आया' इत्यादी वचन झूटे भी नहीं सचे भी नहीं

(१) सत्यभाषा के १० भेद—१ 'जनपद सत्य'–सो देश बदलनेस बोली पलटे, जैसे –पाणी को कोइ नीर कहे, कोइ तोय, उदक, पिच वगैरा कहे सो सत्य ऐसे सब भाषा सत्य जाणना २ 'समत सत्य'–सो एकही वस्तुके अनेक गुणोंसे अनेक नाम पडे; जैसे–साधू मुनी, श्रमण, ऋषि सब सत्य ३ 'स्थापना सत्य'–सो किसी वस्तुका बहुत जने मिल नाम स्थापन किया; जैसे– पैसा, रूपा, मोहर, दोर टांक, वगैरा ४ 'नाम सत्य'–सो स्वजनादिनाम स्थापन किया; जैसे–कुलदीपन, लक्ष्मी, वगैरा ५ रूप सत्य'–सो गुण विन रूप धरा, जैसे भेष मात्र से साधू ब्राम्हण वगैरा कहे ६ 'प्रतीत सत्य'–सो एककी आपेक्षा म दूसरेका पहचाने, जैसे श्रीमत से दारिद्री रात्रीसे दिन वगैरा ७ 'व्यवहार सत्य'–सो लोग बोले जैसा बोले जैसे–जले तेल बत्ती, और कहे दीया जले, गाम आया, घर चुवे वगैरा ८ 'भाव सत्य'–जो विशेष देखे सो ही कहे जैसे बुगले मे पांचही रग होकर भी कहे श्वेत है तोता हरा वगैरा ९ योग सत्य'–कृतव्यसे नाम पडे सो कहे जैसे लिखनेसे लहीया, सोवनकार, वगैरा और १ औपम सत्य—सो सामान्य को विशेष, विशेष को सामान्य ओपमा देवे, जैसे नगर देवलोक भया, घृत क पूर जैसा वगैरा यह १ तरह बोले सो सत्य वचन

(२) असत्य भाषा के १ भेद—१ 'क्रोध असत्य'–सो क्रोधके वस हो पिता पुत्रसे कहे तू मेरा नहीं वगैरा २ मान असत्य अभिमान में आ झूटी परदोम्या करे वगैरा ३ 'माया असत्य' दगा कपट कर इन्द्रजाल रचे वगैरा ४ लोभ असत्य 'लालच के वस बपारि आदि झूट बोले ५ 'प्रेम असत्य'–प्रेमके वस हो स्त्री आदि आगे झूट बोले ६ 'द्वेष असत्य'–द्वेषमे आके खोटा आल चढावे वगैरा ७ 'भय अ सत्य–मरणादि भयसे चोर नहीं झूट बोले ८ 'हास असत्य हं

सी मस्करी वस ख्यालमें झूट बोले ९ 'आख्यायिक असत्य'—शास्त्रा नादिमे पाखंडीका फूल और रज का गज बनावे १०' उपघात असत्य' संशय में आ साहूकार कोभी चोर कहे परोक्ष क्रोधादि १० दुर्गुणों के वसहो बोले सो सब असत्य वच नहीं जाणना

(३) मिश्र भाषाके १ भेद— १ उत्पन्न मिश्र—आज दश जन्मे २ विगत मिश्र—आज दश मरे ३ उभय विगत मिश्र —आज दश जन्मे और दश मरे [परंतु कमी जियादा निकल जाते है] ४ जीव मिश्र कीडेका ढगला देख कहे सब जीव है, परंतु निर्जीव भी होंगे ५ अजीव मिश्र— बहुत मरे देख कहे सब मरगये ६ जीवा जीव मिश्र-उपर कहे दोनो शब्द कहे ७ अनंत मिश्र —प्रत्येक विनाशपतिको अनंत कह वाले कहे ८ परित मिश्र अनत कायको प्रत्येक कहे ९ अद्धा (काल) मिश्र—सन्ध्या समय को रात्री कहे और १० अद्धा मिश्र तीन पहर को दृ पहर कहे यह १० सची और झूटी मेली एसी मिश्र भाषा

(४) व्यवहार भाषा के १२ भेद— १ 'अमन्त्रणी'—है देव इत्यादी नामसे बोलायेसा [परन्तु अमुक जीवका नाम नहीं रखा हुवा है] २ आज्ञापनी —तुम यह करो, ३ याचनी —अमुक वस्तु मुझे देवो ४ पृच्छनी —प्रश्न पूछे यह कैसे हुवा ? ५ प्रज्ञापनी'—पापी को कहे यह दुःखी होगा ६ 'प्रत्याख्यानी'—यह काम में नहीं करूंगा ७ इच्छानु लोमा' प्रश्नका उत्तर दे इच्छा हो सो करो ८ 'अनभी गृहीता'—अभिग्रह किये विन (अर्थ समझे विन) कहे तेरी इच्छा ९ 'अभि गृहिता'— अर्थ समझके या बहुत कामोंसे घबरा कर कहे अब क्या करूं ? १० 'संशय करणी'—सदेहयुक्त वचन जैसे किसीने मंगाया सैंधव लावो तब विचारे कि—सैंधव नाम घोडा वस्त्र, पुरुष और लूण इन चार पदार्थोंका है अब क्या ले जावु ? ११ 'व्याकृत' खुले अर्थवालिकी—यह इसका पिताही है १२ अव्याकृत —छिपे अर्थवाली जैसे बचेको डराने कहे हाउ पकड लेजायगा, परंतु हाउ

ल्हणा कहना

३ काया योग प्रति सलेहणा—काया योगके सात भेद १ दारिके [हाड मांसका बना हुवा शरीर] २ उदारिक मिश्र [उदारि ारीर पुरा नहीं बांधा वहां तक दूसरे शरीका मिश्र पणा रहे ३ वैक्रिय एक रूपक अनक रुप बनावे) ४ वैक्रिय मिश्र (वैक्रिय पुरा नहीं ाधा वहांतक)५ आहारिके १४ पूर्वक धारीमुनी को लब्धीसे होवे ६ ाहारिक मिश्र (आहारिक निपजाती बक्तपावे) ७ कारमाण (एक ती छोड दूसरी गतीमें जीव जाय तब बलाउ मुजब साथ रहे) इनमें । जितने जोग अपनको मिले होय, उसे अधर्म मार्गसे रोक धर्म कार्य । प्रवर्तावे, काछेवे की तरह इंद्री वस करके रखे

४ ' विचित सयणासण सेवणय ' १ वाडीमें (वेला उत्पन्न होवे सो)२ चिमें[चारही तर्फ कोट होवे सो]३उद्यान(एक जातिके वृक्ष होय उस) ४देवस्थान (यक्षा दिकके मदिर) में, ५ पाणीकी परब (पोह) में, ६ य[धर्मशाळा] में,७लोहर प्रमुखकीशाळामें ८बनियेकी दुकानमें ९ ुकारकी हवेलीमें, १० उपाश्रय [धर्म स्थान] में, ११ श्रावककी

ंसे कहेसो मालम नहीं

१ भाषाके ४२ भेद इस्मे से असत्य और मिश्रके २ भेद छोड सत्य ोर व्यवहारके १२ भेद प्रयोजन पडे निर्वद्य प्रवर्तावे सो वचन ाग प्रति सलेहना कहना

१ मनुष्य तिर्यचका २ नर्क देवता तथा चक्रवर्ती आदि उत्तम पुरुष ीधत मुनी तथा वायू कायके होता है ३ चवदे पूर्वके पढे हुये मु ोको तपके प्रभावसे आहारिक लब्धी उत्पन्न होती है जिससे मुनी कि ी प्रकारका सदेह उत्पन्न हुये सरीरमेंसे आत्म प्रदेशका एक हाथ भरका ुतला निकलकर जहां केवल ज्ञानी होवे वहांसे तुर्त क्षिणा मात्रमें उ ार मंगा लेते है देखीये आगेके मुनीकी साक्षी

पोशधशालामें १२ धानादिकके कोठारमें, १३ मनुष्योंकी सभामें १४ पर्वतकी गुफामें, १५ राज सभामें, १६ छत्रीमें १७ स्मशानमें, १८ वृक्षके नीचे, यह ठिकाण साधको रात्री निर्गमन करनेके हैं, परंतु वहां जो स्त्री पशु [गायादि,] पडंग [नपुंसक] रहता होय तो मुनी रह सके नहीं- यह ६ प्रकारके बाह्य तप हुवे

"अभ्यंतर तप के ६ भेद"

गाथा पायच्छित्त विणउ, वयावच्चं तहेव सझाउ।
झाणं च विउसग्गो, एसो अभ्यंतरो तवो ॥

७ ' पायछित्त ' (प्रायश्चित) पापसे निवारे सो प्रायश्चित

दोष (पाप) दश प्रकारसे लगता है-—१कदर्प (काम)के वश, २ प्रमाद के वस, ३ अजाणपणे, ४ क्षुधा के वस, ५ आपदा* [विपत] पडे, ६ किसी प्रकारकी संका पडे, ७ उन्मत्त (मद—नसे) से, ८ भय (डर) के वस, ९ द्वेषके वस, और १० किसी की परीक्षा करने को दोष लगावे

अवर्नीत दश प्रकारसे आलोवणा करता हैं- (गुरुके आगे पाप प्रकाशता है)१ क्रोध उपजाके, २ प्रायच्छित के भेद पुछकर, ३ दूसरेने देखे उतने ही दोष कहे, ४ छोटे दोष प्रकासे, बडे २ छिपावे [निंदा के डरसे] ५ मोटे २ कहे, छोटे न कहे (निर्माल्य समझ कर) ६ कुछ समझे कुछ न समझे ऐसा बोले, ७ लोकोंको सुणा कर कहे [प्रशंसा अर्थ,] ८ बहूत मनुष्य के सामने कहे, ९ जो प्रायश्चित देनेकी विधी न जाणे उनके आगे कहे, और १० सदोषी के आगे कहे ऐसा हतुम कि वो दोषी होनेसे कमी प्रायश्चित देवेगे

* आपदा चार प्रकार द्रव्यसे—आहार प्रमुख न मिले तो, क्षेत्रसे अटवीम पडे तो, कालसे-दुष्कालादिकमें, भावसे कोइक रोग उत्पन्न हुवे

विनीत [अच्छा] दश गुणका धणी होय सो आलोयणा करे १ पोते शुद्ध आत्माका खटकावाला, २ जातिवंत, ३ कुलवत, ४ विनयवंत, ५ ज्ञानवंत, ६ दंशणवत, ७ चारित्रवत, ८ क्षमावत वैराग्यवत • जितेंद्री, और १० जिसको पापका पस्तावा होय सो

दश गुणका धणी प्रायश्चित दे सके—१ शुद्ध आचारी, २ व्यहार शुद्ध, ३ प्रायश्चित की विधी के जाण, ४ शुद्ध श्रद्धावंत, ५ लजा दुर कराके पूछे, ६ शुद्ध करने समर्थ होय, ७ गभीर (किसीके आगे पाप प्रकासे नही ऐसे) होवे, ८ दोपी के मुखसे दोप कबूल कराकर प्रायश्चित देवे, ९ विचक्षण [निघामें समझे]और १० प्रायश्चित लेनेवालेकी शक्ती के जाण होवे

दश प्रकारका प्रायश्चित —१ ' आलोयणा ' स्वत के लिये या आचार्य उपाध्याय स्थिवर वाल गल्यानी (रोगी) शिष्यादिकके लिये, वस्त्र, पात्र, ओपध, आहार पाणी, प्रमुख लेनेका स्थानकके बाहि जाय, और ले कर पीछा आवे, बिचमें जो समाचार हुये होय सो गुरुके आगे प्रकाशे उससे अजाणमें पाप लगा होय जिससे निवर्ते २ ' प्रतिक्रमण ' बोलनेमें, आहारमें, विहारमें, पडिलेहणामें, परिठेवणेमें, जो कोइ अजाणपणे दोप लगा होय, तो वो प्रतिक्रमण कर मिच्छामी दुष्कृत्य देनसे कमी होवे ३ ' तदुभये ' दूसरा प्रायश्चितका काम उपयाग सहित करे तो वो पाप ' गुरु आगे प्रकाश, के , मिच्छामी दुष्कृत्य ' देनेमें कमी होवे ४ ' विवेग ' अशुद्ध वस्तु आ गई तथा तीन गहर उप्रांत रह गई ऐसे अकल्पनीक वस्तु को परठोवणे (न्हाख देन) से पाप कमी होवे ५ ' विउसग्गे ' दुस्वपन प्रमुख पापका काउत्सर्ग करने मे कमी होवे ६ ' तवे ' पृथ्वीआदिक सचित पदार्थका संघटा करे तो अविल उपवासादिक तपमे शुद्धी होवे ७ ' छेद ' अपवाद

सेवन कर उसे पाच दिनादिकका छेद (चारित्रमेंसे दिन कमी किये जाव) ८ 'मूल' जो आकूटी (जाणके) हिंसा करे झूट बोले, चोरी करे, मैथुन सेवे, धातू पास रक्खे, रात्री भोजन करें, उसको दूसरी वक्त दिक्षा द कर छोटे साधूको वदना कराई जाय ९ ' अपावठप , जो क्रूर भावसे स्वआत्माका तथा पर आत्माको लकडी मुष्टीयादिक प्रहार करे, मुष्टादिक कर घात करे, गर्भ गाळे, उसके पास एसा कठिण तप करावे कि उसको उठने की शक्ती न रहे, फिर दिक्षा दे कर शुद्ध करे १० 'पारंचिय' प्रवचन उत्थापक, साध्वीका व्रत भंग करने वाला, उसे जिनकल्पी आदी की तरह भेष प्रवर्ताके, जघन्य ६ मास, मध्यम बारे मास उत्कृष्ट १२ वर्ष संभोग बाहिर रहकर, ग्रामाविकमें गुप्तपणे विचर, अनेक दुष्कर तप करे, फिर नवी दिक्षा दे कर संभोगमें लेवे इन दश प्रायश्चितमें से आठ तो अभी दिये जाते हैं, और पिछले दो प्रायश्चित देनेका इसकालमें अवसर नहीं है

८ 'विनय तप' अपनेसे वडे ज्ञानादिक गुणमें अधिक होवे, उनका सत्कार सन्मान करे सो विनय तप, विनयके सात भेद —१ ज्ञान विनय, २ दर्शन विनय, ३ चारित्र विनय, ४ मन विनय, ५ वचन वियन, ६ काया विनय, ७ लोग व्यवहार विनय

१ ज्ञान विनयके पाच भेद —१ मती ज्ञान उत्पातीयादिक * चार बुद्धिके धणीका, २ श्रुती ज्ञान निर्मल उपयोगवंत शास्त्रके जाणका ३ अवधी ज्ञान मर्यादा प्रमाणे क्षेत्रके रुपी पदार्थको देखे उनका, ४ मनपर्यव ज्ञान सन्नी के मनकी बात जाणे उनका, और ५ कवल ज्ञान—सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भावकी बात जाणे उनका, इन ५ का विनय करे

* १ उत्पातिया (नवी बात बनावे) २ (विनीया) विनय करते बुद्धि बढे,) ३ कम्मीया (ज्यों ज्यों काम करते जाय त्यों त्यों सुधारता जाय,) ४ प्रणामिया [ज्यों ज्यों वय (उमर) प्रणामे त्यों त्यों बुद्धी प्रणमे]

(२) दर्शन विनयके दो भेद – १ शुद्ध श्रद्धावतकी शुश्रूपा करे, वे पधारे तब सत्कार दे, आसन आमंत्रे, वंदना (गुणग्राम) नम स्कार करे, अपने पास उत्तम वस्तू होवे सो उनको समर्पण करे, यथा शक्ति यथा योग्य सेवाकरे २ दूसरा अनासातना (असातना नही करना) विनयके ४५ भेद –१ " अरिहंताणं अणवा सादणया "– श्री अरिहंत भगवंतकी असातना टाले, अर्थात असुक अरिहंतके ना म जपनेसे शांती होती है, और अमुकके नामसे उपद्रव दुश्मन द्रव्य कानाश हातो है, इत्यादि शब्दसे अरिहतकी अशातना होती हैं उससे बचे २ " अरिहंत पणत्तस्सम धम्मस अणच्चासादणया "–श्री अरिहंतके परुपे हुये निर्दोप धर्मकी भी आशातना नहीं करनी, अ र्थात जैन धर्म तो श्रेष्ठ हे परतु इसमें स्नान तिलक इत्यादि कुछ अव लंवन नहीसो ठीक नही है, इत्यादि शब्द कहनसे अरिहतके धर्म की अशातना होती है ३ आयरियाणें अ०'–श्री आचार्य' (गुरु) जी पंचाचारके पालनेवाल अर्थात् गुरुजी वय बुद्धीम कमी हावे तो भी वो तो सदा पुजनीक है ४ 'उवझायणे अणा० '–द्वादशा गी पाठी तथा वहुत शास्त्रके जाण संयमके गुण युक्त उपाध्याय जीकी ५ 'थेवराणं अ.०–दिक्षा वय और सूत्र इन ३ स्थेवर * सा धूकी, ६ 'कुलस अ०'–एक गूरुके बहुत शिष्य होवें उसे कुल कहते हैं उनकी ७ ' गणस 'एक समुदायके साधुको गण कहते हैं ८ 'संघ स अ'०–साधू, साध्वी ,श्रावक, श्राविका इन चारहीसंघकी ९ ' कि रियाणं अ'०–जिनकी ।जिनोक्त शुद्ध क्रिया होवे उनकी १० ' सं भोगीयस अ'०–जो एक मंडलपे बेठके आहार पाणी करनेवाले साधू

* स्थेवर तीन प्रकारके १ वीस वर्पके उपर दिक्षा हुइ होवे सो दिक्षा स्थेवर २ साठ वर्पके ऊपर उम्मर हुइ होवेसो वय स्थेवर ३ ठाणअ गसमवायंगके जाण होवे सो सूत्र स्थेवर

हे उनकी ११ मति ज्ञानीकी, १२ श्रुति ज्ञानी की, १३ अवधि ज्ञा
नीकी १४ मन पर्यव ज्ञानीकी, १५ केवल ज्ञानीकी, इन १५ की अशा
तना नहीं करना इन पन्नरेकी बहुत प्रेमसे भक्ती करनी यह ३०
और इन पन्नरेही के गुग ग्राम करने यह ४५ विनयके भेद हुवे

(३) चरित्र विनय चार गतीसे तारे सो चरित्र जिसके
५ भेद—१ 'सामायिक चरित्र' (सम—आय—इक) सम भावका
लाभ होवे उसे सामायिक चारित्र कहना, सामायिक चारित्रवत मुनी
त्रिविध २ सर्वथा प्रकारे सावद्य (जिससे दूसरेको दु ख होवे ऐसे) जो
ग (मन वचन काया प्रवताने) के त्याग करे, जावजीव, तक २
'छेदोपस्थानी चारित्र' (छेद—दोप—स्थापन) सामायिक चारित्र लिये
पीछे जघन्य ७ मे दिन, मध्यम ४ मास, उत्कृष्ट ६ मासमें छेद (पंच
महाव्रत) स्थापन किये जावे [ये रिवाज पहिले छल्ले तीर्थंकर के
वारमें होता है] ३ 'परिहार विशुद्ध चारित्र,' नव वरसकी वय
(उमर) वाले नव जाणे साथ दिक्षा ले, नव पूर्व संपूर्ण और दशमे
पूर्वके तीसरी आयर वत्थू पढे, फिर गुरुकी आज्ञासे परिहार विशुद्ध
चारित्र ग्रहण कर, चार जणे तप करे, चार जणे व्यावच करे, एक व्या
ख्यान वाचे, यों छे महिन पूरे होवे तब, तपस्या करने वाले वयावच
करे, वयावचवाले तप करे, और व्याख्यानवाले व्याख्यान वाचे यों छ
महिने पूरे होवे तब व्याख्यान वांचनेवाले § तप करे और आठ
जणे मिलकर वयावच करे यों अठारह महिनेका परिहार विशुद्ध चा
रित्र कहा (तीन शुभ लेश्या तेजु, पद्म, शुक्ल रख
४ 'सुक्ष्म सपराय' सुक्ष्म (थाडासा) सपराय संज्वलके लोभ रूप स
प्रायिक क्रिया रह) यह चारित्र फक्त दशमे गूण स्थानकवर्ति जीवके

§ परिहार विशुद्ध चारित्रधरपाल उष्णकालमें उपास बेला तेला, करे,
सीतकालमें बेला तेला चोला और चौमासमें, तेला, चोला पचोला करे

अतर मुहूर्त मात्र रहता है ५ 'यथाख्यात चारित्र' जैसा श्री वीत रागदेवने शास्त्रमें साधूका आचार कहा है वैसाही मूल गुण उत्तर गुणमें दोष रहित शुद्ध पाले इस चारित्रके धणीको अतर मुहूर्तमें केवल ज्ञान प्राप्त होता है इन पांचही चारित्र वालेका विनय करे सो चारित्र विनय

(४) मन विनय मनसे नम्रता कोमलता रखे इसके दो भेद —१प्रशस्त (अच्छा) २ अप्रशस्त (खोटा) सावद्य कर्कश, कठोर, छेद, भेद, परितापकारी मनको वर्जकर निर्दोष मन प्रवतावे

(५) वचन विनय—मनकी तरह अप्रशस्त (खोटा) वचन वर्जकर, प्रशस्त (अच्छा) वचन वाले

(६) काया विनयके दो भेद – १ प्रशस्त २ अप्रशस्त इन एकेक के सात २ भेद १गमना गमन, २ खडा रहना, ३ बैठना ४ सोना, ५उलघना, ६ पलघना (पीछा फिरना,) और ७ सर्व इन्द्रियों के काम अयत्नासे निवार के यत्ना युक्त प्रवर्तावे यों ७×२=१४ भेद काया विनयके

(७) लोक व्यवहार विनय के सात भेद —१ गुरुकी आज्ञामें चले. २ गुणाधिक स्वधर्मीकी आज्ञामें चले ३स्वधर्मीका कार्यकरे. ४ उपकारीका उपकार माने ५ आर्त (चिंता) उपसमावे (मिटावे) ६ देशकाल उचित प्रवर्ते ७ सर्व कार्यमें सदा विचक्षणपणे, निष्कपटपणे, सर्वको सुहाता प्रवर्ते

(८) 'वैयावच तप' अर्थात् सेवा भक्ती करनाउस्के १० भेद §

§ इसकालमें अरिहंत नहीं है, इस लिये वैयावच (सेवा भक्तिमें) आरिहंतजीका नाम नहीं और पहली विनय (गुणाग्राम) में नाम लिया है

१ आचार्य* २ उपाध्य ३ नवि दिक्षित शिष्य ४ गिल्याणी (रोगी) ५ तपस्वी ६ स्थैवर ७ स्वधर्मी ८ कुल (गुरु भाई] ९ गण (संप्रदायके साधू) १० सिंघ (४ तीर्थ) इन दशको आहार, वस्त्र, औषध, जो वस्तु चाहिये सो ला देवे, हाथ पांव चांपे, इत्यादि वेयावच करे

(९) 'सझाय तप' —शास्त्राभ्यास करे सो सझाय इस्के ५ भेद (१) 'वायणा' गीतार्थ (वहु सूत्री) के पास शास्त्रका वाचना लेवे (सूत्र पढे) जो सूत्र वाचे उसमें शंका पडे तो, तथा विशेष अर्थके लिये (२) 'पडि पूछणा' विनय युक्त पूछके संदेह टाले, परतू पूछते किसी प्रकारकी शर्म (लज्जा) न रखते जहा तक बुद्धी पाहुचे वहा तक भिन्न २ खुलासा कर, जो पूछकर संदेह रहित ज्ञान हुवा है उसे [३] 'परियट्टणा' वारवार फेरता रहे, जिससे वो पक्का होवे, तर्क उपजे, ओर वखतपर तुर्त याद आवे, फेरना तो पोपट विद्याकी तरह उसको न फेरे परतु [४] 'अणुपेहा' उपयोग सहित जो कहे उसके अर्थपर उपयोग लगाता रहे ज्ञानमें उपयोग लगानेसही महा निर्जरा होती है, ओर बुद्धीकी वृद्धी होती है, इन चार कामसे जो ज्ञान पक्का निसंदेह हो गया है, उसे (५) 'धम्म कहा' वहुत मनुष्योकी सपदामे सर्वके हृदयमें ठसे, अवस्य गुण पेदा होवे ऐसा उपदेश देवे, मिथ्यात्वका उत्थापन करे, सत्य सनातन दया धर्मको स्थापे

(१०) 'झाण' अंत करणेमे विचारणा होती है उसे ध्यान कहते है ध्यान ४ है, जिसमें दो अशुभ ओर दो शुभ १ आर्त ध्यान

* आचार्य पांच तरह के होते हैं—१ प्रव्रज्या दिक्षादेने वाले, २ हउदित शिक्षा देने वाले, देश-सूत्र पढाने वाले, ४ समुदेश खुलासा बताने वाले, और ५ वाचना वाले

२ रौद्र ध्यान [ये अशुभ] ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान [ये शुभ]

१ आर्त ध्यानवालेके चार विचार[१–२]मनोज्ञ [अच्छे] शब्द रूप गध रस स्पर्श इनका संयोग और खराब शब्दादिक्का वियोग चिंतवे (३)ज्वरादिक रोगका नाश ओर [४] काम भोग सदा बने रहो ऐसा चिंतवे इस आर्तध्यान वाले के चार लक्षण (१) आक्रंद (अरडाट शब्दसे रुदन) करे (२)शोग [चिंता] करे [३]आश्रुपात करे [४] विलापत (त्राहि त्राहि) करे इन चार लक्षणोंसे आर्तध्यानवंत जाणा जाता है

२ , रुद्रध्यान 'वाले के चार विचार,(१)हिंसा[२]झूट ३चोरी[४] और दूसरेका दु ख दनेका चिंतवे (२)इसके चार लक्षण—१हिंसादिक चिंतवे २ इसका वारवार विचार करे ३अज्ञान पणेम अकृत्यमें 'धर्म सज्ञा स्थापे, काम शास्त्र सीखे ४ मरे वहा तक पापका पश्चाताप न करे

३ धर्म ध्यानवालेके चार विचार —आणाविजय—श्री वीतराग की आज्ञाका चिंतवन करे, के प्रभूने आरम परिग्रह खोटा कहा, और तूं तो इसमें लुब्ध हो रहा है, तो तेरी गती केसी होगी? अब तो इसका त्याग न कर २ ' आवाय विजय 'यह प्राणी अनादि कालसे राग द्वेष रुप वंधस वधा रहा है, जिससे चतुर्गतिमें अनंत परिताप सहन किया अब तो इस फासको तोडकर सुखी हो ३ ' विवाग विजय ' मेंने शुभाशुभ कर्म किये, जिससे सुख दु ख रुप कडूवा ओर मीठा दो तरहका पाक तेयार हुवा है, सो अब भोगवते हर्ष सोग क्यों करता है?सपूर्ण भुगतेगा तव मोक्ष मिलेगा ४ ' सठाण विजय ' वीतरा राग देवने तीन दीवे उपराउपरी रखे होवे ऐसा संपूर्ण लोकका सठाण कहा है उसम नीचेके उल्टे दीवेमें सात नर्क, इसकी मंदीमें त्रीछा लोक, वीचके दीवेतक पाचमा देवलोक, उपरके दीवेमें २१ देवलोक

मुक्तसिला, और उपर सिद्ध भगवंत विराजत हैं

"धर्म ध्यानीके चार लक्षण"—१ 'आणा रुई', वीतरागने शास्त्रमें जो शुभ क्रिया फरमाइ उसे अंगिकार करनेकी रुची (इच्छा) पैदा होवे २ 'निसग रुइ' जीव, अजीव, पुन्य, पाप, आश्रव, संवर निर्जरा, बंध, मोक्ष, इन पदार्थोंको सत्य जाणे ३ 'उपदेश रुइ' गुरु आदिक सत्य उपदेश कर उसे सुननेकी रुची जगे ४ 'सुत्त रुइ' द्वादशांगी वाणी वांचते सुणनेकी इच्छा जगे

इस "धर्मध्यानी" के ४ आलबन (आधार)—१ वायणा २ पूछणा ३ परियट्टणा ४ अणुपेहा (इनका अर्थ पहिले हो चुका)

धर्म ध्यानीकी चार अनुपेक्षा (विचारना)—१ 'आणिचाणुपेहा' इस जगतके पुद्गलिक (पूर-गले-नाश) पदार्थपर प्रीति रखता है, परंतु येही संपत्ती तेरेको विपत्तिरुप होगी, क्योंकि तेरे पुन्य खुट गये तो तेरे देखते इसका विनाश हो जायगा और जो तेरा आयुष्य खुट गया तो, तेरे बापदादे छोड गये, तैसे तूभी महमदगिजनीकी तरह रोता हुवा चला जायगा इसे सुखके लिये भली करी सो प्रत्यक्ष दुखरुप हो जायगी इसलिय जो पुन्यसे संपत पाइ है उसपर ममत्व नहीं करेगा तो परम सुखकी प्राप्ती होगी

२ 'असरणाणुपेहा' हे प्राणी! इस जगतमें तेरेको सरण (आधार) भूत कोई नहीं है तूं स्वजनको आधार भूत जाणता है, परन्तु वो तो तेरे पास धन है, और तेरा शरीर ससक्त है, तब तक तेरी सहाय करेंगे पुन्य खुटनेसे तेरे स्वजन ही तेरे दुश्मन बन जायेंगे, और अनेक कटु वचनसे, शारीरिक मानसिक पीडासे तुझे सतायगे, ऐसा जाण एक भी जिनेश्वर भगवानका सरण ग्रहण कर, कि वो तेरेको भवोभवमें आधार भूत हो सुखी बनावें

' एगताणु पेहा ' हे प्राणी ! तू अकेला आया, अकेला है, और अकेला ही जायगा यह शरीर ही तेरा नहीं, तर साथ आया नहीं और ले जायगा भी नहीं, तो दूसरेका तो क्या कहना ? देख तू तो नित्य अक्षय अविनासी है, और तेरा संबंध अनित्य क्षणभंगुर है,इस क्षणभगुर पदार्थोंके संगसे ही तने अनंत विटम्बना भुगती, तो भी तेरी इनके उपर से हाल तक ममत्व उतरी नहीं धिक्कार है रे मूर्ख के गुरुको तेरेको तू मकरीकी तरह जाल पसार कर अपने हाथसे फसाता है, और फिर रोता है और उनकोई मेरा २ कहता है वहोर अफलमद ! अरे अब तो जरा आख उघाड, मोहपुंध उतार, और तेरा ज्ञान दर्शन चारित्र-रुप श्री रत्न है जिनको पेहचान और उनके साथमें प्रीतिकर

४ ' ससाराणु पेहा ' हे प्राणी ! यह चतुर्गीतरुप ससारमें तेने अनेक घोर दु ख सहे, नर्कमें क्षेत्र वेदना और यमोंकी मार, तिर्यचमें छेदन भेदन तर्जन ताडन, मनुष्यमें दु ख दारिद्रता, और देवतामे अ-भोगीपणा वज्र प्रहार, अब इन दु खमे मुक्त होनेका मोका (अवसर) मिला है, सो हे प्यार प्राणी ! तू तह मन तह चित्तसे सर्व आरंभ परि-ग्रहका त्याग कर, अंतरिक प्रकृतीयोंका दमन कर, और भगवंतकी आज्ञाका यथा तथ्य आराधन कर की जिसस तूजे शिघ्र परम पद प्राप्त होय यह धर्म ध्यानके ४ × ४=१६ सोलह भेद हुये

४ शुक्लध्यानके—चार प्रकार १ ' पुहत्त वीयकेस वीयारी ' अ-नंत द्रव्य रुप यह जगत् है, इसमें से एक ही द्रव्यका स्वरुप ग्रहणकर, उसकी उत्पत्ति क्षय और ध्रुवताके जूदे २ पर्याको, अर्थसे शब्दमें और शब्दसे अर्थमें विचार करे २ 'एगत्तवीयकेअवीयारी' उत्तपति आदि पर्यायके जितने द्रव्य है उनका एकत्र पणा, अभेद पणा, आकाशादि प्रदेशका अवलम्ब पणेका विचार करे ३ 'सुहुमीक्रिय अपडवाइ' सर्व

कियामें सुक्षम क्रिया इरिया वही है की जो फक्त समय मात्र ही रहती है वोही उनके रही हैं ऐसे तेरमे गुणस्थानावलबी श्री केवली तीर्थ कर भगवान उनके समय २ शूभ प्रणामकी वृद्धि होती है ४ 'समुच्छिन्न क्रिया अनीयट्टी' सर्व क्रियाका क्षय कर, सेलेसी (पर्वत की पे रे स्थिरी भूत प्रणामके धणी) अयोगी केवली पाच लघु अक्षर [अ इ उ ऋ ऌ] के उच्चार प्रमाणे कालान्तरे निराबाध अचल अक्षय मोक्ष स्थानको प्राप्त होवे

'सुक्लध्यानके' चार लक्षण १ 'विवेगा' जेसे तिलसे तेल १ घसे घी, मट्टीसे धातु, जुदी है, तैसे हि शरीरसे जिव जुदा है, तिलादि कमे रहा हुवा पदार्थ घाणीआदिक द्रव्यके जोगसे निज रुपको प्राप्त होता है, तैसे ही जीव भी ज्ञानादिक क संजोगस माक्षका प्राप्त होता है २ विउसग्ग' इस जगत्में दो प्रकारके संयोग है १बाह्य जिसके भी दो भेद है, एक पूर्वात् सो माता पितादि स्वजन का और दूसरा पश्चात् सो श्वसुर सासु पत्नी प्रमुख का२ अभ्यतर (अंतरिक) क्रोधादि कषायकी प्रणती इन दोनो सयोगका त्याग कर सदा रागद्वेष रहित रहे ३, अवहे' अनुकुल (मन गमता स्त्रीयादिके हाव भाव कटाक्षका) और प्रतिकुल (देव दानव मानवकी करी हुई वेदना उपसर्ग) इन दोनों प्रकारके परिसहको समभाव सहे इन्द्रकी अप्सरा या विकाल दैत्य भी इन्को ध्यानसे चलाने समर्थ नहीं ४ 'असमोह' शब्द रुप रस गंध स्पर्शादिक मनोज्ञ तथा अमनोज्ञ किसी भी पदार्थसे रागद्वेष पैदा न करे

सुक्लध्यानीके चार अवलबन —'खती' क्षमासे सदा सम रहे कोइ कुच्छ भी कहो सार पदार्थको ग्रहण कर असारका त्यागन करे २ 'मुत्ती' किसी वस्तू पर ममत्व भाव नहीं करे ३ 'अज्जव' आर्य माउ बाह्य अभ्यंतर एकसी वृत्ति रखे ४ 'मद्दव' निरभिमानी स

द नम्र रहे

–सुक्लध्यानीकी चार 'अनुप्रेक्षा –' (वीचारना) १ "अवाया-णुपेहा" हिंसा, झुठ, चोरी, मैथून परिग्रह यह पांच ही आश्रव अनर्थ-के मूल जीवको दु ख दाता है, इन्के त्यागसे ही सुखी होते हैं २ "असुमाणुपेहा" इस जगतमें जितने पुद्गल मय द्रव्य पदार्थ हैं, वे सर्व अशुभ हैं, इन्का सग छूटनसे ही सुसी होते हैं ३ 'अनत विची याणुपेहा' इस जीव ने अनत कालस अनत पुद्गल परावर्तन कर नंत भवोंकी श्रेणीका पुंज कर आया है, इस्के छूटत ही सुखी होते ४ 'विपरिमाणुपेहा' जैसे सन्ध्या (फूली हुई संध्या) इंद्र धनुष्य, त्रर्पर म्हा मेघ बिंदू, अति सुन्दर दिखते २ क्षिणमें नहींमे हो जाते , तैसे ही इस जगतमें स्री पुरुपका जोडा, वस्त्र भूपणका चमत्कार पीत्र सतातिका संयाग, देखते २ क्षिण भरमें नष्ट हो जाता है, फिर सकी क्या इच्छा करना ? ऐसे विचार से सुखी हावे यह सुक्लध्यान के १६ भेद हुवे

यह चार ध्यानके ४८ भेद जिसमसे १६ हेय (तजने योग) ३२ उपादेय (अदरने याग)*

१२ 'वीउसग्ग' त्यागने योग वस्तुका त्याग करे सो विउसग्ग विउसग के दो भेद —१ द्रव्य विउसग्ग और २ भाव विउसग्ग १ द्रव्य विउसग्ग के ४ भेद, १ 'शरीर विउसग्ग' अर्थात् शरीरसे ममत्व त्याग, विभुपा सार संभाल नहीं वरे २ 'गण विउसग्ग' जो साधू ज्ञानवत क्षमावंत जितेंद्रीय अवसरक जाण, धीर वीर द्रढ श्रद्धावंत इत्यादि गुणके धणी होय सो गुरुकी आज्ञामे सभोग [संप्रदाय] का

* ध्यान के विशेष विस्तार के लिये मरा बनाया हुवा 'ध्यान कल्पतरु' नामक पुस्तक का अवश्यही पठन कीजीय

त्याग करके एकल विहारी होवे ३ ' उवही विउसग्ग ' वस्त्र, पा
कमी कर ४ ' भत्तपाण विउसग्ग ' नोकारसी, पोरसी, पूरिमडल (
पोरसी इत्यादि कालतक या द्रव्यादिकका प्रमाण कर सो भत्तपा
विउसग्ग

२ ' भाव विउसग्ग ' के तीन भेद १ ' कषाय विउसग ' स
क्रोधादि चार ही कषायका स्वरुप कहा है उसे कमी करे २ ' ससार
उसग्ग ' सो चार गतीमें जाने के सोलह कारण को छोडे ' नर्कमें ज
नेके ४ कारण . १ महा आरंभ (सदा छे ही कायका अती घमशान)
, महा परिग्रह ' (अत्यंत लोभ) मद्य [दारु] और मासका भक्षण
पंचेंद्री प्राणीकी घात ' तिर्यंचगती के ४ कारण ' —१ दगा कपट
विश्वासघात ३ झूट बोलना और ४ खोटे तोले मापे रखणा ' मनुष्य
गतीमें जाने के ४ कारण ' १ विनयवंत २ भद्रिक प्रणामी ३ दयाल
४ गुणानुरागी देवगतीमें जाने के चार कारण —१सराग सयम (स
धु हो कर शिष्य शरीरपर प्रेम रखे) २ संयमा संयम [श्रावक पणा]
३ बाल तपस्वी [पचाग्नी आदिक तापने वाले] ४ अकाम निर्जरा
(परपस शुभ भावसे दुःख सहन करनवाल) इन १६ कर्मके त्याग
कर, मोक्ष जानेक ४ काम—ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तपको अंगिकार क
रके विचरे सो ' ससार विउसग्ग '

' कम्म विउसग्ग ' के ८ भेद हैं (१) ज्ञानावरणीय, (२) द
र्शनावरणीय (३) वेदनीय, (४) मोहनीय, (५) आयुष्यकर्म
(६) नाम कर्म, (७) गोत्रकर्म, (८) अतराय कर्म इन ८ की

* अष्ट कर्म के बन्धन करने की रीती आचार रत्नाकर ग्रन्थ में यों लिखा है

१ ज्ञाना वर्णी कर्म ७ प्रकारे बा ते १ ज्ञान पण क आशिर्वादा करे २ क दृषकी परम्पा कर ३ ज्ञान के गिरण मझाय कर ४ गु ज्ञान

कर्म बन्ध के कारण को त्याग करे सो कर्म

की या खोटे गापनादिकी परसस्या करे, ५ सिद्धांतका मूल उत्थापे ६ पर के दोपण प्रकाशे ७ और मिथ्या शास्त्र का उपदेश करे तो ज्ञान वर्णी कर्म बन्धे

२ दर्शना वर्णी कर्म १० प्रकारे बान्धे १-२-३-४ कु देव-कु गुरु (हीना चारी) कु-धर्म-कु शास्त्र-की परसंस्या करे ५ धर्म निमित्त हिंसा करे, ६ मिथ्या बुद्धि रखे ७ चिंता अधिक करे, ८ सम्यक्त्व में दोष लगावे ९मिथ्या आचार धारण करे, १० जाणेक अन्याइ का रक्षण करे, तो दर्शना वर्णी कर्म बान्धे

३ सातवे देनी १४ प्रकारे बान्धे-१ दया २दान,३क्षम, ४ सत्य सत्य५ सील ६ इन्द्री दमन ७ संयम ८ ज्ञान, ९ भक्ती, १० मंदन, ११ शास्त्र विचार १२ सहीष १३ अनुकम्पा १४ सत्य वचन, यह १४ काम करन से साता वेदनिय कर्म बन्धे, और ५ प्रकारे असाता वदनी बान्धे १-४ जीवोका घात-छेद भेद परीताप करे, ५ चुगली करे ६ परको दुख देवे ७ त्रास देवे; ८ अकांद करावे ९ स्वतः दुख शोच करे १० द्रोह करे पारपण आलेख ११ असत्य बोले १२ वैर विरोध करे १३ युद्ध झगडे करावे १४ क्रोध मान उपजावे १५ पर निंदा करे तो असाता वदनी बान्धे

४ मोहनी कर्म ६ प्रकारे बान्धे १ अर्हतकी निंदा करे अर्हतके वचन शास्त्र की निंदा करे ३ जैन धर्म की निंदा करे, ४ सत्गुरुकी निंदा करे, ५ उत्सासूत्र रूपे ६ कु मार्ग प्रकाशे सो मोहणी कम बान्धे

५ देवता का आयुष्य १० तरह बान्धे १ अल्प कषाय २ निर्मळ सम्यक्त्व ३ शुद्ध श्रावक धर्म पाले ४ सुयू का और गत वस्तुका शोक न करे, ५ धर्मात्मा की भक्ती कर ६ दयादान की सदा वृद्धी करे, ७ जैन धर्म का रागी ८ बालतपस्वी ९ अकाम निर्जराकरे और १० शुद्ध साधु धर्म पाले सो देवे होवे मनुष्यका आयुष्य ९ प्रकारे बान्धे -१ देव गुरुकी भक्ती करे जीवाकी दया करे ३ शास्त्र पढे पढावे ४न्यायसे लक्ष्मी उपार्जे ५ दृढमन प्रणामसे दान देवे ६ निंदा नहीं करे ७ पर उपकार करे ८ किसीकोपीडा न उपजावे ९ आरंभ न करे, १ सरल प्रणाम से सदा वरते, सो मनुष्य मरके पीछा मनुष्य होवे

तिर्यंच गतिका आयुष्य १० प्रकारे बान्धे १ शीलभग करे, २ दगा ३ करे ३ मिथ्या कर्म समाचरे ४ कु उपदेश करे ५ तोल माप खोटे रखे ६ दगाबाजी कर ७ झूट बोले ८ झुटी साक्षी भरे ९ अच्छी वस्तु में बूरी वस्तु मिलावे १० वस्तुका रूप पलट के बेचे ११ पशुका रूप पलट कर बेचे १२ खराब वस्तु पे झोल चढाके बेचे १३ क्लेश करे १४ निंदा करे, १५ चोरी करे १६ अयोग्य काम करे, १७ १० कृष्णनील

विउसग्ग

कपोत लेश्या वाला और आर्तध्यान ध्याव सो तिर्यंच होवे नर्क का आयुष्य २० प्रकारे बान्धे १ अति लोभ करे, २ महमछर बहुत करे ३ क्रोध बहुत करे ४ मिथ्यात्व कर्म समाचरे ५ पंचेंद्री का बध करे ६ उपर असत्य बोले ७ चोरी करे, ८ बिभचार सेवे ९ काम भोगमें अति रक्त होवे १० मर्म स्थान भेद ११ पच इन्द्री के विषय में लुब्ध होवे १२ सधकी घात करे १३ जिन वचन उत्थापे १४ तिर्थंकर के मार्ग की प्रतिष्ट घटावे १५ मदिरापान करे, १६ मांस भक्षण करे १७ रात्री भोजन करे १८ कंद मुलादि अभक्ष भक्षणकरे १९ रौद्र ध्यान ध्यावे कृष्णादि तीन लेस्या विशेष ध्यावे तो नर्क में जावे

६ नाम कर्म उच नाम ३ प्रकारे बान्धे १ श्री जैन धर्म में रक्त होवे २ दया दान व्रत होवे ३ मुक्ती की अभिलाषा वाला होवे, तो शुभ होवे और नीच नाम कर्म ८ प्रकारे बान्धे १ मिथ्या उपदेश करे २ कुमार्ग ग्रहण करे ३ आपदान देवे नहीं दूसरे को देने देवे नहीं ४ कठोर असत्य वचन बोले ५ महाआरंभ करे ६ पर निंदा करे ७ सब जीवों का द्रोह करे ८ मच्छर प्रणाम धारण करे तो नीच होवे

७ गोत्र कर्म १६ प्रकारे उचे गोत्र बाधे १ सम्यक्त्ववंत २ विनयवंत ३ शीलवंत ४ अव्रत आग्राही ५ यथाशक्ति दान करे ६ सरल स्वभावी७-१०तिर्थंकर-आचार्य-उपाध्याय-साधूकी-बहुश्रुती-जिनागम की- भक्ती करे, ११ साधु की वैयावच करे, १२ उत्तम का दास बना रहे १३ अनेकांत जैन धर्म आदरे १४ उभय टंक प्रतिक्रमण करे १५ अनर्थ पापसे बचे १६ सायम्मी की वच्छलता करे तो तिर्थंकरादि उच गोत्र पावे और पांच प्रकार नीच गोत्र बान्धे १ क्रोधादि तिव्र कषाय धारे २ अन्यके गुण ढांके ३ निंदा करे ४ बाहादी पूगर्भेश्वर ४ झुटी साक्षी भरे ५ जीवा हिंसादि महा पाप करे तो चांडादि नीच गोत्र पावे

८ अंतराय कर्म १८ प्रकारे बान्धे १ करुणा दया रहित २ दीन जीवा का अंतराय देवे ३ असमर्थ पर कोप करे ४ अनेकांति गुरूकी वंदना निषेध करे, ५ जिन मार्ग निषेध करे ६ सिद्धांत का अर्थ उत्थापे ७ जैन धर्म कोई धारे तो विघन करे ८ ज्ञानी गुणी की हीलना अशातनाकरे ९ गुन्हाविना बन्ध अंतराय देवे १० दान न देवे दूसरे को देते निषेध करे ११धर्म कार्य में विघन करे १२ धर्म कथा की हांसी करे, १३ विभ्रम उपदेश करे १४ असत्य बोले, १५ अदत्त लेवे १६ दान लाभ भोग उपभोग की अंतराय देवे १७ गुणीका गुण छिपावे १८ अन्यका दोष प्रकाशे, तो इच्छित वस्तु नहीं पावे दुःख दारिद्री होवे ऐसा जाण मनुष्य कर्म के बन्धन से आत्मा बचावे सो कर्म विउसग्ग

इस मुजब छे प्रकारे बाह्य (प्रगट) और छे प्रकारे अभ्यतर (गुप्त)यों बारे प्रकारे तपका अधिकार पूर्ण हुवा यह निर्जरा के ३५४ भेद हुवे *

(५) वीर्याचार

सुमार्गमें बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रमका व्यय करे सो वीर्याचार श्री आचार्य भगवत क्षिण निकम्मे रहे नहीं, सदा ज्ञान ध्यान तप संयम सदुपदेश इनकी वृद्धि करे, उसमें आत्माको रमावे और दूसरेको उपदश करे, की अहो भव्य जीवो ? तुमने परवश पर्णे अनेक कष्ट भूक प्यास सीत ताप मारताड सहन करी, परन्तु तुमारी कुछ गर्ज सरी नहीं, उल्टा इस भवमें और पर भवमें महा दु खी हुवे, जैसा तेने अनते भव भ्रमणमें कष्ट सहन किया है, उसके अनंतमे भाग जो तू धर्म मार्गमें सह स्ववश काम भोगस निर्वृते, संयम तपमें साहसिक पणा धारण करे, अनेक प्रकारकी दुष्कर तपस्या करे, ग्रामानुग्राम उग्र विहार करे, अनेक आर्यानार्यके परिसह किये हुये समभाव सहन करे, निरतर धर्मारामर्मे मन रमावे, आतरिक प्रकृतीयोंका वमन करे, तो तेरा कल्याण हो जाय, भव भ्रमण मिट जाय, शिघ्र शाश्वत सुख की प्राप्ती, सदा आत्मानद परमानदमें आत्मा रमाणे वाला होवे इत्यादि उपदेश करके अन्य जनोंको धर्म मार्गमें बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम फोडावे सो पाचमा वीर्याचार जाणना

और श्री भगवती जी सूत्रमें फरमाया मुजब पंच विवहार श्री आचार्यजी महाराज आप साचवे और दूसरे पास सचावे सो कहते हैं

*ज्ञानके ८, दर्शन के ८ चारित्र के ८, और अतिचार से निर्वृतमा १२ प्रकार तप करना ये आचार्यजी के ३६ गुण भी गिने जाते हैं इन ३९ कामोमें ३ प्रकारे वीर्य फोडेसो आचार्य भगवत

" पंच विवहार पर्णते तअहा आगमो, सुय, आणा धारणा, जीए" अर्थात् १ ' अगमो ' श्री तिर्थंकर, केवल, ज्ञानी, चउदे पूर्व ज्ञान के, धारक, जावत दशपूर्व धारी प्रवृतत होवें, उनकी आज्ञामें प्रवृते सो अ गम्य विवहार २ ' सुय ' आचारगादिक सूत्रोंमें कहे मुजब प्रवृत सो सूत्र विवहार ३ ' आणा ' जिसवक्त जो आचार्य महाराज प्रवृतते हो वे उनकी आज्ञामें चले अथवा आचार्य दुर देशावर में विचरते होव वह पत्र द्वारा शुद्धार्थी दी कर जो आज्ञा देव उसमें प्रवृते ४ ' धारणा ' पूर्व परंपरा से चलना आता आचार गोचरादिकमें प्रवृत तथा गुरूवा दिकसे धारणा कर रखी होव उस मुजब प्रायाश्चित देव सो धारणा विवहर और ५ ' जीए ' द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, मे फरक पड़ा देख या संवयणादिक की हीणता देख आचार्य और चतुर्विध सिंघ मिल कर जो निर्वद्य मयादे बाधे उस मुजब प्रवृत (चले) सा जीत विवहार इन पंच प्रकार के विवहार मुजब प्रवृतता हुवा भगवंतकी आज्ञाका उलंघन नहीं करता है *

' पंच ममइत्ति गूत्तो ' पांच सुमती और तीन गुप्तीका बयान चारित्राचारमें होगया

' पचिंदीय समरणो ' अर्थात् आचार्य भगवंत पांच ईंद्री वसमें रक्खे

१ श्रोतेंद्री—(कान) की तीन विषय १ जीव शब्द [जीव बोले सो] २ अजीव शब्द (भींतादि पडने से होवे सो) ३ मिश्र

---

* इन पांच विवारमें कहे, मुजबजो इस वक्त का सर्व सिंघ (चार्‍ही तीर्थ) प्रवृती करे तो मैं निश्चय करके कहता हुं कि यह पूर्ण पवित्र धर्म विश्व विख्यात और बौधधर्मके जैसा सर्वमान्य बन जावे सब आदिक जो जो मुख्य लक्षणो की खामी इस वक्त हुइ है, वो सर्व दूर हो कर पूर्ण प्रकाशीत बन जावे. अपभी चेतीए'

शब्द (वजित्र अजीव बजानेवाला जीव दानो मिलकर शब्द हावे सा मिश्र शब्द)इसके बार विकार—पहिले तीन कहे उसको दो गुणा करना शुभ सो जैसे पुण्यवान प्राणी बोल तो अच्छा लगे, और पापी बोले तों खोटा लगें, यह जीव रुपये पडे तो उसका शब्द अच्छा लगे, भींत पडनेका शब्द खाटा लगे, ये अजीव ओत्सवका बार्जित्र अच्छा लगे और मृत्यूका और संग्रामका बार्जित्र खराब लगे, यह मिश्र यों तीनके दो भेद करने से छे हुये, इन छे पर कभी राग (प्रेम) और कभी द्वेष उत्पन्न होता है, अच्छे शब्द परभी किसी समय द्वेष आजाता है, जैसे लग्न होता है तब कहे की 'राम नाम सत्य है ! !' तो खोटा लग, और कभी खोटा शब्द अच्छा लगता है, जैस सासरेमें गालीयों यों छे के दो गुणे करनेसे श्रोतेंद्रीके बारे विकार हुये -इस इन्द्रीके वसमें पडकर, मृग, सर्प, इत्यादि पशू मारे जात हैं, ऐसा जाण कभी राग द्वेष उत्पन्न हावे ऐसा शब्द सुणना नहीं, और कभी कानमें आजाय तो उसपर राग द्वेश करना नहीं, क्यों कि राग द्वेप ही कर्मोंके बंध का मुख्य कारण है इस भवमें या आग के जन्ममें बहिरा पणा, या कानके अनेक रोग प्राप्त होते हैं, और वशमें करता है, वो श्रोतेंद्री की निरोगता पाता है, और अनुक्रम मोक्षमें जाता है.

चक्षु इंद्री (आँख) की पांच विषय —१ काला २ नीला (हरा) ३ लाल ४ पीला ५ श्वेत * इसके साठ विकार पांच वर्णकी वस्तुमें कितनीक सचित [सजीव] कितनीक अचित [निर्जीव] और कितनीक मिश्र [सचित आचित दोनो भेली] होती है, यों ५×३=१५ हुवे यह १५ कभी शुभ होती है, और कभी अशुभ भी हाती है, यों १५

* मूलमें तो वर्ण ५ है परन्तु इनकी मीलावटसे अनेक रंग हो जाते हैं

× २=३० हुवे इन तीस पर कभी राग, और द्वेप पैदा होता है, यों ३०× २ =६० चक्षु इंद्री के विकार हुवे इस इंद्री के वसमें पडकर पतंगिया दीवेमें झंपापात ले मरण पाता है ऐसा जाण राग द्वेप उत्पन्न होवे ऐसा रुप देखना नहीं, और जो देखनेमें आवे तो राग द्वेप करना नहीं, जो राग द्वेप करता है वो इस भव परभवमें चक्षु इंद्रीकी हीणता पाता है, और वसमें करता है सो चक्षु इंद्री निरोगी पाकर अनूक्रमे-मोक्ष पाता है

३ घ्राणेंद्री (नाक) इसकी दो विषय १ सुर्भीगन्ध, (सुगध) और २ दुर्भीगध, (दुर्गंध) इसके बारह विकार यह दो सचित, दो आचित, और दो मिश्र यों ६ इन छे पर राग और छे पर द्वेप, यों१२विकार हुये इस इंद्रीके वशमें पडकर भ्रमर फुलमें मारा जाता है ऐसा जाण राग द्वेप पैदा होवे ऐसा गध सुघना नहीं, औरभी गध आ जावे तो रागद्वेप करणा नहीं, क्यों कि रागद्वेप करनसे घ्राणेंद्रीकी हीणता पाता है, और वसमें करनेसे घ्राणेंद्री निरोगी पाकर, अनुक्मे मोक्ष पाता है

४ रसेंद्री (जीभ) की पाच विषय १ खट्टा २ मीठा ३ तीखा ४ कडूवा ५ कसायला और साठ विकार यह पांच सचित ५ अचित और५मिश्र योंतीन गुणे करणसे १५ हुये, ये १५ शुभ और अशुभ यों ३० हुये, यहतीस पर राग और ३० पर द्वेपयों६० विकार हुये इसके वशमें पडकर मच्छी मारी जाती है, ऐसा जाण किसी रसपर राग, द्वेप करना नहीं क्यों कि रागद्वेप मे रसेंद्रीकी हीणता प्राप्त होती है, और वसमे करनेमे निरोगीपणा पाकर अनुक्रमे मोक्ष प्राप्त होती है यह रसना इंद्री वसमें करनेसे पांच ही इंद्री सहजमें वस होजाती है कहा है, " एक धापी तो चार भूखी, और एक भूखीको चार धापी " जो रसना इंद्री (पेट) भरा होवे तो, कानको रागरागणी सुणनेकी आखोसे

रुप देखनेकी, नाकमे सुगध लेनकी, और शरीरसे भोग भोगवनेकी इच्छा उत्पन्न होती है और जो रसनेंद्री सुखी होवे तो कुछ भी इच्छा होती नहीं है, उल्टा चार ही कामोंका तिरस्कार होता है, शात आत्मा रहती है इस लिये आतम वशमे करनेका एक यह ही उपाय है, कि वस्तु खानेका नियम रखना

५ स्पर्शेन्द्री (शरीर) इसकी आठ विषय १ हलका, २ भार्ग ३ ठडा, ४ उष्ण (गरम), ५ लुखा ६ चोपडा, ७ सुहाला, और ८ खरखरा इसके ९६ विकार आठ सचित८अचित और८मिश्र यों ८ × ३ = २४ हुये यह शूभ अशूभ यों २४ × २=४८ हुवे और इन पर रागद्वेष या ४८×२=९६ विषय हुये इस इंद्रीके वसमें पडकर हाथी का गजकी हथणीके लिये खड्डमें पड मारा जाता है इस लिये रागद्वेप उत्पन्न होवे तो रागद्वेप करना नहीं क्यों कि रागद्वेपसे अनेक कष्ट भोगवने पडते हे ओर वसमें करनेसे शाश्वत मोक्ष सुख मिलते हे

श्लोक — कुरग मतग पतग भृंग तीन हता पचभीरेव पच।
एक प्रमादीश्च कथं न हन्यते सेवते पंच भीरेव पच॥

माधकत पुराण अध्या ६ श्लोक ११

मृग पतगिया, भृमर, मच्छी, और हाथी, यह पाच ही एकेक इंद्रीके वसमे पडकर मार गये तो पाचों इंद्रीके वसमें पडे हैं उनके क्या हाल ऐसा जाण आचार्य पाच इंद्रीको वशमें करते हे

" नव विह बभचेर गुत्तीधरो " [जैसे कृषीकार लोग खेतीके स्व रक्षण के लिये खतके चार ही तरफ कॉटे की वाड लगाते हे ऐसे ही] ब्रह्मचारी अपन ब्रह्मचार्यव्रत रुप फलित क्षत्रकी रक्षा के लिये नववत रुप वाड ओर दशमा विरागरुप पक्का कोट वनाते हैं

आलउत्थी जणाइन्नो, थीकाहा मणोरमा,

'सयवो चेव नारीण,' 'तासि विय द्दरिसणं' ११
कुइय रुइय गीय, हसिय 'सुत्तासिणाणिय,
पाणीयं भत्त पाणं च, अइसायं पाण भोयणं १२
गत्त भूसण मिठच, काम भोगाय दुज्जयं,
नरसत्त गवे सिस्स, विसंताल उडं जहा १३

श्री उत्तराध्ययन सूत्र-अध्याय १६

१ 'आलो इत्थी जाणाइनो'= जिस मकानमें देवता मनुष्य तिर्यंच की स्त्री या नपुंसक रहता होवे वाहां रहना नहीं जो रहे तो जैसे जिस मकानमें बिल्ली रहती होय वांहां ऊंदर रहे तो उसका विनाश होनेका सभव है, तेमे ही ब्रह्मचर्य भंग होनेका संभव रहता है श्री दश वैकालिक सूत्रमें कहा है कि —

हत्थं पाय पडि छिन्नं, कान नास विकप्पियं ।
अवि वास सयं नारि, बंभयारि वीवज्जए. ॥

सौ वर्षकी वृद्धा स्त्री जिसके, हांत पांव कान नाक कांटे होय, ऐसी स्त्री भी जिस मकानमें रहती होय वहां रहना नहीं ता दूसरी स्त्री रहती होय वहां रहना तो कैसे कल्पे ?

२ "त्थी काहा मणोरमा" स्त्रीके शृंगार चातुर्य, रुप लावण्य' हाव भाव इत्यादिककी कथा करनी नहीं, जो कर तो जैसे लिम्बू आदी खट्टे पदार्थका नाम लेनेसे मुहमें पाणी छुटता है तैसे स्त्री के सौंदर्यादि का वर्णन करनेसे विकार उत्पन्न होता है.

३ "संथवो चेव नारिण" स्त्रीकी संगत करनी नहीं स्त्री पुरुष एक आसनपर बेठ नहीं, जिस जगह स्त्री बैठी होय वहा दो घडी तक बैठना नहीं, जो बैठेतो जैसे भूरे कोलका स्पर्श कणिक (गहूंके) आटेको होनेसे वंधे नहीं, तथा चावलोंके पास कच्चे नारियल रहनेसे

नारियलमें कीडे पड जाते हैं, तैसेही ब्रम्हचर्यका विनाश होता है

४ "तासिंदिय दरिसीण=" स्त्रीके अगोपाग विकार द्रष्टीसे देख ना नहीं दशवेकालिकसूत्रमें कहा है कि 'मक्खर पवदट्ठण' जैसे सूर्यके सन्मुख वहुत दखनेमे नेत्रका विनाश होता है, तैसे ब्रम्हचर्यका नाश होता है

५ "कुड्ये रुइय गीय हसिय="टट्टी, भीत, पणच (चिक) प दडे के अतरमें स्त्री पुरुष के क्रीडा के शब्द गीत (गान) हाँस्य, विरह, रुदन, इत्यादिकको सुणे नहीं, जो सुणाता होए तो वहां रहे नहीं, जो सुण तो जैसे घन गर्जारव मे मयूरको हर्ष होता है तथा—

[श्लोक] 'अग्नी कुड समा नारी, घृत कुभ सम नर, ।
स्त्री स्थान सारथिताना, कस्य निश्चलित मन ॥

जैसे अग्नी कुंड समीप घृतका घडा रहनेमे पिगलता है, तैसे ब्रह्मचारीका मन चालित होता है,

६ "मुत्तामिणाणिय" पुर्व ससारमें स्त्री के साथ काम क्रीडा करि होय उसे याद करे नहीं जो याद करे तो जैसे * कठियारे विष मिश्रित छाछ पीकर मर गये, वैसे ब्रम्हचर्यका विनाश होय

७ "पाणीयं भत्त पाणच" नित्य (हमेशा) सरस कामोत्तेजक आहार करे नहीं जो करे तो जैसे सनीपात के रोगीको दूध सकर मृत्यु देनेवाली होती है, तैसे उसका ब्रम्हचर्यका विनाश होता है

* एक बुड्ढी स्त्रीने मही (छाछ) गतको पीलोइ (पणाइ) उसके यहा कोइ परदेशी उतरेथे वो छाछ पीकर विदेश गये छे महिनेके बाद पीछे वो आये तब बुड्ढी खुशी हो कहने लगी भाइ' मैं तुमको जीते देख खुशी हुइ! परदेशी बोले क्या माजी! बुड्ढी बोली तुमारे गये पीछे छाछमें मरा सर्प निकला था इतना सुणते ही उनको जेहर चढा और परदेशी मर गये यों विषय याद करने से ब्रम्हचर्यका भग होता है

८ " आइ सायं पाण भोयण "— मर्यादा उप्रात (अणभावता) आहार नहीं करे, विशेष खानेसे अजीर्णादि रोग उत्पन्न होता है, प्रमाद बढता है, विचार शक्ति नष्ठ होती है, इत्यादि बहुत दुर्गुण है; इसलिये मितहारि होणा चाहिये सेर भर पके, ऐसी हंडीमें सवासेर खीचडी पकाने से वो फूट जाय तैसे ब्रम्हचर्य नष्ट होवे

९ " गत्त भुषण मिठं च "— शरीरकी शोभा विभूषा नहीं करे स्नान नहीं करे,नख केश नहीं सभारे इत्यादि स्त्रीके चित्तको आकर्षण करनेवाला रूप नहीं बनावे जो श्रृगार करे तो जैसे रंकके हाथमें चिंतामणी रत्न नहीं टिकता है, तैसे उसका ब्रम्हचर्य न रहे, कहा है कि

गाथा विभूसा धातियं भीखू, कम्म बधइ चिक्कणं ।
ससार सायरे घोर, जेणं पडइ दुरुत्तरे ॥*

अर्थ—शरीरकी विभूषा करनेवाला साधु नम्र कर्म बाध ससारमें ऐसा पडता है कि पीछा निकलना मुशकिल होय और भी कहा है -

' सील स्नान सदा शुची ' सीलवत (ब्रह्मचारी) स्नान विन किये ही सदा पवित्र है, जैसा ब्रह्मचर्यसे यह शरीर पवित्र होता है, तैसा कुछ स्नान करनेसे नहीं हाता है, क्यो कि हाड, मास, रक्त, वीर्य से, निपजा हुवा शरीर, पाणीसे कैसे पवित्र होवे ?' सदा पाय काय ' सदा काया अपवित्र है तथा ' सक ते मई नराणं वपूरपा, स्नान कथं शुद्धति ' मनुष्यका शरीर अपवित्रताका घर है, स्नानसे कैसे शुद्ध (पवित्र) होवे ? जो होता होय तो ' अपान सत वा धोत ' सो नक्क मुख अंदरसे धोकर एक कुरला दूसरे पर थूको तो वा नाराज क्यों

* श्लोक—सुम्म सेज्या सुम्म वस्त्र तांमूल स्नान मंजन,
वृत कष्ट सुगंधं ब्रह्मचर्यस्य दुषणं "
सुखासम सुक्ष्मपत्र, तबोल स्नान शृंगार, दांतण काष्ठसे सुगंध लेपन यह ब्रह्मचारीको दूषण कहे है

होवें ? उसे झूटा क्यों कहे ? और भी देखो, कासी खन्ड में कहा हैं

श्लोक — मृदो भार सहस्रेणं, जल कुम शतानि च।
न शुद्धति दुराचारे, स्नान तीर्थ शतैरपि ॥

हजारों भार मट्टी बदनको लगाकर, सेकडों घडे से पखालो, या सेंकडो वार तिर्थ स्नान करो, तो भी दूराचारी शुद्ध (पवित्र)न होवे और जास्तीं क्या कहे? ऐसा जाण बृह्मचारी स्नान न करे * स्नान करनेसे कर्मोंकी वृद्धी होती है और तेल कंगा दर्पण, मिष्ट भोजन, इत्यादि अनुक्रमे बहुत उपाधी लगकर, अखिर बृह्मचर्यव्रत नष्ट होजाता है यह नव वाड विशुद्ध ब्रह्मचर्य जो नहीं पाल्ते, वाडका भंग करते हैं, ' संकावा ' उनके मनमें संकल्प विकल्प होगा, कि ब्रह्मचर्य पालुं कि नहीं ? दूसरेको सका होगी कि यह साधू अमुक २ काम करता है सो ब्रह्मचर्य पालता है या नहीं ? ' कखवा ' विषय सेवने की वाछा करेगा ' वितिगिच्छावा ' मनमें ऐसा भाव आवे की इतने दिन ब्रम्हचर्य पालते हूये परन्तु कूछ फल तो द्रष्टी नहीं आया, तो वृथा कोन दु ख सहे ? ' भयंवा लाभिज्जा ' यों विचारते २ कभी व्रत भग कर देगा ' उमायवा पाउणीज्ज ' उन्माद (मस्ती) पैदा होगी और बहुत आभिलापा करनेसे ' दिहकलीयवा रोगायंकाहविज्जा ' दीघ (बहुत) काल रह ऐसा वात क्षय सुलादि रोग प्राप्त होय 'केवली पन्नताउ धम्माउ भंसेजा,

---

* जैसे किसी मकानमें बालक मिष्टा कर दे तो उस मकानका मालिक कुछ सब मकान नहीं धोता है, फक्त जितनी जमीन खराब हुइ होय उसे छीलकर साफ करता है तैसे साधूजी भी अशुची करके जित्ना सरीर मलीन हुवा होय उसे धोकर साफ करे

यहां सर्व अंग पखालनेकी मना है असझाइ (अशुची)पास होवें वहां तक तो साधू शास्त्रके शब्दोच्चार भी नहीं कर सकते है

अखिरे, केवलीपरुपे ब्रम्हचर्य सयम धर्मसे मृष्ट हो कर, अनत सागरों त
अनत दु खका भोगी होवे ऐसाजाण आचार्य भगवत नव वा
विशुद्ध ※ बृह्मचर्य व्रत पालते है

'चउविहे कसाय मुको' संसारका कस आकर कर्मोंका रस ज
सो कपाय के ४ भदे, क्रोध, मान, माया, और लोभ

१ क्रोध—क्रोधका स्थान कपाल यह प्रकृतियों को क्रुर बनात
है इसे शास्त्रमें चडाल कहा है जैसे चडाल निर्दय होता है तैसे क्र
धीके ह्रदयसे भी दया नष्ठ होजाती है क्रोधी क्रोधके आवर्शमे आक
माता, पिता, स्त्री, पुत्र, स्वामी, सेवक, इत्यादिको मारता है जो जास्ती
प्रजले तो आपघात भी करता है—इस क्रोधको शास्त्रमें 'ज्वाला' भी
कहते हैं, यह प्रगट होते क्षमा, सील, संतोप, तप ,संयमका नाश कर ब
ची हुइ मिथ्यारुप काली भस्म चेतन्यपरलगा देता है आप जल करफि
दुसरेको जलाती है क्रोधी मत वाल– नशा करने वाले की माफि
बे शुद्ध हो कर अपनी प्राणसे प्यारी वस्तुको नाश करते देर लगत
नहीं हैं और फिर पश्चाताप करता है ; जहर खानेसे प्राणी एक वक्त म

※ इसमा कोट सो मनोज्ञ (अच्छे) शब्द (गायन वाजिंत्र) रुप
धीयादिका नाटक) गंध (अत्तर फुलादि) रस (मिष्ट भोजन) स्पर्श (सुख
मजा) इन पांच वातोंसे सदा अलग रहे यह नव वाडमें नहीं है, इस
लिए टीपमें लिया है

When Passion enters at the fore gate, Wisdom goes out at thepostern
Fieldings Proverbs.

"जब अगले द्वारसे क्रोध प्रवेश करता है, तब पिछले द्वार से शा
णपण (अक्कल) भाग जाता है " —

Anger begins with folly and ends with repentance ,
Maun ler's Proverbs.

"क्रोध के आदिमें मुर्खाता है, और अतमें पश्चताप है " मो डर

रता है, और क्रोधसे अनत जन्म मरण करने पडते है क्रोधमें प्राणी अधा हो जाता है, अच्छा बुरा कूछ नहीं दिखता है क्रोधी कृतघ्नी- होता है, अथाग उपगारको क्षिण मात्र में भूल जाता है क्रोधमे कुरुप, सत्वहीन, अपयशी होता है किसके साथ मित्रता नहीं निभा सकता है जमी हुई बातको क्षिणमें विघाड देता है इत्यादि क्रोध के वहुत दुर्गुण जाणकर, कितने लोक इसे गुस्सा(गु—मिष्टा सा—जैंसा) कहते है ऐसा क्रोधको खराव जाण आचार्य महाराज कदापी सतप्त नहीं होते हैं, सदा शांत स्वरुपी बने रहते है

२ मान—मानका स्थान गरदनमें है यह प्रकृतियोंको क- रडी बनाता है, इससे विनय नष्ट होता है, विनय विन ज्ञान नहीं, ज्ञान विन जीवा जीवकी पहिचान नहीं, पहिचान विन कर्मसे वचना नहीं, और कर्मसे वचे विन मोक्ष नहीं है इसलिये मोक्षको अटका- नेवाला अभिमान ही है मान के आवेसमे चडा हुवा प्राणी धन कु- टुवको तृणवत् गिणता है मानीका सदा दुर्घ्यान रहता है मानके ठीकाणें क्रोध अवश्य पाता है मानी पाप प्रगट नहीं कर सक्ता है, इसलिये संयमी होकर भी गती विगाड देता हैं, मान आठ तरह से उत्पन्न होता है 'जाती लाभ कुले श्वर्यं वल रुप तप श्रुती' (१) जात (माताका पक्ष) का अभिमान कर कि मेरे नानेरे वाले ऐसे उत्तम हुये या मेरी माता महा सती हुइ है, या में ब्राम्हण हूं क्षत्री हूं, सेठ हू पटेल हूं, वगैरा २ कुल (पिताका पक्ष)का अभिमानकरे, के मेरे पिता दादा ऐसे नामांकित हुये, या मेरे गुरु धर्मात्मा पुज्य विद्वान हुये है (३) वल (पराक्रम) का अभिमान, में ऐसा महावली हू (४) लाभ—कमाइका या गोचरीयादिक में इच्छित वस्तु प्राप्त होनेकाअ भिमान करे कि में चाहता हूं सो ले आता हु (५) रुपका अभिमान,

में कैसा मनोहर —तजस्वीरुपका वरनेवाला हूं, (६) 'तप तपका
अभिमान मैंने वहो २तपस्या की है, उपवास बेला तो मेरे गिणती
भी नहीं हैं, (७) ' श्रुती ' बुद्धीका अभिमान करे, मैंने इतने वादी
का पराजय किया' ऐसे २ ग्रंथ बनाये, इतने सूत्र मेरे मुखाग्र हैं (८
" ऐश्वर्य "मालकीका, मेरे हूकममें इतने मनुष्य पशु हैं, या मेरे इतने
शिष्य है, में संप्रदायका पुज्य (मालिक) हू इत्यादि आठ प्रकारसे
अभिमान करना उत्तमको अयोग्य है, क्यों कि जो उत्तमता प्राप्त हुइ
है सो आत्माका सुधारा करनेके वासते, और उससे ही खराबा करले
ना यह कितनी नीचता? ऐसा जाण आचार्य भगवंत सदा
नम्र हो रहते हैं

३ —माया इसका स्थान पेटमें है यह प्रकृतियोंको निर्दय
वक्र बनाती है कपटसे तप, जप, संयम, यथा तथ्य फल देन वाला
नहीं होता है मायावी सदा दूसरेको फसानेके विचारोंमें रहता है स
दा दूसरेके छिद्र ताकता ही रहता है मायावीके मनमें सदा डर बन
रहता है, रखे मेरा कपट प्रगट हो जाय दगाबाज पुरुप मरके स्त्री
स्त्री मरके नपुंसक, और नपुंसक मरके एकेंद्रि आदि होता है- तीस प्रका
रे महा मोहनी कर्म बंधका कारण बताया है उसमें कहा है कि
ब्रम्हचारी नहीं ब्रम्हचारी नाम धरावे, बाल ब्रम्हचारी नहीं बाल ब्रम्ह
चारी नाम धरावे, तपस्वी नहीं तपस्वी नाम धरावे, बहु सुत्री (पंडित)
नहीं पंडित कहलावे, नोकर सेठका धन चूरावे, राजाकी, गूरूकी, सेठकी
घात (मृत्यू) चिंतवे, साधु, साध्वी, श्रावक, श्रावीका में फुट पाडावे, दे
वता नहीं आवे और देवता आया कहे, स्त्री भरतार आपसमें दगा करे,
इत्यादि दगाबाजी करनेसे ७० क्रोड क्रोड सागरोपम तक बोध बीज,
सम्यक्त्वकी प्राप्ती नहीं होती है, और भी दश वैकालिकमें कहा है—

गाथा "तव तणे वय तेणे, रुव तेणे य जे नरा ।
आयार भाव तेणय, कुव्वइ देवाकिव्विस "॥

दुर्वल शरीर देखकर कोई पूछ आप तपस्वी हो? तब कहे साधु सदा तपस्वी होत है, श्वेत केश देखकर कोई पूछे, आप स्थैवर हो ? तो कहे साधू सदा स्थैवर होत हैं रुपवत तजस्वी देख कर कोई पूछे अ मूक राजाने दिक्षा ली सुणी आप ही हो ? तब कहे साधू सब रिद्धी छोड दिक्षा लेते है भीतर अनाचार सेवन करे और उपर मलीन वस्त्रादि उत्कृष्ट क्रिया करे सो आचारका चोर नीच हो कर उत्तम जैसा रहे सो भावका चोर इत्यादि दगावाजी करनेवाले साधु मरके किल्मीपी देवता [देवतामें चडाल जैसे]होते है वहांसे मरकर वकरे होकर ब्या ब्यां करके गला कटाकर मरते है अनत नर्क तिर्यंच योनीमें परिभ्रमण करते हैं ऐसा मायाका फल जाण आचार्य भगवंत सदा सरल रहते है

४ 'लोभ' इसका स्थान रोम २ में है यह सर्व सद्गुणोंका नाश करता है लोभ फासमें वधे हुये प्राणी संसारमें शीत, ताप, भूख प्यास दड, मार, मार, ताड, अनक दु ख भोगवते हैं, गुलामी करते है, गरीबों का फसाते है, स्वजन कु व के विरोधी होते है पचेंद्रीयोंको मारडालते है, जाति विरुद्ध धर्म विरुद्ध काम करते है दगावाजी करते है इत्यादि अनेक अनर्योंसे धन मेला करते है, तो भी पेट नहीं भरता हैं, प्रभुने कहा है कि 'जाहा लाहो ताहा लोहो ' ज्यों ज्यों लाभ होवे त्यों त्यो तृष्णा जास्ती वढे, तृष्णाकी खाड किसीने पूरी नहीं और कोइ पूरेगा भी नहीं, ऐसा जाण आचार्य भगवंत लोभ करत नहीं हैं

इन कषाय के ५२०० भाग मो १ अनतान(अत नहीं आवे)बं

धीका चोक-१ क्रोधका स्वभाव पत्थर की तराड (कभी मिले नहीं) मानका स्वभाव पत्थरका स्थभ (कभी नमे नहीं) माया वासकी जड (गाठमें गाठ) लोभ किरमजी रेसमका रग (जलाडाले ता भी न जाय) इसकी स्थिति जावजीवकी इस कपायवाले को सम्यक्त्वकी प्राप्ती नहीं होती है और इस कपायमें मरे तो नर्कमें जावे २ अप्रत्याख्यानी (पच्चखान नहीं आवे) चोक (१) क्रोध धरती की तराड (पाणी पडने स मिले) (२) मान लकडकास्थभ (वहुत मेहनतसे नमे (३) माया मींढाका सींग (भीतर आटे) (४) लोभ गाडीका खंजर (खारसे जाय) यह बारह महीने रहे, इसको श्रावक के वृत आवे नहीं (जो पाले तो निरजरा रूप न प्रगमें, पुण्य फल लगे) और इस कपायमें मरे तो तिर्यञ्च गतीमें जाय ३ प्रत्याख्यानी [पच्चखाण है] (१) क्रोध वेलु (रेती) की लकीर (हवासे मिले) २ मान वेंतका स्थम (थम्भा) [थोडे प्रयत्नसे नमे] [३] माया चलते वेलका मात्रा [हवासे सूख जाय] [४] लोभ कीचडका रग [सूखने से उतर जाय] इनकी स्थिति चौमस्मी [चार महीने] की इनको सयम नहीं आवे और इस कपायमें मरकर मनुष्य गतीमें जावे, ४ संज्वल (थोडामा) का चोक (१) क्रोध पाणीकी लकीर (समुद्रमें भरतीअगनसे अतमें चिन्ह पडता हैं मो पीछी पनरमे दिनमें दूसरीभरती आवे तव मीट जाय) (२) मान—तृणका स्थम (हवासे नम जाय) माया,—वासकी छूंती (तुर्त सीधी होवे) [४] लोभ हलदीका रग [धूपमें उड जाय] इनकी स्थिती पक्खी (पन्नरे दिनकी) इसको केवल ज्ञान नही उपजे, और इस कपायमें मरे तो देवता होए यह चार कपायके सोलह भेद हुये, सो इन सोलह कामोंको १ जाणकर के कि यह काम खोटे है तो भी करे, २ अजाणमें [अज्ञानताने] करे ३ कुछ जाण

कुछ अजाण दोनोइसे करे ४ और मतलब तो न समजे परन्तु देखादेखी करे, तथा ५ अपने लिये करे, ६दूसरे [कुटम्बादिक] के लिये करे, ७ अपने और परके दोनोके लिये करे, ८ विनाकारण [स्वभाव से ही] करे, ९ उपयोग सहित करे, १० उपयोग रहित (देवादिकके योगसे) करे, ११ उपयोग सहित और रहित दोनो तरह करे १२ ओघ स ज्ञासे [देखा देख करे] यह १२ बोलको ४ कपायमे चौगुणे करनेसे १२×४=४८ हुवे और१६ उपर कहेहुवे मिलानेसे ४८+१६=६४हुवे इन चौसट कों चोवीस* दंडक और पचीसमा समुच्चये जीव यों पचीस गुणे करने से ६४×२५=१६००भांगे हुय

इन कपायके पुद्गलोंको जीव ६ प्रकारसे बांधता और ३ प्रकारसे खपाता है १ 'चूणे'—कपायके दलिये मेले करे २ 'अवचूणे'=मेले किये दलियेको जमावे ३ 'बांधे'—जमेहुवे दलियेका बंध करे ४ 'वेदे' —बांधे हुवे पुद्गलोंको आत्म प्रदेश और कर्म प्रदेश कर वेदे ५ 'उदेरे' ज्यों ज्यों कर्म वेदे त्यों त्यों उदेरणा होवे और ६ 'निर्जरे' कितनेक भव्य जीव तप और पश्चातापसे कपाय करके कर्म बांधे उसकी निरजरा करदेते (खपा देवे) हैं यह छे बोल अतित (गये) काल आश्री, ६ वर्तमान आश्री, और ६ अनागत (आवते) काल आश्री ६×३=१८भेद हुये यह अठारा नीजके जीवआश्री और १८ परके जीव आश्री ३६ हूये यह छत्तीस चोवीस दंडकपर ओर पचीसमें समुच्चय जीवपर यों ३६×२५ = ९००

*चोवीस दंडक सात नर्कका १, दश भवनपती के १०, पांच स्थावर के ५, ये १६और२० वीसवां तिर्यंच पचेंद्रीका, २१ वां मनुष्यका, २२ वाण व्यंतरका, २३ वां ज्योतिषीका, २४ वां विमानिकका, ये २४ दंडकका विस्तार पहिले दूसरे प्रकरणमें हुवा है '

इनको चार कपायसे चो गुणे करनेसे ९००×४=३६००हुये और पहि लेके १६०० दोनो मिलकर चारही कपायके ५२०० भांगे हुये क्रोध, मान, माया, लोभ, यह चडाल चौकडी बडी खराव है देखिये कितना जबर-इनका परिवार हैं

'चार कषायके गुण '

कोहं पिय पणा सइ,माण विणयनासेणं, ।
माया मित्ताणी नासेइ, लोहे सहु विणासणो, ॥

श्री दशवैकालिक सूत्र अ० ८

क्रोधसे प्रीतीका, मानसे विनयका, मायासे मित्रताका, और लोभसे सब सद्गुणोंका नाश होता है

इन चारहीके प्रतिकार (दवा) —

उवसमेण हणे कोहं, माण मद्दव जीणे, ।
माया उज्जू भावेण, लोह संतोषउ जीणे ॥

श्री दश वैकालिक सूत्र अ ८

उपसम (क्षमा) से क्रोध, मद्दव (विनय)से मान, अज्जू (सरलता)से माया, और संतोषसे लोभको जीते

यह पाच महाव्रत ,पाच आचार, पांच इंद्रीका निग्रह, पाच सुमती, तीन गुप्ती नव वाड विशुद्ध ब्रम्हचर्य, चार कपाक निग्रह, ये ३६ गूण आचार्य भगवतके हुये

छत्तीस गुण धारीको आचार्यपद प्राप्त होता हैं

१ ' जाइ संपन्ने ' जाती (माताका पक्ष) निर्मळ (कलंक रहित) २' कुल संपन्ने ' (पिताका पक्ष) निर्मल- ३ ' बल संपन्ने 'काल प्रमाणे उत्तम संघेण (पराक्रम) के धणी ४ ' रुप संपन्ने ' सम चतुर्मादी उत्तम सस्थान (शरीरका आकार) के धणी * ५ ' विणय

*' यत्राकृति स्तत्र गुणा, भवन्ति' अर्थात्–शरीरकी आकृती होती हैं घेसे ही गुण होते हैं

सपन्ने ' अती कोमलता–नम्रता वंत ६ ' नाण संपन्ने मती श्रुती आदि निर्मल ज्ञानवत पट्मतके जाण, ७ ' दशण संपन्ने ' शुद्ध श्रद्धावंत ८ ' चारित्र संपन्ने ' निर्मल चारित्रवत ९ ' लज्जा संपन्ने ' अपवाद (निंदा)से डरे १० ' लाघव संपन्ने , लाघव(हल्का पणा) दो प्रकारका (१)द्रव्ये तो उपधी (भंड उपगरण) अल्प (थोडी) रखे और (२) भावे कषाय कम करे [आचार्य भगवंत यह १० गुण सहित होते है) ११ ' उयंसी ' उपसर्ग उत्पन्न हुये धैर्य धरे, १२ ' तेयंसी ' महा तेजस्वी १३ ' वचंसी ' चतुराइमे वोले, किसीके छलमेंआवे नहीं १४ ' जसंसी ' यशवंत [आचार्य भगवंतमें यह चार वोल स्वभाविक पाते हें] १५ जीये कोहे १६ जिये माणे १७ जीये माये १८ जीये लोहे १९ जियेइन्दिय अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभ, और श्रोतादिक पांच इंद्रीरुप महा शत्रूओंको जीतते है, अपने तावे किये हैं २०जिये निंदा दूसरेकी निंदा करनेसे निर्वृत ते हैं " पापको निंदे परंतु पापीको नहीं " तथा निद्रा अल्प २१ जिये परिसह ' क्षुधादि परिसह उत्पन्न हुवे चालायमान न होवे २२ ' जीविय आस मरण भय विप्प मुका ' चिर (वहुत) काल जीनकी आस नहीं, और मरनेका डर नहीं २३ ' वय पाहाणे ' महाव्रतादि वृत करके प्रधान [श्रेष्ट] होवें २४ ' गुण पाहणे ' क्षांतिआदि गुण करके प्रधान होवें २५ ' कारण पहाणे ' क्रियावंतके ७० गुण कर के प्रधान होवें २६ ' चरण पहाणे ' चारित्रके ७० गुण करके प्रधा न होवें २७ ' निग्गह पहाणे ' अनाचारका निषेध करनेमें प्रधान होवें अस्खलित जिनकी अज्ञा प्रवर्ते २८ ' निश्चय पहाणे ' षट द्रव्यादिकका निश्चय करनेमें प्रधान होवें राजादिककी शभामें क्षोभ नपावे २९ ' विज्ञा पहाणे ' रोहिणी प्रज्ञप्ती प्रमुख विद्यामें प्रधान हो

वें, ३० 'मंत पहाणे' विष परिहार, व्याधी निवार, व्यंतोप सर्ग नाशक इत्यादिक मंत्रमें प्रधान होवे ❀ ३१ 'वेय पहाणे' यजूरादिक चार ही वेदके जाण होवे ३२ 'बंभ पहाणे' ब्रह्मचर्यमें प्रधानहोवे ३३ 'णय पहाणे' नैगमादि सात नय स्थापनेमें प्रधान होवे ३४ 'नियम पहाणे' अभिग्रहादि नियम तथा प्रायश्चित विधी जाणनेमे प्रधान होवे ३५ 'सच्च पहाणे' महा सत्यवत ३६ 'सोय पहाणे' शूची दो प्रकारकी (१) द्रव्ये तो लोकमें अपवाद होय ऐसे मलीन वस्त्रादि धारण न करे, और २ भावे पाप मेलसे न खरडाय [आचार्य भगवत यह १४ गूणमें प्रधा न होते है] यह छत्तीस गूणके धरनेवालेको आचार्य पदपे स्थापन किये जाते हैं

आचार्यजीकी ८ सपदा

आचार्य भगवतकी आठ सपदा है और एकेक सपदा के चार २ गुण, यों आठ के बत्तीस गुण और चार विनय मिल कर छत्तीस गुण होते हैं जैसे गृहस्थ धन, कुटंबादि ऋद्धि मे शोभता है तैसे आ चार्य भगवतजी आठ सपदा से शोभते है

१ "आचार सपदा" आचार आचारने (आदरने) योग्य

❀ मत्रादिक जाणते हैं परंतु करते नहीं है

श्लोक– भूयांसो भुवि लोकस्य चमत्कार करा नरा ।
रजयंति स्वचित, ये भूतले तेतु पचषा ॥
कृत्रिमैः धरंधित जाप्य तोपयितुपर ।
आत्मानु वास्त येरेष इतक परितुष्यती ॥

अर्थ–दूसरे लोकोंको चमत्कार बताने वाले बहुत मिल सकेंगे परन्तु अ पने मनको चमत्कार बताके रंजन (खुशी) करनेवाले पांच सात मिलने ही मुशकिल है कृत्रिम आडंबरमे दूसरेको सतोषना सहज है, परन्तु आत्मा को कौन सतोष सकता है

गुणकर जो सहित होवे सो आचार संपदा, इस के ४ भेद –१ " चरण गूण धूव जोग जुर्त्ते " चारित्र के गुण (महाव्रतादिक) में ध्रुव (निश्चल—स्थिर–अडोल) गूण यूक्त सदा रहै २ ' मद्दव गुण सपन्न ' जातियादि आठ मद (अभिमान रहित सदा नम्रतावत ३ अनीयतवृति ' अप्रीतंबध विहारी अर्थात् ' गामे एगेराईया, नगरे पंचराईया ' ग्राममें एक रात्री और नगर (शहर) में पांच रात्री ❋ से जास्ती न रहे यो आठ महीने के आठ विहार और चौमासेमें चार महीना एक ठिकाणे ऐसे नवकल्पी विहार, करते है वृद्धपणा या व्याधी के कारण से विशेप रहे तो हरकत नहीं ४ ' अचचले ' दिव्यरुप से कामिनी के मनको हरण करणे समर्थ हो कर भी निर्विकारी सौम्य मुद्रावत रहे

२ ' श्रुत संपदा ' शास्त्र के परमार्थको जाणे सो सूत्र सपदा इसके ४ भेद १ ' यूग प्रधान ' सर्व विद्यावतो से श्रेष्ट होय, जिस कालमें जितने शास्त्र होवे उन सब के जाण होवे २ ' आगम परिचित शास्त्रको वारंवार समारे, जिससे उनका ज्ञान निश्चल हो रहे ३ उत्सर्गअपवाद मार्ग—साधूका मार्ग दो प्रकारका है १ 'उत्सर्ग' सो किंचित मात्र दोप नहीं लगावे, और २ अपवाद सो कोइ गाढ (मोटा) कारण उत्पन्न हूवे पश्चताप यूक्त किंचित मात्र दोप सेवन कर, प्रायश्चित ले कर शुद्ध होवे इन दानो मार्ग की रीति के जाण ३ 'स्व

❋ एक दिनका आहार मिले सो ग्राम उसमें एक रात्री रहे अर्थात आदित्यवारको आयेतो वाद पीछा दूसरे आदित्यवारको विहार कर जाय, बहुत घरोंकी वस्ती होवेसो सेहर उसमें पांच रात्री रहे अर्थात आदितवारको आयता पीछे पांचमे आदितवारको विहारकरे एकवारमे [illegible]

ममय परसमय दक्खे 'स्वमत और परमत के सूत्रर्थ के पारगामी ६ 'वहुसुय' वहुत सूत्र कंठाग्र किये होय

२ 'शरीर मपदा' सुदराकर तेजस्वी शरीर होवे सो शरी संपदा इसके ४ भेद १ 'पम्माणु पेत' प्रमाणो पेत-समचउरस अपने मनुष्यसे एक धनुष्यका लंबा चौडा जिनका शरीर २ 'अकुग्रइ' पूर्ण अंगके धरण हार १९-२० अंगूलिया लंगडे इत्यादि अपंग 'दोप रहित ३ 'पूर्णेदि' वधीर अधादि दोप रहित ४ 'दढ संहन' मजबूत सघे णा (पराक्रम) के धरणहार तप विहार इत्यादि में थके नहीं

४ 'वचन संपदा' वाक्य-चातुर्य इसके ४ भेद (१) प्रसस्त वादी सदा उत्तम वचन बोले, सर्वकोदि वचनसे बुलावे प्रवादी सका पावे ऐसे बोले, कोई वचन खंडन कर सके नहीं २ 'मधुरता' कोमल मीट्ठा सूस्वरसे गंभीरता यूक बोले. ३ 'अनाश्रित' रागद्वेप पक्ष पात कलुपता इत्यादि दुर्गुण रहित वचन बोले ४ 'स्फुटता' मणमणाद्यादि दोप रहित खुले २ शब्द उचरेकि बालक भी समझ जाय

५ 'वाचना संपदा' शास्त्राविक वाचनेकी कुशलताको 'वाचना संपदा' कहते है इसके ४ भेद (१) 'जोगो' शिष्यका गूण जाणकर जो जितना ज्ञान ग्रहण करने समर्थ होवे उतनी वाचना देवे तथा अयोग्यको वाचना न देवे, क्यों कि सर्पको दूध पिलानेसे विप पैदा होता है २ 'परिणित' पहिल वाचना दी है उसको सम्यक प्रकारे उसकी मतीमे प्रगमाकर (रुचाकर-जचाकर) फिर आगे वचना देवे, क्यों कि अनसमजी और अनप्रगमी वस्तु बहुत काल नहीं टिक सकती है ३ 'निरया पयिता' जो विशेप प्रज्ञा (बुद्धि) वंत शिष्य समुदाय निभाने में, धर्म दिपानेमें, समर्थ होय, उसे आहार वस्त्रादिककी साता उपजाकर, अन्य काममें कमी लगाकर, मधुरतासे उत्साह

जगाकर, रुची प्रमाणे शिघ्रतासे ग्रंथ पूर्ण करावे ४ ' निर्वाहण ' वा
चना देते वक्त ऐसी सरलतासे प्रकासे की थोडे शब्दमें बहुत अर्थ स
मजे, जैसे पाणीमें तेलकी बुंद पसरे

६ ' मती संपदा ' स्वत की बूद्धी प्रबल होय सो मति संपदा
इसके ४ भेद (१) ' अवग्रह ' जो सुणी, देखी सूंघी, स्वादी, स्पर्शी
इत्यादि वस्तुके गूणको एक समयमे ग्रहण करने समर्थ होय (शताव-
धानीवत्) २ ' इहा ' पुर्वोक्त पांच ही वस्तुका यथा तथ्य निर्णय ह
दयमें कर रक्खे ३ ' अवाय ' पांच हीं का निश्चय करे की यह अमुक
ही है दूसरा नहीं, ४ ' धारणा ' जिसका निश्चय किया उसको ब-
हुत काल तक भूले नहीं वक्त पर सुर्त याद आजाय अचूक हाजर
जवाबी होवे

७ ' प्रयोग संपदा ' अन्यवादी योंका जय करे सो प्रयोग सं
पदा इसके ४ भेद १ ' सक्तिज्ञान ' वादीकी और अपनी शक्तीका
विचार करे कि इस से वाक्य चातुर्यमें प्रश्नोत्तरमें जीत सकूंगा कि नहीं
२ ' पुरुष ज्ञान ' वादीका धर्मका विचार करे कि ये वैष्णवादिक किस
महजबका है ? क्योंकी उसके मजहबके शास्त्रसे उसे उत्तर दिया जाय
३ ' क्षेत्र ज्ञान ' उस क्षेत्रके लोग कैसे है ? अमर्यादा वंत तो नहीं है,
कि आगे अपमान करे कपटी तो नहीं है, कि अबी तो मीठे २ बो
लते हैं, परन्तु आगे छल करें, वादीसे मिल जाय, धर्मानुरागी तो है
कि आगे मिथ्यात्वीके आडंबरसे चलायमान नहीं होय, धर्म नहीं तजे,
इत्यादि विचार करे ४ ' वस्तु ज्ञान ' विवादकी वक्त राजा धिक लोक
आयेंगे, वो न्यायी है या अन्यायी, नम्र है या कठिण, सरल है या कप
टी, क्यों कि आगे वो किसी प्रकारसे अपमान नहीं करे इत्यादि वि
चारकर योग्य होत्र सो करे

८ ' सग्रह सपदा उपयोगी वस्तुका यथा योग्य पडिलेसे ही स ग्रह कर रखे, सो सग्रह संपदा इसके ४ भेद १ ' गणयोग ' बालक, दुर्बल, गीतार्थ, तपस्वी, रोगी, नवदिक्षित, इत्यादिकका निर्वाह होवे ऐसा क्षेत्र ध्यानमें रक्खे २ ' संसक्त ' उतरे है उस सिवाय दूसरा मकन तथा पाट पाटला संथारा (पराल) इत्यादिकका संग्रह कर रखे, क्योंकि वक्त पर कोई नये साधू आ जाय तो काम आवे ३ ' क्रिया विधी ' जिस २ कालमें जो २ क्रिया करनी है उस विधी प्रमाणे वर्ते—वर्तावे ४ ' शिष्योपसग्रह ' व्याख्यानी, वादी–पराजयी, भिक्षा वृत्ति कुशल, व्यावची इत्यादि शिष्योंका संग्रह करे

यह आचार्य भगवतकी आठ संपदाके ३२ भेद पूरे हुवे

' चार विनय '

१ , 'आचार विनय,' साधुके जो आचरने (आदरने) लायक वस्तु सो आचार, उसको ग्रहण करे, सो आचार विनय, इसके ४ भेद.

१ ' सयम समायरी आप सजम पाले, दूसरेको पलावे, सज मसे डिगेको स्थिर करे २ ' तप समायरि ' पक्षीकादिक पर्वका आप तप करे दूसरेके पास करावे तथा भिक्षाको आप जाय और दूसरेको भेजे ३ ' गण समायरि ' तपस्वी ज्ञानी रोगी नव दिक्षीत इनकी प्र ति लेखना (पलेवण) आदिकाम, आप करे, दूसरेके पास करावे ४ 'एकाकी विहारी' अवसरपर आप अकेले विचरे तथा दूसरेको यो ग्य देख कर अकेले विचरनेकी आज्ञा देवे

२ ' श्रुत विनय ' १ सूत्रका अभ्यास अवश्य शिष्यादिकको करावे २ सूत्रका अर्थ यथातथ्य धरावे ३ जिस ज्ञानके योग्य शिष्य हो वे उसको वैसा ही ज्ञान सिखावे ४ एक सूत्र पुर्ण सिखाकर दूसरा

प्रारम करावे

३ ' विक्षेपना विनय ' अत करणमें धर्म की स्थापना करे सो विक्षेपना विनय इसके ४ भेद [१] मिथ्यात्वीको सम्यक्त्वी बनावे [२] सम्यक्त्वीको चारित्री बनावे [३] सम्यक्त्वी या चारित्री सम्य क्त्व या चारित्र से डिग गया होय तो उसे पीछा स्थिर करे [४]चा रित्र धर्म की वृद्धी होवे वैसे प्रवर्ते

४ ' दोप परिघात विनय ' कपायदिक दोपका नाश करे सो दोप परिघात विनय [१]' कोहो परिघाए ' जो क्रोधी होवे, उसे क्रोध के दुर्गुण और क्षमाके सदगुण बताकर शांत करे [२] ' विपय परि घाए ' जो विपयमें उन्मत होवे, उनको विपय के दुर्गुण बताकर निर्वि कारी करे [३]' असन्न परिघाए ' जो आहार के विपय विशेप लुब्ध होवे उसे तपका गुन बताकर तपस्वी बनावे [४] ' आत्म दोप परिघाए, जो दुर्गुणी होवे, उसे सद्गुण के गुण बताकर निर्दोपी बनावे

यह आठ संपदा के बत्तीस और चार विनय मिलके आचार्यजी के ३६ गुण हुये

ऐसे आचार्य भगवत ज्ञान प्रधान, दर्शन प्रधान, चारित्र प्रधान तप प्रधान, सूर-वीर-धीर, साहासिक, शम, दम, उपसमवत, चार तीर्थ के वालेश्वर, जिनेश्वर की गादी पर विराजनेवाले, ऐसे आचार्य भगवंत को मेरा त्रिकरण शुद्ध नमस्कार हो '

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋपिजी के सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋपीजी विरचित श्री " जैन तत्त्वप्रकाश " ग्रंथका आचार्य ' नामक तृतीय प्रकरण समाप्तम् ॥

प्रकरण ४ था.

" उपाध्याय "

श्री उपाध्यायजी उनको कहते हैं कि जो गूरुआदिक गीतार्थके पास सदा रह कर, शुभ जोग और उपाध्यानादि तप सहित, प्रिय वचनोसे, सपूर्ण शास्त्रका अभ्यास कर पारगामी हुवे हैं और जिनक पास बहुत साधूओं और गृहस्थों ज्ञानका अभ्यास करते हैं उनके गुणावगुण की परिक्षा कर कर यथा योग्य दुसरे को ज्ञान पढाते है श्री उत्तराध्यनजी सूत्र के ११ मे अध्याय में कहा है

पाच जनें को शिक्षा न लगे।

१ अहकारी, २ क्रोधी, ३ प्रमादी, ४ रोगी, और ५ आलसी, या मिथ्या वादी, इन पच दुर्गुणों वाला हित शिक्षा को गृहन नहीं करता है

आठ जने को शिक्षा लगे,

१ थोडा हँसे, २ सदादमितात्मा, ३ निर्मीमानी ४ परमार्थगवषी, ५ देशसे और सर्वसे चरित्र की विराधना नहीं करने वाला ६ रसनाका अलोलपी ७ क्षमावत ८ सत्यवादी, ८ इन गुणों वाला हित-शिक्षा ग्रहण कर सक्ता है

अविनीतके लक्षण

१ वरम्वार क्रोध करे, व दीर्घ कषायी २ निथक कथा करे, ३ सुमित्र का द्वेषी ४ मित्रकी रहस्य (गुप्त) बात प्रकाशे ५ ज्ञानका

अभिमान करे, ६ आपना अपराध दूसरे पर डाले ७ मित्र पर कोप करे, ८ असम्बन्ध भाषी, ९ द्रोही, १० अहकारी, ११ अजितेंद्री, १२ असविभागी, १३ अप्रतीत कारी, १४ अज्ञानी, यह १४ दुर्गुणों वाला अविनीत कहा जाता हैं उसकी आत्मा में यथा तथ्य ज्ञान प्रगमता नहीं हैं.

विनीत के लक्षण

१ गति, स्थानक, भाषा, और भाव, इन चारों चपलता रहित अर्था स्थिर स्वभाभी २ सरल, ३ अकितहूली ४ किसीक अपमान व स्तिरस्कार नहीं करे, ५ विशेप काल क्रोध नहीं रक्खे ६ मित्रो से हिल-मिल चले ७ ज्ञानका अभिमान नहीं करे, ८ अपना से हुवा अपराध स्विकार करे, परन्तु दुसरे पर नहीं डाले ९ स्वधर्मी यों पर कोप नहीं करे, १० अप्रियकारी के भी गुणानुवाद बोले ११ रहस्य प्रगट नहीं करे, १२ विशेप आडम्बर नहीं करे १३ तत्वज्ञ १४ जातिवत १५ लज्जा वन जितेंद्री, इत्ने गुण का धारक विनीत होता है, सो सूखे ज्ञान ग्रहण कर सक्ता है इत्यादि गुणावगुण की परिक्षा कर दूसरे को ज्ञानाभ्यास यथा योग करावे, उन्हे उपाद्धायजी कहना सो उपाध्यायजी २५ गूण कर कर विराजमान होते हे

उपाध्याजीके २५ गुण

[गाथा] बार सग विउमुद्धा, करण जुओ ।
पम्भावणा जोग निग्गो, सुवझाय गुण वदे ॥

(१–१२) बाह अंगके पाठक (पढे हुवे,) (१३–१४) करण सित्तरी–चरण सित्तरीके गुण युक्त, (१५–२२) आठ प्रभावनासे जैन मातके दिपावे, और (२३—२५) तीन योग वसमें करे' ये २५ गुण

के धारी उपाध्याजीको नमस्कार हो ?

ये पचीस गूणमेंसे प्रथम १२ अगका बयान किया जाता है

अग १२

१ " आचारागजी, " जिसके २ श्रुतस्कंध हैं प्रथम श्रुतस्कधका आठमा महाप्रज्ञा नामक अध्ययनका तो साफ विच्छेद हो गया है और बाकीके ८ अध्यायमें छे कायकी हिंसाके कारण और फल, लोकका स्वरुप, सम्यक्त्वका स्वरुप, साधूको परिसह सहन करनेका साहस वगेरा बहूत ही बातोंका वर्णन विस्तारसे किया गया है

दुसरे श्रुतस्कंधमें साधूको आहार वस्त्र, पात्र, मकान इत्यादि लेनेकी विधि—बोलनेकी चलनेकी बिधि इत्यादिक साधूका आचार तथा श्रीमन् महावीर स्वामीका जीवन चरित्र है आचारागजीके पहले तो १८०० पद § थे, अबतो मुलके २५०० श्लोक ही रह गये हैं

२ " सुयगडागजी, " जिसके २ श्रुतस्कंध हैं पहिले श्रुतस्कधके १६ अध्यन है इसमें ३६३ पाखंडियों (कुवादीयों) का स्वरुप बताकर समाधान किया गया है श्री ऋषभ देव स्वामीके ९८ पुत्रको उपदेश साधुका आचार, नर्कके दुख, प्रभुके गुण वगेरा बहूत बातोंका वर्णन है,

दुसरे श्रुतस्कधके ७ अध्ययन है, जिसमें पुष्करणीके कमल पुष्प के द्रष्टांतसे मोक्ष ग्रहण करणे की व्याख्या, साधूको आहार लेनेकी—बोलनेकी रीति, आर्द्र कुमार और गोंशाल की चर्चा, गौत्तम स्वामी और उदक पेढाल पुत्रका सवाद इत्यादि बातें हैं सूयगडागजी के पहिले तो ३६००० पद थे, अब तो २१०० श्लोक ही रह गये हैं

§ ३२ अक्षरका १श्लोक १९ ८८६,८४ श्लोकका १पद गिना जाता है यह अधिकार दिगम्बर ग्रन्थमें है

३ " ठाणांगजी, " जिसमें १ ही श्रुत्स्कंध और १० ठाणे [अध्याय] हैं पहिलेमें एकेक बोल अर्थीमें कौन २ मे हैं, और दूसरेमें दो दो यावत् दशमें ठाणेमें दश २-बोलकी व्याख्या करी है इसकी चौभंगियोंको विद्वान जमाते हैं तब बहुत ही ज्ञानरस पैदा होता है ठाणांगजीके पहिले तो ४२००० पद थे, जिसमेंसे अब सिर्फ ३७७० श्लोक रह गये हैं

४ "समवायांगजी," जिसमें एक ही श्रुत्स्कंध है, अध्याय नहीं है इसमें सलग बंध अनुक्रमे एक दो यावत् संख्याते असंख्याते अनंत बोलकी व्याख्या है और ५४ उत्तम पुरुष इत्यादिके अधिकार हैं १६४००० पदोंमे से अधुना सिर्फ १६६७ श्लोक विद्यमान हैं

५ " विवहापन्नती (भगवती) जी, " जिसमें १४० शतकके १००० उद्देशे है इसमें विविध प्रकारके श्री गौत्तम स्वामीके पूछे हुवे ३६००० प्रश्न हैं श्री गौत्तम स्वामी, स्कंधक सन्यासी, ऋषभदत्तमुनी सुदर्शन शेठ, शिवराज ऋषि, गगीयाजी, गंगदतजी, आनंदजी, कुशलजी, रोहाजी सुनक्षत्रजी, सर्वानूभुतिजी, सिंहामुनीजी इत्यादि साधूयोंका, और देवानंदाजी, जयवतीजी, सुदर्शनाजी इत्यादि साध्वीयोंका, संखजी, पोखलजी, कार्तिकजी शेठ इत्यादि श्रावकोंका, रेवतीजी सुलसाजी, इत्यादि श्राविकाओंका, तामली,गोशाला प्रमुख अन्यमतियोंका, और सुक्ष्म भंगजाल —जीव विचार—लब्धी विचार इत्यादि बहुत बाबतोंका विवेचन है २२८८००० पदमेंसे अब तो फक्त १५७५२ श्लोक विद्यमान हैं

६ ज्ञाताजी, जिसके दो श्रुत्स्कंध हैं पहिले श्रुत्स्कंधके १९ अध्ययन हैं, जिसमें मेघकुमारका, मोरेके ईंडेका, धना सार्थवाहका, काछबेका, तमडीका, चंद्रमाका, अकिरण देशके घोडेका, जिनरक्ष जिनपाल

का थावर–चा पुत्र खंधक संन्यासी की चारचाका, मल्लीनाथभगवान के छे मंत्रों योंका अरणक श्रावका रोहिणीका, वृक्षका, द्रोपदीका, कुंडरिक पुंडीरकका वगैरा द्रष्टांतों से दया–सत्य—शीलकी पुष्टी की गई है

दूसरे श्रुतस्कधके २०६ अध्यायमें पूरुपादाणी श्री पार्श्वनाथजी की २०६ पासत्थी (ढीली) साध्वीयोंकी कथा है ५५५६००० पदमें सादतीन क्रोड धर्म कथाओ इस सूत्रमें पहिले थी, जिसमेंसे अब तो फक्त ५५०० श्लोक विद्यमान है

७ " उपासक दशांगजी, " जिसका १ श्रुतस्कध और १० अध्ययन हैं इस सुत्रमें १० श्रावकोंका अधिकार है —

श्रावकके नाम	गांव	भार्या स्त्री	धन संख्या	गौकी सख्या
१ आनंदजी	वाणीयांगम	शीवानंदा	१२क्रोडसोनैया[1]	४००००
२ कामदेवजी	चंपानगरी	भद्रा स्त्री	१८ क्रोड	६० ०
३ चुलणीपीया	बनारसी	सोमा स्त्री	२४ क्रोड	८
४ सूरदेवजी	बनारसी	धमा स्त्री	१८ क्रोड	६ ०
५ चूलशतकजी	अलभीया	बहुला स्त्री	१८ क्रोड	६ ०
६ कुंडकोलिया	कंपीलपुर	पुसा स्त्री	१८ क्रोड	६ ० ०
७ सकडालपुत्र	पोलासपुर	अग्गीमित्रा	१ क्रोड	१ ००
८महाशतकजी	राजग्रही	रेवतादि १३	२४क्रोड	८ ००
९नंदन पीयाजी	सावत्थी	अश्वनी स्त्री	१२क्रोड	४ ०
१० तेतली पीया	सावत्थी	फाल्गुनी स्त्री	१२क्रोड	४ ०

ये १० ही श्रावक श्री महावीर स्वामी के शिष्य थे २० वर्ष श्रावक

[1] पाठमें हिरण कोडी चला है

धर्म पालकर जिसम ५॥ वर्ष घर छोड पौषध शालामें श्रावककी ११ पडिमा वही हैं वहा देवताका महा उपसर्ग सहा परन्तु धर्मसे चेल नहीं प्रथम देवलोकके अरुण विमानमें ४ पल्योपमका आयुष्य भोगवकर एक भव कर मोक्ष पधारेंगे

इसके प्रथम तो ११७०००० पद थे जिसमेंसे अब तो फक्त ८१२ श्लोक रहे हैं

८ 'अंतगडदशाजी,' जिसका एक श्रुतस्कंध ९ वर्गके ९० अध्ययन हैं पहले वर्गके १० अध्ययनमें अधक विष्णुजीके १० पुत्रोंका अधिकार है दूसरे ८ अध्ययनमें वासुदेवजी, अक्षोभादिक ८ का अधिकार है तीसरे वर्गके १३ अध्ययनमें वासुदेवजीके गजसुकुमारजी प्रमुख ८ पुत्र, पाच वसुदेवजीके पुत्रका यों १३ का अधिकार है चौथे वर्गके १० अध्ययनमें वासुदेवजीके मयालीअदिक५ पुत्रोंका, ६ सांब ७ प्रद्युन कृष्णजीके पुत्रोंका, ८प्रद्युम्नजीके अनुरुद्ध कुमारका और समुद्र विजयजीके ९ सत्यनेमी १०दृढनेमी पुत्रका अधिकार है पाचमें वर्गके १० अध्ययनमें कृष्णजीकी सत्यभामा, रूक्मिणी, प्रमुख ८पट्टराणीयों का अधिकार है और जंबूकुमारकी मूलश्री, मूलदता, राणीकाअधिकार है छट्टे वर्गके १६ अध्ययनमें मकाइ प्रमुख १३ गाथापतीयोंका, तथा अर्जुनमाली, अतिमुक्त (एवता) कुमारने, गुणरत्न संवत्सर तप किय उनका, और अलख राजाका अधिकार है सातमें वर्गके १३ अध्ययमें श्रेणिकराजाकी नंदा राणी प्रमूख तेरे पट्टराणीयोंका अधिकार है आठमे वर्गके दश अध्ययनमे श्रेणिकराजाकी कालीराणीने रत्नावली तप किया, सुकालीराणीने कनकावली तप किया, महाकाली राणीने लघुसिंहनिक्रिडित तप किया, कृष्णाराणीने वृद्धसिंह क्रिडित तप किया,

सुकृष्णरानी, इत्यादिक दश राणीयोंकी तपस्याका अधिकार है यों अतग सूत्रमें सर्व ९० मोक्षगाभी जीवोंका अधिकार है इसके पहिले तो ते वीस लाख अठावीस हजार पद थे, जिसमें से अब तो शिर्फ ९० श्लोक रह गये हैं

९ " अनुत्तरोववाइ " जिसके तीन वर्ग हैं पहिले वर्गके दश अध्ययनेंमें और दूसरे वर्गके १३ अध्ययनेंमें श्रेणिक राजाके जालि यादिक तेवीस पुत्रोंका अधिकार है तीसरे वर्गके १० अध्ययनेंमें का कंदीनगरीके धनाजी सेठने ३२ स्त्री और ३२ क्रोड सोनयेका धन छोड दिक्षा ले अति दुकर तपस्या कर सरीरका दमन किया ऐसे दश जीवोंका अधिकार है, यह ३३ जणे अनुत्तर विमानमें गये, एक भव करके मोक्ष पधारेंगे इस सूत्रके पहिले तो चौराणु लक्ष चार हजार पद थे जिसमेंसे अब तो फक्त २९२ श्लोक ही रहे हैं

१० " प्रश्न व्याकरणजी, " जिसके दो श्रुतस्कंध हैं, प्रथम श्रुतसकधके आश्रव द्वारके पांच अध्ययनमें हिंसा–झूट–चोरी–मैथुन–परिग्रह ये पाच आश्रव निपजनेके कारण और उनके फलका अधिकार है, दूसरे श्रुतस्कंधके संवर द्वारके ५ अध्ययनमें दयाके (६०नाम)–सत्य–अदत्त–ब्रम्हचर्य –अममत्व इन पांचोंके भेद और गुण बताये हैं इसके पहले तो ९३११६००० पद थे जिसमेंसे १२५० श्लोकही रह गये हैं

(११) " विपाकजी, " जिसके दो श्रुतस्कध हैं पहिले श्रुतस्कध ' दु खविपाक ' जिसमें मृगालोढा प्रमुख दश महापापी जीव पापकर घोर दु:ख पाये जिसका अधिकार है और दूसरा ' सु ख वि पाक ' जिममें सुबाहू प्रमुख दश जीव दान–पुन्य–तप–संयम कर आगे अत्यन्त सुख पाये, जिसका अधिकार है इसके पहले तो एक

क्रोड चोरासीलाख पद थे, और एक्सोदश अध्ययन थे, अब तो १२१६ श्लोकही हैं [ये ११ सूत्र तो यात्किंचित भी विद्यामान हैं]*

१२ "द्रष्टीवादजी," जिसमें पाच वत्थू (वस्तू)थी पहिली वत्थूके ८८ लाख पद थे, दूसरीके एक क्रोड ८१ लाख ५ हजार पद थे, तीसरी वत्थूमें चउदेपूर्वका समावेस होता था सो —

"चउदे पूर्वका ज्ञान."

१ 'उत्पादपुर्व' इसमें षद्द्रव्यका ‡ज्ञान था, इसकी दश 'वत्थू' और इग्यारे लाख पद थे २ 'अगणीय पूर्व' इसमें द्रव्य गुण, पर्याय का वर्णन था, इसकी चार 'वत्थू' और बाइस लाख पद थे ३ 'वीर्यप्रवाद' इसमें सर्व जीवके बल विर्य पुरुषाकार पराक्रमका वर्णन था, इसके आठ 'वत्थू' और चमालिस लाख पद थे ४ 'आस्ती नास्ती

---

* कितनेक ऐसा कहते हैं की इग्यार अग पहिले थे जितनेही अब हैं, जिस २ ठिकाणे 'जाव' शब्दसे अन्यशास्त्रोंकी भलामण दी है, या सम्मास सब मिलावो तो बराबर हो जाये

‡ षद्द्रव्य'—' धर्मास्ति चलनशाक्ति दे) २ अधर्मास्ति (स्थिर करे) ३ आकास्ति (अवकाश दे) ४ कालास्ति (आयुष्य घटावे) ५ जीवास्ति (चैतन्यता) ६ पुद्गलास्ती (द्रव्य नाशवंत पदार्थ) इनका विशेष स्वरूप गाथामें' -

गाथा " प्रणाम जीव मुत्ता, सपएसी एगे खेत ।
' किरिया निचकरण कर्त्ता, सव्यगये मदरपवेसा ॥१॥

अर्थ —छेमसे जीव पुद्गल, प्रणामी ४ अप्रणामी जीव जीव १ अजीव पुद्गल मुर्त्ती ,५ अमूर्ती काल सप्रदेशी [अढाई द्विपमें ही है] ५ अप्रदेशी धर्मास्ती, अधर्मास्ती आकास्ती ये ३ का एक द्रव्य; काल जीव,पुग्दल, इन तीनके अनंत द्रव्य पुग्दल अनित्य ५ नित्य जीव पुग्दल (कारणी काममें आवे) पाच आकरणी कर्त्ता जीव पुग्दल साथ क्रिया करे ४ अकर्त्ता और सर्व लोकालोकमें आकाश व्यापी है पाचही तो फक्त लोकमें हैं ॥

* तीसरा प्रकरण देखो

प्रवाद पूर्व ' इसमें शाश्वती अशाश्वती वस्तुका स्वरुप था, इसके सोले ' वत्थू ' और इठ्यानी लाख पद थे ५ ' ज्ञान प्रवाद पूर्व ' इसमें पाच ज्ञानका वर्णन था, इसकी बारह ' वत्थू ' और १ एक क्रोड डीयत्तर लाख पद थे ६ ' सत्य प्रवाद पूर्व ' इसमें दश प्रकारके सत्यका वर्णन था, इसकीबारा 'वत्थु' और दो क्रोड बावन लाख पद थे ७ ' आत्मप्रवाद पूर्व ' इसमे आठ आत्माका वर्णन था, इसकी सोले ' वत्थु ' और तीनक्रोड चारलाख पद थे ८ ' कर्मप्रवाद पूर्व ' इसमें आठ कर्मोका वर्णन था, इसकी सोलह वत्थु और छे क्रोड आठ्लाख पद थे ९ ' प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व ' इसमें दश पच्चखाणके नवक्रोड भेदका वर्णथा, इसकी तीस ' वत्थु ' और बारह क्रोड सालह लाख पद थे १० " विद्याप्रवाद पूर्व, " इसमे रोहिणी गन्नासी आदि विद्या-मंत्र जेस तंत्रादिक विधि युक्त थे, इसकी चउदा ' वत्थू ' और पचीस क्रोड तीस लाख पद थे, ११ ' कल्याण प्रवाद पूर्व ' इसमें आत्माके कल्याण होनेकी [तप—संयमकी] वार्ता थी । इसकी षस ' वत्थु ' और अडतालीस क्रोड चौसट लाख पद थे, १२ ' प्राण प्रवाद ' पूर्व इसमें चार प्राणसे लगाकर दश प्राणके धरणहार प्राणीयोंका वर्णन था इसकी दश ' वत्थू ' और सत्ताणु क्रोड अठ्ठाइस लाख पद थ १३ ' क्रिया विशाल पूर्व ' इसमें साधु श्रावकका आचार तथा पच्चीस क्रियाका वर्णन है दश ' वत्थू ' और एक क्रोडा क्रोडी और एक क्रोड पद थे, १४ , लोक बिंदुसार पूर्व ' इसमें सर्व अक्षरोंका सन्निपात (उत्पत्ति) और सर्व लोकके सार२ पदार्थोका वणन था इसकी१० वत्थू और दो क्रोडा क्रोड, तीनक्रोड वश लाख पद थे ऐसा कहा जाता है कि, पहिला पूर्व एक हाथी डूबे जितनी स्याहेस, दूसरा दो हाथी डूबे जितनी स्याईसे, तीसरा चार

हाथी डूबे जितनी स्याइसे, यों दुणे करते २ चौदहवा पूर्व८१९२ हाथी डूबे जितनी स्याइसे लिखा जाताथा चौदह पूर्वका ज्ञान लिखनेमें १६३८३ हाथी डूबे जितनी स्याइ लगती है

द्रष्टिवादागकी चौथी 'वत्थू' में छे वातो है पाहिली वातके पांच हजार पद, और दूसरी, तीसरी, चौथी, पांचमी, और छट्टीके जुदे २ वीस क्रोड, इगण्ठ लाख, नव हजार, दोसे पद थे द्रष्टि वादांगकी पाच मी 'वत्थु' का 'चुलका' कहते है जिसके दश क्रोड, उगणसटलाख, छियालीस हजार, पद हैं इतना वडा द्रष्टिवाद अगका विछेद होनेसे जैन धर्म में ज्ञानकों वडा जबर धक्का लगा हे जिस वक्त ये बारे अग पुर्ण थे, उस वक्त उपाध्यायजी इनके पुर्ण जाण होतेथ, अब इग्यारे अंग जितने रहे है, उनके जाण होवे, उनको उपाध्यायजी कहना

द्रष्टिवादांग छोडकर वाकीके इग्योरे अगके वारे उपाग गणधरजी आचार्यजीके रचे हुवे हैं अग शरीर और उपाग हाथ पग अगूली यादिकको कहते हे

१ आचारागजीका उपांग 'ऊववाइजी' इसमें चपानगरी, कोणिक राजा, श्री महावीरस्वामी, साधूके गुण, वारे प्रकारका तप, समोसरणकी रचना, चारगतिमें जानेके कारण दश हजार वर्षके आयुष्यसे लगाकर मोक्ष प्राप्त होवे वहा तककी करणी, अमड श्रावक तथा इनके सातसे शिष्य, केवल समुद्घात और मोक्षके सुख इत्यादि वावतोंका बहुत विस्तारसे वर्णन है इसके मूल श्लोक ११६७ हैं

२ सुयगडागजीका उपांग रायपसेणी, इसमें श्री पार्श्वनाथस्वामीके संतानिया (चेलेके चेले) श्री केशीस्वामीसे सेतंविका नगरीके नास्तिकमती परदेशी राजाका सवाद * है इसके मूल

* सेतंवीका नगरीके परदेशी राजाका चित्त नामे प्रधान भेट ले

श्लोक २०७८ हैं

सावत्थीनग्रीके जीतशत्रु राजाके पासगया,वहाँ श्री केशी स्वामी मुनीराज का उपदेश सुन श्रावक मत अंगिकार किया, और परदेशी राजाको उपदेश देकर समझानेके लिये महाराजश्रीसे विनती करी उपकरका कारण समझ महाराज श्री सेतंबीका नगरीमें पधारे अश्व रथ फिरानेके मिशम प्रधान राजाको बगीचा पास लाया कि जहाँ श्री केशी स्वामी उतरेथे साधुको देखकर राजा प्रधानको पूछने लगा कि, ये कोन है? प्रधानने कहा ये जीव—काया अलग माननेवाले उपदेशक बडे विद्वान सुने जाते हैं राजा तुरतही मुनी पास आकर सवाल जवाब करने लगा

राजा—क्या जी! आप जीव—काया दो मानते हो?

मुनी—हे राजन! तू मेरा चोर है

राजा (चाक कर)क्या मैं! मैंने कभी चोरी नहीं की है

मुनी—तो क्या तेरा दान चोरे उसको तू चोर नहीं कहता है!

चतुर राजा समझ गया कि मैंने मुनिको विधि पूर्वक वंदना नहीं की सो दान चोरने जैसा दाप किया, ऐसा मुनी कहते है यो विचार वंदना कर कहने लगा—

राजा—महाराज! मैं यहां बैठूं!

मुनी—तेरी ही जगह है!

ऐसे विचित्र प्रत्युत्र सुन राजाको विश्वास बैठा कि यह तो बडा चालाक, मेरी शकाका निवारण कर सके सही

राजा—आप जीव काया दो मानते हो!

मुनी—हां, काया तो यहां रहती है और जीव अन्य जन्म लेकर, दूसरे शरीरमें प्रवेशकर, पुण्य—पापका फल भुगते हैं

राजा—मेरा दादा पापी था वो तो आपके कहने मुजब नरकमहि गया होगा अब जो वो यहांपर आकर मुझको चेताये कि, हे पुत्र! तूं पाप मत कर पाप न कर पाप करनेसे मेर जैसे दु:ख भुगतन पडे, ग यदि मेरा दादा ऐसा कहनेको आवे तो मैं जीव—काया अलग मानु

मुनी—तेरी सूर्यिकता राणीके साथ कोई दूसरा आदमी रमता देखे

तो तू क्या करे?

राजा—ठार मार डालूं

मूनी—वो कभी कहे कि माहाराज ! मेरेको पाव घडी छोडो, मेरे पूत्रको चेतानेके लिये मुजको जाने दो; फिर तुरंत ही शिक्षा भुगतनेके लिये आ जाउंगा तो क्या तू उसको छोडेगा।

राजा—ऐसा कोन मूर्ख होवे कि अपराधीका विश्वास करे ?

मुनी—जब तू एक पापके करनेवालेको तेरे राज्यमेंही जानेकी पाव घडीकी छुट्टी नहीं दे सका, तो तेरे दादाने अनेक पाप किये थे उसको नरकवाससे इतने दूर तक कैसे छोडा जावे ?

राजा—अच्छा, तो मेरी दादीने बहुत धर्म कियाथा वो तो जरुर मेरेको धर्मके मिष्ट फल कह बतानेको स्वर्ग छोड इधर आनीही चाहिये

मुनी—भला राजन् ! कोइ भंगी तुजको उसकी झोपडीमें बुलावे तो तू जावेंगा क्या ?

राजा—यह कैसा सवाल ! क्या मैं दुर्गंधकी भरी हुइ अपवित्र झोपडीमें कभी भी जा सका हूं ?

मूनी—तो क्या अनेक सुखोंमें पडे हुवे देव ये दुर्गंध युक्त मनुष्य लोकमें आसके है ! मनुष्य लोककी दुर्गंध १० योजन तक कही जाती है

राजा—ये बात छोड दो; मैं और सवाल करता हूं एकदा मैंने एक अपराधीको लोहेके कोठीमें भर चौतर्फसे मजबूत बंद करदिया, पीछे उसको खोलकर देखा तो वो तो मृत्युगत था परंतु जीव किधर भी देखा नहीं गया ! तो जीव गया किधरसे ?

मुनी—किसी गुफाके मजबूत द्वार बंद करके भीतरमें कोइ जोरमें ढोल बजावे तो अवाज बाहिर आता है कि नहीं ?

राजा— आता है

मुनी—ऐसे ही जीवभी निकल सकता है, परंतु द्रष्टिगोचर नहीं आता है

राजा—वैसेही एक चोरको कोठीमे बंद कर बहुत दिनसे निकाला तो उसमें असंख्य कीडे पड गये, वो कीडे किधरसे भरा गये ?

पका, चोवीस दंडकका, विनय पोलियेका इत्यादि वर्णन हैं इसके मूल श्लोक ४७०० हैं

मुनी—लोहेके निबड गोलेको अग्नीमें तपाते है तब उसके अंदर अग्नी भरा जाती है, तैसेही कीडे भरा गये

राजा—जीव सदा एकसा रहता है कि कमी ज्यादा होता है!

मुनी—सदा एकसाही रहता है

राजा—तो फिर जैसा जुवानके हाथसे शर (बाण) जाता, तैसाही वृद्धके हाथसे क्यों नहीं जाता?

मुनी—जैसे नये धनुष्यसे बाण लंबा जाय, तैसे जूनेसे नहीं जाय, इसी तरह समझना

राजा—जुवानसे जितना बोझा उठता है उतना बूढसे क्यों नहीं उठता?

मुनी—नवाकींका बहुत और जूना छिका थोडा वजन उठा सक्ता है, तैसेही जाणना

राजा—मैंने जीते चोरको तोलके उसके श्वासोश्वास रोंधके मारा, फिर तोला तो वजन बरोबर हुआ यदि जीव-काया अलग है तो जीव निकल जानेसे कायका वजन कमी होना ही चाहीये

मुनी—चमडेकी मशकको खाली तोलो और फिर हवासे भरकेलो तो तो वजन एकसा ही होगा, इसी तरह समझना

राजा—मैंने एक चोरके टुकडे २ कर देखा, परन्तु जीव किधरभी नहीं देखा गया!

मुनी—राजन्! तू कठिआरा जैसा मूर्ख है कितनेक कठिआरे बन में लकडी लेनेको गये एक काठिआरेको एक जगह बठा कर और सब कहने लगे कि भाइ तू इधर ठहरके अरणीकी लकडीसे अग्नी निकाल कर भोजन तैयार कर, हम सब लोग लकडी लायेंगे उसमेंसे तुजको भी भाग मिलेगा! कठिआरे सब गये और वो रसोइ करने वाले कठीआरेने अरणीकी लकडीके टुकडे २ कर अग्नि ढुंडी परन्तु अग्नि उसको दृष्टिगोचर नहीं हुइ आखीर सब कठीआरे लकडी लेकर आ पहोंचे और उसको अरणीके टुकडेमें अग्नि ढुंढते देख कर हँसा पडे, और अपने हाथसे अरणीसे अरणी घीसकर अग्नि उत्पन्न की और रसोइ बनाइ! हे राजन्! तू भी एसा

४ समवायांगजीका उपांग "पन्नवणाजी," जिस्के छत्तीस पद, सर्व लोकमें जीव अजीव मय जो पदार्थ हैं उनका स्वरुप वासठिया,

ही मूर्ख है।

राजा—महाराज! मुझ तो प्रत्यक्ष दृष्टांतसे जीव साबित करो तो मैं मानु

मुनी—भलां यह वृक्षके पर्ण (पत्ते) किसीसे हालते हैं?

राजा—हवासे

मुनी—हवा दिखती नहीं, और उसका रंग कैसा हैं

राजा—वा तो दिखती ही नहीं है

मुनी—तब कैसे जाना कि हवा है?

राजा—पत्ता हलता है इससे

मुनी तो बस! ऐसे ही शरीरके हलन चलनसे जीवका होना मालुम होता है

राजा—महाराज! आपने कहा की सब जीव एक सरीखे हैं तो कीडी छोटी और हाथी बडा क्यों होता है?

मुनी—कटोरीके अंदरका दीपक (दीया) कटोरी जितनी जगहमें ही प्रकाश करता है, महलके अंदरका दिया महल जितनी जगहमें प्रकाश करता है; कुछ दीपकी जोत छोटी बडी नहीं होती है ऐसे ही जीवके लिये भी समझना

राजा—आपकी बात तो न्याय पक्षकी है, परन्तु मेरे बाप दादासे जो मजहब हम पालते हैं उसको कैसे छोडा जाय?

मुनी—न छोडेगा तो 'लोह वनिये' की तरह तुजको ये लोह (हठ) मुबारक होगा और पश्चाताप करेगा'

राजा—महाराज! 'लोह वनिये' ने क्या किया था'

मुनी—सुन; चार वनिये विदेशको द्रव्योपार्जन करनेके लिये चले रास्तेमे लोहकी खान आई चारोंने उसमेसे लोहकी गठडी बांध ली और आगे चलना शुरु किया; आगे तांबेकी खान आई, जिसको देख तीनोंने लोह फेंक दिया, और तांबा बांध लिया चौथेने तो कहा— मैं ता लिया सो लिया' आगे सोना रूपाकी खान आई, तीनोंने तांबा छोडकर रूपा और रूपा छोडकर सुवर्णकी गठडी बांध ली आखिर हीरे

अल्पाबहुत, भांगे, इत्यादिकसे भिन्न २ स्वरुप बताया है इसमें सेकडो थोकडे निकलते हैं इसके मूल श्लोक ७०८७ हैं

५ विविहा पती (भगवातीजी) का उपांग " जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति जिसमें जंबूद्वीपके क्षेत्र, पर्वत,द्रह, नदी आदिकका विस्तारसे वर्णन तथा छे आरों का, जुग लिये मनुष्योंका और श्री ऋषभदेवजी भगवनका चरित्र, भरत चक्रवर्तीके छे खड साधनेकी रीति, न निधान, १४ रत्न, मोक्ष जानेका ज्योतिषी चक्र वगैरा बहुत विस्तार है इसके मूल श्लोक ४१४६ है

६ ज्ञाताजीका पहिला उपांग ' चंद्र प्रज्ञप्ति, ' जिसमें चद्रमा विमान, मांडले, गति, नक्षेत्रयोग, ग्रहण, राहू चंद्रके पांच संवत्सर त्यादि अधिकार है इसके मूल श्लोक २२०० हैं

७ ज्ञाताजीका दूसरा उपांग " सूर्य प्रज्ञप्ती, " जिसमें सूर्यके विमान १८४ मंडलका दक्षिणायन उत्तरायन पर्व राहू गणितांक (१९ अंककी गिणती)दिनमान सूर्य संवत्सर इत्यादि ज्योतिषी चक्र है इसके मूल श्लोक २२०० हैं

माणिकेका व्यापारमेंसे गठडी बांधली और सुखी हुए परंतु लोह वनिये ' ने लोह छोडा नहीं और बोजो उठाकर दुःखी हुवा तैसेही तू भी यह कदाग्रह (हठ) नहीं छोडेगा तो दुःखी होगा !!

ये सुनकर राजाने जैनधर्म अगिकार किया समकित सहित व्रत धारण किये, अपनी लक्ष्मीके ४ भाग कर, एक भाग धर्मार्थ व्यय करनेको रखा, बेले १ पारणा शुरु किया फिर मुनीराज विहार कर गये, सुरीकंता राणीने अपने पतिको धर्मयुक्त देखकर, और राग रंगसे विरक्त देखकर, निकम्मा समझकर, तेरमे बेलेके पारणोमें विष खिलाया, वो जानले पर भी राजाने समभाव रखे, समाधी भावसे मरकर पहिले देव लोक में सूर्याभ विमानके देव हुये;वहांसे महा विदेहमें सयम लेकर मोक्ष पधारेंगे

१ इसके, पहिले तो १ १ ०० पद थे, १ इसके, ११०००० पद थे १ इसके ११ ० पद थे

८ उपाशकदशाका उपांग " निरियावलिकाजी, " जिसमें को णीक पुत्रके हाथसे श्रेणिक राजा पिताका मृत्यु, वेहल कुमारके हार— हाथीके लिये महाभारत १८०००००० मनुष्यका घमशाण इत्यादि वर्णन हैं

९ अंतगढ दशांगका उपाग "कप्पवर्डिसीया" जिसके दश अध्ययन हैं- इसमें श्रेणिक राजाके पोते कालियादिक दश कुमार के पुत्र पद्म महापद्म प्रमुख दिक्षाले देवलोकमें गये उनका अधिकार है

१० अनुत्तरोववाइ दशागका उपाग ' पुप्फीयाजी,' जिसके दश अध्ययन हैं इसमें चद्र, सूर्य, शुक्र माणभद्र, पूर्णभद्र, इत्यादिककी पूर्व करणीका अधिकार है सामल ब्राह्मण और श्री पार्श्वनाथ स्वामीका संवाद, बहुपुत्तीया दवी इत्यादिका अधिकार है

११ प्रश्न व्याकरणका उपांग "पुप्फ चुलीयाजी," जिसके दश अध्ययनमें श्री, न्ही, धृती, कीर्ती इत्यादिककी पूर्व करणीका अधिकार है

१२ विपाकजीका उपाग "वन्हि दशाजी," जिसके १० अध्ययन हैं इसमें बलभद्रजीके पुत्र निषढ कुमारादिक दशका अधिकार है यह निरावलिका आदि पाच ही शास्त्रोंका एक जुथ है, जो निरीयावलीकाजीके नामसे प्रसिद्ध है मूल श्लोक ११०९ हैं यह अगके उपांग है, इसलिये इनका समावेश भी द्वादशांगमें किया जाता है *

४ चेडा राजाके धर्ममित्र नवमल्ली नवलछी १८ देशके राजाने अपने मित्रपर धर्म—संकट पड़ा जाना सहायता करी थी हार देवता ले गया हाथी अग्निखाइमें जलकर मर गया चेडा राजाको भवनपति देव भवनमें ले गया, और वेहल कुमारने दिक्षा ले आत्मकार्य सिद्ध किया

* उपरात आठ और माननीय हैं

१ व्यवहार इसमें साधूका आचार व्यवहार है इसके मूल श्लोक १० है

२ 'बेद कल्प' इसमें साधूके लिये वस्त्र पात्र मकान का प्रमाण है इसके मूल श्लोक, ३०१ हैं,

३ नशीत' साधुको प्रायश्चित देनेकी रीति है इसके मूल श्लोक ८२१ हैं

४ दृशाश्रुतस्कन्ध, इसमें असमाधी सबले दोषों ७ नियाणेका इत्यादिक अधिकार है इसकेमूल श्लोक १८३० है

यह चार छेद सूत्र हुये

(कितनेक पंच कल्प, और जिन कल्प, मिलाकर ६ छेद सूत्र कहते हैं परन्तु इन दोनोका नाम नंदी सूत्रमें नहीं है)

१ 'दृश वैकालिक,' इसमें साधूका आचार दर्शाया है, इसके १० अध्ययन और ७० मूल श्लोक हैं

२ 'उत्तराध्ययन' इसमें ३६ अध्ययनमें अनेक सद्बोधका समावेश किया है इसके मुल श्लोक २१०० है

३ 'नंदी सूत्र' इसमे ५ ज्ञान, चार बुद्धिकी कथा, तथा शास्त्रों की टीप है इसके मुल श्लोक ७०० है

४ 'अनुयोग द्वार, इसमें ४ योग, ४ प्रमाण, ७ नय, ४निक्षेप इत्यादि है इसके श्लोक १८९९ हैं

यह ११ अग, १२ उपांग, ४ छेद, और४ मुल, और १ मां आवश्क इसके मुल श्लोक १०० यह बत्तीस सूत्र माने जाते हैं

नंदीजी सुत्रमें ७२ सुत्रके नाम कहे हैं, जिसमेसे ३१ सुत्र कालिक हैं—१ आचारांग, २ सुयगडांग, ३ ठाणांग, ४ समवायांग, ५ भगवती, ६ ज्ञाता, ७उपासकदशांग, ८अंतगडदशांग ९ अनुत्तरोववाई, १० प्रश्नव्याकरण ११ विपाक, १२ उत्तराध्ययन १३ दृशाकल्प १४ व्यवहार, १५ निशिथ, १६ महानिशिथ, १७ ऋषिभाषित १८ जंबुद्विप प्रज्ञप्ति १९ द्विपसागर प्रज्ञप्ति, २० चंद्र प्रज्ञप्ति, २१ खुड्डिया विमान विभती २२ महल्लिया विमान, विभती, २३ अगचूलिया २४ वगचुलिया २५ विवाह चूलिया, २६ अरुणोववाइ, २७ वरुणोववाइ २८ गुरुडोववाइ, २९ धरणोववाइ ३० वेसमणोववाइ ३१ वेलंधरोववाइ ३२ देविंदोववाइ, ३३ उ

और "करण चरण जुत्ओ" करण (क्रिया जो वक्तोवक्त करनी पड़े उस

ठाणसूए, १४ समुठाणसूए, १५ नागपरियावलियाउ, १६ निरियावलि याओं, १७ कप्पियाओ, १८ कप्पवडंसियाओ १९ पुप्फियाओ २० पुप्फचूली याओ, २१ विण्हिदसाओ ये २१ सूत्र दिनके और रात्रीके पहिले और चौथे प्रहरमें पढ़े जाते हैं, फिर नहीं

१० उत्कालिक सूत्र १ दश वैकालिक, २ कप्पियाकप्पियं, ३ चूलकप्प सुय ४ उववाइ, ५ रायपसेणी, ६ जीवाभिगम, ७ पनवणा, ८ महापन वणा ९ पम्मायपमाय, १० नंदी, ११ अनुयोगद्वार, १२ देवेन्द्रस्तव, १३ तंदुल वेयालिय, १४ चंदगाविजय, १५ सूर प्रज्ञप्ति १६ पोरसीमंडल, १७ मंडलप्रवेश १८ विज्याचरण विणिछिउ १९ गणिविया, २० झाण विभ ती २१ मरण विभती, २२ आयविसोही २३ वियरागसूय, २४ सलेह णासूय, २५ विहार कप्पो २७ चरण विसोही, २८ आउरपच्चखाण, २९ म हापच्चखाण, ३० मठिवाद ये ३० सूत्र, बतीस असज्झाइ टाल, हर वक्त पढ़े जाते हैं और ७१ वा आवश्यक, इसमें असज्झाइ टालनेका कुछ कारण नहीं

यह ७१ सूत्र शास्त्रानुसार कहे, जिसमेंसे अभी कितनेक सूत्र नहीं हैं इसका खुलासा पक्षी सूत्र की वृतिमें इस तरह है इस कालमें १ खुड्डिया विमान विभती २ महल्लिय विमान विभती ३ अंगचूलीया ४ वंग चूलीया, ५ विवाह चूलीया ६ अरुणोववाइ, ७ वरुणोववाइ, ८ गरुडो ववाइ ९ धरणोववाइ १० वेसमणोववाइ ११ वेलंधरोववाइ १२ देविंदो ववाइ, १३ उठाण सुए, १४ नाग परियावलियाणं, १५ कप्पिया कप्पियाणं १७ आसिविष भावणाणं, १८ दिठि विष भावणाणं १९ चरण भावणा णं २० महासुमिण भावणाण २१ तेयग्गिनिसग्गाण ये २१ कालिक क्रीलास्ति और १ कप्पया कप्पियं २ चुलकप सूयं ३ महाकप्प सूय ४ महापनवणा, ५ पम्माय पमायं ६ पोरसी मंडल ७ मंडलं पवेसो ८ विज्या चरण विणिछिउ, ९ झाण विभती, १० मरण विभती, ११ आय वीसो ही, १२ सलेहणा सूय १३ वियराय सुयं १४ विहार कप्पो, १५ चरण विह ये १५ उत्कालिक सूत्र नहीं हैं परन्तु इनके नाम जैसे दूसरे सूत्र अभी दिखते हैं सो अभीके आचार्यके बनाये होगे ऐसा भास होता है जैसे महानिशिथजी आठ आचार्यने बनाइ है ऐसा कहा जाता

के) सित्तरी (७० गुण करके) तथा चरण (चारीत्र जा सदानिरंतर पालनापडे उसके) सित्तरी (७० गुग करके) युक्त श्रेष्ट होते है

करण सित्तरीके ७०बाल

गथा पिंड विसोही समिइ, भावणा पडिमाय इंदिय निगेहो।
पडि लेहणा गुत्तीओ,अभीग्गह चेव करणतु ॥१॥

पिंड विशुद्धिके ४ भेद —(१)आहार-पाणी संखडी-सोपारी आदिक फासुक, निर्जीव निर्दोष, शास्त्रोक्त विधियुक्त ग्रहण कर (२) सूत ऊन प्रमुखके वस्त्र एक सपेत रगके मानोपत (साधूको ७२ हाथ और आर्याको ९६ हाथ) निर्दोप ग्रहण कर. (३)काष्ट तुंबे प्रमुखका पात्र यथाविधि ग्रहण कर (४) अठोर प्रकारके निर्दोष स्थानक मलिककी तथा मालिकके अनुचरों (नोकरों) की राजासे ग्रहण करे यह चार शुद्धि सदा यथा विधी सांचवे

'समिइ' पांच सामिति यूक्त सदा रह, इसका विस्तार चारित्रा चारमें हुवा

"बारे भावना"

"अनित्य भावना"—ऐसा विचारे कि, इस जगतमें ग्राम-

ई—हरिभद्रजी सिद्धसेनजी बृहस्पारेजी यज्ञसेनजी देवगुप्तजी यशोधरजी रविगुप्तजी स्थदीलाचार्यजी कितनक सूत्र बारह वर्षके दुष्कालमें भडारमें रह गये जहां उनको रुणी (औधत) लागइ जिसमें कितनेक आचार्यने पूर्वापर सम स मिलाकर वीचमें मनमाना नवीन लिख दिया, कितनेक जैन सूत्र शंकराचार्यने और कितनेक मुसलमानोंने नाश कर दिये जिससे अभी जैन ज्ञान बहुत थोडा रह गया है इनका जिर्णोद्धार करनेकी बहुत जरूर है। पुर्व तक पढे हुव को श्रुत केवली कहे जाते है उनके वचन सर्वमान्य है, और आचर्योंके किये हुये ग्रंथ जो द्वादशांगी वाणीसे मिलते है वो भी अवश्य माननें योग्य है

कोट–खाइ–बगीचे–निवाण–महल–हवली–दुकान–मनुष्य–पशु–पक्षी–आभूपण–धान्य इत्यादि सर्व वस्तू अनित्य–अशाश्वती है परंतू तू मूढपणेसे इसे शाश्वती मान बैठा है, पर पुद्गलोंसे शरीरकी–घरकी सोभा बनाके खुशी मानता है, सो यह सोभा कभी एकसी रहनेवाली नहीं, ऐसी भावना श्री भरतेश्वर चक्रवर्तीन भाइथी वनीता नगरीके श्री ऋषभ देवजीके पुत्र, सुमंगलाके अंगजात, भरतजी एक दिन सोलह सिणगार सजकर आरीस भवन (काचके महल) में अपना सरीरका प्रतिबिंब देखते हाथकी चिट्टी अंगुलीकी मुद्रिका (विंटी) निकल पडी, तब वो अंगुली खराब दिखन लगी यह देख भरतजी आश्चर्य पाय, और एकेक भूपण उतारते २ नमरुप हो खडे रह, और अपने मनसे कहने लगे कि, देख तेरा तो रुप यह है, फक्त पराये पुद्गलसही तेरी सोभा है और पर पुद्गल तो तेर नहीं हैं, यह विनाशक, तू अविनाशिक, है तव तेर इसके प्रिति कैसी निभेगी जो तूं इससे जास्ती प्रीति करेगा तो तुझेही रोना पडेगा तेरे देखते वस्तूका नाश होयगा तो तूं पश्चाताप करेगा, कि हायरे! मेरी असुक प्यारी वस्तू कांहा गइ? और जो तू इनको छोडकर जायगा तो भी तूंही रोयगा कि, हायरे! सब सपत्ती छाड चला इसलिये स्ववश त्याग कर सुखी हो ऐसा विचारते १ तूर्त केवल ज्ञान प्राप्त हुवा शासनके रक्षक देवने साधूका भेप ओगा मुहपति समर्पण किया तुर्त दिक्षा ले सभामें प्रतिबोध कर, ८शहजार बड २ राजाको दिक्षा दे जनपद देशमें विचरे कर्म खपाकर मोक्ष पधारे

२ "असरण भावना"–ऐसा विचार करे कि, रे जीव! इस जगतमें तेरेको सरण (आधार) का देनेवाला कोइ नहीं हैं सब स्वजन स्वार्थके सगे हैं जब तेरे कर्म उदय होंगे–तेरपर दुःख आकरपडे

गा तब तुमको साहाय कर्त्ता कोई भी नहीं होगा यह भावना अना-
थी निर्ग्रंथने भाइ थी एक दिन राजग्रही नगरीका श्रेणिक राजा हवा
खाने मंडिकुक्ष बगीचेमें गये वहां एक झाडके नीचे अति मनोहर रूप-
के धरणहार शांत दांत ध्यानस्थ मुनीका रुप देख अति आश्चर्यके साथ
वंदना कर पूछने लगे, कि हे महानुभाव! आप तरुण अवस्थामें साधु
क्यों हुवे? मुनी बोले कि में अनाथ हूं। ऐसा सुण राजाको दया
आइ, और कहने लगा कि में आपका नाथ बनूगा, चलो मेरे राजमें;
में मेरी कन्या परणाउं और राज देकर सुखी करु मुनीने कहा —राजा!
तुं आप ही अनाथ है, तो दूसरेका नाथ कैसे हो सक्ता है? यों सुन
राजा खिन्न हुवा, और कहने लगा कि जिसकी आज्ञामें तेंतीस २ हजार
हाथी घोडे-रथ, और तेंतीस क्रोड पायदल, पांचसो राणी और एक क्रोड
इकोतर लाख गाम हैं, उसको 'अनाथ' कहनसे मृषावादका दोष क्या
नहीं लगेगा? मुनी बाले, राजा! तुं नाथ अनाथके भेदमें समझता
नहीं सुण, में कोसंवी नगरीके प्रभूत धन सेठका पुत्र हूं एक दिन
मरे अंगमें इंद्रके वज्रके प्रहार जैसी महावदना उत्पन्न हुइ वो किसासे
भी शांत नहीं हुइ बहुत वैद्य मंत्रवादी अपने २ शास्त्रमें अति कुशल
आये और औषध उपचार पथ्य यत्न सब किये, परतु रोग नहीं मिटा
मेरेको प्राणसे भी ज्यादा प्यारे जाणनेवाले मेरे सर्व सज्जन थे, वो सब
तन और धनसे महनत करके थक गये परतु दुःख नहीं मिटा सके
पतिव्रता अनुरक्त मेरी स्त्रीने मेरे दुःखसे दुःखी हो आहार और स्नान
का त्याग करदिया, सदा चिंतातुर मेरा सुख इच्छती रही, परंतु वो भी
मेरा दुःख नहीं मिटा सकी सबको थके देख मेने मेरे मनमें विचार
किया कि, जो मेरा दुःख दूर हो तो, में आरंभ परिग्रहका त्यागी शांत
दांत मुनी पदका स्विकार करुं इतना विचारते ही तुर्त मेरी वेदना

अदृश्य हो गइ फिर कुंबकी आज्ञासे दिक्षा ग्रहण कर फिरता २ इधर आया यों सुण श्रेणिक राजाको अनाथ पणेका रहस्य विदित हुआ

३ "संसार भावना"—ऐसा विचार करे कि, रे जीव! तू अनंत जन्म मरण कर सर्व संसारमें फिरा, बालाग्र जितना भी ठिकाना खाली नहीं रक्खा, सर्व जीवोंके साथ सर्व सगपण करे, माता मरके स्त्री और स्त्री मरके माता, पिता पुत्र, पुत्र–पिता ऐसे आपसमें अनंत वक्त हो-आया सर्व जगतवासी जीव स्वजन है. ऐसी भावना मल्लीनाथजी के छे मित्रोयेने भाई मिथिला नगरीके कुंभ राजा और प्रभावती राणी की पुत्री मल्ली कुंवरी तीन ज्ञान सहित थे, जिन्होने एक मोहनघर (वंगला) बनाया, जिसके मध्य बीचमें एक सोनेकी अपने जितनी मोटी और रूपवंत एक पोली पूतली बनाइ आप भोजन करे तब उस के शिर ऊपरका द्वार खोल एक ग्रास (कवा) नित्य डालकर द्वार लगा देव एक वक्त छे देशके छे राजा मल्ली कुमरीके महारूपकी महिमा सुण लश्कर लकर वहां आये, और याचना करी के तुमारी पुत्री हमको परणावो कुंभ राजा चिंतामें पडे कि एक कन्या किस २ को परणावूं? तब मल्ली कुमारीने कहा, आप चिंता मत करो, में छेइको समजा देवूंगी जुद २ छेही राजाको बुलाकर मोहन घरकी छेही कोठडीयेंम जुद २ बंद करदिये जालीमेंसे उस पूतलीका रुप देख छेही राजा अत्यंत मोहित हुवे, कि कुमरीने तुर्त उसका द्वार खोल-दिया उसमेंसे सड धानकी अति दुर्गन्ध निकली उससे छेही राजा घबराने लगे तब कुंवरीने कहा कि, अहो नरेंद्रों! जिसको देख, मोहाय थे, उसकोही देख घबराते क्यों? सोनेकी पूतलीमें एसी दुर्गन्धी निकली, तो हड्डी मांसकी पूतलीके क्या हाल? इसको देख क्या मोहित होते हो? अपने पूर्व भीवको याद करो तीसरे भवमें

में राजा था और तुम छेही मेरे मंत्री थे, अपन सात्तहीने दिक्षा लीथी, मेंने धर्म कार्यमें कपट किया, उससें में स्त्री हुइ, देखिये संसारका स्वरुप तुम मेरेको व्याने तैयार हूय! धिकार है इस संसारको! ऐसा सुण छेही राजाको जाति स्मरण (पूर्व भव दिखाने वाला) ज्ञान उत्पन्न हुवा, छेही प्रतिबोध पाकर मल्लीनाथजीके साथ दिक्षा ले केवलज्ञान पाकर मोक्ष पधारे

४ 'एकात भावना' ऐसा विचार कि रे जीव! इस जगतमें कोइ किसीका सोबती नहीं है अकेला आया और अकेला ही जायगा जो पाप करके तेने धन कुटंबका संग्रह किया है सो मरेगा जब धन धरतीमें, पसू घरमें रह जायगा स्त्री दरवाजे तक और कुटुंब स्मशान तक ही आयगा अत्यंत प्रिय असा ये सरीर चितामें जलके भस्म (राख) होजायगा, ऐसा जाण एकातपणा धारण कर ऐसी भावना मृगापुत्रने भाइ सुग्रीव नगरके बलभद्र राजा और मृगा राणीके मृगा पुत्र सुंदर स्त्रीयोंके बीचमें रत्नजडित महलमें बैठ कर बजारका तमासा दखतेथे, उसवक्त एक दुर्बल तपोधन साधुको देख उनको जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुवा पूर्व भवमें सयम पाला हुवा देखकर सयमकी इच्छा हो गइ, संयम ले, मृगकी तरह अकेले वनवासी हो, करणी कर मोक्ष प्राप्त करी

५ "पर पंख भावना"—ऐसा विचारे कि रे जीव! इस जगतमें सर्व स्वार्थी (मतलबी) हैं उनका मतलब पुगता है वहा तक सब जीजी करते हैं, हुकम उठाते हैं, मतलब पुरा हुये कोइ भी किसीका नहीं है ऐसी भावना नमीराज ऋषीने भाइ मिथीला नगरीके नमीराजके बदनमें एकदा दाहज्वरका रोग पैदा हुवा उसकी शातीके लिये उनकी १००८ राणी बावना चंदन घीसके प्रिय पतिके सरीरको लगाती

थी, तब उनके हाथोंके कंकण [चूडीयों]का अवाज कानमेंपडनेसे ज्या-दे वर्द हुवा विचक्षण स्त्रीयों समझ गइ, और शीर्फ एकेक कंकण मं गल निमित्ते हाथमें रक्खा कंकणका अवाज वंद होते ही नमीराजने पूछा कि, पहिले इतना आवाज होताथा सो अब क्यों नहीं होता? राणीने सब बात कह दी, जिसको सोचनेमें राजा लग गया-नमिराय जीको विचार पैंदा हुवा कि बहुत थे तब गडबड होतीथी, एक होने से सब गडबड वंद हो गइ वाहा, वाहा, मैं सबके संजोगमें हूं तब तक ही दु खी हु इतना विचारते रोग गया निद्रा आइ स्वप्नमें सा तमा देवलोक देख जागृत हुये विचार करते तुर्त जाति स्मरण ज्ञान पैंदा हुवा पुत्रको राज दे चारित्र ले वनवास स्विकारा उत्तम राजा के वियोग के दु.खसे घवराइ हुइ प्रजा आक्रंद करने लगी, कि जो सुण सक्रेंद्रजीको दया आइ ऋषिकी द्रढताकी परिक्षा करनेके लिये इंद्र वृद्ध ब्राह्मणका रुप बनाके आये, और कहने लगे कि, अहो ऋषी! इत्ने लोग क्यों विलाप करते हैं? मुनी बोले, इस नगरके बाहिर एक अति सुंदर वृक्ष फल फूल पत्रसे भरा हूवा था, उस्पे बहूत पक्षी आरा म पातेथे एक दिन वायूके योगसे वो वृक्ष टुट पडा, ठूठा रह गया, तब सर्व पक्षी अपने मतलब याद कर रोने लगे हे इन्द्र! तैसे ही यह नगरजन अपने स्वमतलबका वियोग देख रोते हैं ऐसे इग्यार प्रश्नका समाधान कर, इन्द्र मुनीको वंदना कर स्वर्गमें चला गया और नमीराज करणी कर मोक्षपधारे

(६) 'अशुची भावना'—ऐसा विचारे कि रे जीव! तूतने श-रीरको स्नान मजनादिकसे शुद्ध करनेको चाहता है, परंतु यह क भी शुद्ध नहीं होगा क्यों की इस्की उत्पत्तीओ अतरिक भेदका जरा विचार कर अव्वल माताका रक्त और पिताका शुक्र (वीर्य)

का आहार कर यह सरीर बना था, अशूची (भिष्टाके) स्थानमें वृद्धी पाकर रक्तके नालेमें बाहिर पडा, और माताका दूध पी कर बडा हुवा, सो दूध भी जैसे रक्तमास शरीरमें रहते हैं, तैसाही हैं और अबी अनाज खाता है सो भी अशूचीके खातसे पैदा होता हैं

अब तेरे शरीरके अदरके पदार्थोंका जग विचार कर, इस शरीरमें ७ कला हैं — १ मास, २ लोही, ३ मेद इन तीनोंके बीचेम तीन झिली हैं सो, ४ कृतफिये के बीच, एक झिली, ५ आंतोके बीच एक झिली, ६ पेटमें जठरामीको धरनेवाली एक झिली, ७ और वीर्य को धरनेवाली एक झिली इस शरीरमें सात आसय (स्थान) हैं १ हृदयमें कफका स्थान २ हृदयके नीच आमका स्थान, ३ नाभी उपर दावी बाजु जठरामिका स्थान (अमि पर तिल है,) ४ नाभीके नीचे पवनका स्थान, ५ पवनके स्थानके नीचे पेडुमें मल (भिष्टा) का स्थान, ६ पेडु पास जरासा नीचे मुत्रका स्थान (इसे बस्ती कहते हैं,) ७ हृदयके कुछ उपर जीवका और रक्त (लोही) का स्थान स्रीको ३ जास्ती है —१ गर्भस्थान और (२–३) दूधस्थान (स्तन) यों स्रीके १० स्थान हुये

इस शरीरमें ७ धातु है १ रस, २ लोही, ३ मास, ४ मेद ५ हाड, ६ मींजी, ७ शूक्र जो आहार करता है सो पितके तेजसे पककर पहिले चार दिनोंमे उसका रस होता है, फिर चार दिनोंमे उस रसका लोही होता हैं, यों चार २ दिनके अंतर से एकेक धातुपणे प्रगमता २ एक महीनेके अदर शूक्र होता हैं

सात उपधातु —(१–२–३) जीभका, नेत्रका, और गलेका मेल रस की उपधातु है ४ कानका मेल मांसकी उपधातु ५ वीस ही नख हाडकी उपधातु ६ आखका गीड मींजीकी उपधातु ७ मुख के

उपरकी चिकणाइ शुक्रकी उपधातु

मांस रुप जो धातु है उसे 'वसा' तथा 'ओज' कहते हैं यह घृत जैसा चिकणा होता है सर्व शरीरमें रम रहता है यह शीतल और पुष्टीका कर्ता बलवान है

७ त्वचा (चमडी) १ भामनी नामे उपरकी त्वचा चिकणी है, सो शरीरकी विभूती (शोभा) करनेवाली है २ लालरंगकी त्वचा उसमें तिल आर्य पैदा होता है ३ श्वेत त्वचा उसमें चर्म दल रोग पैदा होता है ४ तांबेके रंग जेसी त्वचा उसमें कोढ रोग पेदा होता है ५ छेदनी त्वचा उसमें अठारह प्रकारके कोड पैदा होत हैं ६ रोहणी नामे त्वचा उसमें गुमडे गडमाल गमुख रोग पैदा होता है ७ स्थुल त्वचा, उसमें वीद्रधी रहते हैं

तीन दोषका स्वरुप—१ वात (वायू), २ पित्त, ३ कफ इन तीनोंको कोई तीन दोष और कोई तीन मेल कहते हैं

१ वायू शरीरमें सर्व ठिकाणे वस्तुओका विभाग करता रहता है यह सुक्ष्म, शीतल, हलका और चंचल होता है यह नसे रुप नल कर के जो वस्तु खानेमें आती है, उसको ठिकाने पहुचाता है इसके पाच स्थान हैं—१ मलका स्थान २ कोठा (पेट) ३ अग्नी स्थान ४ हृदय और ५ कंठ इन पाच ठिकाने रहता है १ गुदामें रहता है उस अपान वायू कहते हे २नाभीमें रहता है उसे सामान्य वायू कहते हैं ३ हृदयमें रहता ह उसे प्रानवायू कहता हैं ४ कंठमें रहता है उसे उदान वायू कहते है और ५ सर्व शरीरमे रमता है उसे व्यान वायू कहते है इस प्रकृति वालेके लक्षण —केश छोट, शरीर दुर्बल लुखास लिये होता है, इसका मन चचल रहता हे, वाचाल होता हे, और इसको आकाशमें उडनेके स्वप्न आते हैं इमे रजोगुणी कहते हैं

२ पित्त गरम पतला, पीला, कड्वा, तीखा, दग्ध होनेसे खट्टा होजाता है यह पाच ठिकाणे रहके पांच गूण करता है १ आसयमें तिल जितना अमी रुप होकर रहता है यह अमी पांच प्रकारकी (१) मंदामिसे कफ (२) तिक्षणामिसे पित (३) विपमामिसे वात (४) समामी श्रेष्ट (५) विपमामी नेष्ट २ त्वचामे रहकर कांती करता है ३ नेत्रमें रहकर वस्तुको देखाता है ४ प्रकृतीमे रहकर वस्तुको पाचन कर खाये हुये का रस लोही बनाता है ५ हृदयमें रह बुद्धी उत्पन्न करता है इसके ५ नाम हैं—१ पाचक, २ भ्रंजक, ३रजक, ४अलोचक५ साध क इसकी प्रकृतिवालेके लक्षण जवानीमें श्वेत बाल होवे, बुद्धिवान होवे पसीना बहूत आवे, क्रोधी होय, और स्वप्नमें तेज देखे इसे तमो गुण कहते हैं

३ कफ चिकणा, भारी, श्वेत, शीतल, मीठा होता है, दग्ध हुए खरा हो जाता है इसके पाच स्थान ;—१ आसयमें, २ मस्तकमें, ३ कंठमें, ४ हृदयमें, ५ सन्धीमें, यह पाच ठिकाने रह स्थिरता कोमलता करता है इसके पांच नाम —१ क्लेदन, २ स्नेहन, ३ रसन, ४ अव लंबन, ५ गूरुत्व कफकी प्रकृतिवालेके लक्षण गभीर, मंद बूद्धि होता है सरीर चिकणा, केस बलवान, और स्वप्न में पाणी देखे इसेतमो गूण कहते हैं

और भी इस शरीरमें मास हाड मेद इनको बाधनेवाली जो नसें है उनको स्नायु कहते हैं यह शरीर हडीयांके आधारसे खडा है, जिसको आधार इनकाही है, इस देहमें सबसे बडी सोलह नसे हैं उनको करड कहते हैं यह सरीरगो सकोचन परसान शक्ती देते हैं

सरध्राका स्वरुप—कानके दो, नाकके दो, आखके दो, यह ६ ७ जनेनिन्द्री, ८ गुदा ९ मुख यों ९ छिद्र पुरुषके और स्त्रीके १ गर्भा

सय, और दो स्थन, यह २ जास्ती, यों ११ छिद्र हैं और छोटे छिद्र तो अनेक है नाभीके डावी तरफ जो आसयके ऊपरतिल है सो पाणीको प्रश्रण करनेवाली नसका मुल है इससे ही प्याम (तृपा) शात होती है और कूख (पेट)में जो दो गोले हैं, वो जठरके मेदको तेज करते हैं इस शरीरमें सर्व कोठे ७२ हैं जिसमें छे कोठे वड़े हैं जिसमेंसे शीतकाल (सियाले) में तीन कोठे आहारके, दो कोठे पाणीके और एक कोठा खाली श्वासोश्वासको रहता है ऐसेही ग्रीष्म ऋतुमें दो आहारके, तीन पाणीके, एक श्वासोश्वासका खाली रहता है ऐसे ही चौमासे (वर्षाऋतु) में अढाइ कोठे आहारके, अढाइ पाणीके, एक खाली रहता है

इस शरीरमें मत्री माठ हैं पचीस पल प्रमाणे कालजो है दो पल प्रमाणे आख हैं तीस टाक प्रमाणे शूक्र है एक आढा लोही है आधा आढा चरवी है सिर (मस्तक) की भेजी एक पाथा, मुत्र एक आढा, भिष्टा एक पाथा, पित एक कलव, और श्लेष्म एग कलव इस प्रमाणे शरीरमें है * जो इससे ज्यादा हो जाय तो रोग पेदा होवे, और कमी हो जाय तो मृत्यु निपजे

एक सो साठ नाडी नाभी के उपर (यह रसको धरनेवाली हैं) एक सो साठ नाडी नाभीके नीचे, एकसो साठ त्रीछी, हाथ प्रमुखमें लपटी एकसो साठ नाडी नाभीके नीचे गुदेको वीट रही है पच्चीसनाडी श्लेष्मको, पच्चीस पित्तका, दश शूकका धरनेवाली है, यों सर्व नाडी ७०० है

इस शरीरके दो हाथ दो पग, यों चार शाखा एकेक शाखामें तीस२

* ८ सरसवका १ जव, ४ जवकी १ रती, ६ रतीका १ मासा ४ मासाकी १ टांक, ८ टाकका १ पइसा १ पइसेकी १ पल, ४ पलका १ पाथ, ४ पाथका १ सेर, ४ सेरकी १ आढक, ४ आढक की १ द्रोण

हडी यह १२० हुइ, ५ जीमणी कमरमें और ५ डावी कमरमें, चार भग (योनी) में और चार गूदामें, एक श्रीकनमें, बहतर दोनो पस वाडेमें, तीस पीठमें, आठ हृदयमें, दो आंखमें, नव ग्रिवामें चार गलेमें, दो हडवचीमें ३२ दांत, एक नाकमें, एक ताल्लुवेमें सर्व ३०० हडी हुइ

इस शरीरमें सोढ तीन क्रोड रोम हैं, जिसमेसे दो क्रोड एकावन लाख गलेके नीचे और निन्याणु लाख गलेके ऊपर हैं

इत्यादि अशूची अपवित्रतासे और आधी (चिंता) व्याधी (रोगी) उपाधी (काम—कार्य) करके यह शरीर पुर्ण भरा है. जहां तक पुर्ण पून्य है, वहां तक सर्व अपवित्रता छिपी है, इसे गोरी काली चमडी ढांक रही है जब पाप प्रगटे तो विगडते किंचित् ही देर न लगेगी यह भावना सन्त कूमार चक्रवर्तीने भाइ अयोध्या नगरीका महा रुपवत सनत कुमार नामे चक्रवर्ती राजाकी पहिले स्वर्गके इद्रने, देवसभामें प्रसंशा की सो एक देवताने मानी नहीं, तुर्त वृद्ध ब्राह्मण का रुप बनाकर चक्रवर्तीके पास आया, रुप देख आश्चर्य पाया स्नान करत हुए चक्रवर्तीने पूछा, हे देव ! कहासे आना हुवा ? देव बोला मैंने बचपनमे आपके रुपकी प्रसशा सुण चलना सुरु किया, चलते २ इतने वर्षका हो गया आज मेरे मनोरथ पुर्ण हूवे चक्रवर्ती अभिमान लाके बोले. अबी क्या देखता है, जब सोलह शृंगार सज राज सभामें सब परिवारसे बैठूं तब देखेगा तो तुं और भी आश्चर्य पायगा- इतने कहनेमें ही चक्रवर्तीका शरीर सडे हुये काचरेकी तरह फट गया कीडे पड गये ! देख चक्रवर्तीको तुर्त वैराग्य दशा प्राप्त हूइ, कि जिस सरीरको मैंने अत्युतम माल खिलाये, शृंगार सजाये अनेक सुख बताये इसीने मेरेको दगा दिया, तो दूसरेका क्या कहना! धिक्कार२

इस ससारको ? तुर्त ही सर्व ऋद्धिका त्याग कर साधु पद ग्रहण किया, ७०० वर्ष तक वो रोग शरीरमें रहा, फिर निरागी हो केवलज्ञान पाकर मोक्ष पधारे

७ ' आश्रव भावना ' ऐसा विचार कि रे जीव तेने अनत अनंत संसार परिभ्रमण किया, इसका मूल्य हेतु आश्रव ही है क्यों कि पाप तो इस जीवने अनंत वक्त छोडा परन्तु आश्रव रोके विन धर्म पूर्ण फल नहीं दे सक्ता है, आश्रव बीस प्रकारके होते हैं, परन्तु यहां मुख्यमें अव्रतका अर्थात् उपभोग (जो एक वक्त भोगवनमें आवे आहार प्रमूख्य,) परिभोग (एक वस्तु वारंवार भोगवनेमें आवे वस्त्र,-सुपण प्रमुख) और भी धन भूमी इत्यादिककी मर्यादा नहीं करना, इच्छाका निरुधन नहीं करना, सोही आश्रव, इस भवमें महा तृष्णारुप सागरमें गोते खिलाता हैं और आगे भी दुर्गतिमे अनंतकाल विटंबना देनेवाल होता हे ऐसा जाण रे जीव ! अब तो आश्रव छोड, व्रत जरुर कर ऐसी भावना समुद्रपालजीने भाइ चपानगरीके पालित श्रावकके पुत्र समुद्रपालजी एकदा स्त्री सहित हवेलीके गोखमें बैठे हुए बाजारकी रचना देखते, एक बंधनसे बंधा हुवा, चौर वधस्थान ले जाता हुवा दृष्टि आया विचारने लगे कि देखो अशूभ कर्मोदय ! यह मेरे जैसा ही मनुष्य है, परन्तु कर्मके वशमे पडा हुवा परवस हो गया, ऐस ही जो मेरे कर्मउदय आवेंगे तो कोन छूडावेगा ? इसलिये आश्रव उदय हुवे पहिले ही इनका क्षय कर सुखी होवुं, यों विचार दिक्षा ले, दुष्करकरणी कर, केवलज्ञान पाकर मोक्ष पधारे

(८) 'सवंर भावना' -ऐसा विचारे कि रे जीव 'संसारमें रुलानेवाले आश्रवको रोकनेका उपाय एक सवर ही है इसलिये अब तो कायिक-वाचिक-मानसिक इच्छाको रुधकर एकात समतारुप धर्ममें

लीन हो ऐसी भावना हरकेसी ऋषिने भाइ पूर्व भवमें जाति मद कर चंडालके कुलमें पैदा हुये, कूरुपा वदन देख हरकेशी नाम दिया वो अपमानसे घबराये, मरनेको झपापात ले पडते थे, इतनेमें एक साधूजीने इसको देख उपदेश किया कि, मनुष्य जन्म चिंतामणी क्यों गमाता है इत्यादि सद्बोध सुण वैराग पाकर दिक्षाले, गुरुको नमस्कार कर, मांस तप ग्रहण कर, फिरते २ बनारसीनगरीके बाहिर, यक्षेक देवलमें ध्यान ध खडे हुये राजाकी पुत्री कूरुपे साधूको देख थुंकी, की तुर्त उसका मु ख टेढा हो गया राजाने ऋषिके श्रापसे डर कर, ध्यानस्त मुनीके वो कन्या अरपणदी मुनी ध्यान पार बोले, हे नृप ! हम ब्रम्हचारी साधू स्त्रीको मन करके भी नही चाहते हैं, राजा घबराया, अब इस कन्याका क्या करु ? पुराहितजी बोले, ऋषिपत्नी ब्राम्हणको देदो! भोले राजाने पुरोहितको वो कन्या दी उसके पाणी ग्रहणके लिये, यज्ञ भारम किया योगानयोग मुनी वाहीं भिक्षाके लिये पधार गये बाहिर बालक कूरुपे साधूको देख लकडी पत्थरसे मारने लगे, तब वो राजाकी कंन्या बोली की हे मूरखों ! क्या मृत्यु आई है ? इतनेमें तो वो छोक रे अचेत होकर पड गये सर्व ब्राम्हण घबराकर दौडकर आये, अपराध खामाने लगे मुनिने कहा कि, हम तो मनसेभी किसीका बुरा नहीं चाहते है यह काम तिंदुक यक्षसे हुवा होय तो ज्ञानी जाणे सर्वने भावसे पारणा कराया फिर महाराजने उपदेश किया कि हे विप्रो ! यह आतमा अनादि कालसे हिंसा धर्ममें फसा है जन्म गमाया, अब अ. धर्म यज्ञका त्यागन करो, जीव रुप कुंडमें, अशुभ कर्म रुप इंधनको तप रुप अग्नीमे जला पवित्र होवो यह सबर यज्ञ ही आत्माको तरण सरण है ब्राम्हणोको ये उपदेश अच्छा लगा, हिंशा धर्म त्यागकर धर्मी बने मूनी विहार कर करणी कर, कर्म खपा, मोक्ष पधारे

९ ' निर्जरा भावना " —ऐसा विचारे कि रे जीव ! सवरसे तो आते पापको रोक (बंदकर) दिया, परन्तु पहिले किये हुये पापको खपानेवाली तो एक निर्जरा (तपस्या ही है बाह्य अभ्यंतर १२ प्रकार, तप इस लोक परलोकके सुखकी या कीर्तीकी वाछा रहित, एकात मोक्षार्थी होकर करो, तो तुमारा कल्याण होवे ऐसी भावणा अर्जुन मालीने भाई राजग्रही नगरीके बाहिरके एक बगीचेका अर्जुनमाली की बंधुमती नाम स्त्री महारूपवती थी उसको छे लपटी देख मोहित हुये, और उस बगीचेके मोगरपाणी यक्षका नमस्कार करते हुवे माली को मजबूत बाध, उस स्त्रीसे व्यभिचार किया यह अन्याय देख यक्ष उस मालीके शरीरमें भराकर, छ पुरुष और सातमी स्त्रीको मार डाली और नित्य छे पुरुष सातमी स्त्रीको मारना सुरु रखा यों पाच मास तेरे दिनमें इग्यारसे इकतालीस मनुष्य मार सर्व ग्रामके लोग घबरा ये रस्ता बंद पड गया तब पुन्योदयसे श्री महावीरस्वामी चउदे हजार साधुके परिवारसे पधारे बगीचेमें उतरे उनके दर्शनके लिये दृढ धर्मी सुदर्शन सेठ मरणसे भी निडर हो चले गाम बाहिर अर्जुन माली मुद्गल उछालता आया, परन्तु सुदर्शन सेठके धर्म तजसे यक्ष भग गया, अर्जुन मूर्छा खाकर पड गया उसे उठा महावीरस्वामी पास लाये, उपदेश सुण मालीने दिक्षा ली, बले २ पारणा सुरु किया, पारणे के दिन ग्राममें भिक्षाके लिये जाए तब जिनके कुटुवको मारे थे वो लोग मुनीको घरमें ले जा ताडन तर्जन करे, आप सम भाव महन करे, और कहे कि, मैने तो तुमरे कुटुवको प्राण रहित किया, और तुम मुजे जीता छोडते हो यह बडा उपकार है ऐसी क्षमा और तपश्चर्या कर, छे महीनेमें कर्मोके वृन्द तोडकर मोक्ष पधारे

१० " लोक संठाण भावना " —ऐसा विचारे कि इस लोक

का क्या संठाण (आकार) है ? इसका सठाण तीन दिवेके जैसा (इसका संपूर्ण स्वरुप दूसरे प्रकरणमें जानना) यह भावना शिवराज ऋपिने भाइ बनारसी नगरीके बाहिर बहुत तापसोंम एक जबर तप करनेवाला शिवराज तापसको विभग अज्ञान उत्पन्न हुआ, जिससे सात द्वीप और सात समुद्र जितनी पृथ्वी देख लोकसे कहने लगा, मुझे ब्रह्मज्ञान पैदा हुवा है जिससे सपूण पृथ्वी सात द्वीप समुद्र रुप देखता हूं बस इतनी ही पृथ्वी हैं, आगे अधकार है फिर भिक्षा लेने गाममें आया तब सब लोक कहने लगे कि श्री महावीरस्वामी तो असंख्याते द्वीप समुद्र फरमाते हैं और शिवराज ऋषी सात द्वीप सात समुद्र कहते हैं. यह कैसे मिले ? यों सुण शिवराज ऋषीने विचारा कि में महावीरस्वामीसे चर्चा करु, मेरी प्रत्यक्ष बात झूठी कैसी होवे ? जा ज्यादा होवे तो वोमुजे बतावे यों विचारता भगवत के पास आय प्रभूके दर्शनसे विभग अज्ञानका अवधज्ञान हुवा, और आगे देखने लगा यों असख्य द्विप समुद्र दिख तुर्त प्रभूको नमस्कार कर शिष्य हुवा कर्म खपा मोक्ष पधारे.*

(११) " बोधबीज भावना " –ऐसा विचारे कि, रे जीव ! तेरा निस्तारा किस करणीसे होवेगा ? इस जीवका मोक्ष देनेका मूल्य हेतु सम्यकत्व है सम्यकत्व विन उत्कृष्ट करणी कर नवग्री वेग तक जा आया परन्तु कुछ कल्याण न हुवा अब सम्यकत्व फरसनेका अवसर आया है सो प्रकृतियोंको मोड सम्यकत्व रत्न प्राप्त कर सम्यकत्व है सो जैसे डोरे वाली सूइ कचरेमें खोवती नहीं है, तेसे समकिती जीव बहुल ससारमें परिभ्रमण नहीं करते हैं ज्यादेमें ज्यादे अर्ध पुद्गल परा

* विष्णु लोक इस कारण से ही सात द्विप सात समुद्र मानते होवें सा किम मालुम ?

वतनके अंदर मोक्ष अवश्य प्राप्त होवे यह भावना ऋषभ देवजीके ९८ पूत्रोंने भाइ ऋषभ देवजीके बडे पुत्र भरतेश्वरजी छे खड साधके पीछे आय, परन्तु चक्र रत्न अवधशालामें प्रवेश नहीं करें, तब पूरोहितने कहा कि, आपके ९९ भाइयोंने आज्ञा नहीं मानी भरतजीने झठ दूत भेजा कि तुम सूखे २ राज करो, फक्त मेरी आज्ञा मानलो ९९ मेंसें ९८ भाइ बोले कि, हमारे पिता हमारेको राज देगये हें, हम उनको पूछें फिर वो फरमायेंगे सो करेंगे, यों कह कर श्री ऋषभ देवजी की पास आकर कहने लगे कि भरत बहूत रिद्धीके अभिमानमें आकर हमको सताता हे, अब हम क्या करें ? श्री ऋषभ देव स्वामीने फरमाया कि हे राजपुत्रों ! " सवुझ किंन वूझह, संवोही खलु पेच दुल्लाहा " प्रतिबोध पावो ऐसा राज तो इम प्राणीको अनत वक मिल गया, परन्तु बोध वीज सम्यकत्वकी प्राप्ती होनी बहूत दुर्लभ हे इस लिये सम्यक्त्व युक्त चारित्र अगीकार कर, मोक्ष स्थानका राज सपादन करो, कि जहां भरतका जोर नहीं ही चले यों सुण प्रतिबोध पाकर ९८ भाइ दिक्षा लेकर करणी कर कर्म खपा मोक्ष पाये

(१२) " धर्म भावना " —ऐसा विचारे कि रे जीव ! यह नरभव है सो निर्वाण (मोक्ष) का कारण हे और मोक्ष धर्म करणीसे प्राप्त होती है यह जन्म धर्म करनेको ही पाया हे कहा है कि "धर्म विशेषो खलु मनुष्याणा, धर्मेण हीना पशुभि समाना " मनुष्य जन्ममें विशेष धर्म ही हें, धर्म विन नर पशू समान हे इस लिये धर्म अवश्य करना जिनेश्वरने धर्मका मूल दया फरमाइ हैं दया धर्मका मूल हे ' धर्मका लक्षण ही ' अनुकंपा ' हे यह भावना धर्मरुची अणगारने भाइ चंपानगरीमें धर्म रुचीजी महाराज मास खमणके पारणेके लिये नागश्री ब्राम्हणीके घर पधारे उसदिन उसने कडवे तुंबेका शाक

भूलसे बनाया था उसका मूनीको दान दिया मुनीने वो लेकर गुर जीको वतया गुरुजीने हुकम दिया कि तपस्यासे तुमारा काठा निर्बल हो रहा है यह विषमय चीज खावेग तो अकाल मृत्यु प्राप्त होगी इस लिये निर्वद्य ठिकाणे पठो आवो मुनी इट पचाकी जगा जाकर एक बिंदू उसका डाला, जिसपर बहूत कीडियों आइ और मरगइ, मुनीने विचारा कि, गुरुजीने फरमाया हैं कि निरवद्य (जहां कोई जीव न मरे ऐसे) ठिकाणे पठो आवो एक बिंदूसे इतना अनर्थ निपजा तो सर्वसे क्या जुल्म होंगा ? निर्वद्य ठिकाना तो मरा पेट है, और यह शरीर तो विनाशिक हैं, इससे इतना उपकार होय तो बहा नफाका कारण है, यों विचार तूर्त सर्व खा गये, थोडी देरमें दाह प्रगटी, समभाव आयूष्य पूर्ण कर मर्वार्थ सिद्ध विमानमें पधारे, भवातर मोक्ष पधारे

इन बारे भवनामे से जिनोंने एकेक भावना भाइ उनकी आत्मा का कल्याण हुवा, तो जा ही भावगा वा तो आवश्य मोक्ष पावेगा ऐसा जाण सदा उपाध्याय भगवत बारह भावना भाते हैं

'पडिमा' —साधु की बार प्रतिमा वहे इसका अधिकार काय क्लेश तपमें हुवा

'इंदिय निरोहो' —पाच इद्री वसमें करे इसका अधिकार प्रतिमालनता तप में हुवा

"पडिलेहणा" —पचीस पडीलेहणाका अधिकार चौथी समितीमें हुवा

"गूत्तीओ"—तीन गुप्तीका अधिकार चारित्राचारमें हुवा (यह ४५ बोल का विस्तारसे बयान तीसरे प्रकरमे हुवा)

"अभिग्रह "—अभिग्रह चार प्रकारके —द्रव्यसे, क्षेत्रसे, कालसे और भावसे इसपर श्री महावीरस्वामीका द्रष्टांत छदमस्तपणे में

विचरते हुव श्री वीर प्रभुने एकदा १३ बोलका ऐसा अभिग्रह धारणकिया कि १ ' द्रव्यसे ' उडदके बाकले सुपडेके कोण में होए, २ 'क्षेत्रस' दान देनेवाली घरके दरवाजमें बैठी होए, दरवाजेके भीतर एक पग होए और एक पग बाहिर होए, ३ 'कालसे' दिनके तीसरे पहरमें, ४ 'भावसे ' दान देनेवाली राजाकी कन्या, पगमें बेडी सहित, हाथमें कडी सहित, मस्तक मूडा हुवा, होय काछ पहने होवे चक्षुमें अश्रू सहित और तेलेकी तपस्यावाली होए ऐसी मुजे आहार देवे तो लेना

चंपा नगरीके दधिवाहन राजाका राज परचक्रीने लिया, तब धारणी राणी सील रक्षाके लिये जीभ काटकर एक पुत्री चदनबालाको छोड मर गइ एक सिपाइने उस चंदनबालाको कसुंबी नगरीके सेठके वहां वेंची सेठकी गेरहाजरीमें सेठकी स्त्री मूलाने चदनबालाका सिर मुंडाया, काछ पहीरायी, हाथ पगमें बेडी डाली, और भुंवारेमें रख कर अपने पिताके घरको चली गई सेठजीने तीन दिनमें उस भुंवारेमेंसे निकाली उस वक्त दूसरा जोग न होनेस उडदके बाकले सूपडेमें दिये इतनेमें श्री महावीरस्वामी वहां पधारे प्रभूको देख हर्ष अश्रू टपकाती सती चदनबालाने बाकले पाच माम पचिम दिनके पारणेमें दिये, परत संसार किया, बारे क्रोड सोनेये (मोहोरों)कि वृष्टि हुई, बेडीया टुट गइ, शिरपर बाल आ गये, आखिर प्रभु केवल ज्ञान पाकर मोक्षपधारे, और सती भी सयम लेकर मोक्ष गइ ऐसेही चार प्रकार अभिग्रह उपाध्याजी धारण करते हैं

यह ४ पिंड विशुद्धी, ५ सामिति, १२ भावना, १२ पडिमा, ५ इंद्री निग्रह, २५ पाडिलेहणा, ३ गुप्ती, ४ अभिग्रह, सब मिलकर ७०गुण करण सित्तरीके हुवे

' चरण सित्तरिके ७० गुण '

गाथा ॥ वय समण धम्म संजम वेयावच्च च बंभ गुत्तीओ।
नाणाइ तीय तव, कोहो निग्गहाइं चरणमेय ॥

'वय' ;—महाव्रत पांचका अधिकार तीसरे प्रकरणकी आदिमें

'समण धम्म' —दश प्रकारके समण (साधु)का धर्म

गाथा ॥ खती मुत्तीय अजव, मद्दव लाघव सच्च।
संजम तवे चेयइ, बंभचेर वासीय ॥ *

१ 'खती' —क्रोधरुप महा शत्रुको मारना उसका नाम क्षमा हे, कोइ अपनेको कठोर वचन केहे तो ज्ञानी ऐसा विचारे कि मेने इस का अपराध किया है या नहीं किया होवे तो ऐसा विचारे कि बराबर मेने इसका अपराध किया है तब ये मुजे गालीप्रदान कर अपराधका बदल लेता है बहुत अच्छा! गये जन्ममें व्याज सहित चुकाना पडता, सो इसने यांहि ही ले लिया, ऐसा विचार कर उसको क्षमाके शांत करे, ओर अपराध नहीं किया होवे तो विचारे कि, यह इसके अपराधीको गाली देता है, मेंने अपराध किया ही नहीं तो मुजे गाली केसे लगे ? आप ही थककर रह जायगा ‡ तथा ऐसा विचारे कि, यह जो मुझे चोर

* धृति क्षमा दमोस्तेय शौचमिन्द्रीयनिग्रह ॥
धीर्य विद्या सत्यक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ॥
मनुस्मृति, अध्याय ६ श्लोक ९२

‡ दोहा— दीधा गाली एक है पलट्या गाल अनेक।
जोगाली देवे नहीं तो रहे एक की एक,

अर्थात् किसीने अपने का गाली दी और उसे सहन कर अपन चुप बैठ रहे तो वो एकही गाली बनी रहती है, और जो उसने एक दी अपने दो दी यों विस्तार बढाये तो फिर अनेक हो जाती है ऐसा जान चुप ही रहना अच्छा है

दुराचारी, ठग, कपटी, चंडालादि कहता है, सो मेरे पूर्वभवका स्मरण करता है, मैं अनत वक्त ऐसे भव कर आया तो भी अक्कल ठिकाने नहीं आइ, अब तो लाना चाहिये कितनीक गालियें आशीर्वाद जैसीं होती है, जेसे ' तेरा खोज जावे ' ऐसा कहे तब चिंतवे कि मैं मोक्ष जावुंगा तब मेरा खोज जावेगा ! ' कर्म हीन ' –हलके कर्म तो भगवानके होते है ! ' अकर्मी ' २ तो सिद्ध भगवान है, और 'साला ' कहे तो विचारे कि उत्तम जन तो सर्व स्त्रियोंसे भगिनी भाव ही रखते हैं ऐसे सब बातो को सीधी ग्रहण करे * तथा ऐसा विचारे कि जैसी जिसके पास वस्तु होवेगा वैसी देवेगा, हलवाइके पास मिठाइ और चमारनेके पास जूते मिलते हैं § जो तुझे गाली खराब मालुम पडती है तो तू ये मलीन चीजको तेरे पवित्र हृदयमें ग्रहण कर क्यों मलीन होता है ? कोइ सुज्ञ सुवर्ण थालेमे भिष्टा नहीं भरगा जो ग्रहण न करे, उसे क्रोध ही पेदा न होए, और भी ऐसा विचारे कि यह गाली देनेवाला तो बडा उपकारी है, क्योंकि अपना पुन्य खजाना खुटाकर मेरे कर्मोकी निर्जरा करता हैं + ऐसा वक्त वारंवार आना मुशकिल है इस लिये तू समभावसे सहन कर, जो इसकी बराबरी करेगा तो फिर

* दोहा—सीधी साहाही मोक्षदे, उलटी दुर्गत देत,
अक्षर तीन को ओलखो दोय लघु गुरु एक

अर्थात्–दो लघु और एक गुरु अक्षर का शब्द समता है जो इसे सीधा ग्रहण करे तो समता धारण करने से मुक्ती मिलती है और उलटा पढने से येही ' तामस ' शब्द हुवा सो दुर्गति दाता है

§ दोहा —जैसि जिस पास वस्त है, वैसी देखत लाय,
वाका बुरा न मानीये, वो लेन कहासे जाय, १

+दोहा — गाली खमेमें गुण घणा, गाली दिये म दोष
उसको मिलेगी नारकी उसको मिलेगी मोक्ष

ज्ञानी अज्ञानीमें क्या फरक पडा ? दानो सरीखे ही हुये +?

और भी जो वो क्रोधित हो कर वचन कहता है उसके एकेक शब्दका अर्थ अपने हृदयमें विचार करे कि यह कहता है सो दुर्गुण मेरी आत्मामें है या नहीं ? जो वो दुर्गुण अपनी आत्मामे निकल जाय तो वडा*खूपी होय, कि हकीम तो नाडी देखकर असका रोग वताते है, और इसने तो नाडी विन देखे हीं मेरा दुर्गुण—रोग वताया!इस लिये यह वडा उपकारी है अव इस दुर्गुणको इलाज करके निकालकर पवित्र होवू और जो वो कहेवैसे दुर्गुण अपनी आत्मामें न होवे तो विचारे कि क्या इसके कहनेसमें खोटा हो जावूंगा ? हीरेको कोइ कांच कहे तो क्या वो काच होता है ! कभी यह वचन आश्रीय कहा

अव कोइ भहार करे (मारे) तो ज्ञानी ऐसा विचारे कि इसके मेरे पूर्व जन्मका कोई वैर वदला देना होगा सो यह लेनेको आया

+ दोहा—गाली सममें गुण घणां, गाली दिये में दोष
उसको मिलेगी नारकी, उसको मिलेगी मोक्ष,
' BLESS THEM THAT CURSE YOU "—MATT V 44.
' जो तुझे शाप दे उसको तू आशिर्वाद दे !—वाइवल
गाथा — अक्कोसिज्जापरे भीक्खू न तेसि परिसेजले;
सरीसो होई बालाण, तम्हा भिक्खुन सजले
उत्तराध्यन अ २

जो कोई साधु को अक्रोश (कठिण) वचन कहे, तो साधू उसपर क्षपा नहीं होवे क्यों कि वो कहने वाला तो अज्ञानी है और ज्ञानी हो कर भी उसपर कोप किया तो ज्ञानी अज्ञानि दोनो एक सरीखे हुव ऐसा जाण क्षमा मवधारन करे,

* दोहा—बुरा १ सबको कहें, बुरा न दीसे कोय,
जो घटसोधू आपणा तो मोसम बुरा न कोय १
बुरा २ सब तुजकह तुं भला कर मान,
बुरे भला दाम दे सभी वन पकान २

है श्री उत्तराध्यायनजी सूत्र फरमाते है कि—"कड़ान कमा न मोखअत्थी" अर्थात् कृत कर्मका वदला दिया विन तो कवी छुटका नहीं होना जो में अवी नहीं देउंगा तो दूसरे-तीसरे जन्ममें भी देना पडेगा इस लिये अवी समभावसे देऊ तो थोडेमेंही छुटका हो जायगा § जैसे गरीव करजदार सो रुपे देनेकी शक्ति न होय और नरमाइसे ७५ देकर फार गती मांगे तो भी साहुकार दे देता है, ऐसा समझकर शत्रू के पास जाकर नम्रता से कहे की मेरे से जो कुछ अपराध हुवा हो सो माफ करो, इत्यदि कहे उसे शात करे महाज्वाला भी पाणी से शीतल पड जाती है, तो क्या नम्रतासे शत्रु शात न होगा, जरूर ही होगा ऐसे नम्रता से उसे शांत कर, फिर उसका दुर्गुण उसे बता कर सुधारा करना तथा यह जो मारता है तो पुद्गलपिंड—शरीरको मारता है, शरीर तो एक वक्त मरेगा ही और मेरी आत्मा तो अजरामर है, उसको मारनेको समर्थ त्रिलोकमें कोई नहीं है तथा यह घातक तेरी परीक्षा लेनेको आया है, कि इसने खंती (क्षमा) धर्म अगिकार किया सो वरावर किया है कि नहीं ? इसलिये तूं डठे मत पुरी परीक्षा द यह ऐसा प्रसंग नहीं आता तो क्या खात्री होती कि तूं भगवान का पहिला फरमान खंती धर्म क्षमा वरावर पाल सक्ता है या नहीं नर्कमें यमोंकी मार सहन करी, तिर्यंचमें ताडन तर्जन सहन करी, वैसी तो यह कुछ नहीं है तो फिर क्यों मागता है ! जो इसे समभावसे सहेगा तो पीछा नर्कादिकका दुःख नहीं सहना पडेगा तथा ऐसा पुरुष नहीं होता तो

§Forgive and ye shall be forgiven—lukeYI– 37
क्षमा कर तुझे क्षमा दी जायगी—बाइबल
Who so ever shall smite thee on thy right cheek turn to him the other also Matt v –39
"यदि तुझे कोई दायां गाल पर तमाचा मारे तो तू बायें गाल का भी उसकी तरफ करना" —बाइबल

क्या मालुम पडतीकि तु क्षमावंत है' यह तो तेरी प्रख्याती करता है देख तेरे पिता तिर्थंकरभगवान श्री महावीरस्वामी अनत शक्तीके धरणहार द्रष्टी मात्रसे दूसरेको भस्म कर सक्ते ऐसे थे, उनको गवालियोंने मारा तो भी आप जरा क्रोध नहीं लाये, और गोसालेने तेजु लेश्या डाली तो उसे शीतल लेस्यासे सीतल किया ! य पिताका अनुकरण तेरेको अवस्य ही करना चाहिये जो समर्थ हो क्षमा करे उन्ही की बलीहारीहै क्यों कि निर्वल तो वैर लेइ शक्का नहीं है, और सबल हो कर भी वेर न लेवे उसको क्षमा कहते है, और वोही मोक्ष पाते है वैरलेना सहज है क्षमा करना मुशकिल है

ऐसा विचार कर क्षमावांन सागर, पृथ्वी, चंदन, और पुष्प जेसे सदा रहे दु ख देनेवालेको भी सूखी करे, तेरे क्षिण भगुर शरीर के वि नाशसे दूसरे को सूख होतो होतो होने दे, और दूसरे को सुखी देख सुखी बन यह क्षमा है सो इस लोक परलोकमे परम सुखकी दाता है संसार से तारनेवाली, ज्ञानादि गुणों की धारन करनेवाली, अनेक गुणों को प्रगट करने वाली, यह क्षमाही है चिंतामणी, कल्प वृक्ष, काम कुंभ, काम धेनु, इत्यादिसे भी अधिक सूख दाता है मनको पवित्र करने वाली, तन की माता तुल्य रक्षा करने वाली, जगतको वश्य करने मोहकी मत्र तूल्य, यह क्षमा है क्षमावंत कीसीका भी बुरा नहीं चिंतवता है, इस लिये उसका वेरी कोई नहीं होता है *

इस जक्त में जो जो शुभ गुण है उन सबको धारण करने वाली एक क्षमाही है इससे कहा है कि"क्षमा स्थापते धर्मः" अर्थात् क्षमा ही धर्म का रहने का स्थान है, और भी कहा है कि "क्षमा तुल्यं तपो नास्ति " क्षमा जेसा दुसरा तपही नहीं है, अध्यातम प्रकरणमे लिखा

* For giveness is the noblest revenge."
"क्षमा है सो सबसे उमदा प्रकारका वैर है"

है कि– ६६००००० उपवास से भी समर्थ हो एक गाली समभावसे सहन करनेमें नफा ज्यादा है ऐसा महालाभका कारण जान इस क्षमा धर्मकी अराधना कर श्री उपाध्यायजी सदाचरण कर मोक्ष रुप अनत सुखको प्राप्त करते है

२ ' मृत्ती ' (निर्लोभता);–जो कभी तृष्णाकी वृद्धि होय तो ऐसा विचार करे कि, जितनी १ वस्तुका सेरे सजोग मिलना है, उतना ही मिलेगा जास्ती इच्छा करेगा तो कर्मबंध होगा, और हाथमें तो कुछ नहीं आयगा और जास्ती संपत्ति जास्ती दु खकी देनेवाली होती* है कहाहै'संपत जितनी विपत' चक्रवर्ती जितनी या देवलोककी रिद्धी मिली तो भी पेट नहीं भराया, तो अब मिट्टीके झोपडेस क्या तृष्णा मिटनेवाली है? साधूको जास्ती उपगरणोंकी वृद्धी होनेसे विहरादिकमें महा कष्ट उठाना पडता है प्रती लेखनादिक क्रियामें बहुत काल जानेसे ज्ञान ध्यानकी खामी होती है और ग्रहस्थीके घर रखनेसे प्रतीबंध होता है तथा अनेक आरंभ निपजते हैं, ऐसा जाण जितने कमी उपगरण होवे उतना जास्ती सुखका कारण है जो साधु लालची हो गये हैं उनकी कोडिकी कीमत हो गइ है कोडी २ के लिये मारे २ फिरते हैं, औ' जो सेतापी है, संग्रह नहीं करते हैं, उनको किसी बातकी कमी नही है उनके हुकुमसे अनेक धर्मकार्य निपजते है ' सतोपं नंदनं वन ' संतोपी प्राणी नदन वनमें रमण करणे वालेस भी जास्ती सुखी है सतोपं परमं सुख ' ऐसा विचार कर, जो वस्तु अपनेको प्राप्त हुइ है उसपर विशेप ममत्व न रखे, जो सरीखे साधर्मी साधुका जोग मिलेतो उनको आमत्रणा करे, ह कृपा सिंधो! मेरेपर कृपा कर यह

* महमुद गजनी ने सोल वक्त हिन्दुस्तान पर हमले कर, बहुत द्रव्य लूटा और नगर कोटके सामनाथके मन्दिरमें से २ मण जवैरात १० मण सुवर्ण १०० मण चांदी और अगणित रोकड धन लूट मेला किया था वो मरन लगा तब सब धनका ढगला कराकर उसपर बैठकर रोने लगा कि हायरे इस सब धन को छोड कर मैं चला जाउंगा, इसमें से एक कोडी भी मेरे साथ नहीं आयगा ऐसी प्रभा दुःख दाता होती है

वस्त्र पात्र आहार इसमेसे आपकी इच्छा होय सो ग्रहण कर मुझे पावन करो ' जो वो ग्रहण करे तो समझे कि आज में कृतार्थ हुवा, इतनी वस्तु मेरी लेखे लगी आज मेरे धन्यभाग्य ' ऐसा निर्ममत्वपणा धारण करनेसे इस भवमें सर्व इच्छित वस्तु प्राप्त कर सर्वमान्य हो कर परभवमें मोक्ष गामी होगा

३ ' अज्जव '—सरल—निष्कपटी पणा धारण करे कहा है कि'अज्जु धम्म गइ तर्ष ' जो सरल होगा सो धर्म धारण कर सकेगा ऐसा जाण जैसा ऊपर वैसा ही अतरमें रहे, यथाशक्ति शुद्ध क्रिया करे, जो शक्ति न होय तो पूछे उसे साफ कह दे कि मेरी आत्माकी खामीहै, में बराबर संयम व्रत नहीं पाल सक्ता हू जिसदिन वीतरागकी आज्ञा का यथातथ्य आराधन करुगा वोही दिन परम कल्याणकारी होगा और यथा शक्ति शुद्ध क्रियाकी वृद्धि करे कुछ लिंग • (भेप) धारण करनेसे आत्मासिद्धि नहीं होती है लिंग तो फक्त लोकोंको प्रतीत उपजानेके लिये है भेषसे फक्त पहिचान होती है, कि यह ग्रहस्थ है, और यह साधु है जो साधुका लिंग धारण कर ग्रहस्थके कर्म करते हैं वो अनंत संसारकी वृद्धी करते हैं × यों जाण पहिलेसे ही साधूका लिं-

* An actor is no King, though he struts in royal appendage.

"बादशाही दमाम (ठाट)से घूमने वाला नाटककार (पात्र) वास्तवमें राजा नहीं है ,

कवित्ता—× ज्योंलो भगतकी नाहि त्योंलो भगजी नाहीं,
काहे को गुंसाइ जो शाइ सो न यारी है;
काहे को विगड़मन आले है विरागा मन,
कहा पीर जो जो, पर पीर न विचारी है
कैसो यह जोगी जन, जाको न योगी मन
आस नहीं मारी जाने, आसन ही मारी है;
सूफी उपाइ ऐसी उमर गमाइ
कछु करीन कमाइ काम भयोम भलाइ को,
इहां तो सवाइ धाम धुमाही मचाइ प्यारे,
यहां तो नहीं है कछु राज पोपा बाइको

ग विचारकर ही ग्रहण करना, और ग्रहण करलिया, तो फिर किंचित् दोष नही लगाना शुद्ध प्रवृति रख जैन शासन खूब दिपाना जो बाह्य अभ्यतर वृति शूद्ध रखते हैं, उनको थोडी ही क्रियासे शीघ्र मोक्ष मिलती हैं

४ 'मद्दव'—नम्रता रखे विनय जिन शासनका मूल, मोक्षका दाता है विनीत सबको प्यारा लगता है विनीत सर्वोतम गुण सपादन कर सक्ता है * जो कभी अभिमान आवे तो निम्न लिखित विचारोंसे अभिमानसे मुक्त हो जाना —१ जातिका अभिमान आवे तो विचारे कि रे जीव। तूं अनंत वक्त चंडालादि नीच जातिमे जन्म धारण कर आया अनेक नीच कर्म कर आया, सो सब भूलकर अब क्या मान करता है? २ कुलका अभिमान क्या करता है? केइ वक्त वूकस (वरणशंकर) कुलमें जन्म धार कर, अनाचार सेवन कर, तुं जगत् निंद्य हो आया है. ३ बलका अभिमान आवे तो विचारे कि, तिर्थंकर चक्रवर्तीयोंके बलके आगे तेरा बल कोनसी गिणतीमें है ४ लोभका अभिमान आवे तो विचारे कि, लब्धी धारी मुनीके आगे तेरा लोभ तृण मात्र है, तूं क्या ला सकता हैं? ५ रुपका अभिमान आनेसे विचार करे कि

---

* गाथा—विणउ सासण मुल, विणउ निब्वाण साहगो;
विणउ विप्प मुक्कस्स, काउ धम्मो काउ तवो

अर्थात्—जैन शासन का मूल विनय नम्रताही है विनीत कोही मोक्ष मिलती है जिनमें विनय गुण नहीं है, उनका धर्म और तप व्यर्थ है

गाथा—विणउ नाण, नाणाउ दंशण, दंशणाउ चरणं चरणहुंति मोक्खो

अर्थात्—विनयसे ज्ञान, ज्ञानसे सम्यक्त्व सम्यक्त्वसे चारित्र और चारित्रसे मोक्ष यों विनय से अनुक्रमे उत्तमोत्तम गुणों की प्राप्ती होती है

'Humility is the foundation of every virtue"

"हरएक सद्गुणका पाया नम्रता है"

'Mens merit rise in proportion to their modesty"

"ज्यों ज्यों मनुष्य नम्रहोता है त्यों त्यों उसकी लायकी पढती है'

इस उदारिक शरीमें अनेक रोगभरे हैं तो रुपका विनास होते क्यदेर लगी ? तथा तीर्थंकर कि जो एक हजार आठ उत्तम लक्षणके धणी हे उनकी पास इद्रका तेज भी सूर्यके आगे दीपक जैसा हो जाता हे, तो तेरा रुप कौनसी गिनतीमें है? ६ तपका अभिमान होनेसे ऐसा विचार करे कि, देख श्री महावीर भगवानको, कि जिनोने कुल साडे बारे वर्षमें १ छे मासी, पाच दिन कमी छे महीनेमें अभीग्रह फली ९ चौमासी, २ तीनमासी, ६ दोमासी, २॥मासकी दो, १५ दिनके ७२ बक्त, भद्र, महाभद्र, शिवभद्र, प्रतिमा १६–१५ १६दिनकी,और १२ मी भिक्षु प्रतिमा तेलाकी १२ बक्त, २२९ बेले, सब मिलाकर साडेबार वर्ष और पन्नेरे दिनमें शिर्फ इग्यारे मास और उन्नीस दिन छुटक २ आहार किया अब कहे तेरेसे कित्नी तपस्या होती हैं सो ७ श्रुतिका अभिमान होनेसे विचार करे कि, बुद्धिका क्या मद करता है? देख गणधर महाराज उपन्नेवा (उत्पन्न होनेवाले पदार्थ) विगनेवा (नाश होनेवाले पदार्थ) धुवे वा (शाश्वते पदार्थ) इन तीन पदमें चउदे पुर्वका ज्ञान कि जिसके लिखनमें १६३८३ हाथी डूबे जितनी स्याही लगे इतना मुहुर्त मात्रमें कठाग्र करलेते थे तेरसे ये कुछ हो सक्ता हे ८ ऐश्वर्यका मद होनेसे विचार करे कि देख तीर्थंकरोंका परिवार आगे तेरा कितनाक परिवार है ? सो तू अभिमान करता है ऐसा विचार कर आठही मदसे अपनी आत्मा बसमें लावे किंचित मात्र अभिमान नहीं करे सो सर्वगुणसपन्न हो, सर्वका प्रेम प्राप्त कर, थोडे कालमें मोक्ष प्राप्त कर सकेंगे जो जाति आदि ८ उत्तम गुणों कि प्राप्ती हुइ हैं तो उनको अभिमान जैसे नीच कृतव्य में व्यय नहीं करते विशेष नम्रता, धार, विनय वयावच्च, तप, संयमादि उत्तम काममें लगा विशेष उत्तमता प्राप्त करनी यह उत्तम जनोका कृतव्य हे

५ ' लाघव '—जैसे सामान्य नदीके तिरैया भी लंगोट सिवाय ज्यादा वजन पास नहीं रखते हैं, तो संसार जैसे दुस्तर समुद्र तिरने वाले को तो बहुत हल्का होना चाहिये, वो हल्कापणा धारण करना सो दो प्रकारका, द्रव्यसे और भावसे द्रव्यसे तो उपगरण कमी करे, और भावसे प्रकृतियोंको मारे, कषाय घटावे जड चैतन्यको भिन्न २ समझ जड पदार्थोंसे प्रीति घटावे देखो जडके प्रसगसे चैतन्यको अनंत विटबना भुक्तनी पडी, तो भी हाल तक प्रीति कमी नहीं हुइ अब कमी करनेका अवसर आया, ऐसा विचार कर, किसी भी पदार्थ पर मोह ममत्व न रखे ज्यों ज्यों जीव हल्का होता जायगा त्यों त्यों ऊंचा आता जायगा शास्त्रमें कहा है, जैसे तुवडी को सण और मट्टीके आठ लेप लगाकर, पाणीमें डालनेसे वो डुबे जाती है, और ज्यों ज्यों वो लेप गलते जाय, त्यों त्यों उपर आती जाय ऐसे होते २ असीर तुंवडी तीरको प्राप्त होती है ऐसे ही यह जीव मोह ममत्वको कमी करेगा, त्यो मोक्षको नजीक जायगा और भी ' लाघव धर्म वाला ऐसा विचारे कि, दुनियामें बडा दु ख मेरेपणाका है * प्रत्यक्ष दृष्टांतसे देखिये ! जो समुद्रमे स्नान करता है उसके सिरपर क्रोडो मण पाणी फिरनेसे उसे किंचितही वजन नहीं लगता है, और उसमेंसे एक घडा भरके लेता है, ते उसका उसको भार लगता है ? इसका मतलब येही हैं कि समुद्रके पाणी पर मेरापणा (मालकी) नहीं था, सो वो भारभूत

*दोहा—आपा धर्हांहि आपदा, चिंता जहां ही सोग।
ज्ञान विना यह न मिटे, जालिम मोटे रोग॥

गाथा—एगोहू नत्थी मे कोइ नाहू मनस कस्सइ,
एवं दीन मनसं अदीन मन्न स्सघरे

अर्थात् मे अकेला हु मेरा कोई नहीं है, और न में किसी का हु ऐसे दीन मनसे सदा अदीन वृतीमे प्रवृते

कहीं हुवा, और घडेके पाणी पर मेरापणा होनेसे भारमुत हो गया बस मेरापणा है सो ही दु खवाता है रे प्राणी! तू जरा विचार कर, तेरा इस जगतमें कौन है? अपना उसको कहा जाता है, जो अपने हुकम में चले तो तेरा शरीरही तेरे हुकम में नहीं है देख तूं रोग वृद्धपणा और मृत्युको नहीं चहाता है, तो भी तेरा शरीर उनकी सोबत करता है और भी देख इस तनको तूं कहता है मेरा शरीर, तेरे पिता माता कहते है मेरा पुत्र, भाइ भगिनी कहते है मेरा भाइ इत्यादि सब स्वजन मेरा २ करते हैं शरीर एक और मालक बहुत! अब कह यह किसका है? कहा है कि ना घर तेरा, ना घर मेरा, चिडिया रेण वसेरा है" यह शरीरही तेरा नहीं है, तो धन कुटुंब तो कहां से तेरा हावे? ऐसा जान सदा अममत्वपणे रह, लाघवपणा ग्रहण करे

६ सचे (सत्य)—सचापणा सबको प्रिय लगता है किसीको झूटा कहेतो उसे बूरा लगेगा फिर ऐसी बुरी चीजको दुनीया क्यों स्वीकारती है? "सत्यात् नास्ति परो धर्म "धर्मका मूल सत्य ही है सत्य के लिये बंदोवस्त भी बहुत हैं, देखिये—

दोहा—वचन रत्न मुख कोटडी, होट कपाट जडाय,।
पेरायत बत्तीस है, रखे परवश पड जाय।॥

औरभी देखिये, 'झूटा' तो अेंठवाडा (खाके बचे हुवे) को कहते है उसे कोइ उत्तम पुरुष स्विकार नहीं करते हैं सत्य है सो मनुष्य जन्मका भूपण है, ऐसा जाण निर्थक वातोंमें-विकथामें अनुरक्त मत रहो किसीको दु ख लगे, जैसे काणेको काणा नपूंशकको हीजडा, कुष्टेहीको कोडिया, वगैरा दु खकारी व नुकशान होवे या पाप निपजे ऐसा सत्य वचन भी झूट जैसा कहा है सत्य, तथ्य, पथ्य, प्रिय, अवसर उचित, निर्दोप अैसी भाषा उचारनी चाहिये

सत्यवत् * प्राणी इस लोकमें निडर साहासिक रह उज्वल यश संपादन कर आगेको मोक्ष प्राप्त करता है

७ ' संयम '— आत्माको यममें —काबुमें लेना उसको संयम कहते है. संयम प्राप्त होना मुशकिल है शास्त्रेमें २९ तरहके मनुष्य को दिक्षा देनेकी मना है १–२ आठ वर्षसे कमी और सित्तर वर्षसे उपरकी वय (ऊमर) वालेको ३ स्त्रीको देख कामातुर होवे उसे ४ पुरुष वेदका उदय जास्ती होवे उसे ५ तीन प्रकारके जडको १ देह जड (बहूत जाडा शरीर) २ वचन जड (पूरा बोल न सके) ३ स्वभाव जड (हट्टग्रही—कदाग्रही) इन तीनोंको ६ कुष्ट भगदर अतिसार इत्यादि बडेरोगवालेको ७ राजाके अपराधीको ८ देव तथा गीतादिक के जोगसे बावला होय उसे ९ चोरको १० अंधेको ११ गोला (दासीपुत्र) को १२ महा कषायी (बहूत क्रोधी) को १३ मुर्ख—भोले को १४ हिणागी (नकटा—काणा—लंगडाको) तथा हीण जाती (भंगी—भील) को १५ बहूत कर्जे वाले को १६ मतलबीको § १७ आगे पीछे किसी प्रकारका डर होवे उसे १८ स्वजनकी आज्ञा विना यह १८ तरहके पुरुषको और २० तरहकी स्त्रीयोंको दिक्षा नहीं दी जावे १८ तो पुरुषके जैसी स्त्री होय उसे, और १९ गर्भवतीको २० बाल

* सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात, ब्रूयात सत्यमप्रियम् ।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेषः धर्मः सनातनम् ॥ १३१ ॥
भद्रं भद्रं मिति ब्रूयाद, भद्रमित्यपधापदेत् ।
शुष्कं वैरं विवादं च, न कुर्यात्केनापित्सह ॥ १३९ ॥

सदा सत्य प्रियकर बोलो, सत्य होके अप्रिय होय तो मत बोलो, दूसरेको प्रसन्न करनेको भी झूट मत बोलो, सदा हितकर बोलो किसीके साथ विवाद भी मत करो वैर विरोध मत करो, हे भद्र! येही वाक्यका भद्रपणा है —मनुस्मृति, अध्याय ४

§ मतलब पुरा होनेसे पीछा संसारमें चला जाय

फको दूध पिलाती स्त्री होय उसे यह २० स्त्रीयोंको और नपुसक ● इन १९ को वर्जके और सब अभिलाषी जनोंको दिक्षा दी जावे.

संयम महासुखका स्थान है संयम बिन मोक्ष मिलती नहीं सर्व प्रकारकी चिंता–उपाधीसे अलग हो,जिन्होने संमय ग्रहण किया है, उनको लाभालाभ, सूकाल–दूष्काल–जन्म–मृत्यू इत्यादि किसी प्रकारसे हर्ष शोक नहीं होता हैं यह संयमसे तुच्छ प्राणी भी इन्द्र और नरेन्द्रके भी पूज्य हो जाते हैं संयम महा लाभका कारण है कहा है, कि—

मासे २ उज्जुवाले, कुसंग्गेण तु भुञ्जइ।
नसे सुयखाय धम्मस, कला आघइ सोळेसिं ॥

मिथ्यात्वी–हिंशाधर्मी क्रोड पूर्व (७० लाख ५६ हजार वर्षको क्रोड गूणा करेसो १ पूर्व) लग मास २ तपके पारणे करे, पारणेके दिन कुशाग्र (तणेपर आवे जितना अन्न खावे,और अंजूलीमें आवे जितना पाणी पीवे, उनका सर्व जन्मका तप एक तरफ़, और सम्यक्त्वी की एक नोकारसी.(दो घडीके पच्चखाण) के तुल्य नहीं देश विरतीका सब जन्म संयमी की एक घडी तुल्य नहीं , ऐसा महा लाभका ठिकाणा संयम है, ऐसे चिंतामणी रत्न तुल्य संयमको कंकर जैसा फेंक देते है, वो बडे अधम प्राणी हैं. और जो इसकी त्रिकरणयोग शुद्ध आराधना, पालना, फरसना, करते हैं, वो इस भवमें परम पूज्य परम सूखी हो मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त करते है

८ तवे (तप) –जैसे भट्टी यूक सोनेको ताप देनेसे सोनेका निज रुप प्रगट होता है, तैसे ही कर्म यूक्त प्राणी तपस्या करनेसे नि-

● १ राजाने अते घरमें रखनेको अग छेदन किया होवे उसे २ जुकशामका धक्का लगनेसे अग स्थिल पडा होय उसे ३ मत्रसे ४ औषधसे ५ ऋषीके सरापसे ६ देवयोगसे यह ६ कारणसे नपूसक होवे उनको दिक्षा देनेमें कुछ हरकत नहीं है

जरुप [सिद्ध स्वरुप] को प्राप्त होता है आत्म दमन करने को तप-ही वडा उपाय है रे प्राणी ! तेने इस जगतमे जितने उत्तम पदार्थ हैं उन सबको अनंत वक्त भक्षण किया अनत मेरु जितनी मिश्री और अनंत स्वयम्भु रमण समुद्र जितना दूध पी आया, तो भी तेरा पेट नहीं भराया, अब इन तुच्छ वस्तुओसे क्या इच्छा तृप्त होनेवाली है ! ऐसा जाण अनेक प्रकारकी तपस्या करे

कितनेक कहते हैं कि दयाधर्मी होकर क्षुधादि कष्ट सहन कर क्यों आत्माको दु ख देते हो ? उनसे कहना कि, तुम कडवी औषधे लेके पथ्य पालते हो उस औषधको दु ख जानेते हो वा सुख ! हां, औषध कटु तो लगती है, और पथ्य पालना भी दुष्कर होता है, परन्तु आगामिक सुखदायी होता है तैसे ही तप करती वक्त दुःख लगता है, परन्तु आगामिक महा सुखका देनेवाला होता है-

कितनेक कहते है कि, पाप तो कायाने किया, और तुम तप करके जीवको क्यों दुःख देते हो ! उनसे कहना कि, तुम घृतमें रहा हुआ मेल निकालनेके लिये बरतनको क्यों जलाते हो जैसे बरतन तपाया बिन घृत शुद्ध नहीं होती है तैसे देह को तपाये बीन आत्मा शुद्ध नही होती है जैसे काला कोयला द्रव्य अग्नी में जलके श्वेत राख होता है तैसे घोर पापसे काला हुवा प्राणी तपमें आत्माको जलाकर पवित्र हो जाता है. ऐसा जाण 'तप' नाम धर्म महा प्रभाविक है तपस्वी महे २ देवादिक के पुज्य होते हैं तपसे अनेक लब्धी अनेक सिद्धीयों प्राप्त होती है कर्म वनको जलानेके लिये तो तप साक्षात ही दावानल है काम रुप शत्रुका विदंश करनेवाला देव है, तृष्णारुप वेली को उछेरने हथीयार है, माहा निबड कर्मका निकदन कर अल्प समय में मोक्ष स्थान दे सकता है

९ ' वेंदए ' ज्ञानाअभ्यास — तदिष्ट ज्ञानम यथार्थ वस्तुका समजना उसे ज्ञान कहते वीर परमात्माने ही फरमाया है की ' पढमं नाणं तउ दया ' पहिले ज्ञान होगा तब ही दया पाल सकेगा मोक्ष जानेके ४ साधनमें प्रथम ज्ञानको लिया हैं ज्ञान ही मनुष्यक रूप हैं भर्तृहरीने कहा है कि "विद्या विहीनो पशु:" ज्ञान बिन नर पशू तुल्य हे श्री भगवती जीमें कहा हैं कि-ज्ञानी सर्वसे आराधिक श्री उत्तराध्ययनजीमें कहा है—कि 'नाण विण न हुंती दंशण गुणों' ज्ञान विन सम्यक्त्वकी प्राप्तीही नही होती हैं. यजुर्वेद कहता हे कि 'विद्यायाऽमृत मश्नुते' जिससे पर्म सुखकी प्राप्ती होती है उसे विद्या कहते हे इत्यादि बहुत दाखले विद्या विषयमे हे सबमें अव्वल दरजेमें विद्या ज्ञान ही लिया हे इस लिये सुखार्थी प्राणियों कों ज्ञानाभ्यास अवस्य करना ही चाहिये संसारिक विद्यासे धर्म ज्ञान बहुत फायदे दायक होता है धर्म ज्ञान जाणणेवाला पाप अकृत्य से डरता हे वो हर तरह निंघ कर्मोसे आत्माको बचा सक्ता हे इस वक्तमें धनके सोकीन तो बहुत हैं, परन्तु विद्याके सौकीन बहुत थोडे रहे हे वो ऐसा नहीं समजते हैं कि, विद्याकी तो लक्ष्मी दासी हे और धर्म ज्ञान आत्मज्ञानका अभ्यास तो बहुत कम हो गया जग जंजाल छोडकर जो साधु पदको प्राप्त हुवे वो भी इस वक्तमें आत्मज्ञान छोड, कर्म कहानीमें पड गये, तो दूसरेकी तो बात ही क्या कहना ?

बहुत शास्त्रोका अभ्यास करनेसे ही ज्ञानी नहीं कहा जाता है ज्ञानी १० लक्षण यूक्त होते हैं'—

श्लोक — अक्रोध वैराग्य जितेन्द्रि येपाम्, क्षमा दया सर्व जन प्रिय ।
निर्लोभ दाता भयशोकमुक्ता, ज्ञानी नराणां दश लक्षणानि॥

१ क्रोध रहित, २ वैरागी, ३ जितेंद्री, ४ क्षमावन, ५ दयावंत, ६ सर्व को प्रियकारी, ७ निर्लोभी, ८–९ भय और शोक चिंता रहित,

१० दाता यह दश लक्षण युक्त होवे उन्हे ' ज्ञानी ' कहे जाते है.

ज्ञानी इस भवमें सर्वमान्य हो परम सुख शांतीसे आयुष्य गुजार, परभवमें स्वर्ग मोक्ष के अक्षय सुख भोगवे ते हैं

१० " बंभचेर वासीयं "—ब्रह्मचर्य (शील व्रत धारन करना ब्रह्मचारीको खुद परमेश्वर ' तंवीवीए ' अपने जैसा कहते है अर्थात् ब्रह्मचारी भगवानही है भारत शाती पर्वके २४३ मे अध्यायमें ' ब्रह्मचर्येण वे लोकान् जनयन्ति परमर्षय ' महाऋषीने ब्रह्मचर्यके प्रतापसे ही लोक लोकका विजय कियाथा ' ब्रह्मचर्यमायुष्य कारणम् ' आयुष्यको हित कर्ता ब्रह्मचर्य ही है

आयुस्तेजो बलं वीर्यं, प्रज्ञा श्रीश्च महाशय ।
पुण्यचमस्प्रियत्वं च, हन्यंतेऽब्रम्हचर्यया ॥

गौतम स्मृति-अध्या ९

जो ब्रह्मचर्य नहींपालते हे उनका बाल–वीर्य–बुद्धि–आयुष्य तेज–शोभा–सौर्य—सौंदर्य–धन—यश–पुण्य और प्रीतीका नाश होता है इत्यादि ठिकाणे २ बहुत शास्त्रोंमे ब्रम्हचर्यकी प्रशंसा और ब्रम्हचर्यके दुर्गुण बताये हैं ऐसा जाण काम रुप महा शत्रुका नाश कर, अखंडित ब्रम्हचर्य वृत धारण करना जो कदा स्त्रीयादि भोग पदार्थ देख मन चलित होय ता, उस्के दुर्गुणोंपर ध्यान लगाना, रे जीव! तू क्या देख मोहित होता है ? देख, स्त्रीके शरीरके अंदर क्या क्या वस्तु हैं सो कानोंमें मेल, आंखमें गीढ, नासीकामें श्लेष्म, मुख में थूक. पेटमें भिष्टा,और सर्व सरीर हाड मांस रक्त आदि सर्व अशूची मय पदार्थ करके प्रतीपूर्ण भरा हुवा हे

जाहा सुणी पूइकन्नी, निकसी जाइ सवसो ।
एवं दुशील पडिणिय, मुहरी निकसी जाइ ॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र अ १

जैसे क्षुधातुर श्वान सूखे हाडके टुकडेको प्राप्त हो, आनंदसे उसे चिगलता (चावता) है, उसकी तिक्षण नोखसे उसका तालु (तालवा) में छिद्र पडनेसे रक्त उस हड्डी उपर होके आता है उसके स्वादमें लुब्ध हो उसे ज्यादा २ चिगलता है आखिर तालूमें छिद्र पड दु ख होता है, तब उसे डाल मूंह चाटता आनद मानता है उस तालूमें छिद्र पडनेसे रोग उत्पन्न हो कीडे पड जाते हैं तब वो महा दुखित हो सब स्थानसे निकाला जाता है आखिर सिर पटक मर जाता है तैसेही विषय प्रवी जन *स्त्री रुप हड्डीमें ग्रध हो अपना वीर्य क्षय कर आप ही खुशी मानता है। वीर्य क्षय होनेसे या अति प्रवी पणेस गरमीके रोगसे पश्चाताप युक्त मरण पा दुर्गतिमें जाता है यों विचार विषय इच्छासे निवृत होना

और ब्रम्हचारी ऐसा विचारे कि, जिस ठिकाणे में असह्य वेदना सहन कर पैदा हुवा, पीछा उसी ही ठिकाणे जानेका काम करनेमें तुझे शर्म नहीं आती है? तथा जैसी तेरी माता भगिनीका आकार है वैसाही सर्व स्त्रीका आकार है, फिर उसके सन्मुख कुदृष्टीसे कैसे देख जाय? इत्यादि विचारसे काम इच्छाको मार मन शात करे

जैसे गुमडेमें आराम होने आता है, तब उसमें खाज चलती है जो उस वक्त उसे कुचर डाले ता रोग ज्यादे हो जाय और जोकिंचित् आत्मा वशमें रखे तो थोडे कालमें आराम हो सुखी होय ऐसे ही यह मनुष्य जन्ममें काम-विकाररुप गुमडा पककर आराम होनेकी वक्त आइ है तब ही और गतिसे मनु ष्य+ भवमें वेदका उदय जा

* श्लोक-दर्शनात हरातेचित, स्पर्शनात् हरति बलं।
सम्भोगात हरति वीर्य, नारी प्रत्यक्ष राक्षसी

+ नर्कके जीवको भय सज्ञा ज्यादा तिर्यचके जीवको आहार सज्ञा ज्यादा देवताके जीवको लोभ सज्ञा ज्यादा तैसे मनुष्यमें मैथून सज्ञा का उदय ज्यादा माना है

स्ती होता है अभी जो आत्मा वशमें कर विपय सेवन न करे तो थोडे ही कालमें २०—२५ वर्षमें जन्म जरादि सर्व रोगका क्षय हो शांत स्वरुप होय इत्यादि विचारसे आत्मा शांत कर अखंड ब्रम्हचय पाले-

ब्रम्हचर्य यस्य गुण शृणुस्व वसुधाधिप ।
आजन्ममरणाद्यस्तु ब्रम्हचारी भवेदिह ॥ १ ॥
न तस्य किञ्चिदप्राप्यामिति विद्धी नराधिप ।
बहूव्यः कोट्यस्त्सृपीर्णांच ब्रम्हलोक वसन्त्युत ॥ २ ॥
सत्ये रतानां सततं दान्तानामूर्ध्व रेतसाम् ।
ब्रम्हचर्य द्रहेद्राजन् सर्व पापनुपसितम् ॥ ३ ॥

भीष्म युधिष्ठिरसे कहते हैं कि, ब्रह्मचर्यके गुण सुणो, जिसने जन्ममें मरण पर्यंत ब्रम्हचर्य पाला है उसको किसी शुभ गुण की खामी नहीं-है, परमात्मा ओर सर्व ऋषी उनके गुण गाते हैं वो यहां अनेक महा सुखभोगकर, आखिर सिद्ध पदको प्राप्त होता है ब्रम्हचारी निरंतर सत्यवादी, जितेंदि, शातात्मा, शुभ भाव युक्त, रोग रहित, पराक्रमी, शास्त्रका जाण, प्रभूका भक्त, उत्तम अध्यापक होकर सर्व पापका क्षय करके सिद्ध गतीको प्राप्त होता है *

" १७ प्रकार संयम "

' संयम ' के सत्तरे प्रकार, हिंसा, झूट, चोरी, मैथुन, परिग्रह, इन पाच आश्रवसे निवर्ते, श्रुत' चक्षु, घ्राण, रस, स्पर्श, इंद्री वस करे क्रोध, मान, माया, लोभ इन चार कपायसे निवर्ते, मनसे किसीका भी बुरा चिंतवण, वचन खोटा बोलना, काया अयत्नासे प्रवर्ताना

* विशेष इन ! धर्मका अधिकारको जाणिनेके लिये मेरी बनाइ हुइ ' धर्मतत्व संग्रह ' नामकी पुस्तकका अवश्य अवलोकन करियेजी, कि जो सरल हिंदी भापामें है

इन तीन दंडसे निवर्ते, यह १७ प्रकारे संयम हुवा

" दूसरी तरह १७प्रकारका सयम "

१' पृथ्वी काय संमय ' पृथ्वी (मट्टी) के एक जुवार जितने-से कंकरमें असंख्यात जीव हैं, उसमेंका एक १ जीव निकलकर, कबूतर जितना शरीर बनावे तो लक्ष योजनके जंबुद्वीपमें नही मावे ऐसा जीवोंका पींड जान मुनी किंचित् मात्र दुःख नहीं देवे संग्घट्टा नहीं करे, तो मकान बंधानेका वगैरा जिन २ कामोंसे पृथ्वी कायकी-हिंसा होती होवे ऐसा उपदेश करना तो कहा रहा ?

२ ' अप काय संयम ' अप (पाणी) के एक बुंदमे असख्याते जीव है एक जीव निकलके भ्रमर जित्नी काय करे तो जबुद्वीपमें नहीं मावे ऐसा जीवोंका पिंड जान मुनी पाणि का संग्घट्टा भी नहीं करे, तो स्नानादिकका उपदेश करना काहां रहा? पृथ्वीसे पाणीके जीव सुक्ष्म हैं

३ " तेउ काय संयम "–तेउ (अग्नि) के एक तिणगियेमें असंख्याते जीव हैं एकेक जीव निकल के राइ जित्नी काया करे तो जंबुद्वीपमें नहीं मावे ऐसा जीवोंका पिंड जान मुनी अग्नीका सघट्टाभी नहीं करे तो अग्नी प्रजाल्ना, धूप सेवना, इत्यादि उपदेश करना काहा रहा? पाणीसे अग्नीके जीव सुक्ष्म हैं

४ " वाउ काय सयम "–वायू (हवा) के एक झपटमें असंख्याते जीव हैं, एकेक जीव निकल्के वडके बीज जितनी काया करे तो जंबूद्वीपमें नहीं माय इतने जीवोंका पिंड जान मुनी हवाकी घात होए ऐसा काम नहीं करे, तो पखा लगाना, वगैरा उपदेश करना कहा रहा! अग्निसे वायुके जीव सुक्ष्म हे

५ "वनस्पति काय संयम"—वनस्पति (हरीलीलोतरी)कित नीकके एक शरीरमें एक जीव (अनाज बीज, प्रमुख) कितनीकके सख्याते असख्याते शरीरमें और सख्याते—असंख्याते जीव (हरी पत्र, शाक, प्रमुख,) कितनीकके एक सरीरमें अनत जीव (कद या कोमल वनस्पति प्रमूख) ऐसा जीवोंका पिंड जाण मुनी सघट्टा भी नहीं करते है, तो फल फुलका छेदन भेदन करनेका उपदेश देना कहां रहा ?

कोइ कहेकि पृथ्व्यादिक पांच स्थावरोके जीवोंमें हलन चल नादि सत्ती सही है तो उनको दु ख भी कहांसे होता होय ? उनका समाधान, श्री आचारागजी शास्त्रकेपहिले अध्ययनके दूसरे उद्देशेमें कहा है कि, किसी जन्मसे अन्धा, बहिरा, गुंगा असमर्थ पुरुषके को इ पुरूष अंग उपांग पगसे लगाकर मस्तक तक शस्त्रसे छेदन भेद न करे, तों उसका पीडा (दु ख) कैसी होती हे ? सो उसका मन या ज्ञानी जानते है, परतू वो कोइ भी तरह अपना दु ख दूसरेको कह शक्ता नहीं तैसेही पाच स्थावरोके सघट्टेसे उनको असह्य वेदनाहोती हे, उनके दरसानेकी सत्ता नहीं हैं परन्तु क्या करे बिचारे? कर्मोदयस परवस पडे हें ऐसे इनको असरण अनाथ जाण मूनी निजात्मकी तरह रक्षा करते हें

६ "बेंद्री सयम"—बे (दो) इद्री (काया और मुख वाले कीडे प्रमुख)

७ "तेंद्री सेयम"—तीन इंद्री (काया मुख और नाक वाले, कीडी पटमल प्रमुख)

८ "चोरेंद्री सयम"—चार इद्री वाले (काया मुख नाक और आँख वाले मक्खी मछर प्रमुख) इन विक्लेन्द्री जीवोंकी रक्षा करे

९ "पचेंद्री सयम" काया मुख नाक आँख और कानवाले

जीवोंके मुख्य चार भेद —नारकीके जीव, तिर्यंच (पसुपक्षी जानवर साप विच्छु आदि) के जीव, मनुष्य और देवता, इनकी रक्षा करे

यह ४ त्रस प्राणी, इन सबको त्रिकरण त्रिजोग कर किंचित् मात्र दुःख न उपजावे, यथा शक्ति रक्षा करे

कित्नेक लोग (१)आयुष्य निभाणे, [सरीरके निर्वाह अर्थे] (२) यश कीर्ती मिलाने [उत्सवादि कार्यमें] (३) मानके मरोडे [पूजाके अर्थे] (४) जन्म मरणसे छूटने [धर्म—मोक्षकी इच्छासे] (५) दुःखसे छुटने इतने कारण इन छेह कायकी हिंसा आप करते है, दूसरे पास कराते है, और जो कर रहे है उसे भला जानते है, वो प्राणी महा मूढ (मूर्ख) है यह हिंसा सुख निमित्त करते है,परतु आगमिक दु ख रुप होवेगी ऐसा श्री वीर प्रभूने आचाराग सूत्रके पहिले अध्यायमे फरमाया है

१० "अजीव काय सयम"—अजीव [निर्जीव] वस्तु वस्त्र पात्र पुस्तक प्रमुखको भी अयत्नासे नहीं वापरना, कि जिस्की मुदत पके पहिली उसका विनास हो जाय क्योंकि कोइ वस्तु विना आरंभसे नहीं निपजती है, और गृहस्थको मुफत नहीं मिलती है प्राणसे प्यारी वस्तुको गृहस्थ धर्मार्थ साधूको दे देवे तो साधूका योग्य है कि दूसरी अच्छी वस्तुके लालचमे उसका विनास नहीं करना चाहिये

११ 'पेहा संयम '—कोई वस्तु विना देखे वापरना (उपयोगमें लेना)नहीं इससे अपनी देहकी भी रक्षा होती है और विषयुक्त प्राणीसे बचाव भी होता है

१२ 'उपेहा सयम ' मिथ्यात्वी और भृष्टाचारियोंका समागम (हमेशाका परिचय)वरजे और मिथ्यात्वियोंको जैनी बनावे जैनी गृहस्थको साधूपणा समझावे धर्मसे डिगेको दृढ करे

जीवोंके मुख्य चार भेद —नारकीके जीव, तिर्यंच (पसुपक्षी जानवर साप विंच्छु आदि) के जीव, मनुष्य और देवता, इनकी रक्षा करे

यह ४ त्रस प्राणी, इन सबको त्रिकरण तिजोग कर किंचित् मात्र दु ख न उपजावे, यथा शक्ति रक्षा करे

कित्नेक लोग (१)आयुष्य निभाणे, [सरीरके निर्वाह अर्थे] (२) यश कीर्ती मिलाने [उत्सवादि कार्यमें] (३) मानके मरोडे [पुजाके अर्थे] (४) जन्म मरणसे छूटने [धर्म—मोक्षकी इच्छा से] (५) दुःखसे छुटने इतने कारण इन छेइ कायकी हिंसा आप करते है, दूसरे पास कराते है, और जो कर रहे है उसे भला जानते है, वो प्राणी महा मूढ (मूर्ख) है यह हिंसा सुख निमित्त करते है,परत् आगमिक दु ख रुप होवेगी ऐसा श्री वीर प्रभूने आचाराग सूत्रके पहिले अध्यायमें फरमाया है

१० " अजीव काय सयम "—अजीव [निर्जीव] वस्त् वस्त्र पात्र पुस्तक प्रमुखको भी अयत्नासे नहीं वापरना, कि जिस्की मुदत पके पहिली उसका विनास हो जाय क्योंकि कोइ वस्तु विना आरंभसे नहीं निपजती है, और गृहस्थको मुस्कील नहीं मिलती है प्राणसे प्यारी वस्तुको गृहस्थ धर्मार्थ साधूको दे देवे तो साधूका योग्य है कि दूसरी अच्छी वस्तुके लालचमें उसका विनास नहीं करना चाहिये

११ 'पेहा संयम '—कोई वस्तू विना देखे वापरना (उपयोगमें लेना)नहीं इससे अपनी देहकी भी रक्षा होती है और विषयुक्त प्राणीसे बचाव भी होता है

१२ 'उपहा सयम ' मिथ्यात्वी और भ्रष्टाचारियोंका समागम (हमेशाका परिचय)वरजे और मिथ्यात्वियोंको जैनी बनावे जैनी गृहस्थको साधूपणा समझावे धर्मसे डिगेको द्रढ करे

हैं २ बहुत अन्यमती की प्रपदा देखे तब उनके महजबकी बात क
रता, बिच २ मे अपने महजबका भी थोडा २ स्वरुप दर्शाता जाय
जिससे वो समजे की जैनमत ऐसा चमत्कारीं हैं ३ सम्यक्त्वादिक,
का स्वरुप प्रकाशता बिचे २ में मिथ्यात्वका भी स्वरुप दर्शाता जाय,
कि जिससे सुननेवाला मिथ्यात्वसे अपनी आत्मा बचा सके ४ मि
थ्यात्वका स्वरुप प्रकाशता बिच २ सम्यक्त्वाका भी स्वरुप कहता जाय
कि जिससे श्रोतागणकी सम्यक्त्व ग्रहण करनेकी इच्छा होवे

(३) 'संवेगणी' कथा उस कहते है कि जिसके सुणनेवालेके अ-
त करणमें वैराग्य स्फुरे इसके ४ भेद, १ इस लोकका अनित्यपणा और
मनुष्य जन्म प्राप्तीकी, सम्यक्त्वादि धर्म प्राप्तीकी दुर्लभता बतावे, जिस
से सुननेवालेका चित संसारके पदार्थोंसे उतरके धर्म ग्रहण करनेका हो
वे परलोक देवादिककी ऋद्धि, मोक्षका सुख, पापके फल, नर्कके दूःखका
वर्णन विस्तारसे दर्शावे, कि सुननेवाले पापके फल दू खसे डरे, देवलो-
क तथा मोक्ष सुख लेने की इच्छा करे, ३ स्वजन मित्रादिकका स्वा
र्थीपणा बताकर उनके उपरसे ममत्व कमी करावे, सत्सग करने उत्सु
कता होवे ४ पर पुद्गलोंकी रमणतासे आत्म प्रदेश मलीन हुवे जिससे
सत्यासत्य वस्तुका भान न होवे, इसे ज्ञानादि रत्नत्रयीसे पवित्र बनावे,
जिसस निज स्वरुप प्रगट होवे अनंत सुखकी प्राप्ती होवे इसका वि
शेष विवचन कर श्रोताके हृदयमें ठसावे

- (४) 'निव्वेगणी' जिसके श्रवण करनेसे ससारमें निवृत संयम
लेनेकी इच्छा होवे सो निव्वेगणी कथा इसके ४ भेद, १ ऐसा दर्श
वे कि कितनेक ऐसे कर्म हैं कि जिसको करनसे वो इसी भवमें दू ख
दायी हो जाते है, जैसे चोरीसे बेडी प्राप्त होती है व्यभिचारसे गरमी
आदि रोग-मृत्यू आदि होता है, ऐसा ठसाकर ससारसे उद्वेग उपज

धर्मका उदय आठ तरहसे होता है,

"प्रभावना"

१ ' प्रवचनी ' — जैनागम तथा अन्यमतके जिसकालमें जित ने सूत्र होवे उनका जाण होवें, क्यों कि सर्व शास्त्रका जाण होवेगा सो ही सर्वके योग्य ज्ञान देकर धर्म दिपावेंगे

२ ' धर्मकथक ' — श्री ठणायांगजी सुत्रमें चार प्रकारकी कथा करणी कही हैं सो —

' चउविहाकहापन्नतं तंजहा ' —अखेवणी, विखेवणी, सवेगणी, निव्वेगणी

(१)' अखेवणी ' (अक्षपनी) —सो श्रोतागणके हृदयमें हूबे हू ठस जाय, इसके ४ भेद, १ ज्ञानादिक पाच आचार साधु श्रावककी क्रिया इत्यादि उपदेशे २ व्यवहारमें किसतरह प्रवतर्ना, सभामें किस तरह उपदेश करना तथा प्रायश्चित दे आत्मा शुद्ध करनेकी रिती बता-वे, ३ मनमें प्रश्नधारके आये हो उनका सयम दूर हो जाय ऐसा उपदे श करे, तथा कोइ प्रश्नादिक पूछे तो उस ऐसा मार्मिक शव्दसे उत्तर देवे कि जिससे पृच्छकके रोम २ में वो बात ठस जाय ४ वाख्यानमें सात ही नयानुसार सर्वको सुहाता परस्पर विरोध रहित, दूसरेके दुर्गुण नहीं प्रकाशता, अपने महजबके गुण दूसरेके हृदयमें ठसानेवाली शव्द युक्त वाणी फरमावे

(२) विखेवणी ' (विक्षपणी) सन्मार्ग छोड उन्मार्ग जाता होय उसे पीछा सन्मार्गमें स्थिर करे—स्थापे, सो विक्षेपनी इसके ४ भेद — १ स्वमत प्रकाश करता, विच २ में अन्यमतके भी चुटकले छोडे, कि जीससे श्रोताको विश्वास आवे कि अपने महजब जैसी इनमें भी वातों

हैं २ बहुत अन्यमती की प्रपदा देखे तब उनके महजबकी बात क रता, बिच २ मे अपने महजबका भी थोडा २ स्वरुप दर्शाता जाय जिससे वो समजे की जैनमत ऐसा चमत्कारी हैं ३ सम्यक्त्वादिक, का स्वरुप प्रकाशता बिचे २ में मिथ्यात्वका भी स्वरुप दर्शाता जाय, कि जिससे सुननेवाला मिथ्यात्वसे अपनी आत्मा बचा सके ४ मि थ्यात्वका स्वरुप प्रकाशता बिच २ सम्यक्त्वाका भी स्वरुप कहता जाय कि जिससे श्रोतागणकी सम्यक्त्व ग्रहण करनेकी इच्छा होवे

(३) 'संवेगणी' कथा उस कहते हैं कि जिसके सुणनेवालेके अ-त करणमें वैराग्य स्फूरे इसके ८ भेद, १ इस लोकका अनित्यपणा और मनुष्य जन्म प्राप्तीकी, सम्यक्त्वादि धर्म प्राप्तीकी दुर्लभता बतावे, जिस से सुननेवालेका चित संसारके पदार्थोंसे उतरके धर्म ग्रहण करनेका हो वे परलोक देवादिककी ऋद्धि, मोक्षका सुख, पापके फल, नर्कके दुःखका वर्णन विस्तारसे दर्शावे, कि सुननेवाले पापके फल दूःखसे डरे, देवलो-क तथा मोक्ष सुख लेने की इच्छा करे, ३ स्वजन मित्रादिकका स्वा र्थीपणा बताकर उनके उपरसे ममत्व कमी करावे, सत्सग करने उत्सु क्ता होवे ४ पर पुद्गलोंकी रमणतासे आत्म प्रदेश मलीन हूवे जिससे सत्यासत्य वस्तुका भान न होवे, इसे ज्ञानादि रत्नत्रयीसे पवित्र बनावे, जिससे निज स्वरुप प्रगट होवे अनंत सुखकी प्राप्ती हावे इसका वि शेप विवचन कर श्रोताके हृदयमें ठसोवे

(४) 'निर्वेगणी' जिसके श्रवण करनेसे समारमें निवृत सयम लेनेकी इच्छा हावे सो निर्वेगणी कथा इसके ४ भेद, १ ऐसा दर्श वे कि कितनेक ऐसे कर्म हैं कि जिसको करनसे वो इसी भवमें दूःख दायी हो जाते है, जैसे चोरीसे बेडी प्राप्त होती है व्यभिचारसे गरमी आदि रोग-मृत्यु आदि होता है, ऐसा ठसाकर संसारसे उद्वेग उपज

वे २ इस लोकमें किये हुवे कितनेक शूभ कर्मके फल इस लोकमें प्राप्त हुवे ऐसा बतावे जैसे तप संयमके पसायसे सर्व चिंता रहित सर्व पुज्य हुवे हे ३ इस लोकमें किये हुवे अशूभ कर्म नर्कादिक गतीमें जीव भोगवे उसका स्वरुप बतावे ४ परलोकमें किये हुवे शुभ कर्मसे इस लोकमें ऋद्धि सुखकी प्राप्ती हूइ सो बतावे इन ४ तरह ससारसे उ-द्वेग उपजावें यह चार देशना सोलह प्रकारसे फरमाकर धर्म कथा कर के जैन मत दिपावे सो कथक प्रभावक

३ ' निरोपवाद ' –जैसे किसी स्थानमें जैन मतीयोंको धर्म भ्रष्ट करने शुरु किये तथा साधूकी महीमा सूण इर्षावंत होकर साधूसे चर्चा करनेको आवे, तब विवेकी साधू दक्षपणसे अनेक स्वमत परमतके शा स्रोंके प्रमाणसे सूपक्ष दूपक्षका स्वरुप बताकर स्वमत स्थापे

४ ' त्रिकालज्ञ'–जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, चंद्रप्रज्ञप्ति इत्यादि शास्त्रमें जो खगोल, भूगोल, निमित, ज्योतिष आदि जो विद्या है, उसका सपूर्ण जाण होवे, जिससे भूत भविष्य वर्तमान त्रिकालके शुभाशूभ वर्त मानका ज्ञान होए, लाभालाभ सुख दु खका जाने, जीवितव्य मरण को जाणे, इत्यादिक जाण होकर उपकारिक ठिकाने प्रकाशे, परन्तु निमित भाके नहीं, आपदा वक्तपर सावधान होकर लोकोको चमत्कार उपजावे

५ ' तपस्वी '—यथा शक्ति दुकर तपस्या करे, कि जिसे दे खकर लोकोको चमत्कार उपजे क्योंकि अन्य मतीयोंकी तपस्या तो फक्त नाम रुप है, एक उपवासमें ही अनेक मिष्टान भक्षण कर तप जाणते हे और जैनकी तपस्या सो निराधार हे इससे लोकोको, चमत्कार उपजे

६ " वृत "–विगय त्याग, अल्पउपाधी,मोन, दु कर अभिग्रह

काउसग्ग, तरुणपणे इंद्रीय निग्रह ,दुक्कर किया इत्यादि २ व्रत धारणकर लोकोको चमत्कार उपजावे

७ " सर्व विद्याका ज्ञाता' -रोहिणी, प्रज्ञप्ती, अदृष्ट, पर शरीर प्रवेशिनी, गगनगामिनी इत्यादि विद्या मन्त्र शक्ती अंजन सिद्धी, गुटिका, रससिद्धी इत्यादि अनेक विद्याका जाण होय, परंतु परज्यू जे नहीं कोइ मोट कारणसे प्रज्यूंजकर लोकोको चमत्कार उपजावे तो प्रायाच्छित लेकर शुद्ध होवे

८ " कवी "-अनेक प्रकारके छंद कविता उत्तम २ स्तवन अनुभव रससे भरपूर गुढार्थ आतम ज्ञानकी शक्ती संयुक्त जोड बनाकर जैन धर्मको दिपावे

ये आठ ही प्रभावना करके जैन मत दिपावे, परतुं अभिमान नहीं लावे, कि मे ऐसा विद्वान-हुं -हों गिया शियार धर्मका दिपानेवाला हु. क्योंकि अभिमानसे विद्या फलित नहीं होती है और लोकोमे अपमान होनेका संभव है इसलिये गुणी होकर सदा नम्र भाव रखे

" जोग निग्गो " मन वचन काय यह तीनी जोग वशमें करे यह १२ अगके जाण १३-१४ करण सित्तरी चरण सित्तरीके गुण यूक्त १५-२२ आठ प्रभावना कर जैन धर्म दिपावे २३-२५ तीन योग वशमे करे, यह २५ गुण उपाध्याय भगवतके हूये

उपाध्यायजीकी १६ उपमा

१ " संख " जैसे सखमें दूध भरा शोभादेवे और दूध विणसे नहीं, तैसे उपाध्याय भगवतमे ज्ञान शोभा देवे, और ज्ञानका विणाश होवे नहीं तथा जैसे वासुदेवके पंचायण सखके अवाजसे महा शेन्य भगजाय, तैसे उपाध्यायजीके उपदेशमे पाखंडी भगजाय

२ " अश्व " जैसे कंबोज देशका घोडा दोनो तरफ वाजित्रो क

रक सोभा देता है, तेसे उपाध्याय भगवत सझाय रुप वाजिंत्रों करके शोभते है

३ ' सूभट्ट ' —जैसे शूर सुभट्ट (क्षत्री राजा)अनेक वदीजनोंकी बिरुदावलीसे परवरा हूवा शत्रुका पराजय करता है, तैसे उपाध्याय भगवत चतुर्विध सिंघसे परवरे हुये मिथ्यात्वीयोंका पराजय करते है

४ 'हाथी ' जैसे साठ बर्षका जुवान हाथी हथणीयोंके परीवार में सोभता हैं तेसे उपध्यजी ज्ञानीयेंके परीवारसे सोभते हैं ओर हाथीकी तरह किसी भी वितडवादीयोंसे हटते नहीं हैं

५ 'बैल ' (वलद) जैसे धोरी बैल दोनो तिक्षण शृग करके गायोंके युथमे शोभता हैं, तैसेउपाध्याय निश्चय व्यवहाररुप शृग कर पर मतको हटाके मुनी मडलमें शोभते हैं

६ ' सिंह ' जैसे केसरीसिंह तिक्ष्णदाढों करके बनचरोंको क्षोभ उपजाता है तैसे उपध्यायजी सातनय करके कदाग्रयीको हराते है

७ ' वासुदेव ' जैसे नारायण सात रत्नकर वेरीयोंको हटाकर त्रिखंड पति होते हैं,तैसे उपध्यायजी तप सयमादि शास्त्रोंसे कर्म वेरीयो का पराजय कर ज्ञानादि त्रिरत्नके आराधिक होत हैं

८ ' चक्रवर्ति ' जैसे षट खंडपति चक्रवर्ति महराज १४ रत्नाकर नरेंद्र सुरेंद्रके पुज्य होते हैं तेसे उपध्यायजी १४ पूर्वकी विद्याकर जगतपूज्य होत ह

९ ' इद्र ' जेमे सक्रेंद्र हजार आखों करके ७ देवताकी प्रपदाके

• पूर्व भवम सक्रन्द्र कार्तिक सेठ था जिसे पाचसो गुमास्त के साथ दिक्षा ली कार्तिक सठ इंद्र हुये और ५०० गुमास्त समानिक (बराबर दर्जेके) देव हुय यो सदा इनकी साथ रह इसलिये उन देवोंकी आंख मिलाके इद्रकी हजार आख गिनी जाती है

मोहित करता है, तैसे उपाध्यायजी अनेकांत स्यादवाद मार्ग प्रकाशके भव्यगणोकों मोहीत करते हैं

१० 'सूर्य' —जैसे सूर्य जाज्वल्यमान प्रभा करके अन्धकारका नाश करता है, तैसे उपाध्यायजी निर्मल ज्ञानसे भ्रमरुप अंधकारका नाश करते हैं

११ 'चंद्रमा'—जैसे पूर्णकलाकर चंद्रमा ग्रह नक्षत्र तारागणोंके परिवारसे रात्रीको मनोहर बनाता है,तैसे उपाध्यायजी चार तीर्थके परिवार कर ज्ञानरुप पूर्ण कलाकर सभाका मन हरण करते हैं

१२ 'जंबूसुर्दशण वृक्ष जैसे उत्तर कुरुमे रहा हुआ जंबूनद रत्नका जंबुवृक्ष अणादीय देव करके सोभता है, तैसे उपाध्यायजी आर्य क्षेत्रमें ज्ञानरुप वृक्षके देव अनेक गुण गण रुप पत्र पुष्प फल करके सोभते हैं

१३ 'सीता नदी' जैसे महा विदेह क्षेत्रकी सीता नामे मोटी नदी पांचलाख बत्तीस हजार नदीयोंके परिवारसे सोभती है, तैसे उपाध्यायजी हजारों श्रोता गणोंके परिवारसे शोभते हैं

१४ 'मेरुपर्वत'—जैसे सर्व पर्वतोंका राजा मेरु पर्वत अनेक औषधियों और चार वन करके सोभता है तैसे उपाध्यायजी अनेक लब्धियों कर चार संघके परिवारसे शोभते हैं

१५ 'स्वयंभू रमण समुद्र' —सबसे बडा स्वयंभु रमण महा समुद्र, अक्षय और स्वादिष्ट पाणी करके सोभता है, तैसे उपाध्यायजी अक्षय ज्ञान कर भव्य जीवोंको रुचता ज्ञान प्रकाश कर शोभते हैं

इत्यादि अनेक शुभ उपमा युक्त उपाध्यायजी होते हैं और भी उपाध्यायजी गुरु महाराजके भक्तिवंत, अचपल, कौतक रहित, माया कपट रहित, किसीका तिरस्कार नहीं करने वाले, सर्वसे मित्र

भाव रखने वाले, ज्ञानके भंडार होकर भी अभिमान रहित, अन्यको दोष नहीं देखनेवाले, शत्रुका भी अवर्णवाद नहीं बोलनेवाले, क्लेप रहित, इन्द्रियोंको दमनेवाले, लज्जावत इत्यादि विशेषणोंसे युक्त होते है ऐसे जिन केवली तो नहीं परन्तू 'आजिणा जिण संकासा' जिन केवली जैसे साक्षात् ज्ञानके प्रकाशनेवाले श्री उपाध्यायजी भगवानको त्रिकाल वंदना नमस्कार होवो

गाथा — समुद्द गभीर समा दुरासया, अचक्किया केणइ दुप्पहंसया। सुयस्स पुन्ना विउलस्स ताइणो, खवित्तुकम्मगती मुत्तमगया॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र–अध्ययन ११ गाथा ३१

समुद्र जैसे गंभीर [कभी झलके नहीं,] कोई पराभव न कर सके, किसीसे हटे नहीं, सूत्र करके पूर्ण भरे हुये छ्ह कायक रक्षपाल, ऐसे उपाध्यायजी कर्म खपाकर अवश्य मोक्ष पधारे जिनको मेरा त्रिकाल त्रिकरण शूद्ध नमस्कार हो

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके सम्प्रदायके बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री "जैन तत्त्वप्रकाश" ग्रंथका 'उपाध्याय' नामक चतुर्थ प्रकरण समाप्तम्॥

प्रकरण ५ वा.

साधुजी

जैसे मन्त्रवादि इच्छितार्थ सिद्ध करनेके तरफ लक्ष रख कर अनेक उपसर्ग अडगपनसे सहन करते है, तैसे ही जो पुरुष अपनी आत्मा की सिद्धि करनेकी तरफ लक्ष रखकर, एकांत मोक्षकी तरफ द्रष्टि रखकर आत्मसाधना करे उनको " साधु " कहे जाते हैं

साधूको श्री सुयगडांगजी सुत्रके प्रथम श्रुतस्कंधके १६ वे अध्यायेंमे ४ नाममे बुलाये है

सूत्र –' आहाह भगवं एव, से दत दवीए, वोसठ का सातिवच्चे १ माहणे तिवा २ समणे तिवा ३ भिख्खू तिवा ४ णिग्रत्थेतिवा ' पडी आह भंते कहतु दंते दवीए वोसठ काएतिवच्च माहणे तिवा, समणे तिवा, भिख्खू तिवा णिगत्थेतिवा, तन्नेबुही महामुणी १ ॥

अर्थ –श्री तीर्थंकर भगवान दमितइन्द्रि, मुक्ति योग, जिन्ने अशुभ याग त्यागन किये हैं, ऐसे साधूको ४ नाममे बुलाते हैं –१ माहण २ समण, ३ भिख्खु ४ निग्रन्थ

तब शिष्यने प्रश्न किया कि–अहा भगवंत ! इन चारो ही के

अलग २ गुण फरमाइये

१ माहण किनको कहना ? समण किनको कहना? ३ भिख्खू किनको कहना ? और ४ निग्रन्थ किनको कहना ?

सूत्र -इति विरए पाव कम्मेहि, पेज्ज दोस, कलह, अभ्यखाण, पेसून्न, परपरिवाए अरति, रति, मायामोस, मिथ्यादंशण सल्ल, विरए, समिए सहिए, सदा जते, णो कुझे, णोमाणी, माहणेतिवच्च

अर्थ-तब भगवत माहणादिक चारही शब्दका अर्थ—व गुण अनुक्रमे फरमाते है कि—हे शिष्य ! जो कायिकाविक सर्व क्रियासे निवर्ते हैं मर्व पाप कर्म राग, द्वेष, क्लेष, चुगली, अवर्णवाद, हर्ष—शोक कपट यूक्त झूट, खोटे मतकी श्रद्धा, इत्यादिसे निवर्ते है, पच सुमती साहित है, सदाकाल छे कायकी और संयमकी यत्नावंत है, क्राधादि कषा य रहित, किसीभी गुणके गर्व रहित है, ' उनको ' माहण अर्थात महा त्मा कहना *

२सुत्त ' एत्थे वि—समणे ' अणिस्सिए, अणियाणे अदाणंच, आतिवायच, मुसावायंच, वहिद्धच, कोहच, माणच, मायंच, लाहचे, पेज्जंच, दापंचे, इच्चेवं जउजउ अदाणाउउ अप्पणोपदेशहेउ, तत्तो २ अदाणातो पुव्वं पडि विरिए, पाणाइ वायाए, दंत दविए, वो सठ काए , समणोति वचे

अर्थ —अब समण (साधु)के लक्षण कहते है किसीके भी प्रतिबंध (नेश्राय-अश्राय)रहित, करणीके फलकी वांछा रहित कषाय रहित(शांत) प्रणातिपात अर्थात हिंशा मृषावाद झुट-चोरी मैथुन-क्रोध मान माया लोभ-राग द्वेप इत्यादिसे सर्वथा निवर्ते है,और जो ऐसेही जो जो कर्मबं

* माहण शब्द का अर्थ ब्राह्मण भी होता है, अर्थात् इतने गुण युक्त होवे उन्हे ब्राह्मण कहणा !

न्व के व अवगुणके कारण देखे उनसे पहिलेही निवृते इन्द्रियको द मन करे अत्माकी ममताको वोसरावे (छोडे) उनको 'समण' अर्थात् साधू कहना

३सूत्र –'एथेवि भिख्खु अणून्नए विणीए नामए दत दविए,वोसठकाए, संविधुणिय विरुवरुवे परिसहो वसग्गे, अझपजोग, सुद्धादाणे, उवठिए, ठिअप्पा, संखाए परदत्त भोइ भिख्खुति वच्चे '

अर्थ -'भिखु' अर्थात् भिक्षुक उनको कहते हैं किजो निर्वद्य भिक्षासे शरीरका निर्वाह करते है, और जो अभिमान रहित और विनय–नम्रता आदि सहित होते हैं, इन्द्रियोंका दमन करते है, देव-दानव–मानवके किये उपसर्ग समभावसे सहन करके निरतिचार व्रत पालते है, आध्यात्म योगी है, मोक्षस्थान प्राप्त करनेके लिये सावधान होकर सयम – तप में स्थिरी भूत हैं, और अन्य किसीके निमित्तसे बनाये हुवा आहार लेते हैं

४सूत्र-एत्थेवीणिग्गंथे, एगे, एगविउ, बुद्धे सछिन्नसोए, सुसमिए, सुसामाइय , आयवाय पत्ते, विउदुहहउ विसोयपालिछिन्ने, णो पूयागसकार लाभटी, धम्मठी, धम्म विउ, णियोग पडिवणे, सामियंचरे, दत दविए, वोसठ काय, निग्गथेतिवच्चे

अर्थ -अब निर्ग्रंथके लक्षण कहते हैं सदा रागद्वेष रहित अकेले तत्वज्ञ, सर्वथा आश्रवका निरुधन किया अच्छी तरहसे आत्मा वशमेंकरी, सुमतिवंत आत्मात्वके जाण शुद्ध मानके जाण, द्रव्ये और भावसे दोनो प्रकारसे आश्रवका निरुधन किया समाधि (चित्तकी निश्चलता सहित,) महिमा-पूजा-सत्कार-सन्मानकी इच्छा रहित, एकात निर्जराके धर्मके ही अर्थी, क्षमा आदि दशविधी धर्मके भिन्न २ भेद के जाण, मोक्षमार्ग अंगिकार करके उसमें सम्यग् प्रकारे प्रवर्ते, दमिते

न्द्रिय, और कायाकी ममता रहित, इतने गुनवालेको ' निग्रंथ 'कहना भगवतने फरमाया है कि–' से एवमेव जाणह जमह जाणह भयंतारो तिवेमी ' अर्थात येही पद महाभयसे निवारनेको समर्थ है

"साधुजीके २७ गुण"

पंच महव्वय जुत्तो, पचिंदिय समरणो ।
चउविह कषाय मुक्को, तउसमाधारणीया ॥ १ ॥
तिउसच्च सपन्न तिउ, खती संवेगरउ ।
वेयणामच्चु भयगय, साहुगुण सत्तवीस ॥ २ ॥

अर्थ —५ महाव्रत (पचीस भावना यूक्त) शुद्ध निर्दोष पाले, ५ इन्द्रियोंके २३ विषयसे निवर्ते, ४ क्रोधादि कषायसे निवर्ते ये १४ बोल विस्तारसे तीसरे प्रकरणमें समझाये गये हैं, सो देखिये

१५ ' मन समाधरणिया ' पापसे मन निवर्ताके धर्म मार्गमें प्रवर्तावे १६ ' वय समाधरणिया ' निर्दोष कार्य उपने बोले १७ 'काय समाधरणी ' कायाकी चपलता रुवे १८ ' भावसच्चे ' अंत करणके प्रणामकी धारा सदा निर्मळ शुभ वर्धमान धर्मध्यान शुक्ल ध्यान युक्त रहे १९ 'करण सच्चे' करण सित्तरीके ७० गुण युक्त, तथा साधूको क्रिया करनेकी विधि शास्त्रमें फरमाइ है वैसी सदा योग्य वक्तमें करें पिछलि प्रहर रात वाकी रहे तव जागृत होके आकाश दिशा प्रतिलेखे (देखे) कि किसी प्रकारकी असझाइ तो नहीं है ? जो निर्मल दिशा होय तो

शास्त्रकी सज्झाय करे फिर असझइकी (लाल दिशा) हो तब प्रतिक्रमण करें सूर्योदय पीठे प्रतिलेहना कर अर्थात वस्त्रादिक सर्व उपकरणको देखें, फिर प्रहर दिन आवे वहा तक स्वाध्याय करे, तथा श्रोतागणका योग्य होय तो धर्मोपदेश करे-व्याख्यान वाचे फिर ध्यान करे, शास्त्रके अर्थकी चितवना करे, ओर जो भिक्षाका काल होय तो गौचरी निमित्त जाकर शुद्ध आहार विधियुक्त लाकर अत्माको भाडा देवे चौथे आरे मे तीसरा प्रहर भिक्षा के लिये जाते थे क्योंकि उस वक्त सब लोग एक* ही वक्त भोजन करते थे ओर एक घरमें ३२ स्त्री ओर २८ पुरुष होते सो घर गिणतीमें था, इस लिये ६० मनुष्यका भोजन निपजाते सहज दो प्रहर, दिन आजाता था शास्त्रमें कहा है कि, 'कालं काल समायरे' अर्थात् जिस क्षेत्रमें जो भिक्षाका काल होय, उस वक्त गौचरी जाय जो जलदी जाय अथवा देरसे जाय, तो वहूत घूमना पडे, इच्छित आहार न मिले, शरीरको किलामना उपजे, लोकोमें निंदा होवे कि वक्त वे वक्त साधू क्यों फिरता है ? तथा स्वाध्याय ध्यानकी अतराय पडे इत्यादी दोप जाण कालोकाल भिक्षा लियेजाय फिर शास्त्रोक्त विधीसे आहार करे फिर ध्यान करे फिर चोथे प्रहर प्रतिलेखन कर स्वाध्यायकरे असझइकी वक्त देवसी प्रतिक्रमण करे असझइ निवर्तनेसे सझाय करे दूसरे प्रहर ध्यान करे, तिसरे प्रहर निद्रामुक्त होवे ये दिनरात्रीकी साधूकी क्रिया श्री उत्तराध्ययन सुत्रके २६ वे अध्ययनमें कही है ओर भी अतर विधि वहुत है सो गुरू आमनासे धारे)

२० 'जोग सचे '-मन-वचन-कायाके योगकी सत्यता-म

* पहिले आरेमे ३ दिनके अतेर, दूसरेमे २ दिनके अतर, तीसरेमे एक दिनके अतर चौथेमे दिनमे एक वक्त भोजनकी इच्छा होती थी

रखता रखे , योगाभ्यास—आत्मसाधन—सम—दम—उपसम इत्यादि, साधना की प्रति दिन वृद्धि करे

' सपन्नातिउ ' – साधु तीन वस्तु सपन्न है नाणसपन्न, दंशण संपन्न, चारित्र संपन्न

२१ नाण संपन्न—माति, श्रुत, अंग उपांग पूर्वादिक जिस काल में जितना ज्ञान हजिर होवे उतना उमग सहित अभ्यास करे,वाचना पृच्छना—पर्यटना आदि करके, दृढ करे, अन्यको यथायोग्य ज्ञान दे वृद्धि करे

२१ ' दशण संपन्न ' १ कषाय, २ नोकषाय, ३ मोहनीय इत्यादि दोष रहित शुद्ध सम्यक्त्ववत होवे, देवादिक भी चलावे तो चले नहीं, शंकादि दोष रहित निर्मल सम्यक्त्व पाले

२३ 'चारित्र संपन्न ' —सामायिक—छेदोपस्थापनी—परिहार विशुद्ध सुक्ष्म संदपराय—यथाख्यात ये पाच चारित्रयुक्त (इस कालमें पहिले २ चारित्र हैं) इसका खुलासा विनय तपमें—चारित्र विनयमें किया गया है

२४ ' खती '—क्षमावंत

२५ ' सवेग ' सदा वैराग्यवंत रहे

श्लोक—' सरीर मनसीगंन्तु, वेदना प्रभवाद्भवात् '
स्वप्नेन्द्र जाल सङ्कल्पाद्भिति संवग उच्यते ॥

अर्थात् इस संसारमें शारीरिक और मानसिक वेदनासे आति ही पीडा हो रही है, जिसको देखकर, और सर्व संयोग इंद्रजाल और स्वप्नवत् जानकर, संसारसे डरना उसका नाम ' संवेग ' है

२६ ' वेदनी मम अहीया सणीयाए '—क्षुधादिक २२ परिसह०

११ * परिसह— (१) " खुधा परिसह " भुधा उत्पन्न होनेसे मु नीश्वर भिक्षावृत्तीसे अपना निर्वाह करे, परन्तु जो कभी आहारका जा ग न बने और मरणांत कष्ट आ पडे तो भी अन्न, पुर्गि प्रमुख सजीव पदार्थ लेये नहीं, और पचनादिक क्रियाकरके किंवा करवाके ऐसा सदो प आहार भोगवनेकी इच्छा भी करे नहीं। (२) " पिवासा परिसह" प्यास लगे तो अचित जलकी याचना करे परन्तु जोग न मिलनेसे स चत जलकी इच्छा भी करे नहीं। (३) " सीय परिसह "—शीत निवते न करनेके लिये अग्निसे शरीर तपानेकी, या मर्यादा उपरात वस्त्र भो गवनेकी, या मर्यादा के अंदर भी सदोष–अकल्पनीय वस्त्र ग्रहण कर नेकी इच्छा करे नहीं (४) " उसिन परिसह "—उष्णता–तापसे आ कुलव्याकुल होने पर भी साधू स्नान करे नहीं, और पंखा आदिसे ह वा लेवे नहीं (५) " दंश मस परिसह "—वर्षा ऋतुमें डांस—मच्छर खटमल इत्यादि जीवकी पीडा होनेसे उनको समभावसे सहन करे (६) अचेल परिसह " —वस्त्र फट जानेसे और जीर्ण होनेसे भी मुनी दीन–पणे वस्त्रकी याचना करे नहीं, तथा सदोष वस्त्र भोगवनेकी इच्छा करे नहीं (७) ' अरइ परिसह "—अन्न वस्त्रादिकका जोग नहीं ब ननेसे भी साधुकी अरति (चिंता) उत्पन्न नहीं होनी चाहिये नरक तिर्यचादि गतिमें जो दुःख परवश्य पणे सहे हैं उनको याद करके प रिसह समभावसे सहन करे (८) ' इत्थी परिसह " कोइ दुष्टा साधू को विषयकी आमंत्रणा करे किंवा हाव–भाव– कटाक्षसे मन चलन की युक्ती करे तो भी साधू अपने मनकी लगाम बराबर पकड रखे और इस तरह विचार करे कि —

काव्य—समाइ पेहाए परिव्वयतो । सियामणो निरसइ बहिद्धा ॥
न सा महं नोवि अहंपितीसे । इच्चेवताओ विणइज्ज राग ॥

अर्थात–श्री दशवैकालिक सूत्रमें ऐसा कहा है कि–यदि स्त्री आदि कको देखनमें साधुका मन संयमसे भ्रमीत हो जाये तो ऐसा चिंतवन करना कि–ये स्त्री मेरी नहीं है और मैं उसका नहीं हूं ऐसा विचार के स्नेह राग निवारना ऐसा करने पर भी जो मन शांत न होवे तो—

उत्पन्न होवे तो सम प्रमाणसे सहन करे

आया वया ही चय सोगनछ। कामे कमाही कमिय खू दुख॥
छिंदाहिं दोस विणाइज्ज राग। एवं सुही होइसि सपराए॥ ५॥

अर्थात् शरीरका सुकुमालपणा छोडकर सूर्यकी आतापना लेना,उणोदरी प्रमुख बारह प्रकारके तप करना, आहार कमी करता जाना, क्षुधा सहन करना असा करनेसे शब्दादिक काम भोग और उन्से उत्पन्न होनेवाले राग द्वेष दूर रहेगा और जिवको सुख मिलेगा (९) ' चरिया परिसह "—प्रमपासमें नहीं फसानके लिये साधूको ग्रमानुग्राम विचरना पडता है नवकल्पी (८ महिनेके ८, और चामासका १, ऐसे ९ कल्पी) विहार करना पडता है वृद्ध--रोगी-तपस्वी या उन्होंकी सेवा करनेवालेको तथा ज्ञाननिमित्त रहनेमें हरकत नहीं (१) "निसीया परिसह " चलते २ साधूको रास्तेमें विश्रामके लिये एक ठिकाने बैठना पडे और वहा समविषम भूमिका मिले तो राग द्वेश नहीं करे (११) " सिज्जा परिसह " —कहीं एक रात्री और कहीं चातुर्मासादिक अधिक काल रहना पडे और वहां मनोज्ञ सेज्जा (शय्या)—स्थानक रहनेका मकान) नहीं मिले—टूटाफूटा शीत तापादि उपद्रवकारी मकानका सयोग बन तो मनमे किलामना नहीं पावे (१२) " अक्कोस परिसह" ग्रामादिकमे रहते साधुका भेष—क्रिया प्रमुख देख कर कोइ इर्षावत या मताभिमानी मनुष्य अक्कोस (कठोर) वचन कहे-निंदा करे-अछते आल देवे-ठग पाखंडी बनावे तो भी साधू समभावको सहे (१३ ' वध परिसह " —कोइ मनुष्य कोपातुर होकर ताडन कर बैठे तो भी मुनी समभावसे सहे (१४) " याचना परिसह " —औषधादिक जरूर पडनेसे याचना करनी पडे तो " मं भाट चरण होकर कैसे मांगू ' " असा अभिमान न लावे, साधूका तो निर्वाह याचनापर है (१५) ' अलाभ परिसह,' याचना करने परभी इच्छित वस्तू न मिले तो खेद नहीं लाना (१६) " रोग परिसह "—शरीरमें कोइ प्रकारका रोग उत्पन्न " होनसे हाय हाय' आहि आहि ! " असा न करे (१७) " तृण फास परिसह' रोगसे दुर्बल हुवा शरीरको पृथ्वीका कठण स्पर्श सहन न होने तब कुछ गार्दी बगैरा तो साधूके कामका आती नहीं शास्त्र (नायल) ह

२७ ' मरणातिय सम—अहीया सणीयाये " मरणांतिक कष्ट में तथा मरणसे डरे नहीं, परन्तु समाधि मरण करे

"इसीतरह साधुजीके २७ गुण है"

५२ अनाचीर्ण

१ साधू निमित्ते निपजाया हुवा आहार प्रमुख लेवे नहीं २ मोलकी वस्तू लेव नहीं ३ सामे लाकर देवे तो लेव नहीं ४ एक घरमे नित्य लेवे नहीं ५ रात्रीको चारही आहार भोगवे नहीं ६ स्नान करे नहीं ७ सुगन्धी द्रव्य सूंघे नहीं ८ फूल माला पहिरे नहीं ९ पखे प्रमुखसे हवा करे नहीं १० चारही आहार रात्रीका पास रख नहीं ११ धातू पात्रमें भोजन करे नहीं १२ राजापिंड (वहोत पराक्रमी) आहार भोगवे नहीं १३ सवूकार (दानशाला)

स्यादिकका नरम पराल [घास] का बिछाना उपर शयन करे तब उस का स्पर्श शरीरको कठिन लगे तो गृहस्थाश्रमको न समारे (१८) " जल मेल परिसह " —मेल और पसेवसे घबराया हुवा साधू स्नान की अभिलाषा न करे (१९ " सत्कार परिसह " —साधुका सत्कार वंदना नमस्कार न करे इससे साधुको बुरा न लगाना चाहिये (२०] " प्रज्ञा परिसह " —साधुकी पास ज्ञान ज्यादा होनेसे बहोत जनो सूत्र की वाचना लेनेको आवे कितनेक प्रश्न पूछनके लिये आवे तब कोप लाकर-घबराकर ऐसा न चिंतवे कि मैं मूर्ख रहता तो ऐसी तकलीफ नहीं पडती [२१] " अज्ञाण परिसह 'बहुत परिश्रम उठाने पर भी ज्ञान न मिले तो खेदित नहीं होना चाहिये, अकेले ज्ञानसे मोक्ष नहीं है ज्ञान और क्रिया दोनेकी जरूरत है [२२] दर्शण परिसह – ज्ञान थोडा होनेसे जिन वचनमे शंका आदि उत्पन्न हुवे तो समकितको दूषण लगाये नहीं परन्तु शास्त्रवचनपर पूर्ण श्रद्धा रखने

का आहार लेवे नहीं १४ विना कारण शरीरको तेल प्रमुखका मर्दन करे नहीं १५ किसी भी वहान पर बैठे नहीं १६ गृहस्थकी सुखसाता पूछे नहीं १७ काँच-तेल-प्रमुखमें अपना मुख देखे नहीं १८ चौपट -पत्तो-गंजीफे इत्यादि खेले नहीं १९ ज्योतिष निमित्त प्रकाशे नहीं २० छत्र धारण करे नहीं २१ वैद्यगी (औषधका काम) करे नहीं २२ पगरखी आदि कुछ भी पावमें पहने नहीं २३ अग्निका सघट्टा करे नहीं २४ सेजारतर का आहार भोगवे नहीं अर्थात् जिनकी आज्ञासे मकानमें उतारा किया उनके घरका आहार भोगवे नहीं २५ पलग, खुरसी खाट इत्यादि पर बैठे नहीं २६ वृद्धावस्था तपस्या, और दर्द इन सबवोंके शिवाय गृहस्थके घरमें बैठे नहीं २७ उगटणा-पीठी-मेंदी लगावे नहीं २८ गृहथीकी वयावच्च [चाकरी] करे नहीं और अपभी गृहस्थके पाससे करावे नहीं २९जाति संबंध मीलाकर आहार प्रमुख लेवे नहीं ३० पृथ्वी-पाणी-हरी विन शास्त्र प्रगमे (अचेत हुए विना) भोगवे नहीं ३१ दु ख उत्पन्न हुवे गृहस्थका शरणा वान्छे नहीं ३२-४० मूलो--आदो (अद्रक) इक्षु-सेलडीका साठा)-सचित फल-सचल लूण-आगरका लूण समुद्रका लूण-सिंधा लूण-खारीका* लूण यह अचित हुये विन, अग्नि प्रमूख दूसरा शस्त्र प्रगमे विन भोगवे नहीं ४१ वस्त्र प्रमूखको धुप खेवे नहीं ४२ शिर, दाढी और मूछ इतने ठिकाणे छोड अन्य ठिकाणेका लोच करें नहीं ४३ गुह्य स्थानक समाले नहीं ४४ विन कारण रेच (दस्त लगने की औषधि) लेवे नहीं ४५ विन कारण शोभा निमित्त आखमें अजन कर नहीं ४६ दातन करे नहीं ४७ गात्र भग (कसरत-मल कुस्ती) करे नहीं ४८ सुरण कधा आदिका भक्षण करे नहीं ४९ स

* सेन्धरीके गाठम जीव रहता है इसलिये गांठ फिरगी, कारणा सर ल सके और लूण जो किसी अर्थम या अग्निसे पचा होय तो लेवे

चित बीज—कच्चा अनाजका भक्षण कर नहीं ५० औपध ले कर या मुखमें अगुली प्रमूख डालकर उल्टी (वमन) करे नहीं ५१ शरीर की शोभा—विभूषा करे नहीं ५२ दात रगे नहीं ये ५२ अनाचीर्ण का त्याग कर, शुद्ध सयम साधूजी पालते है

२० " असमाधी दोप "

१ जल्दी २ चले तो २ पूंजेविन चले तो ३ पूंजे कहा और पग कहा रखे तो ४ जास्ती पाट बाजोट भोगवे तो, ५ वडेके सामे बोले ता ६ थेवरकी घात (मृत्यू) इच्छे तो, ७ सर्व प्राणभूत जीव सत्वकी घात चिंतवे तो ८ क्षण २ में क्रोध करे तो ९ निंदा करे तो १० वारवार निश्चयकी भाषा बोले तो (अमुक काम करूगा, जाउगा इत्यादि ११ नया क्लेश पैदा करे तो १२ जुना क्लेश उदरे (गुजरी बात पीछी याद करे तो या खमत खमणा करके पीछी लडाइ करे)तो १३ वत्तीस असझाईमें सझाय करे तो १४ सचेत रज (रस्तेकी धूळसे) पग भरे होवे और पूंजे (झाडे) विन आसनपर बैठे तो १५ पहिररात पीछे दिन उगे वांहा तक जोरसे बोले तो १६ घात हो जाय ऐसा क्लेप करे तो १७ कर्कश वचन बोले तो १८ अपनी और दूसरेकी आत्माको असमाधि (चिंता) पैदा होवे ऐसा वचन बोले तो १९ फजरसे शाम तक ला ला कर खाय तो (नोकारसी आदि तप न कर तो)२० चोकस करे विन आहार प्रमुख वस्तू लावे तो (असमाधि दोप लगता है असमाधि दोप उसे कहते कि—जैसे मादगीसे मनुष्यका शरीर निर्वल हो जाता है, तैसे यह काम करनेसे सयम शिथिल हो जाता है)

आत्म सुखार्थी साधू इन २० दोपके वर्जके प्रवर्ते

" २१ सबले (बडे) दोष "

१ हस्तकर्म करे तो २ मैथुन सेवे तो ३ रात्रीको चार आहार भोगवे तो ४ आधाकर्मी [साधू निमित्त निपजाया] आहार भोगवे तो ५ राजपिंड (दारु मांस) आहार भोगवे तो ६ कीयगंड [मोलका लिया] पामीचं [उधार लिया] अछेज्जं [निर्बलके हाथमेंसे छिन के लिया] आणिसिठं [मालिककी रजाविना लिया] अभीहड [सामे लाया]यह ५ दोष लगाकर आहार भोगवे तो ७ वारंवार पच्चखाण [नियम] लेकर तोडे तो ८ बिना कारण छे महिना पहले सम्प्रदाय बदले तो ९ एक महिनेमें तीन बडी नदी उतरे तो १० एक महिनेमें तीनवार कपट करे तो ११सेज्जांतर [मकान की आज्ञा देनेवाला] के घरका आहार भोगवे तो १२–१४ अकूटी (जाणके) हिंसा करे, झूठ बोले, चोरी करे तो १५ सचित पृथ्वी पर बैठे तो १६ सचित रजसे भरे हुये पाट पाटले भोगवे तो १७ सडे पाट जिसमें जनवरोंकेअण्डे उत्पन्न हुये है उनको भोगवे तो १८ कद (जड) खंद (उपरकी लकडी) शाख (वडी डाल) प्रतिशाख (छोटी डाल) त्वचा (छल,) प्रवाल (कुंपल) पत्रे, फूल, बीज, हरी, यह १० कच्ची वनस्पती भोगवे तो १९ एक वर्षमें दश वक्त नदी उतरे तो २० एक वर्षमें दश वक्त दगा करे तो २१ सचित पाणीसे, हरीसे, या किसी भी सचित पदार्थसे भरे हुये भोजनसे, आहार पाणी प्रमुख लेवे तो ' सबला दोष ' लगे 'सबला दोष '[उस कहते हैं, जैसे निर्बल मनुष्य पर बहुत बोजा पडनेसें वो मरजाता है तैसे ये २१ काम करनेसे संयमका नाश होता है]यह २० असमाधि और २१सबल दोष दशा श्रुतस्कंध सूत्रके १–२अध्यायमें हैं

" बत्तीस योगसंग्रह ,'

१ जो दोष लगा होय सो तुर्त गुरुके आगे कहवे २ शिष्यका दोष गुरु दूसरेके आगे प्रकाशे नहीं ३ कष्ट पडे धर्ममें दृढ रहे ४ तपस्या करके इसलोकके [यश महिमादिक] और परलोकके [देवपद राज्यपदादिक] सुखकी वाञ्छा करे नहीं ५ असेवन [ज्ञानाभ्यास संबंधी] ग्रहना [आचार गोचार संबंधी] शिक्षा (शिखामण) कोई देवे तो हितकारी माने ६ शरीरकी शोभा विभूषा नहीं करे ७ गुप्त तप करे (गृहस्थको मालुम न पडने देवे) तथा लोभ नहीं करे ८ जिन [१] कुलमें भिक्षा लेनेकी भगवंकी आज्ञा है उन सब कुलोंमें गोचरी [भिक्षा लेने] जावे, ९ परिसह उत्पन्न हूये चढते प्रणामसे सहन करे, क्रोध न करे १०सदा सरळ–निष्कपटपणे प्रवर्ते ११ सयम (आत्मदमन) करता रहे १२ समकित (शुद्ध श्रद्धा) यूक्त रहे १३ चित्तको स्थिर रक्खे १४ ज्ञानाचार—दर्शनाचार–चारित्राचार–तपाचार—विर्याचार, इन पंचाचारमें प्रवर्ते १५ विनय (नम्रता) सहित प्रवर्ते १६ तप–जप–क्रियानुष्टानमें सदा वीर्य–पराक्रम फोरता रहे १७ सदा वैराग्य सहित रहे १८ आत्मगुण (ज्ञानदर्शन चारित्र) को निध्यान [द्रव्यके खजाना]जैसा बंदोबस्त करके रक्खे १९ पासथ्था[ढिला सिथिल]के परिणाम न लावे, सदा वर्धमान परिणामी रहे २० उपदशद्वारा या प्रवृतिद्वारा सदा सम्वरकी पुष्टी करे २१ अपनी आत्माके जो जो दुर्गुण द्रष्टी आवे उनको टालन (निकालने) का उपाय करता रहे २२ काम (शब्द–रुप) भोग(गंध–रस–स्पर्श) का संजोग मिले लुब्द न होवे २३ नित्य यथाशक्ति नियम अभिग्रह त्याग वैराग्यकी वृद्धि करते रहे २४ उपधी (वस्त्र–पात्र–सूत्र—शिष्य

इत्यादिकका) अहंकार—अभिमान नहीं २५ पाच प्रमाद १ मद (जातिमदादि आठदम) २ विषय (पांच इंद्रीका २३ विषय २४० २५२ विकार) ३ कषाय (क्रोधादि कषायके ५२०००भांगे) ४ निद्रा नींद कमी लेवे ५ विकथा (स्त्रीकी—राजाकी—देशकी—भोजनकी ए ४ प्रकारकी कथा नहीं करे) यह पांचही प्रमादको सदा वर्जे २६ थोडा बोले और कालोकाल क्रिया कर, २७ आर्त और रौद्र ध्यान वर्जेकर, धर्म और शुक्लध्यान ध्यावे २८ मन—वचन—काया सदा शुभ काममें प्रवतावे २९ मरणातिक वेदना प्राप्त हूये भी प्रमाण स्थिर रखे ३० सर्व सगका त्याग न करे ३१ सदा आलोयणा—निंदणा (गुरु आगे गुप्त पाप प्रकाशके अपनी आत्माकी निंदा करे ३२ अं त अवसर जाण सथारा करे, आहार और शरीरका त्याग कर समाधि भावसे देहोत्सर्ग करे

यह ३२ बातोंको योगी (साधु) को सग्रह (हृदयमें संग्रह कर रखनेका) और यथा शक्ति इसंमे प्रवृति करनेका उद्यम करना (श्री समवायाग सूत्रमें कहे हैं) इत्यादिक अनेक साधुके और कि याका शास्त्रमें वर्णन है, सो संपूर्ण गुण जिनकी आत्मामें पावे उसे य थास्यात् चारित्र कहा जाता है इस कालमें संपूर्ण गुण मिलने मुशकल है, तो यों नहीं जाणना कि पाचमें आरेमें साधू है ही नहीं इसका स माधान करनेको शास्त्रमें छे प्रकारके नियंठे (निग्रंथ) कहे है

६ प्रकारके नियंठे (निग्रंथ)

निग्रंथ उनको कहे जाते हैं जो द्रव्ये तो द्रव्य [परिग्रह) की गाठबांधनेसे निवर्ते, और भावे आठ कर्म रागद्वेष मोह मिथ्यात्वका नाश करे, सोनिग्रंथ

१ पोलाक नियठा—जैसे साल गहु प्रमुखका खेत काढेके उसके पूले का ढग किया, उसमें दाग थाडे और कचरा वहुत, तैसे पुलाक निर्ग्रंथ में गुग थोडे और दुर्गण वहुत, इसके दो भेद—१लब्धी पोलाक सो किसीने जबर अपराध किया, तब क्रोधातुर होकर, पोलाक लब्धिसे चक्रवर्तीकी सैन्यको जला डाले. उस वक्त पोलाक निग्रंथ कहना २ असेवना पोलाक, सो ज्ञान—दर्शन—चारित्रकी विराधना करे, यह नियंठा इस वक्त नहीं है

२ 'बुकस नियठा'—जैसे उस धानके पूलेमेंसे घास निकालकर, दूर डाल दिया, और उंबियोंका ढगला किया, उसमेंसे बहुत कचरा कम हूवा, तो भी दाणे थोडे, और कचरा वहुत तैसे 'बुकस निर्ग्रंथ' इसके दो भेद—१ 'उपगरण बुकस' वस्त्रपात्र जास्ती रखे, खारादिकसे धोवे २ शरीर बुकस' हाथ पग धोवे, केश नख समारे, शरीरकी विभूषा करे, पूर्व कर्म खपाणेका उद्यम करे

३ 'कषाय कुशील नियठा'—जैसे उंबीके ढगलेमेंसे मट्टी कचरा निकालकर, खलेमे बेलके पगोंसे खूदा कर दाणे छूट किये, तब दाणे और कचरा बराबरीके अंदाजसे रहे, तेसे कपाय कुशील निर्ग्रंथ संयमपाले-ज्ञानका अभ्यास करे, तपस्या यथा शक्ति करे, और भी क्रियाकी वृद्धि करे. परन्तु कभी २ किंचित् कपायका उदय होय ज्ञान करके दबावे तो भी अतसमें प्रजले, किसीको कटुक वाक्य या निंदा श्रवणकर क्रोध अवे ऐसे ही ज्ञान क्रिया तपादिककी महीमा सून अभिमान भी आजावे, ऐसे ही क्रिया करनेमें या वादियोंका पराजय करनेमें माया कपट भी करे ऐसेही शिष्य सूत्रकी वृद्धिका लोभ भी करे यह ४ ही कपाय थोडी सी आती है, ताभी आत्मकी निंदा कर तुर्ते नि सशल्य हो जावे

४ 'प्रति सेवना नियठा'—जेसे उस खलेमें डाले हुये ढगका

वायुमे उडाकर कचरा निकाल शुद्ध किया, उसमें दाणे बहुत और कचरा थोडा, ऐसे ही मति सेवना निग्रंथ, मूल गुण पांच महाव्रत, रात्रीभोजन इनमें किंचित् ही दोष न लगावे परंतु दश पचखाणादिक उत्तर गुणमें सुन्य उपयोगसे किंचात् दोष लगे, उमकी खबर पड प्रायश्चित ले शुद्ध होवे

५ ' निग्रंथ नियठा '—शुद्ध किये दाणेको बिछाकर हाथसे उसमेका सर्व कंकर कचरा निकाल विशेष शुद्ध किये, तैसे निग्रंथके दो भेद —(१) ' उपसम कपायी ' जैसे अग्नीको राखके नीच छिपाते हैं, तैसे क्रोधादि कपायको ज्ञानादि गुणमें छिपादेवे परन्तु उसका पीछा प्रगटनेका स्वभाव है (२) ' क्षिण कपायी ' जैसे अग्निको पाणीसे सिंचके शीतल कर देते है, तैसे कपाय रहित शांत आत्मा जिनकी हुई, इनके मूल गुण उत्तर गुणमें किंचित दोष नहीं लगे, फक्त किसीको अंतसमें सज्वलका लाभ किंचित् मात्र रहता है, और सर्व शुद्ध है

६ ' स्नातक नियट्ठा ' —जैसे वो दाणे पाणीसे धोकर शुद्ध वस्त्रसे पूछकर, साफ किये, रज मेल करके रहित, अति शुद्ध, पवित्र निर्मल हुये, तैसेही स्नातक निग्रंथ चार घनघातिक कर्म रहित, शुक्ल ध्यानके तीसरे चौथे पाये अवलंबी, यथाख्यात चारित्री, तिर्थंकर भगवान, तथा तिर्थंकर भगवान जैसे ही केवली भगवान जाणना

इन छे नियठमें इस पचम कालमें १–४–५–६ इन चार निर्यठा तो निषेध है, फक्त दुसरा बुकस और तीसरा कषाय कुशील यह नाही निर्यंठे पाते हैं ऐसा जाण साधूकी हीणाधिक ज्ञान क्रिया देख, पक्षपात राग द्वेषकी बुद्धि नहीं करना यथातथ्य गुणकी पहचान करना एक सौंकी कीमतका भी हीरा होता है, और लाख रुपे कीमतका भी होता है एक सौ वालेको काच नहीं कहा जाता

है काच तो वोही है कि जिसमें संयमके गुण किंचित् मात्र नहीं है सो पंच प्रकारके साधू अवंदनिय है —

" पाच प्रकारके अवदनीय साधु "

१ 'पासत्था' २ 'उसन्ना' ३ 'कुशीलिया' ४ 'संसत्ता' ५ 'अहच्छदा'

१ पासत्थेके दो भेद (१) 'सर्वव्रत पासत्था' सो ज्ञान—दर्शन—चारित्रसे भृष्ट; फक्त भेप मात्र, बहुरूपी जैसा (२) 'देशव्रत पासत्था' छिन्नू दोप युक्त आहार ले, लोच नहीं करे

२ 'उसन्ना' के दो भेद [१] 'सर्व उसन्ना' साधूके निमित्त निपजाये हुये स्थानक—पाट भोगवे [२] 'देश उसन्ना' दो वक्त प्रतिक्रमणा—पडिलेहणा—भिक्षाचारी न करे, तथा स्थानक छोड घरो घर फिरता फिरे, अयोग्य ठिकाणे गृहस्थके घरमें विना कारण वेठे,

३ 'कुशीलिया' के ३ भेद - (१) 'नाण कुशीलिया,' ज्ञान के आठ अतिचार (२) 'दंशण कुशीलिया,' सम्यक्त्व क ८ अतिचार, (३) 'चारित्र कुशीलिया' चारित्र के ८ अतिचार यो २४ अतिचार लगावे (इनका अधिकार तीसरे प्रकरणमें पचाचारमें लिखा है) तथा ७ कर्म करे १ 'कौतुक कर्म,' औपध उपचार करे, सौभाग्य निमित्ते स्त्रीको स्नानादिक करावे २ 'भूत कर्म' भूत पलित के ज्वरादिकके मत्र करे—डोरे बाधे ३ 'प्रश्नकर्म' रमल—शकुनावली इत्यादिकके योगसे प्रश्नका उत्तर देवे, लाभालाभ वतावे ४ निमित्त कर्म' ज्योतिप निमित्त भूत भविष्य वर्तमानका वृत्तात कहे ५ 'आजीविका कर्म'—इसके ७भेद (१)जात जणाकर (२) कूल जणाकर, (३) शिल्प [कला] जणाकर, (४) कर्म जणाकर, (५) वैपार जणाकर, (६) गुण जणाकर, (७) सूत्र जणाकर, यह ७ गुण

मताकर आजीविका करे ६ 'कल्क कुरूककर्म' माया—कपट करे, दंभ करे, ढोंग करे, लोकोंको डरावे ७ 'लक्षण कर्म' स्त्री पुरुषके हस्त पादादिकके लक्षण, तिल मस प्रमुखके गूण बतावे ये ७ कर्म करेसो कुशीलिये

४ 'ससत्ता' जैसे गायके बाटेमे अच्छा बूरा सब भेला कर देवे, तेस उसकी आत्मामें गूण अवगूण सडवड हुये, उसे अपने गुण अवगुणकी कूछ खबर नहीं, देखादेखी भेष लेलिया, पेट भराइ करे, तथा सर्व मतसे—पासत्थादिकसे मिला रहे. भिन्न भेद कूछ नहीं जान इसके दो भेद (१) संक्लिष्ट क्लेशयुक्त, (२) असंक्लीष्ट—क्लेश रहित

५ 'अहच्छंदा' (अपच्छना) गुरुकी—तिर्थकरकी—शास्त्रकी आज्ञाका भंगकर, फक्त अपने इच्छानुसार चले, ऋद्धिका, रसका, साताका, यह तीनही गर्व करे, उत्सूत्र मनमाना परुपे, सो अपच्छदा●

इन पाच ही प्रकारके साधूका सत्कार सन्मान करना योग्य नहीं अपने सनातन सत्य धर्ममें गुणकी पूजा हैं, इस लिये गुरुकी परिक्षा जरूर करना चाहिये

॥ दोहा ॥ इर्या, भाषा, एषणा, ओलखजो आचार,
गुणवंत साधू देखकर, वंदो वारवार

● इस कालमें इतनी फाट फूट होनेका कारण, संवत्सरी जैसे मोटे धर्म पर्वमें भंग पडनेका कारण, और आपने धर्मको लजाये ऐसे कारण मेरेको तो यह अपच्छंदेको वदना व्यवहार करना गुरुवादिककी निंवाकरे जिनके हुकूममें चलना थोडासा ज्ञान या कियाका गूण देख उसमे लुब्ध होगा इत्यादिक ही दिखते हैं जिसने गुरुकी आज्ञाका भग किया, स्वइच्छाचारी हुवे उनका कोइ सत्कार न देवे तो यो जो भली आत्माके धणी होय तो आपसे ही ठिकाणे आजाये और नहीं आये तो उनकी आत्मासे जाय परन्तु धर्मकी तो फूट फजीती निंदा न होवे इस लिये पाठक गणोंको सबके लिये यह एक बात जरूर ध्यानमें लेना चाहिये।

साधुजीकी ८४ ओपमां

गाथा — उरग गिरी जळन, सागर नहतल तरुगण समोय जोहोइ
भमर मिय घरणि, जळरुह रवि पवन समोय तो समणो॥

१ ' उरग ' = सर्प जैसे साधु होवे–१ जैसे सर्प दूसरे के निपजाथी जगामें रहे, तैसे साधू ग्रहस्थने अपने निमित निपजाया स्थानक स्त्री, पशू, पढंग [नपुसक] रहित होय, ऊसमें मालककी अनुज्ञासे रहे २ जैसे अगध कूलका सर्प वमन किये विष (जेहर) को पुन भोगवे नहीं, तैसे साधु त्यागकीये भोगो की वाच्छा कदापी करे नहीं, ३ जैसे सर्प बिलमें सीधा प्रवेश करे, तैसे साधू सरळ भावसे मोक्ष मार्गमें प्रवृते ४ और ऐसे ही अरस निरस अहार भोगवते मुखमें फिरावे नहीं ५ जैसे सर्प काँचली छोडे पीछे तुर्त भग जाय, ऊसे देख नहीं तैसे साधु ससार त्याग कर पीछी इच्छा करे नहीं, ६ जैसे सर्प कँटक कंकरसे डरता हुवा अग बचाके चले, तैसे साधु पापों से या पासेहीयों से बचकर प्रवते ७ जैसे सर्प सें सब डरत हैं, तैसे लब्धी वंत साधु ओंसे नरेंद्र सुरेंद्र भी डरते रहते हैं, तो अन्यकी क्या कहना ?

२ 'गिरी' प्रवत जैसे साधु होवे–१ जैसे प्रवत में अनेक प्रकारकी औषध होती है, तैसे साधुजी भी आक्षिण माणसी प्रमूख अनेक लब्धीके धरनेवाले होवे २ जैसे प्रवत वायू–हवा करके कंपायमान न होवे तैसे साधु परिसह ऊपसर्ग कर कपाय मान होवे धुजे नहीं ३ जैसे प्रवत सब जीवोंको आधार भूत होता है, (घास लक्कड मृतिकादि से बहोत उपजी विका चलाते हैं) तैसे साधुजी भी छेही काय जीव को आधार भुत होते है ४ जैसे प्रवत में स नदी आदी निकलती है, तैसे साधू से ज्ञानादी गुण प्रगट होते है, ५ जैसे मेरु प्रवत सर्व प्रवतों से ऊंचा है, तैसे ही साधुका भेष सर्व भेषों चेउच और सर्व मान्य

हे ६ जेमे किननेक प्रवत रत्ना केहे तैसे साधु रत्न त्रय के आराधक हे ७ जैसे प्रवत मेखला करके शोभ, तेसे साधू शिष्य व श्रावकों कर शोभते हे

३ 'जलण' अग्नी जैसे साधु होवे–१ जैसे अग्नी इंधन (त्रण का ष्टादि)के भक्षण से तृप्त न होवे, तैसे साधू ज्ञानादी गुण गृहण कर ते तृप्त न होवे २ जेमे अग्नी तेज कर दिप्त होवे–तैसे साधु तपादी ऋद्धि कर दीपे ३ जेसे अग्नी कचर को जलावे, तैले साधु तप कर कर्म कचरा जलावे ४ जों अग्नी अन्धकार का नाश कर उद्योत करे, त्यों साधु मिथ्यान्धकार का नाशकर, धर्म प्रदिप्त करे, ५ ज्यों अग्नी सुवर्ण आ दी धातूको निर्मळ करे, त्यों साधू भव्य जीवों को सद्बोसे मिथ्या मळ रहित करे, ६ जों अग्नि धातू और मट्टी अलग २ करे, त्यों साधू जीव ओर कर्म को अलग २ कर ७ जेसे अग्नी मट्टी के भाजन (बरतन) पचाके पके करे, तेसे साधु कच्चे शिष्यों को, व श्रावकों को धर्मम पके करे,

४ ' सागर ' समुद्र जैसे साधू होवे, १ सागरकी तरह सदा ग भीर रहे, २ जेसे समुद्र मुक्ता फळ (मोती) आदी रत्नों का आगर (खजान) हैं, तेमे साधु ज्ञानादी गुण के आगर हे ३ ज्यों समुद्र मर्याद उलंघे नहीं त्यों साधु र्तिथकर की आज्ञा–बांधी हुइ मर्यादा उ लंघे नहीं ४ ज्या समुद्र मे सर्व नदी आदी आकर मिले, त्यों साधु में उत्पातादी चारही बुद्धि मिले ५ ज्यों समुद्र मच्छादी की कलोलादी.. से क्षोभ पावे नहीं त्यो साधु परिसह य पाखंडीयों से क्षोभ पावे नहीं ६ ज्यों समुद्र झलके नहीं, त्यों साधु भी झलके नहीं ७ समुद्र के पाणी की तरह साधुका हृदय सदा निर्मळ रहे

५ ' नहतल्ल ' आकाश जेमे, साधु होवे (१.) आकाशकी

तरह साधुका मन सदा निर्मळ रहे (२) जैसे आकाश स्तंभादि आधार रहित तैसे साधूजी भी ग्रन्थादिकी नेश्राय (आश्रय) रहित विचरे ३ जैसे आकाश सर्व पदार्थोंका भाजन है, तैसे साधूजी ज्ञानादि सर्व गुणों के भाजन हैं (४) ज्यों आकाश शीता तापादि कर कुमलाय नहीं, त्यों साधू अपमान निंदा करनेसे उदास न होय (५) ज्यों आकाश वृष्टियादि शु संयोग प्रफुलीत न होवे, त्यों साधू सत्कार वदनादीसे हर्षित (खुशी) न होवे (६) ज्यों आकाशका श-स्त्रादी कर छेदन भेदन न होवे, त्यों साधुके चारित्रा दी गुण का नाश कोइ करसके नहीं (७) जैसे आकाश अनंत है, तैसे साधुके पंचाचारादी गुण भी अनत है

९ ' तरुगणं ' वृक्ष जैसे साधु होवे –(१)जैसे वृक्ष शीत तापा दी दु स सहकर, आश्रितो (मनुष्य पशू पक्षी यादी) को शीतल छायासे आराम–सुख देवे तैसे साधू छेह काय जीवको आश्रय भूत सिद्बोधादी से सुख दाता होवें (२) जैसे वृक्षकी सेवनासे फल की प्राप्ती होवे, तैसे साधूका सेवा भक्ती से * दशगुण की प्राप्ती हावे (३) ज्यो वृक्ष पंथी, जनोके विश्राम दाता होता है, तैसे साधु भी चतुर्गतिमें परि भ्रमण करते जीवोंको आधार भूत होते हैं (४) ज्यों वृक्षको वसूले (कूहाडे) दी कर छेदनेसे रुष्ट होय नहीं, त्यो साधु भी उपसर्ग करता पे या निंदक आदी पर रुष्ट होय नहीं (५) ज्यों वृक्ष चंदनादी चर्चनेसे संतुष्ट न होय, त्यों साधु सत्कार सन्मानादीसे संतुष्ट न होए (६) जैसे वृक्ष फल आदीदे कर वद-ला लेना नहीं वाछे, त्यों साधूजी ज्ञानादी गुण दे वदला लेना नहीं वाछे. (७) जैसे वृक्ष तापादी कर सूख जाय परन्तु स्थान छोडे

* देखो दूसरे खंडका पहला प्रकरणका ७ मां साधन

नहीं, तैसे साधु प्राणात कष्ट प्राप्त हूवे भी चारित्रादी धर्म का नाश होणे दे नहीं

७ '१ भ्रमर, जैसे साधु होवे जैसे भ्रमरा रस ग्रहण करता हुवा पुष्प (फुल) को पीडा न उपजावे, तैसे साधु आहार आदि ग्रहण करते दातारको पीडा (दुःख)न उपजावे २ जैसे भ्रमर पक्षी पुष्पका मकरंद (रस) तो ग्रहण करे, परन्तु प्रतिबंध नहीं करे, तैसे साधु गृहस्थ का प्रतिबंध नहीं करे, ३ जैसे भ्रमर बहोत पुष्पो पे परिभ्रमण कर, अपनी आत्मा तृप्त करे, तैसे साधु अनेक ग्रामोंमें परिभ्रमण कर अनेक घरों के आहार से शरीर का पोषण करे, ४ जैसे भ्रमर बहोत, रस मिलेतो संग्रह नहीं करे, तैसे साधु भी आहार का संग्रह नहीं करे ५ जैसे भ्रमर विना बुलाया अचित्य जावे, तैसे साधु भी भिक्षा निमित्त गृहस्थ का विना बुलाया अचिंत जाय, ६ जैसा भ्रमरका प्रेम केतकी क पुष्प प अधिक होवे, तैसे साधु भी निर्दोषही आहार की इच्छा करे तथा धर्मानुराग अधिक होवे ७ जैसे भ्रमर निमित वाडी लगाते नहीं हैं, तैसे गृहस्थ भी साधु निमित आहार नहीं निपजावे वो ही साधुके काम आता है

८ ' मिय ' मृग (हिरण जैसे साधू होवे (१)जैसे मृग सिंहसे डरे, तसे साधु पापसे डरे * २ जैसे मृग का उलंघा घास सिंह नहीं खया तैसे साधू सदोष आहारी नहीं भोगवे (३) जैसे मृग सिंहसे डरता एक स्थान न रह, तैसे साधू प्रतिबंधसे डरे मर्याद उलंघ एक स्थान नहीं रहे (४) जैसे मृग रोग उत्पन्न हुये औषध नहीं करे,

* गाथा—सिहजहा खुद मिगाचरंती दूरेचरंती परीसंक माणा पय तुमेशवी समीक्षधम्मं, दूरेणपावं परिवज्रएज

अर्थ —जैसे मृग सिंहसे डरता दूर रहे तैसे साधू पापसे डरता दूर रहे

तैसे साधु सावद्य व सचित औषधी नहीं करें. ५ जैसे मृग रोगादि उत्पन्न हूये, एक स्थान रहे, त्यों साधू रोग वृध अवस्था वगैरा कारण उत्पन्न हुये एक स्थान रहे ६ जैसे मृग रोगादी उत्पन्न हुव स्वजनोका सहाय न वांछे, तैसे साधु रोग परिसह उत्पन्न हुये, गृहस्थका या स्वजनादिक सरण नहीं वांछे ७ जैसे मृग रोगसे निवृत हूवे स्थान त्याग अन्यत्र विचरे, तैसे साधु भी कारणसे निवृत हुये ग्रामानुग्राम विचरे

९ 'धरणी' पृथवी जैसे साधु होवें जैसे पृथवी सीत ताप छेदन भेदनादि स्फर्श्य समभाव से सहे, तैसे साधूजी परिसह उपसर्ग समभावसे सहे, २ जैसे पृथवी धन धान्य करके भरी है, तैसे साधु संवेग वैराग्यादि गुण कर भरे हैं, ३ जैसे पृथवी सर्व बीज आदी उत्पती का कारण है, तैसे साधु सर्व सुख दाता धर्म बीज उत्पतीका कारण हैं ४ जैसे पृथवी अपने शरीर की सार समाल नहीं करे, तैसे साधू अपने शरीरकी ममत्व भावसे समाल नहीं करे, ५ जैसे पृथवी कोई छेदन भेदन करे तो भी वो किसीसे पास पुकार न करे, त्यों साधु का कोइ मारताड करे, तो ग्रहस्थ को न जनावे ६ जैसे पृथवी अन्य सयोग से उत्पन्न होते हुये, का दव का नाश करे, तैसे साधु राग द्वेश क्लश का नाश करे ७ जैसे पृथवी सव प्राण भूत को आधार भूत है, तैसे साधूभी आचार्य उपाध्याय शिष्य इत्यादि को आधार भूत होवे

१० " जलरुह " कलम पुष्प जैसे साधू होवे १ जैसे कमल कादव से उत्पन्न हुवा, और पाणी करके वृद्धी पाया, परन्तू पुन उस से लेपाय नहीं, तैसे साधू काम करके उत्पन्न हूये और भोग करके वडे हूये, परन्तू पीछे काम भोग कर लेपाय नहीं २ जैसे कमल सुगध शीतलता कर पथीयो को सुख उपजावे, त्यों साधु उपदेशादि कर भव्य जीवों को सुख उपजावे ३ जैसे पुंडरिक कमलकी सूगन्ध वि-

स्तरे तैसे साधुकी सील सत्य तप ज्ञानादी गुणोंकी सुगन्ध विस्तरे ४ जैसे चन्द्र विकासी सूर्य विकासी कमल चंद्र सुर्य के दर्शन से विकसाय, त्यों महामूनीयों का गूणज्ञोके सयोग से हृदय कमल किसाय ५ जैसे कमल सदा विकसाय मान रहे, तैसे साधु सदा खुशी रहे, ६ ज्यों कमल चंद्र सूर्य के सन्मुख रहे, त्यों साधु तीर्थंकर की आज्ञा सन्मुख रहे ७ जैसा पूंडरिक कमल उज्वल है, तैसे साधु का हृदय भी धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान करके सदा उज्वल है,

११ " रवि " सूर्य जैसे साधु होवे १ जैसे सुर्य अपने तेज करके जगत् के सर्व पदार्थों को प्रकाशे (प्रगटकरे) तैसे साधु जीवादि नव पदार्थों का यथार्थ स्वरुप भव्यों के हृदयमे प्रकाश करे २ ज्यों सुर्य के उदय से कमलो का वन विकसायमान होवे, त्यों साधु के अगमसे भव्यों का मन विकासमान होवे, ३ ज्यों सूर्य चार प्रहर के जमें हुये अन्धकारका क्षिण मात्र में नाश करे, त्यों साधु अनादी मिथ्यात्व का नाश करे, ४ ज्यों सूर्य तेज प्रतापसे दीपे, त्यों साधू तप तेज सें दींपे ५ ज्यों सुर्य के प्रकाश से ग्रह नक्षेत्र तराओंका तेज मंद होजाता है, तैसे साधु के आगम से मिथ्यात्वी यों पाषंडीयों का तेज मद पडजाता है ६ जैसे सूर्य अग्नीके तेजका नाश करें, तैसे साधु क्रोध रुप अग्नी को मंद करे, ७ जैस सुर्य सहश्र कीर्ण कर शोभे, तैसे साधु ज्ञानादी सहश्रों गुण कर, तथा चार तीर्थोके परिवार कर शोभे

१२ 'पवणा ' हवा जैसे साधु होवें १ जैसे हवा सर्व स्थान गमन, करे और वायूकी गति सालायमान (संहन)न होवे, तैसे साधु सर्व स्थान विहार करे, तथा स्व इच्छाचार विचरे २ जैसे हवा अप्रतिबंध विहारी है, तैसे साधू ग्रस्थादी के प्रति बन्ध रहित विचरे (३) जैसे वायू हल्का होवे तैसे साधु द्रवेतो उपाधी—उपकरण

करके हलके रहे, और भावे कपायसे हलके रहे ४ जैसे हवा उद्दंड (कीधरकीकीधर) चलने लगे तैसे साधूभी अनेक देश विचरे ५ ज्यों हवा सुगंध दुगव का प्रसार करे, त्यो साधु पुण्य पापका या धर्म अवर्म स्वरूप विस्तारसे दूसरेको बतावे ६ जैसे हवा की सीकी रोकी रहे नहीं, त्यो साधू मर्याद उप्रात रहे नहीं ७ ज्यों हवा उष्णता निवारे त्यों साधू संवेग वैराग सद्बोध रुप हवा करके आधी व्याधी उपाधी रुप उष्णताको निवार शांती शाती शाती वरतावे

"औरभी साधूजीकी ३२ औपमा"

१ " कांसी पत्र इव "—जैसे कासीके कटोरेमें पाणी भेदाय नहीं, तैसे मुनी मोह मायासे भेदाय नहीं २ ' संख इव ' जैसे संख' रंगाय नहीं, त्यों मुनी स्नेहसे रंगाय नहीं ३ ' जीव गइ इव ' जैसे जीव परभवमें जावे उसकी गतिका कोइ भंग कर सके नहीं, तैसे मूनी अप्रतिबंध विहारी होते हैं ४ ' सुवण इव ' जैसे सोनेको काट (कीट) लगे नहीं, तैसे साधूको पाप रुप काट लगे नहीं ५ ५ ' भिंग इव ' जैसे आरीसे (काच) में रुप देखाय, तैसे साधु ज्ञान करके निज आत्मरुप देखे ६ ' कुम्भोइव ' जैसे किसी वनके सरोवरमें बहुत काछवे रहते थे, वो आहार करनेको बाहिर आते तब वनवासी बहुत जंबुक (सियाल) उनको भक्ष करने आतेथे, तब कितनेक काछवे तो ढाल नीचे अपने पाच ही अंग (चार पग, पांचमा सिर) दबा लेतेथे, जो होशियार थे वो तोसर्व रात्री अपनी ढालके नीचे स्थिर रहतेथे, और कितनेक पांच अगमेका एक बाहिर निकालके देखते की जंबुक गये क्या? उतनेमें ही वो छिपे हुवेपापी सियाल उसका अंग तोड उसे मार खा जातेथे और जो स्थिर रहते वो दिन उदय भये सियाल गये पीछे, अपने ठिकाणे—सरोवरमें जाकर सुखी होतेथे इसी तरह साधू पाच इंद्रीको ज्ञान ढाल नीचे, जीवे वहातक

दाब रखे, स्रीयादी भोगरुप सियालेके तावेमें नहींपडे,और आयुष्य पूर्ण करके मोक्षरुप सरोवर प्राप्त करे ७ 'पद्म कमल इव' जैसे पद्म कमल कीचडेमें उत्पन्न हो, जलमे वृद्धि पाकर पीछा पाणीसे लेपाय नहीं, तैसे साधु संसारमें पैदा होते है परन्तु ससारके भोगों का त्याग किये पीछे संसारके भोगमें लिपाय नहीं- ८ 'गगणइव" जैसे आकाशको स्थभ नहीं, निराधार ठेहराहै, तैसे साधु किसीका आश्रय इच्छे नहीं ९ 'वायूइव' हवा एक ठिकाणे रहे नहीं, तैसे साधु भी मदा फिरते रहैं १० 'चदइव' चद्रमा जैमे सदा निर्मल हृदयके धरणहार और शितल स्वभावी होवें ११ 'आइच्चइव' जै-से सूर्य अन्धकारका नाश करे तैसे साधू मिथ्यांधकारका नाश करे १२ 'समुदइव' जैसे समुद्रमें अनेक नदियोका पाणी जाता है, तो भी झलकता नहीं है, तैसे साधु, सबके शुभाशुभ मचन सहे, परतु कोप नहीं करे १३ 'भारन्ड इव' भारड पक्षीके दो मुख और तीन पग होते ह, वो सदा आकाशमें रहता है, फक्त आहार निमित्त पृ-थ्वीपर आता है, तब पांखो फेलाकर बैठता है, और एक मुखसे चा रोंही तरफ देखता है, कि कही मुझे किसी तरफसे उपसर्ग न हो! और दूसरे मुखसें आहार करता है थोडीमी शंका पडनेसे तृक्षिण उड जा ता है तैसेही साधू सदा सयममें रहे, फक्त आहार प्रमुख निमिच गृहस्थके घरकों जावे, तब द्रव्य द्रष्टीतो आहारके सनमूख रखे, और अतर्द्रष्टीसे अवलोक्न करता रहेकि मुझे किसी प्रकारका दोप न ल गजाय जो किंचित् ही दोप लगने जेसा देखे तो तत्क्षिण वाहासे च-ले जावें १४'मंदरइव' जैसे मेरूपर्वत हवासे कपायमान न होवे तैसे साधू परिसह उपसर्गसे चलायमान न होव १५ 'तोय इव' जैसे सरदऋतुका पाणी निर्मल रहे तैसे साधूका हृदय सदा निर्मल रहे १६'खङ्गीहत्थि इव' जैसे गेंडा हाथीके एकही दात रहता है, उससे वो सबका पराजय कर सर्व

सक्ता है, तैस साधु एक निश्चय नयमें स्थिर हो कर ,सर्व शत्रुओंक पराजयं करते हैं १७ ' गंधत्थीइव ' जैसे गंध हस्तीको सग्राममें ज्यों ज्यों भालेका प्रहर लगाता है, त्यों त्यों जास्ती २ सूरा होकर शत्रुको पराजय करता हैं, तैसे साधू पर ज्यों ज्यों परिसह पडे, त्यों त्यों जादा २ सूरा होकर कर्म शत्रुका पराजय करे १८ ' वृपभ इव ' जैसे मारवाडका धोरी वेल, लिया हुवा भार प्राण जाते भी बीचमें डाले नहीं तैसे साधू पाच महाव्रत रुप महा भार प्राण जाते भी जीये वहा तक फेंके नहीं १९ ' सिंह इव ' जैसे केसरी सिंह किसी पशुका डरायाडरे नहीं, तैसे साधु किसी पाखडियोंसे चलायमान होवे नहीं २० ' पृद वी इव ' जैसे पृथ्वी शीत, उष्ण, अच्छा, बूरा सब समभाव सहन करे तथा पूजनेवाले और खोदनेवालेकी तर्फ समभाव रखे, तैसे साधु शत्रु, मित्र पर समभाव रखे निंदक वदकका एकसा उपदेश करके तारे २१ ' वन्ही इव ' घृतके सींचनेसे अग्नी जैसे दिप्य होती है, तैसे साधुर ज्ञानादि गुण करके दिप्त होवे २२ ' गोशीप चंदने इव ' जैसे चदण काटे तथा जलावे उसे जास्ती सुगध देवे, तैसे साधु परिसह उपसर्ग उपजणेवाले को अपना कर्म काटनेवाला जाण समभाव उपसर्ग सहन करे, फिर उसेही उपदेश देकर तारे २३ ' द्रह इव ' द्रह चार प्रकारके १ केसरी प्रमुख वर्षधर पर्वतकी द्रहमेंसे पाणी निकलता है परन्तु बाहिरका पाणी उसमे आता नहीं है, तैसे कोई साधू दूसरेको ज्ञान सिखाते हैं, परन्तु आप दूसरेके पास सीखते नहीं हैं, २समुद्रमें पाणी आता है, परन्तु निकलता नहीं, है, तैसे कितनेक साधू दूसरेके पास ज्ञान सीखते हैं, परन्तु सिखाते नहीं है, ३ गंगा प्रापात कूड प्रमुखमें पाणी आता भी है और जाता भी है, तैसे कितनेक साधु ज्ञान पढते है और पढाते भी है, ४ आढाइ द्विपके बाहिरके समुद्रमें पाणी आता भी नहीं, है और निकलता भी नहीं है तैसे कितनेक साधु पढते भी न

द्वितीय खन्डम्

प्रवेशिका

"अत्थ धम्म गइ तच्च ' अणुसुठी सुणहमें "

इस ' जैन तत्व प्रकाश 'नामक ग्रन्थके प्रारभमें कही हुइ गाथाके पूर्वार्ध करके तो मङ्गलिक निमित्त पंच प्रमेष्टीको वंदन (गुणानुवादयूक्त) नमस्कार किया और गाथाके उत्तरार्ध करके [अत्थ] आत्माका इष्टितार्थ सिद्ध होय अर्थात् जन्म जरा मृत्यू रूप महा दुःखोंका नाशकर अनत, अक्षय, अव्याबाध, मोक्षके सुखोंकी प्राप्ती करे, ऐसा (तच्च) यथातथ्य, सत्य (गइ) सर्व सुखार्थीयों–मुमुक्षुवोंको ग्रहण करने योग्य (धम्म) श्रुत और चारित्र धर्मको जो मेनें गुरु कृपासे प्राप्त किया है, उसका उपदेश अन्य भव्यों को कर के मेरा दान धर्म बराबर बजानेके लिये, इस दूसरे खण्डके –१ धर्म प्राप्ती, २ सूत्र धर्म, ३ मिथ्यात्व, ४ सम्यक्त्व, ५ सागारी धर्म, और ६ अतिक शुद्धी इन छे प्रकरणों का वर्णन करता हू सो हे सभ्य गणों ! इसे (अणु) अपनी आत्माका हित कर्ता समज [सु] अच्छीतरह [ठी] मन वचन काया के योगोंको स्थिर कर दत्त चित हो [सुणह] सुणीये, या पढिये, जिससे आपको अकथ्य आत्मिक सुखरूप लाभकी प्राप्ती होगी।

छद्मस्ततासे या श्रुत चुकसे इसमें जो कुछ दोष हो जावे तो में ज्ञानी समक्ष क्षमा याचता हू

प्रकरण १ ला

धर्मकी प्राप्ती

लब्भती विउला भोए, लब्भती सुर संपया ।
लब्भती पुत्त मित च, एगो धम्मो दुलब्भइ॥

इस जगतमें रहे हुये तमाम (सर्व जीवोंको एकांत सुखकी अभिलाषा हैं सो यह अभिलाषापूर्ण करनेवाला इस विश्वमें एक धर्म ही है, दूसरा कोई नहीं है क्यो कि जो कोई दूसरा होय तो यह प्राणी इतने काल दुःखी नहीं रहता देखिये, इसको पहिले अनंती वक्त विपुल —विस्ती-र्ण देवता या मनुष्य संबंधी उत्तमोत्तम पंच इंद्रीके विलास भोग मिल गये, तथा सुर (देवता) जैसी संपदा (रिद्धी) रत्नोंके महलात वस्त्र भूषण भी मिलगयें, मित्र जो पुत्र तथा स्वजन स्नेहीसे सुख होता हो-य तो, वो भी अनंती वक्त मिलगये शास्त्रमें कहा हैकि—

नसा जाइ नसा जोणी, न तं कुलं न तं ठाणं ।
न जाया न मूवा जत्थ, सव्वे जीवा अनंत सो ॥

ऐसी कोई इस जगत्में जाति, योनी, कुल, स्थान, नहीं हैं, कि जिस जगह यह जीव जन्मा और मरा न होय, अर्थात् सर्व जाती योनी, कुल स्थानमें, ये अपना जीव अनती वक्त उपज आया है, इस जगत्में जितने जीव है उन सबके साथ जितने जगतमें सम्बन्ध(माता पिता भाई भागिनी स्त्री पुत्र इत्यादिके)हैं सो एकेक नाता अनंत २ वक्त करआया, कोई× भी जीव वाकी रहा नहीं परन्तु कोई भी इसकी इच्छा पूर्ण करसके नहीं इस जीवको इच्छित अखड सुख दे सके नहीं यह सबकोछोड आया, कितनीक वक्त अपने लिये उन स्वजनोंको रोना हुआ था, और कितनीकवक्त उनके वियोगसे अपनेको रोना हुवाथा जो यह वस्तु अखड सुख देती तो दु खी होनेका सबब ही क्या था? श्री उत्तराध्ययन जी सूत्रमें कहा है कि –

माया पिया न्हुसा भाया, भज्जा पुत्ताय उरसा ।
नालते तव ताणाये, लुप्पती सस्स कम्मुणा ॥

माता, पिता, पुत्रकी स्त्री, भाई, भार्या पुत्र इत्यादि सम्बन्धी नहीं निश्चय तुझको तारण—मरण (सुखके दाता) हैं क्यों कि वो बिचारे अपने कर्मोंसे आप ही पीडा (दु ख) पा (भोगव)रहे हैं तो तेरेको कहासे सुखी करे? ऐसाजाण ह भव्यों ! सत्य समजो कि इस विश्वमें तुमारा हित—सुखका कर्ता एक धर्म ही है परं " ऐगो धम्मो दुलम्भइ " ऐसा सुखदाता धर्म मिलना बहुत ही मुश्किल है क्या कि प्रत्यक्ष ही दिखाता है कि इस जगत्में उत्तम गिनी जाती वस्तु (सुवर्ण रत्न आदि) बहुत कमी दृष्टी आती है. तोसुवर्णादि

× यह व्यवहारिक वचन है जैसे "मैं सर्व मुम्बई देख आया" परन्तु सब नहीं देखी, तैस ही व्यवहार रासीमे से तुरत निकले हुव जीवोंसे यह सबध नहीं मिलता है

पदार्थोंसे तो धर्म बहुत मूल्यवान है, ऐसा० परम सुखका दाता धर्म तो सहज हाथ कहांसे लगे ? अब सुणिये, धर्म कितनी मुशीबतसे प्राप्त होता है सो—

'अदुवा अणंत खुत्तो' × अथवा अनंती वक्त सब जीव मंसा

Religion what treasures un told Reside in that heavenly word
More precious than silver or gold Or all this earth can afford

धर्म ! इस स्वर्गीय शब्द में कितना अकथ्य खजाना रहता है ' सोना रुपा और पृथ्वी की सर्व चीजोंसे भी यह बहुत मुल्य वान है—

× यह पाठ भगवतीजीमें तथा जम्बुद्वीप प्रज्ञप्तीके छेले पत्रमे है तथा हेमाचार्यजी कृत स्याद्वाद मजरी की टीकामें भी कहा है —

गाथा—गोला य असंखिज्जा, असंख निगोय गोल ओ भणि ओ ।
इक्किम्मि णिगोयम्मि, अणन्त जीवा मुणेयव्वा ॥ १ ॥

अर्थ-गोल असंख्यात है, और एक एक गोले म असंख्यात निगोद है, तथा एक एक निगोदम अनंते अनंते जीव मानने चाहिये

गाथा-सिज्झंति जत्तिया ख्खु इह स ववहार रासी दा ।
एंति अणाइ वणस्सइ रासीदा तत्तिआ तम्मि ॥ २ ॥

अर्थ-व्यवहार राशिम से जितने जीव मुक्त हो जाते हैं उतन ही जीव अनादी निगोद नामक वनस्पीत राशिसे निकल व्यवहार राशिमें आजाते हैं

श्लोक—अत एवच विद्वस्तु मुच्य मानपू सततम् ।
ब्रम्हाण्ड लोक जीवा नाम नन्त त्वाद् शुन्यता ॥ ३ ॥

अर्थ—इस लिये ससार में स ज्ञानी जीवो की निरतर मुक्ती होते भी ससारी जीव राशि अनत रूप होने स कभी उसका अत नहीं आसक्ता है

श्लोक-अन्त्य न्यूना तिरिक्त स्वं युज्यते परि माणवत् ।
वस्तु न्यपरिमेय नु नुन तेषाम्प्य सभव' ॥ ४ ॥

अर्थ-जिस वस्तूका सख्यात रूप परिमाण होता है उसीका किसी समय अंत आसक्ता है तथा कभी समाप्त भी हो जाती है, परन्तु जो वस्तु अपरिमाण होती है उसका न तो कभी अत आता है और न तो कभी घटती है और न वो कभी समाप्त होती है

र्में खुते (रुले–भमे) इस अवुवा (अथवा)शब्द ऊपरसे ऐसा निश्चय होता है, कि यह जीव इतर निगोद–अव्यवहार रासी (जिसमें अवीतक बहूत जीव एकेंद्रपिणा छोड वेंद्रीही नही हूये) में अव्वल था, वहा इसने अनंते काल गमा दिया, अकाम (मन विन) निर्जरा (सीत ताप क्षुधादि सहे) कुछ कर्म पतले हुये, तव यह जीव व्यवहार रासीमें आया ' अणंत खुत्तो ' अनत पुद्गल परावर्तन किये,–

" पुद्गल परावर्तन "

यह जीव आठ प्रकारसे पुद्गल परावर्तन करता है द्रव्यसे, क्षेत्रसे कालसे, और भावसे, इन एकेक के दो भेद —वादर और सुक्ष्म, ऐसें ८ भेद होते है सो —

१ द्रव्यसे वादर पुद्गल परावर्तन करती वक्त जीव १ उदारिक शरीर कि जो हाड मांस चर्मका पूतला मनुष्य तिर्यचका है, २ वेक्रिय शरीरकि जो अन्य श्रेष्ट नष्ठ पुद्गलोंका पूतला नर्क देवताके है [१] ३ तेजस शरीर जो अंदर रहकर किय आहारको पचावे,

[१] यहां तीसरा आहारिक शरीर नहीं लिया, क्यों कि वो तो फक्त चौदह पूर्वधारी मुनीराजको निर्मल तपके प्रभावसे आहारिक लब्धी प्राप्त होती है उनके मनमें किसी प्रकारका सशय उपजे तय आहारिक समुद्घात कर शरीरमेंसें आत्मप्रदेशोका पूतला निकाल जहां केवल ज्ञानी होवे वहां मेंजे (वे ४१ लाख योजन जा सकता है) वो पूतला उत्तर ले कर क्षिणम आकर शरीरमे समावे मनका सशय मिटे मुनी लब्धी फोडी उसका प्रायश्चित ले शुद्ध होवे फक्त इसी काममे आता हैं जिससे नहीं लिया तथा आहारिक शरीर धाले अनंत ससार परिभ्रमण नहीं करते हैं इसमे नहीं लिया

४कारमण शरीर जो शरीरमें यथा योग्य ठिकाणे किया हुवा आहार प्रगमावे (पहोंचावे) यह चार शरीर लेना, और मनका वचनका* जोग और ७ मा श्वासोश्वास यह सात बोलके जितने पुद्गल इस लोकमें हैं उन सर्वको यह जीव फरसे, सो द्रव्यसे बादर पुद्गल परावर्तन

२ द्रव्यसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो—पूर्वोक्त सातही वस्तुके पुग्लोंको अनुक्रमे फरसे, जैसे पहिले उदारिक शरीरके पुग्दगल इस जगतमें जितने हैं उन सर्वको फरसकर, फिर वैक्रियके फिर तेजसके, यों सातोंके अनुक्रमे फरसे और जो उदारिक के पुग्दल फरसता २ सपूर्ण विन फरसे, दूसरे वैक्रियादिक के पुद्गल फरस लेवे तो वो पहिलेके फरसे हुये उदारिकके पुद्गल गिनतीमे नहींआवे पीछे पहिलेसे आखीर तक अनुक्रमे फरसके पूरा करेगा वोही गिनतीमे आवेगा सातही एकके पीठे एक फरसके पूरे करे उसे द्रव्यसे सुक्ष्म पुद्गल परावर्तन कहना

३ क्षेत्रसे पुद्गल परावर्तन—सो मेरु पर्वतसे सर्व दिशी वीदिशीयोंमें असख्याते आकाश प्रदेशकी श्रेणी अलोक तक बन्धी हुई हैं उन सब श्रेणियोंके ठिकाणे यह जीव उपजके मर आया, एक वालाग्र जितनी जगह खाली न रखी सो क्षेत्रसे बादर पुद्गल परावर्तन

४ क्षेत्रसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्तन सो,—उन आकाश श्रेणियोंमें की एक ही आकाश श्रेणि मेरु पवतके पाससे अनुक्रमे (बीचमें किंचित् ही छेटी नहीं छोडता) अलोक तक जन्म मरण करके मरे, फिर

---

* शरीर के नाम पहिले आगये जिससे यहां कायका योग नहीं लिया

होता है,

अब देखिये ! कितनेक पुण्य की वृद्धि होवे तब मनुष्य जन्म मिलता है, प्रथम तो अवकाही निगोदमें अनतकाल गमाया, वहांसे अनत पुण्यकी वृद्धि हुइ, तब व्यवहार रासीमें बादर एकेंद्रीपणे आया इस बादर एकेंद्रीके पांच भेद हैं, १ पृथ्वी काय (मट्टी) इसकी सात

---

* सर्वसे सुक्ष्म 'काल' है दृष्टांत—जैसे कोई बहुत पानके ढगलेमें महापराक्रमी पुरुष जोरसे सुइ गबावे यों एक पानको भेद दूसरेमें जावे इतने मे असंख्यात समय बीत जावे इससे क्षेत्र असंख्या गुण सुक्ष्म एक अगुल जितने क्षेत्रमें असख्यात श्रेणी है, उसमेसे एक श्रेणी ग्रहण करणी सो एक अंगुलकी लंबी और एक आकाश प्रदेश जितनी चौडी उसमेंसे उसमेंसे एकएक आकाश प्रदेश निकालते असख्यात काल चक्र चला जाय, तो भी वो आकाशप्रदेश खुटे नहीं, इससे द्रव्य अनत गुणा सूक्ष्म, सो पहिले कहे हुये एक ही आकाश प्रदेशपर अनत परमाणु द्रव्य है, सो एकएक समयमें एक एक द्रव्य निकालते अनंत कालचक्रके समय बीत जाय,तो भी एक आकाश प्रदेशके द्रव्य खूटे नहीं इतने एकही प्रदेश ऊपर द्रव्य है, ऐसेंही सर्व प्रदेशपर द्रव्य जानना इससे अनंत गुणा भाव सूक्ष्म है इस आकाश प्रदेशपरके अनंत द्रव्यमेसे एक द्रव्य ग्रहण करना उस द्रव्यकी अनत पर्यव है जैसे एक परमाणुमें एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो फरस है, उसमें क एक वर्णके अनत भेद होते हैं; जैसे एक गुण काला द्विगुणा काला जावत् अनत गुण काला, ऐसे ही २० बोल जानना ऐसेही द्विप्रदेशी खंध पुद्गलोंमे दो वर्ण, दो गंध दो रस चार स्पर्श, इन १ ही बोलके अनतभेद होते हैं यों सर्व द्रव्य पर्यवके भेद करनेसे अनंत २ भेद होते हैं उन एक पर्यव (पर्याय) का हरण करते अनत कालचक्र बीत जाय, तब एक परमाणुके पर्यव पूरे होवे! ऐसे ही द्विप्रदेशी, त्री प्रदेशी यावत् अनंत अनत प्रदेशी स्कंधके अनत पर्यव हैं; ये एक प्रदेशकी व्याख्या करी, ऐसे ही सर्व लोकके आकाश प्रदेशके वर्णादिकके पर्याय जाणना य एकेककी एकेकसे सूक्ष्मता बताई दृष्टांत—कालकोणे जैसा, क्षेत्र जवार जैसा द्रव्य बाजरे जैसा, और भाव खसखसके दाणे जैसा

लाख जात* और बारह लाख क्रोड कूल हैं एकेक पृथ्वीके जीवोंका उत्कृष्ट बावीस हजार वर्षका आयुष्य है २ अपकाय (पाणी) की सात लाख जाति, और सात लाख क्रोड कूल हैं अपकायका उत्कृष्ट आयुष्य सात हजार वर्षका ३ तेउ काय (अग्नी की सात लाख जाति और तीन लाख क्रोड कुल इसका उत्कृष्ट आयुष्य तीन अहो रात्री (दिन रात्री)का ४ वाउ काय (हवा) की सात लाख जात, और सात लाख क्रोड कुल, इसका उत्कृष्ट आयुष्य ३००० हजार वर्षका इन चार ही स्थावरोंमें अपने जीवने असंख्यात काल गमा दिया. ५ , वनस्पति कायेकी + चौवीस लाख जाति, और अठाइस लाख क्रोड कुल, इसका दश हजार वर्षका उत्कृष्ट आयुष्य इसमें नि

* जात इसतरह कहते हैं-पृथ्वीकायकी ७ लाख जति सो इसतरह पृथ्वीके मूल प्रकार ३५०, इसको पांच वर्णसे पांचगुणा करते ३५०×५ =१७५ इनको दो गन्धसे दो गुणे करेतो १७५ ×२=३ , इनको पांच रससे पांच गुण करतो ३५० ×५=१७५ ० इनको आठ स्पर्शसे ८ गुणे करते १७५ ×८=१४ ०० इनको पांच संठाणसे ५ गुण करते१४ ० ×५=७ ००० यों ७ लाख जाति पृथ्वीकायकी जानना ऐसे ही निम की जितनी लाख जाति होवे उसका आधा सो मूल प्रकार, उसको पु र्वोक्त रीतिसे गुणा करना तो ८४ लाख जातिका हिसाब जम जायगा जिसका वर्ण गंध रस, स्पर्श और संठाण एक होवे उसे एक जाति कहना जाति मालाका पुष्प जानना १ अब कुलकी रीती इस तरह कहते हैं कि जैसे भमरेकी जाति तो एक और एक भमरा पुष्प का, एक भमरा स्फकका एक गोबरका यों तीन कुल हो गये एसही सब कुलकी संख्या ज्ञानीने फरमाई है सो सत्य जानना

+ १ वनस्पतिकी १० लाख जाति तो प्रत्येक (एक शरीरमें एक जीव) वनस्पतिकी है और १४ लाख सुक्ष्म-साधारण (एक शरीरमें अनन्ताने व अनन्त जीववाले) की है यो दोनो मिलकर २४ लाख जाति होती है

गोद आश्री अनतकाल गमा दिया यहासे अनत पुन्यकी वृद्धि हुई तब, एकेंद्रीका 'बेंद्री' (काया और मुख वाले जीव कीडे प्रमुख) हुवा इसकी दो लाख जाति, और सात लाख क्रोड कूल हैं. इसका उत्कृष्ट आयुष्य १२ वर्षका, यहासे अनत पुन्यकी वृद्धी हुइ तब, 'तेंद्री' (काया मुखऔर नाक वाला जीव कीडी पटमल प्रमूख) हुवा, इसकी दो लाख जाति, और आठ लाख क्रोड कुल, इसका उत्कृष्ट आयुष्य ४९ दिनका, यहांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब, 'चोरेंद्री' (काया, मुख, नाक, और आंख वाले जीव मक्खी विच्छू प्रमुख) हूवा, इसकी दो लाख जाति, और नव लाख क्रोड कुल, इसका आयू ६ महिनेका इन तीन विक्लेन्द्रिमें संख्याता काल गमादिया

यहांसे अनंत पुन्यकी वृद्धि हुइ तब 'असन्नी तिर्यंच पचेंद्री हुवा * और यहांसे अनंतपुन्य बंधे तब 'सन्नीतिर्यंच पचेंद्री' हुवा.इनकी चार लाख जाती, और इनके ५ भेद —१ 'जलचर' (पाणीमें रहनेवाले जीव, मच्छ कच्छ प्रमुख)इनके १२॥ साडीबार लाख क्रोड कुल. इन दोनोंका क्रोड २ पूर्वका आयुष्य २ 'स्थलचर'(पृथवीपरचलनेवाले गाय घोडे प्रमुख) इनके दश लाख क्रोड कुल और आसन्नीका चौरासी हजार वर्षका, सन्नीका तीन पल्योम का आयुष्य ३ 'खेचर' (आकाशमें उडनेवाले जीव पक्षी) इसके बारह लाख क्रोड कुल, और असन्नीका बहोत्तर हजार बर्षका, सन्नीका पल्के असंख्यातमे भाग आयुष्य ४ 'उरपर' (पेटरगडके चलनेवाले जीव साप अजगर प्रमुख) इनके दश लाख क्रोड कूल, और असन्नीका त्रेपन हजार वर्षका, सन्नीका क्रोड पुर्वका आयुष्य ५ 'भुजपर' (भुजोंके जो

---

* निगोदसे लगाकर असन्नी तिर्यंच पचेंद्री तक परवश पणे क्षुधा त्रषा, शीत, ताप, छेद भेद, इत्यादि दुःख सहन करते अकाम निर्जरा होती है, सो ही पुण्य वृद्धी का कारण है

रसे चलनेवाले जीव उदर प्रमुख)इनके नव लाख क्रोड कुल, और असन्नीका ४२ हजार वर्षका, सन्नीका क्रोड पूर्वका आयुष्य इनके उत्कृष्टे सातभव संख्याते आयुष्य वालेका औरएक भव असख्यात वर्ष आयुष्य वालेका यों उत्कृष्ट ८ भव लगोलग करे है

अब नर्कमें गया तो, नरककी ४ लाख जाति, और पचीस लाख क्रोड कूल, उत्कृष्ट तेंतीस सागरका आयूष्य, यहांका एकही भव * होताहै और देवतामें गया तो चार लाख जाति, और छब्बीस लाख क्रोड कुल, उत्कृष्ट तेंतीस सागरका आयूष्य, यहांभी एक ही भव होता है इतने भव मनुष्य गती छोडकर करने पडते हैं. अब जो कभी अनत पुन्योदयसे मनुष्य गतीमें आया, तो मनुष्यकी चउदे लाख जाति, और वारह लाख कोड कुल होते हैं मनुष्यका उत्कृष्ट आयुष्य तीन पल्योपमका होता है असख्यात वर्षके आयुष्य वाले युगालिये मनुष्य एक भव होता है और संख्याते आयुष्य वाले कर्म भूमी, भद्रिक प्रणामी, लगोलग सात भव मनुष्यका कर देते हैं §

* नर्क और स्वर्ग का एक ही भव है नर्क का जीव मर कर नर्कमें न उपजे, तैसे ही स्वर्ग (देवता) के जीव मर कर देवता में न उपजे, तथा नर्कका जीव स्वर्ग में न जाय, और स्वर्ग का जीव नर्क मे न जाय क्यों कि शुभाशुभ कर्म करने का विशेष कर के ठिकाणा यहा मृत्यु (मध्य) लोकम ही हैं यहां के किये हुये अशुभ कर्मका बदला नर्क में देता है, और शुभ कर्म का फल स्वर्ग में पाता है जैसे दूकानपर प्रमाद और सुख का त्यागन करके कमाइ करेगा सो घरमें जाकर आराम पायगा, और दुकानमें मोजमजा उडा कर धनमें पसी लगायेगा, सो घर मे फकाइशी करेगा-दुःख पायगा दुकान मध्य लोक, और घर नर्क स्वर्ग जानना

§ यह सर्व चौरासी लाख जीवायोनी हुइ और एक क्रोड साढि ९७॥ लाख का कूल हुये

इतनी मुशकीलमे मनुष्य अवतार प्राप्त होता है भी पनवणाजी सूत्र में कहा है कि सर्व जीवों से थोडे गर्भेज मनुष्य हैं क्यों की ३४३ राजू घनाकार लोक में, कुल ४५ लाख योजन के अढाइ द्वीप के अंदर ही मनुष्य हैं उसमें भी एक दो लाख याजन का, और एक आठ लाख योजन का, ऐसे वडे २ समुद्र पडे हैं तथा, नदी पहाड, उजाड इत्यादि बहूत सी जगह मनुष्य रहित हे, इस लिये मनुष्य देह मिलनी बहुत ही दुर्लभ हैं

२ परंतु फक्त मनुष्य अवतारेसही कुछ धर्मकी प्राप्ती नहीं होती है मनुष्यपणा मिल गया तो दूसरा साधन ' आर्य क्षेत्र ' मिलना दुर्लभ हे देखिये इस अढाइ द्वीपमे बडे २तीस क्षेत्र तो अकर्म भूमिके, और छप्पन्न अतर द्विप है उनमें जो मनुष्य हैं, वो बिलकूल धर्म कर्ममें नहीं समजते हैं, वोतो फक्त पूर्व जन्मके उपराजे पुन्य फल देवता की तरह सुख भोग भोगवते हैं अब धर्म करणी करनेके कूल पन्दहर कर्म भूमीके क्षेत्र हैं उनमसे पांच महाविदेह क्षेत्रमें तो सदा-शाश्वता धर्म है, और पंच भरत, पंच एरावत क्षेत्रमें दश क्रोडा क्रोड सागरमेंसे फक्त एक क्रोडा क्रोड सागर कुछ झाझेरा (जादा) धर्म कर्म करनेका रहता है इन दश क्षेत्रमेंसे एकक क्षेत्रमें बत्तीस २ हजार देश हैं उनमेंसे धर्म कर्म करनेके तो फक्त साडे पचीस[२५॥] ही आर्य देश है

*२५॥ आर्य देश के नाम और मुख्य शेहर तथा ग्राम की

आ समुद्रात्तु वै पूर्वादा समुद्रात्तु पश्चिमात् ॥
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥ २१ पर्व॥

उत्तरमे हैमालय, दक्षिणमे विंध्याचल, पुर्व पश्चिममें समुद्र यह आर्यभूमी की हद है

सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ॥
तं देव निर्मितं देशं आर्यावर्तं प्रचक्षते ॥ १७ ॥

सरस्वती नदीसे पश्चिममें, अटकनदीसे पूर्वमे हेमालयसे दक्षिणमे और रामेश्वरसे उत्तरमे जितने देश हैं, उनको आर्य वर्त देश कहते है मनुस्मृतीके दुसरे अध्यायमे है

संख्या—१ मगध देश, राजग्रही नगरी, एक क्रोड, ६६ लाख ग्राम २ अंगदेश, चंपा नगरी, पचास लाख ग्राम, ३ वंगदेश, तामलिप्ता नगरी, अस्सी हजार ग्राम, ४ कनकदेश, कंचनपुर नगर, अठारह हजार ग्राम, ५ काशी देश, वणारसी नगरी, एक लाख पचाणू हजार ग्राम, ६ कुशल देश, शाकेत पूर नगर, नव हजार ग्राम ९ पंचाल देश, कंपिलपुर नगर, तीन लाख, त्रियासी हजार, ग्राम १० जंगाल देश, आइछत्ता नगरी अठाइस हजार ग्राम ११ विदेह देश, मथुरा नगरी, आठ हजार ग्राम १२ सोरठ देश, द्वारिका नगरी' छ लाख अस्सीहजार तीन सो तेतीसे ग्राम, १३ कच्छ देश, कसूंबी नगरी, अठावीसहजार ग्राम १४ साडिल देश, सानन्द पूर नगर, इकवीस हजार ग्राम १५ दशारण देश, सुक्रातम नगर, ४३ हजार ग्राम १६ मेहल देश, भद्दलपूर नगर, सित्तर हजार ग्राम १७ वराड देश वेराड पुरनगर, अठावीस हजार ग्राम १८ वरण देश, सक्रती मती नगरी, बेतालिस हजार ग्राम १९ सावात देश, विदरभी नगरी चार हजार ग्राम २० सिंधू देश, ववार पाटण, छ लाख पिचासी हजार ग्राम २१ सोवीर देश, वितभय पाटण आठ हजार ग्राम २२ शोर देश पावापूरनगर, छत्तीस हजार ग्राम, २३ भग देश मिश्रपुर नगर, एकहजार चारसो वीस ग्राम २४ कूंणाल देश, सावत्थी नगरी, त्रेसठ हजार ग्राम २५ लाड देश, कोडीवर्ष नगरी, दो लाख बेताली स हजार ग्राम ओर अर्ध * केकै देश, सतावका, नगरी दो हजार पाच स ग्राम यह साडे पच्चीस आर्य धम कर्मके देश हैं इनमें मनुष्य अवतार ग्रहण करना बहुत दुर्लभ है

३ इन आर्य क्षेत्रमें जन्म मिल गया तो भी कुछ धर्म कार्य

* अनार्य परदेशी राजाका श्री केशीश्रमण आचार्यजीने समजाया ओर यो जिनधर्म किये उनका देश आर्य हुवा बाकीका अनार्य रहा

नहीं हो सक्ता है क्यों कि तीसरा साधन उत्तम कुलका जोग मिल ना बहुत मुशकल है, क्यों कि जो जबर पुन्य के धणी होगा, सोही उत्तम कुलमें पैदा होता है बहुत कुलीन जन पुत्रके लिये तरसते हैं,परन्तु उनको पुत्र होना ही मूशकील दिखता हैं, क्यों कि पुन्यवंत जगतमें बहूत थोडहे;और नीच कुल पापी जनोंकी पैदाइस बहूत देखनेमें आती है क्यों कि पापी जीव जगतमें बहुत हैं,नीच जातिके लक्षण –

जपो नास्ती तपो नास्ती, नास्ती चेन्द्रीनिग्रह
दया दान दम नास्ती, इति चंडाल लक्षणं ॥

जो कभी परमेश्वरका जाप (स्मरण—ध्यान) नहीं करे, दिन रात घर धंदेमें ही पच रहे, कभी उपवासादिक व्रत भी न करे, सदा खा—पीके शरीरको पुष्ट बनानेमें खूसी, जिसे खाद्य अखाद्यका कुछ विचार नहीं, अग्नीकी तरह सर्व वस्तू खावे, कुछ छोडे नहीं, पंच इंद्रयो कों कुचालसे निवार नहीं, सदा गान तान नाटक चेटक विषय भोगमे आनंद माने, पर स्त्रियोंसे गमन करे, निर्दयी किसी भी दुखी जीवकी जिसके घटमें अनूकंपा (दया) नहीं सदा पृथव्यादिक छे ही कायका घमशान करेनवाला, मद्य मास भक्षी, कभी किसीको किंचित् मात्र दान देवे नहीं, महा परिग्रह, कंज्जुस मूंजी, दूसरा कोइ धर्म दान करता होय उसे अंत्राय दे–ना कहे, कभी आत्मदमन नियम व्रत प्रत्याख्यान (पचखाण) करे नहीं, इतने लक्षण जिसमें होवे उसे नीच कहना, चंडाल जातिका कहना इन दुर्गुणों रहित, यथा शक्ति जप, तप, इंद्री निग्रह, दया दान व्रत करे उसे उत्तम कहना सो ऐसे उत्तम कुल जैन कुलमें जन्म लेना बहुत ही मुशकिल हैं

४ जो उत्तम कुल ही मिलगया तो क्या हुवा ? क्योंकि चौथा साधन " दीर्घ लम्बा आयूष्य " मिलना बहूत मुशकिल हे पहिले

तीसरे चौथे आरे के मनुष्यका आयुष्य पूर्वोका था, जितने जिनके व र्पके सेंकडे थे उतने अपने श्वासोश्वासही न रहे सो वर्पके कुल चार अव्ज्य, सात क्रोड, अडतालीस लाख, और चालीस हजार, श्वासो श्वा स होते हैं सोइ सो वर्प सुख से पुर्ण करने, वाले तो कोइक होंगे कहा है कि —

आयुर्वर्पे सतेव्रणा परमित, रात्रौ तदर्धंगत ।
तस्यार्धस्यर्ध मर्ध मपर्मं, घालत्वं वृधत्वयो ॥
सेप व्याधी वियोग दु ख सहितं, से वधीर्मीयनियत ।
जेव वारीतरग बुद २ समे, सोख्य कुत प्राणीना ॥

इस सो वर्प जिंदगानी में मनुष्य को कितना सुख प्राप्त होता है, सो जरा वनिये के हिसाब से विचारीये, एक वर्पके ३६० दिन तो सो वर्प के ३६००० दिन हुवे इसमें से अठारे हजार तो निंद में गये ! क्योकि 'निद्रा गुरुजी विन मोत मूवा' विना मृत्यू से मृत्यू रुप निद्राही है इसमे सुख दु ख का कुछ ज्ञान रहता नहीं है- वाकी १८ हजार रहे, उसके तीन भाग छे छे हजार के हुये, सो छे हजार वाल वय के गये, वोही अज्ञान दशामें, क्योकि वालकको कुछ सत्यासत्य का ज्ञान नहीं है, और छे हजार जरा (वृद्ध)पणे के सो वृद्ध पणा भी शास्त्रमें वहुत जगह महा दु खका कारण वताया है, 'जन्म दु खं जरा दु खं' और है भी महा दु ख का ही कारण क्यों कि मन तो अनेक मोज मजा भूकने की इच्छा करता है ❀ और इन्द्रियों हीण पडजाती है,

+ श्लोक—वलि भिर्मुखम क्रान्त पलितै रंकित शिर
गात्रा णि शिथिलायते तृष्णा का तरुणायते
अर्थ—मुहका चमडा सिकुडगया, शिरके वाल श्वेत हो गये और सब अग स्थिल (ढीला) पडगया परन्तु एक तृष्णाही तरुणी वन रही है
श्लोक—भोगान भुक्ता वय मेव भुक्ता, स्तपोन तप्त वय मे तप्ता ।
कालो न यातो वय मेंव याता, स्तृष्णान जीर्णो वय मेव जीर्णा॥
अर्थ वृद्धने भोगको नहीं छोडे परन्तु भोगोने वृद्धको छोड दिया तप करके शरीर का नही सुखाया दु ख ताप ने शरीर सुका दिया काल को उन नही जीता परन्तु कालने उनको जित लिया और तृष्णा पुरानी न हुइ, परन्तू शरीर पुराणा जीर्ण होगया

जिससे पूरा सुना देखा नहीं जाता है दांत पडनेसे खाने की वस्तू पूरी चबे नहीं, और पाचन नहीं होने से अनेक व्यावी उत्पन्न होवे, अशक्त-निकम्मा शरीर होनसे स्वजनोंसे भी अपमान होवे इत्यादि अनेक हैं यों बाल और वृद्ध अवस्था के १२ हजार दिन तो दु खमें गये, शेप रहे जोबन वय के छे हजार, उसमें भी कभी शरीर में अनेक तरह के रोग पैदा होवे, कभी रोगसे बचे तो, स्वजनो का वियोग होव, उनके दु ख से झुरते २ दिन जावे, उससे कभी आराम मिले तो, लेने देने का, इज्जत, नफा, टोटा मंदी ,तेजी, इत्यादि अनेक दु ख हैं अब कीजिये हिसाबी सूज्ञ बंधूओं? जो सो वर्षका आयुष्य पाये तो उसमें कितने दिन सुख भोगव सक्ते हो? औरभी विचारिये की इस सो वक्त वर्ष कौन पूर्ण करता है?

गभ्भ मज़ंती, बुयाबुयाणा, नरा परा पंचसिहा कुमारा ।
जोवणगा मझिमा थेरगाय, चयति आयुखय पलाणं ॥

श्री सुयगडांग सूत्र

भोग के वक्त नवलाख्व सञ्ञीपचेंद्री मनुष्य गर्भ में पैदा हो है उसमें से एक दो चार बचते हैं और सब वीर्य फर्ससे मरजाते कितनेक बुद २ में, कितनक थोडे महिने गये पीछे, अन्य अस संयोग से, कितनेक जन्मते वक्त आडे आकर कटकर निकलते हैं जन्मेके बादभी कितनेक असमजपणमें कुमार अवस्थामें, कितने भर युवानीम, और कितनेक इन सब विघ्नों से बचे तो वृद्धावस्था तक टिकके मृत्यूक ग्रास (कवल)होते हैं

जैसे फिरती घट्टी के दोनो पडोंके बीचमें पडे हुये दाने का गेमा नहीं लगता है, की इसका कितनेक चक्र फिर पीछे आट

होयगा, तैसे काल घंटीका, एक भूत काल रुप निचेका स्थिर पट,❀ और दुसरा भविष्य काल रुप उपर का फिरता चक्र, इसके बीचमें पडा हुवा यह प्राणी इसका क्या भरवसा है कि इतने दिन पीछे इस कायाकी भ स्म होयगी? परन्तू इतना तो जरूर है कि उसका अत एक वक्त जरुर आयगा कोइ उपाय से न छूटे! और भी कालको रात, दिन शुभा शूभ, वार, तीथी, नक्षत्र, सुख, दु ख, राजा, रंक, वाल, युवान, वृद्ध इत्यादिक का बिलकूल ही विचार नहीं है ऐसे दीर्घ आयूष्य प्राप्त होना बहुत मुशकील है

५ दीर्घ आयुष्य मिलगया तो भी कुछ आत्म, कार्य सिद्ध न होता है क्यों कि पाचमा साधन पंचे इंद्री निरोगी मिलनी मुशकील है, और पंच इद्री निरोगी मिले विन धर्म कर्म हो नहीं शकता हैं. शास्त्रमें कहा है—" जाव इदिया न हाणति, ताव धर्म्म समायरे ", जहा लग इंद्री (श्रुत, चक्षु, घ्राण, रस, स्पर्श,) की हीणता (निर्वलता, कमीपणा) न होवे, वहा लग धर्म कर ले. क्यों कि कानसे व हेरा हुवा तो वो धर्म श्रवण ही नहीं कर सकेगा, तो फिर जाणेगा किस्तरह ? आखोंसे अन्धा हो गया तो फिर जीवोंकी यत्ना किस्तर करेगा? इत्यादि रीतिसे इद्रियों निरोगी मिलना बहुत मुशकील है

❀ श्लोक—आदि त्यस्य गतागतै रहरहः सक्षीयते जीवित ।
व्यापारैर्बहु कार्य भार गुरुभि कालोन विज्ञायते ॥
दृष्टा जन्म जरा विपत्ति मरणं त्रासश्चनोत्पद्यते ।
पित्वा मोह मयी प्रमाद मदिरामुन्मत्त भूतं जगत् ॥

अर्थ—सूर्यके उदय अस्त होनसे दिन २ आयुष्य घटता जाता है, अनेक कार्यभारमें लगे हुवे को मालुम नहीं पडता है, जन्म जरा विपत्ती मे पीडाते और केइयों को देखता भी जीव त्रास नहीं पाते है इससे यह निश्चय होता है कि—मोह मयी प्रमाद मयी मदिरा पी कर के जगत् मतवाला हो रहा है

६ इंद्रियों निरोगी मिल गइ तो भी कुछ कार्य सिद्ध न हुवा क्यों कि छट्टा साधन शरीर निरोगी मिलना बहुत मुशकिल है निरोगी शरीर विन धर्म क्रिया होनी मुशकील है शास्त्रोंमें कहा है-" वाही जावन वडइ, ताव धम्म समाचरे " जहा तक व्याधी (रोग) की वृद्धी न होवे, वहा तक धर्म कर लो, अर्थात् अपना शरीर तो पाच क्रोड, अडसठ लाख, निव्याणु हजार, पांचसे, चौरासी, (५६८९ ९५८४) रोगों करके प्रतिपूर्ण भरा है जहा तक पुन्यका उदय है वहा तक सब रोग ढके हुये हैं जब पापका उदय हुवा तो इस शरीरका विनाश होते कुछ देर नहीं लगती हैं ताप, सिर पेटका इत्यादि रोग जो हमेशा लगे रहे तो धर्म करणी कहासे कर सके ? कहा हैकि " पहिला सुख निरोगी काया "जो शरीर निरोगी होवे तो सब काम अच्छा लगता है धर्म करणी भी बन सकती है, इसलिये शरीर निरोगी मिलना मुशकील है

तथा इस छट्टा साधन को कोइ धनकी जोगवाइ भी कहते है मराठीमें कहते हैं " पहिली पोटोबा, मग विठोबा "पहिले पेट भरा होय तो फिर परमेश्वर का नाम याद आता है' लक्ष्मी का योग होय और संतोषवंत होय तो निश्चित से धर्म ध्यान कर सकता है इस लिये लक्ष्मीकी जोगवाइ मिलनी मुशकिल है

७ यह ६ बोल इस जीवको अनंती वक्त मिल गये तो भी कुछ कार्य सिद्ध न हुवा, क्यों कि सातमा साधन ' सदगुरुकी सगत' मिलनी बहुत ही मुशकिल है क्योंकि इस जगतमें पाखंडी दुराचारी ढोंगी ऐसे गुरु बहुत हैं, और उनको मानन वाले भी बहुत हैं कहा है'

' पाखंडी पूजा करे, पडित नही पहचान '।
' गोरस ना घर २ विके,दारु विके दुकान '॥

देखिये ! दूध जैसा उत्तम पदार्थ घर २ बेचते फिरते हैं, तो भी उसको लेनेवाले थोडे हैं, और दारु जैसे अपवित्र पदार्थको ग्रहण करनेको पीठेपे कितनी गिरदी जमा होती है? ऐसे ही उत्तम गुरुको माननेवाले जगत्में थोडे हैं, और पाखंडियोंको सत्कार देनेवाले-उनके हुकम अनुसार चलनेवाले-उनपर तन धन कुटुंब कुरबान करनेवाले-अरे अपनी प्यारी पत्नीको भी उनकी प्रेमदा बनानेवाले भी इस जगत्में बहुतसे हैं, इससे जास्ती और क्या अज्ञानपणा होता है?

' गुरु लोभी चेला लालची, दानों खेले दाव, '
दोनों डूबे बापडे, बेठ फत्थरकी नाव '

ऐसे पाखंडियोंसे क्या आत्म कल्याण होगा? जरा विचार कर तो देखो अरे जिनको अपना ही मतलब करनेका चित्त है, वो दूसरे को कैसे तारेंगे ?

' कन्या मान्या कुर्र, तूं चेलो हो गुर्र, '
' रुप्या नारेल धर, भावे डूबके तर '

जो कनक कान्ताके धारी, छेही कायकी आरंभके करने वाले संसारियोंसे भी पातकी, लोभी, लपटी, ऐसे गुरु, आप तो डूबते हैं, और अपने चेलेकोभी पातालमें ले जाते हैं क्योंकि जो लोभी होंगे, वो दूसरे की परवाह रखेंगे कि में कुछ ज्यादह कहूंगा तो श्रोताको बुरा, लगेगा, और मेरी पट्टीमें रुपै कमी भरेंगे। इसलिये इनके मन प्रमाणे जल्दी२ सुणाके मेरा मतलब सार्धू! य डूबो या तीरो अपनको क्या? अपने तो रुपे हाथ लगते है।

सवैया

छाडके ससार छार, छारसे विहार करे , मायाको निवारी, फिर

माया, बलिहारी हैं, पीछलातो भ्रोया कीच, फिर कीच बीच रहे, दोनो पंथ खोये,थात धणीसो बिगारी है साधु कहलाय, नारी निरखत लोभाय, और कचनकी करे चहाय, प्रभुता पसारी है लीनी हे फकीरी, फिर अमी रीकी आस करे, कायको धिक्कार, सिरकी पगडी उतारी है

इस लिये सूज्ञो' जो सुख देने वाला सत्य धर्मकी अभीलाषा होवे तो सद्गुरु कनक कांताके त्यागी, निर्लालची ऐसे गुरुको अगीकार करो, जो तुमारेको सदुपदेश देकर, सत्य धर्मकी प्राप्ती करावें, मिथ्यात्व अन्धारका* नाश करें, क्योंकि इतने गुण युक्त होवे-वोही सदुपदेश कर सक्के हैं

' वक्ता (उपदेशक) के गुण "

१ द्रढ श्रद्धावत होवे—क्योंकि जो आप पक्के श्रद्धावंत होंगे वोही श्रोताकी श्रद्धाको निश कितसे द्रढ कर सकेंगे, २वाचन कलावत होवे—किसी भी प्रकारके शास्त्रको पढते हुये जरा भी अटके नहीं शुद्धता और सरलतासे शास्त्र सुणावे ३ निश्चय व्यवहारके जाण होवे—जिस वक्त जैसी प्रषदा और जैसा अवसर देखे वैसाही सन्दोध करे, की जो श्रोतागण धारण करे, उनकी आत्मामें रुचे ४ जिनाज्ञा भंगका डर होए-अर्थात् एक देशके राजाकी आज्ञा भग करनेसे शिक्षा मिलती है, तो त्रिलोकीनाथ श्री तीर्थंकर भगवानकी आज्ञाका भग करेगा, उसका क्या हाल होगा? ऐसा जाण आज्ञा विरुद्ध-विपरित परुपणा न करे ५ क्षमावत होए क्योंकि जो क्रोधी होगा वो अपडे

*गुकारस्त्वन्धकार स्यादुकारस्तन्निरोधकः ।
अंधकार विनाशित्वाद्गुरुरित्यभी धीयते ॥
अर्थात्-अंतःकरणके अंधकारका नाश करे सो गुरु

दुर्गुणसे डरता क्षमादि धर्मकी यथातथ्य परुपणा नहीं कर सकेगा और वक्त पर क्रोध उत्पन्न हुये, रंगमें भंग कर देवेगा इसलिये वक्ता क्षमावत चाहिये ६ निराभिमानी—अर्थात् विनयवानकी वूद्धी प्रबल रहती है वो यथातथ्य उपदेश कर सक्ते है और जो अभिमानी होते है वो सत्यासत्यका विचार नहीं करते अपने खोटी वातको भी अनेक कु-हेतु करके सिद्ध करेंगे और दुसरेकी सत्य वातकी उथ्यापना करेंगे ७ निष्कपटी होए—जो सरल होगा सो ही यायातथ्य वात प्रकाशेगा कपटी तो अपने दुर्गूण ढकनेके लिये वातको पलटावेगा ८ निर्लोभी होए —निर्लोभी वेपरवाइ रहते हैं वो राजा रंक सवको एकसा सत्य उपदेश कर सक्ते हैं, और लोभी * खुशामदी करने वाले होते हैं, वो श्रोताका मन दु खा जान वातको फिरादेते हैं ९ श्रोताके अ-भीप्रायका जाण होवे—अर्थात् जो जो प्रश्न श्रोताके मनमें उठे,उनकी मुख मुद्रासे जाण उनका आपही समाधान करदेवे १० धैर्यवंत होए-कोइ भी वात धीरसे श्रोताके समझमें आवे वैसी कहे, तथा प्रश्नका उत्तर मधुरतासे उसे ठसे ऐसा थोडेमें देवे ११ हट ग्राही नहीं होवे—

* दृष्टांत—कोई लालची पंडित म्लेच्छ राजाकी सभामें अजाणसे बोल उठा कि—

तिल सरसब मात्रं तू, ये नरा मांस भक्षन्ति।
ते नरा नर्क गच्छन्ति, यावचंद्रदिवाकरा ॥ १ ॥

अर्थात् जो तिल सरसर बरोबर मांस खायगा वो नर्कमें पडकर चद्रमा सूर्य रहेंगे वहांतक पचेगा महा दुःख सहेगा! राजा बोले, हम तो पेट भर खाते हैं! तब पंडितजी बोले आप की वैकुंठमे पधारोगे! इसमें तो तिल बरोबर खानेवाले को नर्क कही है पेटभर खायगा वो आत्मदेव को संतोष उपजावेगा उसे स्वर्ग मिलेगा इस तरफ नर्ककुंड और उस तरफ स्वर्ग कुंड है पेटभर खानेवाला जोरसे फलग मारेगा सा स्वर्गमे जा पडेगा! देखिये लोभि योंका उपदेश !

अर्थात् किसी भी प्रश्नका उत्तर आपको न आवे तो उसकी झुटी स्थापना नहीं, करे, नम्रतासे कहे कि, मेरेको उत्तर नहीं आता है,में किसी ज्ञानीसे पुछकर निश्चय करुंगा १२ निंद्य कर्मसे बचा हुवा होए-अर्थात् चोरी, जारी, विश्वासघात, इत्यादि कर्म जिसने नहीं किये होवें क्या कि सद्गूणी किसीसे दवता नहीं है १३ कुल हीण न होय क्यों कि हीण कुलीकी श्रोता मर्यादा नहीं रख सक्के हैं १४ अंग हीण न होए–क्यों कि अग हीण शोभता नहीं हैं १५ कुस्वरी न होए-क्यों कि खोटेश्वर वालेका वचन श्रोताको सुहाता नहीं हैं. १६ बुद्धीवंत होए—१७ मिष्ट वचनी होए १८ कांतीवत होए, १९ समर्थ होए, उपदेश करता थके नहीं बहुत ग्रंथ अवलोकन किये (देखे) हुवे होय २१ अध्यात्म अर्थका जाण होए, २२ शब्दका रहस्यका जाण होए, २३ अर्थ सकोचन विस्तार कर जाणे २४ अनेक यूक्तिया तर्कोका जाण होए, २५ सर्व शूभ गूण युक्त होए यह २५ गुण युक्त होंगे सो ही असरकारक सद्उपदेश कर सकेंगें * ऐसे गुण यूक्त सद्वक्ता साधुका जोग मिलना मुशशिल है

साधू संगसे १० गुणकी प्राप्ती होती है ऐसा भगवतीजी सूत्रमें कहा हैं —

* सुद्रष्ट तरंगणी नामक दिगाम्बर अमनाके प्रथमें वक्ता ८ गुणका धारण हार हुवा चाहिये ऐसा लिखा है सो:-

गाथा—समदम धर बहु णाणी, सहुहित लोकोय मानवेताए।
मिछ खिमय विरायो, शिसहित इच्छाया एव गुरु पुज्जो ॥ १ ॥

अर्थ-१ समभावी या समतावत २ दमित इंद्रिय, ३ गुरु गमसे शास्त्रार्थ धारण किये हुये ४ श्रोता ओंसे अधिक ज्ञानी, ५ सर्व जीवों के सुखेच्छु ६ लोकीक साधन की कला के वेत्ता (जाण) ७ क्षमावत, और ८ वीतरागी या वीतराग के मार्ग का अनुयायी

सवणे नाणे विन्नाने, पच्चखाने य सजमे ।
अहे नाए तवे चेव, वोदाण आकिरिया सिद्धि ॥१॥

अर्थ–साधूके दर्शनसे प्रथम तो ज्ञान सुननेका योग वणे २ जो सुनेगा उसको अवस्य ही ज्ञान प्राप्त होगा ३ और ज्ञानसे विज्ञान (*विशेष ज्ञान*) बढनेका स्वभाव ही है ४ *विज्ञानसे सुकृत दुकृतके* फलके जाण होय उससे दूकृतका त्याग करेंगे ५ और जो दुकृतके पचखाण किये सो ही सयम (आश्रवका रूंदन) हूवा, ६ और आश्रवका रूदन किया वोही तीर्थंकरकी आज्ञाका आराधन किया ७ आश्रवका रूधन और वितरागकी आज्ञाका आराधन है सोही तप है ८ और तप से कर्म कटते है ९ कर्म कटनेसे अक्रिया–स्थिरजोगी–सर्व पाप रहि होते है १० आर जो सर्व पाप रहित होत है, उसे मोक्ष प्राप्त होती है देखिये साधूके दर्शनसे कैसे २ मोटे लाभ होते है

८ सद्गुरु—सदवक्ताका जोग बना तो भी आत्माका कुछ कल्याण न होवे, क्योंकि आठमा साधन शास्त्र सुनना मूशकिल है इस जगत्में धर्म शास्त्र सूननेके ऊपर रूचीसवने वाले बहुत थोडे हैं कोई कहे कि साधुजी महाराज पधारे हैं व्याख्यान वाचते है, चलो सूननके लिये, तो आप उत्तर देवेकी, साधुजी तो निवेर हो गये हैं ! उनको क्या काम है ? अपने पीछे तो ससार लगा है क्या अपनेको 'बावाजी होणा है, सा व्याख्यान सुन ' और इतनेमें कोई कहे की आज नवीन नाटक आया है तुरत आप पूछेंगे, किसका नाटक होगा ? टिकीट क्या लगेगा, हमारेको भी साथ ले चलना ! ऐसा कहे टेमपर मावाप की आज्ञाका भगकर, पुत्र पुत्रिको रोते हुये छोड, भूख प्याम ठड ताप की बिलकूल दरकार नहीं रखना वहा जाय महा पापमे रमाये पैसे

खरचके टिकिट ले, नीच जाति योंके धक्क खाता भीतर जाय, बेठने की जगह न मिले तो उभा रहे, पिशाबकी हाजत होय तो रोक रखे, निंद आय तो आंख मसलके उडावें की कुछ बापोती डुब जायगी! पेशाब रोकनेसे और टेमपर निद्राका भग करनेसे अनेक बिमारी (रोग) भोगवे और भी देखिये उस नाटकेंम कृष्णजी रूक्मिणी इत्यादि उत्तम पूरुप और सतीयोंके सामने कूद्रष्टि कर देखे, कुचेष्टा करे, जो कोई आपकी मा बहेनका रूप बनाकर नाटक शालामे नाचे तो आपको कैसा खराब लगे? अरे आज्ञानीयों! जरा बिचारोकी, जिनको पर मेश्वर संत सती करके मानते हो, उनको नाचकर आप तमाशा देखते हो! कुछ लज्जा भी आती है? जिनकी बदोलतसे आप दुनियामें मजा करते हो, उनको ही ऊंचे आसनपर बेठ दान पून्य करते हो? कूछ विचार भी हैं? ऐसे अधर्म महा पातकी काममें तो दोडे २ जाते है, और धर्म श्रवण करणेमें शरम (लज्जा) लाते है! ऐसे पातकीके हाथ धर्म केसे लगे?

और भी कितनेक कहते है कि हमारसे धर्म नहीं बने, तो सुननेसे क्या फायदा? उनको उत्तर दिया जाता है कि, जो सुनेगावा अवश्य ही करेगा जैसे किसीने सुना की अमुक मकानमें भूत है तो उस मकानमें उसका बस पुगेगा वहां तक वो नहीं जायगा, कभी जानेका काम पडा तो भी, मनमें डरेगा की यहा भुत है, रखे मूजे कुछ उपसर्ग करे, ऐसा विचारकर, जो एक पहिरका काम होवे तो वो जल्दीसे एक घडीमें ही उस कामसे निवर्त्त हो, झट निकल जायगा और भीतर रहेगा वहातक डर बना रहेगा ऐसे ही जो सुनेगा कि अमुक काममें पाप है, और कदापि वो काम करने भी लगा तो उस पापके डरसे थोडेमें ही पूरा करेगा पापसे डरता रहेगा और अखिर

पापको कभी छेद भी देवेगा कितनेक कहते है कि हमारेको पुरी समझ नहीं पडती है, हम सुनके क्या करे! उनको उत्तर दिया जाता है कि कभी किसीको सर्प या विच्छु काटता है, उसको उतारने मत्र वा दि मंत्रका उच्चारण करता है, उसमे उस जेहरीको कुछ समझ तो नहीं पडती है, तो भी उसका जेहर उतरता है ऐसे ही सूत्र सुननेसे आपका पाप भी कमी होगा सुनते २ समज भी पडने लगेगी, सुनने में तो अवस्य फायदा ही है दश वैकालिकके चौथे अध्यायमें कहा है कि

सुच्चा जाणे ही कल्लाण, सुच्चा जाणेहि पावग ।
उभय पी जाणेही सुच्चा, जे सेयते समायरे ॥

सुनेगा तो जानेगा कि असुक काममें पाप होता है, असुकसे पुन्य होता है पुन्य पापसे सूख दु ख होता है यों दोनोंके फल जाण, जो श्रेयकारी मालम पडे उसे स्विकार करेगा, —आंगीकार करेगा इसलिये अवस्य सूननाही चाहिये

" श्रोता (सुनने वालेके)गुण

१ उसे धर्मकी खास चाहाय होय, जैसे अच्छी वस्तुका ग्राहक अच्छी वस्तुकी चाहाके लिये हरेक वस्तुकी कितनी परिक्षा करता है, एक दमडीकी मट्टीकी हंडी चाहिये ता भी उसे वजाकर ऊंचे नीचेस दखकर, बहुत तपासकर लेता है ऐसे ही ग्रहने(दागीने)को तपाकर कपडे का पोतदेखर इत्यादि सबकी प्ररिक्षा करके लेता है, तो भी उस विनाशिक वस्तुका तो बहूत हिफाजत (सभाल) करते भी विनाश हो जाता हैं तथा वो वस्तु सुखकी दु ख देनेवाली भी हो जाती है और अविन्याशी र्धम सदा सुख दनेवाला इसकी परिक्षा करने वाले बहुत थोडे द्रष्टी आते हैं एक शेहरमें कहा है—

एक एकेके पीछे चले, रस्ता न कोइ सूजता,
अन्धे फसे सब घोरमें, कहातक पुकारे सूजता!

तथा–

वडा ऊंट आगे हुवा, पीछे हुई कत्तार,

सब ही डूबे बापडे, बडे ऊंटके लार ।

ऐसीही दुनियामें रचना बन रही है कितनेक कहते हैं, हमारे बाप दादेका धर्म परम्परासे हमारे घरमें चला आता है, हम कैसे छोडें? पर उनसे इतनाही पूछते हैं कि आपके बाप दादे गरीब थे, और आप के पास धन हुवा, तो क्या फेंक देते हो? आपके बाप दादे अन्धे लंगडे काणे होवे तो, आप भी अंग भंगकर उनके जैसे हो जावोगे क्या? तब तो बुरा मानते है और ना कहते है तब क्या धर्म मार्गमें ही आपके बाप दादे आडे(अन्याय देने) आते है क्यों? परन्तु श्रोताको इस बातका बिलकुल पक्षपात नहीं चाहिये, जैसे सुवर्णका कष, छेद ओर ताप रूप परिक्षा कर ग्रहण करते हैं, तैसेही धर्म *जो कुदरती बुद्धीसे और शास्त्रोंके न्यायसे मिलता आवे उसको ही ग्रहण करनेकी उत्कंठा रखे

२ दुःखसे डरने वाला होए क्योंकि जो नर्कादिकके दुःखसे डरेगा वोही धर्म कथा श्रवण कर पापसे डरेगा निडरको उपदेश

* गाथा—पाण वाहाइ आण पावठाणाण जोउ पडिसेहो ॥
झाणऽज्झयणाइणं जाय विही एस धम्मकसा

अर्थ —प्राण वधादि पापस्थानका का निषेध तथा ध्यान अध्यायनादि सत्कर्मोका आज्ञा यह धर्मका कष है

गाथा—वज्झाणु ठ्ठाणेण, जेण ण वाहिज्जए तय णियमा ॥
संभवइ य परिसुद्ध, सो पुण धम्मम्मि छउत्ति ॥ २ ॥

अर्थ-जिस वाह्य क्रियासे धर्मके विषय में वाधा न पहुंचसके अर्थात् मलिनता न आसके किन्तु निर्मळता पडती रहे, उसको धर्म विषयमें छेद कहते हैं

गाथा-जीवाइ भाववाओ, बधाइ पसाहगो इह तावो ॥
ए एहिं परिसुद्धो धम्मो धम्मत्तणु मुवेइ ॥ ३ ॥

अर्थ-जिससे पूर्वकृत बन्ध छूट जाय और नवीन बन्ध न लागे ऐसा जीवादि पदार्थोंका जिसमें कथन हो यह धर्म विषयमें ताप समझना ऐसी तरह धर्मकी परिक्षा कर

लगता ही नहीं हैं ❋

३ सुखका अभिलाषी होए; स्वर्ग मोक्षके सुखकी इच्छा होगी, वोही धर्म श्रवण कर धर्म मार्गमें जोर लगायेगा

४ बुद्धीवंत होय, जो बुद्धीवत होगा सो ही धर्मकी रेसमें समजेगा, और छानकर सत्य धर्मको ग्रहण करेगा

५ मनन करनेवाला होए क्योंकि सुणकर वहाका वाही छोड जाय तो उससे क्या फायदा होवे इसलिये जो वात सुणे उसे हृदयमें रखके, मनन कर विचारनेवाला-सत्यासत्यका निर्णय करनेवाला होगा

६ धारनेवाला होए अर्थात् वहुत काल उसे हृदयमें धार रखे ऐसा होय

७ हेय ज्ञेय उपदेयका जाण होय, अर्थात् हेय (छोडने योग्य) छोडे, ज्ञेय (जाणने योग्य) जाणे, उपादेय (आदरने योग्य) यथा शक्ति आदर, ऐसा हाए

८ निश्चय व्यवहारका जाण होय सुणनेमें अनेक वात निकलती हैं, उसमेंसे निश्चयकी वात निश्चयमें, और व्यवहारकी वात व्यवहारमें समजे विषवाद न वेदे जैसें निश्चयमे तो अधूरे आयुष्य जीव न मरे, और व्यवहारमें सात कारणसे आयूष्य टूटे, इत्यादि जाणनेवाला होए

९ विनयवत होए, सुणते २ जो संशय पैदा होवे तो अती नम्रता युक्त उसका निर्णय करे

❋ दृष्टांत—एक अमीकद खानेवाले जैनीस एक साधुजीने कहा कि, बहुत पाप करोगे तो नर्कमें जाना पडेगा! जैनीने पूछा महाराज नर्क कितनी हैं? सा साधूजीने कहा के सात नर्क है जैनी—अजी महाराज 'मै तो पहलेसे कम्मर बांधकर बैठाथा आपनतो भाबीही नहीं बताई ' कीजिये, एसे निर्भ्रका कैसे उपदेश लगे

१० अवसरका जाण होए जिस वक्त जैसा उपदेश चलाने का मोका होए वैसा आप नम्रतासे प्रश्न पूछ उपदेश चलानेकी समक्षा करे

११ दृढ श्रद्धावंत होय शास्त्रके अनेक सूक्ष्म भाव सुणकर चित्तमें डामाडोल न करे वचन सत्य श्रधे जो समजमें न आवे तो अपनी बुद्धीका कमीपणा जाणे

१२ फलका निश्चयवत होए–अर्थात् व्याख्यान सूननेसे मेरे को अवश्य कुछ फायदा होगा, ऐसा जिसको निश्चय होए

१३ उत्कंठावत होए—अर्थात जैसे क्षुधातुरको भोजन, तृषातूरको जल, रोगीको ओषध, लोभीको लाभ, भूलेकों सायकी जितनी उत्कठा होए, उतनीही श्रोताके मनमें जिनवाणी श्रवण करनेकी इच्छा होए,

१४ रस प्राप्ती होए–जैसे ऊपर मूले प्रमुख कहे उनको इष्छित वस्तूका सजोग बने जैसे प्रेमसे वो वस्तु भोगवे, तैसे ही जिनेश्वरकी वाणी सुणती वक्त आप रस ग्रहण करे ❋

❋ छपय, श्रोताके गुण प्रथम श्रोता गुण एह नेहभर नेणा निरखे
हस्त वदन हुकार, सार पंडित गुण परखे;
भषण दे गुरु वयण; सुणता राखे सरखे
भाव भेद रस भीछ; रीज मन माहे हरखे,
वेदक विनय विचार, सार चतुराइ भागला,
कहे कृपा परषी सभा, तव दाखे पंडित कला १
कु श्रोताके लक्षण—केइ बेठा ऊघाय, केइ जाय अधविच ऊठी,
रास करे कइ ठोल केइ करे निंदा अपुठी,
केइ गमावे वाल, धर्म मत माने झूठी;
केइ न धारे रहस्य अधविच पावे रूठी
केइ गल हाथ देइ करी, गोडा विच घाले गला,
कहे कृपा परषी सभा, तो पंडित किम दाखे कला २
कृपारामजी साधुजी

१५ इस लोकके सुख या-मानकीर्तीकी वाछा रहित सुणे
१६ परलोकमें एकात मोक्षकी अभिलाषा रखे
१७ वक्ताको तन धनसे यथा योग्य साह्य देवे
१८ वक्ताका मन प्रसन्न रखे
१९ सुनी वातकी चोयणा कर निश्चय करे
२० सूने पीछे मितादिकके आगे प्रकाश उनको प्रेम उत्पन्न करावे
२१ सव शुभ गूणका ग्राहका होवे

इतने गुणका धरण हार जो होवे, सो यथा तथ्य ज्ञान ग्रहण कर अपनी आत्माको तारनेवाला धर्म ग्रहण कर सकें इसलिये ऐसी रितिसे शास्त्र सुनना भी मुशकिल है ❋

❋ सुद्रष्ठ तरगणी म कहा है कि श्रोता आठ गुण वाला चाहीये

गाथा–सुच्छा सुव्वण गहण, धारन सम्मण पुच्छि उत्तराये,
णिचय एव सुभेवो, सोता गुण एव सुगासिषदे ॥ १ ॥

अर्थ–१ धर्मकी व ज्ञानकी वाच्छा (श्रद्धा) वाला, २ एकाग्रतासे श्रवण करे, ३ ग्रहण करने योग्य उपदेश को यथ शक्त ग्रहण करे ४ ग्रहण करी बात को बहुत काल तक धार रखे ५ धारी वातका वारवार स्मरण करे ६ सशय उत्पन्न हुये पूछकर निर्णय करे ७ जहातक पूरा खुलासा न होवे वहातक उत्तर कराही करे या शक्ति हो तो अन्य मर्ता तरीयासे भी सवाद करे और ८ जिस वातका सवाद करे या श्रवण करे उसका निश्चय करे

नंदीजी सूत्रमें १४ प्रकार के श्रोता कहे हैं–१ चालणी जैसे' जैसे चालणी सार २ पदार्थ (अनाज) को छोड असार (कस-कंकर वगैरा) को धारण करती है, तैसेही कितनेक श्रोता सबोधका सार (गुण ग्राहकता) छोड अवगणही धारण करतेहैं २ " मजार जैसे " जैसे पिल्ली पहले दूधको जमीन पर ढोल देती है और फिर चाट २ कर पीती है तैसेही कितनेही श्रोता प्रथम वक्त का मन दुखाकर फिर उपदेश श्रवण करते हैं ३ " बुगले जैसे " जैसा बुगला उपरसे तो श्वेत अच्छा दिखता है, और अदर मे दगा रखता है तैसे कितनेक श्रोता उपरसे तो बुगला भक्ति करते हैं, परतु अंत करण में मलीन होते है जिनसे ज्ञान ग्रहण

९ एसी तरह शास्त्र सूनना मिल गया तो भी आत्माका कुछ

किया उनके साथही दगा करते है ३ " पाषाण जैसे " पाषण पर वृष्टि होनेसे उपरसे तो सरवतर भींज जाता है परन्तु अन्दर पाणी भिदता नहीं है तैसे कितनेक श्रोता सद्बोध सुणते तो थडाही वैराग्य भाव द रशाते है और अकृत करते यिलकुलही डर नहीं लाते है ९ "सर्प जैसे" सर्पको पिलाया दूध जेहर होजाता है तैसे कितनक श्रोता जिनके पा स ज्ञान ग्रहण किया उनकी, तथा उनके मजहब (धर्म) की निंदा-उ त्थापना करने लगजाते हैं ३ ' भैसा जैसे ' जैसे भैसा पाणीमें पड कर दग मूत पाणीको डोहलाकर फिर आप पीता है, तैसे कितनेक श्रोता शाममें अनेक धीकथा कदाग्रह क्लेश कर गडबड मचादेते है, फिर सुणते हैं ७ ' फुटे घट जैसे ' ज्यो फुटे घडेमें पाणी ठेहरता नहीं है त्यों कितने क श्रोता उपदेश सण थडाही भूलजाते है, बिलकुल याद रखते नहीं है ८ ' हंस जैसे ' जैसे हंश दंश कर रक्त ग्रहण करता है तैस कितनेक श्रोता ज्ञानीको कोयवा कर ज्ञान ग्रहण करते है ९ ' जलोक जैसे ' जलोक मिरोगी रक्त को छोड़ बिगडे हुये रक्तको ग्रहण करती है, त्या कितनेक श्रोता सद्बोध के व सद्बोधक के सद्गुणीका त्यागन कर दुर्गुणाको ग्रहण करे [यह ९ प्र कार के अधम्म पापाचारी (स्व ाय) श्रोता कहे जाते है] १० पृथवी जैसे ज्या पृथवीको ज्यादा खोदे त्यों त्यों ज्यादा कोमलता आवे और बीजकी ज्यादा उत्पत्ति होवे, त्यों कितनेक श्रोता बहुत परिश्रम देकर ज्ञान गृहण करे परन्तु फिर गुणवत हो ज्ञानादि गुणाका प्रसरभी अच्छा करें ११ अतर जैसे ज्यों ज्यों मशले त्यों त्यों ज्यादा १ सुगंध देय तैसे कितनेक श्रोता ब हुत प्रेरणासे बहुत होशियार होवे और जहां जावे वहां धर्म रुप सगध फे लावे [यह दो मध्यम श्रोता] '१ बकरी जैसे जैसे बकरी नितगता? अ धर २ पाणी पीलेवे परन्तु पाणीको डोले नहीं तैसे कितनेक श्रोता वक्ता को बिलकुल ही तकालिफ न देत और उनके अल्पज्ञता रुप दुर्गुणके सन्मुख नहीं देखत गुणही गुणका गृहण कर तृप्त होवे '१ गौ जैसे जैसे गाय नि सार माल खा करभी उत्तम दूध जैसा पदार्थ देवे, तैसे कितनेक श्रोता था डा सा भी ज्ञान गृहण कर ज्ञान दाताका अहार वस्त्र पात्र शास्त्र औष ध इत्यादी इच्छित दान दे सत्कार सन्मान गुण ग्राम कर बहुत साता उ पजावे १४ हंस जैसे यथा अभ्यंतर पवित्र, मुक्ता फाल (मोती) जैसा शा स्त्र के वचनाके ग्रहाक अात मथको सुख दाता होवे [यह ३ उत्तम श्रोता] यह सुन प्रमाण १४ प्रकारके श्रोता को जाण अधमता त्याग कर मध्यमता उत्तमता यथा शक्त गुण गृहण करेगा सोही ज्ञानादि गुणाका धारक होगा

कल्याण न हुवा, क्यों कि नवमा सावन ' शास्त्र सूनकर सत्य श्रधना ' मुशकिल है, सुणा तो केइ वक्त होगा, परन्तू प्रभूने फरमाया है कि ' सद्धा परम दुल्लहा ' सुणेके उपर श्रद्धा वेठनी वहुत ही मुशकिल है कितनी कूलकी रुडी करके कि हमारे वापदाद सुनते आये है, तो हमोरको भी सूनणा चाहिहे, कितनेक जैन कूलम जन्म लिया हैं तो व्याख्यान तो जरुर ही सुणना चाहिये, कितनेक मैं मोटा नामाकित गृहस्थ हु आगे वेठता हु—मुजेसव धर्मी कहते हैं, तो मुजे जरुर सुणना चाहिये, कितनेक अपने ग्राममें साधूजी आये है–जो अपन ५—१० मनुष्य नहीं जायेंगे तो अपने ग्रामकी अच्छी नहीं लगेगी इसलिये, कितनेक लोभके लिये ' करुंगा समाइ तो होवेगा कमाइ ' तथा महाराजका मन खूश होवेगा तो कभी अपनको कूछ चुटकला वता देवेगे, कितनेक मानके मरोडे–जो हम व्याख्यान में जायगे तो लोक हमारेको धर्मी कहेंगे, कितनेक देखा देखी–अपने अमुक जाते है, तो अपनको भी जाना चाहिये' कितनेक वडे आदमीकी शर्मेमें आकर, ऐसे अनेक हेतूमे श्रद्धा विना जो वाणी श्रवण करते हैं उनको धर्म ज्ञान प्राप्त होना वहुत कठिग है

दीवी पण लागी नहीं, रीते चूले फूक,
गूरु विचारा क्या करे, चला माहे चुक,

और भी

पत्र नैव यदा करीर विटपे, दोपो वसतस्य कि ।
नो लुको न विलोक्यते यदि दिवा, सुर्येस्य कि दुषण ॥
वर्षा नैव पतति चातक मुखे, मेघस्य कि दूषण ।
यद्भाग्य विधिना ललाट लिखित कर्णस्य किं दुषण ॥ भृतरीशतक

वसत ऋतु प्राप्त हुये जो वृक्षको फुल्ल नहीं फुटे तो वसत ऋतूका

क्या दोष? जाज्वल्यमान सूर्यका प्रकाश होनेसे जो उल्लु उसे न देखे तो, सुर्यका क्या दोष? अतिवृष्टि होकर भी चातकके मुखमें बिंदू न पडे तो वर्षाका क्या दोष! ऐसे ही जो भारीकर्मी जीव है, उनको उप देश न लगे तो गुरुजीका क्या दोष? जो भारी कर्मी जीव है उन को कितना ही उपदेश दिया जावे तो भी कभी भी नहीं सुधरेनेक जैसे कोरडू मूंगको हजारो मण अमी और पाणीमें सिजाने (पका ने) से वो सिजता नहीं हैं ऐसे ही जो अभव्य होते है उनको ज्ञा न लगता ही नहीं हैं

" चार कोशका माडला, वे वाणीके धोरे "

" भारी कर्मे जीवडे, वहां भी रह गये कोरे "

प्रत्यक्ष देखिये गायके स्थनको जो वग लगी होती है एक ही चमडेके अतरमें दूधको छोडकर रक्तको ही ग्रहण करती है, तैसे ही भारी कर्मी जीव सदुगुरुका सब्दो व श्रवण कर उसमेंका सारका त्याग कर, असारको ग्रहण कर आगे निंदा करते हैं, कि क्या सुने! वो तो अपना ही अपना सुनाते है, ऐसे अबी चलनेवाले कोण है! ऐसे निंदकको जानना चाहिये कि —

पादे पादे निधानानि योजन रस कुपिका,

भाग्यहीन नैव पश्यन्ति, बहु रत्ना वसुधरा

अबी भी उती रिद्धी के त्यागी, महावैरागी, पडित, तपश्री क्रिया पात्र, ऐसे २ अनेक २ गुणके धरणहाण, साधु साध्वी, तथा दयावत, दानवत, द्रढ धर्मी, अल्पारभी अल्प परिग्रही संसारमें रहकर ही आत्माका सूधारा करनेवाले बहोत श्रावक श्राविका विराजमान हैं और पचमें आरेके अत तक चार ही तीर्थ कायम बने रहेंगे परंतु उत्तम वस्तु थोडीही मिलती है सो श्रद्धा हीन जनोंको द्रष्टीमें

कहांसे आवे? इस लिये ही कहा जाता है कि श्रद्धा–प्रतीत–आ स्था प्राप्त होनी बहुत मुशकिल है

१० फक्त श्रद्धासे ही कार्य सिद्ध नहीं होता है, क्योंकि जैसी श्रद्धा है, वैसी ही दगमा साधन –शुद्ध फरसना होनी बहुत ही मु शकिल है, अर्थात् जान तो लिया के जिनेश्वरका उपदेश सत्य है, कि -

अधुव असासयमी, ससारमी दु ख पउराय।
किं नाम हुजत कम्मय,जेणह दुग्गइ नगच्छेजा ॥

अर्थात्–इस जगतमें रही हुइ वस्तु तमाम अधुव है, अर्थात् नि श्चल नहीं है, असास्वती है, जैसी अब्बी दिखती है वैसी श्यामको नहीं रहती है और विणशते २ उसका नाश भी हो जाता है, तथा यह असार संसार आधी (चिंता) व्याधी (रोग) उपाधी (काम) रुप दु ख करके प्रतिपूर्ण भरा हुवाहै इसमें राजा रक कोइ भी सुखी नहीं

नही सुही देवता देव लोए,नही सुही पुढवी पइ राया।
नही सुही सेठ सन्यावइय एकत सुही साहु वीयरागी ॥

एक निरागी साधू छोड देवता, राजा, और सेठ, कोइ भी सु खी नहीं है और मुजे भी सुख इत्ने दिनमें प्राप्त नहीं हुवा तो आगे कहांसे होनेवाला? इसलिये ऐसाकोनसाकर्म है कि जिससे दुर्गती और दु ख प्राप्त न होवे? और उन कर्मोको भी जाण गया है कि, शुभ क र्मके शुभफल हैं, और अशुभके अशुभ फल है, ऐसा जाणकर भी जो अशुभका त्यागन, और शुभको ग्रहण नहीं करे तो उसका आ त्मकार्य कैसे सिद्धी होवे? इसलिये यथातथ्य फरसना होना बहुत ही मुशकिल है

देखिये भव्यगणों! इन दश साधनों उपरसे ही आप आपके अत करणमें दीर्घ द्रष्टीसे विचार करिये की धर्म प्राप्ती होना कितना

मुशकील है?

सो है भव्यों! अपने महान पुन्योदयसे, अबके यह दशही सामग्री प्राप्त हुइ अपनको द्रष्टी आती है इसका लाभ जरूर ही लेना चाहिये, ये ही मेरी अति नम्र विनती है

मनहर

मानव जनम लेय, आरज क्षेत्र छेय,
उत्तम कुले जन्मेय, आर्यू पूरो पामीया ॥
इन्द्री पूरी निरोगी,–काया लक्ष्मीके भोगी
साधुकी सगत जोगी, मिली इण ठामीया॥
सुणीने सूतर, धारी सरधो थे भली पर।
यथा शक्ति करणी कर न कीजे नीकामीया ॥
' अमोल ' दश जोगवाइ, मिळी पुन्य उदय भाइ,
लावो लेवोजी उमाइ, शिव सुख हामीया ॥ १ ॥

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजीके समदायके बाल ब्रह्म चारी मुनीश्री अमोलख ऋषिजी विरचित् श्री "जैन तत्वप्रकाश" ग्रंथका द्वितीय खंडका धर्मप्राप्तिनामक प्रथम प्रकरण

समाप्तम्

प्रकरण २ रा.

सूत्र धर्म

पढम नाणं तओ दया, एव चिट्ठइ सव्व सज्जय।
अन्नाणी किं काही, किंवा नाही सेय पावग ॥

दश वैकालिक अ ४ गाथा १०

'प्रथम ज्ञान और फिर दया ' अर्थात् ज्ञानसे जीवाजीवको जानेगा, तब उनकी रक्षा करेगा इसलिये सर्व धर्मात्माओंको पहिले ज्ञानका अभ्यास अवश्य ही करना चाहिये जिनको ज्ञानका अभ्यास नहीं हैं, वो अपनी (पोतकी) आत्माका कल्याण—सुख किस कामसे होता है, और दु ख कोनसे कामोंसे होता है, उसे नहीं जान सकेंगे और जो सुख दु खके कर्मोंको नहीं जानेंगे वो क्या कर सकेंगे? अर्थात् कुछ नही

नाणस्स सव्वस्स पगासणाए, अन्नाण मोहस्स विवज्जणाए।
रागस्स दोसस्स यसखण्ण एगत सोरव्व समुवेइ मोक्ख ॥

उत्तराध्ययन, अ ३२ गा १

ज्ञान रुप हृदयमें दिव्य प्रकाश होनेसे, अज्ञान और मोहका नाश होता है, तथा अज्ञान और मोहका नाश होनेसे हृदयमें ज्ञानमय महा दिव्य प्रकाश होता हैं, जिससे सर्व जगतके चराचर पदार्थोंका और राग द्वेष करके कर्म बंधके फलका ज्ञान होता है जो ज्ञान करके कर्मबंध (दु ख)का कारण राग द्वेषको जान त्यागेगा, वो एकांत

शाश्वत अखंड अविनाशी मोक्षके सुखका सदैव भुक्ता होगा

इसलिये सुखार्थी प्राणियोंको प्रथम सद ज्ञानका अभ्यास करनेकी बहुत ही जरुर है सो ज्ञान तो अपार है, सर्वज्ञ तो फक्त केवल्यज्ञानी ही होते हैं, तो भी अपनी २ शक्ती प्रमाणे सबको ज्ञानाभ्यास थोडा बहुत जरूर करना चाहिये, जिससे अनुक्रमे सर्वज्ञ पदकी प्राप्ती होवे

अब यहा सिंधूमेंसे बिंदु, जैसे, जिन २वावतोंक ज्ञानकी सुखार्थियोंको अवश्यकता है, उसका भेद संक्षेपमें यथामती दर्शाता हूं

नवतत्व, सात नय, चार निक्षेप, चार प्रमाण, इत्यादि वस्तुओंका ज्ञान होनेसे यह प्राणी आत्माके सुख ढूंड सकेगा

'नवतत्व'

जीवा जीवाय बंधोय, पुन्न पावासवे तहा ।
संवरो निजरा मोक्खो, सते एहिया नव ॥

श्री उत्तराध्यन—अ १८ गाथा १४

१ जीवतत्व २ अजीव तत्व ३ * बंधतत्व ४ पुन्यतत्व ५ पापतत्व ६ आश्रवतत्व ७ संवरतत्व ८ निर्जरातत्व ९ मोक्षतत्व

'जीवतत्व'

१'जीवतत्व'—जीवके लक्षण—सदा जीवे (मारा मरे नहिं) सो जीव सदा उपयोगवंत (५ ज्ञान ३ अज्ञान, ४ दर्शन, इनमेंसे जघन्य [थोडे ही थोडे] तो दो उपयोग तो जीवके साथ अवश्य ही पावे,) उपयोग विन कोई जीव नहीं है चेतना युक्त, असंख्यात

---

* इस गाथामें तो बंधतत्व तीसरा लिया है और तीसरा ही चाहिये परन्तु अभी कोईसे आठमा बोलते हैं सो ठिकाणे १ आठमा ही लिया जायगा

प्रदेशका धरण हार, सुख दु खका वेदक, या जान, अनंत, शक्ती वत, सदासे है (किसीने वनाया भी नहीं और कोइ विनाश भी नहीं कर सके) अनत शक्तीवंत (कितनेककी प्रगट हैं और कितनककी जैसे सूर्यके तेजको वादल ढकते हैं तैसे कर्मो करके ढकी हुइ हैं परन्तु सत्ता रुप तो सर्व अनत शक्ती वंत ही हैं) सदा शाश्वता

श्री ठाणायांगजीके दूसरे ठाणेमें जीव दो प्रकारके फरमाये हैं 'रुवी जीवा चेव अरुवी जीवा चेव ' १ अरुपी जीव (कर्म रहित) तो सिद्ध भगवंत हैं, कि जो निज रुपमें सदा एक से संस्थित हैं और अरुपीके कारणसे ही उनको रुपी कर्म स्पर्श नहीं कर सक्ते है

२ दूसरा रुपी जीव सो ससारियोंका है जैसे मट्टी और सोना अनादिसे भेला है तैसे जीव और कर्म अनादिसे ही साथ है वे कर्म ही लोह चमक वत् जगत्के कर्मोको संचकर जीवको गुरु (भारी) वनाकर अनेक रुप धारण कराकर ससार चक्रमें पर्यटना करा रहे हैं

इन कर्मोके सयोगसे जीवके अनेक रुप होते हैं, और जितने रुप होते हैं उतनेही इसके भेद किये जाते है, जघन्यमें जीवके १४ भेद किये हैं सो —

सुक्ष्म ऐकेंद्री—यह सर्व लोकमें ठसोठस भरें हैं किसीके मारने से मरे नहीं, कटे नहीं, भिदे नहीं चर्म चक्षुसे दृष्टी आवे नहीं, अंगुलके असंख्यमें भागकी अवघेणा (शरीर) है और अतर(मुहुर्त २ समयसे कमी दो घडी)का आयुष्य है

२ वादर ऐकेंद्री (पृथ्व्यादि ५ स्थावर) ३ बेंद्री, ४ तेंद्री, ५ चोंरिन्द्री, ६ असन्नी पचेंद्री (जो समुच्छिम उपजे, जिनके मन नहीं होवे सो) ७ सन्नी पचेंद्री (माता पिताके सयोगसे, देवताकी शय्या में, नर्ककी कूंभीमें उपजे, सो) इन सातके अपर्याप्ता (आहार, शरीर

इंद्री, श्वासोश्वास, मन, और भाषा इन ६ प्रजामेंसे जिसमें जितनी प्रजा है उतनी पुरी नहीं बाधे सो) और इन सातहीके पर्याप्ता (पूरी प्रजा बांधे सो)ऐसे ७×२=१४ जीवके भेद हुये

और भी जीवके ५६३ भेद है

नारकीके १४ भेद—गम्मा, वशा, सीला, अजना, रिष्ठ, मघा, मग्गवइ, यह सात नारकीका अपर्याप्ता और पर्याप्ता यों ७×२=१४ नर्कके भेद हुवे तिर्यंचके ४८ अडतालीस भेद —

१ इंद्री स्थावर (पृथवी काय) के दो भेद १ सूक्ष्म (सर्व लोकमें ठसोठस भरे हैं सो) इसके दो भेद अपर्याप्ता—पर्याप्ता अब बादर पृथवी काय सो लोकके देशमें (विभागमें) हैं, इसके दो भेद– १ सुवाली २ खरखरी, सुवालीके ७ भेद –१काली, २ हरी, ३ लाल, ४ पीली, ५ श्वेत, ६ पाडु, और ७ गोपीचंदन, खरखरीके २२ भेद– १ खदानकी, २ मुरड ककर, ३ रेत (वालु,) ४ पाषाण–पत्थर, ५ शिल्ला, ६ लूण, ७ समुद्रका लूण, ८ लोहा, ९ ताबा, १० तरूवा, ११ सीसा, १२ रुपा (चांदी,) १३ सोना, १४ वज्रहीरा, १५ हरताल, १६ हिंगलू, १७ मनसिल, १८ रत्न १९ सुरमा, २० प्रवाल, २१ अबरख (भोडल,) और २२ पारा

अठहरे जातके रत्न १ गोमीरत्न, २ रुचकरत्न, ३ अकरत्न, ४ स्फटिकरत्न, ५ लोहिताक्षरत्न, ६ मरकतरत्न, ७ मसालगलरत्न, ८ भुजमोचकरत्न, ९ इद्रनीलरत्न, १० चंद्रनीलरत्न, ११ गेरुकरत्न, १२ हंसगर्भरत्न, १३ पोलाकरत्न, १४ चंद्रप्रभरत्न, १५ वेरुलीरत्न, १६ जलकांतरत्न, १७ सुरकांतरत्न, और १८ सुगंधीरत्न, इत्यादि अनेक पृथ्वीके भेद जानना इस बादर पृथ्वीके दो भेद –पर्याप्ता और अपर्याप्ता यों पृथ्वीके सर्व ४ भेद हुवे

२वंभी स्थावर (अपकाय) के दो भेद १ सुक्ष्म सर्व लोकमें भ रे है सो इसके दो भेद—अपर्याप्ता पर्याप्ता २ वादर अपकाय के १५ भेद - १ वर्षादका पाणी, २ ठार (रातको सदावर्षे जो) का पाणी, ३ मेघरवेका पाणी, ४ धुंवरका पाणी, ५ गडेका पाणी, ६ ओसका पाणी, ७ ठडा पाणी, ८ ऊना पाणी, (बहूत ठिकाणे पृथ्वीमेंसे गधरफादिककी स्नानके योग्यसे स्वभाविक गरमपाणी निकलता है उसे भी सचेत (सजीव जानना) ९ खारा पाणी, (लवण समुद्रका तथा और भी बहुत, ठिकाणे कुवेमेंसे निकलता हैं,) १० खट्टापाणी, ११ दूध जैसा पाणी, (क्षीर समुद्रका)१२ मदिरा (दारु) जैसा पाणी, (वारुणी समुद्रका) १३ घी जैसा पाणी, (घृत समुद्रका,) १४ मीठा पाणी (कालोदधी समुद्रका) १५ इक्षु (सांटे) के रस जैसा पाणी [असंख्यात समुद्रका] इत्यादि अनेक तरहका पाणी, है इसके दो भेद-पर्याप्ता—अपर्याप्ता, सर्व ४ भेद

३ ' संप्पी स्थावर ' (तेउ काय) के दो भेद—१ सुक्ष्म सर्व लोकमें भरे हैं, इसके दो भेद, पर्याप्ता, अपर्याप्ता, २ वादर तेउ कायके १४ भेद —१ मोभरकी अग्नी, २ कुम्भारके निवाडेकी अग्नी, ३ टूटती झाल, ४ अखंड झाल. ५ चकमककी, ७ विद्युत (विजली) की, ८ ताराटूटे उसकी, ९ अरणीकी लकडीमेंसे निकले सो १० वासमेंसे निकले सो, ११ काष्टकी, १२ सूर्यकांत काच [आइ ग्लास)की, १३ दावानलकी और १४ उल्कापातकी [आकाशमेंसे विनाश कालमें वर्षे सो अग्नी] इत्यादि वादर अग्नीके दो भेद पर्याप्ता अपर्याप्ता, यह तेउ कायके सर्व ४ भेद हुवे

४ " सुमती स्थावर " (वाउ काय) के दो भेद —१ सूक्ष्म सो सपुर्ण लोकमें भरे है इसके दो भेद—अपर्याप्ता—पर्याप्ता, २ वादर वायु

के १६ भेद –१–८ पूर्व, पाश्चिम, उत्तर, दक्षिण, उची, नीची, तिरछी, तथा वीदिश (इशाणादि कुण) की हवा, ९ भमल वाय. (चक्र पडे सो) १० मडलवाय, (चार खुणे फिरे सो) ११ गुंडलवाय, (ऊंची चढे सो) १२ गूंजवाय, (वांजित्र जैसा अवाज होवे सा) १३ झंजावाय, (झाड उखाड डाले सो १४ शुद्धवाय, (मधुर २ चले सो) १५ घन वाय, १६ तनवाय, (ये दोनेरं नर्क स्वर्गके नीचे हैं) इत्यादिक अनेक प्रकारकी हवा होती हैं इसके दो भेद पर्याप्ता–अपर्याप्ता सर्व वाउके ४ भद हुवे

५ " पयावच स्थावर " (वनस्पति काय) के दो भेद १ सूक्ष्म सो सर्व लोकमें भरे हैं जिसके दो भेद पर्याप्ता–अपर्याप्ता २ वादरके दो भेद—१ प्रत्येक, २ साधारण, १ प्रत्येक उसे कहते हैं, कि जिसके एकेक शरीरमें एक जीव इसके १२ भेद –१रुखा, २ गुच्छा, ३ गम्मा ४ लया, ५ वल्ली, ६ तणा, ७ वलया, ८ पव्वया, ९ उद्दणा, १० जलरुहा, ११ ओसही, और १२ हरीकाय

१ रुखाके दो भेद—१ ' एकठीएया 'एकेक बिजवाले, जैसे– हरडे, वहेडा, अमला, अरीठा, भिलामा, आसापालव, आंब, जाबु, बोर, मउडा, रायण (खिरणी) इत्यादि बहुत, भेद हैं और २ ' बहुठिया ' (बहुत बीजवाले) जैसे–जामफल, सीताफल, दाडम (अनार) बीलफल, कबीठ, केर, लिम्बु, इत्यादि बहुत भेद है

२ ' गुच्छा ' उसे कहते है कि छोटे २ झाड, जैसे–रींगणी, जवासा, तुलसी, पुंवाडया इत्यादि वहोत भेद हैं

३ ' गम्मा, फुल्के झाडोंको कहते है, जैसे–जाइ, जूइ, केतकी, केवडा, इत्यादि

४ ' लया ' (लता) उसे कहते हैं जो धरतीपर प्रसरकर ऊंची

रहे, जैसे नागलता, आशोकता, पद्मलता, इत्यादि बहुत भेद हैं

५ 'वल्ली' वेलडियो चले सो, जैसे तोरू, काकडी, करेले, किंकोडा, तूबडा, खरबूजा, तरबूजा, वालोर, इत्यादि बहुत भेद हैं

६ 'तणा' (त्रणा) जैसे-घांस, द्रोह, डाम, इत्यादि बहुत भेद हैं-

७ 'वलया' उसे कहते हैं जो झाड ऊंचे (उपर) जाकर गोलाकार होए, जैसे सुपारी, खारक, खजूर, दालचीनी, तमाल, नालेर, इलायची, लौंग, ताड, केले, उत्यादि बहुत भेद हैं

८ 'पव्वया'-उसे कहते हैं जिसमें गांठ होवे, जैसे साठा, ऐरड़, वेत, वास, इत्यादि

९ 'कुहाणा' उसे कहते है जो धरती फोडके जोससे निकले, जैसे, बीलीके वेले, कुत्तेके टोप, इत्यादि

१० 'जल रुहा' उसे कहते हैं कि जो पाणीमें पैदा होए, जैसे कमल, सिंघोडा, कमल काकडी, शेवाल, इत्यादि

११ 'ओसही' चोवीस प्रकारके अनाजको कहते हैं इसमेंसे लाह (दाल न होवे ऐसे) के १२ भेद—१ गहूं, २ जव, ३ जुवार, ४ बाजरी, ५ शाल, ६ वरी, ७ वरटी, ८ राल, ९ कांगणी, १० कोदरा, ११ मणची, १२ मकी, १३ कुरी, १४ अलसी कठोल (दाल होवे ऐस) अनाजके १० भेद—१ तूवर, २ मोठ, ३ उडद, ४ मूंग, ५ चवला, ६वटला ७ तिवडा,८कुलत्य,९मसूर,१०चिणा, यह सर्व २४ प्रकारके अनाज हुवे

१२ 'हरीकाय' भाजी पानको कहते हैं, जैसे मूलीकी भाजी, मेथीकी, वथवाकी, चवलाइकी, सुवाकी इत्यादि अनेक प्रकारकी भाजी हैं

यह प्रत्येक वनस्पति उगती वक्त अनंते जीव, हरी रहे वहांतक असंख्याते जीव, पाके पीछे बीज जितने या एक दो सख्यते

जीव होते हैं इस्के दो भेद, अपर्याप्ता–पर्याप्ता

(२) " साधारण वनस्पति " जमीकद [कंद मूल] को कहते हें इसके वहुत भेद हें: जैसे–मुला, अद्रक, पिंडाल्ु, लशण, कादा, सुरण कद, वज्रकंद, गाजर, आलु, मूसली, खुरसाणी, अमरवेल, थुअर, हलवी, सिंह करणी, सकरकंद इत्यादि वहुत प्रकार हे यह एक सुइकी अग्र उपर आवे इतनेमें असंख्याती श्रेणी (घरकी सतर), एकेक श्रेणीमें असख्याती प्रतर [घरकी मजलो], एकेक प्रतरमें असख्याते गोले (जैसे अफीमकी वट्टियों जमाइ), एकेक गोलेमें, असख्याते शरीर, (जैसे प्रमाणुओं), एकेक शरीरमें अनत जीव इतने जीवों का पिंड हैं इसका आहार करना सो महा पापका कारण जैन और वैष्णवोंके शास्त्रमें बताया हैं क्योंकि जैसे स्त्रीका कच्चा गर्भ निकालते हैं तैसे ही जमीनेमें रहा कंद कमी पकता नहीं हैं, कच्चा ही निकलता हैं यह अभक्ष्य कहा हे इसके जीव एक श्वासोश्वासमें १७॥ जन्म मरण करते हैं और एक मुहुर्तमें ६५५३६ जन्म मरण करते हैं इसके दो भेद–पर्याप्ता अपर्याप्ता इन चार स्थावरमें असंख्याते, और वनस्पतिमें सख्याते असख्याते तथा अनंते जीव होते हैं * यह स्थावर तिर्यंचके २२ भेद हुये

* किसीका कहना होता है कि-एक सुइकी अग्र भाग जितनी थोडी जगहमें अनत जीवका समाव किसतरह होता है? उत्तर–जैसे कोइ औषधीका अर्क निकालकर तेल बनाया या बाटके चूर्ण बनाया वा सुइके अग्रह उपर आय जितनेमे क्रोड औषध होती है तैसे ही अनंत जीव जानना अब भी एक अगुठी (चांदी) देखी है उसमें एक बाजरे जितने कांचम आठ फोटाग्राफ बड १ मनुष्यके दखे है जो कृत्रिम पदार्थोंम इतनी सत्ता है, तो फिर कुदरती पदार्थोंका क्या कहना ' इसलिये जिन वचनम संदेह नहीं लाना

६ " जगम काय " (त्रस जीव) यह जीव ८ तरहसे उपज ते है १ ' अडया ' अंडेसे, पक्षी प्रमुख २ ' पोयया ' कोथलीसे, हाथी प्रमुख ३ ' जराउया' जडसे गाय मनुष्य प्रमुख ४ ' रसया' रससे कीडे प्रमूख ५ 'ससेयया' पसीनेसे, ज्युं पटमल प्रमुख ६ 'समुछिमा' समुछिम, कीडी मक्खी प्रमुख ७ ' उम्भीया' पृथवी फोडकर निकले, तीड प्रमूख ८ ' उववातिया ' उपजे, देवता, नारकी त्रसके लक्षण — संकोचीयं सरीरको सकोचे, ' पसारीय' पसारे ' रोय' रुदन करे ' भत्तं ' भय भीत होवे 'तसीयं' त्रास पावे 'पलाइय' भग जावे इत्यादि त्रस के ४ भेद (१) ' बेंद्री ' काया और मुखवाले जीव, जैसे सख, सीप, कोडे, गिडोले, जलोक, लट, अलसिये, पोरे, क्रीम, इत्यादि इसके दो भेद पर्याप्ता अपर्याप्ता [२] ' तेंद्री'—काया मुख और नाकवाले जीव जैसे ज्यू, लीख, कीडी, पटमल, कुथुवे, धनेरे, इलि उवाइ, (दीमक) मकोडे, गधइयें, इत्यादि इसके दो भेद पर्याप्ता,अपर्याप्ता, (३) 'चौरींद्री' काया मुख नाक और आखवाले जीव, डास, मच्छर, मक्खी, तीड, पतग, भमरे, विच्छु, खेंकडे, फुदी, मकडी, बग्ग, कसारी, इत्यादि बहूत हैं इसके दो भेद —पर्याप्ता, अपर्याप्ता यह विगलेंद्री के ६ भेद हुये

[२] ' तिर्यच पचेंद्री ' काया, मुख, नाक, आख, और कानवाले जीव इनके दो भेद –(१) 'गर्भज' (गर्भसे पैदा होवे) २ 'समुच्छिम ' आपसे ही पैदा होवे इन पेकेकके पाच २ भेद—१ ' जलचर' पाणीमें रहनेवाले जीव जैसे, मच्छ, कच्छ, मगर, सुसमां, काचवे, मेंडक, इत्यादि (२) ' थलचर '—पृथवी पर चलनेवालेके ४ भेद –१ एक खुरा, एक खुरवाले घोडा गद्धा प्रमुख (२) दो खुरा, फटे खूरवाल, गाय भेंस बकरे प्रमुख ३ गडीपया—गोल पगवाले, हाथी ऊंट गेंडा प्रमुख ४ सणपया—पंज्जवाले सिंह चीत्ते कुत्ते बिली बंदर प्रमुख (३) ' खेचर '

आकाशॅम उडनेवाले पक्षीके ४ भेद –१ रोम पक्षी–रुम (केशकी पाख) वाले जीव, जैसे मयूर, चिडी, कबूतर, मेना, तोता, जलकूकडी, चील, बुगले, कोयल, तीतर सिकरा (बाज) होल चहूल इत्यादि बहुत हैं २ चाम पक्षी–चमडेकी पाखवाले जैसे चामाचिडी, वटवागल, प्रमुख बहुत हैं ३ सामत पक्षी सो डब्बे जैसी गोल पांखवाले और ४ वितत पक्षी– विचित्र तरहकी लम्बी पाखवाले यह दोनों जातिके पक्षी अढाइद्वीपके बाहिर होते हैं ४ उरपर–पेटके जोरसे चलनेवाले जीवके ८ भेद –१ अहि (सर्प) एक फण करते है, और दूसरे फण नहीं करते हैं यह पाच ही रगके होते हैं २ अजगर मनुष्य प्रमुखको गल जाय सो ३ अलसीया मोठी गैन्याके × नीचे पैदा होवे ४ मोहोर्ग–वडी अवघेणा (सरीर) वाले ✽ उत्कृष्ठ एक हजार योजन का सरीर होता हे ५ भुजपर–भुजोंके जोरसे चलनेवाले जीव जैसे उन्दर, नवल, घुम, काकीडा, विस्मरा गिलोरी, गोयग, गो, इत्यादिक बहूत प्रकार हैं यह पांच भेद सन्नीके, और पांच असन्नीके, यों १० इन १० के पर्याप्ते और अपर्याप्ते ऐसे २० यहस्थावरके २२, और त्रसके २६ मिलकर, तिर्यंच के ४८ भेद हुवे

" मनुष्यके ३०३ भेद "

मनुष्यके दो भेद गर्भेज और समुच्छिम इसमें गर्भेज मनुष्यके २०२ भेद होत हैं १५ कर्भ भूमी ३० अकर्म भूमी, और ५६ अतर द्वीपा यह१०१ कर्भ भूमी उसे कहते हैं की-जहा अस्सी हथीयार

× चक्रवर्ती तथा वासुदेवके पुन्य खुट जात हैं तब उनके घोडेकी लीदमें १२ योजन (४८ कोस) की कायावाला आलसिया उपजकर मरता है उसके तडफडनेसे पृथवीम खड्डा पडता है, उससे सब सेना कुटम्ब प्रान दब—दब मरता है

✽ अढाइद्विपके बाहिर होता है

बांधकर मस्सी—वेपार वणज करकर, और कस्सी—कृषी कर्म खेती-वाडी करकर, जो आजीविका (उदरपूर्णा) करते हैं इनके रहनेके १५ क्षेत्र —१ भर्त १ ऐरावत १ महाविदेह, यह ३ क्षेत्र जंबुद्वीपमें, दो भर्त, दो ऐरावत, दो महा विदेह यह ६ क्षेत्र धातकीखंड द्विपमें, दो भरत दो एरावत, दो महाविदेह यह ६ क्षेत्र पुष्करार्ध द्विपमें (१५ कर्म भूमी मनुष्यके क्षेत्र हुये) अकर्म भूमी उनको कहते हैं की जहां पूर्वोक्त तीनही प्रकारके कर्म नहीं हैं, दश प्रकारके कल्प वृक्ष* इच्छा पुरे, इनके रहणेके ३० क्षेत्र—१ देवकुरु, १ उत्तर कुरू, १ हरीवास, १ रमकावास, १ हेमवय, १ एराणवय, यह ६ क्षेत्र जंबूद्वीपमें और येही दो दो यों १२ धातकी खंडमें, तथा १२ पुष्करार्ध द्वीपमें [ऐसे ३० हुये] अंतरद्वीपे लवण समुद्रमें पाणी पर अधर रहते हैं, इनके ५६ क्षेत्र चूल हेमतवत और शिखरी पर्वत एकेकमेंसे दो दो दाढो निक लकर लवण समुद्रमें ८ दाढे गइ हैं इन एकेक दाढो पर सात २ द्वीप हैं यों ५६ अतरद्वीप हुये यह १०१ क्षेत्रके मनुष्यके पर्याप्त और अप-र्याप्त यों २०२ हूये इन एकसो एक क्षेत्रके मनुष्यकी चउदे वस्तुमें समूर्च्छिम ❀ जीव पेदा होते हैं यह अपर्याप्ता ही मरते हैं यह समू-

* देखिये पहिला खण्डका का ७० वा पृष्ठ

❀ १ ऊच्चारे सुधा ' विष्टा—फराकतम २ ' पासवणे सूधा ' पेशाबमें ३ ' खेले सुधा खंकारमें ४ सघेणा सुधा ' नाकके सेडमें ५ ' उन्त सूधा ' उलटीमे ६ पित्ते सुधा ' पित्तमें ७ सुए सुधा ' पीरु—रस्सीमें ८ सुए मुधा ' लोहीमें ९ ' सुके सुधा ' शुक्र धीर्यमें १ ' सुके पुग्गले परिसार सुधा ' सुक्रके पूद्गल सूखके पीछे आले हुये उसमें ११ विन जीव कलेवर सुधा ' मरे मनुष्यके शरीरमें १२ इत्थी पुरुप संयोग सूधा' स्त्री पुरुषके संयोगमें १३ ' नगर निधमने सुधा नगरकी नालीयामें १४ सव्वेसुचेव असुइ ठाणो सूधा ' सर्व अशुची स्थानमें यह १४ वस्तु शरीरसे दूर हुये पीछे अतर मुहूर्तमें उसम मनुष्य जैसे असंख्यात समोर्छिम मनुष्य पेदा होते है, और मरते हैं इनका स्पर्शकरनेमात्रसे असंख्य जीवों की मृत्यू निपजती हैं

च्छिमक १०१ भेद सब मिलोनेसे ३०३ भेद मनुष्यके हुवे

देवताके १९८ भेद

१० भवनपती, १५ परमाधामी, १६ वाणव्यंतर, १० तिर्यक्षमक, १० ज्योतिषी, ३ कल्मिषी, १२ देवलोक, ९ लोकांतिक, ९ ग्रिवेक, ५ अनुत्तरविमान, यह सर्व ९९, इनके अपर्याप्ते और पर्याप्ते यों १९८ देवताके भेद हुवे

१४ नर्क, ४८ तिर्यंच, ३०३ मनुष्य, और १९८ देवके, यह सर्व मिलकर ५६३ जीवके भेद हुवे और उत्कृष्ट जीवके अनंते भेद होते हैं यह तत्व 'ज्ञेय'—जाणने योग्य हैं इति जीव तत्व *

२ " अजीव तत्व "

अजीवके लक्षण –जीवकाप्रति पक्षी सो अजीव जड–चेतना रहित, अकर्ता, अभुक्ता, इसके दो भेद –१ रुपी, और २ अरुपी ज धनके अरुपीके १० भेद –धर्मास्तीके ३ भेद-१ 'खंध' सर्व लोकमें व्यापा सो २ 'देश' उसमेंका थोडा विभाग ३ 'प्रदेश' देशमेंसे ही थोडा विभाग, ऐसेही 'अधर्मास्तीके' भी तीन भेद आकास्तीका 'खंध'सर्व लोकालोक व्यापी २'देश' थोडा और३प्रदेश बहुत ही थोडा यह तीनके ९ भेद हुये और दशमा 'कालका' एकही भेद यह अरु. पी अजीवके १० भेद सक्षेपमे हुवे रुपी अजीवके ४ भेद – वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, का सर्व लोक व्यापी पिंड सो १ 'खंध' २ देश थोडा ३ 'प्रदेश' बहूत थोडा और ४ 'परमाणु' सो अति सुक्ष्म जिसके एकके दो विभाग नहीं होवे ऐसा

अजीवके ५६० भेद जिसमें अरुपी अजीवके ३० भेद –१० दश तो पहिले कहे और धर्मास्ती कायको पाच तरहसे पहचाने १

* इनका विशेष विस्तार दूसरे प्रकरणमे देखो

'द्रव्यसे धर्मास्तीका एक ही द्रव्य है, २ 'क्षेत्रसे' संपूर्ण लोकमें व्याप रहा है ३ 'कालसे' आदि और अत रहित है ४ 'भावसे' अरुपी वर्ण-गंध-रस-स्पर्श-रहित है ५ इसका 'गुण' सकर्मी जीवोंको चलण साह्य देणेका है २ ऐसे ही अधर्मास्तीको ५ तरहसे पहचाने, विशेष इतनाही कि-इसका गुण चलती वस्तुको स्थिर करनेका है ३ ऐसे ही आकास्ती काय ५ तरहसे पहचाने, १ 'द्रव्यसे' एक द्रव्य २ क्षेत्रसे लोक अलोकमें सपुर्ण व्याप रहा है यह पोलाड रुप है, लोकाकाश में तो अनेक पदार्थ है,और अलोकमें कुछ नहीं, एक सुन्याकार पोलाड है ३ 'कालसे' आदी अत रहित ४ 'भावसे' अरुपी वर्णादि रहित ५ 'गुण' इसका गुण आकाशमें विकाशका वस्तको अवकाश देनेका है ४ 'कालास्ती' ५ तरहसे पहचाने १ 'द्रव्यसे' काल अनत तो वीत (चला) गया, और अनंत वाकी रहा है, अर्थात् अनत है २ 'क्षेत्रसे' व्यवहार काळ अढाइद्वीपके अन्दर है अर्थात् अढाइ द्वीपके अन्दरके चद्र सूर्य चलते है,जिससे समय, घडी, पहर, रात, दिन, पक्ष, मास, वर्ष, जावत सागरोपम तककी गिनती होती है, और अढाइद्विपके वाहिरके चन्द्र सूर्य स्थिर है, उससे रात्री दिन कुछ नहीं हैं तथा नर्क स्वर्गमें रात्री दिन नहीं है इसलिये व्यवहारिक काल तो अढाइद्विपके अदर है और मृत्युकाल तो फक्त सिद्ध भगवंतके जीव छोडकर, सर्व जीवोंका आयुष्य पूर्ण हुये भक्ष कर रहा है 'कालसे' काल आदि और अंत रहित है, हमेशासे हैं, और हमेशा रहेगा 'भावसे' काल अरुपी वर्णादि रहित है ५ इसका 'गुण' पर्यायका परावर्तन करनेका है, नवेको जूना वनावे, और जूनेको खपावे यह चारही अजीव शाश्वते है एकेकके ५ भेद होनेसे ५×४=२० भेद हुये और दश पहिलेके है, यो सर्व मिलकर अजीव अरुपीके ३० भेद हुये

अजीव रुपीके ५३० भेद —काले वर्णमें दो गंध, ५रस, ८ फर्स, ओर ५ संठाण, इन २० बोलकी भजना ऐसेही हरेमें, लालमें पीलेमें और श्वेतमें, पूर्वोक्त २०-२० बोलकी भजना सर्व पंचवर्णके १०० भेद हुवे सुगंधमें ५ वर्ण, ५ रस, ८ स्पर्श, ५ संठाण, ए २३ बोलकी भजना ऐसेही दुर्गंधमें भी २३ बोल जानना, यह दो गंधके ४६ भेद हुवे खट्ट रसमें ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श, और ५ संठाण, यह २० बोलकी भजना ऐसे ही मीठे, तीखे, कडवे, कसायलेमें २० २० बोल. यह रसके १०० बोल हुवे हलके फरसे का भारी प्रतिपक्षी, बोले पावे २३ ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ६ स्पर्श, (हलका भारी छूटा) ५ संठाण ऐसे ही भारी का हलका प्रतिपक्षी, और पूर्वोक्त २३ बोल पावे ठंडे स्पर्शका गर्म प्रतिपक्षी बोल तेवीस ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ६ स्पर्श (यहां ठंडा ऊन्हा छुटा) ५ संठाण ऐसे ही गर्मका ठंडा प्रतिपक्षी और २३ बोल पूर्वोक्त लूखाका प्रतिपक्षी चोपडा (चीकणा) इसमे-५वर्ण, २ गंध, ५ रस, ६ स्पर्श, (यहां लूखा चीकणा छुटा) ५ संठाण ऐसे ही चीकणे के प्रतिपक्षी लूखेमें भी २३ बोल. सुवाला-नर्मका प्रतिपक्षी खरखरा-कठण इसमें-५ वर्ण, २ गंध ५ रस, ६ स्पर्श, संठाण ऐसे ही खरखरेका प्रतिपक्षी सुवाला इसमें बोल २३ पूर्वोक्त यह आठ स्पर्श के १८४ बोल हुवे

वट्ट (गोल-लाड्डू जैसा) मे-५ वर्ण, २ गंध, ५ रस ८ स्पर्श, यह २० बोलकी भजना ऐसे ही २ तसे (तीन खूणा) में ३ चौरसे (चौखूणा) में, ४ मंडल (चूडी जैसा गोल) में, ५ आइतस (लंबा) में, इन ५ में २०-२० बोल, सर्व १०० हुवे यह अजीव रुपीके सर्व ५३० भेद हुवे और रुपी अरुपी दोइके मिलकर ५६० भेद हुवे

" पुन्यतत्व "

पुन्यके फल मीठे पुन्य फल उपराजने मुशकिल. क्यों कि करती वक्त पुद्गलों परसे ममत्व उतारना पडता है, और पुन्यके फल भोगवने सुलभ यह पुन्य ९ प्रकारसे बंधता है १ आण पुन्ने (अन्नदान

देनेसे) २ पाण पुन्ने (पाणीका दान देनेसे) ३ लेण पुन्ने (पात्र वर्तन–भाजन देनसे), ४ सेण पुन्ने (सेज्जा–मकान देनेसे), ५ वत्थ पुन्ने (वस्त्र देनेसे), ६ मन पुन्ने (मनसे दूसरेका भला चिंतवने-से), ७ वचन पुन्ने (वचनसे दुसरका गुणानुवाद करनेसे, और उप कारी सुखदाता वचन उच्चारनेसे), ८ काय पुन्ने (शरीरसे दूसरेकी व्यावच करनेसे, अच्छे मनुष्यको साता उपजानेसे) ९ नमस्कार पुन्ने (योग्य ठिकाणे नमस्कार करनेस तथा सर्व के साथ नम्रतासे) यह नव प्रकारके पुन्य करती वक्तमें तो पुद्‌गलों परसे ममता उतारनी प हती है माहेनत करनी पडती हैं भोगवती वक आराम–सुख देता है ये नवप्रकारे वन्धा हुवा ४२पुण्य प्रकारे भोगवते हैं –१ साता वेदनी २ उचगोत्र, ३ मनुष्यगती, ४ मनुष्यानूपूर्व्वी, * ५ देवगती, ६ देवानुपुर्वी, ७ पर्चेंद्रीकी जाति ८ उदारिक शरीर, ९ वैक्रिय शरीर, १० आहारिक शरीर ११ तेजस शरीर १२ कारमाण शरीर १३ उदारिक अंगो § पाग, १४ वैक्रिय अगोपाग १५ आहारिक अगोपाग, १६ वज्रऋषभ नारच संघयण १७ समचउरस सठाण, १८ शुभवर्ण १९ शुभगध २० शुभरस २१ शुभ स्पर्श २२ अगुरु लघू नाम (लोह पिंड जैसा हो कर भी हलका फूल जैसा तथा बहुत जाडा बहुत पतला शरीर नहीं) २३ पराघात नाम [दूसरेसे हारे नहीं]२४ उश्वास नाम (पूरे उश्वास लेवे) २५ आताप नाम (प्रतापी) २६ उद्योत नाम (तेजस्वी) २७ शुभ चलनेकी गती २८ निर्माण नाम (अगोपाग योगस्थान बरावर होवे) २९ त्रसनाम ३० वादर नाम ३१ पर्याप्ता नाम ३२ प्रत्येक नाम (एक शरीरमें एक जीव) ३३ स्थिर नाम (सरीका

* इस भवसे पाभके दूसरे भवमें ले जाय सो आनापूर्वी § अग सरीर और उपाग हाथ पाय अगुली आदि

दुगछा ५८ स्त्री वेद ५९ पुरुष वेद ६० नपुंशक वेद ६१ तिर्यच ग ती ६२ तिर्यचानुपूर्वी ६३ एकेंद्री पणा ६४ बेंद्री पणा ६५ तेंद्री पणा ६६ चोरिंद्रीपणा ६७ अशुभ चलनेकी गती ६८ उपघात नाम [अपने शरीरसे आपकी मृत्यू होए] ६९–७२–अशुभ वर्ण–गंध—रस-स्पर्श ७३ ऋषभ नाराच संघेण ७४ अर्धनाराच संघेण ७५ केलिक संघेण ७६ छेवट संघेण, ७७ निगोह परि मडल संठाण ७८ सादी संठाण ७९ वामन संठाण ८० कुब्ज संठाण ८१ हुडक संठाण यह बयासी प्रकारसे पाप भूगतना पडता है ये हेय अर्थात् छोडने योग्यहै

५ आश्रव तत्व

जैसे नावमें छिद्र कर पाणी आनेसे वो भरा जाती है, तैसे जीवरुपी तलावमें, आश्रवरुप छिद्र करके, पापरुप पाणी आनेसे, जीव पाप करके भराता है, और ससार समुद्रमें डूब जाता है यह आश्रव (पाप आनेके नाले) २० है —

१ मिथ्यात्व आश्रव (कू देव–गुरु–धर्मकी श्रद्धासे तथा २५ मिथ्यात्व सेवनेसे आश्रव लगता है) २ अव्रत आश्रव (पंच इद्री मन और ६ कायसे १२ अव्रत लगती है) ३ कषायाश्रव [क्रोधादिक २५ कषाय सो] ४ प्रमाद आश्रव (मद विषय कषाय निंदा विकथा ए ५ प्रमाद) ५ योग आश्रव [मन वचन कायाकी प्रवृत्ति सो] ६ हिंसा ७ झूट ८ चोरि ९ मैथुन १० परिग्रह सग्रह (इन पाच कामसे आश्रव लगे) ११ श्रोत १२ चक्षु १३ घ्राण १४ रस १५ स्पर्श यह [५ इंद्रीको कुकाममें लगावे तो] १६ मन १७ वचन १८ काया (यह तीन योग पापमें प्रवर्तानेसे) १९ भंडउपगरण (वस्त्र पात्र) अयत्नासे लेवे और रक्खे तो २० सूइ कुश [त्रग] मात्रभी अयत्नासे ग्रहे और रक्खे तो आश्रव

विशेषसे इन आश्रवके ४२ भेद होते हैं सो पहिले २० बोल कहे उससेंसे १७ बोल तो वोही यहां ग्रहण करना और पच्चीस क्रिया —

२५ क्रिया

जिससे पाप आवे उसे क्रिया कहते हैं इस क्रियाके दो भेद हैं (१) जीवसे लगे सो (२) दूसरी अजीवसे लगे सो जीवसे लगे उसके भी दो भेद (१) सम्यक्त्वी जीवको लगे (२) मिथ्यात्वीको लगे और अजीव क्रिया दो प्रकारकी है (१) इरियावही क्रिया [श्री केवली भगवतको जोगकी प्रवृतीसे लगे] (२) संपराइ (कषायादिक उत्पन्न होनेसे लगे)

शंका—चलन कार्य तो जीवकी सत्ताक है, फिर क्रियको अजीव क्यों कही ?

समाधान—कर्म आनेके कारणको क्रिया कही जाती है, सो कर्म तो अजीव चौफरसी पुद्गल हैं, इस लिये क्रिया भी अजीव कही जाती है

सपराइ क्रियाके चोवीस भेद —१ 'काइया क्रिया' अयत्नाके कामर्मे काया प्रवर्तानेसे लगे इसके दो भेद —(१) अव्रतीकी काइया क्रिया अर्थात् सरीरपे ममत्व करवृतपच्चखाण नहीं करे की रखें तप से मेरी काया दुर्बल होजायगी, जिनोने पापके त्यागन नहीं किये हैं, उनको गत भव श्रेणिने जो पाप करके आये हैं, उसकी, तथा यहा व्रत नहीं किये उसकी क्रिया आ रही है [२] वृतीकी अर्थात् साधू श्रावक उपयोगसे अयत्नासे कायाको हलन चलनादि कार्यमें प्रवर्तावे उससे लगे

२ 'आहीगरणिया क्रिया' जो शस्त्रस लगे, जैंसे सूइ,कतरणी,

चाकु, छुरी, तलवार, भाला, बरछी, तीर तमचा, बंदूक, तोप, कूदाली, पावडा, पहार, हल, बखर, घट्टी, मूसल, खल, बत्ता, इत्यादिक शस्त्रोंको संग्रहनेमे लगे, तथा बचन रुप शस्त्रसे लगे इसके दो भेद –[१] शस्त्र पूरे करना जैसे तलवारको मूठ, घट्टीको खूटा, चक्कुको हाथा इत्यादि बेठना, तथा तिक्ष्ण धार करनी जिससे वो उपयोगमें आवे, और आरंभ में लगे और वचन से सो पुराणा क्लेश उद्धरनेसे लगे (२) पूर्वोक्त शस्त्र नवीन बनवाके संग्रह करे तथा बेचें, जिन शस्त्रोंसे जितना जगतमें पाप होगा उतना पाप उस करनेवालेको लगेगा

और वचनसे सो नवा क्लेश उपजानेसे लगे वचन रुप शस्त्रसे मराहुवा जीवभी दुर्गतीमें महा दु ख पाता है इस लिये बचन से भी अधिकरणी क्रिया लगती है

३ ' पाउसिया ' द्वेष प्रणामसे लगे अर्थात् दूसरेको धनवान व लवान सुखी देखकर द्वेष भाव लावे, इर्षा करे ऐसा चिंतवे कि यह कब दु खी होगा ? तथा कृपण पापी इत्यादि दुष्टोंका नुकशान देख हर्ष लावे कि बहुत अच्छा हुवा, ए दुष्ट पर दु ख पडा इसके दो भेद —(१) जीवपर द्वेष लाना अर्थात् अमुक मनुष्य व पशुका दु ख होवे तो अच्छा [२] अजीवपर द्वेष लावे अर्थात् वस्त्राभुषण मकान इनका विनाश कब होगा यह दोनों कर्म बंधका हेतु हैं

४ ' परितावणिया ' परिताप उपजाना अथात् कठोर बचनसे या ताडन तर्जनसे दूसरेको परिताप (दु ख) उपजाना शरीके अवयवके छेदनेसे ये क्रिया लगती है इसके दो भेद –[१] ' सहथ ' अपने हाथसे, बचनसे, दूसरेको दु ख देवे सो [२] परहथ, दूसरेके हाथसे दूसरेको दु ख दिलानेसे यह क्रिया लगती है

५ ' पाणाइ वाइया ' प्राणातिपात क्रिया अर्थात् विषसे शस्त्र

से इत्यादि जोगसे जीवोंका वध करे सो प्राणातिपातकी [प्राण-जीवसे, अती-दूसरी, तरफ पात-पाडना] क्रिया लगे इसके दो भेद — [१] आपके हाथसे जीवको मारे, सिकार खेले [२] दुसरेके पास जीवको मरावे अर्थात् सिकारी कुत्ते छोडकर वगैरा, तथा मारतेको हिम्मत देवे हां मार देखता क्या है ? इत्यादि कहके हिंसा करावे उसे लगे

६ ' आरंभिया क्रिया ' पृथ्वी, पाणी, अग्नी, हवा, हरी, या हलते चलते प्राणियोंकी हिंसाका त्याग नहीं किया है, उनका जितना जगतमें आरंभ हो रहा है उन सबका पाप आ रहा है इसके दो भेद [१] जीवका आरंभ होए उसकी, और [२] अजीव [निर्जीव] का आरंभ होय उसकी, यह दो तरह लगती है

' परिग्रहीया ' धन धान दोपद चौपदादिक परिग्रह रखनेके त्याग न होय , तो जितना जगतमें परिग्रह है उसका पाप उसे लगता है इसके दो भेद (परिग्रह दो तरहका होता है ? [१] जीव परिग्रह सो दास, दासी, पसु पक्षी, अनाज इत्यादिककी ममत्वे करनेसे आवे, [२] अजीव परिग्रह सो वस्त्र पात्र भूपण मकान इत्यादिककी ममत्व करनेसे क्रिया हमेशा आती है

८ ' मायावत्तीया ' कपट करनेसे क्रिया लगे इसके दो भेद (१) आप पोते कपट—दगा बाजी करे बाहिर उत्तम धर्मात्मा वजे और श्रद्धा रहित होवे, तथा वैपारादिक अनेक कार्यमें कपट करे सो (२ दूसरेको ठगनेकी कला सिखावे छल विद्याके इंद्रजालादिकके शास्त्र पढावे , तथा खोटे तोले मापे रखे, वस्तुमें भेल सभेल करें इत्यादि अनेक रीतिसे भोल जीवोंको ठगनेकी कला सिखावे सो क्रिया

९ ' अपच्चखणिया ' इस जगतमें उपभोग [जो एक वक्त भोगवनेमें आवे भोजनादि] परि भोग [वारवार भोगवनेमें आवे

सो वस्त्रादिक] यह जितना जगतमें है वो अपने भोगमें आवो या न आवो तो भी उसकी किया अपनेकों लगती है इसके दो भेद—(१) जीव वस्तु मनुष्य पशू धान इनके पच्चखाण नहीं होवे तो २ अजीव सोना चादि रत्न जवेरात इनके पच्चखाण न होवे तो

प्रश्न —जो वस्तु हमने कभी सुनी नहीं और उसपर हमारा मन भी नहीं, तो उसकी क्रिया हमारेको कैसे लगेगी?

उत्तर —विन सुनें देखे, और मन विना भी अव्रत लगनेका स्वभाव हैं, जैसे घरमें कचरा भरनेका तो किसीकाभी मन नहीं हैं, परतु दरवज्जा खुला रहेगा तो कचरा जरुर आता है! और जो दरवज्जा वंद करदिया तो घरमें कचरा आना वद हो जाता है तैसे ही जिस वस्तुके पच्चखाण नहीं है, तो उसके आत्म रुप घरमें पाप रुप कचरा सदा आता है, और पच्चखाण रुप कमाड लगा देनेसे पाप आना वद हो जाता है, तथा जिस वस्तुके त्यागन नहीं और वो कभी हाथ आइ तो उसे भोगव लेगा, सुणी तो देखनेकामन होजावेगा जिनके त्यागन उसकी इच्छा उस अदर रहनेसे वाहिरका अव्रत आना वंद हो जाता हैं, इस लिये पच्चखाण अवश्य ही करना चाहिये

१० ' मिच्छा दसण वतिया ' खोटे मतकी कूदेव, कू गुरु, कू धर्म, की श्रद्धा रखे सो इसके दो भेद—ओछी रीति मिथ्यात्व अर्थात् श्री जिनेश्वरके ज्ञानसें कमी परुपणा करे, (२) विप्रीत मिथ्यात्व अर्थात् श्री जिनेश्वरके मार्गसे विप्रीत परुपणा करे जैसे कितनेक मिथ्यात्वके जोरसे कहते हैं कि यह आत्मा पांच भूतसे उत्पन्न हुइ है, मरे पीछे पाच भूतमें पाच भूत मिल जायगें, फिर कुछ नहीं रहगा ऐसे नास्तिक मतोंको पुछा जाता है कि, फिर ता पर लोककी (पूनर्जन्मकी) नास्ती हुइ, पुन्य पापके फलकी नास्ती हुइ, ऐसा तो इस दुनियामें

प्रत्यक्ष देखनेमें नहीं आता है, पूर्व जन्म न होवे तो यहा एक दु खी, एक सुखी, क्यों होवे? सब एकसे ही होने चाहिये तब कोई कहते है कि हमको उसकी मालूम क्यों नहीं पडती हैं? हम कैसे भूल गये? उनसे कहते है कि पूर्व जन्म तो दूर रहा परतु तुम माताके पेटमें से निकले हो यहबात तो सच्च है, कहीये माताके पेटमें किस्तरह थे? इतनी भी बात याद नहीं है, तो परभव तो याद कहासे रहे? तथा क्षिणतमें स्वपन आनेसेही अपना भान भुल जाते हैं तो परभवको तो बहुत दिन हुवे! ऐसा जाण मिथ्यात्वियों के कुतर्कसे भर्माणा नहीं जो ऐसे कुमतमें राचे सो मिथ्या दर्शण क्रिया

११ 'दिठिया क्रिया' कोइ भी वस्तुको देखनेसे क्रिया लगे इसके दो भेद —(१) 'जीव दिठिया' स्त्री, पुरुष, हाथी, घोडा, बाग, बगीचे, नाटक— चेटक इत्यादि देखे सो २ 'अजीव दिठिया' निर्जीव वस्त्र भुषण मकान इनको देखनेसे लगेसो

१२ 'पुठिया क्रिया' सो किसी भी वस्तुका स्पर्श करनेसे (छीनेसे) लगे इसके दो भेद –[१] जीव वस्तू स्त्री पुरुषके अंगोपाग के स्पर्शसे, तथा पृथवी, पाणी, अग्नी, हरी, इत्यादिकके स्पर्शसे कितने भोले विना काम धानकी वानगी देखने, या कोई भी वस्तु देखनेमें आवे तो सहज उसका स्पर्श कर लेते हैं, परतु ज्ञानीने कहा है कि कोई अति वृद्ध रोग सोगसे जिसका शरीर अती ही जीर्ण हो रहा है, उसको कोई बत्तीस वर्षका योद्धा जुवान खुब पराक्रमसे मुष्टी प्रहार करनसे, उसे कैसी तक्लीफ दु ख हाता है, तैसे ही वाणे प्रमुख एकेंद्रीका स्पर्श करनेसे उनको दुःख होता है, और कितनेक सु कोमल जीव तो प्राणमुक्त ही हो जात हैं ऐसे अनर्थका कारण जाण, विना वाजवी किसी सजीव वस्तुका स्पर्श नहीं करना २ अजीव वस्तू वस्त्र भुषणादि उनका स्पर्श करनेसे भी क्रिया लगती है इसलिये परीक्षा निमित्त विना कारण अजीव भी स्पर्श नहीं करना

१३ 'पाडुचिया क्रिया' किसपर द्वेष भाव लेनेसे क्रिया लगती

है इसके दो भेद —[१]जीव, माता, पिता, स्त्री, पुत्र, मित्र, शिष्य, गुरु, शत्रु घातिक अधर्मी, भैंस, घोडा, साँप, कुत्ता, विच्छू, पटमल, मच्छर, कीडे इत्यादि सजीव वस्तू पर द्वेष लानेसे २ अजीव वस्त्रासुपण मकान, विष, अशुची, अमन्योग वस्तुपर इत्यादि पर द्वेष रखनेसे भी क्रिया लगती है द्वेष भावका मारा द्वेषी प्राणी इस जन्ममें भी नाना प्रकारके पापारभ करता है और परभवमें भी गती विगाड देता है जो धर्मी होय तो भी द्वेप भावसे व्यंतर योनीमें प्राप्त हो जाता है

१४ " सामंतो वणीया क्रिया " बहुत वस्तूका समुदाय मिलाना (एकठा करना सो) इसके दो भेद —१ सजीव वस्तूका एकठी कर नी सो दासी, दास, घोडे, हाथी, बेल, बकरे, कुत्ते, बिल्ली, तोते, इत्या दिकका सग्रह करके रखे और उसको देखने बहुत लोग आवे वो पर संस्या करे उसे सुन हर्षावे तथा वेचना–वैपार करना २ निर्जीव धातू किराणा, घर, मेहल, वस्त्र, इत्यादि वस्तूका बहुत काल सग्रह कर रखना और उनकी परसस्या सुण हर्षाना तथा वेचना सो और इसका यह भी अर्थ करते है कि, पतले पदार्थ घी, तेल, छाछ, राब, पाणी इत्यादि पदार्थके वर्तन उघाडे रखना, उसमें जीव पडके मरजाते हैं तथा दु खी होते हैं सो क्रिया लगती है

१५ " साहत्थीया "–आपसमें लडाइ करावे सो सहत्थीया क्रिया, इसके दो भेद —१ जीवको आपसमें लडावे, मेंढे मुर्गे (कुकडे)सर्प, सांढ, (बैल) इत्यादिको, तथा मनुष्योंको आपसमें लडाव चुगली करके या कोइ भी तरह संग्राम करावे २ अजीवको, लकडीसे लकडी तोडे, इत्यादि कोइ भी दो अजीव वस्तूको आपसमें भिडाकर तोड सु क्रिया और दूसरा अर्थ यह भी होता है की आपने शरीका या दूसरें मनुष्य, कुत्ता, बिल्ली, गाय, भैंस, अश्वादि पशू तथ तोत आदी पक्षी का वध बधन करे जीवकी सहत्थाय और वस्त्र भूपणादीका बंधन करे सो अजीव सह थिया

१६ " नेसथीया क्रिया " किसी वस्तूको अयत्नासे डाल देनेसे

लगे इसके दो भेद -१ जीव ज्यूं लीख, पटमल, विगेरे छोटे जीव, या मोटे जीवोंको, उपरसे डाल देवे, तक्लीफ उपजावे इत्यादि २ अजीव वस्तु शस्त्र वस्त्र वगैरा अयत्नासे डाल देवे उससे लगे

१७ " अणवाणिया क्रिया " किसी वस्तु मगानेसे क्रिया लगे इसके दो भेद-१ सजीव वस्तु मगानेसे २ निर्जीव वस्तु मगानेसे इसका दूसरा अर्थ ऐसा भी करते हैं कि मालिक हुकम देके कोइ काम करावे तो वो क्रिया उस मालकको लगे

१८ " वेयाराणिया " किसी वस्तूको विदारणेसे (टुकडे करनेसे) क्रिया लगे इसके दो भेद-१ सजीव वस्तुके टुकडे करनेसे भाजी, फल, फुल, अनाज, मनुष्य, पशु, पक्षी, वगैराको विदारनेसे २ निर्जीव वस्त्र, धातु, मकान, लकडी, पत्थर, इट इत्यादिके टुकडे करनेसे क्रिया लगे कषायके वस हो तोडे तथा सहज ताड डाले और इसका दूसरा अर्थ यह भी है की हृदय भेदे ऐसी १ जीवकी कथा सो स्त्रीयादीके हाव भाव रूप हर्ष उपजानेवाली और रोगका मृत्युका शोक उपजाने वाली २ अजीवकी वस्त्र भूषणकी हर्षसे हृदय भेदनेवाली, और विष अशुचीक शोकम हृदय भेदनेवाली उसे भी वीदारणी क्रिया लगे

१९ " अणा भोगवत्तीया " उपयोग रहित काम करनेसे क्रिया लगे इसके दो भेद -१ वस्त्र पात्र अयत्नासे विना देखे ग्रहण करे, जहा तहां रख दे तो २ अयत्नासे प्रतिलेहणा (पलेवण) करे [शास्त्र में कहा है कि अयत्नासे साधू क्रिया करता है, उसमें किसी जीवकी हिंसा नहीं हुइ तो भी उसे हिंसक कहना, और यत्नासे क्रिया करता है, अजाणमें कोइ हिंसा हो गइ तो भी उनको दयाल कहना]

२० " अणव कंख वत्तिया " सो इस लोक परलोकके विरुद्ध काम करे हिंसामें धर्म परुपे, तथा महिमा अर्थ तप सयम करे और दूसरा अर्थ जिस काम करनेकी तो अभीलाषा नहीं है, परंतु वो स्व भावसे ही आकर लगे, जैसे वस्त्र मलीन करनेकी तो किसीकी इच्छा नहीं है, परंतु पडा २ सहज ही मलीन जीर्ण हो जाय इसके दो भेद -

१ अपना शरीरका हलन चलनादि कार्य करनेसे २ तथा क्लेशके वस हो अपने हाथसे अपना ही परिहार (मार) करनेसे

'२१ अनपिउगवत्तीया क्रिया' अर्थात् दूसरी वस्तुके सजोग मिलानेको आप बीचमें दलाली करे १जीवका, स्त्री पुरुषका, गाय बेलका इनके संयोग मिलानेसे २ अजीव, वेपार, करीआणा, सुपण वस्त्रकी, दलाली करनेसे क्रिया लगे (पापकी दलालीमे बचना चाहिये) दूसरा अर्थ बिना उपीयोग सावद्य भाषा बोले, गमना गमन करे, शरीरका सकोचन पसारण करते हिंशा निपजे या दूसरेके पास काम कराते हिंशा निपजे सो भी अनापयोगी क्रिया

२२ " समुदाणीया क्रिया " एक काम बहुत जणे मिलकर कर सो समुदाणीया क्रिया, जैसे कपनीके वेपारसे, नाटकके देखनेसे, सोदा होता हो वहा, तास गजफे आदी ख्यालमें, फासी देखनेसे, कोइ वस्तू बजारमें वेचाने आइ उसे बहुत जणे मेले होकर सीर (पांती) में खरीदनेसे वैश्याका नृत्य, मेला-जातारा आदीमे महोत्सवमें बहुत लोग मेले हो वहा यह क्रिया लगती है इन कर्मोंमें सब जीवके एकदम एक सरीखे प्रणाम होत है जिसस बहुत लोकोके एकसे कर्म बधते हैं फिर वो सब आग लगनेसे, जहाज डूबनेस, या हैजा प्लेगादि बिमारी चलनेमे, एकदम बहुत जने मरजाते हैं इसके तीन भेद –सयंतर उपरके समुदाणी काम कितनेक तो अतरयुक्त करते है अर्थात् १ एक वक्त काम कर बीचमें छोड देते है फिर बहुत दिनके अंतरसे करे, २ एक निरंतर अतर रहित सदा करे, ३ एक तदुभय कितनेक अतर सहित, कितने अतर रहित काम करे यह तीन तरेहसे लगे

२३ " पेजवतीया " प्रेम भावक उदयसे क्रिया लगे इसके दो भेद —१माया कपट करनसे २ लोभ करनेस (यह माया और लोभ रागकी प्रक्रतीयों हैं) इन दोनोंको राग कपायमें ली है

२४ 'दोपतीया क्रिया' किसी वस्तु पर द्वेष भाव लानेसे लगेइसके दो भेद –१ कोध करनेसे २मान करनेसे (यह दो द्वेषकी प्रक्रती है)

२५ "इरियावही क्रिया" हलन चलन करनेसे लगे इसके दो भेद —१ छद्मस्तकी, सकषायी साधूका लगे सो २ केवलीकी, * सो केवली भगवानको हलन चलनादि करते लगे, परंतु वो पहले समय लगे, दूसरे समय वेदे, तीसरे समय निरजरे (उस पापसे दूर होवे) यह तीन समय ही रहती है

यह पचीस ही क्रिया कर्मबंधका कारण जान समद्रष्टीको छोड-ना चाहिये

आश्रव तत्वके ४२ भेद यह छोडने योग्य जानना

६ "सवर तत्व"

पापरूप पाणी करके, जीवरूप नाव भरा रही है, उसके आश्रव रुप छिद्रको, आडे, संवररूप पाटिये लगा देवे तो, पापरूप पाणी आना बंद हो जाय

इस सवरके २० भेद हैं —

१ सम्यक्त्व २ व्रत प्रत्याख्यान (पच्चखाण) करे ३ प्रमाद छोडे ४ कषाय छोडे ५ योगको स्थिर करे ६ दया पाले ७ झुट छाडे ८ चोरी छोडे ९ ब्रह्मचर्य पाले १० परिग्रह छोडे ११–१५ पाच इंद्री वशमें करे १६–१८ तीन योग वशमें करे १९भंडोपगरण यत्नासे लेव धरे २० सुइ कुस यत्नासे लेने–रखे यह २० तरह सवर होता हैं विशेष रीतिसे संवरके ५७ भेद होते हैं –१ इर्या २ भाषा ३ एषणा ४ आदान निक्षेपणा ५ परिठावणीया (यह ५ समिति) ६ मन ७ वचन ८ काया (यह ३ गुप्ती) [ये ८ प्रवचन माताको पाले] ९ क्षुधा १० तृषा ११ शीत १२ उष्ण १३ दंशमस १४ अचेल १५ अरति

---

* यह इरिया वही क्रिया ११ मे १२ मे १३ में गुण स्थान मे प्रवृत्त से वितरागीको नाम कर्मोदयसे शुभ त्रियोगकी प्रवृती होते साता वेदनी कर्मके पुद्गलोंके दलिये आत्म प्रदेशापे लगते प्रकती और प्रदेश बंध होता है परन्तु स्थिती और अनुभाग बंध नहीं होता है क्यों कि राग द्वेष रहित है कषाय विन कोर जोग बंध नहीं कर सका है फक्त स्पर्श होकर तीसरे समय अलग हो जाते है

१६ स्त्री १७ चरिया १८ निसिहिया १९ सेजा २० अक्रोश २१बध २२ जाचना २३ अलाभ २४ रोग २५ त्रण फर्श २६ जल मेल. २७ सत्कार पुरस्कार २८ प्रज्ञा २९ अज्ञान ३० दर्शण [यह २२ परिसह जीते] ३१ खती ३२ मुत्ती ३३ अजव ३४ मदव ३५ लाघव ३६ सच्चे ३७ संयम ३८ तप ३९ चइय ४० ब्रह्मचर्य [ये १० यती धर्म आराधे] ४१ अनित्य ४२ असरण ४३ संसार ४४ एकत्व ४५ अन्यत्व ४६ अशुची ४७ आश्रव ४८ सवर ४९ निरजरा ५० लोक ५१ बोध वीज ५२ धर्म [यह १२ भावना भावे] ५३ सामा यिक ५४ छेदोपस्थापनीय ५५ परिहार विशुद्ध ५६ सुक्ष्म सपराय ५७ यथाख्यात [यह ५ चारित्रपाले] यह५७ * सवर ग्रहण करनेस, उस नावाके छिद्रमेंसे पाणी आना वद होता है, और नावा समुद्र पार होती है तैसे संवर करनेवाला प्राणी संसार समुद्र तिर, पार होते हैं इति सवर तत्वम्

७ निर्जरा तत्व

शरीररुप नावमें पापरुप पाणी आता था, उसे तो सवररुप पा टियेसे रोक दिया और पहिलेका आया हुवा पाणीको उलीचकर (नि कालकर) नावको खाली कर, तव वो पार पावे तैसही सवर ग्रहण किये पहिले जो कर्म किये हैं, उस खपावे, जीवको मोक्ष जाने जो ग हलका वनावे, सो निर्जरा यह निर्जरा वारह तरहसे होती है—१ अणसण—अन्न प्रमुखचार आहारके, थाडे कालके, तथा जाव जीव- के त्याग करे २ उणोदरी—आहार उपगरण कम करे ३ वृत्तिसक्षप- भिक्षाचारी—गोचरी करे ४ रस परित्याग—षट रस त्यागे ५ काय क्लेश—कायाको ज्ञानसे कष्ट दे ६ पडि सल्लिणया—आत्मा वशम करे (य ६ वाह्य [प्रगट] तप) ७ प्रायश्चित—पापसे निवर्त ८ विनय—नम्रता रखे ९ वयावच—गुरुआदिककी भक्ती करे १० स ज्झाय—शास्त्र पढे ११ ध्यान—शास्त्रका अर्थ विचारे १२ काउसग्ग

* इन ५७ का खुलासा पहिले खन्डके १—४—१ प्रकरणमे है

(कार्योत्सर्ग) अयोग्य वस्तु त्यागे [यह ६ अभ्यतर (गुप्त) तप]
इस निर्जराके विशेष खुलासे के लिये, तीसरे प्रकरणके तपाचारके
३५४ भेद पढिये

८ "बध तत्व"

आत्मप्रदेश और कर्म प्रदेशका आपसमें बंधाना, खीर नीर, धातु मट्टी, पुष्प अत्तर, तिल तेलकी तरह, उसे बंध तत्व कहिये यह बंध चार तरहसे होता है -१ प्रकृति बंध--कर्मका स्वभाव सो १ ज्ञानावरणी कर्म ६ प्रकारे बांधे--१ नाण पडिणयाए-ज्ञानीकी निंदा करे २ 'नाण निन्हवणयाए' ज्ञानीका उपकार छिपावे ३ 'नाण असायणाए' ज्ञानीकी अशातना (अपमान) करे ४ 'नाण अंतराए'-ज्ञानीको तथा पढनेवालेको सुखकी अतराय देवे ५ 'नाण पउसेणं'-ज्ञानीसे द्वेष करे ६ 'नाण विसवायणा जोगेण' ज्ञानीसे झूटे झगडे करे यह ६ प्रकारसे बांधा १० प्रकारसे भोगवे -१ मति ज्ञानावरणी-बुद्धी निर्मल नहीं पावे २ श्रुति ज्ञानावरणी-उपयोग निर्मल नहीं पावे ३ अवधि ज्ञानावरणी-अवधि ज्ञान नहीं पावे ४ मन पर्यव ज्ञानावरणी-मन पर्यव ज्ञान नहीं पावे ५ केवल ज्ञानावरणी-केवल ज्ञान नहीं पावे ६ सोयावरणे-बधीर बहिरा होवे (७) नेतावरणे -अन्धा होवे (८) घणावरणे-गुगा होवे (९) रसावरण-बोबडा होवे, स्वाद न ले सके (१०) फासावरणे-कायासुन्य पावे

'२ दर्शनावरणीय कर्म' ६ प्रकारसे बांधे ज्ञानावरणीयकी तरह छेइ बोल यहां लेना, सम्यक्त्वीके उपर यहा उतरना ९ प्रकार भोगवे-१ चक्षु दरशनावरणीय २अचक्षु दर्शनावरणीय ३ अवधी दर्शनवरणीय ४ केवल दर्शनावरणीय ५ निद्रा ६ निद्रा निद्रा ७ प्रचला ८ प्रचला प्रचला ९ थणदधी निद्रा यह ९ प्रकारे भोगवे

३ 'वेदनी कर्म' इसके दो भेद -१ साता वेदनी २ असाता वेदनी

साता वेदनी १० प्रकारसे वाधे—पाणाणूकंपया—प्राणी (वेंद्री तेंद्री चौरेंद्री) की अनुकपा (दया, करे २ भूयाणु कपयाए—वनस्प तिकी दया लावे ३ जीवाणू कपयाए—पचेंद्रीकी दया करे ४ सत्ताणु कपयाए—पृथवी, पाणी, अमी, वायुकी दया पाले, और इनचारोंको—५ अ दु खणयाए—दु ख नही देवे, ६ असोयणयायाए — सो (चिंता) न उपजावे ७अझु रणयाए—झुरावे (त्रसावे) नहीं ८ अतिपणयाए रुदन न कराव ९ अपिट्टणयाए मारे नहीं १० अपरीयावणयाए—परिताप न उपजावे

एह १० काम करनेवाला आठ प्रकारके सुख पाता है १ मणूणा सदा—मनोज्ञ [अच्छे] शब्द राग रागिणी २ मणुणा रुवा—मनोज्ञ रुप नाटकादि ३मणुणा गंधा मनोज्ञ गंध अत्तरादिक ४ मणुणा रसा मनोज्ञ रस पटरसभोजन ५ मणूणा फासा—मनोज्ञ स्पर्श सयन —आस नादि ६ मन सुहाय—मन निर्मल रहे ७वय सुहाय—वचन मधुर होवे ८ काय सुहाय—काया निरोगी रुपवती हो यह ८ पावे

आसाता वेदनी १२ प्रकारे वाधे, प्राण भूत जीव सत्वको १ दु खदे २ सोग करावे ३ झुरणा करावे ४ रुदन करावे ५ मारे ६ प रिताप उपजावे यह सामान्य प्रकार करे ओर यह विशेप प्रकारसे कर यों १२ काम करनेसे, आसाता वेदनी कर्म वाधे ओर ८ प्रकारे भोगवे-अमनोज्ञ शब्द, रुप, गंध, रस, स्पर्श, पावे, मन सोगवंत रहे, वचन क ठग होवे काया रोगवत पावे

४ ' मोहनीय कर्म ' ६ प्रकारसे वाधे तिव्र क्रोध, २ तिव्र मान ३ तिव्र माया, ४ तिव्र लोभ, ५ तिव्र दंशण मोहनीय [धर्मकू नाम अधर्म करनेसे] और ६ तिव्र चारित्र मोहनी (चारित्र धारी हो अ चारित्र धारी जैसे रहनेसे) ओर पाच प्रकारसे भोगवे —१ सम्मत वे यणी—सम्यक्त्व वेदनी (सम्यक्त्वकी मलीनता) पावे २ मिच्छा वयणी मिथ्यात्व मोहनी—मिथ्यात्वकी तिव्रता पावे ३ सम्य मिच्छा वेयणी—मिश्र श्रद्धावत होवे ४कषाय वयणी क्रोधादि ४ कषाय तथा

अनतानुबंधी आदि १६ कषाय वत होवे ५ नो कषाय-हांसादिक९ नो कषाय वंतहोवे यह ५, तथा २५ कषाय, ३ वेयणी,यों २८प्रकारे भोगवे

५ 'आयूष्य कर्म '१६ प्रकारे बाधे १ नारकीयूष्य चार प्रकारे बाधे – १ महा आरंभी—सदा छेही कायकी हिंसा होवे ऐसा काम कर २ महा परिग्रही—महा लोभी ३ कुणिमअहार—मद्य मास खाय ४ प चदियवहेण—पचेंद्रीकी घात करे

२ तिर्यचका आयुष्य चार प्रकारे बांधे — १ माइलयाए—कपटी होए २ नियडिलयाए—महा दगावाज होय ३ अलियवयणेणं—झुट बोले ४ कुड तोले कुड माणे—खोटे तोले मापे रखे

३ मनुष्यका आयुष्य चार प्रकारे बाधे —१पगइ भदायाए—स्वभावसे ही भाद्रिक (निष्कपटी,) २ पगइ विणियाए—स्वभावसे ही विनीत ३ साणुकोसाए-सरल या दयाल ४ अमछरीयाए-इर्षा रहित

४देवताका आयुष्य ४ प्रकारे बाधे –१ सराग सजम—सजम पाले परन्तु शिष्य शरीरपर ममत्व रखे २ सजमा समय—श्रावक के व्रतपाले ३ बालतवो कम्मेण—ज्ञान रहित तप करनेवाल और ४ अकाम निरजाए—परवश दु ख सहे परन्तु समभाव रखे

यह ४ गतिका आयूष्य १६ प्रकारे बाधे—और ४ प्रकारे भोगवे १ नर्क २ देवताका आयूष्य जघन्य दश हजार वर्ष, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम ३ मनुष्य ४ तिर्यचका आयूष्य जघन्य अतर मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पल्योपमका यह ४ प्रकारे भोगवे

६ नाम कर्म के दो भेद –१ शुभ नाम, और २ अशुभ नाम

शुभ नाम ४ प्रकारे बाधे १ काउ जुयाए कायाका सरल, २ भास जुयाए—भाषाका सरल ३ भाव जुयाए—मनका निर्मल ४ अविसवायणा जोगेण—विखवाद झगडे रहित और १४ प्रकारे भोगवे १

इठा सद्दा—मनोज्ञ शब्द, २ इठा रुवा–मनोज्ञ रुप ३ इठागधा–मनोज्ञ गध ४ इठरसा—मनोज्ञ रस, ५ इठा फासा–मनोज्ञ स्पर्श ६ इठा गइ मनोज्ञ चाल ७ इठा ठिइ—सुखकारी आयूष्य ८ इठा लवण—मनोज्ञ शरीर, ९ इठा जसोकित्ती–यश कीर्तीवत १० इठा उठाण कम्मबल विरिय पुकार परकम्मे–कोइ वस्तू पाडि उसको उठानेकी इच्छा होमे सो उठाण, उसको लेने जावे सो कर्म, उसे उठावे सो बल, योग ठिकाणे उठालेवे सो विर्य, ले चले सो पुरुपाकार, और इच्छित ठिकाण जाकर रख देवे सो पराक्रम यह सब अच्छा मिले ११ इठा सरया–मधुर स्वर १२ क्त सरया–वल्लभ स्वर १३ पिय सरया–प्यारा शब्द १४ मणुण सरया—मनोज्ञ स्वर इय १४ प्रकारे भोगवे

अशुभ नाम कर्म ४ प्रकार बाधे —१ काया अणू जुयाए–काया वक्र २ भासाणु जुयाए–कठोर वचनी ३ भावाणु जुयाए मनका ला, ४ विसंवाय जोगेण–कदाग्रही यह चार काम करके १४ प्रकारे भोगवे अणीठा सद्दा २ अणीठा रुवा ३ अणीठा गधा, ४ अणिठा रस ५ आणिठा फासा ६ आणिठा गइ ७ अणिठा ठिइ ८ अणिठा लवण ९ आणिठा जसो कीर्ती, १० अणिठा उठाण कम्म बलवीर्य पुरसकार पराक्रम ११ हीणसरया हलके वचन होवे १२ दीण सरया–दीनताके १३ आणिठ सराय खराशब्द हो १४ अक्त सराय अप्रियशब्द होवे यह १४ प्रकारे भोगवे

नाम कर्मकी ९३ प्रकृति होती है —४ गती ५ जाती ५ शरीर ३ शरीरके*अगोपाग ५ शरीरका बधन ५शरीरके संघातन ६ संठाण ६ सघण ५ वर्ण २गंध ५ रस ८स्पर्श ४ गतीकी× अनापुर्वी

---

* १ मस्तक २ छाती ३ पेट, ४ पीठ, ५—६ दोना हाथ, ७—८ जघा, १६८ अग अगुली आदी उपाग और नखादी अगोपाग × जो कर्म जीवको दूसर भवमें ले जाय सो अनापुर्वी

१ शूभ विहाय गती (राजहंस जेसी चाल) २ अशुभ विहाय गती (उंटमे जेसी चाल) यह ६५ पिंड प्रकृति हुइ और ६६ पराघात नाम—अपने शरीरसे दूसरेकी घात होवे (सर्प वत्) ६७ उस्वास नाम ६८ अगुरु लघू नाम (लोह पिंड जैसा भारी होकर भी फुल जैसा हलका लगे) ६९ आताप नाम (सुर्य जेंसा तेजस्वी)७० उद्योत नाम (चन्द्र जैसा शीतल) ७१ उपघात नाम (अपने शरीरसे आपही मरे (रोझ पशूवत्) ७२ तिर्थंकर नाम ७३ निर्माण नाम ७४ त्रस नाम ७५ वादर नाम ७६ प्रत्येक नाम ७७ पर्याप्ता नाम, ७८ स्थिर नाम ७९ शूभ नाम ८० सौग्य नाम ८१ सुस्वर नाम ८२ आदेय नाम ८३ जशो कीर्ति नाम ८४ स्थावर नाम ८५ सुक्ष्म नाम ८६ साधारण नाम ८७ अपर्याप्ता नाम ८८ अशूभ नाम ८९ अस्थिर नाम ९० दौर्भाग्य नाम ९१ दूस्वर नाम ९२ अनादेय नाम ९३ अजसोकीर्ति नाम यह ९३ तथा इसमें दश बंधकी प्रकृति मिलानेसे १०३ नाम कर्म की प्रकृती होती है

७ गोत्र कर्मके दो भेद –१ ऊंच गोत्र २ नीच गोत्र, ऊच गोत्र ८ प्रकारे बांधे –१ जाइ अमयेण—जाति (माताका पक्ष) का मद (अभीमान) नहीं करे २ कूल अमयेणं—कूल (पिताका पक्ष) का मद नहीं करे ३ वल अमयेण—वल [पराक्रम] का मद नहीं करे ४ रुव अमयेण रुपका मद नहीं करे ५ तव अमयेणं–तपस्याका मद नहीं करे ६ सूय अमयेण–स्रुत (बूद्धी) का मद नहीं करे ७ लाभ अयमेणं–लाभ (प्राप्ती) का मद नहीं करे ८ इस्सरी अमयेणं इश्वरी (मालकी) का मद नहीं करे यह ८ अभीमान नहीं करे तो ८ गुणकी प्राप्ती होवे–१ जाइ विसिठि–जाति उत्तम पावे २ कूल विसिठि–कुल, उत्तम पावे ३ वल विसिठि वलवंत होवे ४ रुव विसिठि

रुपवंत होवे, ५ तव विसिठि—तपस्वी होवे ६ सुय विसिठि—विद्वान होवे ७ लाभ विसिठि—चाहिये सो मिले ८ इस्सरि विसिठि बहुत समूदाय (परिवार) का मालक होवे यह ८ लाभ होए २ नीच गात्र कर्म ८ प्रकारे बाधे उपर कही सो ८ ही वस्तुका अभीमान करे तो नीच गोत्र उपराजे पीछे ८ प्रकारे भोगवे उपर कही हुइ आठ ही बात की हीनता नीचता पावे

८ अतराय कर्म ५ प्रकारे बाधे—१ दानातराय—किसीको दान नहीं देवे तो ❀ २ लाभातराय किसीकी आवकमें हरकत करे तो ३ भोगातराय—किसीको वस्त्र भूषणकी अतराय देवे तो, ४ उपभोगा तराय—किसीको खान पानकी अतराय करे × ५ वीर्यातराय धर्म ध्यान नहीं करने देवे, सयम नहीं लेने देव तो यह ५ प्रकारके काम करनेसे ५ दुर्गुण होते हैं —वो १ दान नहीं दे सक्ता है, २ लाभ नहीं कमा सक्ता है, ३ ४ भोग (एक वक्त भोगवनेमें आवे सो) उप भोग (वार २ भोगवनेमें आवे सो) नहीं भोग सक्ता है और ५ धर्म ध्यान, तप-संयम प्राप्त नहीं होता है

यह ८ कर्म वाधने, और भोगवनेकी रीति जानना
यह सर्व ज्ञानवरणीकी ९, दर्शनावर्णीकी ६, वेदनीकी २२ मो

❀ अर्थी भी कितनेक हीणाचारी साधुका दान देनेकी मना करते है, और कितनेक साधु छोड दूसरेको दान देनेकी मना करते हैं वो दानां तराय कर्म बाधते है सुयगडांगजीमें तो हिंसकको भी दान देना निषेध करेगा, उसे अतरायका देनवाला, और प्रशंसा करनेवालको हिंसक कहे है

गाथा—जेय दाण पससन्ती धय मिच्छन्ती पाणीणा;
जेय दाणा पडिसेधन्ती, अतराय करती त

× उपदेश दे कर वैराग्य भावमें किसे भोग उपभोग छुडावे तो, तथा दया नीमित छोडाय तो अतराय नहीं समझना

इनीकी ९, आयुष्यकी १६, नामकी ८, गोत्रकी १६, अंतरायकी ५ सर्व मिलकर यह ८५ प्रकृती वधकी हुइ, और ज्ञानवरणीकी १०, दर्शनम वरणीकी ९, वेदनीकी १६ मोहणीकी ५, आयुष्यकी ४, नामकी २८, गोत्रकी १६, अतरायकी ५, ये सर्व मिलकर ९३ भोगवनेकी यों वध की और भोगवने की दोनो मिलकर सर्व १७८, तथा नाम कर्मकी १०३ मिलानेसे २८१ प्रकृती हुइ ऐसे आठ कर्मका वध वाधे सो ' प्रकृती वध '

२ स्थिती वध सो १ ज्ञानवरणी, २ दर्शनावरणी, और अतराय इन तीन कर्मकी स्थिती जघन्य अतर मुहुर्तकी, उत्कृष्टी - तीस क्रोडा क्रोड सागरकी अवाधा * काल तीन हजार वर्षका ३ साता वेदनी कर्मकी—जघन्य २ समयकी (इरियावही क्रिया आश्रीय) उत्कृष्ट १५ क्रोडा क्रोड सागरकी अवाधा काल जघन्य अतर मुहूर्त उत्कृष्ट १॥ हजार वर्षका और, असाता वेदनीकी जघन्य अंतर मुहूर्त, उत्कृष्ठ तीस क्रोडा क्रोड सागरोपमकी अवाधा काल तीन हजार वर्षका ४ मोहनी कर्मकी—जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट ७० क्रोडा सागरोपमकी अवाधाकाल जघन्य अतर मुहुर्त,, उत्कृ सातहजार वर्षका ५ आयुष्य कर्मकी गती प्रमाणे जाणना नाम और गोत्र कर्म की—जघन्य आठ मुहुर्तकी, उत्कृष्ठ २० क्रोडाक्रोड सागर अवाध काल दो हजार वर्षका यह आठ कर्मकी स्थिती वाधे सो ' स्थिती वध,

३ अनुभाग वध सो ज्ञानावरणीने अनत ज्ञान गूण २ दर्शनावरणीने अनत दर्शन गुण ३ वेदनीने अनत अव्यावाध आत्मिक सुख ४ मोहनीने अनत क्षायक सम्यक्त्व गुण ५ आयुष्यने

* कम वंधे पीछे उदय आनेके पहिले बीचमें जितना काल जाय उसे अवाधा काल कहते है

अक्षय स्थिति गुण ६ नाम कर्मने अमूर्ती गुण ७गोत्रकर्मने अगुरु लघू गुण, और८ अतराय कर्मने अनत शक्ती गुणको ढांक रखे हे किसीके तीव्र रससे, और किसीक मद रससे तिव्र रसवाले तो एकेंद्रीयादि, तथा अभव्य जीव परवशपणे, पडे हे और मंद रसवाले सम्यक द्रष्टी कुछ ऊंचे आ रहेहें जैसे २ जिनसे कर्मके दालियेका अनुभाग बांधा हे, सो 'अनूभाग वंध '

४.प्रदेश वंध ' कर्म पुद्गलके दल चैतनीक प्रदेश परछ्या रहे हे, जैसे १ ज्ञानावरणी तो सूर्यके आगे बादलकी घटा जैसा २ दर्शना वरणी आखके पाटे जैसा, ३ वेदनी सो साता वेदनी तो मधू खरडे खड्ग जैसा, और असाता वेदनी अफीम खरडे खड्ग जैसा ४ मोहनी मद्य (दारु) पान जैसा ५ आयुष्य कर्म खोडा जैसा ६ नाम कर्म चित्रकार जैसा ७ गो कर्म कुंभकार जैसा और ८ अंतराय कर्म सो राजाके भंडारी जैसा आडे आ रहे हें

इन चार बधके उपर द्रष्टातः—जेसे मोदक (लाडू)सूठ, मेथी, प्रमुख द्रव्यसे बनया हुवा १ वायू तथा पित्तका नाश करे उसे प्रकृती (स्वभाव) कहना २ वा मोदक महीने दो महीने रहे उसे स्थिति (उम्मर) कहना ३ वो मोदक कडुवा तीक्ष्ण होवे उसे अनुभाग (रस) कहना और ४ वो मोदक कोइ थोडे द्रव्यके सयोग से, कोइ विशेप द्रव्य के सयोगसे बनाया उसे प्रदेश[प्रमाण] कहना? इस द्रष्टांसे चार ही बंधका स्वरुप जानना

" मोक्ष तत्व "

९ ' मोक्षतत्व ' ए पूर्वोक्त चार बधसे बधा हुवा जीव, बंध तोडकर मुक्त (छूटा) होवे, उसे मोक्ष कहना यह मोक्ष चार कारण से मिलती हे

गाथा—' नाणेण जाणेइ भाव, दंशणेणं सद्दह, ॥१॥
चारीत्त परिगिन्हए, तवेणं परि सुझइ '

१ ज्ञान करके—नित्या नित्य, शाश्वती अशाश्वती, शुद्धाशुद्ध हिताहित, लोकालोक, आत्मानात्मा इत्यादि सर्व वस्तुका स्वरुप जाने २ दर्शन करके—ज्ञान करके जाणा हुवा स्वरुप दशण (श्रधा) करके सचा (तह मेव) श्रधे शंकादि दोष रहित रहे ३ चारित्र करके,—दर्शन करके श्रधे हुवे, स्वरुपको जाणने योग्य जाणे, आदरने योग्य आदरे, और छोडने योग्य छोडे तथा चो गतिस तिरकर पाचमी मोक्षगति जानेका उपाय आदरे ४ तप करके—चारित्र करके आदरा हुवा उपाय, शुद्ध वर्धमान परिणाम करके निभावे—पार पुगावे इन चार कारणसे मोक्ष मिले (इसका विशेष विस्तार तीसरे प्रकरणसे जाणना

नवतत्वकी चर्चा

ये नवही तत्वका ' द्रव्यार्थी ' नयस दो तत्वमें समावेश होता है—यथा जीव ता जीव ही है, और अजीव अजीव ही है बाकी के सात तत्व है सा ' पर्यायार्थिक ' नय से इन दोनोंसे उत्पन्न हुये है इसमें मूख्यता और गौणताका दोन पक्ष धारण किया जायगा जैसे पुण्य, पाप, आश्रव, और बंध, यह चार ही तत्व मूख्यता से अजीव से उत्पन्न हुये हैं क्योंकि —यह ४ कर्म तत्व है, कर्मसे उत्पन्न होते हैं कर्मरुपी चोफरसी प्रयोगसा (जीवके ग्रहे हुवे) पूद्गल (चर्म चक्षुको दिसे एसे) हैं और व्यवहार नयकी अपेक्षा—गौणतासे जीव पर्यायमें भी मिलते है परतू इन चार ही तत्वोंका निज स्वरुप विचारते, यह ' हेय ' पदार्थ (छोडने योग्य) है, कैसे ही हो तो भी यह चार कर्मोंका बंध करते है और कर्म प्र-

हित—जीव ही इन चारको निपजा सके है तथा संवर निर्जरा, और मोक्ष, यह तीन धर्म तत्व है ये जीवके निज गुणसे निपजते हैं इसलिये इनको जीवही कहना तथा इन तीन ही का आत्मासे क र्म रुप पुद्गलोंको दूर करनेका स्वभाव है इसलिये यह ' संग्रह नयसे ' अजीव (पुद्गल) में भी मिलते हैं परंतु मुख्यता से धर्म तत्व है, सो जीव गुण है, अरुपी है इसलिये निश्चय नयकी पेक्षा से इनको जीव ही कहना यह ९ तत्वका, २ तत्वमें समावेश हुवा

प्रश्न –जीव के अशुभ भावको आश्रव कहते हैं, इसलिये आ श्रवको भी जीव कहें तो क्या हरकत है?

समाधान –जीव के अशुभ भाव सो आश्रव यह बात सत्य हैं परन्तु अशुभ भाव के कर्त्ता कर्म ही है क्यों कि कर्म विन अशुभ भाव होता नहीं हैं जो होता होवे तो सिद्ध भगवतको भी आश्रव ल गना चाहिये सो सिद्ध भगवतको तो नहीं हैं इस विचारसे निश्चय होता है कि जीव कर्मका सजोग अनादि कालका है, सकर्मी जीव रु पी हाने के कारण स आश्रवको ग्रहण करता है, दृष्टात जैसे पाणी तो ठंढा है, परन्तु अग्नी के योगसे उष्ण होता है उस उष्णता की कर्ता अ ग्नि है, तैंसे आश्रव के कर्त्ता कर्म है कर्म अजीव है, तो आश्रव भी अजीव हुवा

प्रश्न–तो संवर भी अजीव हुवा, क्यों कि ' शुभयोग सवर ' क हा है योगकी प्रवृति कर्मोमे होती है इस लिये सवरको भी अजीव कहना

समाधान –आश्रव अजीव है, इसमें तो कुछ संशय ही नहीं और पच्चीस क्रिया भी आश्रव में ली है, सो पच्चीसमी इरीया वही क्रिया शुभ जोगसे होती हैं, तथा पहिले गूण ठाणेमें शुभ जोग तो है, परन्तु

संवर नहीं है, इसलिये शुभ योगको संवर कहना नहीं सवर तो योग का निरुधन—स्थिरताको कहते हैं और योगका निरुधन—स्थिरता करनेवाला जीव है, इसलिये सवरको जीव अथवा इती सक्षेपमें तत्व विचार

"सात नय"

समुचयमें नय दो हैं—१ निश्चय और २ व्यवहार व्यवहार उसे कहते हैं जिससे बाह्यसे वस्तुका स्वरुप पेठाणा जाय, तथा जो अपवाद मार्गमे लागू होती है और २ निश्चय नय सो वस्तु के अतीरक (निज) गुणको पेछाणे, तथा जो उत्सर्ग मार्गमें लागू होव विशेपमें नय सात होती हैं—१ नेगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र, ५ शब्द, ६ समभीरुढ, और ७ एव भूत अव इनका विस्तार कहते है—

१ 'नेगम नय' उसे कहते हैं कि जिसकी एक गम नहीं, अनेक गम, अनेक प्रमाण अनेक रीत, अनेक मार्ग करके एक वस्तुको माने सामान्य माने अर्थात् कोइ वस्तुमे उसके नामका अश [लेश] मात्र गुण होय तो भी उस पूर्ण वस्तु माने विशेप माने अर्थात् जैसा जिस्का नाम वैसाही उसमें पूर्ण गुण होवे उसे भी वस्तु माने गये कालमें कार्य हुवा उसे, वर्तमान कालमें हो रहा उसे, और आवते कालमें कार्य होवेगा उसे, ये तीन कालके कार्यको सत्य माने और निक्षपे, चार ही माने

२ संग्रह नय' उसे कहते हैं—जो वस्तुकी सत्ताको ग्रहण करे, जैसे एक नाम लेनेसे सर्व गुण पर्याय परिवार सहित ग्रहण करे, थोडेमें वहूत समजे दृष्टान्त—किसी साहुकारने नोकरसे कहा कि—दांतण लावो तव वो नोकर एक शब्दके अनुसारसे दातण, झारी,

कांच, कंगा मिस्सी, सलाइ, सुरमा इत्यादि वस्तु ला धरी फिर सेठने कहा, पान लावो; तब वो पान सुपारि, कथा, चूना, मसाला इत्यादि लाकर धरा ऐसे ही किसीने बगीचेका नाम लिया, उसे सुण संग्रह नय वाला झाड, फल, फूल, वगैरा सब समज गया इस नय वाला सामान्य मानता है, विशेष नही माने, क्योंकि थोडेमें समजे तो विशषेकी क्या जरूर? यह तीनी कालकी बात और निक्षेपे चार ही मानता है

३ ' व्यवहार नय ' वस्तूका बाह्य (प्रत्यक्ष) स्वरूप देखे उसी गुणमय उस वस्तूको माने देखते हुये गुणको माने परतू अंतरके प्रणामोंकी इसे कूछ जरूर नहीं इसको तो आचार और क्रियाका ही विशेषत्व है जेसे नैगम नय वालेको अतर शूद्धी विन के अश की और संग्रह नयवालेको वस्तुके सत्ताकी जरूर है, तैसे इसे भी क्रिया और आचारकी जरूर है प्रथत —जैसे व्यवहारमें कोकिला काली, तोता हरा, हंस श्वेत दिखते हैं उसे व्यवहार वाला फक्त एक रंगी ही मानेगा और निश्चयमें उनमें रग पांचही पाते हैं इस नय वाला सामान्य नहीं माने, विशेष माने निक्षेपे चार ४ और तीन ही कालकी बात माने

४ ' ऋजु सुत्र नय ' उसे कहते हैं, ऋजू—सरल, सुत्र—सुत्रना-चिंतवन अर्थात् इसका सदा सरल विचार रहता है यह भी सामान्य नहीं माने, विशेषको मानता है, अतीत [गये] अनागत (आते) कालकी बातको नहीं माने, उसे निसार जाणे फक्त वर्तमान कालकी बातको ग्रहण करता हैं जैसे किसीने कहा की सो वर्ष पहिले सोनेये की वृष्टी हुइथी, तथा सो वर्ष पीछेसोनेयेकी वृष्टी होगी इन दोनों बातको इस नयवाला निसार निकम्मी समजता है,

क्योंकि इसमे अपना कोनसा मतलव हुवा ? यह आकाशके फूल जे सी वात है यह एक भाव निपेक्षेको माने द्रष्टांत-जैसे कोइ सेठ सामायिकमें वैठे थे, उनको कोइ वूलाने आया, तव उनके वेटकी वहु वडी जाणकार विचक्षण थी, उसने उसको जवाव दिया कि सेठजी चमार के वहा जूते खरीदने गये हैं वो चमारके वहा देख आया, और कहने लगा, वाइ सेठ चमारकी दुकानपर तो नहीं है तव वहुने कहा, पसारी की दुकान पर सुठ लेनेको गये है वो वहा भी देख आया, सेठ नहीं मिले, तव थवरा कर कहने लगा वाइ ! मुजे नाहक क्यों चकर देती है ? सेठ कहा है ? सच कहे इतनेमें तो सेठ भी सामायिक ठिकाणे कर वाहिर आये, और वहू पर खपा (नाराज) होकर कहने लगे, तूं इतनी शाणी हो कर गपोडे क्यों मारती है ? वो विनय सहित वोली कि—आपका सामायिकमें वैठे २, चमार और पसारीकी दूकान पर मन नहीं गया था क्या ? यों सूण सेठजी चमक कर कहने लगे हां ! मन तो गया था, तरेको कैसे मालुम पडी ? वो वोली आपकी अगचेष्टासे * इस द्रष्टातसे ऋजु सुत्र नयवाला भावका ही श्रेष्ट मानता हैं

गाथा—वत्थ गन्ध मलकार, इत्थीओ उसयणाणि य ।

अह च्छंदा जे न भुजंती, न स चाइति वुचइ ॥

अर्थ—जो सर्व त्यागी होकर श्रेष्ट—वस्त्र—अलकार—(भूषण) स्त्री—सेज्या इत्यादि भोगवते तो नहीं हैं, परंतु अभिलाषा करते हैं उनको त्यागी नहीं कहना

गाथा—जे य कंते पिय भोय, लद्धे वी पीठ कुव्वइ ।

से इणो चयइ भाए, सेउ चाइतीं वुचइ ॥

---

* कोइ आर्मा स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुवा कहते हैं

अर्थ—जो ग्रहस्था वासमें रहकर, कत (वलभ) कारी, प्रियका री इच्छित भोगका संजोग मिलते ही, भोगवते नहीं है उनको त्यागी कहना (श्री दश वैंकालिक सूत्र अ २) यह ऋजु सुत्र नय का वचन जानना यह एक भावको श्रेष्ट माने

५ ' शब्द नह ' उसे कहते हैं कि जैसा शब्द (नाम) होवे, वैसा ही उसका अर्थ ग्रहण करे एक वस्तूके अनेक नाम होवे तो भी वो तो उस वस्तुके शब्द पर ही निगह रखता है, उस वस्तुमें उसके नाम के गूण होवे, या न होवे, जैश सकेंद्र, पुरेंद्र, सुचिपति, देवेंद, इत्यादि शब्दका एक ही इन्द्र अर्थ ग्रहण करता है यह लिंग शब्दमें भेद नहीं माने चौथी नय की तरह, यह भी सामान्य नहीं माने फक्त वर्तमान कालकी वात माने, निक्षेपा एक पाव ' माने इस में फक्त शब्दका विशेपत्व लिया है

६ ' समभीरुढ नय ' शब्दमें आरुढ हो कर उसका अर्थ करे. उस के पूर्ण गुण नहीं प्रगटे होवे तो भी कभी न कभी तो, प्रगटेंगे मतलब एक अस वस्तूका कमी पणे को भी वस्तु माने जैसे अरिहतको भी पहिले प्रकर्णमें सिद्ध कहकर बोलाये हैं, वो इस नयका वचन है पाचमी नय से इसमें इतना विशेप है कि, यह शब्दका अर्थ कायम करे जैसे सकेंद्र कहता—जो सक्र सिंहासन पर बैठकर अपनी शक्तिसे न्याय करे, सर्व देवताओंको अपनी अनुज्ञामें चलावे, तब सकेंद्र कहना- पुरेंद्र कहता—हाथमें वज्र धर देवताके वंडको विदारे सो पूरेंद्र सूची पती कहता—इद्राणियों की सभामे बेठ के ३२ विधिके नाटक देखे, उस वक्त सुचिपति कहना देवेंद—सामानिक आतमारक्षक तीन प्रपदा इत्यादि देवताओंकी सभामें बैठे, उसवक्त देवेंद्र कहना यह लिंग शब्दमें भद मानते हैं सामान्य नहीं माने, विशेप माने फक्त वर्तमान

कालकी बात, और निक्षेपा एक 'भाव' माने

७ 'एवं भूत नय' वाले जैसा जिसका नाम, वैसा ही जिस का काम, और प्रणाम, यह तीन ही संपूर्ण होय, तथा वस्तु अपने गुणमें पूर्ण होए, और उस गुण मुजब ही क्रिया करे, उस वस्तुके द्रव्य गुण, पर्याय, तथा वस्तु धर्म, सर्व प्रत्यक्षमें दिखते होवें, उसको वो वस्तु कहेगा और एक अंश भी कमी हुवा तो, वो वस्तु नही कहेगा. इस नयवाले सामान्य नहीं माने, विशेप माने वर्तमान कालकी बात, और निक्षेपा एक 'भाव' माने द्रष्टात-जैसे सर्केंद्र सिंहासन पर बेठकर न्यय तो करते हैं, परंतु उनका मन देवीयोंकी तरफ है तो उनको सर्केंद्र नहीं कहना, सुची पती कहना ऐसे ही सर्व ठिकाणे जानना जैसा उपयोग होवे, वैसा ही कहना जैसे धर्मास्तीकाय असंख्यात प्रदेश युक्त होय उसे ही धर्मास्ती काय माने, दो चार प्रदेशको धर्मास्ती नहीं माने इस नयवालेकी द्रष्टी एक उपयोग तरफ रहती है (कोइ सामायिक वाले सेठकी बहुका द्रष्टांत यहां कहते हैं)

अब सात ही नयके उपर समुचय द्रष्टांत कहते हैं,-किसी किसीको पूछा कि, तुम कहा रहते हो ? तब उसने कहा कि, में लोकमें रहता हूं तब अशुद्ध नैगम नयवाला बोला की लोक तीन हैं तुम किस लोकमें रहते हो ? तब शुद्ध नैगम नय वालेने जवाब दिया की में त्रीछे लोकमें रहता हू. फिर पुछा की तिरछे लोकमें तो द्विप समुद्र असंख्याते हैं, तुम किस द्विप समुद्रमें रहते हो ? उसने कहा में जम्बु द्विपमें रहता हूं फिर उसने कहा कि जबु द्वीपमें तो क्षेत्र बहोत हैं तुम किस क्षेत्रमें रहते हो ? तब विशुद्ध नैगम नयवाला बोला भरत क्षेत्रमें रहता हूं फिर उसने पुछा कि भरत क्षेत्रमें खंड छे हैं, तुम किस खंडमें रहते हो ? तब अती शुद्ध नैगम नय वाला बोला,

दक्षिण भरतके मध्य खंडमें रहता हू फिर पूछा, मध्य खंडमें देश बहुत हैं, तुम किस देशमें रहते हो ? जवाब दिया -में मगधदेशमें रहता हूं फिर पूछा, मगधदेशमें ग्राम वहोत हैं, तुम किस ग्राममें रहते हो ! उसने कहा, में राजग्रही नगरीमें रहता हूं. फिर पूछा, राजग्रहीम तो ११ पाडे हैं, तुम किस पाडे (पुर) में रहते हो ? उसने कहा -में नालंदी पाडे मेंरहता हुं फिर पूछा, नालंदी पाडेमें सादेतीनक्रोड घर हैं, तुम किस घरमें रहते हो ? जवाब दिया-में बीचके घरमें रहता हूं. इतना सुन नैगम नयवाला चुप रहा तब संग्रह नयवाला बोला, बीचके घरमें तो चशम (सह) वहोत हैं इसलिये ऐसा कहो मेरे बिछने जितनी जगह है उसमें रहता हूं तब व्यवहार नयवाला बोला कि क्या सब बिछानेमें रहते हो ? इसलिये ऐसा कहो कि में मेरे शरीर ने जितने आकाश प्रदेश ग्रहण किये हैं, उसमें रहता हूं तब ऋजू सुत्र नयवाला बोला, शरीरमें तो हाड, मॉस, चर्म, केस, तथा असख्य सुक्ष्म स्थावर, बादर वायू, तथा वेंद्री [क्रिम] प्रमूख बहूत रहते हैं इसलिये ऐसा कहो कि-मेरी आत्माने जितने प्रदेश अवगाहे (ग्रहण किये हैं) उसमें रहता हूं तब शब्द नयवाला बोला कि आत्म प्रदेशमें तो धर्मास्तीआदिक पंचास्ती के असख्य प्रदेश हे, इसलिये ऐसा कहो कि म मेरे स्वभावमें रहता हूं तब समभीरुढ नयवाला बोला की, स्वभाव की तो क्षिण २ में प्रवृत्ति होती है, तथा योग उपयोग लेश्या, इत्यादि केइ वस्तू हैं इसलिये ऐसा कहा की में मेरे निजात्म गुणमें रहता हूं तब एवभूत नयवाला बोला कि —गुण तो ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तीन है, और भगवंतने तो फरमाया है कि-एक समय वो ठिकाणे न रह सके, इसलिये ऐसा कहो के में मेरे शुद्ध निजात्म गुणका, जिस वक्त जो उपयोग प्रवर्ते, उसमें रहता हूं यह द्रष्टात अनुयोग द्वार सुत्रमें हैं

द्रष्टांत २ रा—कोइ नैगम नयवाला वडाइ (सुतार) काष्ठ लेने को जाताथा, तव व्यवहार नयवालेने प्रश्न करा, कहा जाते हो ? उस ने कहा पायली (अनाज मापनका माप) लेनेको जाता हूं फिर लकड काटती वक्त, लकड ले घर आती वक्त, और पायली घडती [बनाती] वक्त, जिस २ वक्त पूछा, उस २ वक्त उसने पायली बनाता हुं, ये ही जवाब दिया, की पायली बणाइ है इतना सुण व्यवहार नयवाला चुप रहा तव संग्रह नयवाला वोला की अनाजका संग्रह करो तव पायली कहना ऋजु सूत्र नयवाला वोला की धानका संग्रह करनेसे पायली नहीं कही जाती है, परत् धानका माप करोगे तव पायली कही जायगी शब्द नयवाला कहता है कि धान मापकर एक दो गिणोगे तव पायली कहना तव समभीरुढ नयवाला वोला कि—किसी कार्यसे माप होगा तव पायली कही जायगी तव एवमूत नय वालेने कहा कि वो मापती वक्त उस मापमें उपयोग होगा, तव ही पायली कही जायगी ऐसे अनेक द्रष्टांतोंसे सात ही नयका स्वरूप जाणना

इन सात नयसे सर्व वस्तुओंको माने सो सच्चा जैन मती और जो एक नय ताणे उसको अन्यमती जाणना क्यों कि एक वस्तुसे पुर्ण कार्य नहीं होता हैं हरेक कार्य निपजानेमें जितने उसमें संयोग की जरूर है, उतने संयोग मिले तव वो कार्य पूर्ण निपजता है जैसे—किसीने पूछा अनाज किससे निपजता है ? तव एकने कहा पाणीसे दूसरेन कहा-पृथवीसे, तीसरेने कहा—हलस, चौथेने कहा—बादलसे, पांचमेने कहा—बीजसे, छट्टेने कहा—ऋतुमे, और सातमेने कहा कि—नशीवसे निपजता है. अव कहोजी सात ही में कौन सच्चा, और कोन झूठा ? जो सात अलग २ रहे तो कोइ भी कार्य नहीं निपजे

इसलिये सात ही झूठे, और सात ही एकत्र होवे तो कार्य वक्तसिर सिद्ध होवे, इसलिये सात ही सच्चे ऐसे ही हरेक कार्य सात नयके समागमसे होता हैं ऐसा जाण सात ही नय की अपेक्षासे निरापक्ष वचन होवे सो ही सच्चा

इन सात नयमें १ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार और ऋजु सूत्र यह ४ व्यवहारमें हे और ५ शब्द, ६ समभीरुढ़, ७ एवभूत, यह तीन निश्चयमें है और कोइ वक्त ऋज सुत्र नयको निश्चयमें भी ग्रहण की जाती है जिससे वस्तुको मुख्यता पणा प्रति भास होवे सो व्यवहार नय और जिससे निज स्वभाव भाप होवे सो निश्चय नय ॥

॥ ७ नय ९ तत्व पर उतारते हैं ॥

(१) जीव तत्व

(१) नैकम नयसे—प्रजा प्राणादि सहित शरीर प्रयोगसे (जीवने ग्रहणकियेसो) पुद्गलोंके संयोगसे दिखता है, जैसे वृषभ, गाय, मनुष्य इत्यादि वस्तुओंमें जो गमनादि क्रिया दिखती है, उसको जगत् बोलता ह कि यह 'जीव' हे इस नयने एक अंसको पूर्ण वस्त, मानी, और कारणको कार्य माना २ सग्रह नयसे असंख्यात प्रदेशी अवगाहना वंतको जीव कहते हैं ३ व्यवहार नयसे—इंद्रियोंकी इच्छासे द्रव्य योग, द्रव्य लेशा, को जीव कहे, क्यों कि जीव निकले पीछे, इंद्रियों की सत्ता रहती नहीं हे ४ ऋजु सूत्र नयसे उपयोगवतको जीव कह, *

* उपयोग दो प्रकारके हैं शुभ और अशुभ अशुभ उपयोग मिथ्यात्व मोहनी कर्मके उदय है अजीव है परंतू नयके हिसाबसे जीव गिना हे

५ शब्द नयसे—जहां जीवका अर्थ मिले उसे जीव माने, जैसे गये कालमें जीव था, वर्तमान कालमें जीव है, आवते कालमें जीव रहेगा इस नयवालेने द्रव्य आत्माको जीव माना, क्यों कि तेजस कारमणके प्रयोगसे पुद्गल जीवके साथ अनादि कालसे लगे हैं, और रहेंगे, इस लिये जीव गिणे ६ समभीरुढ नयसे-शुद्ध सत्ता धारक, निज गुण (ज्ञानादि) में रमण करनेवाला, क्षयिक सम्यक्त्वी को जीव माने ७ एवंभुत नयसे सिद्ध भगवंतके जीवको ही जीव श्रधे

२ "अजीव तत्व"

अजीव तत्वके मुख्य में पांच प्रकार होते हैं—१ धर्मास्ती, २ अधर्मास्ती, ३ आकास्ती, ४ कालास्ती, ५ पुद्गलास्ती

प्रथम धर्मास्ती पर सात नय — १ नैगम नय से धर्मास्ती के एक प्रदेशको अजीव माने, क्यों कि उसमें चलण शक्ती देने की सत्ता है २ संग्रह नय से-धर्मास्ती के प्रयोग से पुद्गल सो जड (अजीव) चेतनादि सर्वको चलनेका धर्म भेला है उसे अजीव माने इस ने प्रदेशादि ग्रहण नहीं किये ३ व्यवहार नय से—जीव तथा पुद्गलोंको चलने की सहाय धर्मास्ती के द्रव्य का है परन्तु उसमे षट *गुण

* षट गुण हाणी वृद्धी—१ असंख्यात गुणे अधिक २ असंख्यात गुणे अधिक ३ और अनंत गुण अधिक. यह ३ बोल गुण आश्री जानना तैसे ही संख्यात भाग अधिक २ असंख्यात भाग अधिक और ३ अनंत भाग अधिक यह ३ बोल वस्तुके भाग आश्री जानना जैसे यह ६ बोल अधिकके कहे, तैसेही हीण (कमी) पण के जानना जैसे १ संख्यात गुण हीण, २ असंख्यात गुण हीण, ३ अनंत गुण हीण, ४ असंख्यात भाग हीण, ५ असंख्यात भाग हीण, और ६ अनंत भाग हीण यह छे बोल हीणके या १२ बोल हाणी वृद्धी के जानना यह जीव और अजीव दोनोंमें मिलाते है यह १२ कह इसमें से जिस जगह ८ बोल पावे सो चौठाणा वलिया ६ बोल पावे सो तिठाणा वलिया ४ बोल पावे सो दो ठाण वलिया और १ बोल पावे सो एक ठाणा वलिया जानना

हानी वृद्धी है, सो ही धर्मास्तीका व्यवहार हैं ४ ऋजु सुत्र नय से–जीव या पुद्गल, जो वर्तमानकालमें गती गुण करे, उसे धर्मास्ती कहे परन्तु अतीत कालका गुण विणस्या, और आगमिक कालका नहीं उपज्या, उसे यह नहीं मानें ५ शब्द नय से–धर्मास्ती के गुणका जो स्वभाव है, उने धर्मास्ती कहे इसे देश प्रवेश की कुछ जरूर नहीं, फक्त स्वभाव की मुख्यता है ६ समभीरूढ नय से–ज्ञानादिक के उपयोगसे जाणे, जो यह धर्मास्तीका गुण है, उसे धर्मास्ती कहे ७ एवमूत नय से—धर्मास्ती की *सप्तभंगी, सप्तनय, चार प्रमाण इत्यादिसे धर्मास्तीके संपूर्ण गुण सिद्ध होवे उसे धर्मास्ती माने

दूसरी, अधर्मास्तीमें भी धर्मास्ती की तरह व्याख्या करनी, वि

* सप्त भगी १प्रत्येक पदार्थ अपेन २ द्रव्य क्षेत्र कालभावकी अपेक्षासे आस्ति रुप है, इसलिये स्यात् असति २वोही पदार्थ पर।द्रव्यादि की अपेक्षा से नासति रुप है इसलिये स्यात् नासति ३ सर्व पदार्थ अपने २ अपेक्षासे तो आसति रुप है और पर की अपेक्षा से नासति रुप है इसलिये स्यात् असति स्यात् नासति ४ पदार्थोका सरुप एकांत पक्ष से जैसा का तैसा कहा नहीं जाय; क्यों कि जो आसति कहे तो नाससति का और नासति कहे तो असति की अभाव आवे, इस लिये स्यात् अवक्तव्य ५ एकही समयमें सर्वस्व पर्यायोंका सद्भाव आसतित्व हैं, और पर पर्यायोंका सद्भाव नासतित्व हैं यह दोनोही भाव एकही वक्त कहे नहीं जाय क्यों कि आस्तितव कहे तो नासति का अभाव है इसलियस्यात् आसति अवक्तव्य ६ इसी तरह जो नासतित्व कहें तो आसतिका अभाव आवे इसलिये स्याद् नासति अवक्तव्य ७ असतित्व कहनेसे नासति तत्व का अभाव आवे और नासतित्व कहनेसे आसति तत्वका अभाव आवे और पदार्थ दोनो कालमे आसति नासति दोनोही है। परन्तु कहे जाव नहीं क्यों कि वाक्य तो क्रमे वृती है इसलिये स्यात आसति नासति अवक्तव्य होय यह ७ सप्त भगसे सर्व पदार्थोका स्वरुप समजना इससे ज्यादा भांगे कदापि न होते हैं

शेप इतना ही कि धर्मास्तीके चलण गूण कहा, वैसा यहां सर्व ठिकाणे अधर्मास्तिका स्थिर गुण कहना

तीसरी आकास्ती को १ नैगम नयसे-एक आकाश प्रदेशको आकास्ती कहे, २ सग्रह नयसे 'एगे लोए' (एकलोक) एगा लोए (एक अलोक) इनको आकास्ती कहें, सब देश नहीं माने ३ व्यवहार नयसे-ऊचे, नीचे, तिरछे लोकके आकाशको आकास्ती कहे, ४ ऋजुसूत्र नयसे-आकाश प्रदेश में जो जीव पुद्गल रहे, उसमें जो प दगूण हानी वृद्धी प्रमाण रुप क्रिया करे, उसे आकास्ती कहे ५ शब्द नयसे अवगाह लक्षण पोलाडको आकास्ती कहे, ६ समभीरुढ नयसे-विकाश गुणको आकास्ती कहे, ७ एवमूत नयसे-आकाशके द्रव्य, गूण, पर्याय, व्यय ध्रुव, उत्पात, इनके ज्ञायक (जाण) को आकास्ती कहे,

चौथी कालास्ती १ नैगम नयसे - सयमको काल कहे क्यों कि तीनकालके सयमका गुण एक ही है २ सग्रह नयसे-एक सयम से लगाकर यावत् काल चक्रको काल कहे, ३ व्यवहार नयसे-दिन रात, पक्ष, मास, वर्षादिकको काल कहे, इस नयवाला अढाइ द्विप बाहिर काल नहीं माने, क्यों कि वाहिर घडीयादिक नहीं हैं, ४ ऋजुसूत्र नयसे-वर्तमान समयको काल कहें, अतीत अनागत न माने, ५ शब्द नयसे-जीव अजीव ऊपर पर्यायको पलटाता प्रवर्ते उसे काल कहे, ६ समभीरुढ नयसे-जीव पुद्गल की स्थिती पूरी करने सन्मुख होवे, उसे काल कहे, ७ एवमुत नयसे-कालके द्रव्य गुण पर्यायके ज्ञायकको काल कहे

पांचमी पुद्गलास्तीकाय १ नैगम नयसे-पुद्गलके संध की एक गुण की मुख्यता ले कर काले पुद्गलके वर्ण गध, रस स्पर्श, इनके

एक अस ग्रहण करे उसे पुद्गल कहे २ संग्रह नयसे–अनंत पुद्गल के समूह रुप पिंडको पुद्गल कहे ३ व्यवहार नयसे–विससा (नाम नही ऐसे पुद्गल) भिससा (जीवने ग्रहण, करके छोडे सो पुद्गल,) पगसा (जीव ग्रहण कर रखे सो पुद्गल,) इनका व्यवहार देखे वैसा कहे ४ ऋजुसुत्र नय–वर्तमान कालमें पुद्गलको पूरन—गलन होवे उसे पुद्गल कहे, ५ शब्द नयसे—पुद्गलकी पुरण गलण रुप जो क्रिया है उस पुद्गलास्ती कहे, ६ समभिरुढ नयसे–पुद्गल की पडगूण होणी वृद्धी, व उत्पात, व्यय, ध्रुवता उसे पुद्गल कहे, ७ एवभूत नयसे–पुद्गलोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, इनके द्रव्य * गुण पर्यायके ज्ञायकका उसमें उपयोग है, उस वक्त पुद्गलास्ती कहे यह अजीव तत्वके सात नय हुवे

३ "पुन्य तत्व"

[१] नैगम नयसे–पुन्य रुप कार्यका कारण, यहां शुभपुद्गलोंका संयोग, जैसे किसीके यहा धन दुपद, चौपदादि, बहुत रर्द्धि देखकर कहे कि यह पुण्यवत, इनको पुन्यके योगसे इतना सयाग बना है इसने कार्यको कारण मानके, शुभ पुद्गलोंको पुन्य माना २ सग्रह नयसे—ऊंच कुल जाति, सुंदर रुप, साता वेदनी इत्यादि पुद्गलोंकी वर्गणाको देखकर पुन्य माने इसने जीव पुद्गलोका भेद गिने ३ व्यवहार नयसे—शारीरिक मानसिक सुख आरोग्यता इत्यादि अवस्था देख पुन्यवत कहे क्यों कि यह पुन्य प्रकृतिका व्यवहार इंद्रियोंके विषयसे दिखता है ४ ऋजूसूत्र नयसे–शुभ कर्मके उदयसे संपूर्ण मनोज्ञ वस्तु प्राप्त हुई, जहा जाय वहा आदर पाय, इच्छित व

* द्रव्य दो:—१जीव द्रव्य २ अजीव द्रव्य गुण सो जीवके ज्ञानादि, अजीवके चलनादि पर्याय दो—आतमभाव और २ कर्म भाव अजीवके द्रव्य गुण पर्यायमें अजीव और जीवमें जीव ग्रहण करना,

स्तका संयोग बने, इत्यादि देखकर कहे कि यह पुन्यवंत है ५ शब्दे नयस—चतनार्न कालमें सुख भोग रहा है,उसे पुन्यवत कहे [' प्रश्न '—ऋजु सूत्रमें और इसमें क्या फरक पडा ? ' समधान '—ऋ सूत्र नय वाला तीनही कालमें सुख भोगवनेवासेको पुन्यवंत मानता है और शब्द नयवाला तो जिस वक्त सुख भोगेगा उसी वक्त पुन्यवंत कहेगा जैसे कोई चक्रवर्ती निंदमें सोते हैं, उसी वक्त ऋजसूत्र नयवाला तो उनको पुन्यवंत कहेगा क्यों कि उनने गये कालमें सुख भोग, और आवते कालमें भोगेंगे परंतु शब्द नयवाला तो उने पुन्यवंत नहीं कहेगा, क्योंकि निद्रा पापका उदय है जिस वक्त उनकी आत्मा सातावेदनी भोगकर साता मानेगी, उसवक्त पुन्यवंत कहेगा] ६ समभीरूनय—पुन्य प्रकृति के पुद्गल प्रयोगसे प्रगमें आनंदमें लीन हुवा, उसे पुन्यवत कहेगा ७ एवंभूत नय पुन्य प्रकृती के गुण के ज्ञायकको पुन्यवंत कहेगा

(४) "पापतत्व."

पुण्यतत्वकी तरह पाप तत्वको समझ लेना

(५) "आश्रवतत्व"

१ नैगम नयसे—कर्मरुप प्रगमने योग्य पुद्गल को आश्रव कहे २ संग्रह नयसे—मिथ्यात्वादिक पुद्गल, पयोगसे पणे प्रगमणे रुप दलको आश्रव कहे ३ व्यवहार नयसे—अपच्चखार्णाको आश्रव कहे इसमें अशुभ जोगका वेपार सो अशुभ आश्रव और शुभ जोगका वेपार सो शुभ अश्रव यों दोनोको मिलकर प्रवर्ते सा मिश्र आश्रव ४ ऋजुसुत्र नयसे वर्तमानकालमें शुभाशुभ योग वर्ते सो आश्रव

प्रश्न —फक्त योगको ही आश्रव कहा तो फिर मिथ्यात्व, अव्रत,

कषाय, प्रमाद इन चारको क्यों नहीं लिये ? समाधान—मिथ्यात्वादि चार आश्रव तो निमित कारण है और मनादि त्रियोग उपादान* कारण है क्योंकि मिथ्यात्वादि चारहीको उत्पन्न करनेवाले तीन योग-ही है जैसा योग वर्ते वैसा आश्रव होवे इस लिये यहां योगको ग्रहण किये है मिथ्यात्वादि चारहीमें योगको ग्रहण करनेकी सत्ता नहीं है और इन चारहीमें जो जोगका सयोग होय तो कर्म पुद्गलको आकर्षण कर (खैंच) सक्के है

प्रश्न—आत्माके योगसे कर्म पुद्गलको आकर्षण करे है, सो आत्मासे अंतराल वर्ती (दूरके) पुद्गलोंको खेंच सके कि, नहीं ?

उत्तर—दूरके पुद्गल खेंचनेकी सत्ता तो नहीं है परतु आत्म अवगाही पुदगलको ही ग्रहण करे हैं

सुचना—शुभाशुभ योगमें षड्गुण हानि वृद्धि होती है, वहा एकांतपणेका संभव नहीं हैं क्यों कि—एकात शुभ योग और एकांत अशुभ योग मिलना मुशकिल है केवलीके और सकषायीके शुभ योगमें कितना अंतर होता है, सो दीर्घ द्रष्टिसे विचारिये

प्रश्न—एक समयमें दो कार्यकी ना कही है तो फिर शुभाशुभ आश्रव कैसे कहा ?

समाधान—एक समयमें दो जोग तो नहीं मिले, इस लिये मुख्यतामें× तो एकही योग मिलता है और गौणतासे कुछ दूसरे

* उपादान और निमितका खुलासा—द्रष्टांत उपादान मिला गायका और निमित मिला दूधवालेका, तब दूध हुवा ऐसे ही,—उपादान दूधका और निमित जायणका, तब दही हुवा उपादान दहीका और निमित रयेका, तब मही व मक्खन हुवा एसेही—उपादान माताका और निमित पिताका, तब पुत्र हुवा ऐसेही सब जानना

× मुख्यतामे हंस धोला, और गौणतामें वर्ण पांचही पावे ऐसे अनेक रीतिसे मुख्यता गौणताका स्वरूप जानना

जोगका अंश मिलता है जैसे शास्त्रमें धम्मीवासा अधम्मीवासा और धम्माधम्मी वासा कहा है तथा मिश्रयोग मिश्रगुण ठाणा बहुत ठिकाणे कहा है [तत्व केवली गम्यं]

५ शब्द नयसे-जिस स्थानसे आश्रव आता है उस प्रणामको आश्रव माने ६ समभीरूढ नयसे-जो कर्म ग्रहण करने के गुण है उसे आश्रव कहे ७ एवमूत नयसे-आत्मा के सकपपणेको आश्रव कहे

(६) सवरतत्व

१ नैगम नयवाला-कारणको कार्य मानता है इसलिये सुम योगको, सवर कहे २ संग्रह नयसे-सम्यकत्वादिक प्रणामको, सवर कहे ३ व्यवहार नयसे-चारित्री पंचमहावृत रुप उसे संवर कहे ४ ऋजुसूत्र नयसे-वर्तमानकालमें नये कर्मको रोके, उसे सवर कहे ५शब्द नयसे-समकितादिक पांच (सम्यकत्व, वृत, अप्रमाद, अकपाय, स्थिर योग) को सवर कहे [इस नयवाला चोथे गुणस्थान व्रतिको सवरी माने क्योंकि उसने मिथ्यात्वका अनाश्रव किया कहे] ६ समभीरुढ नयसे-मिथ्यात्वादिक पच ही आश्रव की, कर्म वर्गणासे अलिप्त रहे, इनकी स्नीगन्धता मद करे, तथा शुक्लप्रणाम कर कर्म प्रकृती से नहीं लेपाय उसे सवर कहे ७ एवंभुत नयसे-सलेसी (पर्वत जैसे स्थिरी भूत) अवस्था अकंप अवस्थावालेको सवरी कहे [यह १४ वे गुण स्थानवाले जाणना यहा आत्माको संवर कहा सों श्री भगवती के निवमे उदेशेमे " काल सव्वेसिय आया सवेर, आया सवरस अठ ' यह पाठमें आत्माको ही संवर कहा है]

७ "निर्जरा तत्व"

१ नैगम नयसे-शुभ योगको निर्जरा कहे २ सग्रह नयसे-कर्म

वर्गणा के पुद्गलको झाडे (दूर करे) उसे निर्जरा कहे ३ व्यवहार नयसे–बारह प्रकारके तपको निर्जरा कहे, क्योंकि तप है सो ही कर्म निर्जराका व्यवहार है ४ ऋजुसूत्र नयसे–जो वर्तमानकालमें शुभ ध्यान यूक्त होवे उसे निर्जरा कहे ५ शब्द नयसे–ध्यानामी के प्रयोग से कर्म ईंधण जलावे, उसे निर्जरा कहे, क्योंकि शुभ ध्यानसे सकाम निर्जरा होती है ६ समभीरूढ नयसे–आत्मा के उज्वलपणे के सन्मुख हो शुक्लध्यानारूढ हुया, उसे निर्जरा कहे [यह क्षिण मोह १२ वे गुण स्थानवर्ती जानना] ७ एवंभूत नयसे, सर्व कर्म कलक, रहित शुद्धा त्माको निर्जरा कहे

८ "बंधतत्व"

१ नैगम नयसे–बंधके कारणको बंध कहे २ संग्रह नयसे–अ ष्ट कर्म बंध की प्रकृतियों, तथा रागद्वेषको बंध कहे ३ व्यवहार नयसे क्षीर नीर जैसा चैतन्य पुद्गलोंके बंधको, तथा रागद्वेषके बंधमें बंध हुव ससारी जीव दिख रहे हैं उसे बंध कहे ४ ऋजुसूत्र नयसे–मास भक्षणादि अशुभ कार्यमें प्रवर्ते उसे बध कहे· कहा जाता है कि जीव कर्म बधानुसार सुख दु,ख पात है ५ शाब्द नयसे–अज्ञानतासे प्रमिल हो व्यामोह पणासे कार्याकार्यको न विचारे यह कर्म गुणको बंध कहे [यहा जीव विपाक की प्रकृतिको बंध गिणते है] ७ एवंभूत नयसे आत्माके अशुद्ध अभ्यवसायसे जो भाव कर्मका संचय होता है उसे बंध कहे

९ "मोक्ष तत्व"

सर्व नयसे निश्चयमें मोक्षका व्यवहार नहीं है परत् पर्यायार्थी नयसे भेद प्रकाश रुप कहते है १ नैगम नयसे—जो गतियोंके बं धसे छुटा उसे मोक्ष कहे २ संग्रह नयसे—पूर्व कृत कर्मसे छुटके

देशसे उज्वल हुवे उसे मोक्ष कहे ३ व्यवहार नयसे,—परित ससारी, तथा सम्यक्त्वीको मोक्ष कहे ४ ऋजुसुत्र नयसे—क्षपक श्रेणी चढने वालेको मोक्ष कहे ५ शब्द नयसे—सयोगी केवलीको मोक्ष कहे ६ समभीरूढ नयसे—सेलेसी करण गुणवालेको मोक्ष कहे ७ एवभूत नयसे—जो सिद्ध क्षेत्रमें विराजे उसे मोक्ष कहे

"चार निक्षेपे"

कोइ भी वस्तुमें गुण या ओगुणका आरोपण [स्थापन] करना सा निक्षेपे कहे जाते हैं यह निक्षेप चार हैं—१ नाम निक्षेपा, २ स्थापना निक्षेपा, ३ द्रव्य निक्षेपा, और ४ भाव निक्षेपा

१ नाम निक्षेपके ३ भेद—१ यथार्थ नाम २ अयथार्थ नाम ३ अर्थशून्य नाम १ यथार्थ नाम उसे कहते हैं कि—जैसा जिसका नाम, वैसा उसमें गुण होय, जैसे—जीवका नाम हंस, चैतन्य, प्राणी, भूत, इत्यादि जो नाम हैं वैसा उसमें गुण है २ अयथार्थ नाम उसे कहते है, जिसमें वैसा गुण न होए जैसे—जीवका नाम धूला, कचरा, हीरा, मोती इत्यादि रखते हैं ३ अर्थ शून्य नाम उसे कहते है, जिसका कुछ अर्थ नहीं होय, जैसे—हासी, खासी, छींक, बगासी, वाजित्रका आवाज वगैरा इनका कुछ अर्थ नहीं होता है

२ स्थापना निक्षेपके ४० भेद—१ कठ कम्मेवा—काष्टकी २ चित्त कम्मेवा—चित्र की ३ पोत कम्मेवा—पोत (चीड) की ४ लेप कम्मेवा—मांडणे की ५ गंठीमेवा—डोर प्रमुखको गाठो लगाकर ६ पुरी मेवा—भरत (कसीदे) के ७ वेरी मेवा—छेद (कोर) के (कारणी करे) ८ संघाइ मेवा—किसी वस्तुका संयोग मिलाकर ९ अखे वा—अकस्मात् कोइ वस्तु पडनेसे आकार मंड जाय तथा चावल अ

माके १० वराडेवा—वस्त्रका यह १० के एकवा—एक आकार करे तथा अनेकवा—बहोत चित्र करे यह २० हुये यह चित्र की स्थापना दो प्रकार की होती है—१ सद्भाव स्थापना—जैसी वो वस्तु वा मनुष्यादि प्राणी होवे उसका तादृश्य हुवेहु लक्षण; व्यजन युक्त उचाइ चोडाइ वरावर उसको देखकर यथा तथ्य उस वस्तुका भास होवे जैसे अवी फोटोग्राफ होता है तैसा, उसे "सद्भाव स्थापना" कहना २ असद्भाव स्थापना, असद्भाव कहता उल्टा अर्थात् यथातथ्य नहीं, यों ही उपर कही हुइ वस्तुका संयोग मिलाकर मनकल्पित रुप बनावे जैसे-गोल पत्थरको तेल सिंदुर लगाकर भैरवादिक स्थापे यों उन वीसको दूणे करनेसे ४० भेद स्थापना निक्षपेके हुये

२ द्रव्य निक्षेपे के दो भेद —१ आगमसे, और २ नो आगम से १ आगमसे उसे कहते हैं, जैसे—शास्त्र तो पढता है परतु उसका अर्थ कुछ समजता नहीं हे, तथा उपयोग रहित सुन्य चित्तसे विग्रह प्रणाम से पढे सा २ नो आगम से के तीन भेद—१ जाणग सरीर २ भविय सरीर और ३ जाणग भविय सरीर १ जाणग सरीर उसे कहते हैं, जैसे कोइ श्रावक आवश्यक (प्रतिक्रमण) का जाण, आयुष्प पूर्णकर [मर] गया उसका शरीर पडा हे उसे कहे यह आवश्यकका जाण था दृष्टात -खाली घडेको देख कर कहे की–यह घी का घडा था २ भविय सरीर—किसी श्रावक के घर पुत्र हुवा उसे कहे कि, यह आवश्यकका जाण होगा दृष्टात कार घडको देख कर कहा यह घीका घडा होगा ३ जाणग भविये वितिरिक्त शरीर के तीन भेद १लौकीक २कुप्रावचन ३ लोकोत्तर

१ लौकीक—राजा सेठ सेनापति नित्य सभामें जाकर अवश्य करने याग्य काम करे, सो लौकीक द्रव्य आवश्क २ कुप्रावचनीक-उस कहते है, 'जेचकचिरीया,—वक्कल के वस्त्र पहरनेवाले, चर्म के

डा—मृगादिकका चर्म (चमडा) रखनेवाले, पांडुरगा–भगवा वस्त्र पेहरणेवाल, पासत्थे—फक्त नाम तापस इत्यादिक नित्य नियम प्रमाणे ॐकारादिकका ध्यान करे किया करे, सो कुप्रावचनीक द्रव्य आवश्यक कहना ३ लोकोत्तर–' जे इम्मे समण गुण मुक्का ' (जे साधुके गुण रीहत) 'जोग छकाय निरणु कपा ' (छे कायकी दया रहित,)' हय इव उदमा' (घोडे जैसे उन्मत) गया ' इवा निराङ्कसा ' (हाथी जैसा अकुश रहित) ' घट्टा ' (सुश्रुपा करे,) ' मठा ' (मठालंवी) ' ति पुठा ' (तप रहित) ' पडुर पट पउरणा ' (स्वच्छ वस्त्रके धारी,) ' जिणाण आणा आणा रहीता ' (भगवानकी आज्ञा बाहिर) ' उभ य काल आवसग ठवंती ' (दोनों वक्त प्रतिक्रमण करे) उसको लो कोतर द्रव्य आवश्यक कहना

४ भाव निक्षेपा उसे कहते हैं जो वस्तू के निज उसमें गुण होय जैसे जीवका निजगुण ज्ञानादी और अजीवका वरनादि निजगुण न हो नेसे भाव निक्षपा शून्य गिणाता हैं इस के दो भेद —१आगमसे २ नोआगमसे १ आगमसे भाव उसे कहते हैं, जो शुद्ध उपयो सहित भावार्थ पर उपयोग लगाकर अत करण की रुची युक्त शास्त्र पढे २ नो आगमके तीन भेद –१ लौकीक कुप्रावचनीक, और ३ लोकोतर १ लौकीक–राजा सेठ प्रमुख नित्य शुद्ध उपयोगसे फजरको भारत, श्यामको रामायणादि श्रवण करे * २ कुप्रावचनी–जे चक चीरीया, पा- डुरग, चर्मखडा, पासत्था, अर्थ युक्त उसमें शुद्ध उपयोग सहित ॐका रादि मत्र जपे सो कुप्रावचनी भावावश्यक

३ 'लोकोत्तर ' समण–साधू समणी–साध्वी माहाण–श्रावक

* यह भारत रामायण तो कुप्रावचनमें हैं परतु अपन अच्छके लिये सुना है इस लिये लौकीक में ली है

महाणी–श्राविका उभय काल–दोइ वक्त [शाम शुभे] 'आवश्यक ठवती' शुद्ध उपयोग सहित आवश्यक [प्रतिक्रमण] करे सो लोको त्तर भाव आवश्यक

इन चार ही निक्षेपेका स्वरूप अनुयोगद्वार शास्त्र प्रमाणे लिखा है इन निक्षेपमें स पहिले, के तीन निक्षेपे 'अवत्थु' निकर्मे–विना काम के हे, और चौथा भाव निक्षेपा उपयोगी–कामका हे

यह ४ निक्षेपे नव तत्व पर उतारते हैं

१ जीवतत्व—१ नाम निक्षेपे—जीव ऐसा नाम सो, अजी वका नाम जीव रखे तो भी नाम निक्षेपे के अनुसारसे उसे जीव ही माना जाय २ स्थापना निक्षेपे–चित्राम प्रमुख की स्थापना करे सो ३ द्रव्य निक्षेपेसे–षट द्रव्यमें से जो जीव द्रव्य असख्यात प्रदेशवंत है सो ४ भाव निक्षेपे 'उदय, उपसम, क्षायक, क्षयोपसम, प्रणामिक' इन ५ + भावमें प्रवर्ते सो

+ इन पांच भावकी ५२ प्रकृति—१ उदय भावकी २१,—गति ४,ले स्या ६ कषाय ४ वेद ३, १ असिद्ध १ अमाणी १ अज्ञान, १ मिथ्यात्वी ये २१ उपसम भाव की २ —उपसम सम्यक्त्व, उपसम चारित्र, ये १ क्षायिक की ९—दानांतराय आदि पांच अतरायका क्षय ६ केवल ज्ञान ७ केवल दर्शन , ८ क्षायिक सम्यक्त्व ९ क्षायिक चारित्र यह ९ क्षयो पसम की १८, - ज्ञान ४ पहिले, अज्ञान ३, दर्शन ३ पहिले, अतराय ५ यह १५ और क्षयोपसम चारित्र १७ क्षयोपसम समकित १८ देशवि रति संयम यह १८ प्रणामिक की तीन –१ भव्य प्रणामी २ अभव्य प्रणामी ३ जीव प्रणामी यह पांच भावकी ५३ प्रकृति [अब पाच भावके भेद – उदय भावके २ भेद १ उदय और उदय निष्पन्न प्रथम उदय सो तो आ ठ कर्मोका जानना, और दूसरा उदय निष्पनके दो भेद —जीव उदय, अजीव उदय जीव उदयके ३३ भेद —गति४, लेश्या६ कषाय ४ काया ६

२ अजीव तत्व १ नाम निक्षेपेसे—अजीव ऐसा नाम सो, २ स्थापना निक्षेपेसे—अजीव की स्थापना कर अजीवका स्वरुप बतावे

भेद १, १ मिथ्यात्व, १ अव्रत, १ अज्ञाणी, १ असन्नी, १ आहारथा, १ ससारथा, १ असिद्धा, १ अ केवली, यह ११ दूसरे अजीव उदयके १०—शरीर ५, और शरीरके प्रणमें पुद्गल ५, और वर्ण ५, गंध २, रस ५, स्पर्श ८, ये ३ २ उपसम भावके २ भेद,-उपसम, और उपसम निप्पन्ने उपसमसो ८ कर्मको ढके हूये को आना और उपसम निपन्नेके ११ भेदः—क्रोध ४ राग, द्वेष, दर्शन मोह, चारित्र मोह दर्शन लब्धी, चारित्र लब्धी, छद्मस्त और वीतरागी यह ११ क्षायिक भावके दो भेद—क्षय, क्षय निपन्न; क्षय सो तो ८ कर्मोका और क्षय निपन्नके ३७ भेद—५ ज्ञानावर्णी, ९ दर्शनावर्णी, २ वेदनी ८ मोहनीय (क्रोध मान, माया लोभ, राग द्वेप, दर्शनमोह, चारित्र मोह) ४ गतीका आयुष्य, २ गोत्र, ५ अंतराय यह ३७ प्रकृतीको क्षिण करे सो क्षायिक क्षयोपसमके दो भेदः-क्षयोपशम क्षयोपशमनिपन्न, क्षयोप शम ८ कर्मका, क्षयोपम निपन्ने के १० भेद —४ ज्ञान, ३ अज्ञान, दर्शन ३ द्रष्टी ३ चारित्र ४, पडल लब्धी ५, पंच इंद्रीकी चारिता चरित्र भावक पणा, आचार्यपद, दानादि ५ लब्धी चूर्वधर आचार्य द्वादशागी जाण यह ३ प्रणामिक भावके दो भेदः—सादीय,भार अणादीय; सादीयके अनेक भेद जैसे—जूना सूरा, जूना घीया, ज्यूना तदुल, अभ्रो, अभ्ररुखा, गधर्व, नागराय, उलकापात, दिशीदाहा, गर्जारव विजली निघाप, बालचंद्र पक्षचिन, धुवर, ओस, रजघात, चंद्रग्रहण सूयग्रहण चद्रप्रतिवेस प्रतीचंद्र, प्रती सुर्य, इंद्र धनुष्य उदकमच्छ अमोह वर्षाद, वर्षकी धारा ग्राम नगर पर्वत,पाताल,कलशा नरकावास सात नर्क भवन सुधमा देवलोक जावत इस्सीपभारा (मुक्त सीला)प्रमाणू पुद्गल जावत अनंत प्रदेशी खंदा इन सबको सादीय प्रणामिक कहना अब अणादीय प्रणामिकके अनेक भेद जैसे—धर्मास्ति अधर्मास्ती जाव अधा समय लोक अलोक भव सिद्धीए अभव सिद्धीए, इत्यादि इति ५ भव इन भावोंमें प्रणाम प्रर्वत तव भाव निक्षेपा जीव तत्वपर लागू होता है

सो ३ द्रव्य निक्षेपेसे—धर्मास्तिका चलण, अधर्मास्तिका स्थिर, अ
काशका अवकाश, कालका वर्तमान, पुद्गलका वर्णादि, इत्यादि द्र
का स्वभाव सो ४ भाव निक्षेपेसे—पूर्वोक्त पाच ही द्रव्यके सद्भाव र
गुण है, उसे भाव कहना

३ 'पुन्यतत्व' १ नाम निक्षेपेसे—पुन्य ऐसा नाम २ स्थापना
अक्षरादि स्थापे सो ३ द्रव्य निक्षेपे-शूभप्रकाति की वर्गणा जीव प्रदे
शके साथ प्रणमे सो ४ भाष निक्षेपेसे—पुन्य प्रकृतीके उदयसे जी
हर्ष आल्हाद साता वेदे सो

४ 'पाप तत्व' १ नाम निक्षेपेसे—पाप ऐसा नाम २ स्थापना
निक्षेपेसे—अक्षरादि स्थापके बतावे सो, ३ द्रव्य निक्षेपेसे—अशुभ कर्म
की वर्गणा द्रव्य पणे प्रगमे सो ४ भाव निक्षेपेसे—पापके उदयसे जीव
दु ख वेदे सो

५ 'आश्रव वत्व' १ नाम निक्षेपेसे—आश्रव ऐसा नाम, २स्था
पना निक्षेपेसे—अक्षरादि स्थाप ३ द्रव्य निक्षेपेसे—मिथ्यात्वादि प्रकृ
ति, तथा नाम, और मोह कर्मकी प्रकाति आत्माके साथ लोली भूत
होकर कर्म पुद्गल ग्रहण करने की सक्ती सहित, उन प्रयोगसे पुद्ग
लका द्रव्याश्रव ४ भाव निक्षेपेसे—मिथ्यात्वादिक प्रकृतिका उदय हो
जीवके भाव पणे प्रणमे सो

६ 'सवर तत्व' १ नाम निक्षेपे—संवर ऐसा नाम २ स्थापना
निक्षेपे—अक्षरावि स्थापे सो ३ द्रव्य निक्षेपे—सम्यक्त्वादि व्रत धारक
आश्रवरोके सो ४ भाव निक्षेपेसे—आत्माका अकंपपणा, देशसे तथा
सर्वसे होय सो

७ 'निर्जरा तत्व' (१–२) नाम और स्थापना तो पूर्व वत्
३ द्रव्य निक्षेपेसे जीवके प्रदेशसे कर्म पुद्गल खिरे सो ४भावनिक्षेपसे

आत्मा निर्मल होकर ज्ञान लब्धी, क्षयोपसम लब्धी, क्षायक लब्धी, इत्यादि लब्धी प्रगटे सो

८ 'बंध तत्व' (१-२) नाम और स्थापना पूर्व वत् ३ द्रव्य निक्षेपेसे-कर्म वर्गणाके पुद्गल आत्म प्रदेशसे बंधे सो ४ भाव निक्षेपेसे-मद्यपान जैसी बंधकी छाक चडे सो

९ 'मोक्ष तत्व' (१-२) नाम और स्थापना पूर्व वत् ३ द्रव्य निक्षेपेसे जीवका निर्मल पणा ४ भाव निक्षेपसे आत्माके निज गुण क्षायिक सम्यक्त्व केवल ज्ञान सो

"चार प्रमाण"

जिस करके वस्तुकी वस्तुता सिद्धी होवे सो प्रमाण- प्रमाण चार —१ प्रत्यक्ष प्रमाण, २ अनुमान प्रमाण, ३ आगम प्रमाण, और ४ उपमा प्रमाण॰

१ प्रत्यक्ष प्रमाणके दो भेद—१ इंद्री * प्रत्यक्ष और २ नो इंद्री प्रत्यक्ष

---

* इन्द्रियोंके दो भेद—१ द्रव्य इन्द्री और भाव इन्द्री इसमें से द्रव्य इन्द्रिके २ भेद-१ निवृती और उपकरण निवृतिके दो भेद—अभ्यंतर निवृति सो उत्सेध अंगुलके असंख्यातमें भाग प्रमाण शुद्ध आत्माका प्रदेश नेत्रादिक इन्द्रियों के आकार रुप हो कर स्थानमें रहे है सो अभ्यंतर निवृती और पांच इन्द्रिय आकार मणती रुप आत्म प्रदेशके विषय नाम कर्मके उदय कर इन्द्रियोंकेआकार पुद्गल समोहरा है सो बाह्य निवृत्ति और १ निवृती को उपकार करने वाले होवे सो उपकरण यह उपकरण भी दो प्रकारके —आंखोमें शुक्ल कृष्ण मंडल है सो अभ्यंतरउपकरण और आपण भंवरा वगैर जिससे अभ्यंतर की गरद गुब्बार आदीसे रक्षा होय सो बाह्य उपकरण यह द्रव्य इन्द्रिके भेद हुवे २ अब भाव इन्द्रि के दो भेद- १) लब्धी और उपयोग (१) ज्ञान वर्णि कर्म के क्षयोपशम से इन्द्रियों में जाननेकी शक्ति प्रकट होवे सो लब्धी है और (२) लब्धीके समर्थ पण से आत्मा द्रव्येंद्रिय के रचना प्रति प्रवृतन कर-समय पर इन्द्रिया का मर्म आवे सो उपयोग, यह भाव इन्द्रिय के दो भेद कहे

तत्वार्थ सूत्रम्

इद्री प्रत्यक्षके ५ पांच भेद– १भोर्तेद्री (कान) २ चस्तु इद्री (आस्त्र) ३ घार्णेद्री (नाक) ४ रसेंद्री (जीभ) ५ स्पर्शेद्री (शरीर) अव विषय कहे है— १ एकन्द्रिका स्पर्शन्द्रिका विषय ४०० धनुष्य, २ बेन्द्रिका स्पर्श इन्द्रिका ८०० धनुष्य, और रस इंद्रिका ६४ धनुष्य, ३ तोंद्रिका स्पर्श इंद्रिका १६०० धनूष्य, रस इद्रिका १२८ धनूष्य, और घण इद्रिका १०० धनूष्य, ४ चोंरिन्द्रिका स्पर्श इद्रिका ३२०० धनुष्य, रस इद्रिका २५६ धनुष्य, घण इद्रिका २०० धनूष्य, और चक्षु इन्द्रिका २९५४ धनूष्यका, ५ असन्नी पचेन्द्रिका स्पर्श इन्द्रिका ६४०० धनूष रस ईद्रिका ५१२ धनूष्य, घण इंद्रिका ४०० धनुष्य, चक्षु इंद्रिका ५९०९ धनूष्य ओर श्रोतेद्रिका ८०० धनुष्यका, और सन्नी पचेन्द्रि स्पर्श, रस, ओर भोर्तेद्रि का १२–१२ जोजका ओर घण इंद्रिका ९योजन ओर चक्षु इद्रिका ४७२६३ जोजनका (यह उत्कृष्ट विषय चक्रवर्ती महाराज के, होता है) ऐसी तरह पचों इंद्रिसे जो वस्तुका प्रत्यक्ष ज्ञान होवे सो इद्री प्रत्यक्ष प्रमाण २ नो इंद्री प्रत्यक्षके दो भेद –१ देशसे, २ सर्वसे देश सेके ४ भेद—१मतिज्ञान, २ श्रुती ज्ञान, ३ अवधी ज्ञान, ४ मन पर्यव ज्ञान, १ मतीज्ञानके २८ भेद–१ उत्पातिया बुद्धी–तत्काल बात उपजे, २ विनया बुद्धी—विनयसे आवे, ३ कम्मीया बुद्धी=काम कर ते२ सुधेरे, ४ प्रणामीया बुद्धी–वय प्रमाणे बुद्धी होए यह चार बुद्धी ओर भोर्तेद्री की अवग्रह सो शब्दको ग्रहण करना श्रार्तेद्री की 'इहा सो सुणे हुये शब्दका विचार श्रार्तेद्रीकी 'अवाय' सो सुणे शब्दका निश्चय करना ४ श्रोर्तेद्री की ' धारण ' सो बहूत काल तक धार (याद) रखना जैसे भोर्तेद्री पर ४ बोल कहे, ऐसे ही २ चक्षु इद्री से देखनेका ३ घार्णेद्रीसे सूंघणेका ४ रसेंद्रीसे स्वाद लेनेका ५ स्पर्श इन्द्रसे स्पर्शका ६ मनसे बिचारका यों ६ पर चार २ बोल कहनेसे

६×४=२४ बोल हुये और ४ बुद्धी मिलकर मति ● ज्ञानके अठावीस भेद हुये

२ श्रुती ज्ञानके १४ भेद —१अक्षर श्रुत—क ख प्रमुख अक्षर तथा सस्कृत, प्राकृत, हिंदी, इंग्लिश, फारसी आदिकसे जाणे सो २ अनक्षर-श्रुत अक्षर उच्चार विन खासी, छीक, प्रमुख चेष्टासे ज्ञान होवे सो ३ सन्नी-तश्रु—विचारना, निर्णय करना, समुचय अर्थ करना, विशेष अर्थ करना, चिंतवना, और निश्चय-करना, यह छे बोल सन्नीमें मिलते हैं इन छे बोलसे सुख धार रख सो सन्नी श्रुत ४ असन्नी श्रुत—यह छे बोल रहित होवे, तथा भावार्थ विचार सुन्य, उपयोग सुन्य, पूर्वा पर आलोच (निर्णय) रहित पढे पढावे सुणे, सो असन्नी श्रुत ५ सम्यकत्व श्रुत—अरिहंत देवके परुप; गणधर देवके गूंथे, तथा कमसे कम तो दश पूर्व धारीक फरमाये, सूत्र सो सम्यकत्व श्रुत दश पूर्वसे कमी ज्ञान वालेका निश्चय नहीं उनके रचे ग्रथ समश्रुत भी होवे, और मिथ्या श्रुत भी होवे, इस लिये दश पुर्व धारीके किये हुये ग्रथ ही सम्यकत्व

* यह १८ मति ज्ञानके भेद है इन मसे एकेकके चार २ भेद होते है—जैसे अनेक जीव अनेक वाजितरो के शब्द सुनते है उनमे मतिज्ञानकी क्षयोपशमता से १ कोइ एकही वक्त में बहुत शब्दको ग्रहण करते सो "बहु" २ कोइ थोडे शब्द ग्रहण करते सो "अबहु" ३ कोइ भेद भाव सहित ग्रहण करे सो "बहु विध" ४ कोइ भेद भाव नहीं समजे या थोडे समजे सो "अबहु विध" ५ कोइ शिघ्र समज जाय सो 'श्पिघ्र' ६ कोइ वीलम्ब (देर) से समजे सो 'अक्षिप्र' ७ कोइ अनुमान से समजे सो 'सलिग' ८ कोइ विना अनुमान समजे सो 'अलिग' ९ कोइ शका युक्त अर्थ सो 'सधिग्ध' १० कोइ शका रहित अर्थ सो 'असदिग्ध' ११ कोइ एकही वक्तमे सब समज जाय सो 'ध्रुव' और १२ कोइ वार-म्वार जाणनसे समजे सो 'अध्रुव' इन १२ भेदसे पूर्वोक्त २८ भेदको गुणा करनेस २८×१२=३३६मति ज्ञानके भेद होते है

श्रुत है ६ मिथ्या श्रुत–अपनी इच्छासे कल्पित रचे हुये ग्रंथ, जिसमें हिंसाविक पंचाश्रवका उपदेश होए; वैदिक, ज्योतिष, काम शास्त्र इत्यादि मिथ्या श्रुत ७ सादि श्रुत–आदि सहित, * ८ अनादि श्रुत –आदि रहित, * ९ सपज्जव श्रुत–अंत सहित, ● १० अपज्जव श्रुत –अंतरहित, ● ११ गमिक श्रुत–द्रष्टी वाद, १२ मा अंग § १२ अगमिक श्रुत–आचारांगादिक कालिक सूत्र १३ अंग पविठ श्रुत–जिन भाषित द्वादशांगी वाणी १४ अंगबाहिर—बार अंगके बाहिरके श्रुत के दो भेद –१ आवश्यक–सामायिकादिक छे और २ आवश्यक वितिरिक्तसो कालिक उत्कालिकादिक जानना

यह मति और श्रुती ज्ञानका आपसमें क्षीर नीर जैसा संजोग है इन दोनों ज्ञान विन कोइ जीव नहीं है +सम्यक द्रष्टीके ज्ञानको

---

* १सआदि २अनादि ३सपजव ४अपजव इन ४ का खुलासा द्रव्यसे–एक जीव आश्री आदि अंत सहित; पढने बैठा सो पुरा करे बहुत जीव आश्री आदि अंत रहित; बहुत पढे है और पढेंगे २ क्षेत्रसे–भरत ऐरावत आश्री आदि अंत सहित और महाविदेह आश्री आदि अंत रहित ३ कालसे–उत्सर्पिणी अवसर्पिणी आश्री, आदि अंत सहित और नो उत्सार्पिणी अवसर्पिणी आश्री आदि अंत रहित ४ भावसे तीर्थंकरने भाव प्रकाशे सो आदि अंत सहित; और क्षयोपशमभाव आश्री, आदि अंत रहित

§ द्रष्ठि वाद अंग उपांगका स्वरुप चौथे प्रकरणमें देखो

+ ज्ञान पर द्रष्टांत–आकाशके अनंत प्रदेश है; एक प्रदेश के अनंत पर्याय हैं; सर्व पर्यायसे अनंत गुण अधिक एक अगुरु लघु पर्याय होय उसका अक्षर (अ=नही +क्षर=खिरे) होवे सर्व जीव के अनंतमें भाग ज्ञान प्रदेश सदा उघाडे रहते हैं, जिसे ही जीव के चेतना लक्षण कहे जाते हैं जैसे घोर घटामें सूर्य दब गया तो भी रात्री दिन की अवश्य खबर होती है ऐसे ही निगोदिये जीवके भी प्रदेश खुले हैं तो दूसरे की क्या कहना !

ज्ञान कहते हैं और मिथ्यात्व द्रष्टीके ज्ञानको अज्ञान कहते हैं उत्कृष्ट मती श्रुत ज्ञानवाले केवली की तरह, सर्व—द्रव्य—क्षेत्र—काल भाव—की बात जान सक्ते हैं इस लिये श्रुत केवली कहे हैं *

३ अवधी ज्ञान के ८ भेद —१ 'भेद,' दो तरह से अवधी ज्ञान होता है १ भव (जन्म) से सो नारकी देवता और तीर्थंकरको होवे २ क्षयोपशम —(करणी करने) से, सो मनुष्य तिर्यंचको होवे २ 'विषय'–सातमी नर्कवाले–जघन्य आधाकोस, उत्कृष्ट एककोस छट्टीवाले–जगन्य एककोश, उत्कृष्ट देढ १॥ कोश, पचमीवाले–जघन्य देढ १॥ कोस, उत्कृष्ट दो कोस चोथीवाले–जघन्य दो कोस, उत्कृष्ट २॥ कोस तीसरीवाले–जघन्य २॥ कोस, उत्कृष्ट ३ कोस, दूसरीवाले–जघन्य ३ कोस, उत्कृष्ट ३॥ कोस और पहिलीवाले, जघन्य ३॥ कोस, उत्कृष्ट ४ कोस अवधी ज्ञानसे देखते हैं * असुरकुमारदेव–जघन्य २५ योजन, उत्कृष्ट असख्याते द्वीपसमुद्र बाकी के नवनीकाय देव, और वाण व्यतरदेव–जघन्य २५ योजन, उत्कृष्ट सख्याते द्विपसमुद्र ज्योतिषी देव–जघन्य उत्कृष्ट संख्याते द्विपसमुद्र उपरके सर्व देव–ऊंचा अपने २ दवलोककी ध्वजा तक, और तिरछा § असख्याता द्विपसमुद्र देखते हैं नीचे १—२ देवलोकवाले पहिलीनर्क, ३—४ वाले दूसरी

---

* जाति स्मरण ज्ञान भी मती ज्ञानके पेटमें है जाती स्मरणसे ९०० भव पिछले किये हुये जान सक्ते हैं जो लगो लग सन्नीके किये होवे तो

* नर्कके जीव जाति स्मरण ज्ञान से पूर्व भवकी बात जान सक्ते हैं, परन्तु देख सक्ते नहीं हैं, क्यों कि यह परोक्ष ज्ञान है महा वेदनाके अनुभवसे और परमा धामियों के कहनेसे जाति स्मरण ज्ञान होजाता है

§ पहिले दूसरे देवलोकमें पल्यके आयुष्यवाले देव हैं वो श्रीण संख्याते द्विप समुद्र देखते हैं

नर्क ५—६ वाले तीसरी नर्क ७—८ वाले चोथी नर्क ९—१० ११—१२ वाले पाचमी नर्क नवग्रीवेक वाले ǂ छट्री नर्क चार अनुत्तर विमानवासी देव सातमी नर्क सर्वार्थसिद्ध विमानवासी -संपुर्ण लोकमें कुछ कमी संज्ञी तिर्यंच पचेंद्रि जघन्य अगुल के असख्यातमें भाग, उत्कृष्ट असंख्यात द्विप समुद्र, सन्नी मनुष्य जघन्य अगुल के असंख्यातमें भाग, उत्कृष्ट सपुर्ण लोक, और लोक जैसे अलोकमें असंख्याते खंड देखे § २ 'सठाण'—अवधी ज्ञानसे नर्कके जीव-त्रि-

ǂ कितनेक पहिलीसे छटी ग्रीवेकके देवता छटी नर्क और उपरकी ३ ग्रीवेकके देव ७ मी नर्क देखते है, यों कहते हैं

§ जो अवधी ज्ञानी अंगुलके असख्यातमे भाग क्षेत्र देखेगा सो कालसे आवलिकाके असंख्यातमे भागकी बात जानेगा जो अगुलके संख्यातमे भाग क्षेत्र देखे सो अवलिकाके सख्यातमे भागकी बात जान जो एक अगुल क्षेत्र देखेगा सो एक अवलिकामें कमीकी बात जानेगा जो प्रत्येक (९) अगुल क्षेत्र देखेगा सो पुरिअवलिकाकी बात जानेगा जो एक हाथ क्षेत्र देखेगा, सो अंतर मुहूर्तकी बात जानेगा जो १ धनुष्य क्षेत्र देखेगा, सो प्रत्येक (९) मुहुर्तकी बात जानेगा, जो १ कोसकी बात देखेगा, सो एक दिनकी बात जानेगा, जो १ योजनकी बात देखेगा सो प्रत्येक ९ दिनकी बात जानेगा, जो २५ योजन क्षेत्र देखेगा सो १ पक्षमें कुछ कमीकी बात जानेगा जो पूर्ण भरत क्षेत्र देखेगा सो पुर्णपक्षकी बात जानेगा जो जंबुद्वीप देखेगा सो १ महिनेकी बात जानेगा जो अढाई द्वीप देखेगा सो १ वर्षकी बात जानेगा जो १५ मा रुचक द्वीप देखेगा सो प्रत्येक ९ वर्षकी बात जानेगा जो संख्याता द्वीपसमुद्रकी बात देखेगा सो संख्यात कालकी बात जानेगा, और जो असंख्यात द्वीप समुद्रकी बात देखेगा सो कालसे असंख्यात कालकी बात जाणेगा यों ऊंचा नीचा तिरछा यों संपुर्ण लोक और परम अवधी उपजे तो लोक जैसे असंख्याते खन्ड अलोकमें देखे परम अवधी उपजे पीछे अंतर मुहूर्तमें केवल ज्ञान पैदा हो जाता है

पाइ के आकार देखे भवनपती—पाला (त्रोपले) के आकार व्यं-तर–पडछा (दफ) के आकार ज्योतिषी–झालर (घंटा) के आकार, बारह देवलोकके देव—मृदंगके आकार ग्रैवेकके देव–फुल चंगेरी के आकार अनुत्तर विमान के देव कुमारी के कचुवे (काचली) के आकार देखे मनुष्य–तिर्यंच जालीके आकारसे अनेक प्रकारसे दखे ४ 'वाह्याभ्यतर' नर्क के ओर देवताके जीवको अभ्यतर (अतरिक) ज्ञान तिर्यचके वाह्य (प्रगट) ज्ञान और मनुष्य वाह्य अभ्यंतर दो नों देखे ५ 'अणुगामी' आणाणू गामी –'अणुगामी' उसे कहते है एक वस्तुसे दूसरी तीसरी यों सर्व अनुक्रमे देखे, और सर्व ठिकाणे साथ रहे देख सके अणाणुगामी, जिहा उपज्या वाहा देखे दूसरे ठि-काणे न देख सके नारकी देवताके अणुगामी अवधी ज्ञान, और म-नुष्य तिर्यंचके अणूगामी अणाणुगामी दोनों ६ 'देशमे सर्व स' — नारकी देवता तिर्यचको देशसे (थोडा) ज्ञान होय और मनुष्यको देशसे व सपूर्ण दोनों अवधी ज्ञान होए ७ 'हायमान वृधमान अवुठीए'- हाय मान उपजे पीछे कमी होता जाय वृधमान वृद्धि (ज्यादा) होता जाय अवुस्थित उपजा उतना ही वना रहे नारकी देवको अवस्थित और मनुष्य तियचको तीन ही तरहका होता है ८ 'पडवाइ अपडवा, इ'–आकर चला जाय, मो पडवाइ ज्ञान, और आकर नहीं जाय-सो अपडवाइ ज्ञान नर्क देवको अपडवाइ, और मनूष्य तिर्यंचको पड वाइ अपडवाइ दोनों अवधी ज्ञान होते हैं

४ 'मन पर्यव ज्ञान' के दो भेद–१ ऋजुमती, और २ विपुलमती मन पर्यव ज्ञानी द्रव्यसे रुपी पदार्थ देखे क्षेत्रस नीचे १ हजार योजन ऊंचा नवसे योजन तिरछा अढाइद्वीप (ऋजुमतीवाला अढाइ अगुल कमी देखे तथा खुला खूला नही देखे विपुलमतिवाला अढाइ

द्वीप पुरा देखे और खुला देखे कालसे पलके असंख्यातमें भाक गये काल की और आवत कालकी बात देखे भावसे सर्व सन्नीके मनकी बात जाणे देखे यह मन पर्यव ज्ञान मनुष्य—सनी—कर्म—भुमी—सस्सात वर्ष के आयूष्यवाले—पर्याप्ता—समद्रष्टी—सजती—अप्रमादी—लब्धीवंत—इतने गुण युक्त होवे उन मनुष्यको उपजता हैं * अवधी ज्ञान से मन पर्यव ज्ञानीके (१) क्षेत्र तो थोडा है परन्तु विशुद्धता—निर्मलता अधिक हैं. (२) अवधी ज्ञान चार ही गतीके जीवोंको होता हैं और मन पर्यव ज्ञान फक्त मनुष्य गतीमें साधूको ही होता है (३) अवधी ज्ञान तो अगूलमें अस्यात में भाग जितना क्षेत्र देखे वा अधिक भी होता है, और मन पर्यव ज्ञान एक ही वक्तमें अढाइ द्वीप देखे जितना उपजता है (४) और अवधी ज्ञानसे भी जो रुपी सुक्ष्म द्रव्य द्रष्टी नहीं आवे वो मन पर्यव ज्ञानवाले देख शक्ते हैं यह ४ विशेषत्व हैं यह देश से नो इन्द्रि प्रत्यक्ष मताज्ञगे भेद हूवे

५ केवलज्ञान सर्व द्रव्य क्षेत्रकाल भावको जाने अपडवाइ संपूर्ण होता है यह उपर के गुण युक्त मनुष्य, अवेदी, अकषाइ, तेरमे गुण स्थानवर्तीको होता है, यह आये पीछे निश्चय मोक्ष जावे यह पहिला प्रत्यक्ष प्रमाण हुवा

२ अनुमान प्रमाण—इसके ३ भेद—१ पूर्व्व २ सेसव्व ३ दिठीस्याम १ पूर्व्व उसे कहते है, यथा द्रष्टाते किसी माताका पुत्र बाल

* जैसे किसीने अपने मनमें घडा धारण किया तो ऋजु मति वाले तो फक्त घडाही देखेंगे, और विपुल मतिवाले विशेष देख शके हैं—कि इसने मृतिका (मट्टी) का या धातूका घडा घृत या दुग्धादि अर्थ धारण किया वगैरा ऋजुमति वाले पडवाइ हो जाते है अर्थात ज्ञान चला जाता है, और विपुल मति मन पर्यव ज्ञान हुये बाद केवल ज्ञान जरूर ही उत्पन्न होता है

अवस्थामें परदेश गया, सो युवान होकर पीछा घर आया, तब माता अपने पूत्रको कैसे पहचाने, उस पूत्रके पूर्व अनुमान प्रमाण करके, जैसे वर्ण, तिल, मस, सठाण, इत्यादिसे पहचाने सो पूर्व अनुमान प्रमाण २ सेसब्वके ५ भेद—१ 'कजेणं' मोरको कोकाटसे, हात्थीको गूल गूलाटसे, घोडेको हकारसे, रथको झणणाटसे, इत्यादि पहचाननेको कजेण कहना २ कारणेणं—कपडेका कारण ततु, परन्तु ततुका कारण कपडा नहीं, कडा (गंजी) का कारण कडब, पण कडब (घांस) का कारण कडा (गजी) नहीं रोटीका कारण आटा परन्तु आटेका कारण रोटी नहीं घडेका कारण मट्टी, परन्तु मट्टीका कारण घडा नहीं एसे ही मुक्तीका कारण ज्ञान, दर्शन, चारित्र, परन्तु ज्ञान, दर्शन, चारित्र का, कारण—मुक्ती नहीं यह कारण ३ गुणेण—निमक (लूण) में रसका गुण, फूलमें वासका गुण, सोनेमें कसोटीका गुण, कपडेमें स्पर्श का गूण, इत्यादि गुणेण ४ अवयवएणं—व्यवहारमें शृंग करके मेंसको, पांख करके मोरको, किलगी करके मुरगे (कुकडे) को, दँत सूल से सूरको, खुर करके घोडेको, नख करके व्याघ्रको, केसर करके केसरी सिंहको, दाँत ओर सूड करके हाथीको पूछ करके चमरी गायको, दोपद करके मनुष्यको, चोपद करके पशूको, बहुत पग करके गजइको, कंकण (चूडी) करके कूँवरिकाको, कचुकी करके परणित स्त्रीको, शस्त्र करके सुभटको, काव्यालंकार करके पडितको, एक कणसे सब सीजे (पके) अनाजको, इत्यादी व्यहारक भेद ५ आसेरण—धूवेके आसरेसे अमी, बादलके आसरेसे मेघ बुगलेके आसरेसे सरोवर, उत्तम आचार करके सुसीलको पहचाने जाता है

३ दिठी स्याम विर्य केबो भेद-१सामान्य,ओर २ विशेष सामान्य जैसे एक रुपेया देखकर उस जैसे बहुत रुपैये जाणे एक मारवाडका धोरी बेलको

देखकर बहुत चोरी जाणे किसी देशका एक मनुष्य देखकर उस देशके बहुत मनुष्योको वैसेही जाणे ऐसे ही एक सम द्रष्टी देखकर बहुत समद्रष्टी को, समजे २ विशेष—जैसे कोइ विचक्षण मुनीराज विहार करते, रस्तेमें बहुत घास उगा देखा, निवाण (सरोवर) पाणीसे भरे देखे, बाग,बगीचे हरी भरे देखे, इस अनुमानसे समजे की गये, कालमें यहा वृष्टी बहुत हुइ, है फिर आगे ग्राममें गये तो ग्राम तो छोटा; श्रावक के घर थोडे, घरमें सपदा थोडी, परन्तु श्रावक बढे भक्तीवंत, उलट प्रणामसे दान देनेवाले देखे, तब समजे के वर्तमान कालमें इनका कुछ अच्छा होता दिखतार्है फिर आगे चले, देखते है तो पहाड पर्वत मनोहर वहोत अगडवगड (खराब) हवा नहीं चले, बहुत तारे नहीं टुटे, ग्राममें तथा बाहिर जुगह रमणिक लगे, तब समजे कि आवते कालमें यहां कूछ शुभ (अच्छा) होता दिखता है, यह शूभ हाल जाननको कहा इस तरहसे ही कोई मुनीराज विहार करते, रस्तेमें घांस रहित, भुमी देखी, बगीचे सुखे देखे, कूवादिक निवाण खाली देखे, जब समजे की गये कालमें यहा वृष्टीथोडी हुइ थी, फिर ग्राममें गये तो ग्राम मोठा (बडा) श्रावकके घर बहुत, घरमें सपत्ती, बहुत परन्तु श्रावक विनय रहित-अभीमानी, कंजूस, दान देनेके भावनहीं, तब समज की वर्तमान कालमें यहां कुछ अशूभ होता दिखता है आगे चले पहाड पर्वत अमनोज्ञ लगे, खराब हवा बहुत चले ग्रामके बाहिर वा भीतर अमनोज्ञ लगे धरती बहुत धूजे तारे बहुत टूटे बीजली बहुत चमके तब ऐसा समजे कि-आवते कालमें यहां कुछ अशुभ होता दिखता है यों तीन ही कालके ज्ञाता होय इति-

३ आगम प्रमाण के तीन भेद —१ सुत्तागमें २ अत्थागमे ३ तदुभयागमें १ सुत्तागमें—द्वादशांग जिनेश्वरकीवाणी, तथा दश पूवतकक पढे हुये मुनीश्वरके किये हुये ग्रंथ हैं, सो सुत्तगम २ पूर्वोक्त

सूत्र के अनुसार सबको समज पडे ऐसी भाषामें जो तदनुसार आ चार्योदिकने अर्थ बनाये सो अर्थागमे ३ सूत्र और अर्थ दोनोंसे मि लता जो सम्मास हे, सो तदुभयागमे इत्यादि आगम प्रमाण जानना

४ 'ओपमा प्रमाण' की चौभगी —छती वस्तुको छती ओपमा, छती वस्तुको अछती ओपमा, अछती वस्तुको छती ओपमा, और अ छती वस्तुको अछती ओपमा

(१) छतीको छती ओपमा सो जेसे—आवते कालमें प्रथम पद्मनाभ नामें तीर्थंकर, वर्तमानकाल के चोवीसमें तीर्थंकर श्री महा वीर स्वामी जेसे होंगे २ छतीको अछती ओपमा सो, जेसे—नर्क और देवताका आयुष्य, पल्योपमका तथा सागरोपमका सो सच्चा परंतु जो चार कोशके पालेके या कुवे के द्रष्टात से जो प्रमाण बताया सो अछ- ती ओपमा क्यों कि य कूवा किसीने भरा नहीं, भरे नहीं, और भरे- गाभी नहीं ३ अछतीको छती ओपमा सो जेसे द्वारकानगरी कैसी ? के देवलोक जैसी,ज्वार मोती जेमी, आगिया सूर्य जेसा, इत्यादि ४ अछतीको अछती ओपमा सो जेसे—घोडे के शृग कैसे ? के गधे जेसे और गधेको सिंग कैसे ? के घाडे जैसे ए अछतीका अछती ओपमा

" नवतत्व पर चार प्रमाण "

१ ' जीवतत्व ' (१) प्रत्यक्ष प्रमाणसे—चेतना लक्षण युक्त (२) अनुमान प्रमाणसे—बाल, युवान, वृद्ध तथा शास्त्रमें त्रसके लक्ष ण—संकोचिय, पसारिय, इत्यादि चले सो और स्थावर के प्रमाण के लिये, अकुंरसे लगा मनुष्यकी तरह वृद्धि पावे सो (३) ओपमा प्र माण से—जीव अरूपी आकाशवत् पकडाय नहीं, जीवअनादि अनत

धर्मास्तिकयावत् तथा ' तिलेषु यथा तैलं. पयषु यथा घृत' वन्हीषु यथा तेजं तनेषू यथा जीवं ' (४) आगम प्रमाण से—

गाथा—कम्म कत्ता अयजीवो, कम्म छित्ता जीव वुणायवो,
अरूवी निच अणाइ, एयं जीवस लक्षण. "

अर्थात् शूभा शूभ कर्मका कर्ता और उसका भुक्ता (भोगव णवाला)ये जीव हैं,और ज्ञान, संयम, तपसे इन कर्मोको छेदनेवाला भी, ये ही जीव हे जीव अरुपी—किसीके द्रष्टीमें नहीं आवे ऐसा नित्य—इसका कदापी विनाश नहीं होता है, अर्थात् जीवका अजीव हूआ नहीं, और होवेगा भी नहीं अणाइयो—अनादि है अर्थात् इसको किसीन वनाया नहीं, इसलिये इसकी आदि नहीं, अनादि सिद्ध है. तथा एक सरीरमें एक, संख्याते, असंख्याते, अनंते जीव है, इत्यादि अनेक द्रष्टांतसे शास्त्रमें जीव सिद्ध किया है

२ ' अजीव तत्व ' (१) प्रत्यक्ष प्रमाणसे—अजीवका जड लक्षण, जीवका प्रतीपक्षी, वर्णादि पर्याय देखाय, मिलनेका विखरनेका स्वभाव सो (२) अनूमान प्रमाणसे—नवा जूना पणा, पर्यायका पलनेका स्वभाव तथा जीवको गती, स्थिर.विकाशादि साख्य करनेवाला जैसे जीवको सकंप देखकर अनूमानसे जाण यह धर्मास्तीका स्वभाव है, ऐसे ही—अकंपसे अधर्मास्ती, पूद्गल मिलनेसे आकास्ती जैसे संपूर्ण कटोरा दूधसे भरा है उसमें एक बिंदू भी न समावे उसमे कित्नी ही सक्कर समाजाय ये आकास्तीका लक्षण, इत्यादि अनूमानसे अजीवको पहचाने (३)ओपमा प्रमाणसे जैसे इद्र धनुष्य, संध्याराग इनका पलटा हुवे, तैसे पूद्गलोंका स्वभाव पलटे पीपलका पान,

जर कान, संध्याका भान, तैसे पुद्गलोंका स्वभाव चंचल जान॰ त्यादि अनेक उपमासे अजीव पहचाने (४) आगम प्रमाणसे—जे- । अजीवके खंध, देश, प्रदेश, चार द्रव्यके वर्णवे और पाचमें पुद्ग- ५ द्रव्यमें परमाणु आवि खंदका प्रवर्तन द्रव्य गूण पर्यायका_ कथन मोर भी एक परमाणुकी अपेक्षासे १ वर्ण, १ गध, १ रस, दो स्पर्श अनेक परमाणुओंकी रासीमें पांच वर्ण, २ गंध, ५ रस, ४ स्पर्श, यह ६ पर्यायसे लगाकर जाव अनंत गुण पर्यायकी व्याख्या करनी पुद्ग- लके वर्णादिककी पर्याय पुद्गलसे भिन्न नहीं है, जैसे मिश्री मीठी प- तु मिठास कुछ मिश्रीसे अलग नहीं है इसी तरह आगम प्रमाणसे पर्याय पूद्गल एक ही जानना, फक्त बोलनेमें अलग २ बोले जाते हैं इसका विस्तार श्री भगवतीजी अगके वीसमें शतकमें देखिये और भी द्रव्य उपर आगम प्रमाण इस मुजब लगता है;—धर्मास्ती कायके स्कन्ध, देश, प्रदेश, के द्रव्य, गुण पर्याय, जैसे धर्मास्ती द्रव्यसे एक द्रव्य के, एक प्रदेशमें,अनत पर्याय हैं, क्यों कि अनंते जीव और पुद्गलों को गतिका सहाय करता है जिसमें भी षट गुण हान वृद्धी बनी हुइ है, तथा उत्पात, व्यय, और ध्रुव,पर्याय करके संयुक्त है यह ही धर्मास्तिका आगम जानना ऐसे ही अधर्मास्तीकी स्थिति सहाय, और सर्व व्याख्या धर्म द्रव्य जैसी एसे ही आकाश सदा अवकाश देनेवाला, अरूपी, अचेतन्य, अनंत, इस तरेही काल द्रव्य अरूपी, अ- चेतन्य,अनंत, अप्रदेशी, वस्तुको नवीन जीर्ण करनेका सहाय इससे एक समयमें पूद्गल परावर्तन हो जाता हैं, क्योंकि अनंत जीव एक पूद्गल परावर्त करते हैं इत्यादि अनेक बोल अजीव द्रव्यपर आगम

प्रमाणसे लागू होते हैं

३ 'पुण्यतत्व' १ प्रत्यक्ष प्रमाणसे—मनोज्ञ (अच्छे) वर्ण, गध, रस, स्पर्श, मन, वचन, काया, पुण्यवत के साता वेदनी दृष्टीमें आवे सो २ अनुमान प्रमाणसे ऋद्धी, सपदा, बल, रुप, जाती, ऐश्वर्य, की उत्तमता देख अनुमान से जाणे की ये पुण्यवंत है जैसे सूबहु कुँवर की सपदा देख गोतमस्वामी प्रमुख साधुजीने जाण कि यह पुण्यवत जीव है ३ ओपमा प्रमाणसे, पुण्यवतको पुण्यवंतकी ओपमा देवे जैसे—' देवो दुगंदगो जहा ' अर्थात् पुण्यवत जीव दुगधक (इद्र के गुरुस्थानीय) देवके जैसा सुख भोगवता है तथा—' चदो इव तारणं, भरहो इव मणुयाण ' अर्थात जैसे तारा के समुहमें चंद्रमा शोभता है, तैसे मनुष्योंके वृंदमें भरत नामे महाराजा शोभते हैं इत्यादि ओपमा प्रमाण जानना ४ आगम प्रमाण से शुभ प्रकृति, और शुभ योगसे पुण्यका बध होता है शास्त्रमें कहा हैं 'सुचिन्न कम्मा सुचिन्न फला भवंती' अच्छे कर्म के अच्छे फल होते हैं देवायु मनुष्यायु शुभानुभाग, इत्यावि पुन्य फल जानना जितनी सकर डाले उतना मीठा होगा ऐसे ही पुण्यके रसमें पछ गुण हानि वृद्धी होती है पुण्यकी अनत पर्याय, और अनत वर्गणा जैसे पुण्यके उदय से देवताका आयुष्य बाधा परतु कालके अपेक्षा से चउठाण * वलिया है इस लिय जैसे २ शुभ योग की वृद्धी, तैसे २ पुण्यकी वृद्धी समजना ओर भी पुण्याणुबंधी पुण्य सो—तिर्थकर महाराजवत् पूण्याणूबधी पाप सो—हरकेसी ऋषीवत् पापानुबंधी पूण्य सो—गोसालावत् तथा अनार्य राजावत् ओर पापानूबधा पाप सा नाग श्री वत् इत्यादि आग

* एक सेर भर पाणीको अग्नी पर उफालन से पाव पाणी रहे उस कर्म के रसने चउठाण पर्ता या पणा ग्राणा है सो जानना

म प्रमाण से पुण्यके अनेक रूप होते हैं

४ पापतत्व, पुण्य से उलटा पाप समजना जैसे १ वर्णादि पाच तीन जोग, अमनोज्ञ मिले सो प्रत्यक्ष पाप २ किसीको दुखी देखकर कहे कि इसके पूर्व पापका उदय हुवा है, सो पापका अनुमान ३ यह बिचारा नर्क जैसे दुख भोगवता है, यह पापकी ओपमा ४ और पापकी प्रकृती, तिथी, अनुभाग, प्रदेश, इनका असुभ बंध सो, आगम प्रमाण

५ आश्रवतत्व १ योग के वैपारका प्रत्यक्षपणा सो प्रत्यक्ष प्रमाण २ अव्रतीपणा सो, अनुमान प्रमाण ३ तालाव के नालेका, सूइके नाकेका, घर के दरवाजेका, इत्यादि द्रष्टातो से आश्रवका स्वरुप बतावे सो ओपमा प्रमाण ४ और अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान माया, लोभ, इन कषायके प्रमाणू मिलकर दलरुप स्कन्ध आत्मा के प्रदेशको वर्गणा चोंटे सो आगम प्रमाण जानो

६ सवर तत्व (१) प्रत्यक्ष प्रमाण,–देश (थोडे)से जोगका निरुधन करे सो देश सवर, और सर्व से निरुधन करे सो सर्व संवर (२) अनुमान प्रमाण से—सावद्य जोगके त्यागीको सवर कहना ३ ओपमा प्रमाण—जैसे घरका दरवाजा लगाने से मनुष्यका आगम बंद पडता है, और नावका छिद्र रोकनेसे पानीका आना बंध होता है; तैसे योगका निरुधत्याग–प्रत्याख्यान करने से संवर होता है ४ आगम प्रमाण से–आत्माका स्थिरपणा, अकपपणा, जोगका निरुधन–देशसे और सर्वसे आत्माका निश्चल पणा, आत्मा निजगुण से सयुक्त होवे सो आगम प्रमाणजानना

७ निर्जरा तत्व—१ प्रत्यक्ष प्रमाण से–बारह प्रकारका तप कर्मका उच्छेदन करता है सो २ अनुमान प्रमाणसे–ज्ञान दर्शन चारित्र की, तथा क्षयोपसम सम्यक्त्व की वृद्धी होती देखे, और देवायू प्रमुखकी प्राप्ती देख कर निर्जराका अनुमान होवे ३ ओपमा प्रमाण–जैसे क्षार से धोनेसे तथा स्वागी टकणक्षार प्रमुख के संयोगसे सुवर्ण, सूर्यको ढके हूये बादल वायूके सयोगसे दुर होवे, तैसे ही चेतन पर कर्म रुप मेल छया हूवा, तपस्या से दूर होवे, तब निजगूण प्रगटे. यह निर्जराकी ओपमा ४ आगम प्रमाणसे—आसा–वांछा रहित तप आत्माका उज्वलपणा, सम्यक्त्व युक्त सकाम निर्जरा होय सो आगम प्रमाण

८ बंधतत्व १ प्रत्यक्ष प्रमाण से जीव और पुद्गल खीर नीरके जैसे लोली भूत हो रहे है जिससे सरीरका संयोग प्रयोगसे पुद्गल पणे प्रगमा हुवा दिखता है २ अनुमान प्रमाणसे तिर्थंकर भगवानका केवली भगवानका, गणधरजीका, छद्मस्थ मुनीका, उपदेश श्रवण करे, तो भी संशय, व्यामोह, अज्ञान, भ्रम, इत्यादी जावे नहीं, इस अनुमानसे जाण जायके, इसका कर्म प्रकृतियोंका कठिण बंध है, जैसे-चित ऋषीजी ब्रह्मदत चक्रवर्तीको कहा है कि ' नियाणे म सुहं कड ' पूर्वक किये हुये नियाणेके जोगसे हे राजा ! तेरेको सुखदाता उपदेश कैसे लगे ? तथा महा आरंभादिक १६ कारणसे चार गतीका आयुष्यका

बंध होता है, सो भी अनुमानसे जाना जावे, और बावीस* (२२) लक्षणसे पहचाने कि यह अमुक गतिसे आया है यह अनुमान प्रमाण ३ ओपमा प्रमाणसे प्रकृती बंध सो-सुख दु ख विपाक पणे की षट गुण हाणी वृद्धी, जैसे-पानीमे थोडी सक्कर डालेसे थोडा मिठास, और बहुत सक्करसे बहुत मिठास, होता है ऐसे शुभ कर्म और पाणीमें थोडा निमक (लूण) डाले तो थोडा खारा, और बहुत लूण डाले तो बहुत खारा होवे, ऐसे अशुभ कर्म यों तिव्र मंद रसपणे प्रगमे इत्यादि अनेक ओपमा प्रमाणसे अनुभाग बंध जानना और प्रदेश बंध एकेक जीवके प्रदेश उपर, कर्मों की वर्गणा रही है जैसे अबरख [भोडल] के पडल [पुड] दिखनेमे एक दिखता है, और निकालनेसे बहुत निकलते हैं, वैसे ही कर्म वर्गणा जविके प्रदेशके साथ बंधी है, किसीको थोडी, और किसीको बहुत ४ आगम प्रमाण से— जविके शुभाशुभ योग, ध्यान, लेश्या,• प्रणाम इत्यादि होवे उसे आगम प्रमाण कहना

---

* जिस गतिसे आया उसके लक्षण—१ दीर्घकपाय २ सदा अभिलापी, ३ मूर्खसे प्रीती, ४ महा कोपवंत ५ सदा रोगी ६ शारिरम खाज (खुजली) बहुत चले इन ६ लक्षणसे मालम पडे कि यह नर्कसे आया है ॥ १ महा लोभी, २ महा लालची, (दूसरेके धनकी अभिलाषावंत) ३ महा कपटी, ४ मूर्ख, ५ भूख बहुत लग, ६ आलसी यह ६ लक्षणसे तिर्यच गतीसे आया हुवा विदित होता है ॥ १ पावा लोभी, २ विनयवंत ३ न्यायवंत, ४ पापसे डरे ५ अभिमान रहित, यह ५ लक्षणसे जाने की मनुष्यगतिसे आया हुवा दिखता है ॥ १ दातार, २ मीठा बोला, ३ माता पिताका और गुरुका भक्त, ४ धर्मका अनुरागी, ५ बुद्धिवंत, इन पाच लक्षणासे जाना जावे कि यह देव गतिसे आया दिखता है

लेशाका नाम.	वर्ण गंध रस स्पर्श	छ. लेशावाले के लक्षण	स्थिती जघन्य-उत्कृष्ट	जघन्य गति	मध्यम गति	उत्कृष्ट गति
कृष्ण लेशा.	वर्ण काला, गंध दुर्गंध, रस-कडवा, स्पर्श तिक्षण	पांच आश्रव आचरवे, दूसरे पास सेवावे; तीन योग और पांच इन्द्रि छूटी रखे, तिव्र प्रणामसे के कापका आरंभ करे, हिंसा करता अचकाय नहीं क्षुद्र प्रणामी, यानी लोकके दुःखका डर नहीं सो कृष्ण लेशावाला	ज० अंतर मुहुर्त, उ० ३३ सागर.	भवनपति, वाण व्यंतर, मनुष्य (अनार्य)	स्थावर, विकलेन्द्रि, तिर्यंच पचेंद्री	पांचमी छट्ठी, सातमी, नर्क
नील लेशा	वर्ण हरा गंध दुर्गंध रस-तीखा स्पर्श खरसरा	इर्षावंत, दूसरेके गुण सहन होवे नहीं, तपस्या करे नहीं करने देवे नहीं ज्ञानका अभ्यास कर नहीं करने देवे नहीं, नाचक कपटी, लज्जा रहित, रसका गृधी, महा आलसी, फक्त आपके ही सुख चहाने सो नील लेशी	ज० अंतर मुहुर्त उ० १७ सागर.	भवनपति, वाण व्यंतर, मनुष्य (कर्म भूमी)	स्थावर, विकेन्द्री तिर्यंच पचेंद्री	तीसरी, चौथी नर्क
कापोत लेशा.	वर्ण-ऊदा गंध-दुर्गंध रस-कसायला स्पर्श कठिण	बांका बोले, बांका चाले, आपके अवगुण ढके दूसरे के प्रगट करे, कठोर वचन बोले, चोर को, दूसर की सम्पदा देखकर झुरे, सो कापोत लेशा वाला—	ज० अंतर मुहुर्त, उ० ७ सागर.	भवनपति, वाण व्यंतर, मनुष्य (अंतर द्विपा)	स्थावर, विकेन्द्री तिर्यंच पचेंद्री	पहली, दूसरी, तीसरी नर्क,
तेजु लेशा	वर्ण लाल गंध सुगंध रस खटमिठा स्पर्श-गरम	न्याय वंत स्थिर स्वभावी, सरल निःकपट रहित, विनीत, ज्ञानी, दमित इन्द्रि, दृढ धर्मी प्रिय धर्मी, पाप करता डर सो तेजु लेशा वंत	ज० अंतर मुहुर्त उ० २ सागर.	पृथवी, पाणी, विनास्पति, मनुष्य (जुग लिया	भवनपति, वाण व्यंतर, जोतषी, तिर्यंच पचेंद्री	पहला दूसरा स्वर्ग

पद्म लेश्या	वर्ण-पीला गंध-सुगंध रस मीठा स्पर्श-कोमल	चार कषाय पतली करी, सदा उपशांत चित्त, त्रिजोग वशमें किये, योग्य बोल, दमित इन्द्रि, सो पद्म लेशी.	ज० अंतर मुहुर्त, उ० १ सागर	तीसरा स्वर्ग	चौथा स्वर्ग	पांचमा स्वर्ग
शुक्ल लेश्या	वर्ण श्वेत गंध-सुगंध रस-मधुरा स्पर्श-सुकुमाल	आर्त ध्यान रौद्र ध्यान वरजे, धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान ध्यावे, राग द्वेष पतले किये, या निर्मले, दमित इन्द्रि, सुमति गुप्तिवंत, सराग संयमी, तथा वीतरागी सो शुक्ल लेश्या वाला जीव	ज० अंतर मुहुर्त, उ० ३३ सागर.	छट्ठे स्वर्ग से बारमें स्वर्गतक	नव ग्रैवेयक चार अनुत्तर विमान	सर्वार्थ सिद्ध विमान

यह छ लेश्या का प्रमाण उत्तराध्येनजी सूत्रके ३४ में अध्याय प्रमाणे हैं

योग	शुभ	अशुभ	अशुभ	शुभ
मन	सत्यमन योग	असत्य मन योग	मिश्र मन योग	व्यवहार मन जोग
वचन	सत्य वचन योग	असत्य वचन योग	मिश्र वचन योग	व्यवहार वचन योग
काया	उदारिक योग उदारिक मिश्र	वैक्रय काया योग वैक्रय मिश्र काया	नंबर आहारिक मिश्र-योग आहारिक मिश्र जोग	कारमाण योग

इस यत्र में जो शुभ अशुभ किये है सो मन और वचन दोनो जोग आश्रिय जानना और काया का योग सो आहारिक तो शुभ है और उदारिक वैक्रय तो शुभा शुभ जैसे कर्म्ममें प्रवृते तैसे ही जानना

९ ' मोक्ष तत्व ' १ प्रतक्ष प्रमाणसे—देशसे उज्वल हो
सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन, सम्यकचारित्र, इत्यादि गूण प्रगटे, अ
शुभ प्रकृतियोंके उदयसे, अशुभ प्रकातियोंका क्षय होनेसे, शूभ ग
प्रगटे, जिससे तीर्थकरादिक उत्तम पद की प्राप्ती होवे सो प्रत्यक्ष मो
तथा चार घन धातिक कर्मके नाश होनेसे, केवल ज्ञान प्रगटे स
प्रत्यक्ष मोक्ष कहना २ अनुमान प्रमाणसे—दर्शन मोहनी, चारि
मोहनी, के क्षय होवे सो मोक्ष ३ ओपमा प्रमाणसे,—दग्ध (जल
हुवा बीजके अंकूर नहीं प्रगटे, तैसे मोक्ष के जीवको कर्म अंकुर ना
प्रगटे- तथा जैसे घृत सींचणे स अमी तेज होवे, तैसे वीतराग-रा
द्वेषके क्षयकरने से हायमान प्रणाम न हावे, इत्यादि अनेक उपमा
जानना ४ आगम प्रमाण—मोक्ष के जीवोंको अनत चतुष्टय (अन
ज्ञान–दर्शन–चारित्र–तप) ज्यों २ सुत्रोक्त प्रकृती क्षपावे त
त्यों जीवके निज गुणरुप लब्धी प्रगटे- जैसे–(१) पहिले
मिथ्यात्व गुणस्थानमें प्रवर्तता जीव वितरागकी वाणीको, उ
थिक, कमी, और विपरीत, श्रधे, परुपे, फरसे, यह जीव चार गति, २
दंडक, चौरासी लक्ष जीवा योनीमें, अनंत पुद्गल परावर्तन करे
सहसादान गुणस्थान में आवे तव–जैसे किसीने खीरका भोजन कि
या, और उसे वानती (वमन) हो गई, पीछे गुलचट्टा स्वाद र
तैसे उसकी आत्मामें स्वल्प धर्म रस आवे तथा वृक्ष से फल टूट पृथ्वी
पर पडते, वीचमें जितना काल रहे उतना धर्म फरसे, यह जीव अनत
ससारका अत कर, फक्त अर्ध पुद्गल परावर्तन संसार भोगरणा बा
की रखे कृष्णपक्षीका सुक्लपक्षी होवे २ मिश्र गुणस्थानमें प्रवर्तता
जीव–जैसे शिखरण (दही सक्कर भेला कर) खाने से, कुछ खट्टा
कुछ मीठा स्वाद लगे, तैसे—खट्टे समान मिथ्यात्व, और मीठे समान

म्यक्त्व, यों मिश्र-पणा होवे यह जीव देश उणा (कुछ कमी) र्ध पुद्गल परावर्तनमें संसारका अंत करे ४ अवृती सम्यक द्रष्टी णस्थान वर्ती जीव—अनतानुबन्धी चोक और तीन मोहनी यह ७ प्र ती खपावे, सुगुरु, सुदेव, सुधर्म, पर श्रद्धा प्रतीत आस्ता रखे, वि तरागका धर्म सचा श्रधे चार तीर्थकी भुक्ति करे इस जीवको जो हिले आयुन्य बंध न पड़ा होय तो, नर्क, तिर्यंच, भवनपति, वाण यंतर, ज्योतषी, स्त्री, नपूंशक यह सात ठिकाणे न जाय ५ देशव्रती णस्थान—सात पहिलेकी, और प्रत्याख्यानीका चोक यो ११ खपावे यह श्रावकके वृत यथा शक्ति धारण करे नवकारसी आदि छे मासी तप करेयह जीव जघन्य तीन, उत्कृष्ट पन्नरे भव कर मोक्ष जावे ६ प्रमादी गुण स्थान आया हूवा जीव—इग्यारह पहिले की, और प्रत्याख्यानी का चोक, यों १५ प्रकृति खपावे, साधु होवे परंतु द्रष्टीका, भावका, वचनका, कषायका, चपलाइ पणा रहे कभी २ कषाय प्रज्वलित हो तु शात पड़ जाय यह-जीव जघन्य उस भव, उत्कृष्ट तीन, तथा १५ भवेंमे मोक्ष जाय ७ अप्रमादी गुणस्थानमें आया जीव—पंच प्रमाद+ [मद, विषय, कषाय, निंदा, विकथा] दूर कर और १५ तो पहिले कही, सोलमी संजलका क्रोध दूर करे, यह जीव जघन्य उस भवेंमे, उत्कृष्ट तीन भवेंमे मोक्ष जाय ८ नियट बादर गुणस्थान आया जीव—सोल पहिले कही सो, और सतरमा सजलका मान खपावे तब अपूर्व करण (पहिले नहीं आया ऐसा) आवे इस गुण स्थानसे

+ गाथा—सुय केवली आहारग रुजुमइ उपसमगा विहु पमाए;
हिंडंति भवमणंतं तं अणंतर मब चउगइया,

अर्थ—श्रुतकेवली आहारिकशरीर रुजुमति-मनपर्यवज्ञानी उपशां तमोही ऐसे उत्तम पुरुषोभी प्रमादके वश हो चारों गतीयाम अनन्त प रिभ्रमण करते है ऐसे दुष्ट प्रमादका नाश सप्तम गुणस्थानमे होता है

दो श्रेणी होवे १ उपसम श्रेणीमें मोहकी प्रकृति उपसमावे [ढांके सो इग्यारमे गुण स्थान तक जाके पीछा पडे और २ क्षपक श्रे प्रवर्तता मोह प्रकृती सपावे (नाश करे) सो इग्यारहवा गुणस्था छोड ९-१०-१२-१३-में जावे यह जघन्य उस भवमें, उत्कृष्ट तीन भवेमें मोक्ष जाय २ आनयट बादर गुणस्थान आया जीव--सत पहिले कही, और अठारहवी सजलकी माया, तथा तीन वेद, यों २ प्रकृती सपावे तव अवेदी, निष्कपटी होवे, यह जघन्य उस भवमें उत्कृष्ट तीसरे भवमें योक्ष जाय * १० सुक्ष्म संपराय आया जीव-२ तो पहिले कही, और हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंच्छा, यह यों २७ प्रकृति खपावे यह शात स्वरूप अल्पामोह, अविभ्रम होवे यह जघन्य उस भवमें, उत्कृष्ट तीन भव कर मोक्ष जावे ११ उपशां मोह गुण स्थान---२७ पहिले की, और २८ मा सजलका लोभ, यं २८ प्रकृति उपशमावे (राखमें अमी दावे तैसे दाटे) सो यथाख्या चारित्र पणे प्रवृते पडे तो नीचे जावे, और मरे तो अनुत्तर विमान जावे १२ क्षिण मोह गुणस्थान-पुर्वोक्त अठाइस प्रकृति सर्वथा प्रका सपावे तव २१ गुण प्रगटे. क्षपक श्रेणी, क्षायक भाव, क्षायिक स म्यकत्व, क्षायिक यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, भाव सत्य, अमायी अकषायी, वीतरागी, भाव निर्ग्रंथ, संपूर्ण संवुड, सपुर्ण भवितात्मा, म

---

* प्र आठमा नियट बादर, और नवमा अनियट बादर गुणस्थान क्या कहा ? उ चारित्र मोहनी कर्मकी अपेक्षा स दर्शन मोहनी बादर (नहीं) है इसलिये आठम गुणस्थान का निवृति बादर कहा है और सवथा बादर मोहसे निवृते नहीं अर्थात् चारित्र मोह सत्ताय है इसलि ये नवम गुणस्थानका नाम अनिवृता बादर है, यह अपेक्षा वचन है आ उसका दूसरा नाम अपूर्व करण भी है

हा तपस्वी, महा सुशील, अ माही, अविकारी, महा ज्ञानी, महा ध्या नी, वर्धमान प्रणामी अपडीवाइ होकर, अंतर मुहुर्त रहकर तेरमे गुण स्थान जाय इस गुणस्थानमें मरे नहीं इस गुण स्थानके छले समय ५ ज्ञानावरणी, ९ दर्शनावरणीय, ५ अंतराय, यह तीन कर्मोका क्षय होता हैं तब तेरहवे गुणस्थान पधारे १३ सयोगी केवली गुणस्थान आवे-तब दश बोल सहित रहे संयोगी, सशरीर, सलेशी, शुक्ललेशी, यथाख्यात चारित्री, क्षायिक सम्यकत्व, पंडितवीर्य, शुक्लध्यान, केवल ज्ञान-केवलदर्शन यह दश गुण होय इस गुणस्थानवृती—जघन्य अंतर मुहुर्त उत्कृष्ट क्रोड पूर्व देश ऊणा (९ वर्ष कमी) प्रवर्त कर, चउदहवे गुण स्थानक पधारें १४ अयोगी केवली गुणस्थान आये हुये भगवान-शुक्लध्यान के चौथे पाये युक्त- समुछिन्न क्रिया, अनतर, अप्रतिपाती (पीछे पडे नहीं) अनिवृती ध्याता पहिले मन, फिर वचन, फिर काया, यों तीन ही जोगका निरुंधन कर, फिर आण पाण (श्वासोश्वास) का निरुंधन कर, रुपातीत (सिद्ध) ध्याता पहिले दश बाल कहे उसमेमे सलेशी, सुक्ललेशी, सयोगी यह तीन बाल रहित शेप सात बोल सहित, मेरु के जैसे अडोल, अचल,स्थिर, अवस्थाको प्राप्त होवे वेदनी, आयुष्य, नाम, गोत्र, इन चार कर्मका क्षय कर, उदारिक, तेजस, कारमण शरीरको त्याग, समश्रेणी, ऋजुग-ती, अन्य आकाश प्रदेशका अवलंबन नहीं करते, एक समयमें वि-ग्रह गती रहित सिद्धस्थान मोक्षस्थानको प्राप्त होवे यों अनुक्रमे गुण प्रगट होवे यावत् मोक्षपदको प्राप्त होवे सो आगम प्रमाण

यह सात नय, चार निक्षेपे, चार प्रमाण, इत्यादि अनेक रीती करके नवतत्वके स्वरुपका संपुर्ण जान होय सो—सूत्र धर्म और भी इस श्रुत धर्म के पेटमें द्वादशांगी वाणी प्रमुख सर्व ज्ञानका समावेश

होता है इसका कोइ पार न ले सक परतु अपनी यथा शक्ति ज्ञान ग्रहण करे *

गाथा—जिणवयण अणुरत्ता, जिणवयण जे करंती भावेण, अमला असंकिलिठा तेहुती परित ससार, १ ॥—श्री उतराध्ययन

अर्थात् श्री जिनेश्वर के बचनमें रक्त होकर' निर्मल और क्लिष्ट (खराब) प्रमाण रहित, जो जिनवाणीका आराधन करते हैं, वो संसारका पार पाते है

---

* श्लोक—अनत शास्त्र बहुलाश्च विद्या
अल्पश्च कालो बहु विघ्नताच
यत्सार भूत तदुपास नीयम्
हंसैर्यथा क्षीर मवांबु मध्यात

अर्थ—शास्त्रज्ञान तो अनंत है विद्याभी बहुत है और आयुष्य थोडा है, उसमें भी विघ्न बहुत है! इसलिये, जैसे हंस पक्षी जल (पाणी) का त्याग कर दूध ग्रहण करता है वैसे सर्वम से तत्वसार १ ग्रहण करके लेना चाहिये

श्लोक-अनेक सशयोच्छती, परोक्षा अर्थ स्पदर्शक;
सबर्स्थ लोचनं शास्त्र, यस्य ना स्त्येव एवस॥

अर्थ क्योंकि शास्त्रज्ञान है सो अनेक संशयका टालनेवाला है, परोक्ष अर्थका बताने वाला है, शास्त्रार्थ सर्व के नेत्र तुल्य है, यह नेत्र जिस के नहीं है वो अन्ध जैसा ही है

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी के संप्रदाय के ॥
॥ बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषीजी विरचित ॥
॥ श्री ' जैन तत्वप्रकाश " ग्रंथका ' सूत्र धर्म ' ॥
॥ नामक द्वितीय प्रकरण समाप्तम् ॥

प्रकरण ३ रा.

मिथ्यात्व

बुझजति उट्टिज्ञा, बधण परियाणिया,
किं माइ बंधण वीरे, किंवा जाणति उट्टइ ॥१॥
श्री सुयगडांग सूत्र अ १

श्री तीर्थंकर भगवान के केवली के या सामान्य साधू आदि के उपदेशसे, कर्म बधके कारण मिथ्यात्वादिकका ज्ञान होना कि श्री वीर महा पुरुषने कर्म बधके कौन २ से कारण फरमाये तथा उनका आगे क्या परिणाम [फल] होता है, और कर्म बधको कौनसी २ क्रिया कर तोड सक्ते हैं ? इस बातका ज्ञान जरुर ही होना चाहिये क्यों कि बंध और मुक्तके कारणको जो जानेगा, सो ही कर्म बधसे बचेगा, और पहिले बांधे हुव कर्मको तोड सकेगा, शाश्वत सुख प्राप्त कर सकेगा

सम्यक्त्वका स्वरुप बताये पहिले सम्यक्त्वका प्रतिपक्षी मिथ्यात्वका स्वरुप बताते है क्यों कि मिथ्यात्वका स्वरुप जाननेसे ही मिथ्यात्वसे बचनेका प्रयत्न और सम्यक्त्व अंगीकार करनेकी कोशीस कर सकेगा मिथ्यात्व तीनप्रकारका होता है, १ ‘ अणाइ अपज्जवसीए ’अर्थात कितनेक मिथ्यात्वकी आदि और अत दोनो नहीं सो— अभव्य आश्री, २ ‘ अणाइए सपज्जवसिए ’ कितनेकी आदी तो न

हीं परन्तु अंत है, सो भव्य आश्री ३ ' साइए सपज्जसिए ' कितने की आदि और अत दोनो है सो पडवाइ सम्यक द्रष्टी आश्री और यह मिथ्यात्व पचीस प्रकारसे होता है

१ 'अभिग्रही मिथ्यात्व ' —कितनेक मनुष्य ऐसे है कि अपने ध्यानमें जचे सो सच्चा, और और सर्व झुटा रखे मरी श्रद्धामें फरक पड जाय ऐसा जाण सद्गुरुकी संगत नहीं करे श्री जिन वाणीका श्रवणही नहीं करे हठाग्रही होकर सत्यासत्यका निर्णय भी नहीं करे, रूढी मार्गमें मग्न रहे कोइ पुछ तो कहे कि हमारे बाप दादा करते आये सो हम करेंगे हमारे बापदादाका धर्म हम कैसे छोडे ? पखु वे जैसा धर्म बाबतमें विचार करते है तैसा ही जो ससार बाबतमें द्रष्टी लगावे तो यों नहीं बोले देखिये, बाप दादा जो अधे, बहिरे, लुले. लंगडे, होवे तो क्या वो भी आँख कान फोड हाथ पाव तोड अधा बहिरा लगडा, लुला हो जावेगाक्या ? बाप दादा निर्धन होवे और उसको द्रव्य प्राप्त हुवा होवे तो द्रव्य फेक धन हीन बनेगा क्या ? जो बाप दादा कीपरपरा नहीं छोडे तो यह भी काम करना पडेगा सो यह तो नहीं करते हैं और धर्म बाबतमें बाप दादाको विचमें लाते हैं, और मिथ्या मतका त्यागन नहीं करते हैं और भी कितनेक कहते हैं कि वडे २ विद्वान, धनवान लोग इस महजबमें हैं सो क्या वो मुर्ख है ? परतु ऐसा विचार नहीं करते हैं कि बडे २ विद्वान धनवान लोक जानके पागल (उल्छू) होने, इज्जत गमाने, मदिरा (सराव) क्यों पीते हैं ? क्या वो मूर्ख हैं ? अहो भाइ ! मोह कर्मकी सत्ता (शक्ती) बडी जबर है इसके योगमे ही यह चेतन पापके काममें बहुत खुश रहता है पापसे अनादि स पहचान है पापकी बात विन सिखाइ (पढाइ)आ जाती है देखिये गर्भ से बाहिर पडते ही ये

ना–दूध पीना–और बडे हुये पीछे स्त्री के साथ क्रीडा करना कौन सिखाता है ? अनादि कालसे यह काम कर आया है, इस लिये वि न सिखाये यह वातो याद आजाति है ऐसा ज्ञान हटग्राही नहीं होना धनवान विद्वान के सन्मूख क्या देखना ? अपनी आत्माका हित देखो

२ 'अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व '—हट ग्राहि तो नहीं परन्तु ध र्मा धर्म, या निजगूण पर गुण पहचानने जितनी बुद्धी नहीं, स्वभाव-से ही मुढता जिससे सत्यासत्यका निर्णय नहीं कर सके, जैसे कुडछी सी-रा आदि पग्रस में फिरे परन्तु जडता पणेसे स्वाद की परिक्षा न कर सके, ऐसे कितनेक भोले प्राणी इस जगतमें है और वो पूछनेसे जुवा ब देते है कि अपनेको पक्षपातमें पडने की क्या जरूर है? कौन कि सीके महजबको बुरा कहे ? न जाने कौन सच्चा और कौन झूटा और ऊंडे विचार से देखते हैं तो सर्व धर्म सरीखे (एकसे) हैं कोइ भी खोटा नही है क्यो कि सर्व महजबमें बडे २ विद्वान, महात्मा पंडित, धर्मोपदेशक, बैठे हैं वो सब खोटे हैं क्या ? अपन विचारे सब से ज्यादा कहांसे आये ? इसलिये अपनको किसी झगडेमें नहीं पड-ना, अपने तो सर्व सच्च हैं सर्वको भजेगे पूजेगें सर्व गुरूको नमेगे इस से ही अपना उद्धार होगा एसे जो विचारवंत है, वो विचारे वी-चमें ही डूब जावेगे, न इस तीर के न उस तीर के- इन भोले जीवों को इतना तो जरूर सोचना चाहिये कि, जो सर्व महजब एकसे हो त तो इतने भेदातर ही क्यों पडते और अपना पक्ष ही क्यों ताणे त ? इतने विचारसे यह तो सिद्ध हुवा की सब महजबमें से एक महज ब सच्चा है अब सच्चा महजब कौनसा उसको जानने की जरूर पडी सो इसे जरा आत्मानुभवसे—दीर्घ द्रष्टी से, निरापक्ष होकर न्याय द्रष्टी से विचारिये कि,–जिसके आधार से सर्व मत चल रहे हैं जो बात को सर्व महजबवालेने मुख्य गिण रक्खी है, वो वस्तु सर्वांश करक जहां रही होवे वोही मत सच्चा है सो ऐसा सर्व मान्य पदार्थ कौनसा है

उसका क्या नाम हैं? उसका नाम दया * है (अहिंसा परमोधर्मा) जहं भगवतीदया सर्वांश वीराजती होवे सो सच्चा महजब और सर्व कपोल कल्पित जानना

शंका—एक दयाका ही नाम लिया तो फिर सत्य, सील, संतोष, क्षमा, वगैरा गूण कहा गये?

समाधान—अहो बन्धू ! सर्व गूणका इस दयामें ही समावेस होता है देखिये यह दया दो प्रकारकी होती है—१ स्व दया सो अपनी आत्माकी दया पालनी, इसका अर्थ यह नहीं करता हू कि खूब खानपान भोग विलास कर आत्माको पुद्गलानदमें गरक कर सुखी होना, क्यों कि यह कुछ सुख नहीं है, यह तो केवल मानने रुप ही सुख है परन्तु इस किंचित् सुखका परिणाम महादु खदाता हो जायगा शास्त्रमें कहा है कि 'क्षिणमित सुखा बहुकाल दु खा, खाणी अन्नत्थाण दू काम, भोगा' अर्थात् काम (शब्द रुप) भोग (गध—रस—स्पर्श) यह अपथ्य आहार की तरह क्षिण मात्र सुख दे कर अनंतकालके दु ख देनेवाले हो जाते हैं, इसलिये यह काम भोग महा अनर्थ की खाणि हैं, जो किंचित सूख दे कर बहुत काल दु ख देवे, तथा जिसके अतसमें दु खका निवास होवे उसे सुख क्वी भी नहीं कहा जायगा वो दु ख ही समजना कहा है 'जिस सूख अदर दु ख वसे, वो सुख है, दु ख रुप' इस लिये आत्माकी की दया उसे कही जाती है कि अपनी आत्मा के साथ ज्ञान–मन से विचार करना, कि रे आत्मन्! जो तू हिंशा, झूट, चोरी, अब्रह्म, इत्यादि अठरह पाप सेवन करगा तो, इस भवेंमे शारिरीक मानसिक पीडा (दु ख) से पीडायगा, और आगे नर्क तिर्यचादिककी अनत वेदना पायगा, ऐसा समज इन कामों से बचेगा तो तू थोडे कालमें परम सुखी होवेगा इन विचारों से अत्र्य

* श्लोक—अद्रोह सर्व भुतेषु, कर्मणा मानसा गिरा,
अनुग्रहश्च दानच सता धर्मः सनातन'
अर्थ—मन वचन और कायासे प्राणी मात्रका द्रोह नहीं करना सब पर अनुग्रह करना और दान देना योंही सनातन धर्म है

से आत्माको बचानी, सो अपनी आत्मा की दया हुई, और २ पर दया सो पृथव्यादिक छेइ कायका रक्षण करना सा स्व दयामें पर दया की नीमा है अर्थात् जरूरही होय, और परदयामे स्व दया की भजाना अर्थात् होए भी और न भी हो देखिये भाई ! एक ही दयामें सर्व स दगुणोंका समावेस हो गया ❀ ऐसा जो दया मय सत्य धर्म है सो ही सच्चा धर्म है, इसे ग्रहण करो !

प्रश्न—ऐसी सर्वथा प्रकारे दया इस जगतमें कौन पाल सकता है ? हमारेको तो ऐसी दया पालनेवाला कोइभी द्रष्टी [निजर] नहीं आता है

समाधान—अहो भाइ ! ऐसा मत जानो कि ऐसा कोइ नहीं हैं कहा है ' बहु रत्ना वसुधरा ' अबी भी इस सृष्टिमें बहुत रत्न हाजिर हैं बडे २ महात्मा मुनी पंचमहाव्रत धारी, निज आत्मा की और पर आत्मा की सर्वथा दया पालने समर्थ विराजते हैं और वैसी ही दया पालते हैं

प्रश्न—साधूजी भी आहार विहारादि नाना कर्तव्य करते है, उसमें हिंसा नहीं होती है क्या ?

समाधान—आहार विहारादि कर्त्तव्यमें जो अजानमें किंचित् हिमा होती है सो हिंसा नहीं गिणी जाती है परमेश्वरने फरमाया है की—

जय चरे जय चिठे, जय मासे जय सये ।
जय भूजतो भासतो, पाव कम्म न बधई ॥

यत्नासे इर्यो समति युक्त चलनेसे, यत्नासे खडे रहनेसे, यत्नासे बैठनेसे, यत्नासे सयन करनेसे, यत्नासे भोजन करनेसे, और यत्नासे

+ अहिंसैव पराधर्म शेषास्तू मतविस्तरा
अस्यास्तु परिरक्षार्थं पादपस्य यथावृत्ति

अर्थ—अहिंसाही परम धर्म है सत्यादि सर्व मत अहिंसा की रक्षा के वास्ते हैं, जस वृक्षकी रक्षाके वास्ते वाड होती है

(भाषा समती युक्त—ढके मूखसे) बोलनेसे पाप कर्मका बंध नहीं होता है इस हुकम प्रमाणे मुनी सर्व काम यत्ना पुर्वक करते है, सो हिंसा नहीं लगती है और कभी छद्मस्थ पणेसे योगसे चूकके हिंसा हो जावे तो आप पश्चाताप युक्त प्रायश्चित लेकर शुद्ध होते हैं इस लिये मुनी महाराज सर्वथा अहिंसा वृत धारी हैं

प्रश्न—साधूजी तो सर्वथा दया पाल सकते हैं, परतु हम तो गृहस्थ हैं, हमारेसे ऐसी संपूर्ण दया कैसे पले?

समाधान —अहो भव्य! तुमारा सत्य कहना हैं क्यों कि गृहस्थ पणेमें संपूर्ण दया पलनी बहूत मूशकिल है तो भी अपनेसे पले इतनी तो जरूर पालना, और जो हिंसा होती होव उसे हिंसा समज, उसका पश्चाताप करना बने वहा तक हिंसाको प्रति दिन कमी करना सर्वथा त्यागनेके अभीलाषी रहना, और अवसरपर सर्वथा हिंसा छोड मुनी पद धारन करना भवना और परुपणा तो शुद्ध रखनी, फरसना अवसरपर करनी यह ही सब मतमें सार है ऐसा समज अनाभिग्रह मिथ्यात्व छोडना

२ अभीनिवेसिक मिथ्यात्व'—कितनेक मतभ्र ही मनुष्य अपने मतमें अपनी मत—कल्पनाको झूठी समज जाते हैं तो भी मानके मरोडे भेषको नहीं पलटते हैं, अपनी ग्रही हुइ हटका त्यागन नहीं करते है उनको कोइ गीतार्थ समजावे तो वे अनेक प्रकारके कुहेतु कर, कु कल्पना कर अपने कुमतका सिद्ध करते हैं उत्सूत्रकी परुपणा कर, एक जिन बचनको उत्थापते, उससे मिलते अनक वचन उत्थापने पडते है, और जो उत्तर न आवे तो तत्क्षण क्रोधके वशमें हा उस शुद्ध सिक्षा देनेवालेका तिरस्कार करे, और गुस्समें भराया हुवा अनेक मति कल्पनासे खोटे २ ग्रंथ कथा चारित्र रचकर, तथा जा जो शास्त्रार्थ उनके मतको हरकत कर्ता होवेउनको उल्टा कर, अपने मन मुजब स्थाप कर अनंत संसारके वृधिस न डरता, भोले लोकको भरमाकर सु, साधु की संगत दान मान देना बंद कर, फूटी नावके जैसे आप तो

डूबे, और अपने अनुयायियोंको भी लेकर पातालमें बैठते हैं यह जो उत्सूत्र की परुपना करे उनकी संगत नहीं करना, उनका उपदेश नहीं सूनना और अपनी आत्माको सुखी करनेकी अभिलाषा होवे तो जहां तक खबर नहीं पडे वहा तक की तो अलग बात हैं, परंतू जब अपने मनमें समज जाय कि यह अपनी कल्पना खोटी है तो उसी वक्त उसका त्याग कर, जो सत्य धर्म मालुम पडे उसे स्वीकार करे

४ 'संसयिक मिथ्यात्व' कितनेक ऐसे जैन भाइ है कि सुत्रों की कितनीक गहन वातें समजमें न आनेसे, या जैनकी और और मतकी बात विरुध मालुम पडनेसे, जैन शास्त्रमें संका लाते है कि यह बात सची किस्तराहहावे ? ये भगवानने झूट फरमाइ के आचार्योंने झूठ लिखा, ऐसा डामडोल चित्त करते हैं परंतू यों नहीं विचारते हैं कि भगवान झूटा उपदेश क्यों करेंगे ? क्या वीतरागको अपना महजब चलानेका अभिमान था, या मत पक्ष था, कि झूटी परुपना करें ? जो बात अपनी समजमें न आवे तो अपनी बुद्धीका फरक समजना परंतू तिर्थंकर या आचार्यका किंचित् दोष नहीं निकालना यदि शंका लगे तो गीतार्थका संजोग मिले खुलासा करना और जो संशय नहीं जाय तो अपनी बुद्धीका फरक जानना समुद्रका पाणी लोटेमें कैसे समावे जैसे अनंत ज्ञानी के वचन अल्पज्ञ के समजमें संपूर्ण कैसे आवे

५ 'अनाभोग मिथ्यात्व' यह अन समज से, अज्ञानपणे से, भोले पणे से लगता है यह एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चेंरेंद्री, असन्नी पंचेंद्रीमें और बहुत से सन्नी पचेंद्री को भी लगता है

६ 'लौकिक मिथ्यात्व' के तीन भेद •(१) देवगत (२) गु-

श्लोक—अदेव देव बुद्धियां, गुरुधीर गुरोयथा।
अधर्मे धर्म बुद्धिश्च मिथ्यात्व तद्विपर्ययात् ॥

अर्थ—अदेवको देव म गुरु को गुरु और अधर्म को धर्म मान नहीं मिथ्यात्व हैं क्यों कि यह विपर्यय हैं उसे ही मिथ्यात्व कहते हैं

रुगत (३) धमगत १ लौकिक देवगत मिथ्यात्व उसे कहते हैं, देवका नाम तो धारण किया परंतु जिनमें देवका गुण नहीं ऐसे चित्र के, कपडे के, कागदके, मिटी के, फत्थर के, काष्ट के, इत्यादिक अनेक प्रकार क अपने हाथ से वनाये हुये, जिनोंमें ज्ञान दर्शन चारित्रका विलकुल गुण नहीं, जिनके पास स्त्री है वो काम शत्रुसे पराभव पाये विषय बुद्धी है, जिनके पास शास्त्र है, जो शत्रु की हत्याके करने वाले है, जिनोके पास वार्जित्र हैं, वें अपने तथा दूसरे के उदास मनको वार्जित्र की सहाय से प्रसन्न करा चाहाते है जिनों के पास माला हैं वो पूर्ण ज्ञानी नहीं है, क्यो कि गिनती ध्यानमें नहीं रहती हैं, इस लिये इसलिये माला रखी है जिनके पास दूसरे देवकी मूर्ती हैं वो निर्वल हैं दुसरेकी सहाय चाहाते है जो स्नानादि करते हैं सो मलीन है मांस भक्षण करते है सो अनार्य हैं, अन्न फल आदि सचित वस्तु का सेवन करते हैं सो अवृती हैं फुल प्रमुख सूघते हैं सो अतृप्त हैं जो पूजाकी इच्छा करते हैं सो असमर्थ हैं जो, रुष्ट हुये दुःख और तुष्ट हुये सूख देते है सो राग द्वेष यूक्त हैं जो प्रतिष्ठा चाहावे सो अभिमानी हैं इत्यादि अनेक दुर्गूणक भरे हैं ऐसेको देव तरीके कैसे माने जाय ? और देव,है या मनुष्य है, या कोइ वस्तु है, ऐसा उनके शास्त्रोंसे भी निश्चय नहीं होता हैं कहते हैं कि ब्रम्हासे माया उत्पन्न हुइ, और मायासे सत्व, रजस, तमस, यह तीन गुण, पैदा हूय, और इन तीन गुणसे ब्रम्हा, विष्णु, महेश यह तीन दव पैदा हुये अब जरा विचारिये ब्रम्ह चैतन्य और माया जड, तो चैतन्य से जड कैसे पैदा होवे ? तथा माया से तीन गुण और उनसे तीन देव हूये, सो यह भी कैसे वण ? क्यों कि गुणी से गुण होता है, परतु गुण से गूणी कैसे होवे ? मिट्टीसे घडा वनता हे, परंतु घडेसे मिट्टी कैस बने ? हम किसी देव की निंदा के लिये य शब्द नहीं कहते है, फक्त विचार चताया हैं

और भी २४ अवतारमें से कितनेकको पूर्ण अवतार और कि

तनकको अस अवतार बताते हैं सो यह भी बात विचारने जैसी है- जो पुर्ण अवतार है तो सर्व ब्रह्म उन्हीमें व्यापे उसवक्त दूसरे ठिकाने ब्रह्मका अभाव हुवा, तब उसे छोड सब जक्त शून्य हुवा और अंस अवतार कहते हो तो ईश्वर तो सर्व जक्तमें व्यापक बताते हो, तब अन्य जीवोंमें और उनमें क्या फरक पडा ?

इत्यादि लोकीक शास्त्रमें ही देव के विषयमें कितनी बात लिखी है सो जैनी भाइको दरसाइ है कि ऐसे देव कैसे माने जाय ?

तथा कितनेक जैनी भाइ परम पुन्य अरिहंत सुरेंद्र नरेंद्र के वदनीकको छोड कर जो देव-नृत्य-गायन-कुतुहल, छल-कपट-परस्त्रीगमन-पुत्रीगमन-करनेवाले, सात दुर्व्यसन के सेवन करनेवाले, जिनके मकानमें विचारे भैंसे बकरे मुरगे (कुकडे) इत्यादि अनाथ जीव कटते है, रक्तका खाल वहता है, मास के ढग लगते हैं, जो मदिरा पसंद करते हैं इत्यादि अनेक अनर्थ निपजते हैं, वहा जैनी भाइ जाते हैं, वहा अनेक भोजन निपजाकर आप खाते हैं, और धन—पुत्र—निरोगता—शत्रुक्षय—इत्यादि की अभिलाषा कर देवको भोग लगाते हैं, साष्टाग नमस्कार करते हैं परंतु यों नहीं समजत हैं कि देवता की मानता करने से ही जो पुत्र होता होय तो फिर स्त्रीको भरतार करने की क्या जरुर है ? विधवा वाझ सब ही पुत्रवती क्यों नहीं हो जावे ? और वो तुमारे पास की वस्तु मिलने से ही प्रसन्न होते हैं तो तुमारेको क्या देवेंगें ? जो दूसरे की इच्छा पुर्ण करे इतनी शक्ति उनमें होवे तो आप ही क्यों दु खी हो रहे ? हे भोले भाइयों ! ऐसा जान इस लौकिक देवगत मिथ्यात्वका त्यागन करो, और नि स्वार्थी—निर्लालची देवको शुद्ध चित्त से भजो

(२) लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व गुरु (साधु) का नाम तो धराया परतु जिनोंमें साधु के गुण नहीं, एसे बाबा जोगी, सन्यासी, फकीर, अनेक नाम धारी, जो हिंसा करते हैं, झूट बोलते हैं, चोरी करते हैं, कान्ता (स्त्री) आदि सेवन करते है, धन परिग्रह रखते हैं

रात्री भोजन करते हैं, मद्य—मांस—कंद—मूलका भक्षण करते हैं, गांजा, भांग, चडस, तमाखू पीते हैं, छापा, तिलक, तेल, अतर, माल्य, वस्त्र, भूषणादि करके शरीको शृंगारते हैं, रंगी वेरंगी कपडे धारण करते हैं, जटा वढाना, भभूत लगाना, नग्न रहना, इत्यादि अनेक रूप धारन कर पाखन्ड रचकर * पेट भराइ करते फिरते हैं उनको माने पूजे सो लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व

जैन शास्त्रमें पाखंड मत के ३६३ भेद वताये हैं उसका स्वरूप

प्रथम पंच समवायका स्वरुप कहते हैं

१ कालवादी २ स्वभाववादी ३ नियत (भवितव्य) वादी ४ कर्मवादी ५ उद्यमवादी

१ कालवादी कहता है कि—इस जगत् के सर्व पदार्थ कालके वसमें है अर्थात् सर्व पदार्थका कर्त्ता काल ही है देखिये, प्रथम सृष्टीमें जो अवतार लेता है, वच्चा होता है तो उसमें भी यथायोग्य उमर के स्त्री पुरुषका संयोग होनेसे योग्य उमरको प्राप्त हुये ही स्त्री गर्भ धारण करती है तैसे ही वृद्ध हुये पीछे पुरुष के संयोग हूये भी गर्भ धारन करना वंध हो जाता है ऐसे ही प्राप्त हूवा लडका योग्य उमरको प्राप्त होगा तव चलने लगेगा वोलने लगेगा, समजने लगेगा, विद्याभ्यास करेगा, युवानी प्राप्त होगी, इद्रियोंकी विषय की समज होगी, वृद्ध हो

* श्लोक—धर्मध्वजी सदा लुब्ध छाद्मिको लोक दम्भकः
वैडाल व्रतिको ज्ञेयो हिंस्र सर्वाभि संधकः
अधोदृष्टिर्नैष्कृतिकःस्वार्थ साधन तत्परः
शठो मिथ्याविनीतश्च वक व्रत चरोद्विज ॥

मनुस्मृति अ० ४

अर्थ—धर्मके नामसे लोकोंको ठगे, सदा लोभी, कपटी अपनी व डाइ करे हिंसक, वैर रखे,ईर्षक पोते गुण वहुत नुकसान कर छोड से भी अपना स्वार्थ साध, अपना पक्ष खोटा जाणे तो भी हठ नहीं त्यागे, झूट सोगध खाये, बुगले जैसा उपर उज्वल और अन्दर से मलीन चितवाला इतने लक्षण वाले को पाखंडी कहना

ा, केस श्वेत होवे-दाँत पडे-इत्यादि रीतिसे काल पुर्ण हुये मृत्यू प्राप्त होगी जैसे मनूष्योमें काल की सत्ता है, तैसे ही अन्य स्थावर पदार्थों र भी जानिये, देखीये वनस्पतीको उसका काल परिपक हुये ही अङ्कूरे फूटेंगे, पत्र आवेंगे, फूल फल लगेंगे, वीज रस प्रगमेगा, और काल पुर्ण हुये सडके विगड जावगा यह सृष्टि ही काल के आधार से चलती है, शीतकालमें शीत (ठड), उष्णकालमें ताप, वर्षादमें वर्षा (वृष्टी)इनमें जो फरक पड जाय तो रोगादि होकर अनेक उपद्रव होते हैं और ी देखिये सुखमा सुखम, सुखम इत्यादि छेही आरे सरपणी उत्सर- ाणीका प्रवर्तारा होता है, तिर्थंकर, चक्रवृत, वलदेव, वासुदेव, केवली ाधू, श्रावक, यह भी योग्य कालमें उत्पन्न होते है, और विछेद जाते हैं विशेष क्या कहू ससार परिभ्रमणका काल पूर्ण होगा तव ही मोक्ष मिलेगा इसलिये सवमें श्रेष्ट काल ही, है सर्वजन्य कालको ही कर्त्ता मानो

२ स्वभाव वादी बोलाकि, कालसे कुछ नहीं होता है जो होता, सो सव स्वभाव से ही होता है देखिये जो काल पूर्ण हुये कार्य होता होय तो स्त्री की जुवान वय हुये दाढी मूछ क्यों नहीं आती है? वंध्याके पुत्र क्यों नहीं होता है? हथेलीमें केश (वाल) क्यों नहीं, ऊगते हैं? जिव्हामें हाड क्यों नहीं है? ऐसे ही वनस्पति की अलग २ जाति है, उनके स्वभाव प्रमाणे अलग २ रस प्रगमता हैं ऐसे ही मच्छी प्रमुख जलचरोंका जलमें रहनेका, पक्षियोंका आकाशमें उडने का स्वभाव है और भी देखिये, काँटे की तिक्षणता, हसका सरलपणा, वगलेमे कपटाइ, मोर की रग रंगित पाख, कोकिलका मधुर स्वर, कागका कठोर स्वर, सर्पके मुखमें विष, और सर्पकी मणी विषका हरण करे, पृथ्वी कठिण, पाणी ठंडा, अग्नी उष्ण, हवामें चलनता, सिंहका साहासिक पणा, स्यालका कपट, अफीम कडवी, इक्षु मधूर, पत्थर पा

णीमें डुबे, लकड तिरे कानसे सुने, आखसे देख, नाकसे सूंघे, जीभसे आस्वाद ले, कायासे स्पर्श वेदे, मनकी चपलता, पगसे चलना, हाथसे काम करना, सूर्यका तेज, चद्रकी शीतलता, नर्कमें दुःख, देवतामें सुख, सिद्धका अरुप पणा, धर्मास्तीमें चलण, अधर्मास्तीमें स्थिर आकासमें विकास, कालका वर्तमान, जीवका उपयोग, पुद्गलका पुरण—गलन, भवीका मोक्ष गमन, अभवीका ससारमें रुलन, इत्यादि वस्तु कोण बनाते हैं? कोई नहीं, सब स्वभावसे ही होती है विन स्वभाव कुछ नहीं है. इसलिये मेरा मत सचा है, सबमें स्वभावको ही सचा मानो

३ नियत वादी बोला, तुम दोनो झूटे हो, तुमारेसे कुछ नहीं होनेका जैसी २ जिसकी होन हार होती है, वैसा ही सब काम होता है देखिये वसत ऋतुमें आम वृक्षको कितने मोर लगते हैं? परन्व सब खिर जाते हैं, और होणार होती है उतने ही आव, आते हैं कितने भी यत्न करो तो होनहार नहीं टलती है देखिये, मदोदरीने और भविष्यणने रावणको बहुत समजाया, परतू उसकी मृत्यू आ गइ तो अपने चक्रसे आप ही मारा गया द्वारका जलेगी, ऐसा कृष्णजी जानते थे, उनने बहूत ही प्रयत्न किया, तो भी वो जलगई फरसुरामने फरसी से लाखो क्षत्रियोंको मारे, और उसकी मृत्यु आउ तब सुभुम चक्रीके हाथसे आप ही मारा गया और भी एक दृष्टांत स मेरा मत सत्य मालुम होगा एक समय एक झाडपर एक वटेर पक्षीका जोडा वेठा था, उसको मारने के लिये एक पारधीने उपर तो सिकरा (वाज) छोड दिया, और नीचे से आप निशाण ताक मारने लगा इतनेमें होनहारके योग से वहां एक सर्प आके पारधी के पगमें डक दिया उसके हाथमें से वाण छुट उस उडते हुये सिकरको जा लगा

उपर सीकरा मर गया, और नीचे पारधी मर गया वो दोनों पक्षी बच गये देखिये होनहार कितनी जबर है बडे सग्रामोमें अति विषम प्रहारसे घायाल हुये, और बडी २ बीमारीयोंसे मृत्यू तुल्य हुये, मनूष्य होनहार के योग से बच जाते हैं इत्यादि अनेक वार्तो से मेरा मत सच्चा हैं

४ कर्मवादी कहने लगा कि, नीयत, स्वभाव, और काल, तुम तीन ही साफ, झूटे हो, क्यों कि तुमारा किया कुछ नही होता है जो होता है सो सब कर्मोंसे ही होता है जैसा कर्ममें लिखा होगा वैसे ही फलकी प्राप्ती होगी देखिये जरा आंखों खोल कर, पडित, मुर्ख, श्रीमंत, दरिद्री, सूरुप, कूरुप, निरोगी, रोगी, क्रोधवंत, क्षमासील, ये सर्व कर्म से ही होते हैं और भी देखिये मनुष्य २ सब एक से हे, परत, कर्म से एक पालखीमें बैठता हे, और एक बोजा उठाते है एक इच्छित भोजन खाता हे, और एकको लुखी फीखी राबडी भी नहीं मिलती हैं, इत्यादि सब कर्मो की ही विचित्रता है अरे इन कर्मोने आदीनाथ भगवानको बारह महीने तक अन्नजल नहीं मिलने दिया ! महावीरस्वामी के कानमें खीले ठोकाये ? पग पर खीर रधाइ ? गुवाली योंने मारे ? और अनेक कष्ट साढी बारे बर्ष लग दिये ! सागर नामे चक्रवर्ती के साठ हजार पुत्र एकदम मर गये ! सनत कूमार चक्रवर्ती के ७०० बर्ष लग सरीरमें कुष्ट रोग रहा ? राम लक्ष्मण बनमें बसे, सीताजी पर कलंक आया, लंका अग्नीमें जली, कृष्ण के जन्म वक्त गीत गानेवाला और मरती वक्त रोनेवाला कोइ नहीं रहा ? ऐसे २ उत्तम पुरुषोंमें विटम्बना पाडी हे, तो दूसरे की क्या कहूं ? इन कर्म से एकेंद्रीयादि नीच जातीमें और नर्कादि गतिमें जाते हैं जास्ती क्या कहू, कर्म दूर होते हैं तब ही मोक्ष मिलती हे इस लिये कर्म महाबली हे

इस लिये मेरा मत सबसे सच्चा है

(इस कर्मवादी के ठिकाणे कितनेक ईश्वरवादी भी कहते हैं, ईश्वरवादी मानता है कि जो करता है सो ईश्वर ही करता है ईश्वरके हुकम विन एक पत्ता भी नही हिलता है इस सृष्टीका और सुख दुखादि सर्व कार्यका कर्त्ता ईश्वर ही है)

५ उद्यम वादी कहता है कि हे कर्म ! तुं व्यर्थ गुमान म कर, क्यों कि कर्म निर्वल है, कर्मसे कुछ नहीं होता है सर्व कार्य उ द्यमसे होता है देख जरा पुरुषकी ७२ कला, स्त्रीकी ६४ कला, उद्य से हो आती हैं अश्व ताता पसु होने पर भी उद्यम करनेसे अने कला पढता है मेहल, मकान, वस्त्राभूषण, बरतन, पकवान सब तैय र होते हैं, और उद्यम से ही उनको भोगवते हैं उद्यम करत हैं त मिट्टीमेंसे सोना निकालते है, सीपमेंसे मोती निकालते है, और पत्थ मेंसे रत्न निकाल लेते हैं उदर निर्वाह भी उद्यमसें ही होता हैं व बिल्ली उद्यम करती है तो दूध मलाइ खाती है, और मनूष्य निरुद्यम होता है सो भूखे मरता है उद्यमसे ही रामचद्रजी सीताजी की खब पाये, और सीताजीको लेके आये लक्षमणजीने रावणको मारा उद्यम से द्रुपदीको किसनजी लाये, कैसी स्वामीने नरकमें जाते हुये परदशी राजाको उद्यमसे स्वर्गमें पहुंचाया जास्ती क्या कहूं जो सचे मनसे उद्यम करे ता स्वल्प कालमें अजरामर अक्षय सुखका भागी होवे

ऐसे ही पंचवादीका विवाद अनादि कालसे चल रहा है ये पांच ही एकक वातको ग्रहण कर अपने–पक्षको ताणते हैं इसलिये इनको लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व कहते हैं

जो यह पाच ही एकत्र होवे, एक पक्ष धारण नहीं करे, तो सम द्रष्टी होते हे द्रष्टात जैसे एक जगह पाच अंधे बैठ थे, उस वक्त

हाथी निकला, तव मावतसे कहने लगे कि भाइ हमारेको हाथी व
ताव मावतने हाथी खडा रखा पाच ही अन्धे, हाथीके एकेक अग
र हाथ फेर ठिकाणे जा बेठे और एक बोला हाथी थभा जैसा है
दूसरा बोला, नही, हाथी अंगरखे की बांहा जैसा है तीसरा बोला
सूपडे जैसा है चोथा बोला झाडू जैसा है पाचमा बोला चबूतरे
(ओटले) जैसा है यों कहकर आपसमें लडने लगे वो कहे में
सच्चा, तुम झूटे- तब मावत बोला भाइ क्यों लडते हो ? तुम अलग
हो तो सब झूटे हो, और मेले होवो तो पांच ही सचे हो जो थंबा
जैसा कहता है, सो हाथीका पांव है अगरखे की बाहा जैसी सुड है,
सुपडे जैसे कान है, झाडू जैसी पूंछ और चबुतरे जैसी पीठ है यों
पाच हीके मिलनेसे हाथी होता है- ऐसे पक्ष ग्राहीको मिथ्यात्वी कहे
जाते हैं अब इनके सजोगसे ३६३ मत ऐसे होते हैं —

१ क्रियावादी के १८० मत ऐसे होते हैं —उपरोक्त पात्र सम-
वाय कहे सो, पाच स्व आत्मासें, और पाच पर आत्मासें, यों दश
हुये यह दश शाश्वते और दश अशाश्वते वीस हुये इन वीसको
जीवादिक नव पदार्थसे नव गुन करते २०×९=१८० हुये यह क्रिया
वादि कहता है कि इस आत्माको पुन्य पाप रुप क्रिया लगती हे
ऐसा मानते हैं इस लिये लोक परलोक की आसती करते है सदा
क्रियाका ही वखाण करते हैं

यह क्रियावादी एकात क्रियामें मसगुल होकर ज्ञानादि अन्य गुणका
उत्थापन करते हैं परतु इनको इतना ही विचार करना चाहिय की
ज्ञान विन क्रियाका स्वरुप केसे जानेगा ? ज्ञान विन क्रिया सुन्य है
ज्ञान पांगला और क्रिया अन्धी है दोनोंके संयोग विन काइ काम
न होवे

दृष्टांत —कितनेक मनुष्य ग्रामांतर जाते थे रस्तेमें किसी
गलमें रात रहे फजर उठ और तो सब चले गये, फक्त एक अं
और एक पांगला दो रहगये, इतनेमें तो उस जगलमें दव (लाय
लगी, जिसके ताप से दोनों जाग्रत हुये और अन्धा तो जलने
डरसे इधर उधर दोडने लगा तब पंगूने उसे देख शब्दानुसार अप
पास बुलाकर कहने लगा के, अपन दोनों अलग रहे तो इस अग्नि
जल मरेंगे इसलिये मुझे तूं खधे पर बेठा ले, और में कहूं वैसे च
तो अपन बच जायगे कोइ ग्रामको प्राप्त कर सकेंगे अंधा उस
कहे मुजब चले, दोनों सुखी हुये यह द्रव्य द्रष्टांत हुवा

भावार्थ संसाररूप वनमें मृत्युरुप लाय लगी है उससे न अ
केला ज्ञानी बचता है, और न क्रियावंत बचता है जो ज्ञान यु
क्रिया करता है, सो ही मृत्यूरूप लाय से बचकर शिवपूर नगरको प्रा
होते हैं

२ आक्रिया वादीके ८० मत होत हैं —पांच समवाय तो पहि
कहे सो, और छट्ठ इच्छासे उत्पन्न हुवा लोक, यह ६ स्वत आश्र
और छ पर आश्री, यों बारह हूये इनको सात तत्वसे गिणना त
१२×७=८४ हुवे क्यों कि यह पुन्य पापको नहीं मानते हैं य
कहते हैं कि पुन्य पाप की क्रिया तो स्थिर वस्तु होवे उसे लगती है
इस जगतके सर्व पदार्थ चराचर (अस्थिर) है इनको क्रिया कैसे
लगे ? इसे नास्तिक मती जानना

ऐसे नास्तिक मतीसे इतना ही पूछना है कि जो पुन्य पापका
फल नहीं लगता होय, और पुनर्जन्म नहीं होय, तो फिर दुनियामें
एक सुखी और एक दु खी क्यों है ? एक तो नित्य दिनमें चार २
वक्त इच्छित भोजन करता है, पाच पोशाक बदलता है और इच्छित

दुख भोगवता है और एक फजर चार घडी रात का उठ जंगलमेंसे लकडेकी भारी लाकर दोपहरको ग्राममें वेच, उस पइसेका अनाज ले, हाथसे पीस (दल) पेहर रातको लूखी फीकी रावडी पीकर सो रहता है नित्य ऐसा संकट सहन करता है, तो भी उसे पेटभर अन्न, इज्जत ढके जितना वस्त्र, और रहनेको झूपडी भी नहीं मिलती है इसका कारण क्या होगा ?

३ अनाणवादी के ६७ मत सो ऐसे होते हैं—१ जीव छता है २ जीव छता अछता दोनो है ३ जीव अछता है ४ जीव छता है परत् कहना नहीं ५ जीव अछता है परत् कहना नहीं ६ जीव छता अछता दोनो है परत् कहना नहीं ७ जीव छता भी नहीं अछता भी नहीं यह सात तरह से अज्ञानी संकल्प विकल्प करते हैं, इन सातको नवतत्व से गिनते ७×९=६३ ओर इनमें शक्तमती, शिवमती, वेदमती, विष्णुमती यह चार मत किसी २ पक्षको ग्रहण करके मिलाने से ६७ भेद हुये अज्ञानवादी कहता है कि ज्ञान वडा खोटा होता है, क्यों कि ज्ञानी विवादी होता है. ओर विवादमें प्रतिपक्षीका खोटा चिंतवना पडता है इससे उसे पाप लगता है तथा ज्ञानीको पग २ पर डर रहता है, इसलिये उसे हरवक्त कर्म बन्ते ही रहते है हम अज्ञानी ही अच्छे है न तानते है और न जानते हैं, न विवाद करते हैं न किसी को खोटा खरा कहते हैं, न पाप पुन्यमें समजते हैं, इसलिये हमार को किसी प्रकारका दोष नहीं लगता है, जो ऐसा अज्ञानका पक्ष करते हैं उनसे इतना ही पूछते है कि तुम जो बोलते हो सो ज्ञानस बोलते हो कि अज्ञा न स बोलते हो? जो ज्ञानसे बोलते होवो तो तुमारा मत ही झूटा हुवा ओर अज्ञानसे उतर दिया ही नही जाता है तथा अज्ञानपणका उतर अप्रमाण होता है ओर भी तुम कहते हो कि अज्ञानी

असमजसे पाप करता है इस लिये उसे नही लगता है तब हम पू छते है कि अजान से जहर खाव तो उस वो जहर प्रगमे कि नहीं ? जो जहर प्रगमता है, तो पाप भी लगता है देखिये ज्ञानी से तो अज्ञानी को पाप जास्ती लगता है, क्यों कि जो जानेगा कि यह जहर है, इस में खाऊंगा तो मर जाऊंगा, और कभी औषधादि निमित से खाना पडा तो अनुपान प्रमाण युक्त खाकर मृत्यु से बच सकेगा, और अजा ण अप्रमाणसे भक्षण कर मर जायगा ऐसे ही ज्ञानी जो पाप करेंगे वो जानगे कि यह पाप मेरेको दु खदाइ है, परंतु कर्म रोग के जोग स करेंगे तो ही डरते २ जितना करे विन नही सरे, उतना कर अनर्थ दंड से आत्मा बचा लेवेंगे, तथा वक्त पर प्रायश्चित लेकर शुद्ध हो जा वेंगे और अज्ञानी तो विचारे अज्ञान सागरमें ही डूब जावेंग

४ 'विनय वादी' के ३२ मत, सो इसतरह, १ सूर्यका विनय २ राजाका विनय ३ ज्ञानीका विनय ४ वृद्धका विनय ५ माताका विनन ६ पिताका विनय ७ गुरुका विनय ८ धर्मका विनय यह आ ठ ही को १ मनसे अच्छे जाने २ वचनसे गुण ग्राम करे ३ कायास नमस्कार करे और बहुमान पुर्वक भक्ती करे यह ८×४=३२ भेद हूवे विनयवादीका यह मत है कि, सबमे विनय ही श्रेष्ट है, सर्व से नमकर रहना, कोई कैसे भी होवो अपने तो सब एकसे हैं किसीके पक्षको नहीं निंदना, अनाभिग्रहीक मि पात्व जैसा जानना यह चार वादी एकात पक्षी के १८०+८४ +६७+३२=३६३ सर्व मत हुये इनको माने उसे लौकीक गुरु गत मिथ्यात्व कहना

३ लौकीक धर्मगत मिथ्यात्व उसे कहते हैं कि धर्मका नाम तो रखा, परतु धर्मके कृत्य बिल्कूल नहीं, एकात अधर्म के काय कर धर्म माने जेसे पृथ्वी कायस धर्मस्थान बनावे, निवान खादावे, इत्यादि पृथ्वी

ि ।कर स्वर्गमें जाने की अभिलाषा करे ऐसे जो स्वर्ग मिलता तो क्रवर्तीयोंने रत्नों के धर्मस्थान क्यो नहीं बनाये? क्यों संयम ले आ ाको कष्ट दिय।

अब विचारिये यहांक और तीर्थके पाणीमें क्या फरक हैं। तथा ीर्थ स्नान से जो पापका नाश होता होय तो, कडवा तुवा पखालने ़ क्यों नहीं मीठा होय? तुबे की कडवास नहीं गइ तो पाप कैसे जा ़गा? और तीर्थके पाणी में स्नान करने से जो मोक्ष होती होय तो, ीर्थस्थानमें रहनेवाले म्लेछादिक, तथा पाणीमें रहनेवाले की भी मोक्ष ़ोनी चाहिये जो तिर्थस्नान से पापका नाश होय तो, फिर बडे२ ़पस्वीयोंने महा घोर तप कर क्यों तन तपाय? अरे भाई! पापीको ़ो गंगा भी शुद्ध नहीं करसक्की है देखिये स्कंध पुराण काशीखड ़ष्टमाध्याय —

जायतच म्रियतेच, जलेष्वे जलौकस ।
न च गच्छति ते स्वर्ग, मविशूद्धो मनोमला ॥

गंगाजीमें रहनेवाले जलचर प्राणियों उसमें ही जन्मते है, और मरते है, मनका मल गये विना उसको भी स्वर्ग नहीं मिले। तो दूस रेका क्या कहना? और भी —

चित रागादिभि क्लिष्ट, मलिक वचनैर्मूखं ।
जीवहिंसा विभि कायो, गगा तस्यपराङ् मुखी ॥

रागादि दोष करके जिसका मन, अशुद्ध वचन करके जिसका मुख, और हिंसादि पाप करके जिसकी काया अपवित्र हो रही है, उ ससे गंगाजी उल्टे मूख रहती है, अर्थात् नाराज रहती है, पवित्र न-हीं कर सक्की हैं.

अमीको सदा जागती रखनेमें, धूप दीप करनेमें, तप, यज्ञ, हव

नादि करनेमें कितनेक धर्म मानते हैं यह भी जरा विचारीये, की अमी जैसी राक्षसीको तृप्त करने दूनियामें कौन समर्थ है ?,यह जिस दिशामें जाति है, उस दिशाके सर्व प्राणियोंका भक्षण करती है इसके पोषाण में कैसे धर्म होय ? कितनेक कहते है कि हवन की सुगन्धसे रोगका नाश होता है जो ऐसे होता होय तो, प्लेगादि राक्षसी रोग से सृष्टीको क्यों नहीं बचा लेवे ! कितनेक कहते है कि हवनके धुम्र (धूवे) से बादल होते हैं, और उससे पाणी की वृष्टी होकर सृष्टि सुखी होती है, जो ऐसे होता होय तो अनेक देशोंमें दुष्कलसे लाखो मनुष्य कालके ग्रास हो रहे हैं तथा मरु स्थलमें भी महा दुःख हो रहा है, अरे भाई ! जो धूंवेसे वृष्टी होती होय तो, सृष्टीमें तो नित्य पचन पचानादिक्रियाका अपार धुम्र होता है, फिर यह दूष्काळ क्यों पडता है, यह सर्व अज्ञान दशाका कारण है और कितनेक अनार्य तो कहते है कि " यज्ञार्थ पश्वा श्रेष्ट " यज्ञमें पशुओंका हवन करना (जलाना) यह बहुत ही उत्तम है अश्वमेघ—घोडेको, गौमेघ—गायको, अजामेघ—बकरेको, और नरमेघ—मनुष्यको, जीवते अमीके कुडमें जलाने से स्वर्ग मिलता है हा हा कितने आश्चर्य की बात ! ऐसे २ उत्तम प्राणी कि जो यह न होए तो सर्व सृष्टी सुन्य हो जाए, इनसे ही सर्व सृष्टीका कार्य चल रहा है, इनको अमीमें जलानेसे जो धर्म होय तो फिर पाप किसमें * विचारे गरीबोंको होमनेका कहते है, ऐसा कोई बडेका बताते तो मालुम पडती तब वो कहते हैं कि हवनमें होमने

* श्लोक—युप छित्वा पशुन हत्या, कृत्वा रुधिर कर्दमम ।
यद्येव गच्छते स्वर्गे नरके केन गच्छते ॥ १ ॥
अर्थात्—यद्योक्त प्रकारसे यज्ञ के स्थंभ को छेदकर पशुओं का मार कर रुधिर (खून) का पृथ्वीमे कादव मचा कर यदि यज्ञके कर्ता स्वर्ग जावे तो फिर नरकमे कौन जावेगा ? ?

स्वर्ग प्राप्त होता है, इसलिये हम संसारके दु खी जीवोंका हवन कर र्ग में पहोंचाय सुखी करते है, उन्हे धनपाल पंडित कहता है कि हो ते हुये पशु इस तरह पुकार करते है कि —

नाह स्वर्गफलोप भोग तृषितो नाभ्यार्थितस्त्वं मया ।
सतुष्ट त्रन भक्षणें न सतत, साधोन युक्त तव ॥
स्वर्गे यांति यदि त्वया विनिहता, यज्ञे ध्रुवं प्राणीनो ।
यज्ञ कि न करोषि मातृपितृ भि' पुत्रै स्तथा बांधवै ॥ १ ॥

मेरेको स्वर्ग सुख की किंचित् ही इच्छा नहीं है, और न मैंने मारे पास याचना करी है कि मुझे स्वर्ग दो में तो त्रण खाकर मेरे कुटुंबके साथमें स्वर्ग से ज्यादा सुख मानता हूं हे सुज्ञो ? मेरे जैसे नेरापराधीको नाहक क्यों मारते हो ? अरे भाइ ? जो यज्ञमें होमनेसे वर्ग मिलती होय तो, तुमारे पिता, माता, भाइ, पुत्रादि प्यारे स्वजन ा हवन करके, उनको क्यों नही स्वर्ग पहुचाते हो ? जो यज्ञ करके वर्ग चाहते हो तो, यज्ञमें जलके ही स्वर्गको शिघ्र क्यों प्राप्त नहीं र लेते हो ? और भीदेखिये ! श्रीमद्भागवतका ४ था स्कधके प नीसवे अध्यायके ७-८ श्लोक, प्राचीन वर्ही राजाको नारद नामा ऋषिने क्या उपदेश किया है सो —

भो भो प्रजापते राजेन्द्र, पशुन पश्य त्वयाध्वरे ।
संज्ञा पिताश् जीवसंघान्, निर्घृणन सहस्रश ॥ ७ ॥
एते त्वां सप्रतिक्षंते, स्मरतो वैशसं तव ।
सपरे तमय कूटै, श्छिदत्युतित्थ मन्यव ॥ ८ ॥

अहो अहो प्रजाके मालिक प्राचीन वर्ही, तेने वडा अन्याय किया है और विचारे पशुओंकी पशुताके तरफ न देखते, कू गुरुओं के असत्य उपदेशानुसार, या वेद की आज्ञाको न समज, उसका उल-टा अर्थ ग्रहण कर, विचारे अरडाट पाडते हजारों पशुओंको, तेने यज्ञ में जला दिये वो सब पशु तेरेसे वदला लेनेको राह देख रहे हैं तेरा आयुष्य खुटाकि जैसे तेने उनका वध किया है वैसे ही वो अलग २,

तेरा वध करेंगे-मारेंगे ऐसा सुनकर राजाने हिंसा धर्मका त्याग
दिया देखिये हिंदू धर्मके मुख्य® शास्त्रका क्या उपदेश है? उनके

श्लोक—देवो पहार व्याजेन, यज्ञ व्याजेन ये ऽ घवा;
घ्नन्ति जन्तून् गत घृणा घारांते यान्ति दुर्गतिम

अर्थात्—जो घृणा (ग्लानी) रहित पुरुष देवता के भेट करने म छलसे अथवा यज्ञ करने के जीवों को मारते हैं, वे घोर दुर्गति (सप्तम नर्क आदि) का गमन करेंगे ऐसा तत्वज्ञ पुरुषों ने फरमाया है

और वेदान्ति भी कहते हैं कि—

श्लोक—अ धे तमसि मज्जम, पशुर्भि ये यजा महे,
हिंसा नाम भवेदर्मो न भूता न भाविष्यति

अर्थात्—जो हम पशु ओंसे देवतादि कों की पूजा करेंतो अन्ध-तम (सप्तम नर्क या अन्धकार) म डूब जावे, क्यों कि हिंसामें धर्म कमी न हुवा और न कभी होगा

इस लिये व्यासजी के कहे मुजब यज्ञ करना चाहिये सो कहते हैं-

श्लोक-ज्ञान पालि परिक्षिप्त, ब्रह्मचर्य दया म्भसि;
स्नात्वाति विमले तिर्थे, पाप पङ्का पहारिणि ॥ १ ॥

अर्थात्—ज्ञान रुप तलाव में गिरा हुवा ब्रह्मचार्य आर दया रुप जल जिसमें-ऐसे तीर्थ मे स्नान कर पाप रुप कदम को दूरकर निर्मल हो,फिर

श्लोक-ध्यानाग्नौ जीव कुण्डस्थ दम मारुत दीपिते;
असत कर्म समित क्षेपं, सिद्धोत्र कुरुत्तमम् ॥ १ ॥

कषाय पशु भिदृष्ठि, धर्म कामार्थ ना शके,
शम मन्त्र हुतर्यज्ञ विधेहि विहितं बुधे ॥ १ ॥

अर्थात्—जीव रुप कुण्डम दम रुप पवन से दी पितम ऐसी जो ध्यान रुप अग्नि है, उसमें अष्ट कर्म रुप काष्ठ को डाल कर उत्तम अग्नि होम करो, धर्म काम और अर्थ के नष्ट करने वाले, शम रुपी मन्त्रकी आहुती का प्राप्त हुवे ऐसी दुष्ट कषाय रुपी पशुयोंसे ज्ञान वानो द्वारा किया हुवा यज्ञका करो

और अश्व मेधसो-मन रुपी घोडेका, गौमेध सो असत्य वचन का अजा मेध सो-इन्द्रिया का और नर मेध सो—काम देवका परोक्ष कुंड की अग्नी म यज्ञ (हवन) करन स स्वर्ग की मार्ग होती है जो सचा यज्ञ करना होतो एसा करो!

स्विकारत लोक अनर्थ कर रहे हैं इस लिये भाइ जरूर समजो कि
। अमी की तृप्ती नहीं होती हैं, और यों अमी पोषणेसे धर्म भी नहीं
ता हैं ऐसा जान अनर्थ से बचो ?

वाउ काय (हवा) झूले पर झूले, पंखा करे, वार्जित्र वजावें, इ-
ादि कामोंसे वायू कायकी अयत्ना कर, ढोंग सोंगमें ही कितनेक लो-
। धर्मकी उन्नती समजते हैं यह भी एक वडी अज्ञानदशा है

वनस्पतिको शिवशास्त्रमें पूजने योग्य कही है देखिये विष्णुपुराण

मूलाच ब्रम्हा त्वचाविष्णु शाखा सकर माधच।
पात्रे २ दवाणामं, वृक्ष राये नमो स्तूते ॥

हरेक वृक्ष के मूलमें ब्रह्मा, छालमें विष्णु, डलियोंमें शंकर, और
त्तोंमें देवोंका वासा है इस लिये वृक्ष नमस्कार करने योग्य है ऐसा
कहते भी अज्ञानी जीव पत्र, पुष्प, फल, मूल, द्रोव, इत्यादि वनस्पतिका
वेनाश कर, देवको समर्पण कर, धर्म मानत हैं तुलसीको माता या
वेष्णूकी स्त्री कहकर चढ़ते हैं यह भी भोलापन देखिये। अहो! जरा
अपने मनमें विचारिये, तो सही, विष्णुभाइ कहते हैं कि सृष्टी भगवानने
बनाई है और सृष्टी परके सर्व पदार्थ के मालक भगवान है ता फिर भग-
वानकी वस्तु भगवानको देनेसे, वो कैसे प्रसन्न होंग ? क्या भगवान
पान फूल फलके भूखे हैं ? तुम चढावोगे तब ही उनकी तृप्ति होगी
क्या ! वडे २ वृक्षोंको जडमेंसे उखाड डालते हैं, कच्ची कालियें और
फूले फूलको तोड डालते है, कूपल और झलहलते पत्तेका नाश करते
हैं, और धर्म मानते हैं, इससे भी ज्यादा अज्ञानता क्या होवे ?

त्रस जीव कीड, कीडी, खटमल, डांस, मच्छर, जूं, लीख, विच्छू
साप, खेंकड, इत्यादिको परलेके (मरनेवाले) जीव कहत हैं, तथा कं-
टक (दु ख देनेवाले) कहकर, मारनेमें पाप नहीं गिणते हैं उनसे

पूछते हैं कि वो कष्टक क्यों हुवे ! तव कहते हैं कि हमारेको दुःख देते हैं इस लिये वो कंठक हुवे अच्छा तव जो मार डालते हैं वा महा कठक हुये कि नही ! तो फिर तुमारेको कौन छोडेगा ! और जो तुम ईश्वरको कर्ता मानते हो तो, जैसे ईश्वरने तुमको उत्पन्न किये वैसे ही उनको भी जाणो क्या ईश्वर सत्ताको अनुपकारी मान, उन का ववकर, ईश्वरके अपराधी न बनोगे ? कुमारका घडा हुवा मन्न भी कोइ फोड डाले तो कुंभार नहीं छोडता है तो ईश्वर तुमको कैसे छोडेगा ? क्या ईश्वर तुमारा मित्र है और उनका शत्रु है ? ईश्वरने त श्रीमद्भागवतके सातमे सत स्कंधके चउदमे अध्यायमें ऐसा कहा है

यूमष्ट खरमरका खुसरी, सर्प खगा मक्षीका ।

आत्मानां पुत्रवत् पश्येत्, तेषा मैत्री कियते ॥

ज्यूं, ऊंट, गधा, बंदर, विसमरी, ताली, (गिलोरी) पक्षी अजी, मक्षी, जैसा भी प्राणी अपनी आत्मा, और अपने प्यारे पुत्र जैसा जानना परतु किंचित् ही अतर रखना नहीं देखिये इससे ज्यादा और क्या कहे ? तथा जिन पशूको यह दुश्मन समजते हैं उन ही को वक्त पर पूजते हैं देखिये—सर्पको दुश्मन गिनते है, और नागपचमी के दिन सर्पको दूध पिलाते हैं, पूजते हैं, और सचा नहीं मिले तो चित्रामका आलेख पूजा करते हैं और भी देखिये, कृष्णजी के सेज्या ही सर्प की, महादेवजी ने अपने गलेमें घाला है, ऐसे प्रभु के प्यारे प्राणीको वैरी जानते हैं, और मारते है, वो प्रभुके कट्टे शत्रु है कि नहीं ? और भी कितनेक अनार्य देवका नाम से धर्मार्थ बिचारे गरीब पशू बकरे, कुकडे, पाडे मारते हैं और आप खाजाते हैं वो मारनेका पाप देवके सिरपर रखते हैं देखिये *मतलबीपना और

* पद—देवके आगे बेटा मागे, तब तो नारेल फूटे ।
गोटे सोतो आपही खावे उनको चढावे नरोट ॥
जग भये उफरांटे, झूटेको साहिब कैसे भेटे — 'कबीर'

ाले ! देव दयाल होते हैं कि हिंसक ? आप हत्यारे होकर विचारे
वोंको भी हत्यारे बनाते हैं परतू वो नहीं समजेत हैं कि सतीके
पर कूलक्षणीका कलंक चढाने से जितना पाप होता है, उतना ही
याल देवको हिंसक धनाने से होता है.

यह छेही काय विष्णूरूप विष्णव पुराणमें कही हैं सो श्लोक —

" जले विष्णु स्थलेविष्णु, विष्णु पर्वत मसत्कं ।
ज्वाल माला कुले विष्णु, विष्णु सर्व जगत् मयः ॥

हे पार्थ ! विष्णुभगवान कहते है कि. मैं जल (पाणी) में, स्थ
ल (मट्टी) में, पर्वत मस्तक (वनस्पतीमें), ज्वाला (अमी) में, मा
ला (हवा) में, कुले (हलते चलते प्राणी) में ये छ कायारूप सर्व
जगनमें व्याप रहा हूं

अर्थात जैसे किसी राजा के छ पुत्र हैं. कोई पुरुष राजाको प्र-
सन्न करने, छ. में से किसी पुत्रको मारकर चढावे, और कहे की संतू
ष्ट हो ! तब राजा सतुष्ट होता है कि नाराज ? ऐसे ही छः कायकी
हिंसा करकर प्रभूको खुशी कर चाहते है, परतू हिंसासे प्रभु उलटे ना-
राज होते हैं श्री मद्भागवद् गीतामे खुद कृष्ण भगवत ने फरमाया है

श्लोक—पृथिव्यामप्यहं पार्थ, वायावग्नौजलेप्यह ।
वनास्पाति गतश्चाहं, सर्व भूत गतोऽप्यहं ॥ १ ॥
योमा सर्व गतं ज्ञात्वा, नचिहिंसेत्कदाचन ॥
तस्याह न प्रणश्यामि, नच मांस प्रणश्यति ॥ २ ॥

अर्थ—अहो पार्थ—धर्मराज ? मैं मट्टी, पाणी, अग्नि, हवा, वि-
नास्पाति, और सर्व भूत (हलते चलते त्रस पाणी) में, व्याप रहा हू
ऐसे मुझे सर्व में व्यापक जान जो मेरी हिंशा नहीं करता है, अर्थात्
वरोक्त छ ही कायका वध (घात) नहीं करता है उसका मैं भी
घात नहीं करता हूं ? और भी कहा है —

श्लोक—नसा दिक्षा नसा भिक्षा, नतद्दान नत तप ।
नतदज्ञानं नतदध्यानं, दया यत्र न विद्यते ॥

अर्थ-जिसके हृदयमें दया नहीं है, उसकी दिक्षा, भिक्षा, ध्यान, तप, ज्ञान, दान, सर्व निर्थक-व्यर्थ है ? कहीये और इस से ज्यादा क्या कहे

ऐसे जान जो हिंसामें धर्म मानते हैं, उसे "लौकीक धर्मगत मिथ्यात्व" कहना

और भी मिथ्या पर्वको माने सो भी मिथ्यात्व कहा है जैसे होली, दीवाली, दशहरा, राखी, गुडीपडवा, भाइबीज, काजलीतीज, अक्षय तृतिया, गणेश चौथ, नागपांचम, याव (ऊभ) छट, सील्सातम, जन्माष्टमी, रामनवमी, धूपदशम, झूलनीग्यारस, भीमएकादशी, वछ्बारस, धनतेरस, रुपचउदस, सरदपुनम, हरियाली अमावस्य, वगेरा तहेवारोंको माने, व्रत करे, तथा मिथ्यात्वी देवोंकी पूजा करे सो भी लौकीक धर्मगत मिथ्यात्व

और भी धर्मगत प्रत्यक्ष मिथ्यात्व देखो -कितनेक एकादशी आदिको उपवास करते हैं नाम तो उपवासका और खाजावे रोजसे ज्यादा

सवैया -गिरी और छुवारे खाय, किसमिस और बदाम चाय साठे और सिंघोडेसे, छोल दिल स्वादी है ॥ गुंदगीरी कलाकंद, अरवी और लकरकद, कुंदन के पेडेखाय, लोटे भडी गादी है ॥ खरबूजे तरबूजे और, आंब जांब लिंबू जोर, सिंगोडे के सीरेसे, भूखको भगा दी है कहते नाराण, करते है दूणीहाण, कहने की एकादशी, पन दुवादशी भी वादी है ! ॥ १ ॥

और उनही के पुराणमें एकादशी महात्म्यमें इग्यार बोल सागे उसे एकादशी कही है

" अन्न कद त्यागं निद्रा, फल सेज च मैथून
व्योपार विक्रे खुर, कष्ट दंत स्नानं वर्जन "

अभी इतना कष्ट सहन नही होनेसे अनेक ढोंग चला दिये है कहते हैं, कि नरकी देह है सो नारायण की देह है इस कष्ठ नही देना

हा बहुत तो जरूर खाना चाहिये जो मनको तरसावेगा सो नरकमें जावें तब उनके पुछते हैं कि, विश्वामित्र, पराशर, आदि ऋषी जो ६० हजार तक लोह कीट भक्षन कर रहे है, और शरीरको सुखाया हैं नव ना ने वारह २ वर्ष तक काटे (सूल) पर खडे रहे, तप किया है, उनको गा नर्कमें गये समझते हो ! जो शास्त्रसे वात करे उनको तो जवाबही या जाय, परन्तु गाल पुराण प्रकाशे उनसे तो चूप ही भली हैं पुद् लानद (विषया शक्त) प्राणीको यह वात कब अच्छी लगे ! हे भ र ! तुम यह तो निश्चय समजो की, आत्म दमे विना इस लोक और र लोक में कदापि सूख नहीं होगा कहा है कि 'दु खाती सुख' तथा श वैकालिक के अष्टम अध्याय में कहा है 'देह दु खं महा फल' दे का कष्ट देनेसे महा फल प्राप्त होता है इस लोकमें भी विद्याभ्यास, यापार या गृह कार्यमें अव्वल तो दु ख ही देखते है, तब फिर सुख ोता हैं परन्तु उसे दु ख नहीं गिना जाता है जैसे औषध लेते और थ्य पालते दु ख होता है परतु रोगी उसे दु ख नहीं गिणता है, उत्सु कतासे औषध ग्रहण कर रोग मिटाना चाहता है तैसे ही धर्म कार्यमें कष्ट पडे उसे सकट नहीं कहा जाता है वा थोड से दु ख बहुत सुख का देनेवाला होता है एसा जान लौकीक मिथ्यात्वका त्यागन कर सत्य देव गुरु धर्मका स्विकार कर सूखी होवो

"लोकोत्तर मिथ्यात्व" इसके भी लौकीक की तरह तीन भेद होते है १ लोकोत्तर देव गत मिथ्यात्व सो तिर्थंकरका नाम धारण किया पन जिनोंमे तिर्थंकरके किंचित् ही गुण नहीं जो १८ अठारह दोष युक्त होवे, उनको देव जैसे माने, तथा वीतराग देवके नामको इस लोकके सूख, धन, पुत्र, निरोगता, गृह दोष निवारण इत्यादिके लिये स्मर सो लौकीक देवगत मिथ्यात्व, २ लौकीक गुरुगत मिथ्यात्व सो जैन लिंग

धारण किया परन्तु जिनमें गुरुका गुण नहीं, पासत्थादि पांच दूषण यु
पाच महाव्रत–सामीति गुप्ति रहित, छेकायका आरंभ करे, ऐसे गुरुको
तरीक मानना सो लौकिक गुरु गत मिथ्यात्व ३ लौकीक धर्म गत
थ्यात्व सो निर्वद्य धर्म, की जिससे निराबाध अक्षय सुखकी प्राप्ती हो
उसे इस लोकके सुखके लिये करे, जैसे मेरे पुत्र की प्राप्ती हुइ तो में अ
तप करुगा सकट टला तो तेला करुंगा, धन मिला तो उपास करु
विथा आइ तो आंबिल करुगा, कमाइ हुइ तो समाइक करुंगा यह
इस वक्त चली है, इसे मिटाने जरुर प्रयत्न करना चाहिये, नियाणा (
छा) करके अनत जन्म मरणको मिटानेवाला धर्म इस लोकके क्षणि
अशुची अविश्वासी सुखके लिये नहीं गमाना चाहिये अवी कोई
रुपेका माल पन्देर आनेमें दे देवे तो उसे मूर्ख कहते है, तो अमुल्य
क्षणिक सुखके लिये कोन सुज्ञ गमावेगा ?

८'कुप्रा वचानिक मिथ्यात्व' इसके तीन भेद–१ देवगत सो
रिहरादि अन्य देवको, २ गुरुगत सो बावा जोगी आदि कु गुरुको,
और धर्मगत सो संध्या स्नान जप होम वगैरा क्रियाको यह तीन ही
मोक्षकी इच्छासे अगिकार करना सो जो देव आप ही मोक्षको प्राप्त न
हीं हुवे है, तो वो अपनेको क्या मोक्ष दे सकेगा ! मिथ्या शास्त्रमें इनके
मिथ्या महिमा सुन कर समद्रष्टीको इसमें मोहित नहीं होना

९ वितराग दवके सुत्रसे ओच्छी (कमी) श्रधना परुपना करे
मिथ्यात्व जैसे तीस गुप्ताचार्य एक प्रदेश आत्मा मानी तथा अपने
रेला आता देखके शास्त्रका अर्थ फिरा देवे मन चहा बना दवे
मिथ्यात्व

१० वितराग के सुत्रसे अधिक (जादा) सरधना परूपना क
सो मिथ्यात्व जैसे एक आत्मा सर्व ब्रम्हाड व्यापक है तथा अगुष्ट मि

ो आत्मा बतावे तथा साधुके धर्मोपगरन परिग्रहमें बतावे महा विर-
मीके ७०० से केवली हुये सो जास्ती कहे साधुको साफ नम रहना
इ वगैरा

११ वितरागके सुत्रसे विपरीत श्रधना—परुपणा करे तो मिथ्या
जैसे कितनेक मतावलम्बी कहते हैं की यह सृष्टी ब्रह्मान (ईश्वरने)
ाइ एक वक्त ब्रह्माकों ऐसी इच्छा हुइ के 'एको ऽहं बहुस्यां' मैं
क हुं सो अब अनेक बन जावु' अब प्रश्न उत्पन्न होता है की पह
अवस्थामें कुछ दुःख होय, तब दूसरी अवस्था धारण करनेकी इच्छा
ती हैं सो ब्रह्मा अकेले थे तब क्या दुःख था, सो बहुत होने की इ-
छा हुइ ?

प्रतिपक्षी –दुःख तो कुछ नहीं था, परखु ऐसे ही कौतुक किया

पूर्वपक्षी —कौतुक तो सुख के अभिलापीको होता है सो ब्रम्हा
हले थोडा सुखी था, और पीछे से कौतुक कर जास्ती सुखी हुवा जो
यम से ही सपूर्ण सूखी होय तो अवस्था क्यों पलटे ? क्यों कि प्रयो-
न विगर कोई कार्य होता ही नहीं हैं और इच्छा हुइ वो कार्य नही
नेपज वहां तक तो दुःख ही रहा

प्रतीपक्षी –ब्रम्हा की इच्छा हुइ के शिघ्र कार्य निपजाता है

पूर्वपक्षी – यह बात तो बड कालकी अपेक्षा से है, परंतु सुक्ष्म
कालकी अपक्षा से इच्छा और कार्य एक समयमें न होवे इच्छा और
कार्यके कालमें अवस्य भिन्नता होती है पहली इच्छा और फिर कार्य

प्रतीपक्षी —ब्रह्माको इच्छा होते माया उत्पन्न होती है और वो
कार्य निपजाती है

पूर्वपक्षी —ब्रम्हाका और मायाका एक ही रुप है, या अलग २

प्रतीपक्षी – अलग २ है ब्रह्मा चिदानद है और माया जड है

पूर्वपक्षी – तव चेतन से जड कैसे पेदा हावे ? जडका और चे
तनका कैसे संबध जुडे ? यह तो खंडन हुवा

पूर्वपक्षी –अच्छा, जीव ब्रह्मासे हुवा की मायासे ?

प्रतीपक्षी – ब्रम्हासे

पूर्वपक्षी – तो फिर मायासे क्या हूवा

प्रतीपक्षी —माया करके जीवको भर्ममें डाले है

पूर्वपक्षी — ब्रम्हा और जीव एक है या जुदा २ है, जो ए
कहोगे तो यह वचन बावले के जैसा हुवा क्यों की जीव के पी
माया लगा कर जीवको भर्ममें डाला, और जीव ब्रम्ह एक कहते ह
तव तो ब्रम्हा भी भ्रममें पड गया यह तो ऐसा हुवा की जैसे-कि
मूर्खने अपनी तरवार से अपना हाथ काट डाला और जो जुदे कहो
गे तो, ब्रम्हा निर्दय हुवा, क्यों कि विना कारण विचार जीव के पी
माया लगा कर दु खी कीये. अव जो माया से शरीरादिक हुय कह
हो तो माया हाड मास रुद्र रुप होती है, के और कुछ ? जो माया हा
मास रुप है तो, उसके वर्ण गंध, रस, स्फर्शादि पुद्गल पहले थे, की न
वीन हुये ! जो पहले थे, ऐसे कहोगे तो, ईश्वर के पहले माया हुइ और
जो पीछे से हुये कहोगे तो, अरुपी ब्रम्हमें यह रुपी पदार्थ कैसे मि!
तथा अरुपी के रुपी कैसे हुये ? और जो हूये ही कहोगे तो, अमूर्ती
शाश्वतपणेका नाश हुवा और भी वो कहते है की मायासे तीन गुण
हुये हैं, रजो, तमो, और सत्व, तो यह भाव तो चैतन्य के दिखत ह
और माया तो जड है, फिर मायासे कैसे होवे ? जो जडके होवें तो
सूखे काष्टको भी हुये चाहीये

इन तीन गुणसे तीन देव ब्रम्हा, विष्णु, महेश, हुये कहते हैं
सो गुणसे गुणी कैसे होवे, तथा मायामय वस्तू पुज्य कैसे होवे ? त

कहते हैं की यह मायाके आधीन नही हैं तो यह भी बात मिलती नही हैं, क्यों कि मायाके वसमें हाकर चारी, जारी, आदि निर्लज काम कीय हे तब कहते है की यह तो प्रभू की लीला है तब पुछा जाता है की, लीला इच्छासे होती है की विन इच्छासे ? जो इच्छासे कहते होवे तो स्रीसेवनेका नाम काम, युद्ध की इच्छाका नाम क्रोध, इत्यादि होता हैं जो विन इच्छासे कहो तो परवश हुये यह मिले नही, क्यों की समर्थ होकर परवश कैसे रहें ? अच्छा जो इन कुकर्मोको लीला वताते हो तो शास्त्रमें काम क्रोध त्यागने (छोडने) का उपदेश क्यों दिया, और ऐसे लीला होती होय तो फिर सत्य, सील क्षमादि गुण झूटे हुयें, तब वो परमेश्वर ही कायके ? तब कहते हे की संसारीयोंको संसार व्यवहार की रीती सिखानेको लीला करी हैं परंतु अरे भाइ! यह काम तो ऐसा हुवा, जैसे कोइ दुष्टपिता अपने पुत्रको प्रथम व्यभिचार सीखाया, और व्यभिचार सेवन करने लगा तब उसे मारा ! ऐसे ही पहले ससारीको अनाचार सिखाकर, फिर नर्कादिक की शिक्षा दी यह ईश्वर कायके ? यह तो अन्यायी हुये !

और भी कितनेक कहते है की, प्रभू इस सृष्टीमें अवतार लेते है सो भक्त की रक्षा, और दुष्टका संहार करने लेते हैं तब उनसे कहा जाता है की, दुष्ट प्रभू की इच्छामे हुये के विन इच्छासे ? जो इच्छासे हुये कहोगे तो, ऐसा हुवा की, किसी मालकने चाकरसे कह कर किसको मरवाया, और फिर आप उसे मारन लगे, सो स्वामी नहीं, पर अन्यायी कहा जाता हे जो विन इच्छासे हुवे कहोगे तो, प्रभूको इतनाही ज्ञान नहीं था, की यह दुष्ट पेदा होकर मेरे भक्तको सतायेंगे ? सो इनको पैदा होने न देवू तो फिर अवतार लेनेका, कष्ट सहन कर उनका निग्रह करना पडा तब कहते हैं की अवतार

लिये विन परमेश्वर की महीमा कैसे होती ? तव पुछते है कि, ईश्व अपनी महिमाके लिये भक्तका पालन, और दुष्टका संहार करते हैं, तो वो रागी द्वेषी हूए और राग द्वेष दु खका मूल ही है, तथा जो काम सहजसे होता होय, तो कोन इतनी तकलिफ उठावेंगे ? और भी तुम कहते हो कि, सृष्टीका सर्व कार्य प्रभूकी इच्छा मुजब होता है, तो फिर सब के पास अपनी महिमा ही क्यों नही कराइ ? तब कहते है की प्रभू कार्य करकर अलग रहते हैं तब पूछते है की कार्य करके अछता कैसे होवे ! यह तो आकाश पुष्प जेसी बात हुइ

और भी वो कहते हैं कि ब्रह्मा श्रेष्टि बनाता है, विष्णू पालताहै, और महादेव संहार करते हैं तब उनसे कहा जाता है की ब्रह्मा के और महादेव के तो आपसमें बडा विरोध हुवा (वो बनावे, वो तोड डाले. इस लिये) तब वो कहते हैं, इसमें विरोध कायका ! प्रभू अपने ही तीन रुप बनाकर, यह काम करते हैं तब उनसे पूछते हैं कि, जो पहल अच्छी लगी तब बनाइ, और पीछे खराब लगी तब नाश किया. तो खराब लगे ऐसी पहली बनाइ क्यों ! फिर तो प्रभूका या पृथ्वीका दोनोंमें से एकका स्वभाव अन्यथा हुवा, जो इश्वरका स्वभाव पलटनेका कारण क्या सो बतावो किसीको मंदिर बणाना होय तो, पहले ईंट, चूना, लकड, वगैरा सामग्री मिला, चित्र (नकशा) निकाल, फिर बनावे जो ऐसे बनाइ होय तो पृथ्वी रचने की सामग्री कांहासे लाया! क्यों कि पहले ब्रह्मा एक ही था और किसका नकसा उतारा? उस वक्त दूसरी सृष्टि थी क्या ! २ इत्नी रचना बनाइ सो पहली पीछे बनाइ, या अपने अनेक रुपकरके एकदम बनाइ ! इन दोनोंमें से जो बतावोगे वो खोटा ही द्रष्टी आवेगा तथा जेसे राजा हुकम कर, दूसेर के पास काम कराता है, तैसे कराइ ! जो तैसे कराइ होया तो किसके पास क

राइ। और वो करनेवाला सामग्री कहां सेलाया? और मीसृष्टी बनाइ तव सव अच्छी २ वस्तु बनाइ के, अच्छी बूरी दोनू बनाइ! जो सव अच्छी २ बनाइ कहोगे तो, बूरी किने बनाइ कोइ दूसरा भी कर्ता हे क्या? अच्छी बूरी दोइ बनाइ कहोगे तो, बूरी वस्तु बछनागादि जेहर सिंह खटमलादि प्राणी, नर्क, यह दुखदाइ क्यों बनाइ' यह अच्छे भी नही दिखते हे, और भक्की भी नहीं करते हे, तब कहते हे की, अपने २ कर्म से प्राणी नीच योनीमे जन्म लेकर दुःखी होता हे तव हमक हते हे की ब्रह्माने तो न बनाइ, ब्रह्मा तो कर्त्ता न रहा सब अपने २ कर्मका ही फल भोगवते हें अच्छा, जविको पहली बनाये तव निर्मल बनाये थे, या पापी बनाये थे! जो निर्मल बनाये कहोगे तो, फिर उन को पाप कैसे आके लग गया' तब तो ऐसा हुवा के बनाती वक तो बनादिया, और फिर उस्के स्वाधीन न रहा! और कहोगे पाप पीछेसे लगा या, तो बीचारे जीवके पीछे पाप लगाकर दुःखी क्यों किये! इ- सलिये ब्रह्मा निर्दय हुवा! इत्यादि कारणसे ब्रह्माका कर्त्ता पणा सिद्ध नही होता हे

अब विष्णु पालन कर्ता कहने वालोंसे पुछा जाता हे की पा- लन (रक्षा) करना उसका नाम हें की दुःखी न होने दे, प्राप्त हुवा सु- ख न खुटनेदे परंतु जो विश्वमें देखते हे तो इससे उल्टा द्रष्टी आता हें सुखी थोडे दुःखी बहुत हें क्षुधा तृषा, शीत ताप, संयोग वियोग रोग सोग, इत्यादि हो रहे हे तब विष्णु रक्षक कैसे हुये? तब वो क- हते हें की, यह तो कर्माधीन हे तब तो यह बात ठग वैद्य की जैसी हुइ! रोगीको आराम हुवा तो मेरी औषधीसे, और रोग बढा तथा म रगया तो कर्मसे और जो कर्मोंसे बूरा भला होता होय तो फिर ई- श्वरका नाम क्यों लेते हो? तब वो कहते हें की हम तो इश्वरको भक्त

वत्सल कहते है, तव उनसे कहा जाता है कि, जो असा है तो सोमे
श्वरका देवल गजनी महमदने तोडा, तव रक्षा क्यों नहीं करी? औ
भी म्लेछ लोग भक्तोंको वहुत ठिकाणे दुःख देते है, तो साहायता क्यों
नहीं करते हैं? जो कहोगे के शक्ती नही, तो म्लेच्छोंसे ही हीन श
क्तीवाला परमेश्वर है और कहोगे की, खबर नही, तो फिर प्रभुको
अंतरयामी, सर्वज्ञ क्यों कहते हो? और कहोगे के जानते तो थे, पर
तु रक्षा नही करी, तो फिर भक्तवत्सल कहा रहे? इसलिये विष्णुके
भक्तवत्सल मानना व्रथा है

अव शंकर संहार करता कहते है, उन्को पूछते है कि, प्रलय का
ल आता है तव संहार करते है, कि हमेशा संहार करते हैं? अपने हा
थसे करते हैं, या दूसरे के पास कराते हैं! जो, अपने हाथसे हमेशा सं
हार करते ऐसा कहोगे, तो क्षण २ में अनंत जीवोंका संहार होता है
सो अकेले कैसे कर सके! दुसरेके पास करते है, ऐसा कहोगे तो उ
सका नाम वताओ और जो कहोगे की उनकी इच्छासे संसार होता है
तो क्या प्रभुकी सदा ऐसी ही इच्छा रहती है की मार २ ऐसे प्रणाम
वालको तो दुष्ट कहते है, और जो सदा प्रलय कालकी वक्त संहार क
हता हैं एकदम ऐसा क्रोध क्यों हुवा की विचारे सर्व जीवोंका मारडाल
एक जीवको मारे उसे ही हिंसक कहते है, तो सर्व सृष्टीका संसार का
उसे क्या कहना! तव कहते हैं कि इसमें हिंसा काय की! यह तो एक
तमासा वनाया था सो वीखेर (वीगाड) डाला तव तो प्रभु तमास
गिर हो गये इतने जीवकी हिंसा भी नहीं लगी, और राग द्वे
युक्त हूये अच्छा लगा तो वनाया, और वुरा लगा तव वीखे
डाला और भी पूछते है कि प्रलय होगा तव सव जीव कहा जायगें
तव वो कहते है की भक्त तो ब्रह्म में मिल जावेंगें, और अन्य जी

मायामें मिल जावेंगे अच्छा, प्रलय हुये पीछे माया ब्रह्मसे जुदी रह ती है, कि ब्रह्ममें मिल जाती है ? जो जुदी रही कहोगे तो, माया भी ब्रह्मवत नित्य हुइ, और मिलगई कहोगे तो, जो जीव मायामें मिले थे वो सब ब्रम्हामें मिल गये, फिर मोक्षका उपाय यम, नियम, किस लिये करना चाहीये ? क्यों की महा प्रलय हुये तो सर्व ब्रम्ह रुप हो जावेंगे

अच्छा, पीछी नवीन सृष्टी होगी तब वो ही जीव पीछ सृष्टीमें आवेंग की नवीन पेदा होवेंगे ? जो वोही पीछे आनका कहोगे तो ब्रह्ममें सब जीव जुदे २ रहे, एकत्र न हुवे, ऐसा ठेहरा फिर ब्रह्ममें मिले कहे, यह बात झूट हुइ और जो नये उपजे कहोग ता, जीव का अस्तीत्व न रहा, फिर मुक्त होनेका उपाय व्यर्थ हुवा क्यों कि थोडे कालमें उनका भी नाश हो जावेगा

और भी पूछते हैं, माया मूर्ति है, कि अमूर्ति है जो मूर्ति कहोगतो अमूर्ति ब्रह्ममें कैसे मिली? औरमूर्ति माया ब्रह्ममें मिलीतो ब्रह्म भी मूर्तिहुवा तथा मूर्ति मिश्रहुवा और अमूर्ति कहोगेतो, पृथव्यादि मूर्ति(दृश्य देखत) पदार्थ इससे केसे हुवे ? इत्यादि युक्तीसे विचारते इश्वरसृष्टीका रचता, तथा ब्रह्म पेदा कर्ता, विष्णु पालन कर्ता, और महादेव सहार कर्ता इत्यादि सर्व बात कपोल कल्पित दृष्टि आती है अहो भव्य ! इस भ्रममें नहीं पडते, पृथ्वी, पाणी, अग्नी, हवा, वनस्पति, बेंद्री, तेंद्री चोरिंद्री, पशू, पक्षी, जलचर, मनुष्य, नर्क, स्वर्ग, इन सर्व पदार्थोको अनादि मानना, न इनको कोइ उत्पन्न कर्ता है, और न विनाश कर्ता है अंडा-पक्षी, बीज-वृक्ष, स्त्री-पुरुष, इनमें पहली कोन ? और पीछ कोन ? सर्व एक एकसे पेदा होते है इस लिये अनादि जाणना न कोइ उत्पन्न कर्ता है, और न कोइ प्रलय करता है वो पूछेंगे की यह

किन्ने बनाये ? विन बणाये कैसे हो गये ? तो हमारा उनसे पूछ होता हैं कि ईश्वरको या ब्रह्माको किन्ने बनाया ? तब वो कहते हैं ब्रम्हा स्वय सिद्ध हैं अनादि हैं तो हम भी कहते हैं, कि जैसे ब्रम्हको स्वयंसिद्ध मानते हो, तैसे हम भी पृथ्वीयादिको स्वय सि अनादि मानते हैं *

तब कोइ पूछे कि जीवको दु ख सुख कौन करता हैं ? तब कहते हैं कि अपने २ कर्म करके पाता है +

---

* इसलिये सिद्धान्त सिरोमणीका गोल नामक अध्याय तुम्हारेभास कराचार्य ही फरमाते है सो—

भमे पिंड शशाक ज्ञकरवि विकुजे
ज्यार्कि नक्षेत्र कक्षाद्र तै वृतो हत सन
मृद निल सालिल व्योम तेजो मयो ऽ यम
नान्या धार स्वश क्त्यैव वियतिनि
येत तिष्ठती हास्य पृष्टे निष्ठ विश्वच
शाश्वत् सदनुज मनुजा दित्य दैत्य समतात

अर्थ—चन्द्र बुद्ध शुक्र, सूर्य, मगल, गुरु, शनी, और नक्षेत्रों पर्तुळ मार्ग स घेरा हुवा और अ यके आधार सिगर पृथवी जल, तेज वायू और आकाशमय यह मूपिंड गोलाकार हो अपनी शक्ती से ई आकाश मे निरन्त्र रहता है और इसके पृष्ठपर दानव मानव दव तथ दैत्य सहित विश्व चारहों तरफ रहा हुवा है

\+ श्लोक—सुखस्य दु खस्य न कोपी दाता,
परोददाति कुबुद्धि रेषा,
पुराकृत कर्म न देव भुज्यते
शरीर कार्य खलुय त्वया कृतम्

अर्थ—सुख और दु खका दूसरा कोइ भी देनेवाला नहीं है अपने २ पूर्व कृत्य कर्मानुसार यह जीव भोगवता है

शेर—अरब्बी—ऐसालि मुजरक बजात खुलसर्र फथी इख्लात ॥

अर्थ—चैतन्य इरिगफत करने वाला है अपने आपसे कबजा रखने वाला है, साथ औजारके

युनानी हिकमत किताब

प्रश्न—कर्मका कर्ता कौन है

उत्तर—जीव है

प्रश्न—जीव कर्मका कर्ता हो कर अशुभ कर्म कर, जान कर दु खी क्यों होता है ?

उत्तर—अज्ञान करके जैसे वहुत मनुष्य जानते हैं कि दारु पीनसे मूख वनना पडता है, तो भी दारु पीते हैं तैसे ही जीव अज्ञानपनेसे कर्म तो सुख के लिये करता है, और दु खी होता है, यह सत्य श्रधना

ऐसे ही प्राचीन कालमें इस पवित्र जैन धर्म के विषय विप्रीत परुपणा करनेवाले सात निन्हव हुये हैं, जिनका स्वरुप सक्षेपसे उववाइजी सूत्रमें कहा है इन निन्हवोंमें से जो १ पहले निन्हव संपूर्ण काम हुवे हुवा कहना, इस श्रद्धा के धरणहार जम्मालीजी हुये हैं [इ]द्द महावीर प्रभू के शिष्य जम्मालीजी, बहूत शिष्यों के साथ अलग [वि]चारते थे एकदिन शरीरमें कुछ बीमारी हाने से शिष्य से कहा कि [मे]रे लिय विछोना करो शिष्य विछोना करने लगा, तब उन्हने पूछा [कि] विछोना हुवा ? शिष्यने उत्तर दिया हा जी तैयार है वो वहा [ज]ाकर देखे तो पूरा तैयार नहीं हुवा, तव जम्मालीजी बोले कि झूट [क्]यों बोलत हो ? अब्बी तो अधुरा ही है पूरा होय तव हुवा कहना [शि]ष्यने कहा—भगवानका फरमान है कि काम शुरु किया उसे किया [क]हना * जम्मालीजी बोले, यह कहना झूटा है वश इतना कहते [ह]ी उन्होंने मिथ्यात्व उपार्जन करलिया, और निन्हव ठहर गये यह [म]र के किल्मीषी (नीच जाति के) देव हुये

२ श्री वसु आचार्य के शिष्य तिश्यगुप्त, एक वक्त आत्म प्रवा

* घरसे मुम्बाइ जाने निकला उसे मुम्बाइ गया ही कहते हैं

द पूर्व की सझाय करते, अधिकार आया किसीने प्रश्न किया, हे भ गवान् ! एक आत्म प्रदेशको जीव कहना ? भगवाने फरमाया कि नहीं, यावत् दो, तीन, संख्याते, असख्याते, की पृछा करी, तब भी भगवाने ना फरमाइ तब फिर प्रश्न किया तब भगवानने फरमाया– " जितने आत्म प्रदेश हैं उतने सर्व पूर्ण होवें तब ही जीव कहना " इस उपर से तिश्र गुरुजी की श्रधना हुइ " जो आत्माका छेला प्र- देश है, वा ही जीव है, बाकी नहीं " यह उनके प्रणाम जान कर उ न्हको गुरुजीने बहुत समजाया, उनने माना नहीं, तब उनको ग च्छ बाहिर किय वो फिरते २ ' अमलकपा ' नगर पधारे वहां ' मु- मित्र ' श्रावक के घर गौचरी गये, वो उनकी श्रद्धासे वाकिफ था उस श्रावकने उन साधुजीको एक चांवल (भात) का दाना, और एक दालका दाना वहरा (दे) कर खडा हो गया तब साधुजी बोले क्यों भाइ हमारी मस्करी (ठठा) करता है ? श्रावकेन कहा, नहींजी महाराज ! में तो आपकी श्रद्धा मुजब ही करता हु आप फरमाते हो एक प्रदेशी आत्मा, तो एक प्रदेश की अवघेणा तो अंगुल के असंख्यातमें भाग है तब यह आखा चावल और दाल कैसे खप ! रखे इसमें से भी परिठावणा (न्हाखना) पड ! इस लिये यह भी मे ने डरते २ वहराया इतना सुणते ही साधूजी की अकल ठिकाने आ गई, और बाले सत्य है " असंख्यात प्रदेशी आत्मा " तुमने हमारा गुरु जैसा उपकार किया इतना सुन श्रावक नमस्कार कर कहन ल- गा, धन्य है आप जैसे सीधी लेनेवालेको

३ आपाढाचार्यजी अल्पज्ञ साधू की सपदा छोड मरके देवता हुए, और ज्ञान लगा कर देखा कि मेरी समदायमें पाट चलानेवाला कोइ नहीं हैं, उस वक्त अपने मृत्युक शरीरमें प्रवेश कर, शिष्यक

ाये, फिर आप शरीर छोड देवलोक गये यह देख उनके शिष्योंके
न में वैम भरा गया कि जगतमें साधू है कि नहीं, की सब के शरी
 देवता ही आकर रहत हैं। रखे अपन किसीको वंदना करेंगे तो
वृती देवताको वंदना हो जायगी पाप लगेगा इस विचार से
ाधुको वंदना करनी छोड दी सो निन्हव हुव

४ गुप्ताचार्यजी के शिष्य रोह गुप्त साधू, किसी वादी के साथ
र्चा करते, उस वादीने जीव अजीव दोरासी की स्थापना करी तब
ह गुप्तजीने एक सूतक, डोरे पर बट चढा कर रख दिया, और उस
 पूछा यह जीव कि अजीव ? जो जीव कह तो सूत्र है, और अजीव
हे तो हिलता क्यों हैं ? यह देख वादी चुप हुवा, तब रोहगुप्त बोले
ह " जीवा जीव " की तीसरी रासी यों उसे हरा कर गुरुजी पास
ाये उनको गुरुजीने बहुत ही समजाया कि भगवानने दोइ रास फ
माइ हैं, तेने तीसरी स्थापी सो मिथ्या है इस लिये सभा समक्ष मि-
था दुष्कृत दे उनने मानके मरोड अपना हट छोडा नहीं सो निन्हव हुवे

५ धनगुप्ताचार्यांके शिष्यन एक समयमें दो क्रिया
लग ऐसा स्थापन किया, जैसे नदी उतरते परमें शीत, और शिरपर
सुर्य ताप की उष्णता परंतु यों नहीं जाना कि समय अति सुक्ष्म है
जिसमें दोक्रिया एकदम जीव कैसे वद सके ?

६ भगवतने तो जीव और कर्मका दूधमें घृत, तिलमें तेल, जै
सा सम्बंध बताया हैं और मजाप्त साधूने जीवका कर्म सॉप की का
चली जैसे लग ऐसी परुपणा करी, और

७ अश्वमित्रजीन नर्कादिक जीवोंका विपर्याय पणा (क्षिण २
में परावृत हात) बताये, यहगये कालमें हुवे* सात ही निन्हवोंका स्व-

* कितनक ८ तथा ९ कहते हैं परन्तु शास्त्रम तो सात ही हैं

रूप जानना

अब प्रिय बान्धवों! जरा विचारीय कि–जिनोंने भगवतके एक सामान्य वचनको ही विपीत (उलटी) रीतसें प्रगमाये वो नव ग्रीयवेगमें जाने जैसी जबर करनी करके निन्हव कहलाये, तो जोशास्त्रके पाठके पाठ उत्थाप देवें, शास्त्रको शस्त्र रुप प्रगमा देवें, अनंत भवोंका उद्धार होवे ऐसे वचनोंको अनत भव बढानेवाले कर देवें, उनकी क्या गती होगी, इसका ख्याल आप ही आपके हृदयमें कीजे

इस पचम कालमें इस शुद्ध जैन धर्म की रचना देखकर सदाश्चर्य पैदा होता है, और किसी भी बातका निर्णय करनेमें बुद्धी थक जाती है- देखिये–एक 'चेइय', या 'चैत्य' शब्दने अव्वी जैनों कितना गलबा उठाया है! कोइ कहते हैं चेइयका अर्थ ज्ञान है, तो कोइ कहते है, नही, प्रतिमा हैं, और ठाणायगजी सूत्रमें कहा है कि "एएसीणि चउवीसाए तित्थयराणं चउवीसं चेइय रुंखा पन्नता" यसार्थ–२४ तिर्थंकरके २४ 'चेइय' ज्ञान उत्पन्न होनेके २४ 'रुंखा' वृक्ष कहते हैं, इस पाठसे सिद्ध होता है कि चेइय शब्दका अर्थ ज्ञान ही होता है, और जो ज्ञान ही करते हैं वो "गुण सिला नाम चेइय" का अर्थ गुण सिला नामा ज्ञान करेंगे क्या? क्यों कि यह तो बगीचेका नाम हैं इसलिये जिस ठिकाण जो अर्थ जुडता आवे सोही किया जाय ता अच्छा लगे, परंतु पक्ष नही तानना और भी कितनेक कहते हैं "दयामें धर्म" तो दूसरे कहते हैं "आज्ञामें धर्म" अब सोचिये, भगवान की आज्ञा और दया दो है क्या? भगवान कदापी हिंसकी आज्ञा देवेंगे क्या? तो फिर मत पक्ष क्यों ताणना?

कितनक ऋषभ देवजीके वक्त की बनाइ हुइ वस्तु, महावीरस्वामी तक रही बताते हैं, और भगवतीजी सूत्रके ८ मे शतक, ९ में उद

र्म,-छत्तीस वस्तुकी संख्याते कालकीही स्थिति कही है ऋषभ देव-
को एक कोडा कोड सागर साठेरा हुवा सो कैसे टिकी? भगवती
के ६ शतक ७ उद्देशे में भरत क्षेत्रमें वेताड पर्वत गगा सिंधु नदी
र ऋषभ कूटको समुद्र की खाइ ही शाश्वता बताया है, और कीत,
क अन्य पर्वतको शाश्वता बताते हैं और फिर कहते हैं कि ऋषभ
जीके वारे में वडा था, और छट्टे आरेमें छोटासा रह जायगा तो
ा शाश्वती वस्तु भी कमी ज्यादा होती है?

ा-शास्त्रमें तो १४ स्थानक समुछिम उपजने के बताये है और कि
नेक मुखपर मुहपती बांधनेसे थुकमें समुछिम जीव मरते बताते हैं तो
ह १५ मा स्थानक कहां से लाये। भगवतीजी के १६ मे शतकके दूसरे
देसेमें कहा है कि हे गौतम सक्केंद्र उघाडे मुखसे बोले सो सावद्य भाषा
ौर ढके मुह से बोले सो निरवद्य भाषा अब मुहपर मुहपती न रहने से
कितनी वक्त उघाडे मूहसे बोलाता होगा सो विचारीये और जो मुहपती
ुख पर बांधने का निषेध करते है, उन्हीके माननिय ग्रंथ में देखिये १
श्री ओघ निर्युक्त की १०६३ और १०६४ की चूर्णी में लिखा है कि
'एक वेंत चार अंगुल की मुहपती में मुखके प्रमाण जितना डोरा लगा
र मुख पर मुहपती बांधना चहाहिये" २ प्रवचन सारो द्धारकी ५२१
ी गाथा में कहा है कि 'मुखपर मुखपती अच्छादन करके बांधना च-
हिये ३ महा निशीथ में कहा है मुख वस्त्रिका विगर प्रतिक्रमण करे, वा
वना देवे या लेवे, वदना—सज्झाय वगैरा करे तो पुरिमढका प्रायश्चित
आवे ऐसाही ४ योग शास्त्रकी वृतीके पृष्ट २६१ में लिखा है कि—उड-
र पडत जीव और मुखके उष्ण श्वासंसे वायू कायके जीवों की वि
ाधना (हिंसा) टालने मूहपती धारण की जाती है, ऐसे ही आचार
दिन कर ग्रंथमें और शतपदी वगैरा अनेक ग्रंथमें लिखा है, और भी
देखिये भुवन भानु केवली का रास की जो हमचन्द्रा चार्य की रचना
ुसार उदय रत्न जीने सं १७६९ में रचा है उसके ९६ मी ढालमें भी
देखिये ॥ढाल॥मुहपतीए मुख बांधीरे, तुम बेंगो छो जेम॥गुरुणीजी॥ तिम

मुख ढूचोदइनेर, बीजा वेसा एकेम ॥ गुरुणीजी ॥३॥ मुख बांधी मुं
परेर, पर दोष न वदे भाहि ॥ गुरुणीजी ॥ साधू विन ससार मेरे, स
को बीठा क्यां ॥ गुरुणी ॥४॥ और ऐसाही खुलासा वार कथन
शिक्षाके रासेंम तथा हरीवल मच्छी के रासमें है, कि मुहपती मुखपर
वक्र धर्म क्रिया करी जाती है ऐसा स्थान२शास्त्रोंमें तथा ग्रंथोंमें
२ कथन हो कर भी इन ग्रन्थों को मानने वाले मुहपती मुखपर
बान्धे ही धर्म क्रिया करते हैं उनको जिनश्वर की गुरुओं की आ
अराधक केसे कहे जाय सो विचारीयेजी !

गोमठ सारजीमें और सुव्रष्ट तरंगणीमें ४८ पुरुष ४० स्त्री,
२० नपुसक, यों उत्कृष्ट १०८, एक समयमें मोक्ष जाय ऐसा लिखा
और इसी सूत्रको मानने वाले स्त्री को मोक्षकी ना कहते हैं। चर
शतकमें मलीन वस्त्रधारीको नम कहा है और इसी सूत्रको मानने
ले वस्त्रधारी साधूको गृहस्थ जैसे कहते हैं। तत्वार्थ सूत्रमें केवल
के क्षुद्या परिसा है ऐसा कहा है और इसे मानने वाले केवली को अ
हार करने की मना करते हैं और इसही सूत्रमें बारह कल्प (स्वर्ग
कहकर फिर सोलह मानते हैं !

कितनेक स्थानकमें उतरनेवाले साधूको पासत्थे बताते हैं
कितनेक गृहस्थ रह उस मकानमें रहनेवालेको जिनाज्ञासे विरुध ब
ते हैं और न्याय देखो तो स्थानक क्या, और मकान क्या, निर्दो
शास्त्रोक्त मकानमें साधुको रहना चाहीये, स्थानक नाम मकानका
है और कितनेक अपने सम्प्रदाय के साधूओंको छोड अन्य को दा
मान देनेमें एकान्त पाप बताते हैं कितनेक मरते जीवोंको बचाने
पाप बताते हैं जो धर्मका मूल साधन दया दान है उसी की उत्था
ना करते हैं तो अन्य बातों का तो कहना ही क्या?

ऐसी २ अनेक विप्रीत परुपणाके जोगसे जैनमत चालणीके
ः जैसा हो गया एक ही पिताके पुत्र आपसमें मिथात्वी वनते हैं
३ झूटका निर्णय करना छोड आप की स्थापना और अन्य की क
ोमें मान धर्म रहे हैं यह सब विप्रीत श्रधना परुपणाका ही कारण
ानना सम्यक् द्रष्टी पुरुष इस झगडेमें नहीं पडते है

१२ ' धर्मको अधर्म श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व ' श्री जिनेश्वर भग-
नने तो दया मुल निर्वद्य सत्य धर्म फरमाया है —

सुत्रपाठ —से वेमी, जेय अतीता, जेय पडुप्पन्ना, जेय आगमि
ना, अरहंतो भगवतो, ते सव्वेवि, एव माइक्खति, एव भासति, एव
ाणवति, एव परुवेति, सव्वे पाणा, सव्व भुया, सव्वे जीवा, सव्वे
त्ता, ण हतव्वा, ग अज्जवेयव्वा, ण परिघातव्वा, ण परिता वेयव्वा,
। उद्दवेयव्वा, एस धम्मे सुद्धे, णितिए, सासए, समेच्चलोय खेयन्नेहिं
वेतिते, तंजहा उठिएसु वा, अणुठिए सु वा, उवरय दड सु वा, अणुव-
यदडे सुवा, सो वाहिएसु वा, अणोवहिए सुवा, सजोगरए सुवा, अस
ोग रए सुवा, तच्चचेय तहा चेय आर्स्स चेय पवुच्चइ

आचारांगजी प्रथम श्रुतस्कंध, अध्याय ४ उद्देशा १

भावार्थ—सुधर्मा स्वामी जबू स्वामीको फरमाते है, जो तिर्थ
र भगवान गये कालमें हुये, वर्तमान कालमें हैं, भविष्य कालमें हो-
ंगे, सो सर्व तिर्थंकरोने ऐसा फरमाया हैं, सदेह रहित कहा है, वार
ापदा में परुपा है, फट गगट उपदेश दिया है कि सर्व प्राणी (बेंद्रीय,
द्रिय, चौरिंद्रीय) सर्व भुत (वनस्पति) सर्व जीव (पचेंद्री) सर्व
त्व (पृथ्वी, पाणी,अग्नी वायू)इनकी हिंसाकरनी नहीं, परिताप उप
ाना नहीं, बंधनमें डालना नहीं, उपद्रव करना नहीं, दु ख देना नहीं
ये ही धर्म नित्य शाश्वता (सनातन) है ' यह सर्व लोकक प्राणियोंके,
वेद (दु ख) के जाननेवाले जिनेश्वरने फरयाया है किनक लिये फ

रमाया है सो कहते हैं धर्मके सन्मुख हुये उनको, तथा नहीं हुय उन
जो त्रिविध [मन वचन कायाके] वंडसे निव्रते उनको, नहीं नि
उनको, श्रवकको, साधूको, रागीयोंको, त्यागीयोंको, भोगीयोंको, अ
जोगीयोंको एख सरीखा कहा है येहि अहिंसा धर्म यथातथ्य सत्य
सुखदायी है

ऐसे शुद्ध धर्मको कु गुरुके उपदेशसे, तथा मिथ्यामोहके उद
स, अधर्म श्रधे और दूसरेको आराधेन की मना करे सो मिथ्यात्व

१३ ' अधर्मको धर्म श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व ' ऊपर सुत्रानुस
धर्मके लक्षण कहे उससे विप्रीत, अर्थात् जहा छे ही कायका घमश
ण होरहा है, ख्याल, तमासा, ढोंग, कन्यादान, ऋतुदान, प्रमुखेंम ध
माने तो मिथ्यात्व

१४ ' साधूको असाधू श्रधे परुपे तो मिथ्यात्व ' सतावीस गु
युक्त, ज्ञानी, ध्यानी, तपश्वी, क्षमावत, वैराग्य वत, जितेंद्री, ऐसे उत
मोत्तम गुणके धारण हार, तिनको मत पक्ष करके, द्वेप बुद्धी करके, अ
साधू (ससारी वत्) या भगवानके चोर अपने जैनी भाइ कितनेक
कहते हैं कितेनक कि ऐसी श्रद्धा है कि अपने गच्छ या संप्रदायक
जो साधू है सो ही सच्चे साधू और तो ढील पासथ्ये या मेले कचोले
है, इनको वंदना नहीं करना आहार प्रमुख नहीं देना, और अलाप
भी नहीं करना ऐसी जो निन्दा करत है, दान मान की अतराय देते है वे
मिथ्यात्व उपार्जन करते हैं यह पुरुप जरा पांच चारित्र और छे नि
ठेके ज्ञानपर उपयोग लगावे तो इतना पक्षपात नहीं करे. जरा विचारे
एक हीरा एक रूपे की कीमतका, और एक क्रोड रुपे कीमतका, परन्त
है तो हीरा उसको काचका टुकडा कहे तो मिथ्यात्व जिनोंके मुल गु
णका भंग न हुवा है, लौकीक व्यवहार शुद्ध, अपने गुरुकी आज्ञा अनु

सार चलते है, वो किसी भी सम्प्रदाय के हो, उसका पक्ष न करते साधू मानना, यथा योग्य सेवा करना

१५ असाधूको साधु श्रधे तो मिथ्यात्व '—प्राणतिपातादिक अठारह पापको सेवे—सेवावें—अनुमोदनेवाले, जिनाज्ञा विरुद्ध वर्तनेवाले, मानो पेत (लंबाइ चोडाइ के प्रमाण) उप्रात, या, श्वेतरंग छोड लाल, पीले, काले, इत्यादि अन्यरग के कपडे रखनेवाले, आरभ परिग्रह युक्त ऐसेको साधु श्रधे तो मिथ्यात्व कितनेक कहते हैं, पचम काल है इसवक्तमें शुद्ध सजमी कोइ देखी नहीं कितना भी हूवा तो अपने से तो अच्छे है, भगवानका भेष है अपन तो भेषको वदनाकरते हैं, परंतु भोले यों नहीं समजते है कि जो बहुरुप्या—या नाटकिया साधूका रूप वनालाया तो उसे भी साधु कहा जायगा क्या ? कितनेक कहते है, की अभी शुद्ध मार्ग परूपे तो तीर्थका विच्छेद हो जाय वाह भाई वाह तुम जैसे कायरों से ही जैन सासन कभी चल सकेगा अरे बन्धू ' वीर प्रभूका हूकम है कि पचम कालमें २१००० वर्ष तक मेरा सासन चलेगा, तो क्या यह आशीर्वाद कभी मिथ्या हो सकता है ? कदापी नहीं जिन सासनको चलानेको अभी भी बडे २ गुणवत मुनी विराजमान हैं, और होयेगें, नास्ती कदापी नहीं समजना इसलिये असाधू—पाखडीयोंको जो साधू श्रधे तो मिथ्यात्व समजना

१६ 'जीव अजीवको श्रधे तो मिथ्यात्व ' —प्रजा प्राण जोग उपयोग हानी वृद्धी युक्त एकेंद्रीयादिक जीवको अजीव श्रधे, कहे कि यह तो भगवानने मनुष्य के खाने के लिये पदार्थ उत्पन्न किये हैं, इसमें जीव कायाका ? जो मनुष्य इसका उपभोग नहीं लेते है, वो बडे मूर्ख हैं, क्यों कि यह सडकर निरूपयोगी हो जायेंगे उनसे पूछा जाता हैं कि जो मनुष्य के भोगवनेको ही निपजाये है, तो फिर कंटक कठिण

कटूक, वेस्वादी, क्यों निपजाये हैं! सर्व मनोज्ञ, निरोगी, सुखदाइ नि
जाते तो यों भी समजा जाता कि मनुष्य के लिये ही निपजाये
क्या प्रभू सृष्टी के दुश्मन है कि कंटक और जहर निपजा कर दुनिय
को दु खी करे ? अच्छा, आपके लिये फलादि निपजाय तो आप
भी भक्षण करेन सिंह प्रमुखको निपजाये होवेगे, क्यो कि जैस आप
फलादि प्यारे लगते है, तैसे उनको भी मनुष्यका मांस प्रिये लगता
वो आपको खाने आते है तब बाप के बापको पुकारते हुवे क्यों जा
छिपाते हो ? अरे सिंह तो दूर रहा, परतु एक खटमल भी जा चटका
वे तो तूर्त मार डालते हो जैसा तुमारा प्राण तुमारेको प्रिय है, वैसा
उनका भी जानना भोले भाइ ! भगवानेने किनको भी नहीं निपज
ये, जैसे २ जिनने कर्म किय हैं, वैसी २ उनको योनी प्राप्त हुई
वो हानी वृद्धि रुप चेतना लक्षण करके प्रत्यक्ष जीव हैं

१७ 'अजीवको जीव श्रधे तो मिथ्यात्व' सुखा काष्ट, निर्ज
व पाषाण, वस्त्र, इनको जीवका आकार बनाया, उसे जीव श्रधे जै
मूर्तीको साक्षात् तदरुप मानना यह भी मिथ्यात्व है

१८ 'मार्गको उन्मार्ग श्रधे तो मिथ्यात्व' जो शुद्ध, निर्दो
सरल, सत्य, मोक्षका मार्ग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, दया, दान,शी
सतोष, क्षमा इत्यादिकको कर्मबधका-संसारमें रुलानेका मार्ग बता
दया दान उत्थापे, डुबानेका खाता बतावे सो मिथ्यात्व

१९ 'उन्मार्गको मार्ग श्रधे तो मिथ्यात्व' सात दुर्व्यसन क
सेवन, काम क्रिडाका करना, स्नान यज्ञादि संसारमें परिभ्रमण करानेवे
जो कामे है उनको मोक्ष ले जाने के काम श्रध तो मिथ्यात्व

२० रुपी पदार्थको अरुपी श्रधे तो मिथ्यात्व ' कितनेक रू
(साकारी-मूर्ती मंत) तो हैं, परतु वायु कायाआदिक सुक्ष्म होने

ी न आवे, उनको, तथा कर्म पुद्गल चौफरसी पुद्गलोंको अरुपी ोंे तो मिथ्यात्व

२१ 'अरुपीको रुपी श्रंेे तो मिथ्यात्व' धर्मास्ती कायादिक ो अरुपी है उन्को रुपी श्रवे, तथा सिद्ध भगवत अवन्ने, अगध, ह्रोक मी लाल वर्ण की स्थापना कर, तथा जो मोक्ष गये है, उनको पुन ासारमें अवतार लेनेका कहे कि ईश्वरने धर्म या मक्तका रक्षण करने, ्श तथा २४ अवतार लिये हैं इत्यादि श्रवे तो मिथ्यात्व

२२ 'अविनय मिथ्यात्व'–जिनेश्वरके, गुरु महाराजके वचन उत्थापे, भगवानको चूके गये वतावे, साधु, साध्वी, श्रावक, श्रावि का, गुणवत, ज्ञानवत, तपस्वी, वैरागी इत्यादि उत्तम पुरुषोंसे कृतघ्री णा करे, छिद्र देखता रहे, निंदा करे, अविनय करे सो मिथ्यात्व

२३ आशातना मिथ्यात्व–यह आशातना ३३ प्रकारसे होती है सो —१अरिहत भगवत की २ सिद्ध भगवंत की ३ आचार्यजी की ४ उपाध्यायजी की ५ साधूजी की ६ साध्वीजी की ७ श्रा वक की ८ श्राविका की ९ दवता की १० देवी की ११ स्थेवर की १२ गणधर की १३ इस लोकमें ज्ञानादि गुणके धरनेवाले की १४ परलोकमें उत्तम गुणसे सुख पाये हैं उन की, १५ सर्व प्राण भूत जीव सत्व की १६ काल की (कालोकाल क्रिया नहीं समाचरे सा) १७ सूत्र की भगवानके वचन उत्थापे १८ सूत्र देव की अपनेको ज्ञानाभ्यास कराया उनकी १९ वाचना चार्यकी अपनेको शास्त्र की वाचना दी उनकी इन १९ की अशातना करे, अवर्णवाद वोले, अ पमान करे या कोई भी रीतिसे मन दु खावे तो मिथ्यात्व लगे और १४ ज्ञान की, सो २० 'जंवाइद्धं' सुत्र आगे पीछे पदे २१ 'वचामे

लिय' उपयोग रहित पढे २२ 'हिणक्खरं' कमी अक्षर कहे २३* च्चक्षरं' जास्ती अक्षर कहे २४ 'पयहीणं' पदको अपभ्रंश करे 'विनय' (नम्रता) रहित पढे २६ 'जोगहीणं' पढती वक्त मन योग स्थिर न रखे २७ 'घोसहीणं' शुद्ध उच्चार नहीं करे २८ 'सु दिन्न' विनीतको ज्ञान न पढावे २९ 'दुट्ठ पडीछिय' अविनीतको ज्ञा दिया होय, या अविनयसे ज्ञान ग्रहण किया होय ३० अकालमें झाय करी होए ३१ काल की वक्त सझाय न करी होए ३२ अ झायमें सझाय करी होए ३३ और सझाय (निर्मल वक्तमें) स (शास्त्राभ्यास) नही किया होए यह तेंतीस काम करनेसे अशात रूप मिथ्यात्व लगता है मतलब यह है कि, बने वहां तक गुणवत गुण ग्रहण करना और किसीको दु ख नही देना

२४ ' अक्रिया मिथ्यात्व '—कितनेक ऐसा कहते हैं कि आ है सो परमात्मा हैं इसको पुन्य पाप रूप कुछ क्रिया लगती ही न है जो पाप पुन्यके भर्ममें पडकर इस आत्माको तरसाते हैं, अर्थ इच्छित भोग नहीं देते हैं, भूख प्यास सहकर दु ख देते हैं, वो आ को नर्कमें जायगें इनको कहते हैं कि वाहरे भाइ वाहा ! तेने तो प मात्माको भी नर्कमें डाल दिया ! परमात्माको ही भंगी, भील, नी बनादिया ! अच्छा आत्मा परमात्माको पोपते हैं वो तो दु खी नहीं हो है देखो भाइ परभव तो दूर रहा परतू इस भवमें भी जो आत्मा कानूनमें नहीं रखते हैं, कुपथ्यका भक्ष करते हैं, चोरी जारी इत्यादि का म करते है, सो रोगी होकर सड २ के मरते है, कैदमें पडते हैं, विन मोत मारे जाते है इस भवमें नर्क जैसे दुःख भोगवते हैं येही आत्मा सो परमात्मा के लक्षण और भी देखीये आत्माको परमात्मा तो मु

---

* एक अक्षर कमी जास्ती करनेसे–भी मिथ्यात्व लगे

। कहते हैं, और उनको काटके खा जाते हैं अब यह गपोडी संख
में जायगे कि आत्माका काबूमें रखनेवाले जायेंगे, इसका सुज्ञों
ार कर मिथ्यात्वका त्याग करेंगे

२५ ' अज्ञान मिथ्यात्व '—सो

गाथा–सवसद ऽ विसेसणाउ, भवहेउ जहच्छि ओवलमाउ॥
णाण फला मावओ, मिच्छादिट्ठिस्स अण्णाणं ॥१॥

अर्थ–सत असत का विवेक न होने से संसार के कारण रूप
ोंका वन्ध जैसा का तैसा रहने स और सच्चे ज्ञानका अभाव रहने
मिथ्यात्व द्रष्टी जीव सब अज्ञानीही हैं.

मिथ्यात्वमें अज्ञानकी नीमा है, अर्थात मिथ्यात्व के स्थान अ-
न जरूर ही होता है और वह मिथ्या मोहके उदय से सब उल्टा
देखता है अज्ञानवादी की तरह ज्ञान की उत्थापना करे ' जाणे
ताणे ' ऐसे कू हेतु से अज्ञानको थापे, सो मिथ्यात्व

इन पच्चीस मिथ्यात्वका त्यागन कर शुद्ध सत्य यथातथ्य जिने-
र के मार्गको स्वीकार करे सो सम्यक्त्वी होता है

गाथा–मिच्छा अणत दोपा । पयडा दीसेइ नमी गुणलेशो ।
तहवियं तेचेव जीवाही मोहुधंनी सेवाति ॥ १ ॥

अर्थ —मिथ्यात्वमें अनत दोप प्रत्यक्ष द्रष्टी आते है, तो भी
ाहाध जीव इसे सेवन करते हैं हा इति आश्चर्य

॥ इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषीजीके संप्रदायके बाल
ब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलख ऋषीजी विरचित् श्री
" जैन तत्त्व प्रकाश " ग्रंथस्य द्वितीय खंडका
' मिथ्यात्व ' नामक तृतीय प्रकरण समाप्तम् ॥

चारित्र धर्म

चारगतीसे तारे सो चारित्र इस चारित्र के दो भेद —१ देश वृती, और २ सर्ववृती, इसमें से सर्व वृती जो साधुजी होते हैं, उनका अधिकार तो ३–४–५ प्रकरणमें हो गया, और देशवृती के दो भेद १ सम्यक द्रष्टी श्रावक, और २ सम्यक्त्व यूक्त व्रत धारी श्रावक, इनमें से पहिले सम्यक्त्वी श्रावकका बयान करते हैं

—————

प्रकरण ४ था.

सम्यक्त्व

नत्थी चरित्त सम्मत्त विहुणा, दसणेओ भइयव्व ।
सम्यत्त चरित्ता इ, जुगव पूव्व च सम्मत्त ॥
श्री उत्तराध्ययनजी सूत्र

सम्यक्त्व विना चारित्र होता ही नहीं है और सम्यक्त्वी में चारित्र की भजना (हो या न हो) सम्यक्त्व और चारित्र इन दानो पहिले सम्यक्त्व जानना अर्थात् सम्यक्त्व विन कुछ नहीं है और सम्यक्त्व हुइ तो अनुक्रमें सर्व गुण की प्राप्ती होता है, इसिये–

ना हु दंसणिस्स नाण, नाणे विंणा न होइ चरण गुणा।
अगुणीस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्ख निव्वार्ण ॥

सम्यकत्व विन ज्ञान नहीं ज्ञान विन चारित्र नहीं चारित्र विन क्ष नहीं मोक्ष विना कर्मसे (दुःखसे) निवृते नहीं हैं इसलिये म्यकत्व की आवश्यक्ता है सम्यकत्व किसका कहना? जिसका स्व उत्तराध्ययनजी के २८ वे अध्ययनकी १५ वी गाथामें इस मुजब हा है —

तहियाणंतु भवाण, सभावेण उवएसेणं।
भावेण सद्दह तस्स समत्त तं वियाहिय ॥

सम्यकत्व या समकित उसे कहते हैं कि—जो जाती स्मरणादि ान करके स्वत —अपनी बुद्धीसे, तथा तिर्थंकर का या गुरु महाराजादिक उपदेशसे, चैतनीक तथा पुद्गलिक वस्तुका, धर्म अधर्मका यथा तथ्य-त्य तादृश्य स्वरुपको जान, और मोह कर्म की प्रकृतियोंका उपसम छिपाना) होनेसे, क्षायिक क्षयोपसमादिक भाव करके, यथा तथ्य शुद्ध थे, परतीते, अंत करणमें रुचे, उसे सम्यकत्व या समकित कहते हैं

सम्यकत्वके प्रकार

सम्यकत्व ७ प्रकार की होती हैं —१ मिथ्यात्व, २ सेस्वादान, ३ मेश्र, ४ उपसम, ५ क्षयोपसम, ६ वेदक, ७ क्षायिक.

"मिथ्यात्व सम्यकत्व" * यह नाम पढकर ही पाठक चौक उठे कि मिथ्यात्वको सम्यकत्व कैसे कही? परंतु नयज्ञानसे विचारनेसे प्रत्यता आप होगा नैगम नय वालका वचन है. नैगम नय वाला एक असको पूर्ण वस्तु मानता है जैसे कोइ कृत्य तो मिथ्यात्वके कर

* दिगंबर आम्नायके आचार्यका बनाया हुवा, २१ ठाणेके थोकमे मिथ्यात्व और मिश्रको सम्यकत्वम गिनी है अपने साधमारगी भाइ इस थोकडेको प्रमाण भूत गिनते है

रहा है, और उसकी सत्तामें प्रकृतियोंका उपसम हो गया, जिससे उसने सम्यक्त्वको फरस ली, परंतु अभीतक मिथ्यत्वक लिंगका त्यागन किया नहीं, अंबड सन्याशीवत्, तथा मरीयंच वत् और एकेंद्रीमें भी कवलज्ञान पानेवाले जीव बेठ हैं, तथा अभवी साधुको भी ये ही गिनते है, इत्यादि कारणके लिये मिथ्यात्वको सम्यकत्व चोइस ठाणेका थोकडा बनाने वाले आचार्यने गिनी है ‡

२ " सेस्वादान सम्यकत्व "–चतुर्थ गुण स्थान वर्ती जीव क्षयोपशम तथा उपशम सम्यकत्वमें प्रवृता हुवा, अनंतानबंधी चतुष्क उदय होते, सम्यकत्व से भ्रष्ट हो, चौथे गुण-स्थानसे पडा और मिथ्यात्वकी तर्फ आने लगा, परंतू रस्तेमें है, मिथ्यात्व तक पहोंचा नहीं, उसे सेस्वावानी सम्यकत्वी कहाए १ जेसे कोइ मनुष्य उच प्रसादपर चढ नीचे देखने लगा और चक्कर आनेसे वहा से पडा परन्तू धरती लग पहोंचा नहीं तैसे ही कोइ जीव क्षयोपशम तथा, उपशम सम्यकत्व रुप महेलपर चड, परस्वभाव रुप पृथवीका अवलोकन , करता, कषाय रुप चक्कर आनेसे पडा मिथ्यात्व तक पहोंचा नहीं छ आविलका काल प्रमाण सम्यकत्वका स्वभाव रहे सो सेस्वादान सम्यकत्व २ दूसरा द्रष्टत–जेसे किसीने खीर सक्करका भोजन किया, और उसको तूर्त वान्ती (उल्टी) होनेसे, पीछे उसे उस भोजनका गुलचट्टा (थोडासा) स्वाद रहता है तैसे यह समकित पडवाइ प्राणीको प्राप्त हो, तूर्त चली जाती है तब उसे उसका गुलचट्टा स्वाद रहजाता है ३ इस सम्यकत्व पर तीसरा द्रष्टांत घडियालका देते हैं जैसे घडियाल (झालर) बजे पीछे झणकार रहता है, तैसे इस सम्यकत्वी के झणकार के अवाजरुप किंचित धर्म पर प्रणाम रहते हैं ४ चौथा द्रष्टांत जेसे आव से

‡ आर तब ही मिथ्यात्वको गुणस्थान (गुणका स्थानक) कहा है

ल टूटा और पृथवी पर आकर नहीं पडा ऐसे हि जीवरुप आंव-
णाम रुप डाल, सम्यकत्व रुप फल, मोह रुप हवा चलने से टूटा,
ौर मिथ्यात्व रुप पृथवी पर नहीं पडा, वहा तक से—स्वादान सम्यक-
व जाननी इसकी स्थिती ६ आवलिका (अगुली पर शिघ्रतासे डोरा
पेटे उसका एक आटा आवे सो एक आवलिका) और सात समय
ी होती है इस सम्यकत्व को एक जीव जघन्य एकवार और उ
कृष्ट पांचवार फरसता है

३ " मिश्र सम्यक्त्व "—मिथ्यात्वकी प्रजाय हायमान (कमी)
ोवे, और सम्यक्त्वकी प्रजाय वृधमान (जादा) होत उसके अंतर
ं यह सम्यकत्व अतर मुहूर्त प्रमाण होती है वो वस्तु के संयोगको
मेश्र कहते हैं जैसे दही और सकर के मिलाने से खटमिठा स्वाद
हो जाता है ऐसे ही मिश्र सम्यकत्ववालाका डामाडोल चित्त रहता
है. जैसे कोइ ग्राम बाहिर मुनीराज पधारे, यह सुन बहुत श्रावक नम-
स्कार करने जान लगे, तव एक मिश्र सम्यक्त्वी ने उनसे पूछा, कहां
पधारते हो ? उनने कहा, महाराज के दर्शन करनेको वो बोला, में भी
चलता हूं वो तैयार हुवा, इतनेमें कोइ कार्य प्रयोजन से वो अटक
गया सब लोक महाराज के दर्शन कर पीछे आये, इतनेमें वो भी
फुरसत पाकर दर्शन करने चला रस्तेमें वो लोक मिले, और कहने
लगे, अब कहा जात हो ? महाराज तो विहार कर गये यों सुन
वो बोला, ठीक, गये तो जाने दो, जो मुझे वहा मिलेंगे उनको ही
नमस्कार कर आवूंगा साधूके भरोसे बावा, जोगी, जो मिला उन
को ही नमस्कार करके धर्म माना यह मिश्र सम्यक्त्वका धणी जा-
नना यह सम्यक्त्व एक जीवको जघन्य १ वक्त, उत्कृष्ट ९ हजार
वक्त आती है (इन तीनोंको कितनेक सम्यक्त्व की गिनती में

नहीं लेते हैं क्यों कि इनमें सम्यकत्व की पूर्णता नही हैं गुप्तता, रेसता, और मिश्रता के सबब से)

४ " उपसम सम्यकत्व "—सात प्रक्रतीके उपसमाने (दाकने) से होती हैं सो ७ प्रकृति —अनतानु बंधी [अंत नहीं आवे ऐसा निवड—कठिण बंध बांधे] चोक (क्रोध मान माया और लोभ) का और तीन मोहनीय १ मिथ्यात्व मोहनीय २ मिश्र मोहनीय ३ सम्यकत्व मोहनीय इन तीन मोहनीय की १ दृष्टांतसे समज देते है जैसे—किसीने चंद्रहास मदिरा (दारु) का सेवन किया, उससे वो नशेमें बे शुद्ध होकर, माताको स्त्री, और स्त्रीको माता कहने लगा तैसे ही ' मिथ्यात्व मोह ' वाला मोह कर्म की प्रबल छाकमें छककर, दयामय धर्मको अधर्म जाने, और हिंसामय अधर्मको धर्म जाने * फिर वो नशा कमी होनेसे, कुछ शुद्धमें कुछ बे शुद्धमें होवे, तब कभी स्त्रीको स्त्री कहता है, और कभी माताको भी स्त्री कह देता है ऐसे ' मिश्र मोह ' वाला कभी अधर्मको अधर्म कहे, और कभी धर्मको भी अधर्म कह दें फिर वो नशा साफ उतर जाय, फक्त उसकी गुंगी (लेहर) रह जाय, तब वो कितोलमें आकर कभी स्त्रीको भी मा करके बोल देवें, किंचित भूलसे ऐसे ' सम्यकत्व मोहनी ' वाले अ

---

* दयावर धम्म दुगच्छ माणा, वाहा वाहा धम्म पसंस माणा ।
एगतपि सेवयति असीले निव्वाण संजाती कहं सुराओ ॥
श्री सुयगडांग सूत्र

दयामय प्रधान धर्म की दुगछा (निंदा) करे और जहां छे कायका वध (हिंसा) होता है उस की प्रशंसा करके, धर्म माने और स्वर्ग लोक की इच्छा करे, परन्तू उनके लिये स्वर्ग कहां ? नर्क तैयार है

धर्मको अधर्म तो जाने, परंतु देव गुरु धर्म निमित जो हिंसा होती होए, उसे अधर्म नहीं गिने फक्त अपने निमिते हिंसा होवे उसे पाप गिने सो सम्यकत्व मोहनी जाननी यह अनतानुबंधी की चार प्रकृती, और तीन मोहनीको सर्वथा उपसमावे सत्तामें तो है, परंतु उसे ज्ञान करके दक देवे–दाब देवे, (जेसे अमी राखमें ढकते है तेसे) सो उपसम सम्यकत्व यह सम्यकत्व एक जीव जघन्य १, उत्कृष्ट ५ वक्त फरसे

५ ' क्षयोपसम सम्यकत्व ' पहिली सात प्रकृती कही, उनमें से चार (*अनंतानुबंधी चोक*) *को तो खपावे* (*जेसे पाणी से अमीको* बुजावे तैसे खपावे) और तीन मोहनीकों उपसमावे (ढाके) तथा पाच (४ पहिली १ मिथ्यात्व मोह) खपावे दो उपसमावे तथा छे (५ पहिली, छट्टा मिश्र मोह) उपसमावे उसे क्षयोपसम सम्कत्व कहीए यह असंख्यात वक्त आवे

६ ' वेदक सम्यकत्व ' पूर्वोक्त सात प्रकृतियोंमें से चार खपावे दो उपसमावे, एक वेदे (सत्तामें प्रकृतिका जो रस होवे उसे वेदे कहते हैं) तथा पाच खपावे, एक उपसमावे, और एक वदे उसे वेदक सम्यकत्व कहिए यह एकही वक्त आती है क्यों कि जब जीव आगे कहेंगे उस क्षायिक सम्यकत्वमें प्रवेश करता है, तब उसके पहिले समय में यह समकित मिलती हे, और एक ही समय रहती है

७ ' क्षायिक सम्यकत्व ' पूर्वोक्त सात ही प्रकृतियोंका साफ क्षय करने से, जेस अमी पानी से बुजाने से सीतल होती हे, तैसे वो शात हुवे हे यह सम्यक्त्व आये पीछे जावे नहीं इस भव परभवमें साथ ही रहे, और जघन्य उसभवमें, उत्कृष्ट पन्नरे भवमें तो जरुर मोक्ष प्राप्त करे

इन सम्यक्त्वोंमें से मुख्यतामें तो तीन ही [§] सम्यक्त्व ग्रहण की जाती है, १ उपसम सम्यक्त्व सो —१ जैसे नदीमें पडा हुवा पथ्थर, पाणी के आवागमन से अथडा कर गाल वन जाता है, तैसे ससारी जीव अनत संसारमें परिभ्रमण करते २ अनेक कष्ट छेदन, भेदन, ताडन, तापन, भूख, प्यास इत्यादि परवश पने सहन करते अकाम (निरर्थक) निर्जरा हुइ, उसके जोगसे उपसम समकित प्राप्त हुइ २ जैसे सूर्य वहुत वादलके समुहमें आनेसे तेज दव जाता है, फिर वो किसी वक्त वायूके प्रयोगसे किंचित् उघाडा हो जाता है, तैसे ही इस जीव रुप सूर्यके, मिथ्यात्व रुप वादल कर ढका हूवा, संसार

---

§ और कितमेक पांचही सम्यक्त्व मानते हैं, जिन का स्वरूप—

१ उपसम—इस ससार में अनादि कालसे परिभ्रमण करते हुये जीवको राग द्वेषके प्रणामसे उत्पन्न हुइ है उस ग्रथी (गांठ) को भेद कर अतर मुहुर्त के काल प्रमाण जो कर्मोंका उपसमपणा होता है उस वक्त होवे सो उपसम समकित, तथा—उपसम श्रेणीम प्रवर्तता प्राणी जितनी देर तक मोहको उपसमावे उतनी देर उपसम सम्यक्त्व जानना

२ सास्वादान—उपसम सम्यक्त्व की प्राप्ती हुवे पीछे, अनंतानुबंधीके चोकका उदय होनेस उपसम सम्कत्वका वमन (पलटी) होवे, फिर उसे उपसम्यक्त्व का किंचित स्वाद रह जाय, सो सस्वादान सम्यक्त्व यह सम्यक्त्व पडवाइ प्राणीको होती है

३ क्षयोपसम—मोहका थोडा नाश किया और थोडा उपसमाया (ढांका) तब क्षयोपसम सम्यक्त्व होती है

४ वेदक—क्षपक श्रेणी चढे हुये प्राणीको जो गुण प्रगट होवे सो वेदक सम्यक्त्व यह मिथ्यात्व और मिश्र मोहके नाशसे होवे

५ क्षायिक—तीन मोहनी और अनंतानुबंधीके सर्वथा नाश होनेसे क्षायक सम्यक्त्व प्रगटती है

क कष्ट रुप हवा लगनेसे कुछ दूर हुवे, तब जरा किरण [ज्ञान रुप] प्रगटे, तैसे उपसम समकित आवे, इसकी स्थिती अतर मुहूर्त की है २ उपसमके उपर चडनेसे, क्षयोपसम सम्यकत्व की प्राप्ती होती है, यह उपसमसे चडते और क्षपकसे उतरते वीचमे की समकित है ३ इसके उपर चडते सात ही प्रकृतीका क्षय होते ही, क्षायिक सम्यकत्व की प्राप्ती होती है यह आये पीछे मोक्षमें ही ले जाती है

और भी ३ प्रकार की सम्यकत्व होती है—१ कारक २ रोचक ३ दीपक

१ 'कारक सम्यक्त्व' वाला जीव अत करण की शुद्ध श्रद्धा युक्त, श्रावकके अणुव्रत और साधूके महाव्रत निर्मल पाले, यथा शक्ति क्रिया आप करे और दूसरेके पास उपदेश आदेशसे दे करावे यह सम्यक्त्व ५ मे ६ छटे ७ मे गुणस्थान वृती प्राणीमें पाती है

२ 'रोचक सम्यक्त्व' श्री जिनेश्वरके वचनोंपर व करणीपर रुची (अंत करणमें पूर्ण श्रद्धा) होवे करणी करनेके मनोरथ भी सदा करे, परतु पूर्व जन्मके प्रत्याख्यावरणी कर्मोदयसे, नवकारसी आदि पचखाण सामायिकादिक व्रत नहीं कर सके, तो भी श्रधना परुपणा शुद्ध रक्खे, चार तिर्थकी भक्ती करे, तन मन धन कर धर्म दिपावे और शक्ती तथा भक्तीसे दूसरेके पास धर्म करावे कृष्ण महाराज, श्रेणिक राजा वत् यह चौथे गुणस्थन में होती है

३ 'दीपक सम्यक्त्व' जेसे दीवा दूसरे पर तो प्रकाश डालता है, परतु उसके नीचे तो अन्धारा ही रहता है ऐसे कितनेक दूसरेको शुद्ध सत्य सरल न्याय और रुचीकारक उपदेश देकर धर्ममें लावे, मोक्ष पहुचावे, परंतु आप-पोते कुछ भी नहीं करे न उनको धर्म पर श्रद्ध बेठे. वो सदा निर्भय हुये चितवेकी अब अपनको क्या डर ? अपने तो साधू हो गये, अपनेको कभी पाप लगता ही नहीं है तथा किंचित्

पाप लगा तो क्या हुवा? अपने उपदेश से कित्ना उपकार होता है? इससे सब पाप दूर हो जाते है ऐसे अभिमानी जविको दीपक सम्य क्त्वी कहा जाता है ये दुर्लभ वोधी तथा अभवी जीव जैसे है यह पहीले गूणस्थान में होती है

अव मुख्यता से सम्यक्त्व के दो भेद किये जाते है (१) निश्च य सम्यकत्व ओर (२) व्यवहार सम्यकत्व

१ "निश्चय समयक्त्व" अंत हकरणकी सम्यक्त्व के आभरण वा- ली प्रकृतीयोंका क्षय होने से जिनके अत करण की शुद्ध श्रद्धा स्वभा- विक रीत से प्रगट हुइ, वो निश्चयमें, देव तो अपनी आत्माको जाणे, क्योंकि भव्य आत्मा होगी तो ही ज्ञानादि त्रीरत्नका आराधन कर सकेगी अभव्य आत्मा के धणीको ज्ञानादि की आराधना कदापि नहीं होती है इसलिये देव आत्मा है २ गुरु ज्ञानको जाने, क्योंकि ज्ञान के जोग से ही गुरुपद की भाप्ती होती है "विद्यागुरुर्णां गुरुः" सव गुरुका गुरु ज्ञान ही होता है और ज्ञानी होगा सो ही रस्तेमें आ यगा, शुद्ध वोध धारेगा और ज्ञान से ही सम्यक्त्वादि गुण प्राप्त हो- ता है इसलिये गुरु ज्ञान ३ धर्म सो शुद्ध उपयोगमें क्योंकि–जितनी धर्म क्रिया–करणी जो करते हं सो सब शुद्ध उपयोग के लिये ही कर ते हैं और शुद्ध उपयोग से ही की हुइ क्रिया धर्ममें गिनी जाती है, कर्म की निर्जरा करनेका मुख्य उपाय शुद्ध उपयोग ही है, इसलिये शुद्ध उपयोग सोही धर्म यह निश्चय नयसे तीन तत्व जानना, इनको अ न्य की जरुर नहीं हैं यह निजात्म गुण ही हैं इसालेये कितनेक निश्च यमें देव गुरु, और धर्म 'आत्मा' को ही कहते हैं यह निश्चय सम्यक त्ववाले की श्रधना जाननी

२ 'व्यवहार सम्यक्त्व' में तीन तत्व देव अरीहंत अठरा दोष रहित गुरु निर्ग्रंथ, सतावीस गूण सहित, और धर्म केवली भाषित निर्ग्रं थ दया मय, तथा–

" व्यवहार सम्यक्त्व के ६७ बोल "

१ सर्दहणा चार १ ' परमथ सथोवा ' परम (उत्कृष्ट) अथ-अर्थ, (जिससे आत्माका अर्थ सिद्ध होवे) ऐसे अर्थ—ज्ञानके जान होवे उनका सथोवा—सरतव-पारचिय-सगत कर परमार्थका जान होना २ सुदिठ ' परमत्य सेवणा ' सू (अच्छी) दिठ (द्रष्टी) परमत्थ (पर मार्थके जान होवे उनकी) सेवणा सेवा भक्ती करनी अर्थात् एकात पक्षी नहीं, परतु न्याय पक्षी स्याद्वादके माननेवाले, ज्ञान और क्रिया दोनो युक्त होवे, ऐसे की संगत कर, सेवा भक्ती करनी, क्योंकि जैसी सगत होती है, तैसे ही गुणों की असर अपनी आत्मामें होती है देखिये, लींबके झाडके पास जो आम्रका झाड होवेगा तो उस लींब की कडुवास उस आवके फलमें भी जाती है, यह कुसंगती और चद के झाडके पास बवूलका झाड होता है, उसमें चदन की संगतसे चदन की सुगध आती है, ऐसे ही सत सगतसे गूण और कु सगतसे दुर्गुण अवस्य ही हुव रहते है, यह जान सम्यक्त्वी पुरुष जो परमार्थके जान होय उन सत पुरुषोंकी सदा सगत करे ३ ' वावणवजणा ' अथवा सम्यक्त्वका वमन किया उनकी सगत नहीं करना अर्थात् प्रथम वो जैन धर्मी थे, और पीछेसे मिथ्यात्व मोहके उदयसे पाखंडियों की स गतसे, जो धर्मभ्रष्ट हो गये—स्वमतको त्याग अन्य धर्मी बने, उनकी भी सगत नहीं करनी, क्योंकि वो तो व्यभिचारिणी स्त्री की तरह सत्य धर्म की निंदा, और मिथ्यात्व अधर्म की प्रशसा ही करेंगे एकने दिवा ला निकाला उसको पूछोगे तो वो हजारो दिवालियोंको वतावेगा ऐ स जो पडवाइ * सम्यक्त्वसे भ्रष्ट हुवा है वो हजारो भ्रष्टको बताके उसको

* इसलिये भगवतीजीमें कहा है कि—चारित्र से भ्रष्ट हुये सिद्ध हो जाय परतु सम्यक्त्व स भ्रष्ट हुव कभी सिद्ध नहीं होवे

भी अपने वैसा वनाना चायगा द्रष्टांत-जैसे एक अकलवत मनुष्यको व्यभिचार करते राज पुरुषने पकड लिया, और राजाके हूकमसें उसका 'नाक' काट देश निकला दे दिया उसने अपनी पव छिपानेको साधु नाम धराकर, लोगोंमें अनेक ढोंग कर, कहने लगा की—मुझे साक्षात् परमात्मा द्रष्टी आते हैं लोगोंनें कहा कि हमारेको क्यों नहीं आते हैं? तव वो वोला की मेने अभिमानका वढानेवाला नाक काटडाला, जैसे तुम भी करो तो पर्मात्माके दर्शन होवे भोले गामडियेंने उसकी वा त कवूल कर नाक कटाया, और पूछा की अव क्यों नहीं पर्मात्मा दिखत है ? उसने कहा आवो गुरुमंत्र कानमें सुनाके प्रभू के दर्शन करावूं ऐसा कह कर उसके कानमें कहा की—मेरेको कुछ परमात्मा नहीं दिखता हैं, में तो मेरी पव छिपाने ऐसे करता हुं तू जो मेरे जैसे नहीं करेगा तो सव लोक तुझे नकटा पापी कहके चिडावेंगे यों सुन वो वेचारा मनमें अती खेदित हो उसके तरह नाचने लगा, और कहने लगा की मुझे साक्षात् परमात्मा के दर्शन होते हैं ऐसे करके उसने ५०० नकटों की समुदाय जमा ली एक शेहरका राजा इनका उप देश सुण नकटा होने लगा, तव जेनी प्रधान वोला, भोले महाराजा ! नाक काटने से कभी प्रभु दिखते हैं ? राजा वोला कि यह ५०० झूटे हैं क्या ? प्रधान वोला की झूटे हैं की सचे हे, इसका निर्णय में कर देता हूं ऐसा कह उन नकटे के महात्मा को कुछ लाभ दे, राजा ओर प्रधान एकंत मेहलमें ले जाकर जेरवध (चाबूक) मारने सुरु किये और वोले की सच्च वाल, परमात्मा दिखते हे कि नहीं ? वो वोला 'मारो मत' में सच्च कहता हू- कोइ गुनह में आने से मेरी नाक रा-जाने काट डाली, तव मेरी एव छिपाने मेने यह ढोंग चलाया है हम सव झूटे हैं"

नकटे महात्मा समान कु गुरु, भोले लोकोंको भरमाकर कू मतमें डाल्ते हैं वो उस मतमें जाने के वाद इच्छित काम न होवे, तब जगत् की शर्मे घर, उदर निर्वाह करने, उसेमें ही पडे रहते है कोइ प्रधान जैसा सुज्ञ मनुष्य, पाखंडियोंका पाखड प्रगट कर, आस्तिकोंको अधर्म से बचाते हैं ऐसा जान जो जैन मत की कठिण क्रियाका निर्वाह न होनेसे भ्रष्ट हो गये उनकी संगत नहीं करनी

४ " कु दंशण वज्जणा " अन्य दर्शनियों की सगत नहीं करना अर्थात् जैन छोड कर अन्य मिथ्यात्व पाखंडी, एकात पक्षी, हठ ग्रही, इत्यादिकसे विशेप सहवास (हमेशा सोवत) नहीं करना क्यों कि यह जीव मिथ्यात्व से अनादि कालसे सेंदा है इस लिये खोटी वात असर शिघ्र करती हैं. कितनेक कु दर्शनियों भोले जनको भरमाने, उसके धर्म के ही वन जाते हैं और कहते हैं कि हमारा भी अहिंसा धर्म तुमारे जैसा ही है, तुमारे हमारे कुछ जास्ती फरक नही, यों सुण भोलिये उनका सहवास स्विकारे, आसते २ उसको कहे कि अपने शोक भोग निमित हिंसामें पाप है परतु धर्म निमित्त हिंसामे तो जरा ही पाप नहीं हैं देखिये तुमारे साधु भी धर्मरक्षण निमित नदी उतरते हे यों सुण भोले भर्ममें फस जाते है, और सुज्ञ होते है वो तो जवाव देते हैं की—साधु कुछ नदी उतरनेमें धर्म थोडा ही समजते हैं जो धर्म समजते होवे तो फिर प्रा यश्चित किसके लिये ग्रहण करें? और भी वो तो अपण सयमका निर्वाह करनको अर्थात् हमेशा एक ही देशमें रहने से प्रतिबंध होकर संयमका नाश होता है, इससे अटके गाडेको चलाने के लिये, अति पश्चाताप युक्त—यत्ना से नदी उतरते हैं कुछ तुमारे जैसे हर्प कर, धर्म जान कर, थोडे ही उतरते हैं. और भी वा नदी उतर के भी आगे अनेक उपकार करते हैं तुम इतना पाखड वढाते

हो, इस से क्या उपगार होता हैं ? अरे भोलिये ! संसार निमित पाप करते हैं सो तो लगता ही है, परंतु धर्म निमित पाप करने से ज्यादा पाप लगता है देखिये —

अन्य स्थाने करति पाप, धर्म स्थाने विमुच्यते ।
धर्म स्थाने करति पापं, वज्र लेप भविष्याति ॥

अन्यस्थान (संसार) में किये हुये पाप से मुक्त होने (छूटने) तो धर्मस्थान में जाकर धर्म क्रिया करते हैं, और धर्मस्थान में भी जो पाप काने लगे तो फिर उसका छुटका कहा होवे ? अर्थात् कहीं नहीं धर्मस्थानमें किया हूवा पाप वज्र लेप मुजव लगता हैं, " जैसे साधूका नाम स्थापन कर अनाचार सेवे तैसा " इत्यादि उत्तर दे अपनी आत्मा को भर्म जालमें नहीं पड़कत हैं कु सग वर्जते हैं

२ वोले ' लिंग तीन ' लिंग नाम व्यवहारिक प्रवृत्तिका है यह व्यवहार प्रवृत्ति श्रवण करने से होती है इसके दो भेद—१ अशुद्ध श्रवण करने से अशुद्ध प्रवृत्ति होती है और २ शुद्ध श्रवण करने से शुद्ध प्रवृत्ति होती है परंतु शुद्ध से अशुद्ध की असर जास्ती होती है देखिये, अनेक वाद्य (वाजिंत्रों) के सहाय से हाव भाव कटाक्ष युक्त जब कोइ वेस्या, या अन्य गायन करता है, उसका कामोत्तेजक शब्द श्रोताको कैसा आशक बना देता है ? कि उस शब्दका रटण वो हर हमेश किया ही करता है और परमार्थ का अध बन जाता है उस नृत्य के भावार्थमें जो निगह लगावे तो उसे कभी पीछा नहीं देखे देखिये, मृदंग (तपले) में से क्या शब्द निकलता है ? हुवक २ (हूवे २), तब सारगीने प्रश्न किया की कुण २ (कोन २ हूवे?) तब वैस्याने घूम कर

इशारों से बताया की " य जी मलाये " * फिर इयनेको कान सज्जन जावेगा ? परतु भोले प्राणी परमार्थ नहीं विचारते जैसे उसमें गरक होते है, ऐसे जो जिन वचनमें होवे तो कितना हित पहुंचे ? भारी कर्मी क्या जाने जिन वाणी के स्वादमें ? लींब के कीडेको सक्करमें रखो तो वो मर जाता है, ऐसे ही दुष्ट मती प्राणी जिन वाणीका नाम सुनते ही बल के भस्म हो जाते हैं वो तो गाना, बजाना, नाचना, कूदना इत्यादि ख्याल होवे वहा एक क्षिण के लिये सर्व रात्री पूर्ण कर देते हैं इनसे उलट जो सम्यक द्रष्टी सत्य धर्म की रुचीवाले पूर्व जो श्रोता, के गुण कहे उस गुण युक्त होवे वो तो १ जैसे बत्तीस वर्षका योद्धा जुवान, सोले वर्ष की रुप यौवन सपन्न कुमारिका के हाव भाव कटाक्ष सगममें जैसा आशक होवे, तैसे समकिती जीव जिनेश्वर की वाणीको श्रवण करते, तथा सत धर्म अगीकार करती वक्त उत्सुकता रक्खे २ जैसे जठराग्नी की प्रबलता वाला की जिससे क्षण मात्र क्षुधा सहन न होवे, और उसे कोइ अशुभादयसे तीन या सात दिन भूखा रहनेका काम पडे, और फिर शुभोदयसे इच्छित रुचीवाला क्षीरादिक भोजन लाके उसको देवे, वो उसे कैसा आदर पूर्वक ग्रहण कर भोगवे? ऐसे सम्यक् दृष्टी जीव जिनवाणी श्रवण करते वक्त, व्रत ग्रहण करते वक्त, या आत्म कल्याणमें, उत्सुक होवें ३ जैसे कोइ योग्य वय बुद्धीका प्रबल विद्याभ्यास की अति उत्सुकता वंत उस पढने की इच्छा होय, और उसे शात तेजस्वी उत्पातिक बुद्धीका धणी पंडितका योग मिलने

* सवैया—नर राम विसार कर काम रचे, शुद्ध साधु कथा न गमे तिनको दाम देकर रामा बुलाय, लइ तिहा लाग रामा नचावनको
पिसके २ मुदकरे तब ताकवाके किनको २, रामा हाथ घुमाइ कहे घि कहे १ इनको २ ॥१॥

से हर्ष उम्मिद की साथ विद्या ग्रहण करे ? तैसे सम्यक्त्वी जीव जिनेश्वर की वाणीको ग्रहण करे, यथा तथ्य परगमावे ऐसे श्रोता होते हैं, तब ज्ञान प्रकास ने की खूबी देखना चाहिये

३ 'बोले विनय दश' विनय नाम नम्रता धारण करनेका है यह नम्रता सब गुणमें अवव्ल दरजेका गूण है * इस वक्तमें खुशा मदिये लोक राज वर्गीयोंके सामे, धनवत के सामे, बलिष्टके सामे, ग रजके लिये नम्रता करते है यह नम्रता कुछ नम्रता की गिनतीमें नहीं हैं नम्रता तो उसे कही जाती है कि जा गुणवंतके सामे नि स्वार्थ बु द्धीसे की जाय यह १० प्रकार की होती हैं —

१ अरिहंतका विनय, २ सिद्धका विनय, ३ आचार्यका विनय, ४ उपाध्यायका विनय, ५ स्थिवरका विनय ६ तपस्वीका, ७ सामान्य सा धूका, ८ गणका, ९ सिंघका, और १० क्रियावतका ‡ विनय, यह द श जणेके विनयको विनय कह्या

४ बोले 'शुद्धता तीन' —अपना चैतन्य अनादिसे अशुद्ध वस्तुका प्रसंग तीन योगसे कर मलीन हो रहा है परंतु अज्ञानी लोक उसेही शुचि मान रहे हैं, यह निश्चय समजो की रक्तसे भरा कपडा

---

* भवन्ति नम्रास्तरव फलोद्गमै नवांबु भिर्भूमि विलंबिनोघना
अनुद्धता सत्पुरुषा समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोप कारिणाम् ॥
अर्थ–जैसे फलित होनेसे वृक्ष नम्र होते हैं, जैसे नवीन जल भरनेसे मेघ भूमिपर झुकता है, वैसेही सत्पुरुष भी संपतिपाकर उद्धत नहीं होते हैं किंतु विशेष नम्र होते हैं

‡ इसमें महजब सम्प्रदाय पक्षका कुछ कारण नहीं हैं जो अपनेसे ज्ञानादि गुणामें अधिक होय, जिनका लोक व्यवहार शुद्ध होय, जिनको बहुत लोग मान देते है, ऐसे तथा ज्ञान कमी होकर भी क्रियाकी विशे षता मिलती होए तो उनका भी विनय करना

रक्तमें धोनेसे कभी पवित्र न होगा उल्टा जास्ती मलीन होता हैं, ऐसे ही आरंभके कामोंमें तीन ही योगको रमाकर पवित्र होनेकी इच्छावाले जास्ती मलीन होते हैं ऐसे ही आरभियोंको भले जाननेस गुण ग्राम करनेसे, अभीवदन करनेसे ही योग की मलीनता होती हैं, और मलीन वस्त्र क्षरादिकसे धोनेसे शुद्ध हाता है, तैसे निरारभी देव-गुरु धर्मको १ मनसे अच्छा जाने, २ वचनसे अनुमोदन—गुण ग्राम करे ३ कायेस नमस्कार करे, यह ३ शूद्धी

५ बोले दुषण पाच —पाच काम करनेसे सम्यक्त्वमें दोप लगता हैं १ शका, श्री जिनेश्वरके वचनमें शका लावे अर्थात् ऐसा चिंतवे की, भगवानने एक बुदमें एक, घडेमें, और समुद्रके पाणीमें असंख्याते जीव कहे यह वात कैसे मिले ? सव असंख्याते कैसे होवे ? परतु यों नहीं विचार कि जैसे एकको भी सख्या कहते है, हजारकोभी सख्या कहते है. और परार्धको भी संख्या कहते हैं, परतु एकमें और परार्धमें कितनी तफावत है ? तैसे ही एक बुदमें और समुद्रके पाणीमें तफावत समजनी कित्नेक कहते एक बुदमें असख्याते जीवका समवेस कैसे हुवा ? परतु यों नहीं विचारे के लाखक्रोड औषधीका अर्क निकालके तेल बनाया है उसकी एकबुंदमें क्रोड औपधी है कि नहीं' कृतीम पदार्थमें इतना समावेस होता है, तो कुदरती पदार्थमें क्यों नहीं होवे ? ऐसे पानी की एक बूदमें असख्य जीव है, ' संकाए नासे समत्त' जिन वचनमें शंका लानेस सम्यक्त्वका नाश होता है ऐसा जान कोइ जिन वचन अपने समजमें न आवे, तथा अन्य मतियोंके कू हेतु सुन मनमें शका उत्पन्न होवे, तो अपनी बूद्धी की खामी जानना, परंतु अनत ज्ञानीके वचन तो सत्यही जानना, प्रभू कदापी असत्य नहीं भाखते हैं

२ ' कखा ' अर्थात् अन्य मतके तापसादिकके ढोंग देख कर भ र्भमें न पडे, कि यह पचधूणी तापते हैं, शरीर सुखाते हैं, नख वढाते उ ल्टे लटकते, अन्नका त्याग न करते हे, फल कद दूध इत्यादि खाकर अपना गूजारान चलाते हे, यह भी एक मोक्षका मार्ग हे ऐसा विचार न करे क्यों कि ' मोक्ष के रस्ते कूछ दो नहीं हैं ' इन तापस का तप को भगवानने वाल (अज्ञान) तप किया हे क्यों कि इनको जीव अजीवका ज्ञान नहीं हे पुन्य पाप की क्रियामें नहीं समजते हे वध मोक्षको नहीं जानते हे देखा देखी ढोंग करते हे अनत कायका भ क्षण, ओर पचाग्नी के विषे अनेक त्रस प्राणियोंका मरण निपजता हे. उसपर इनकी निगाह ही नहीं हे, इस अकाम कष्ट से कादापि किंचित् लाभ होवे अकाम निर्जरा होती हे, उसके जोग से किंचित् अभेगिये (नोकर) देवता के सुख के भुक्ता होकर पीछा जीवोंका वेर वदला दे ने, अनत ससार परिभ्रमण करते हे द्रष्टात–जेसे ऊंट हलवाइ की दुका नके पास लींडे किये, उसमें से एक लींडा सक्कर की चासणीमें पड ग या उसे उठाकर हलवाइने लड्डू के भाव वेच दिया, खानेवालेने मुखमें रक्खा, जहा तक सक्कर थी वहां तक स्वाद आया, अखीर तो लींडा ही! ऐसे ही वाल तापस तपके प्रभाव से देवता के सुख भोगव लिया परत् रहे तो अनत ससारी ही, तव ही नमीरायजीने फरमाया हे कि –

गाथा–मासे मासे तु जो वालो, कुसग्गेण तु भुज्यए ।
न सो सुयक्खाय स्स धम्मस्स, कल अग्घइ सोलसि ॥

अर्थात्–अज्ञानी मास २ का तप निरतर क्रोड पूर्व लग करे वो ज्ञानी के एक नोकारसी (कच्ची दो घडी के पचखाण) के तूल नहीं आवे ऐसा जान अन्यमत के ढोंग देख उसको अंगीकार करने की सम्यक्त्वी किंचित् ही अभीलाषा नहीं करे

२ 'विति गिच्छा' करणीका फलका संदेह नहीं लावे कि में संवर सामायिक, त्याग प्रत्यास्यान, व्रत नियम करता हूं, अनेक भोग उपभोग को छोडता हु, इसका फल मुझे प्राप्त होगा कि नहीं, कि व्यर्थ काया क्लेश तो नहीं है? तथा अमुक धर्म क्रिया जास्ती करते हैं वो दु खी दिखते हैं तो धर्म से तो दु खी न हुवे है? तथा इतना धर्म ध्यान कर ते हैं, तो भी उनको अब्वी तक धर्मका फल नहीं मिला, तो मेरेको क्या मिलेगा! ऐसी शका नहीं लावे क्यों कि धर्मसे कभी दु ख प्राप्त होता ही नहीं हैं दू:ख सुख तो पूर्वोपार्जित कर्मानुसार होते हैं कदापि धर्म करने से प्राणी दु खी नजर आया तो यों जानना कि इसके पूर्व कर्म धर्म सेहर, उभरा कर बाहिर निकलने लगे इसकी थोड काल वेदना भोगव, आगे अक्षय निरुप द्रव्य सुखकी प्राप्ती होगी, जैसे औषध ग्रहण करते ख-राब लगती है, आगे गुण कर्त्ता होती है, ऐसे ही जानना पूर्व कर्म खपाकर आगे निश्चय धर्म सुख रुप फल देगा सर्व निष्फल हो जावे परतु करणीका फल निष्फल कभी नहीं होगा

श्री उववाइजी सूत्र मे श्री गौतमस्वामी ने करणीके फल की पूछा करी है, तब भी महावीर स्वामीने ऐसा प्रश्नोत्तर दिया है, जो मनुष्य गाम–कोट सहित, आगर–सोने रुपे की खदान, नगर–जहा कर (हांसल) नहीं लगे णिगाम–वनिये वहोत रहे सो राज्यधानी–राजा रहता होए खेड–धूलका कोट होए, कवड–कसबा (बहोत वडा ही नहीं, तैसे बहुत छोय नहीं) मडप—नजीक सेहर होए द्रोणमुख–जलपथ थल पंथ दोनो होए. पाटण–जहा सर्व वस्तु मिले आश्रम–तापस रहते होए, संवाह–पहाड पे गाम होए, सन्नीवेस—गोपाल रहते होए इत्या दि स्थानेमें रहने वाले मनुष्य अकाम—अभिलाषा विन—परवशपेण क्षुधा–तृषा सहे, स्त्रीका सयोग न मिले से ब्रह्मचर्य पाले, पूर्ण पाणी न

मिलने से स्नान न करे (मरुस्थल जैसे, देशमें) सीत, ताप, मच्छर, पटमल, मेल, परसानादिकका उपद्रव सहे परवश दु ख सहे किंचित् काल या बहुत काल तक, और इन के मरती वक्त शुभ प्रमाण आजावे तो मर के वाणव्यंतर देवमें दशहजार वर्ष की उम्मरवाले देवता होवे

पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे रहनेवाले मनुष्य, खोडा (लकडका) बेडी (लोहकी) में केद किये गोडा लकडी दे गुडायें, रस्सी (नाडा) से जकड बंध बाधे हाथ, पग, कान, नाक, जीभ, इंद्री तथा मस्थक काट डाले, आँख फोड डाले, दाँत तोड डाले, अड फोड डाले तथा ति ल २ जितने सुक्ष्म सब शरीर के टुकडे २ किये, खड्डेमें- भूवारेमें उतारे झाड से बाधे, शिलापे चंदन जैसे घिसे, लकडी जैसे व सूलेसे छीले, सूलीमें भेदे, घाणीमें पील, शरीरपे खार सींचे, अग्नीमें जलाव, कीचड मे गाडे, भुख प्यास से त्रसा के मारे, तथा इद्रीयोंके वशमें मृग, पतग भ्रमर, मछी, हाथी, जैसे पडकर मरे, पाप की आलोयणा (गुरुके आ गे प्रकास) विन मरे खमाये विन मरे, पर्वतसे तथा झाडस पडके मरे पत्थर नीचे दबकर मर, हाथी आदिकके कलवरमें प्रवेश कर मरे, जेहरसे मरे, शस्त्रसे मरे, यह मरणसे मरते शुभ प्रणाम अजाय तो, वा णव्यंतर देवमें १२ हजार वर्षका आयुष्य पावे

३ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे मनुष्य स्वभावसे ही भद्रिक (निष्प कपटी,) स्वभावसे ही क्षमावत-शीतल, स्वभावसे ही क्रोधादि कषाय पतली करी, विनीत, अहंकार रहित, गुर्वेद्री, गुरुकी आज्ञामें चले, मात पिता की सेवा भक्ती करे, मात पिताका हुकम न उलंघे, तृष्णा थोडी आरभ थोडा करे, निरवद्य कामसे अजीविका चलावे यह मरके वाण व्यतर में १४ हजार वर्ष आयु पावे

४ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे स्त्रीयों राजाके अंतउरमें-पडदेमें

रही हैं, वहोत काल तक पतिका सयोग न मिले, परदेश पती गया होवे, पती मरे, सील पाले, वाल विधवा हुइ, पतीकी अन मानेती हुइ, ऐसी स्त्रीयों माता की, पिताकी, भाइ की पतीकी, कूलकी, घरकी, सासुकी, सुसराकी, इत्यादिक की लज्जा करके, तथा इनके बंदोवस्त करके, मनोवन सील-ब्रह्मचर्य पाले, स्नान-मजल-तल मर्दन पुष्पमाल आभुषण इत्यादि शरीर की शोभा वरजी, शरीरपर मेल धारण किये रहे दूध, दही घी (तूप,) तेल, गुड, मख्खन, दारु मास, इत्यादि स्वादीष्ट पदार्थ छोडे, अल्प आरंभ समारंभ कर अपनी आत्माको पाले, अपना पती सिवाय अन्य पुरुषोंको न सेव, यह मरके वाण व्यतर देवमें ६४ हजार वर्ष आयु पावे

५ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे मनुष्य अन्न और पाणी सिवाय कुछ नहीं खाय कोइ तीन चार पांच जावत इग्यारे द्रव्य भोगवे गायोंके पीछे फिर, दान पुन्य करे, देवादिकका वृद्धका विनय करे, तप वृत धारे, श्रावक धर्म के शास्त्र सुणे, दूध, दही, घी तेल, मख्खन गुड, मदिरा, मांस इनका त्याग करे, फक्त सरसवका तेल भोगवे, यह मनुष्य मर कर वाणव्यतर देवमें ८४ चौरासी हजार वर्षका आयुष्य पाव

६ पुर्वोक्त ग्रामादिक के विषे मनुष्य तापस, अग्नी होनी, एक ही वस्त्र रखनेवाले, पृथवी सयन करनेवाले, शास्त्र, पर श्रद्धावंत, कमी उपकरण रखनवाले, कमडल धारी, फलभक्षी, पाणीमे रहनेवाले, मट्टी, शरीरका लगानवाल, गगानदी के उत्तर दक्षिणमे सदा रहनेवाले, सख बजा भोजन करनेवाले, सदा ऊभे रह, ऊचा दंड रख फिरनेवाले, मृग तापस, हथीतापस, दिशा पासीतापस, वल्कल के वस्त्र पहरनेवाल, सदा राम २ कृष्ण २ कहनेवाले, विल (खड्डे) में रहनेवाले, वृक्ष के नीचे, रहनेवाले फक्त पाणी पीकर रहे, वायूभक्षी, सेवालभक्षी मूल आहारी, कन्दआहारी, पत्तआहारी, पुष्पआहारी, स्नान किये विन नहीं जीमे ऐसे,

पचामी तापनेवाले, कठीण शरीर करनेवाले, सुर्यकी आतापना लेनेवाले धगधगते खीरे (अगारे) पास सदा रहनेवाले, इत्यादि अनेक कष्ट सहन कर, आयुष्य पूर्ण कर, ज्योतिषी देवतामें एक पल्योपम उपर एकलाख वर्ष क आयुष्यवाले देवता होवे

७ पूर्वोक्त ग्रामादिक क विषे प्रवर्ज्या (दिक्षा) धारी साधु, साधु की क्रिया तो पाले परंतु काम जाग्रत होवे ऐसी कथा करे, नेत्र मुखादिखकी कुचेष्टा काम चेष्टा करनेवाले, अयोग्य निर्लंज वचन बोलनेवाले, वार्जित्र पर गायन करनेवाले, आप नृत्य करे दूसरेको नचावे, इत्यादि कर्म करें सो मरकर सोधर्मा देवलोकमें कंद्रपी दवतामें एक पल्य उपर एक हजार वर्ष की उम्मरवाले देवता होवे

८ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे परिव्राजक (तापस) होवे सो साख्य मती, अष्टांगके जाण, योग साधनेवाले, कपिल के * किये शा

---

* श्री ऋषभदेवजी के साथ भरतजी के पुत्र मरीयचने दिक्षा ग्रहण करी पीछेसे साधु की अति कठीन क्रीया पालने असमर्थ हुवा बुद्धि के योगसे मन कल्पित भेष बनाया साधू तो निर्मळ वृतधारी है, और मै मालिन हुवा इसलिये श्वेत वस्त्र छोड कर भगवे वस्त्र धारण किये साधुके शीरपे तो तीर्थंकर भगवान की आज्ञा रुप छत्र है, मैने आज्ञाका भग किया इस लिये बांसका छत्र रक्खा साधु तो मनादि त्रिदंड रहित है और म तीन दंड युक्त, इस लिये त्रिदंड (लकडी) रक्खे इत्यादि भेष बना कर भगवानके साथही फिरने लगे परन्तु समवसरण के बाहिर रह कर उपदेश करें कोइ दिक्षा लेनेका इरादा करे तो ऋषभदेव स्वामीके पास भेज देवे एकदा बीमार हुवे तब वयावच करानेके लिये शिष्य की इच्छा हुइ, इतनेमें एक कपिल नामक गृहस्थ आया वो उनका उपदेश सून उनका ही शिष्य होनेका आग्रह करने लगा इसलिये उनको शिष्य बनाया और मरीयच आयुष्य पूर्णकर देव हुवा फिर कपिल के भी एक असुरी नामक शिष्य हुये पीछे मर कर ब्रह्म देवलोक मे देव हुवा और शिष्यपर ममत्व होनेसे उसके पास आया और साक्षात देकर अनेक शास्त्र रचाये और साख्य पथ चलाया विष्णु शास्त्रमें ही भगवानका पुत्र मनु मनुका पुत्र मरीयच, और मरीयचका पुत्र कपील गुरु लिखा है इय विष्णुमतकी उत्पति जानना

स्त्रको माननेवाले, वनवासी, नम रहें, हमशा फिरते रहें, तथा मठावलम्बी रहकर क्षमा सील संतोप धारे, नारायण की उपासना करे १ कृष्ण २ करकट ३ अंवड ४ परासर ५ कणीय ६ दीपायन ७ देवपुत्र ८ नारद यह ८ ब्राह्मणके जातीके वड धारी तापस और १ सिलाइ २ शशी हर, ३ णगइ, ४ मग्रइ, ५ विदेही राजा, ६ राम, ७ वलभद्र यह ७ क्षत्री जाती के तापस इन तापसोंका आचार-ऋजुवेद यजुर्वेद, स्यामवेद, अथर्वण वेद, इतीहास पूराण, निघंट इत्यादि शास्त्रों की रहस्यके जाण, दुसरेको पढावे, गुरु गमसे धारण किये हुये व्याकरणके जाण, शुद्ध उचारके करनेवाले, छे अग शास्त्र, साठ तंत्र शास्त्र, गणित शास्त्रके पारगामी, अक्षरोंकी उत्पत्तिके जाण, छद वनाने ओर ऊचरने समर्थ ग्रथका अन्वय (पद च्छेद) करे ज्योतीपादि अनेक शास्त्रके पारंगामी इनका धर्म दान देना, शुची रहना, तीर्थ करना, इत्यादि धर्म आप पाले और दूसरेको पालनेका उपदेश देव यह तापस फक्त गगा नदीका जल दूसरे की आज्ञासे ग्रहण करे, छाणके वावरे, विन छाणा न कल्पे, अन्य जल ग्रहण न करे, यह तापस गाडी प्रमुस फिरते घोडे प्रमुस चरते, और जहाज नाव प्रमुम्ब तीरते वाहाणपर नहीं वठे यह किसी प्रकारका नाटक महोत्सव नहीं देखे, यह अपने हाथसे वनस्पतिका आरंभ नहीं करें, यह स्त्रीयादि ४ विकथा नहीं करें यह धातु पात्र न रक्खे, फक्त तूंवेके मट्टीके पात्र रक्खे यह फक्त पवित्री (मुद्रिका) सिवाय आभरण न रक्खे यह गेरुकेरग वस्त्र रक्खे, दूसरा रग न कल्पे यह गोपीचदन सिवाय दूसरा तिलक छापा न करे ऐसी क्रिया कर आयुष्य पुर्ण कर उत्कृष्ट पंचमें देव लो-

कर्मे दश सागरका आयुष्य पावे *

९ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे साधू होकर आचार्यके, उपाध्यायके कुलके गणक इत्यादि गुणी जन की निंदा करनेवाले, अपयशके करनवाले, खोटे अध्यवसायके वणी, मिथ्या द्रष्टी पणा उपार्जकर, किल्मिपी देवता (जैसे मनुष्यमें भगी की जाति है तैसे देवतोंमें वो नीच हैं) में तेरे सागरका आयुष्य पावे

१० पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे जो सन्नी पचेंद्री तिर्यंच जलचर—पाणीमें रहनेवाले, थलचर—पृथ्वीपर चलनवाले, खेचर—आकाशमें उड़ने

* कपिलपूरेम अम्बड सन्यासीने भी महावीरस्वामीका उपदेश सुन श्रावक के वृत धारण किये, परतु सन्यासीका लिंगका त्यागन नहीं किया कारण मेरे मजहब वालेको में इस भेषमें रहकर जैन धर्मका तत्व बताकर जैनी बना सकूगा यह अम्बड सन्यासी प्रकृती के विनीत और भद्रिक (सरल) पणेसे बेले (छट) २ पारणा करे और दोनो हाथ ऊंच कर सूर्य की आतापना लेवे यों सब अध्यवसायसे वरतते वैक्रिय लब्धी (एक रुपके अनेक रुप कर लेवे) और अवधी ज्ञान पैदा हुवा यह आयुष्य पूर्ण कर पाचमें देवलोकमें गये वहासे एक भव कर मोक्ष जावेगे

इस अम्बड सन्यासीके ७०० शिष्य उन्हाले (जेष्टमास) में कपिलपूर नगरसे विहार कर पूरीमताल नगरको गगा नदीके पास होकर जाते थे रस्तेमें पाणी खूट गया और तृषा व्यापी तब पाणी उनेको आज्ञा देने वाले की बाकस करने से कोइ नहीं मिला तब आपसमें कहने लगे कि अब क्या करना! परन्तु सातसो मसे कोइ न कहे कि में आज्ञा देता हु क्यों कि अपने १ व्रतभगका भयको डर कोन गृहस्थ जैसा होय! अम्बीर ७०० ही सन्यासी उस गगा नदीकी अती उष्ण वालूमे वालू का सथारा (बिछोना) कर नमो थूर्णा से अरिहत सिद्ध और गुरुको नमस्कार कर जाव जीव तक चारही आहाराका त्याग रुप सलेपणा कर अठारे पापका जाव जीव त्यागन कर आयुष्य पुर्ण कर पाचमें देव लोकमें १० सागरके आयुष्य वाले देवता हुवे दोसिये वृतकी दृढता इनकी क्रिया आराधिक (परमेश्वरकी आज्ञामें) सही है

वाल पक्षी, उनमें कितनेकको अच्छे-निर्मल प्रणाम आनेसे ज्ञानावरणी कर्म पतला पडनेसे, जाती स्मण ज्ञान प्राप्त हानेसे, पूर्व भवमें वृत पच्च-खाण धारन किये, और उसका भंग करनेसे तिर्यंच हुवे इत्यादि विचार आनेसे, उसी गतिमें उस ज्ञान के पसायसे वो पच अणुव्रत ग्रहण कर, बहुत सीलादिक व्रत पाल, सामायिक पोसह * उपवासादि करणी कर, अंत अवसर सलेपणा कर, समभाव आयुष्य पूर्ण कर, आठमें देव-लोकमें अठार सागरका आयुष्य पावे

११ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे अजीवका समण-गोसालाके मत वाले, एक दो तीन जावत बहुत घरके आंतरेसे, या विजली चमकनेसे भिक्षा लेवूगा इत्यादि अभीग्रह करनेवाले, ऐसे साधू मरकर बारमे दे-वलोकमें २२ सागरका आयू पावे

१२ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे साधू—महा अहंकारी, निंदक, मत्र-जत्र—तंत्र—औषध—जातीष इत्यादि करनेवाले, शरीर की वि-भूषा करनेवाले बहात दिक्षा पाल, पाप की आलोयणा किये विन मर कर १२ मे स्वर्गमें २२ सागरका आयुष्य पावे

१३ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे निन्हव साधु हैं १ काम पूरा हूये हूवा कहना, जमालीवत २ एक प्रदेशी आत्मा माननेवाले, तिस गुप्तवत् ३ साधू है कि नहीं ऐसे सदेहवाले, आपाडाचार्यवत् ४ न-र्कादिक गतीमें छिन विछिन्न पणा माननेवाले अश्वमित्र वत ५ एक समयमें दो क्रिया लगे ऐसे माननेवाले गंगाचार्यवत्; ६ जीव अजीव और जीवाजीव यह तीन रासी माननेवाले, गोष्ट महीलावत ७ जीवको

* प्रश्न—पाणीमें रहकर सामायिकादि क्रिया कैसे बने ? उत्तर-जै-से चालती गाडीमें बेठकर एकासणा करनेसे निपजाता है, तैसे जलचर जीव पाणीमें इनका काल पूरा न होवे वहां तक शरीरका स्थिरीभूत नि-श्चल करके रहे तो इस निपजे

कर्म सांप काचली की तरह लग हैं, ऐसे माननेवाल, प्रजापत वत्, यह ७ निन्हव (परमेश्वरके वचनके उत्थापक) अशुभ अध्यवसायसे मिथ्यात्व द्रष्टी पणा उपराजे, कदाग्री, उत्कृष्ट क्रियाके प्रतापसे उत्कृष्ट नव ग्रीवेकर्मे ३१ इकतीस सागरका आयुष्य पावे

यह पूर्वोक्त १३ कलममे से १० मी कलम छोडकर बाकी सब विराधिक जानना अर्थात् इन की क्रिया भगवान की आज्ञाके बाहिर है, लीडेपर सक्करके गलेप जैसी

१४ पूर्वोक्त ग्रामादिकके विषे मनुष्य श्रावक आरभ परिग्रह कमी करनेवाले, श्रुत—चारित्र धर्म यथाशक्ति ग्रहण करनेवाले, दूसरेको उपदेश आदेश कर धर्म ग्रहण करानेवाले व्रत प्रत्याख्यान निरतीचार पालनेवाले, सुशील, सुवृती,सदा खुशी, साधुकी भक्ती करनेवाले, कितनेक तो अवृती सम्यक द्रष्टी, कितनेक थुल प्रणातीतात वेरमणादिक वृत के धरनेवाले, कितनेक १८ पाप से नहीं निवृते, कितनेक निवृते, कितनेक आरभ समारभ से निवृते, कितनेक किसीके ताडन तर्जन वध बंधनका त्याग किया कितनक स्नान शृगारसे निवृत, विषय शब्द रुप गंध रस फरस पे राग भाव नहीं धर कितनेक सावद्य जोग के त्याग किये, कितनेक जीव अजीवको पहिचाने पुन्य पाप आश्रव सवर निर्जरा क्रिया, अधीकरण (कर्म बधके कारण) बंध मोक्ष इनके जाण हुये, देव दानव मानवके चलाये हुवे भी धर्म से नहीं चले, जीनेश्वर के धर्ममें पंका कंखा वीतीगिच्छा रहित प्रवर्ते हाड २ की मींजी धर्ममे मींजी,नीत्य शास्त्र सूणे, अर्थ, ग्रहण करे, सदेह उत्पन्न हुये पूछके निश्चय करे, फक्त एक जिनेश्वर के वचनको सार जाणे, ओर सब असार समजे, स्फाटिक रत्न जैसे निर्मल आनाथ जीव के पोषणे खूले द्वार रखते हैं, राजा के भंडारमें तथा अतउरमें जावे तो भी अप्रतीत न उपजे आठम चउदस पक्खी के प्रतीपूर्ण पो

सा करनेवाले, साधु साधवीको आहार-पाणी-सुखडी-पक्वान-मुखवास वस्त्र—पात्र—कंबल—वोछोणा—औषध—भेषध-पाट-बाजोट-पराल स्थानक इत्यादिक उलट भाव से प्रतिलाभे (देवे) ऐसे गुणवंत श्रावक सलेषणा आलोयणा कर आराधिक हो १२ मे स्वर्गमें २२ सागरका आयुष्य पावे

१५ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे ऐसे उत्तम प्राणी है कि जो सर्वथा आरंभ परिग्रहसे निवर्ते माहाधर्मी, धर्म ही जीनोंका इष्ट हैं, चारीत्र धर्मको उत्तम रीति से पाले अच्छा है जिनाको सीलव्रत—आचार सदा हर्षायमान चित्तवत, सर्वथा प्रकारे १८ पाप से निवर्ते, सर्वथा प्रकारे पचन पचावन, पीटण पीटावन, ताडन तर्जन वध वधन स्नान शृंगार शब्दादी विषय से निर्वते, इनको अणगार (साधू) कहना यह पाच सुमती तीन गूप्ती यूक्त जिनेश्वर के मार्ग को आगे करके विचरे शुद्ध भावमें आयुष्य पूर्ण कर कर्म खपे तो मोक्ष जावे, और पुन्य बंधे तो सर्वार्थ सिद्ध विमानमें ३३ सागरका आयुष्य पावे

१६ पूर्वोक्त ग्रामादिक के विषे उत्तम प्राणी वो सर्वथा प्रकारे काम भोग रागद्वेष स्नेह क्रोधादि कषाय से निवर्ते सो कर्म खपाकर मोक्ष पधारे

अहो सम्यक्त्वी जीवों ? देखिये करणी के फल थोडे वहूत जैसा करे गे वैसा अवस्य पावेंगे यह उववाइ सुत्रका फरमान हैं इसमें विशेष इतना ही है कि जो जिनेश्वर की आज्ञा मुजब करणी करेंगा वो संसार घटावेंगे और आज्ञाके बाहिर की करणी करेगा, उसको वो उतना ही फल तो जरूर देवेगी, परतु संसार नहीं घटावेगी ऐसा जान वितराग की आज्ञा मुजब करणी कर अल्प संसारी होना

कितनेक कहते हैं कि करणीका फल हमारेको प्रत्यक्ष द्रष्टी क्यों

नहीं आता है ? तब उनका चित्त समाधान करनेको प्रत्यक्ष यह द्र ष्टांत है कि, १ औषध ग्रहण करते ही तुर्त आराम नहीं करती है, उस के नियमित दिन पूर्ण हुये, और यथायोग्य पथ्य (परेज) पालेगा तब गुण देती है ऐसे ही २ आम लगते है और हमेशा पाणी देते है परतु उसका काल परिपक्व होता है तब फल देता है ३ खेतमें बी- ज भी बाया हुवा कालांतर से फलीभूत होता है इत्यादि अनेक द्र ष्टांत से अवधी काल पूर्ण हुये करणी अवस्य फलभित होगी

द्रष्टांत, किसीन किसी हकीमजीको पुछा कि ताक्त कायसे आ ती है ? हकीमने कहा दुध पीनेसे, वा घर जाकर खुब पेट सर दूध पी आया और पहेल्वानों से बोला की आ जावो, क्या देखते हो ? उस के साथ लडाइ करी तब हार गया, पीछे क्रोधातुर हो कर हकीम के पास गया, कहने लगा के तूम झुटी दवाइ बताकर दूसरे की इज्जत ले ले हो हकीम हँसकर बोला, बाबा वस्तु गूण करते करेगी अब कि- जिय हकीमने क्या झुटी दवाइ बताइ? ऐसे ही जिनेश्वरने जो करणी के फल वक्त कहे हैं, वा वक्त शिर अवस्य मिलेंगे, ऐसा निश्चय रखो

४ " पाखडी की प्रशसा "—पूर्व जो पाखंडियोंका वर्णन किया है, उन पाखंडियोंमें कोइ विशेष पढा हुवा या क्रियावत, भक्तीवत इत्यादि को देखकर प्रशसा नहीं करणी, कि क्या पचधूणी तापते हैं? कैसे भक्ती करते है ? क्यों कि उनकी क्रिया और भक्ती सारभी है जो उसकी प्रशसा करता है तो उसको उस आरंभका हिस्सा आता है मिथ्यात्वीयों की प्रशसा करनेसे मिथ्यात्वका बढानेवाला होता है प तीव्रता स्त्री अपने पतीको छोड अन्य पुरुष कैसा भी होय तों उस की प्रशंसा न करे, तैसे जाणो

५ " पाखंडिका संस्तव परिचय " —पाखडी—मिथ्यात्वियों का

सदा संगत नहीं करनी, क्यों कि 'सोवत जैसी असर' अवश्य होती है निमक और दूधका संयोग होनेसे दूध फटकर निकम्मा हो जाता है न वो दूधमें और न वो छाठ (मही) में रहता है तैसे ही मिथ्यात्वीयोंके हमेशा परिचयसे समद्रष्टी की विप्रीत श्रद्धा होती है *वो दोनोंमें नहीं रहता है

यह सम्यकत्वके ५ दुषण कहे इनको विशेष सेवनेसे सम्यकत्वका नाश होता है और थोडा सेवनेसे सम्यकत्व मलीन हो जाती है, ऐसा जाण विवेकी सम्यक् दृष्टी प्राणी इन पाच दोषसे सदा दूर रहेकर सम्यकत्व निर्मल पालते है

६ बोले, "लक्षण पाच" —जैसे पुन्यवतको सत्य वर्तणुकादि शुभ गुणसे पेहचाना जाय, ऐसे सम्यक्त्वीको भी पाच लक्षणसे पेहचाने जाते हैं १ 'सम' शत्रु मित्त पर, या शुभाशुभ वस्तु पर, सम भाव रक्खे, सम्यक्त्वी ऐसा विचारे की "मित्तिमे सव्व भुएषु, वैरमझ न केणइ" इस विश्वके सब जीव मेरे पर्म मित्र है, शत्रू कोई नहीं हैं हे प्राणी! तू ही तेरा स्वजन है, और तू ही तेरा मित्र है, जरा ज्ञान दृष्टीसे विचार, जो तेरे शुभ कर्मका जोग है, तो तरे सब स्वजन हो रहेगे

* सवैया—घोलीये न और पाल, डोलीये न ठोर ठोर;
सगत की रगत एक लागे पण लागे है.
जाय बैठो पागन में, घास आय फूलनकी,
कामनी की सेजे काम जागे पण जागे है
काजल की कोठडीमे, कोइ शाणो पेस देखो,
काजलकी एक रेख लाग पण लाग है,
कहे कवी केशव दास, इतनेका इय विचार
कापरकी सग सुरा भागे पण भागे है

और अशुभ कर्मका उदय हुवा तो, तरे प्रिये स्वजन ही दुशमन हो जायेंगे ❋ तो दूसरेकी क्या कहना ! तथा अनाथी निग्रथने कहा है, कि—

गाथा—" अप्पा कत्ता विकत्ताय, दुहाणय सुहाणय
अप्प मित्तम मित्तय, दुप्पठीओ सुपठिओ "

अर्थात् अपनी आत्मा ही अच्छे की और बूरे की कर्ता है अपनी आत्मा ही सुख दु ख की कर्त्ता है अपनी आत्मा ही शत्रु और मित्र है, और अपनी आत्मा ही सुप्रतिष्ट और दूप्रतिष्ट है सो देखिये जो अपन सबसे नम्रतासे मधुरतासे मिलकर रहे और निज आत्मा का माल बचाकर किसी का चित नहीं दु खाया, तो सब अपने स्वज्ञ

❋ सैवया—कौन ते रे मात तात कौन सुत दारा भ्रात
कौन ते रे न्याती मिले, सब ही स्वार्थी
अर्थके खुटाउ, हैं जी धनके घटाउ
होय तो बटाय लेवे, मिलके धनार्थी
तेरी पति कौन बूजे, स्वार्थके मांही सुजे,
भव २ मांही उलज कोइ न परमार्थी
चैतन्य विचार चित, एक लो है तु ही नित,
उलट चलत आपो आपही अकार्थी ॥ १ ॥
वैरी घर माहे तेरे जानत सेही मेर
दारा सुत वित तेरो, लुटी २ खायगो
और ही कुटम्ब बहु घेरे चार और तु ते,
मिठी २ बात कही, तो स्यु लपटायगो,
संकट पडेगा जब तेरो नहीं कोइ तब
वक्त की वेला कोई काम नहीं आयगो
सुदर कहेत तु तो याही ते विचार देख,
तेरे यह किये है कर्म, तुही फल पायगो ॥ २ ॥

न ही रहते है, और कठिणता कटुवचन तथा दुसरेको हानी पहोंचे ऐ-सा वर्तन रखनेसे सर्व दुश्मन वन जाते हैं ऐसा जान प्राणी सदा समधीर्मे रमण करे यों रहते ही कोई दु ख उपजावे तो ऐसा विचार करे कि यह मेरे पूर्व कृत कर्म उदय आये है • जो में सवभाव रख सहन करुगा तो इन उदय आये कर्मों की निर्जरा होगी, और नवीन कर्म का वंध नहीं पडेगा और विषम भाव धारण करुंगा तो उदय आये सो तो भोगवने ही पडेगे रोनेसे पश्चाताप करनेसे या सराप देनेसे कुछ कर्म दूर नहीं होते है, उलटा नवीन कर्मोका बंध होता है, और "कडाण कम्मा न मोक्ख अत्थी" अर्थात्—बन्धे थे हुये कर्म भोगवे विना छूटका नही, एसा जाण कर्म समभावसे भोगवे ऐसे ही कोई शब्द रुप गध रस स्पर्शादिकके शुभा शुभ पुद्गलका सजोग बने तब उसपर भी अनूरक्त न होता, यों विचारे कि पुद्गलोंका स्वभाव क्षणभगुर है, जो पुद्गल अबी अपनको मनोज्ञ लगेत है, वो ही क्षणेंम या स्वभाव पल्टेअ मेनोज्ञ लगने लगते हैं, देखिये भोजन तुर्तका तैयार हुवा अच्छा लगता है और वो ही उलटी होनेस पीठा निकल जाय, तथा कालांतरसे विगड जाय तब खराब लगणे लगता है ऐसेही मिट्टी पत्थर यों पडे हुये खराब लगत है, और कोरणीयादिक कर उसे याग्य ठिकाणे लगाने से अच्छे लगने लगते है जिनकी प्रणीतीमें फरक पडे उनपर रागद्वेप करना ही व्यर्थ है ऐसी तरह विचारसे सर्व शुभा शुभ बनावोंमें समपणा रक्खे

२ 'संवेग'—सम्कत्वी सदा अंत करणमें सवंग (वैराग्य) भाव रख

श्लोक—शरीर मनसा गतु वेदना प्रभवाद्भयात् ।
स्वमेन्द्र जाल सङ्कल्पात्प्रीतिः सत्वेग उच्ते ॥

• दोहा—बाधे सो ही भोगवे, कर्म शुभा शुभ भाय;
फल निर्जरा होत है, यह समाध चितचाव ॥ १ ॥

अर्थात्—संवेगी ऐसा विचारे की 'संसारभी दु ख पउरय' यह ससार शरीरिक (देह सम्बधी रोगादिक) और मानसिक (मन सम्बधी चिंता) इन दोनो दु खों करके प्रतिपूर्ण भरा है किंचित् ही जगा खाली नहीं है इसमें तू सूख की अभिलाषा करे सो तेरेको सूख कहासे प्राप्त होवे ? तथा जो पुद्गलोंका संयोग मिला है, सो भी कैसा है कि यथा द्रष्टात, किसी क्षुधा पिडित भिक्षुक बजारेंमे हलवाइ की दुकानपर अनेक पक्वान देख विचार करता २ रसोइ बनाने कन्डे (छणे) लायाथा उसको सिर नीचे दे सो गया उसे स्वप्न आया कि इस गामका राजा मरनेसे में राजा बन ऊचा सिंहासन पर बैठ छत्र चमर ध्राने लगा, और मिजबानीमें घेवर प्रमुख अत्युत्तम पक्वान जीम शयन किया इतनेमें ही कुछ अवाज होनेसे जाग्रत हो देख २ रोने लगा ग्रामजनके पूछने से उत्तर दिया की मेरा राजपरिवार सुख सायबी कहां गइ ? और अबी मैंने इच्छित भोजन किये थे सो भी कहा गये ? यह कन्डे ही रह गये लोक कहने लगे यह दिवाना हो गया, सो बकता है ऐसे ही यह मनुष्य जन्म रुप सायभी स्वप्न के सपत मिली है, इसको गुमा देने से दिवाने की तरह रोना पडता है मतलब यह संपत सब स्वप्न या इद्र जाल, गारुडी के ख्यालके जैसी प्रत्यक्ष दिखती है, ऐसे दुःख सागर अथिर संसारमें लुब्ध न होवे सदा कर्म बध के कारणों से डरता रहे, इनको छाडने की सदा अभिलाषा रक्खे सो सम्वेगी जाणना

३ 'निर्व्वेग' अर्थात् समकिती आरभ और परिग्रह से यथाशक्ति निवृते आरंभ परिग्रहको महा अनर्थका कारण, दुर्गतीका दाता, जन्म मरणका बढानेवाला, पापका मूल, क्षमासील संतोपमें दावानल समान, मित्रताको तोडनेवाला, वैर विरोधका बढानेवाला, ऐसा खोटा

जाने, और दिनोदिन कमी करे, तथा पच इन्द्री के विषय पूर्ण मिले हैं उनमें लुब्ध न हावे, दिनोदिन घटावे, सर्वथा छोडने की इच्छा रखे

४ ' अनुकपा '—सम्यक्त्वी प्राणी दु खी जीवोंको देख अनु कंपा करे

श्लोक—सत्व सर्वत्र चितस्य दयार्द्रस्य दया नव ।
धर्मस्य परम मूलमनुकंपा प्रवक्ष्यते ॥ १ ॥

अथात्-जगतवासी सर्व जीव सुखसे जीवीतव्य के अभिलाषी हैं दु-ख प्राप्त होनेसे घबराते हैं और दु ख प्राप्त हुये, उस दु खमें से कोइ छुडानेवाला मिला जाय तो वो हर्ष मानते हैं इसलिये सम द्रष्टी प्राणी दु खी जीवों की अनुकपा ला कर, उनको उस दु ख से अवस्य छुडावे यह अनुकपा ही धर्मका मुल * हैं जिनके ह्रदयमें से अनुकपा नाश हुइ है, उनके सर्व गुणका नाश हुवा है, कितनेक अनाथ जीवोंको बचानेमें पाप बताते हैं कहते है कि वो जीयेंगे वहातक पाप करेंगे, उसकी क्रिया उस छुडानेवालेको आयगी कितनी दीर्घ द्रष्टी ! तथा पइस से जो अनर्थ होगा उसका पाप लगेगा तब तो साधूजी भी यों विचारेंगे की हम किसीको दिक्षा देवेंगे और वो मरकर देवता होगा, देवागना के साथ क्रिडा करेगा सो पाप साधूजी को ही लगेगा ! इस विचार से तो सर्व धर्म कार्य करना पाप हुवा ! एसी कु कल्पना से जो घटमें से अनुकंपा निकाल कठोर चित्त करते हैं, वो महा सख्त कर्म बांधते हैं, ऐसा उपदेश सुण अनुकपाका त्यागन नहीं करना बने वहां लग विचारे जीवोंको अभयदान देना समकु द्रष्टी कपाइ आदि दुष्ट प्राणियों की भी अनुकपा करे कि यह बिचारे हिंसा

* दुहा—दया धर्म का मूल है । पाप मूल अभिमान ॥
तुलसी दयान छोडीये । जप लग घटम प्रान ॥ १ ॥

करके कर्म बांधते हैं यह कैसे भोगवेंगे ? उसको उपदेशादि साय देकर हिंसा बंध करानी जो न छोडे तो द्वेष न करे सर्व जीवको अपनी आत्मा समान लेखे 'आत्मवत् सर्व भूतानी पस्यती स पस्यती' अर्थात् जो अपनी आत्माके तुल्य सब जीवोंका देखता है सो ही देखते है, बाकि सब अन्ध हैं। ऐसा जान जैसे अपने कुःवको दुःखी देख उस दुःख से उनको मुक्त करने के उपाय करे तैसे ही समदृष्टी प्राणी सब की दया करे दान से भी दया जास्ती हैं क्यों कि धन खुटने से दान देना बंध पड जाता हैं परतु दया–अनुकंपाका तो अखूट अंतःकरणका झरण है यह सम्यक् दृष्टी के हृदयमें हमेशा झरता ही रहता है यह श्रेष्ट हैं

५ 'आसता'–श्री जिनेश्वर के मार्गपर या वचन पर पकी आसता रक्खे एक जिनेश्वरके मार्ग को सचा जानना दृढ श्रद्धा रखनी देवादिक कोइ धर्मसे चलायमान करे तो चलायमान न होवे अरणीकजी, काम देवजी कि तरह दृढता रक्खे देहका विनाश होते भी धर्मको झूठा न जाणे क्यों कि देहादिक अनत वक्त मिली,*परंतु धर्म मिलना मुशकिल हैं इस लिये शरीरसे ज्यादा धर्मका यत्न करना बोलते हैं 'आसता सुख सासता' आस्तासे ही ही मन्त्र जंत्र औषध फली भूत होते हैं इस वक्त दान धर्म क्रिया कष्ट करनेवाले बहुत है, परतु दृढ आसता वाले बहुत थोडे है जिससेही महा प्रभाविक नवकार तथा क्रियाका प्रत्यक्ष फल किंचित दृष्टी आता है बहुत धर्मीजन ता गोबरके खीले जैसे जिधर नमावे उधर नम जाते है, और नरवदाके गाटे की जेसे, जिधर झुकावे उधर झुक जात हैं, ऐसे बहुत है इस लिये धर्मी होकर दुःख पाते हैं बहुत धर्म कर यथा तथ्य फल प्राप्त नहीं कर सक्के हैं एसा जाण सम दृष्टि प्राणी यथा शक्त करणी कर, परंतु पूर्ण आसता रख कर पूर्ण फल लेवे इन पाच लक्षणों कर सम्यकत्वी प्राणीको पेहचानसा

* दोहा –धन दकर तन राखीय, तन द रखीय लाज।
धन दे तन दे लाज दे, एक धर्म के काज॥ १॥

७ मे बोले "भूषण पाच" —जैसे मनुष्य उत्तम वस्त्राभूषण कर सोभता हैं तैसे सम द्रष्टीके पांच भूषण है १ 'जैन धर्म में कुशल होवे', जैसे चालाक मनुष्य ससार व्यवहारके हिसावमे तथा लेखन कलामें, वेपारमे, भोजन वस्त्रादि निपजानेमें कैसी चालाकी वापरता है ? किसी के छल छिद्रसे ठगाता नहीं है, तैसे समकिती प्राणी धर्म कार्यमें हुशारी रक्खे, अनेक नवी युक्ती यों धर्म वृद्धीकी निकाले, वहूत शास्त्र, थोकडे गंगीया अणगादिकके भागेका जाण होवे अनेक नवीन तर्पेम क्रियामें उपदश कला कौसल्यता वतावे, पाखडी अन्य मतावलंवी अनेक हेतु कूतर्क करके ठगे तो आप ठगाय नहीं, उत्पाद बुद्धी करके उनको निरुत्तर करे सत्य धर्म फेलावे

२ "तीर्थ की सेवा करे," ससार रुप समुद्रके पेले तीर (किंनारे) पर मोक्ष है उसको प्राप्त होवे सो तीर्थ यह तीर्थ चार हैं साधू साधवी, श्रावक, श्राविका इनकी यथायोग्य सेवा—भक्ती करे अर्थात् साधू—साध्वी पधारे तव यत्नासे सन्मुख जावे, गुण गान करते स्वग्राम में प्रवेश करावे, यथा योग्य मकान (स्थानक) उतरनेको देवे, या दिलावे, आहार पाणीके लिये साथ फिर दलाली करके दिलावे, ओषध वस्त्र जो वस्तु की खप होवें सो आपके पास होय तो देवे, नही तो दलाली कर दिलावे नित्य व्याख्यान आप सुणे, दूसरेको सुणनेको लावे उपदेश धारे, यथा शक्त व्रत प्रत्याख्यान करे, तन, मन, धन, कर धर्म की प्रभावना करे, चौथे आरेमें ग्रामके वाहिर मुनी महाराज उतरते थ यहा भी सन सामग्रीसे वहूत लोक दर्शन करने को व्याख्यान सूणनेको जातेथे आवी तो जो घरके नजीकमें मुनी उतरे होय तो भी कीतनेक भारी कर्मी तो दर्शनका लाभ भी नहीं ले सकते हैं कहा है

दोहा—"पुन्य हीणकों न मिले, भली वस्तुका जोग,
जब द्राक्ष पकान लगे, तब काग कंठ होय रोग"

भारी कर्मी जीवकी ये ह गती हैं

सैवया| मात मिले, सुत्र भ्रात मिले पुनितात, मिले मन वछित पाइ,
राज मिले, गज वाज मिले, सब साजमिले, जुवती सुखदाइ,
लोक मिले, परलोंक मीले, सव थोक मिले, वैकुंठ सिधाइ,
सुंदर सब सुख आनामिले, पन संत समागम दुर्लभ भाइ ॥ १ ॥

और श्रावक श्राविका साधर्मी की जो इनमे जैंन मार्गको प्रकाशमें लाणेवालेहोवे, तपस्वी होय, इत्यादि गुणवानके गुण ग्राम करे, और जो अशक्त होवे उनको साह्य देवे, आहार वस्त्र जो चाहिये सो देवे, और अपनेसे गूण ज्ञानमें वडे होवे तो घरको आवे तब सत्कार दे, वंदणा करे, ज्ञान चर्चा करे जाती वक्त पहोंचावे, इत्यादी चार ही तीर्थ की सेवा भक्ती गुणग्राम सो ही सम्यक्त्वका भुषण हैं

२ 'तिर्थके गुणका जाण होवे' साधूके २७ गुण श्रावकके २ गुण, इत्यादि गुणका जाण होवे जो गुण जानेगा सो ही सत्पुरुष के पेहचान कर सकेगा और ढोंगी धूतारेसे नहीं ठगायगा "अपने ता गुण की पूजा, और निगुणको पूजे वो पयही बूजा" कितनेक तिर्थके गुण जाणे विन साधू श्रावक या समद्रष्टी नाम धारण करा ले हैं, और अज्ञानतासे अजोग काम कर धर्मको लजानेव ले हो जाते हैं इस कालमें कितनेक साधु और श्रावकका भेप लेकर ५८ भरगड करके निकल जाते हैं भोले गामडेके लोकोंको गप्पे सप्पेसे भरमाकर जैन धर्म लाजे ऐसे शास्त्र विरुद्ध लाक विरुद्ध कामो करते हैं, धर्म को ल जाते हैं, और लोकोंको भ्रद्धाभ्रष्ट करते हैं, उनके कारणसे लागों सबे साधूको भी ठग जाणते हैं और अनक परिसह उपजाते हैं, इसलिये

तिर्थके गुणका जाण अवस्य होना और नवीन साधू श्रावक देखकर शका होव तो उनकी पुरी चोकस हुये विन विशेष सहवासका विचार करना और तपास करते जो वो धर्मभ्रष्ट निकले तो उनको पद भ्रष्ट करना, कि आगे ऐसा काम न करे

४ " धर्मसे आस्थिर हूयेको स्थिर करे " अर्थात् कोइ साधू श्रावक स्वधर्मी–अन्यमतीयोंके प्रसंग से तथा मोह के उदय से या किसी प्रकारका संकट प्राप्त होने से धर्म से चल विचल प्रणाम होय, या अन्य धर्म स्विवीकारने की अभिलाषा करता होय, और सम्यक द्रष्टीको ऐसी मालुम पड जाय तो तुर्त आप उसके पास जाकर अपनी अक्कल से या कोइ गीतार्थिका संयोग मिलाकर उसकी शकाका निवारण करे तथा उसपर जो सकट आकर पडा है, उसे आप निवारण करने समर्थ होय तो आप करे, नहीं तो अन्य स्वधर्मीयो की साहायता से दूर करावे कदापि कोइ शारिरीक कर्म सबंधी सकट होय तो उसे कर्म की विचित्रताका स्वरूप बता कर, या जो बडे २ तिर्थंकर चक्रवर्ता आदिक पर संकट पडे हैं उनका चरीत्र सुणावे * कि ऐसे संत सतीयों पर संकट पडे है और वो सत्यमें स्थिर रहे तो उनका संकट भी दूर हूवा, पूनरपी सर्व सुखकी प्राप्ती हुइ, और अब्बी तक जिनके नाम के कइ ग्रंथ तैयार

* आदीनाथ अन्नविन मास बारह रहे,
महावीर गाढी बारा वर्ष दुःख पाये है,
सनत कुमार चक्री, कुष्ठ वर्ष सातसालो
ब्रह्म दत्त नेत्र खोय नर्क सीधाये है,
इत्यादि अनेक इन्द्र नरेन्द्र कर्म वश,
विटम्बना सही तेरी गिनती कहां लाये है,
कहेत अमोल जिन वचन हृदय तोल,
समता धर कर्म तोडे सो ही सुखी रहाये है

है, वो सकटमें स्थिर रहे तो अपने नामको अमर कर गये और कहा हैं कि मालधणी होयेगा उसके पीठे ही चोर लगेगा, और वोही हुशियार रह अपने मालको बचावेगा नग के पीछे क्या लगे ? ऐसे ही जो द्रढ धर्मी होगा उसपे ही सकट पडेगा, और वो ही सहन कर अपना धर्म कायम रखेगा सोनेको तापमें देते हैं तो वो ज्यादा तेज हो कर निकलता है इत्यादि उपदेश करके उसे धर्म स्थानेंम स्थिर करे यह पढ कर कितने कहेंग कि धर्म करने से सकट पडता है, तो फिर धर्म करना ही क्यों ? तो उनको ऐसा कहा जाता है, कि धर्म करने से सकट पडता नहीं, परन्तु संकट टलता है बाधे हुये कर्म तो अवस्य भुक्तने ही पडेंगे जैसे हकीमजी किसीको दवाइ दिये पहिले जुलाव देते है, कि कोठा साफ हुवे दवाइ असर अच्छी करेगा क्यों कि रोग निकले विन दवा असर कर सकती नहीं है ऐसे ही कर्म कटे विन सुख की प्राप्ती हो सकती नहीं है इसलिये उस जूलाव के किंचित सकट के सामने मत देखा, परन्तु आगे कितना गुण होयगा इसका विचार करो, जो उस जूलाव के या दवा के दु ख से न घबरावेगा, अपथ्यका सेवन नहीं करेगा, तो सूखी होयगा, और जो घबराकर अपथ्य खा लेव गा तो दूना दू खी होगा ऐसे ही जो धर्म करते सकट पडा तो उससे न घबराते अन्यमत रुप अपथ्य न सेवन करते द्रढ रहेगा तो उनकी अनत कर्म वर्गणा रुप रोग दूर होकर थोडे कालमें अजरामर सुख देवेगा

८ मे बोले "प्रभावना आठ" —समकिती को जिस मार्गको ग्रहण करने से आतमा का कल्याण होगा, ऐसा मालुम हुवा, तो उनको योग्य है कि वोही मार्ग अन्य प्राणी ग्रहण कर सुखी होवे एसा उपाव करे यही सम्यक्त्वीका मुख्य कर्तव्य है परन्तु सत्य

सुधारा भी कर सक्ता है

५ ' दुष्कर तप ' चोथ, छट्टम, अठ्ठम, मासी वो माली, छ मासी आदि यथा शक्ति तपस्या करके मार्ग दिपावे क्यों कि अन्य मति- यों में जो सागर तप दूधादि पदार्थ कंद मूलादिक खाकर जो तप करते हैं उनको भी धन्य २ गिनते हैं तो निराधार ऐसी तपस्या करें गे, उनको देख अन्यधर्मी आश्चर्य पावे इसमें संदेह ही क्या ?

६ ' सर्व विद्याका जाण होवे रोग निवान कार्य साधन, इ- त्यादि अनेक चमत्कारी विद्याओंका संग्रह कर अवस्य कारण उपने विगर प्रयुंजे नहीं, परन्तुजो दूसरा प्रयुंजता होय और वो करामत स मक्तिती जाणता होय तो उसे आश्चर्य नहीं आवे उससे मोह्राय नहीं और वक्त पर जैन मार्ग दिपावे.

७ 'प्रगट वृत ग्रहण करे ' सील (ब्रह्मचर्य) चोविहारका नि- शी (रात्री) भोजन परिहार, सचित (कच्चा) पाणीका त्याग, सचित वनस्पति (हरीका) त्याग या चार खंद कहे सो स्वल्प (थोडी) वयमें धारण करे, जिससे लोकोंको चमत्कार उपज कि इस धर्ममें ऐसे २ वै- रागी पुरुष हैं

८ ' कवी प्रभावना ' जिनेश्वर के साधु साध्वीके श्रावक, श्रावि- का के सत्य वंतजैन धर्मात्मार्के व सत्योपदेशिक स्तवन, पद, सवैया, छंद अध्यात्मिक वैराग्य रस से भरे हुये, गुढार्थ चमत्कारी, ऐसे बनाकर जैन मार्ग दिपावे

इन ८ प्रकारसे जैन मार्ग दिपावे, परन्तु ऐसा मनमें अभिमान न लावे कि मैं ऐसा पराक्रमी हूं धर्म दिपाता हूं जा अभिमान करता है उसे प्रभाविक नहीं कहते है जो फक्त जैन की उन्नती करने समभा वसे उपर कहेआठ ही काम करे, उनको जैन धर्मके प्रभावक कहे जाते है

१ मे बोले 'जयणा (यत्ना) छे' — अर्थात् समकिती अपनी समकितको निर्मळ रखने, और समकितीयों कि वृद्धी करने क लिये, समकितकी छे प्रकार से यत्ना करे १ ' अलाप ' कहता मिथ्यात्वी अपनको न बोलावे तो उनके साथ बोलना नहीं और समकिती एक ही वार बोलावे तो उनको योग्य उत्तर देना २ ' सलाप ' —मिथ्यात्वीयों के साथ विशेष भाषण नहीं करना, क्योंकि वो छल छिद्र के भरे हुये रहते हैं इसलिये वट्टा लगादे, और समकितीकी साथ वारवार ज्ञान चर्चा अवश्य करनी ३ ' दान ' —मिथ्यात्वीयोंको धर्म निमिते दान नहीं देना अनुकम्पा—दया निमिते देवे सो वात जुदी और समकिती जीवको जो वस्तु अपने पास होवे तो उनको आमंत्र (वेवे) गरीब स्वधर्मी योंको शक्तीवंत होकर साहाय करे ४ ' मान ' — मिथ्यात्वीयोंका सत्कार सन्मान न करे, और सम्यक्त्वी आवे तो उनके सामे जावे सत्कार करे ५ ' वदना ' कहता मिथ्यात्वीयोंके गुण ग्राम न कहे उनकी हिंसक क्रिया की प्रशसा नहीं करे, और सम्यक्त्वी के गुण ग्राम करे, उनकी क्रिया की प्रशसा करे ६ ' नमस्कार ' — मिथ्यात्वीयोंको नमस्कार मुजरा सलाम नहीं करे, तथा आपसमें मुजरा (सलाम) करे तो जय गोपालादिक नाम उच्चार कर नहीं करे और स्वधर्मी अपने से ज्ञान गुणमें वडा होय उसे सखजीकी जिने पोखलीजीको तिक्खुत्ताके पाठसे नमस्कार करी तेसे आप भी करे, और वरोवरी के या छोटे स्वधर्मी के साथ जयजिनेंद्र — जयजिनराय वगेरा जैन शब्द स नमन करे अन्य लोक अपने देवके नामसे नमे तो जैनियोंको भी अपने देव के नाम मे ही नमना चाहिये यह ही प्रत्यक्ष सम्यक्त्वीके लक्षण है यह छ प्रकार की यत्ना कर के सम्यक्त्व रत्नको मिथ्यात्व रूप मेल म वचावे

१० मे बोले ' अगार छ ' —सम्यक्त्वीका निश्चय तो सदा जिनेश्वर की आज्ञा प्रमाणे वर्तनेका है परन्तु कोइ वक्त परवशपणे स समकितमें वट्टा लगे ऐसा काम भी करना पडे तो छे कारण उपजे सम कित विरुद्ध काम करे तो सम्यक्त्वका भंग नहीं होवे १ ' राय भि-योगेणं ' राजाका अगार अर्थात् सामान्य राजा सो राजके नाकराविक, तथा मोटा राजा सो एक देशका तथा सर्व देशका वो हुकम कर की अमुक काम अवस्य करनाही पडेगा, जो न करेगा वो मेरा गुन्हेगारकाम स-म्यक्त्वीको होवेगा वो करने योग्य न होय तो भी करना पड क्यों कि राजा है बदल जाय तो धर्मका तथा उसका अपमान करे, जीव से मरा डाले, घरबार छूटे. इत्यादि केइ जुलम कर, ऐसा डर लाकर पश्चाताप युक्त काम करे कि जो में साधू हो जाता तो मेरी सम्यक्त्वमें वट्टा ता नहीं लगता इस विचार से किंचित् दोष तो लगता है परन्तु सम्यक्त्वका भग नहीं होता है

२ ' गण भिउगेण ' समकितिको कुटुंब न्यात जात पंच इत्यादिक कोइ समकित विरुद्ध काम करनेका कहे, कि यह हमारे कुल देव हैं, कुल गुरु है, इनको वदो पूजो सेवा भक्ती नमस्कार करो, यह सम्यक्त्व विरुद्ध काम करने की कहे जो समकिती नहीं करे तो वो पंचादिक दडकर जाती बाहेर निकाले, गुरुका धर्मका तथा उस्का अप मान करे उस्को उस्के कुटुंब दु ख देवे, इत्यादि विचार डरकर पश्चाताप युक्त उनका फरमाया काम करे तो किंचित् दोष लगे पण सम्य-क्त्व भंग न होवे

३ ' बल भिउगेण ' कोइ पराक्रमी, विद्यावत, जबरदस्त समकितीको कहे कि यह मेरे देव गुरु है, या ये मेरा अमुक काम है तूं कर, जो नहीं करेगा तो मैं मरे पराक्रमसे, या विद्या—मंत्रादीके प्रभाव से तेरेको व तेरे कुटुंब को दु खी करुंगा इस उपद्रवसे डरकर समाकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो दोष लग, पण समकितका भग नहीं होवे

४ 'सुरा भिउगेण' कोइक मिथ्यात्वी देव समकिती को कहे कि तू तेरे नियमका भंग कर नहीं तो में तुझे मरणातिक कष्ट देऊंगा तेरे कुटुंबका धनाथ नाश करूंगा ऐसे वचनसे डरकर समकिती सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे ता किंचित् दोष लगे पण सम्यक्त्वका भंग न होवे

५ "करता विती" कोइ वक्त मार्ग भूल आटवी (महा जगल) में पड गये रस्ता नहीं मिले, तव क्षुधा शांत करने मर्यादा उप्रांत वस्तू भोगवे, तथा अटवीमे कोइ मिला और वो कहे कि अमुक काम करे तो तुझे रस्ता वतावे ता, तथा प्राणातिक प्रमुख वडा संकटोमें आकर प्राणको कुटुंबको वचाने कोइ सम्यक्त्व विरुद्ध काम करे तो किंचित दोष लागे पण समकित का भग न होवे

६ 'गूरु निग्गहो' कोइ वडा आदमी, या माता पिता, वडे भाइ आदिक माननिय पुरुष समकितिको कोइ समकित विरुद्ध कार्य करने की कहे, कि येह काम कर, जो नही करे तो हामेर घरमेसे निकल; इत्यादि उपसर्ग करे उनसे डरकर उनका हूकूम अनुसार कर २ तथा कोइ मिथ्यात्वी आकर अपन देव गुरु धर्मका गुण ग्राम करे, और उस अनुरागसे उसका सत्कार करना पडे, ३ तथा कोइ जब्बर कारण उत्पन्न हुये धर्म गुरु धर्माचार्य कोइ विरुद्ध कार्य करनेका कहे, और उनके कहे मुजव करे, यह तीन प्रयोजनसे कोइ काम करे, उसे गुरु निग्गहणे कहते हैं यों करनेसे किंचित दोष तो लगता है, परन्तु सम्यक्त्वका भंग नहीं होवे

इन छेही को कोइ 'आगार' और कोइ छ छिडी कहते हैं यह छेइ आगार कुछ सर्व सम्यक्त्वीके लिये नहीं हैं जो कायर है, और उक्त छ कारण उत्पन्न हुवे अपना नियम नहीं निभा सकते हैं, तो उ

नके लिये कहा है कि सर्व वृतका तो भंग नहीं होगा अपने धर्ममें तो कायम रहेगा इन छे कारणोंसे कोइ वक्त सम्यकत्वमें बट्टा लग जाय तो समकितीको उस की आलोयणा गुरुके पास कर प्रायछित लेकर शुद्ध होना * और जो सच्चे २ सम्यक्त्वी हैं, जिनो की हाड मींजी किरमजी रेसमके रग जो धर्ममें भीजी है, उनपर तो मरणांतिक संकट भी जो कदी आकर पड जाय तो, सूर वीर धीर होकर प्राण छोडने तो कबूल करेंगे, परंतु अपने सम्यकत्वमें किंचित् ही दोष नहीं लगावेंगे और कायरजनोंको भी लाजिम है कि यह कारण उत्पन्न हुये, कभी दोप लगाणा पडे तो मनमें विचार तो उपर लिखा ही रख ना कि धन्य है, उन सत पुरुषोंको कि जो ऐसे सकटमें भी दोप नहीं लगाते है धिक्कार है, मेरेको, कि मै कायरता धरता हूं वो दिन कब होगा कि निर्मल मत पाल मेरी आत्माका कल्याण करुंगा, यों विचारे

११ मे बोले 'भावना छे'—समकितीको सम्यकत्व द्रढ रखने के लिय हमेशा अंत करण में छे प्रकार का विचार रखना १ 'धर्मस्य वृक्षका सम्यकत्व रुप मूल' जैसे झाडका मूल (जड) जो मजबूत होय तो वो वायू आदिक उपद्रव स अडग हो, बहुत काल तक स्थिर रहे, शाखा प्रतिशाखा पत्र पुष्प फल सयुक्त हो, इच्छित सुखका दाता होता है ऐसे ही धर्मरुप वृक्षका सम्यकत्व रुप मूल है जो धर्मात्मा सम्यक्त्वमें द्रढ होगा वो मिथ्यात्वादि वायू से पराभव नही पाता कीर्तिरुप शाखा, दयारुपी छाया, सद्गुणरुप पुष्प, निरामय सुखरुप फलका स्वाद भोगव के इच्छितार्थ सिद्धी करेगा अर्थात् अनेक धर्म

---

* राजाको हासल कोन भरेगा ? जो कोइ वस्तु मोलायेगा भारी लगातो दापण कोन गिनेगा ? साधू श्रावक के व्रत धारी जो काइ दापण लाग गयो तो लेकर दड लगा देया कारी चंड चतुर घोर स पड पर क्या पडेगा पीसन हारी ॥ १ ॥

कार्य कर अतमें मोक्ष प्राप्त करेगा

२ ' धर्मरुप नगरका सम्यक्त्वरुप कोट ' जैसे नगरका कोट मजबूत होय तो नगरपर परचक्रीका जोर चले नहीं ऐसे ही धर्मरुप नगर सद्गुणरुप रिद्धी करके पूर्ण भरा हुवा, इसकी रक्षा के लिये सम्यक्त्वरुप कोट मजबूत हुवा तो मिथ्यात्वी–पाखंडियोंरुप पर चक्रीका जोर नहीं चले. पाठतर ' धर्मरुप नगरका सम्यक्त्वरुप दरवाजा ' – नगरमें प्रवेश करनेको अवल दरवाजे की जरुर है तैसे धर्म—सद्गुणोरुप नगरमें प्रवेश करनेको अव्वल सम्यक्त्वरुप दरवाजे की जरुर हैं सम्यक्त्व विन सर्व गुण व्यर्थ हैं

३ ' धर्मरुप मेहलकी सम्यक्त्वरुप नीव ' जैसे नीव (पाया) पक्की हुइ तो, उसपर मरजीमें आवे जितनी मजलका मकान बंधावे तो वो बहुत काल टिककर आराम देने समर्थ होता है तैसे ही धर्म रुप भव्य मेहल की जो सम्यक्त्वरुप नीव मजबूत हुइ तो वो जितनी धर्म क्रिया करेगा उतनी सब उसे पूर्ण फल–निजरा रुप होगा

४ ' धर्मरुप मकानका सम्यक्त्वरुप स्थंभ ' जैसे मकानको स्थंभ ठेहरा रखता है तैसे धर्मको सम्यक्त्व स्थिर रखती है सम्यक्त्व विन-धर्म टिक सकता नहीं हे धर्मीको सम्यक्त्व की जरुर हे

५ ' धर्म रुप भोजनका सम्यक्त्व रुप भाजन ' जैसे भोजन पक्वान साल दाल घृतादिक विन भाजनसे टिकता नहीं, तैसे धर्म भी सम्यक्त्व विन टिकता नहीं हैं, धर्म लेखे लगता नहीं हैं

६ ' धर्म रुप किराणाको सम्यक्त्व रुप दुकान ' जैसे कोठार विन धन धानादि उत्तम पदार्थका चोर हरण करता है, या विणश जाता है, तैसे ही सम्यक्त्व विन धर्म रुप उत्तम पदार्थ रहता नहीं हे, उसे इन्द्री कषायादि चोर हरण कर जाते हैं तथा मिथ्यात्व रूप कीडा लगकर वि-

नाश हो जाता है सम्यक्त्व से बंदोबस्त है

यह ६ प्रकारके भावसेसमकिती सम्यकत्व को सार पदार्थ जाणकर सदा बदोवस्तसे रखते हैं विनाश न होने देवें

१२ मे वोले ' स्थानक छे '—सम्यकत्वी के प्रणामको चलानेके लिये मिथ्यात्वी छे प्रकार की कल्पना करके धर्म स्थान से चलाते हैं उन छेही कामोंको यहा बाचकर प्रणामों की स्थिरता करनी चाहिये

१ ' आत्मा (जीव) हैं '—कितनेक की ऐसी समज है कि जीव है ही नहीं फक्त कल्पना मात्र है जो जीव होय तो घट पट आदीकी तरह द्रष्टी क्यों नहीं आवे ? जैसे नाटकिये कपडे के पुतले वना कर नचाते हैं, तैसे इन मनुष्य पशू पक्षी रूप नाना प्रकारके पुतले ईश्वर वना कर अपना मन प्रसन्न करने नचाता है उसने डोरी छोडी के सब पड जाते है इत्यादि कुकल्पना कर जो सम्यकत्वीको चलाते हैं, उनको ऐसा विचारना कि जो जीव नहीं है तो यह कल्पना ही कोन करता है ? तथा शब्द रूप गध रस स्पर्श इनका विज्ञान ही किनको होता है ? स्वप्नमें जो जो पदार्थ देखनेमें आते हैं, वो याद ही किसको रहते हैं ? जो घट पट को मानता तो जो घट पट का जान न वाला है उसे भी मानना चाहीये इत्यादि अनेक रीतिसे विचार के देखते है तो यह सब बातको जाणनेवाला इस देहीमें दूसरा कोइ जरूर होना ही चाहिये तो जो दूसरा है, इस जगत के वर्तावको जाणनेवाला है, सो जीव ही है जहातक आतमामें जीव है वहातक ज्ञान सज्ञा रहती है, और जिव निकले पीछे यह जड (अजीव) पदार्थ सुस्त होकर के पड जाता है आत्मा आगे जाती है अश्चर्य ये ही होता है कि खुद आत्माही आत्म के आस्तित्व में शका करता है यह शका का करनेवाला है सो ही आत्मा है '

२ 'आत्मा (जीव) नित्य (शाश्वता) है '—यह उपरोक्त श्रवण कर कितनेक कहते हैं कि हां जीव तो है, परतु नित्य नहीं है, कोइ कहै जीव १ रक्त रूप है २ वायुरूप है ३ कोइ कहै अमीरूप है- जीव जब शरीरमें से निकल जाता है, तब इन तीन ही का विनाश हो जाता है, सो यह तीन ही जीव हैं इन तीनका विनाश हुवे जीवका ही विनाश हुवा सममजो अर्थात् जैसे नवीन शरीर* पचभूत (पृथवी, पाणी, अमी, हवा, आकाश) से पैदा होता है, तैसे जीव भी पैदा होता है, और इन पाचोंका विनाश होनेसे जीवका ही विनाश हो जाता है और प्रत्यक्ष में दिसती हुइ वस्तु क्षिणन्तर पल्टी हुइ द्रष्टी आती है इस अनुभव से भी आत्मा नित्य नहीं है उनको उत्तर दिया जाता है कि यह तो निश्चय समजो कि जडसे चैतन्य, और चैतन्य से जड कभी पैदा होताही नहीं है ऐसे ही चैतन्यका कभी विनाश होता नहीं है, जो नवीन जीव पैदा होय, और पुराने जीवका विनाश होय, तो फिर पुन्य पाप का फल भोगवणे की नास्ती हुइ, तो यह तो दिसता नहीं है देखिये एक सुखी, एक दु खी, एक श्रीमंत एक कगाल, इत्यादि ऊचता हीणता क्यों प्राप्त हुइ ? जन्म से ही उँदीर बिली प्रमुख जीवमें वेर भाव क्यों द्रष्टी आता है ? इस से निश्चय होता है की कोइ दूसरि देहमें इसने कर्म किय सो इस भवमें इसे उदय आये हैं ऐसे ही इस भवके किये कर्म आगे भोगेगा और जो वस्तु क्षिणिक है उसको जानने वाला कदापि क्षिणिक नहीं होता है, क्यों कि प्रथम क्षण में अनुभव हुवा था उसही वस्तुका हुवा उस

* १ आकाशसे—काम, क्रोध, शोक मोह, भय २ वायुसे—धावन, वलण पसरण, आकुचन, निरोधन ३ तेज (अमी) से -क्षुधा तृषा आलस निद्रा, मेथुन ४ अप (पाणी) से-लाल मूत्र, शोणित (रक्त) मज्जा रेत ५ पृथवीसे —अस्थी (हड्डी,) नाडी, मांस, त्वचा, रोम यह ५ भूतसे २५ तत्व पैदा होते हैं

का अनुभव करने वाले का कुछ पलटा होता नहीं है * इससे आत्मा शाश्वती हुइ

२ " आत्मा कर्ता है " —यह उपरोक्त वचन श्रवण कर कितनेक कहेत हैं कि आत्मा शाश्वती है, परन्तु कर्म की कर्त्ता आत्मा नहीं है, विचारी आत्मा की क्या सत्ता के कर्म करे? यह तो ईश्वराधीन है, उनके हुकम-मन प्रमाणे स्वभावसे ही दुनियामें कर्म होत हैं. जो आत्मा कर्म की कर्त्ता होवे तो अपने हाथसे खोटे कर्म कर दुःखी क्यों होवे? सदा अच्छे ही कर्म करे उनसे कहा जाता है कि जो कर्मकर्त्ता होता है, वो ही कर्मका भुक्ता होता है, तुम ईश्वर इच्छानुसार कर्म होते बताते हो तो फिर इन कर्मोका फल ईश्वर ही भुक्तेगा क्या! जो ईश्वर कर्म भुक्तेगा तो शुद्धका अशुद्ध हो दुनिया की विटंबणामें पडकर दुःखी होयगा तब तो वो ही आत्मा जैसा अशक्त और दुःखी हुवा ईश्वर की ईश्वरताका नाश हुवा यह कभी होय नहीं, इसलिये

* किसी भी पदार्थ का समूल नाश तो कदापि होता ही नहीं है मात्र रुपांत्र होता है अर्थात्—घटादि पदार्थ फूट जाय, जिस घटकी पर्याय का नाश हुवा परन्तु मट्टीका नाश हुवा नहीं बारीक भूकाभी हो गया तो भी उसके एक भी प्रमाणु का नाश कदापि नहीं होता है जो घट रुप मटी के प्रमाणु थे सो मटी रुप होकर पीछे सरावला आदी दूसरी पर्याय को प्राप्त होते है जो जड पदार्थ का समूल नाश नहीं होता है, तो चैतन्य का तो कहां से होगा, जैसे घटादि की पर्याय का पलटा होता है, तैसे चैतन्य जो शरीर धारण करता है, उस शरीरका नाश होने से दूसरे अन्य प्रकारके शरीर को धारण करलेता है परतु नाश कदापि नहीं होता है, फरक इतनाही की जड पदार्थ—पुद्गलोंके परमाणु होते है परन्तु चैतन्य कुछ परमाणूमय नहीं है जिससे कि सीमे भी मिलता नहीं है, और नाश भी होता नहीं है

तुमारी कल्पना मिथ्या हुइ, और जीव ही कर्मका कर्त्ता और भुक्ता यह सत्य हुवा

४ 'आत्मा भुक्ता है' — यह सत्य सुण मिथ्यात्वी वोले की आतमा शाश्वती, कर्म की कर्त्ता, यह सत्य है, परन्तु आतमा भुक्ता नहीं है क्यों कि कर्म तो जड (निर्जीव है, इनमें कुछ चलन शक्ती नहीं है कि जीवके साथ साथ जाकर जीवको फल देवे, इसलिये किये कर्म यहां रह जाते है, और जीव आगे जाता है यह कल्पना पहिले तो ठीक करी, और पीछे वावले जैसे वोल दिया हा, यह सत्य है की कर्म जड है, उनमें जीवके साथ जानेकी तो सक्ती नहीं हैं परन्तु किये कर्म जीवको लग जाते है और उनको साथ ले जीव जाता है उनके फल भोगवता है जैसा मदिराका सीसा तो जीवके साथ नहीं जाता है परंतु पी हुइ मदिरा तो उसके साथ रहती है और पीये पीठे उसकी मुद्दत पूरी हुये तो उस मदिराका स्वभाव नशा रूप जीवपर असर कर उसे अचेत बना देता है, ऐसे ही किये हुये कर्म जीवके साथ जा, मुद्दत पके उसके शूभा शुभ फल यहा या आगेके जन्ममें उनके स्वभावसे ही अवश्य भुक्ता है और संपूर्ण कर्म फल भुक्के रहे पीछे, कर्मसे छुट मोक्षमें जाता है

५ 'मोक्ष है' — यह उपर की वात सुण कितनेक मिथ्याती कहते हैं कि हा ठीक जीव शाश्वता है, कर्मका कर्त्ता है और भोक्ता है जेसे यह सिलसिला अनादिसे चले आया है, वेसे ही आगे अनन्तकाल तक चला करेगा परतु ऐसा कभी नहीं होनेका कि सर्व कर्म रहित, जीव होकर कर्मसे मुक्त होव इसलिये मोक्ष है, ही नहीं सदा सकर्मी जीव रहेगा इनको उत्तर —यह कल्पना भी वरोवर नहीं है अनादि से जो वस्तु है आगे वैसी वनी रहगी ? देखिये, सुवर्ण और

मिट्टी अनादिसे मिली हुइ है, सो प्रयोगसे दूर हो जाती है सुवर्ण अपणे निजरूपेंम आ जाता है, और मिट्टी अपने रूपेंम हो जाती है, ऐसे ही यह जीव और कर्मका अनादिस सयोग है, परन्तु उपाय मिले कर्म रूपा मिट्टीका त्यागन कर, निज स्वरूप सुवर्ण रूपको प्राप्त होता है और जो निज स्वरूपको प्राप्त होता है, उसे ही मोक्ष कही जाती है

६ मोक्षका उपाय हैं –उपरोक्त बात सुणकर मुमुक्षोंको स्वभाविक ही इच्छा हुइ के मोक्ष है तो मोक्षका उपाव भी हुवा चाहिये, जैसे मूसी, अग्नी, सोहागी खार, और फुकणेवालेके जोगसे सुवर्ण निजरूपको प्राप्त होता है * तैसे जीव कोन २ से काम करसेने कर्मसे छुट मोक्ष स्थानको प्राप्त होता है! एसे मुमुक्षु भव्यजनोंको कहा जाता है जैसे सुवर्णको निजरुप लाने ४ उपाय हैं, ऐसे इस जीवको भी कर्मसे छुडाने के चार उपाय हैं —१ ज्ञान करके कर्मोका स्वरुप जानना के कर्म आठ हैं, इनमें मोहराजा हैं, इस मोहके टिकनेसे आठ ही कर्म टिक रहे हैं इस मोहके दो भेद हैं –१ दर्शन मोह (सचेको झुटा और झुटेको सचा जाणे) २ चारित्र मोह निज गुण प्रगट न होने दे, ऐसा जाण फिर इनके बधनेका कारण राग–द्वेष—विषय—कषया जानना २ दर्शन (सम्यक्त्व) करके इस कर्म स्वरूपको और बध पडनेके कारणका सत्य श्रधेहणा. के हां इन कर्म करके ही में संसारमें परि भ्रमण कर रहा हुं ३ चारित्र करके इन कर्मोको तोडनेका उपाय बधका उलट वीतरागी पणा, निरविकारपणा, क्षमा, सील, सतोपादिको ग्रहण कर और बधके कारणका त्याग करे ४ तप करके, ग्रहण किये हुये कार्यमें अहोनिश प्रवर्ते, उद्यम, करे, और मोक्ष के जीवों की अपन जीवों की एक्ता करे

* मुसा—मुशी पावक सोहगी, फुम्पा तणा उपाय।
राम चरण चारों मिले, कनक का जाय ॥ १ ॥

कि, में चैतन्य मय हु और कर्म जड हैं, इसलिये मै और कर्म दोनों भि न्न २ (अलग २) हूं, इन कर्मो से मलीन हो रहा था, अब शुद्ध होने, निजरूप प्रगट करने समर्थ हुवा हू जा इन कर्मोसे छुट्या के तत्काल में, मेरे (चैतन्यमय) पदको प्राप्त हो अजरामर अविकार स्वयज्योती परमा नंद परमात्म पदको प्राप्त होवूगा,

ऐसी ही भावना भावता २, और इसी ही भावना प्रमाणे प्रवर्त ता निश्चय प्राणी कर्म चवसे छूट कर मोक्षपद पाता हैं

यह ४ सर्दहना, ३ लिंग, १० विनय, ३ शुद्धता, ५ लक्षण, ५ सुपण, ५ दूपण, ८ प्रभावणा, ६ यत्ना, ६ भावना, ६ स्थान ६ आगार, सर्व व्यवहार सम्यकत्व के ६७ बोल पूर्ण हुये, इन ६७ गुण युक्त होवे उनको व्यवहार सम्यक्त्वी कहना,

ऐसे सम्यक्त्ववंत जीवको दश प्रकारकी रूची (स्वभावसे इच्छा) होती है सो कहते हैं

गाथा—निसग्गुवएस रुइ आणारुइ सुत्त बीय रुइमेव ।
अभिगम्म वित्थाररुइ, क्रिया संखेव धम्मरुइ ॥

श्री उत्तराध्यन सुत्र

१ "निसग्ग रुइ" कितनेक हल्लूकर्मी प्राणी ऐसे हैं कि, गुरूके उपदेश विन, जाती स्मरण ज्ञानसे जिनने पुर्व जन्ममें करणी कर रक्खी है जिनकी आत्मा पुर्ण शुद्ध हुइ है, उन्को किसी वस्तु के सूजोग से जैसे श्रावको देख स्थंभको देख, साडको देख, चुडीयोंका अवाज सूण इत्यादि कारण से जाती स्मरण ज्ञान प्राप्त होवे उससे, जीवादिक नव पदार्थों द्रव्यसे, क्षेत्रसे, कालसे, भावसे, जाणे, यथा तथा श्रधे सो निसग रूची, तथाकोइ अन्यमती अकाम कष्ठ (तप) करते, ज्ञानावरणी कर्म के क्षयो पशम से विभंग अज्ञान पैदाहोवे, उससे जैन मत की शुद्ध क्रिया देख,

अनुराग जगे, उसके पसाय से अज्ञानका नाश हो अवधी ज्ञानके साथ सम्यकत्व प्राप्त होवे, उससे निरारंभी–नि परिग्रही जैन धर्म पर रूची जगे, सो निसग्ग रुची

२ 'उपदेश रुची' सो केवली भगवान के तथा छद्मस्थके उपदेशे से जीवादिक नव पदार्थका जाण होय, और उससे धर्मपर रुची (इच्छा) जगे, सो उपदेश रुची

३ 'आज्ञा रुची' सो राग द्वेष मिथ्यात्व अज्ञान इत्यादि दुर्गुणोंका निकंद करनेवाली, सद्गुणोंमे स्थापन कर अनंत भव भ्रमण मिटाके मोक्ष पंथमें लगानेवाली, ऐसी श्री जिनेश्वर की आज्ञामें प्रवतेने की इच्छा उपजे सो आज्ञा रुची

४ 'सूत्ररुची'– द्वादशांग (१२ अंग) रुप जिनेश्वर की वाणीको श्रवण करता, या आप पोते उसे पढता, अनुभव लगाता, उस्का चमत्कार–रस हृदयमें प्रगमते विशेष २ श्रवन–पठन–मनन करने की इच्छा उपजे, और उस इच्छा–उत्कंठा युक्त ज्ञानका अभ्यास करे सो सूत्र रुची

५ 'बीजरुची' जैसे शुद्ध किये हुये, खात दिये हुये, और पाणी से तृप्त किये हुये, उत्तम खेतमें बीज डालने से एक बीज के अनेक दाणे होते हैं, तैसे हलुकर्मी प्राणी, ज्ञानादि शुभसयोग युक्त गुरवादिक के मुख से सूलका एक ही पद श्रवण कर उसके अनुसारसे अनेक पद गाथा या सपूर्ण शास्त्रका ज्ञान जिसको होवे, विस्तार पावे सो बीज रुची इस रुचीमें पाणी में तेलका बूदका भी द्रष्टांत देते हैं जैसे पाणीमें तेल पसरे, तैसे श्रवण किया हुवा स्वल्प (थोडा) ज्ञान उसके हृदयमें विस्तार पावे सो बीज रुची

६ 'अभीगम रुची' —जिसे अंग उपांगादिकका ज्ञान अर्थ

पर्मार्थ हेतु युक्त धारण किया और उसे उस ही रूपसे दूसरे के ह्रदय में प्रगमा दे सो अभीगम रुची

७ 'विस्तार रुची' —नवतत्व, षट द्रव्यादिक पदार्थ के ज्ञान को द्रव्य गुण पर्याय कर के, तथा अनुमानादि चार प्रमाण करके, नैगमादि सात नय करके, द्रव्यादि चार निक्षेपे करके, इस विस्तार से श्रुत ज्ञानमें किये प्रमाणे जाणपणा होय सो विस्तार रुची

८ 'क्रिया रुची' —सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान, सम्यक चारित्र, सम्यक तप, विनय, इत्यादि युक्त, ५ समिती, ३ गुप्ति आदि क्रिया भावसे करे सो क्रिया रुची

९ 'संक्षेप रुची' —कितनेक ऐसे हलु कर्मी जीव पूर्व के ज्ञानावरणी कर्म की प्रवलता के योग से, विशेष ज्ञानका अभ्यास तो नहीं हूवा, परन्तु सत संगतादि योग से, ही या मोह कर्म की क्षिणता से स्वभाव ही से उसने छोडी है—मिथ्यात्वी—निन्हव—पाखंडी—इनकी संगत थोडे ही ज्ञानसे जिसकी कूमती—मनकी भ्रमणाका नाश होकर सत्य—शुद्ध—जिनेश्वर के मार्ग पर इच्छा जगी सो संक्षेप रुची

१० 'धर्म रुची' —श्रुत धर्म, सम्यकत्वादि, चारित्र धर्म सती आदि यती धर्म, इनको सपूर्ण पणे आराधने की अभिलाषा और धर्मास्ती आदि षट द्रव्यके सुक्ष्म ज्ञान निसंदेह पणे श्रधे, धर्मानुष्ठान करे सो धर्मरुची

इत्यादि अनेक रीतसे सम्यकत्वका स्वरूप जानना यह सम्यकत्व है सो धर्मका मूलहै, धर्म अंगीकार करे पहले सम्यक्त्वकी जरूर है, सम्यक्त्व विन यह प्राणी अनत वक्त धर्म कर आया परंतु कुछ लेखे लगा नहीं—कार्य सिद्ध हुवा नहीं

एक सम्यक्त्व पाया विना, तप जप क्रिया फोक ।
जैसे मुरदो सिणगार वो, समज कहे तिलोक ॥

सम्यक्त्व रत्नको सभालकर रखनेके लिये श्री महावीर परमात्म नें प्रथमाग श्री आचारागजीके प्रथम श्रुत स्कधके चौथे अध्ययनमें जो हित शिक्षा दी है, उसका हमेशा मनन करना सम्यक्त्वीको उचित है

१ भूत भविष्य वर्तमान कालके सर्व तिर्थंकरोंका एक यह ही उपदेश है, कि सर्व प्राण (बेंद्री तेंद्री— चौरिंद्री) भूत (वनस्पती) जीव (पचेंद्री) सत्व (पृथवी—पाणी—अग्नी—वायु) इनकी किंचित मात्र ही हिंसा नहीं होती हो, किंचित ही दुःख नहीं उपजता हो ये ही सत्य सनातन पवित्र धर्म, रागी त्यागी योगी और भोगीको एक-सा अंगीकार करने योग्य है। *

२ ऐसा धर्म ग्रहण कर प्रमादी (आलसी) नहीं होना इसमें अडग रहना

---

* दिगम्बर आम्नाके हस्त-लिखित पद्मपुराण शास्त्रके पृष्ठ ५११ (अध्याय २०१) में लिखा है—सकुल भूषण केवली रामचन्द्रजी से कहते है कि जहां दया, क्षमा, वैराग्य, ज्ञान तप, सयम, नहीं तहां धर्म नहीं जहां सम दम सवर नहीं तहां चारित्र नहीं; जो पापी हिंसा करे, झूठ बोले, चोरी करे, स्त्रीसेवे, महा आरंभी है, महापरिग्रही है, तिनके धर्म नहीं जो धर्म निमित हिंसा करे है, ते अधर्मी अधम गतीके पात्र है, जो मूढ दिक्षा लेय करी आरंभ करे है सो यती नहीं, यतीका धर्म आरंभ परिग्रहसे रहित है, परिग्रह धारक को मुक्ति नहीं, जो हिंसा विषय धर्म जानी षट् काय जीवन की हिंसा करे है, ते पापी है, हिंसा विषे धर्म नहीं, हिंसक को इस भव परभव में सुख नहीं मुक्ती नहीं, जे सुख अरथी, धर्म के अरथी, जीव घात करे, सो वृथा है वगैरा

३ मिथ्यात्वी योंके ठाठ पाट पाखंड देखकर मोहित नहीं होना.

४ दुनियामें-मिथ्यात्वीयों की देखा देखी नहीं करनी

५ जो देखा देखी नहीं करता है, उससे कुमती दूर रहती है

६ उपर कहे धर्म पर जिनकी श्रद्धा नहीं है, उस जैसा कुमती कोइ नहीं है

७ उपरोक्त धर्म प्रभूजीने देखकर, सुणकर, जाणकर, और अनुभव करके फरमाया है

८ संसारमें—मिथ्यात्व में फसे हुये जीव अनंत संसार परिभ्रमण करें हैं

९ तत्व दर्शी पुरुष सदा धर्ममें प्रमाद छोड सदा सावध पणे विचारते हैं

इति प्रथमोद्देशक

१० जो कर्म बंधके हेतु हैं, वो सम्यक्त्वीको कर्म तोडने के हेतु वक्त पर हो जाते हैं

११ जो कर्म तोडनेके हेतु हैं, सो मिथ्यात्वीयोंको कर्म बंधके हेतु हो जाते हैं

१२ जितने कर्म बंधके हेतु हैं, उतने ही कर्म खपाने के हेतू भी जाणना

१३ कर्म पिडित जगत जीवको देखकर कोण धर्म करने सावध न होयगा?

१४ जिनेश्वरका धर्म विपर्याशिक प्रमादियों भी सुणकर तुर्त ग्रहण कर लेते हैं

१५ मृत्युके मुखमें रहे अज्ञानी, आरंभ में तल्लीन हो, भव भ्रमण बढाते हैं

१६ कितनेक जीव नर्कके दुःखके भी शोकीन होते हैं वारवार जानेसे तृप्त न होते हैं

१७ क्रूर कर्मी अती दुःख पाते हैं, और कुकर्म नहीं करे सो सुख पाते हैं

१८ जैसे केवलीके वचन, वैसे ही श्रुत केवली (१० पूर्व धारी) के जाणना

१९ जो जीव हिंसा करनेमें दोष नहीं गिणते है, सो ही अनार्य हैं

२० ऐसे अनार्य लोकोंका उपदेश बावले लोक बके जैसा हैं

२१ जो जीवको मारते नहीं, दु:ख देते नहीं है, सोही आर्य हैं

२२ हिंसा धर्मीको पूछना कि तुमारेको 'सुख खराब लगता है कि दु:ख खराब लगता है'? इसके उत्तरसे सत्य धर्मका निश्चय हो जायगा

इति द्वितियोदेशक

२३ पाखण्डियों की चाल चलनपर लक्ष नहीं देवे, सो ही विद्वान

२४ हिंसाको दु:ख देनेवाली जाणकर त्यागे, शरीर पर ममत्व न करे, धर्म के तत्व के जाण, निष्कपटी, कर्मों के तोडनेमें सावधान सो ही सम्कत्वी

२५ बने वहा लग किसीको दुःख नहीं देवे सो ही धर्मात्मा,

२६ जिनेश्वर की आज्ञा पाले, आत्मा एकली जाणे, तप से शरीर तपावे सो पंडित

२७ पुराना लकड की तरह जल्दी शरीर की ममत न करता, कर्मको जलावे सो मुनी

२८ मनुष्यका अल्प आयु जाण, क्रोधको जीते सो संत

२९ क्रोधादिकसे जगत् दु:खी हो रहा है ऐसा विचारे सो ज्ञानी,

३० कपायको उपसमा के शांत होवे सो सुखी

३१ क्रोधामी से जले नही सो सच्चा विद्वान

—इति त्रयोदेशक

३२ प्रथम थोडा, फिर विशेप, यों अनुक्रमे धर्म तप की वृद्धी करनी

३३ शांतता, संमय, ज्ञान, इत्यादि सद्गुणों की वृद्धीका हमेशा उद्यम करना

३४ मुक्तीका मार्ग वहुत विकट हैं

३५ ब्रह्मचर्यको निभाणे और मोक्ष प्राप्त करने 'तप' योग्य उपाय है

३६ जो पहिले संयमी–धर्मी हो कर भ्रष्ट हो गये, वो कुछ भी काम के नहीं

३७ मोहरूप अन्धकारमें प्रवर्तनेवालेको परमेश्वर की आज्ञाका लाभ नहीं होवे

३८ जिनने गये जन्ममें जिनाज्ञा न अराधी, वो अब क्या आराधेंगे?

३९ ज्ञानी होकर आरंभ से बचे, उसकी प्रशसा होती है

४० आरंभ से अनेक दु ख पैदा होते हैं

४१ धर्मार्थी जन प्रतीबंधको त्याग, एकांत मोक्ष तर्फ द्रष्टी रखते हैं

४२ किये कर्मके फल भुक्तने पडेंगे, ऐसा जाण कर्म बंधसे डरना

४३ जो उद्यमी, सत्य धर्ममें वर्तनेवाला, ज्ञानादि गुणमें रमने वाला, पराक्रमी, आत्म कल्याण तर्फ द्रढ लक्ष रखनेवाला, पापसे निर्वतनेवाला, यथार्थ लोकको देखनेवाला होता है, उसे कोइ भी दुःख देने समर्थ नहीं हैं, यह तत्व दर्शी सत्य पुरुषोंके अभिप्राय हैं जो इस अभिप्राय प्रमाणे वर्तेगा वो आधी, व्याधी, उपाधी, आदी सर्व दु खसे निवर्तकर अनंत, अक्षय, अव्वाबाध सुख की प्राप्ती करेगा

समत्त दसण रत्ता, आनियाणा सुक्क लेसामो गाढा ।
इय जे मरंती जीवा, सुलाहा तेर्सि भवे बोहि ॥

उत्तराध्यन अ ३६ गाथा २६२

पूर्वोक्त कहे हुये मुजब सम्यकत्व दंशण के विषे जो जीव प्रेमानुराग रक्त हैं, किसी प्रकारका नियाणा (फलकी इच्छा) नहीं करते हैं, और सुक्ल (निर्मल) लेश्या (प्रणाम) युक्त जो हैं, वो इस भवमें और पर भवमें सुलभ (सहेज) बोध (सद्ज्ञान) को प्राप्त कर स्वल्प कालमें अखंड सुखके भोगी होते हैं

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषीजी के सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी विरचित श्री "जैन तत्वप्रकाश" ग्रथका द्वितीय खंडका "सम्यकत्व" नामक चतुर्थ प्रकरण समाप्तम् ॥

प्रकरण ८ वा.

"सागारी धर्म."

श्रावक *

श्री सर्वज्ञ पदाब्ज सेवन मति शास्त्रा गमे चिन्तना,
तत्वातत्व विचारणे निपुणता सत्संयमो भावना,
सम्यक्त्वे रचता अघोप शमता जीवादीके रक्षणा,
सत्सागरि गुणा जिनेन्द्रे कथिता येषा प्रसादाच्छिवम्

श्री सर्वज्ञ जिनेश्वर भगवानकी सेवा (आज्ञा आराधनेमें) जिनकी मती (बुद्धी) लगी है, सदा शास्त्रार्थ आगम (जिनेश्वर कथित) की जिनके मन में चिंतवन–विचारणा बनी रहती है, सदा तत्वातत्व (अच्छा बुरी—न्यायान्याय—धर्म धर्म) का निश्चय करनेमें बुद्धी फेलाते हैं अघ (पाप) को उपसमाने–खपाने सदा उद्यम करते हैं, त्रस स्थावर जीवोंका रक्षण (प्रति

* 'श्रावक' शब्दमें ३ अक्षर है, श्र—श्रद्धा, व—विवेक, क-क्रिया अर्थात् जिस मनुष्यमें श्रद्धा हो और जो विवेक पूर्वक क्रिया करे सो श्रावक अथवा श्रावक शब्द की 'श्रु' धातु है श्रु-श्रवण करना, अर्थात् जो मनुष्य धर्म कथा श्रवण करे सो श्रावक

पालन) हमेशा करते हैं ऐसे 'सागारि' (गृहस्थवासमें रहके धर्म पालनेवाले) के गुण की क्यहा-परुपणा जिनेश्र-तिर्थंकर भगवानने करी है, जो जिनेश्वर की कृपा (मार्गानुसारी होने) की अभिलापा होय तो उपरोक्त गुणका स्विकार करो

न्यायो पातधनोयजन्गुण गुरून्सद्दी स्त्रिवर्ग मज ।
अन्योन्या गुण तदर्ह ग्रहिणी स्थाना लयो ही मय ॥
युक्ताहार विहार आर्य समिती प्रज्ञ कृतज्ञोवशी ।
शृण्वन्धर्म विध्रि दयालु रघभी सागर धर्मचरेत ॥

न्यायसे धन उत्पन्न (पैदा) करनेवाले, गुणवत के गुण के अनुरागी, तीन वर्ग (धर्म, अर्थ और काम) के सेवनेवाले, सद्गुरु की सेवामें अनुरक्त, ग्रहिणी (स्त्री) को धर्म मार्गमें प्रवर्तानेवाल, या कुल वधू जैसे अपगुणों की लज्जा युक्त रहनेवाले, मर्यादा युक्त प्रवर्तनेवाले योग्य आहार (भोजन)व्यवहार (व्यापार) करनेवाले, सत्पुरुषों की सगत करनेवाले, सदा सुमती (सु बुद्धि) वत, महा बुद्धीवत, कृतज्ञ (किये उपकार के माननेवाले,) षट्रीपु (काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मत्सर, यह छे शत्रू) को स्व वसमें करने वाले सदा शास्त्र के श्रवण करनेवाले यथा विधी धर्म के अराधनेवाले, महा दयालु, पाप से डरनेवाले, यह 'सागार' (श्रावक) धर्मके आचार (आदरने योग्य गुण) वताये इन गुण युक्त होवे सो श्रावक

अनतानु बंधी, अप्रत्याख्यानी, और तीन मोहनीय, यह ११प्र न्तीका क्षयोपसम होता है तब जीव पंचम देशविरती गुणस्थानको प्राप्त होता है, सर्व विरती [साधू] की अपेक्षा से देश विरती कहे जाते हैं

सागार—आगार युक्त धर्म सो सागार धर्म, साधूका मार्ग अनगारका है, अर्थात् घरका त्याग कर, दिक्षा ग्रहण करे पीछे, तावे उम्मर जिनेश्वर की आज्ञामें चले त्री करण त्री योग से सपूर्ण पच महाव्रत पाले सो अनगार और श्रावक घरमें रहकर १२ व्रत है, उसमें से

१-२ यावत् १२ जितनी सक्ती होव उतने ग्रहण करे, इसमें कर्ण-योग की भी विशेषता नहीं हैं मरजी होवे तो एक कर्ण, एक योग से, और मरजी होवे तो तीन करण, तीन योग से व्रत ग्रहण करे

द्रष्टात —साधू के व्रत तो मोती जैसे हे जैसे मोती आधा-पाव ग्रहण नहीं होता है, लेना होय तो सपूर्ण लिया जाता है तैसे साधूका मार्ग जो अगीकार करना धारेगा उन्हे पांच ही महाव्रत धारण करना पडेगा और श्रावक के वृत सुवर्ण जैसा है शक्ती होय तो मासा ग्रहण करो, और शक्ति होय तो तोला भर तैसे ही, मरजी होय तो एक वृत और शक्ती होय तो बारे ही वृत धारण करो

समण कहीये साधु, उपाशक कहीए भक्त अथार्त् साधूकी भक्ति करनेवाले श्रावक होते है इसलिये श्रावकका दूसरा नाम समनोपासक भी कहा जाता है

श्री ठाणायंगजी सूत्रमें साधू ओंकी अपेक्षा से आठ प्रकारके श्रावक कहे है

आठ प्रकारके श्रावक,

१ 'अम्मापिइ समाणें' साधू ओंके सर्व कार्य आहार-पानी वस्त्र-पात्र-औपधी प्रमुखकी चिंता रख साता उपजाव और कदाचित प्रमाद वश होकर साधू समाचारी से चूक जाय तो आँखो देख कर भी स्नेह रहित न होवे, यथा उचित विनय सहीत हित शिक्षण देवे सो माता पिता समान श्रावक

२ 'नाय समाणे' —हृदयमें तो साधूओंपर बहुत स्नेह रक्खे, परन्तु विनय भक्तीमें आळस करे, और संकट समय यथा योग्य प्राण झोंकके साहाय्यता करे, सो भाइ समान श्रावक

३ 'मित्त समाणे' —कोइ कारण सिर साधू ओंसे रूस जाय परन्तु अपने स्वजनोसे भी साधु ओंको अधिक समजे सो मित्र समान श्रावक

४ 'सव्वीत समाणे' अभी मानी, कठिण ह्रदयी, छिद्र गवेषी, कदा चित प्रमाद वश साधू चूक जाय तो उस दोष को प्रकट करे सो शोक तुल्य श्रावक

५ 'आय समाणे' —साधुओंका प्रकाशा सूत्रार्थ जिसके ह्र-दयमें यथार्थ विंवित होवे भूले नहीं सो अदर्श (आरीसे काँच) जेसा श्रावक

६ 'पडाग समाणे' साधू ओंके वचन का जिसको निश्चय (भरवसा) नहीं, मुर्खो–पाखन्डीयो के भर मान से जिसका चित प ताका की तरह फिर जावे, सा पताका समान श्रावक

७ 'खाणु समाणे' साधू ओंका सद्बोध श्रवण करके भी अप-ना असत्य अग्रह (पकडी हुइ वात) सा त्याग न करे, सो सीला–खूटा समान श्रावक

८ 'खरट समाणे' –हित शिक्षा देने वाले साधू ओंकी निंदा करे तथा अयोग्य शब्दो से अपमान करे, कलक चडावे, सो अशूची भिष्टा जेसा श्रावक

इन ८ में शोक समान और खरट समान श्रावक मिथ्या द्रष्टी हैं परन्तू साधूके दर्शन को आते हे इसलिये श्रावक कहे जाते हे

'श्रावक के २१ गुण'

अखुद्दो रुवथ, पगइ सोमो लोग पियाओ ॥
अकूरो भीरु असठ, दक्खिन लजालू दयालू ॥१॥
मझस्थ सुदिठी, गुणानुरागी सुपक्ख जुत्तो सूदिह ॥
विसेसन्नु वृधानुग, विनीत कयनु परिहिय कारिय लद्धलखो ॥२॥

१ 'अखुदो'–अक्षुद्र, अर्थात् क्षुद्र (खराब) स्वभाव (प्रकृती) करके रहित सरल, गंभीर, धैर्यवंत, अपराधीका भी खोटा नहीं चिंतवे

२ ' रुवव ' –रूपवत, तेजस्वी, अगोपाग की हीणता रहित पा
ची इन्द्रि पूर्ण सुदर और सशक्त होय

३ ' पगइ सोमो ' प्रकृतिका सौम्य–शीतल–क्षमावत शात, स
र्वसे हिलमिल कर चलनेवाले, विश्वास नीय होए

४ ' लोग पियाओ ' इस लोक में परलोकमें, और उभय (दोनो)
लोकमें विरुद्ध निंद नीय–दु ख प्रद होय सो काम नहीं करे १ गुणवत
निंदा दुर्गुणी मूर्ख की हाँसी, पुज्य पुरुषों की ईर्ष्या, बहुत लोकोके
विरोधी की साथ मित्रता, देशके सदाचारका उल्लंघन, सामर्थ्य हो स्व
जनो की असाह्यता, इत्यादि इस लोक विरुद्ध कार्य गिने जाते है
२ खेती कर्म, कोट वालपणा, ठेकादारी, वनकटाइ इत्यादि महा हिंशक
कर्म इस लोक विरुद्ध नहीं भी गिने जाय तो भी परलोकमें दु:ख दा
ता होते है ३ सात दुर्व्यश्न के सेवन * सो दोनो लोक विरुद्ध कर्म

---

* स्लोक—घूतच मांसच सुराच वैश्या पापर्धि चौर्य परदार सेवा।
एतानि सप्त कु—व्यस्नानि लोक घोराति घोर नर्क गच्छति॥

अर्थ १ जूवा खेलने वाले, या सट्टे के वैपारी घरका धन गमाके चोरि
आदि कर्म कर इज्जत गमा दिवाला निकाल, राज, पचके गुन्हगार बन
नर्कादि दुर्गतीमें चले जाते हैं २ मांस अहारी निर्दयी हो पशू ओंकी
घात करते १ मनुष्यां कों भी मारडालते है और इन घोर कृत्यसे नर्क
मे जाते है १ मदिरा–दारु पीने वाले शुद्ध बुद्ध नष्ठ हो मिष्ठ भोजनका
लुब्ध बन, माता, भगीसे और से व्यभिचार कर नर्क में चले जाते है ४
वैश्या गमनी जाती धर्मसे भ्रष्ठ हो धन बुद्धि अग्रू गमा और गरमी आदि
रोगसे अकाल मृत्यु पाकर दुगतीमें चला जाता है, १ पारधी शिकारी
निष्टूर कठोर हृदयी धन अनाथ निष्पराधी जीवो का वध कर नर्क में
यमोंके हाथ अपनी भी वैसी ही दशा–खराबी कराता है ६–७ चोरी
और परस्त्री गमन करनेवाला सर्व लोकमें निंदनीय बन, राजा पचका
गुन्हगार हो अकाल मृत्यु पाकर दुगति को चला जाता है, एसे यह ७
दुर्व्यसन सेवन दोनो लोक विरुद्ध है

गिना जाता है इन तीनों को छोड, सर्व जनको प्रिय वल्लभ लगे ऐ-
से काम उदार प्राणाम से दान, विशुद्ध सील ब्रह्मचार्य, शुभाचार विनय
नम्रतादि धारण करे

५ 'अक्रो' क्रूर द्रष्टीवाला नहीं होवे किसीके भी छिद्र नहीं
देखे छिद्र ग्राहीका चित सदा मलीन रहता है

६ 'भीरु पापका'–कुकर्मका लोकोपवादका पर भवका अनाचा-
रका डर रक्खे जो डरेगा सो ही पापसे बचे

७ 'असठ' मूर्खाइ पणा रहित होवे, दगा–कपट नहीं करे क्यों
कि कपटीका चित सदा मलीन रहता है कपटी पर जगतका विश्वास
नहीं रहता है इसलिये सरल रहे ऽ

८ 'दक्खिन' दक्ष—विचक्षण निघामे समजनेवाला, अवसरका
जाण होय

९ लजालू लोको की लज्जावत, व्रत भग की कु कर्मकी लज्जा
रखे, लज्जावंत कितना ही दुर्गुणी हुवा तो ठिकाणे आता है लज्जा
सर्वका भुषण है ❋

ऽ श्लोक—यथा चित तथा वाचो, यथा वाचस्तथा क्रिया;
धन्यस्त त्रितय यषां विष वादो न विद्यते

अर्थ—जैसा चित वैसा वचन और जैसा वचन वैसी क्रिया, इन ती
नोमे जिनको विसवाद नहीं है उनको धन्य है

❋ लज्जा गुणोघ जननी जननी मिव,
स्वा मत्यन्त शुद्ध हृदया मनुवत मानाम् ॥
तजस्विन' सुख मसुनपि सत्य जन्ति
सत्य व्रत व्यस निनो न पुन' प्रति ज्ञाम् ॥ ११ ॥

अर्थात् — लज्जा है, सो गुणोके समूहको उत्पन्न करने वाली और
अपनी माताकी तरह शुद्ध हृदय और स्वाधीन रहने वाली, प्रतिज्ञाका
तजस्वी और सत्य व्रत धारन कर ने वाल पुरुष नहीं छोड़ते पर तु अपना
प्राण भी सुख से त्याग कर देते है

१० ' दयाल ' दु:खी प्राणीको देखकर अनुकंपालावे यथा शक्ति साता उपजावे वणे वहां लग उसका दु:ख मिटावे मृत्यूके मुखसे छूडावे दयाल होवे 'दयाही धर्म का मूल' है

११ ' मझत्थ ' मध्यस्त प्रणामी होय, किसी भी अच्छी और बूरी व स्तुपर अत्यंत राग द्वेश न धरे शुष्क–लुख वृत्ति रक्खे क्यों कि अत्यत प्रीती पणा अत्यंत निबड–मजबूत कर्मोका बंध करता है फि वो छुटने मुशकल हो जाता है, और लूख वृत्तिसे स्थिल कर्मोका बंध होता है, सो शिघ्र छूट जाता हैं

लालाजी रणजीतसिंहजीने कहा हैं–

जो समद्रष्टी जीवडा, करे कुटंब प्रतिपाल,
अतर घट न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल ॥१॥

१२ ' सुदिठी ' सदा सु–भली द्रष्टी रक्खे, किसिका भी बूरा न हीं चिंतावे, किसी भी पदार्थको विकार द्रष्टीसे नहीं देखे, सौम्य दलते नेत्र रक्खे

१३ ' गुणानुरागी ' ज्ञानवंत, क्रियावत, क्षमावत, धैर्यवंत, वि नीत, धर्म दिपानेवाला, ब्रह्मचारी, संतोषी, इत्यादि गुणेके धारक जो होवे, उनके गुणका अनुराग करे–उनपे प्रेम धरे, बहुमान करे, साता उ पजावे, कीर्ती करे, गुण दिपावे खुशी होवे की अपने धर्ममें ऐसे उ त्तम पुरुष की उत्पती हूइ तो इनसे अपने धर्म की उन्नती होवेगा ऐसा अनुराग धरे

१४ ' सुपक्ख जुतो '–न्याय पक्ष धारण करे अन्यायी पक्ष का त्यागन करे तब कोई कहेगाकी तुमने राग द्वेष करने की प्रथम ना कही, और फिर अच्छेका पक्ष धारण करने की कहते हो? उनसे कहा जाता हैं, कि जेहरको जेहर और अमृतको अमृत कहनेमें कूछ हरकत नहीं हैं, जो जेहर अमृत एक जानेगा तो जरूर मिथ्यात्व लगेगा, खो टेको खोटा और अच्छेको अच्छा जानेगा तब ही खाटेको छोडेगा और सु पक्षी उसे भी कहतेहैं कि जिसका परिवार स्वजन कूटम्ब के लोक अच्छे

धर्मात्मा शुद्धचारी, धर्म कृत्यमें साहाय के करने वाले होवे

१५ 'सुदीह' अच्छी दीर्घ—लंबी द्रष्टीवाला होवे कोई भी कार्य विगर विचारा नहीं करे जिस कार्यमें बहुत लाभ और क्लेश (मेहनत) थोडी होवे, बहुत जन स्तुती श्लाघा करे, ऐसा कार्य करे जो कर्ता कर्मके निपजानेको और फलको जाणेगा वो लोक अपवादसे बच सकेगा विगर विचारे करने वाला पीछे पछताता है

१६ 'विसेसन्न' विज्ञानी होय अच्छी बुरी सर्व वस्तुका जाण होए क्यों कि अच्छी २ देखी और खोटीको नहीं देखी होगा वो खोटी से कैसे बचेगा ? नवतत्वेंमे भी ३ जाणने योग्य, ३ आदरने योग्य और ३ छोडने योग्य हैं इन तीन ही का जाणपणा विस्तारसे करना पडता है, गायका और आकका दूध, सुवर्ण और पीतल एकसा होता है अजाण ठगा जायगा *

१७ 'वृधानुग' अपने से गुण ज्ञानमें जो वृद्ध होवे उनकी सेवा भक्ती करे तथा आप ज्ञान, सत्य, सील, तप, धर्मादी गुणों करके वृद्ध होवे ‡

---

* सवैया—कैसे कर केतकी कणेर एक कह्यो जाय,
भाक और गाय दूध अतर घणेरो है
पीरी हो सरेही पण रोप करे कचन की
कहा काग वानी कहां कोयल की टेर है
कहां भानु तेज कहा आगीयो विचारो कहां,
पुनमको उजाला कहां अमावस्य अन्धेर है
पक्ष छाडी पारखा निहाल देखो नीके करी,
जैन विना और धेन अतर घणे रो है

‡ श्लोक—तपः श्रुत धृति ध्यान विवेक यम संयम
ये वृद्धास्ते ऽ प्रशस्यते न पुनः पलितां कुर ॥ १ ॥

अर्थ–तपश्चर्यामे, धैर्यमे, ज्ञानमे ध्यानेमे विवेक मे नियम (पच्चखाण) में संयम (इन्द्रीय दमन) में, इत्यादि गुणो मे जो वृद्ध (बुढ) होय उनको वृद्ध (बडे) कहना परंतु श्वेत, धोल बाल (केस) पलेको वृद्ध(बड) नहीं कहे जाते है

१८ 'विनीत' सब से सदा नम्रभुत हो रहे 'धर्मका मूल विनय ही है' विनय से ज्ञान, ज्ञानसे दर्शन (श्रद्धा) दर्शनसे चारित्र और चारित्रसे मुक्ती की प्राप्ती होती है

१९ 'कयनु' किये हुये उपकारका माननेवाला होवे, कृतघ्नी न होवे कहा हैं 'कृतघ्न महा भारा' इस पृथ्वी पर कृतघ्नीका जवर बोजा है ऐसा जाण श्रावक उपकारी योंके उपकारसे ऊरण होने की अभीलाषा रखते है *

२० 'परिहियथे कारीये' जो काम करने से अन्यका हित औ अपनेको दुःख होता होय तो अपने दुःखकी दरकार नहीं करता परोपका

* ठाणा यगजी सुत्रमें फरमाया है कि तीन जनोंके उपकार से ऊरण होणा मुशकिल है, १ माता पिता से कि जिनोंने अति कष्टसह पुत्र की प्रयस्ती करी है, उनके उपकारसे उरण होणे उनको सदा शत पाकादि तेलका मर्दन कर स्नान करावे, फिर सर्वालंकार से विभुषितकर मनोग भोजन करावे, किंबहुना वो जीवते रहे वहा तक उनको अपनी पीठपर उठाये फिरे, किंचित मात्र मन नहीं दुःखावे तोभी उरण नहीं होवे हां! जो श्री जिनेंद्र प्रणित धर्म में उनको स्थापन कर समाधीसे आयू पुर्ण करावे तो उरण होवे उपकारका बदला देना चुकाया जाणणा २ सेठ का कि जिनोंने दारिद्री पर तुष्टमान हो द्रव्य (पूंजी) देकर या अनेक तरह साहाय्य देकर उसे श्रीमंत बना सुखी कर दिया और कर्म योग वो सेठ दारिद्रता निर्धनता को प्राप्त हुये उनको वो अपना सर्व द्रव्य समरपण कर मायित्र की तरह चाकरी करे तो भी उरण न होवे परन्तु जिनेन्द्र प्रणित धर्मम स्थापन कर समाधी भाव युक्त आयुष्य पुर्ण कराव तो उरण होवे ३ धर्माचार्य गुरुसे कि जिनोंने फक्त एकही आर्य धर्मका सद्बोध रुप शब्द सुन के देवलोक म पहोचाया वो देवता उन गुरु महाराज की यथा योग्य भक्ती करे, परिसह उपसर्ग दुर्भिक्षा दिसे बचावे तो भी ऊरण नहीं होवे परन्तु जो कधी धर्माचार्य जी जिनेंद्र प्रणित धर्मसे चालित होगये होए, उनको किसी भी योग्य उपायसे पीछे धर्म म स्थिर करे तो ऊरण होवे

करे कहा है कि 'परोपकाराय पुन्नाय' परोपकार करना यह महा पुन्य उपराजनेका स्थान है

२१ 'लद्ध लखो' जो ग्रहण करने जेसा ज्ञानादि गुण है, उसका लक्ष पूर्वक ग्रहण करे, जेसे लोभी धनका, ओर कामी स्त्रीका लालची होता है, तैसे श्रावकजी ज्ञानादि गुण ग्रहण करने के लालची होवे सदा नया २ ज्ञान ग्रहण करे कहा है 'खंड खडे तु पंडेतु' खड २ कर के अर्थात् थोडा २ ज्ञान ग्रहण करके भी बुद्धीवत थोडे का लमे पडित होते है एकेक गुण ग्रहण करने से अनेक गुण का धारी हो जाते है इसलिये सदा नवीन २ ज्ञानादि गुण ग्रहण करनेको लब्धलक्षी होना सामायिक सूत्र से लगा कर द्वादशागका पाठी होवे, सम्यक्त्व की क्रिया से लगा कर, सर्व वृती की क्रिया तकका अभ्यास करे पहिले चतुर्थ कालमें देखिये चपानगरीका पालित श्रावकको कहा है, 'निग्गंथ पव्वयणे, सावय सेवि कोवीये' निग्रथ प्रवचन (शास्त्र) का पालित श्रावक पारगामी था ओर राजमतीजी को कहा है कि 'सीलवंता बहु सुया' शीलवती बहोत शास्त्रकी जाण थी इन वचनोंसे समजा जाता है, कि आगे श्रावक श्राविका शास्त्र के जाण थे इसलिये अब्बी भी श्रावक श्राविकाको शास्त्रका जाण होना चाहिये यह २१ गुण युक्त होवे उनको श्रावक कहना शक्ती युक्त गुण स्वीकारना

'श्रावकके २१ लक्षण'

१ 'अल्पइच्छा' —थोडी इच्छा—विषय तृष्णा शब्द रुपादिकका विषय कमी करे विषयमें अत्यंत ग्रध न होवे लुप्त वृत्ति रहे

२ 'अल्पारंभ' छे कायका आरंभ वढावे नहीं, अनर्था दंड सेवन करे नहीं, जितना आरंभ घटता हो उतना घटानेका उद्यम करे

३ 'अल्पपरिग्रही' धनकी तृष्णा थोडी, कु कर्म—कुव्यापार की इच्छा नहीं, जितना प्राप्त हुवा है, उतनेपर संतोष रक्खे मर्यादा सकोचे

४ ' सुशील ' ब्रह्मचर्यवत, तथा आचार गोचार प्रशंसनिय रक्

५ ' सुवृत्ति ' व्रत प्रत्याख्यान शुद्ध निरतीचार चडते प्रमाणसे पा

६ ' धर्मिष्ठ ' नित्यनियम प्रमाणे धर्म क्रिया करे

७ ' धर्म वृत्ति ' मन वचन काया के योग सदा धर्म मार्ग प्रवृताता रहे

८ ' कल्प उग्रविहारी ' जो जो श्रावक के कल्प (आचार) उसमें उग्र विहार करनेवाले अर्थात् उपसर्ग उत्पन्न हुये भी स्थि प्रमाण रक्खे

९ 'महा सवेग विहारी ' सदा निव्रत्ति मार्गमें तल्लीन हो रहे

१० ' उदासी ' ससारके कार्यमें सदा उदासीन व्रति युक्त रहे

११ ' वैराग्य वत ' सदा आरम परिग्रहसे निवर्तने की अभी लाषा रक्खे

१२ ' एकात आर्य ' निष्कपटी—सरल—बाह्याभ्यंतर एक सरीखे रहे

१३ सम्यग मार्गी ' सम्यक ज्ञान दर्शन चरीता में चरीतें सदा प्रवर्त

१४ ' सु साधू ' धर्म मार्गमें नित्य वृद्धि करते आरम साधन करे प्रणाम से अव्रत सर्वथा वध करदी है, फक्त ससार विवहार साध ने द्रव्यसे हिंशा करनी पडती है * इसलिये साधु जेसे ही है

१५ ' सुपात्र ' ज्ञानादि वस्तुका विनाश न होवे तथा दान फली भूत होवे

१६ ' उत्तम ' मिथ्यात्वी, सम्यक्त्वी आदिकसे गुणाधिक श्रेष्ट है

१७ ' क्रिया वादी ' पुन्य पापके फलको माननेवाले शुद्ध क्रिया करनेवाले

---

* हिंशाकी चौभङ्गी – १ द्रवस हिंशा और भावसे हिंशा सो कषाइ आदिक जीवका वधकरेसो २ द्रव्यसे हिंशा और भावसे अहिंशा सो हिंशाके त्यागी मुनीराज को आहार विहार आदिक म विन उपयोग हिंशा निपजेसो ३ भावसे हिंशा और द्रवस दया द्रव लिंगी तथा अभव्य साधू कर ४ और द्रवस भावस दानो स अहिंशा सो अप्रमादि तथा केवल ज्ञानी मुनिराज पालत है

१८ 'आस्तिक्य' द्रढ श्रद्धावत जिनेश्वरके या साधूके वचनपर पूर्ण प्रतीतवत

१९ 'आराधिक' जिन वचन अनुसार करणी करनेवाले शूद्ध वृति

२० 'जैन मार्ग प्रभावक' तन, मन, धन, करके धर्म की उन्नती करे

'अर्हतके शिष्य' साधू जेष्ट शिष्य, और श्रावक लघू शिष्य, ऐसे अनेक उत्तमोमत्त गुणके धरण हार श्रावक होते हैं.

ऐसे अनक गुणके धारक श्रावकजी बारह व्रत ग्रहण कर अव्रत को रोकते है

"श्रावक के १२ व्रत"

पाच अणवृत, साधुके पाच महाव्रत की अपेक्षासे छोटे होते है, अर्थात् देशसे जा मर्यादा करते हैं, उसे अणुव्रत कहते है

"पाच अणु व्रत."

'पहिला अणुव्रत थुलाओ पाणाइ वायाओ विरमणं' अर्थात् पहिले छोटे वृतमें स्थुल (मोटा) प्राणी (जीव) का अतिपात (हिंसा) * से वेरमण निवर्तना अर्थात् जीवकी हिंसा दो तरह की है, १ सूक्ष्म सो त्रस स्थावर किसी प्राणीकी किंचित् मात्र वध–हिंसा नहीं करनी यह सर्वथा हिंसासे तो गृहस्थको निवर्तना मुशकिल हैं २ स्थुल वडी हिंसा सो त्रस (हलते चलते) प्राणी की हिंसा नहीं करना इन त्रस प्राणीक ४ भेद, १ वेंद्री (लट कीडे प्रमुख) २ तेंद्री (ज्यू कीडी पटमल प्रमुख) ३ चौरिंद्री (मक्खी पतग विच्छु प्रमुख) ४ पचेंद्री (नर्क स्वर्ग मनुष्य पसू पक्षी प्रमुख) इनका 'जाणी' जाणकर इन्को 'प्रीटी' देखर मारने की बुद्धी कर के किसी को मारे नहीं 'आकुटी'

* श्लोक–पचेन्द्रियाणि त्रिविध बलचाउछ्वास निश्वासस्तथैवनायु। प्राणा दशैते भगवद्भिरुक्ता। स्तेषां वियोजी करन्तु हिंसा ॥१॥

अर्थ–पांच इद्रि, तीन बल, श्वाशोश्वास, और आयूष्य; इन दश प्राणाका वियोग करना, उसे हिंशा भगवतने फरमाइ है

वैरभाव करके हणे (मारे) नहीं और हणावे (मरावे) नहीं जाव जीव (जीवे) वहा लगे 'दुविह तिविहेणं दो करण' तीन जोगसे—करुं नहीं मन वचन कायसे, करावूं नहीं, मन वचन कायसे फक्त करनेको अच्छा जानना, खुल्ला रहा, क्यों कि संसारमें बैठे हैं, और कोइ हिंसा का सुन खुमी आ जावे तथा राजा प्रमुख शिकार खेलकर झगडा जीतकर आवे, उनकी अनुमोदन(प्रशसा)करनी पडे, या खूशाली जाणे निजराणा महोत्सव काना पडे तो वो अलग पहिले व्रतमें आगार स्व संबंधी—अपना कुटुंब दास दासी या गाय घोडा आदि पशु जिनके शरीरमें रोगादि कारणसे त्रस बेंद्री आदि जीवों की उत्पति हे गइ हो, तथा ' शरीर माहे पीडाकारी ' अपने शरीरमें किम प्रमुख जीवोंकी उत्पत्ति हो, गइ हो और उनको निवारने रेच मलम पट्टी औषध दिक करना पडे, तथा ' स अपराधी ' कोइ शस्त्रादिकसे अपनेको मारनेको आया या, शत्रू (परचक्री) अपने सामे चडाइ करके आया तथा चोरादिक अपना अपराध किया और उसका वध करना पडे इन कारन से जो त्रस प्राणी का वध करने से, तथा पृथ्वी खोदते, पाणी पीते गणनेमें से निकल जाय ऐसे बारीक त्रस जीव अग्नी प्रजालने हवाकी झपटमें, वनस्पतिका छेदन भेदन करते, विना उपयोग से, तथा बचाने का उपाय करते २ हलते चलते सोते बैठते, जो कोइ त्रस जीवका वध हो जाय तो पाप तो लगे, परन्तु व्रतका भंग न होवे इन कारण उप्रात त्रस जीवकी हिंसा से सर्वथा निवृते, सो श्रावक और जो त्रसकी हिंसा जान कर होवे ऐसे काम करउसे श्रावक नहीं कहना चाइस ठाणेमें कहा हे बारे अव्रत (पांच इंद्री मनकी छे कायकी)में से पत्रम गुणस्थान वृतीको इग्यारे अव्रत लगती हे त्रसकी अव्रत से निवर्त हे त्रसकी हिंसा टालने नीचे लिखे काम से बचना

१ प्रहर रात गये पीछे, और दिन ऊगे पहिले, जोर से बोलना नहीं, क्या कि विसमरी (पाली) जाग कर बेठे हुय मक्खी प्रमुख जीवोंका भक्षण कर जाय, तथा, पडोसी जाग्रत होय तो मेथून पचन ख

इन पीसनादि अनेक क्रिया करे २ रातको छाछ (मही) नहीं करना ३ लीपणा नहीं बूहारना (झाडना) नहीं भोजन (आहार) नहीं निपजाना ४ मार्गमें नहीं चलना ५वस्त्र नहीं धोना६स्नान नहीं करना ७ भोजन * नहीं करना इतने काम रातको नहीं करना इन से

---

* मृतस्वजन गोत्रेपि, सूतक जायते किल,
अस्तगते दीवानाथे, भोजनं क्रियते कथ ॥१॥

जो स्वजनाका वियोग (मृत्यू) होता है, तो भी भोजन नहीं करते हो, तो दिवसनाथ अस्त हुए कैसे करे ?

रक्तं भवती तोयानी अन्नानिपिशिजानीष,
रात्री भोजन सक्तस्य ग्रासतेन मासभक्षणं ॥ २ ॥

रात्रीको अन्न मास और पाणी रक्त तुल्य होता है, जो रात्री भोजन करते हैं, वो ग्रास १ म मांस खाते हैं

उदकं नेव पातव्य, रात्रीवात्र युधिष्ठर,
तपस्विना विशपिण गृहिणा च विवकीना ॥ ३ ॥

हे युधिष्ठर ! धर्मात्मा गृहस्थको और तपस्वी साधूको रात्रीमें पाणी भी नहीं पीना चाहिये

येरात्री सवदाहारं, वर्जयंति सुमेधसे,
तेषां पक्षोपवासस्य, फल मासेन जायते ॥ ४ ॥
महाभारत

जो सर्वथा रात्रीको आहार नहीं करते हैं, उनको एक महीनेमें १५ उपवासका फल होता है

नैवाहूतिर्न च स्नान नश्राध देवतार्चन,
दानयाविहित रात्रौ, भोजनतु विशेषत ॥ १ ॥
स्कंधपुराण

रात्रीको देवताको आहूती स्नान श्राध, देवपूजा, दान वगैरा नहीं होवे, तो भोजन किस तरह किया जावे ?

हृन्नाभि पद्मसंकोच श्चंडरोचिरपायतः ।
अतोनक्तं न भोक्तव्य, सूक्ष्मजीवादनादपि ॥ १ ॥
आयुर्वेद

हृदयकमल और नाभीकमल सूर्य अस्त हुवे पीछे सकोच पाते हैं इस लिये रात्री भोजनसे रोग पेदा होता है, और सूक्ष्म जीवोंका सहार होता है

मेधां पिपीलिका हन्ति यूका कुर्या जलोदरं ।
कुरुत मक्षिका वांति कुष्ठरोगं च कोलिका ॥

त्रस जीव की घात और आतमहत्या होनेका कारण होता है ८ संडास (पायखाने में) दिशा नहीं जाना, क्यों कि उसमें असंख्य छमुछिम मनुष्य पैदा होकर मरजाते हैं ९ खड्डेपर फटी भूमी पर, या तुप राख के ढगलेपर दिशा नहीं जाना, उसमें जीव मृत्यु पाते है १० मोरीमें नालीमें पेशाब नहीं करना, तथा स्नान नहीं करना ११ देखे विना धोबीको कपडे धोणे नहीं देने १२ खाट पिलगको पाणीमें न डुबाना तथा, ऊपर गरम २ पाणी नहीं डालना १२ दिवाली प्रमुख पर्वको जो घरमें खटमलादिक जीव होय तो लीपणा छपणा नहीं करना १४ सडा धान, सडी हुइ कोइ भी वस्तूको धुप (तडके) में नहीं धरना १५ आटा दाल शाख, लकडी, छाणे, घट्टी, ऊखल बर्तन इत्यादि कोइ वस्त देखे विना वापरनी नहीं १६आटा दाल शाख गौबर वगैरे बहुत दिन तक स ग्रह करके रखना नहीं १७ चौमासेके कालमें घरमें वर वनादिकके सुकुमाल सणकी तथा ऊनकी पूजणीसे पूजे विन वापरना नहीं, क्यों कि कुंथु वादिक जीव बहुत पेदा होते हैं, (१८) चूला परेडा घटी ऊखला दि, चवरवा (छत) विन रखना नहीं (१९) पाणी छणे विन वापरना

कटेकादारु खंडं च वितनोति गलव्यथाम् ।
व्यजनांतर्निपातितं तालू विध्यति मक्षिका ॥ १ ॥

रात्रीको भोजनमें कीडी आवे तो बुद्धिका नाश होवे, ज्यूंसे जलो दर होवे, मख्खीसे उलटी होवे, करोलीयेस कोढ निकले, कांटा आवे ता कठमाल होवे, बालसे स्वरभंग और बिछूके, कांटेसे तालू भेद, इत्यादि क भयगुण जाण रात्री भोजन त्यागना,

चिडी कमेडी कागला, रात चुगण नहीं जाय;
नरदेह धारी मानवी, रात पड्या क्यों खाय ॥ १ ॥
आखो जीमण रातरो, करे अधरमी जीय,
ओहर आणछा कार, दे नरकारी नीर ॥ २ ॥

नहीं § [२०] पाणी छाणे पीछे रही हुइ जीवाणी दूसरे सरोवरमें तथा पाणी विगरके ठिकाणे न्हाखना नहीं (२१) वने वहा तक हिंसक व्यापार दाणेका किरेणेका, मिल (गिरनी) का करना नहीं (२२) दूधका, दहीका, घीका, तेलका, छछका, पाणीका, विगेरे प्रवाही (पतले) पदार्थके वस्तुके वर्तन खुला रखना नहीं [२३] दीवा पिलसोद चूला खुला रखना नहीं (२४) सड हुये धानको पाणीमें निवाणमें घोना नहीं (२५) बोर भाजी मुर्हे प्रमुख जो जो त्रस जीव की वस्तु नजर आवे सो खाणा नहीं (२६) गायादिकके वाडेमें तथा जिहा मच्छरादिक जीवकी उत्पत्ति होव वहां धूवा करना नहीं (२७) जूतको नाल खीले लगाना नहीं, और पहली लगी होए सो पहरना नहीं इत्यादिक जो जो त्रस जीव की हिंसाके काम

---

§ श्लोक—सवरसरेण यत्पापं, कैवर्तस्यहि जायते ।
एकाहेनमोती, अपूत जल सग्रहः ॥

अर्थ—मच्छी पकडनेवाला भोइ बारे महीनेमें जितना पाप करता है, उतना पाप एक दिन विन छाणे पाणी वापरने वालेको लगता है

विशार्त्यंगुलमानंतु, त्रिशदंगुलमायतो ।
तद्वस्त्र द्विगुण कृत्य, गालेय जलमा पिवेत् ॥
तास्मिन वस्त्र स्थितान् जीवान् स्थापयञ्जलमध्यते ।
एव कृत्वा पिबेत्तोयां स याति परमांगती ॥

२० अगुलका चाडा, तीस अगुल का लबा, उस वस्त्रको दोवडता कर उसमें पाणी छाणकर वावरे, और उसमे रहे जीव पीछे उसही सरोवरमें डाले सो पम गती पावे

जलम झीणा जीव थाग नहीं कोपर,
अण छाण्यो जल पीवे ते पाणी वापर;
काठे कपड छाण्या विन नहीं पीजिए
जीवाणीका जतन सुगत स्यूं कीजिए

हैं, उनको समद्रष्टी श्रावक उपयोग रखके सदा वर्जे ऐसे त्रस की हिं सासे सर्वथा निवर्ते और स्थावर (पृथवी आदिक) की यत्ना करे जो आरंभ लगता होय उस उप्रांत आरभके त्याग करे

१ पृथवी काय—कच्ची मिट्टी विना कारण मकान वंधाना, जमीन खोदना, सचेत मिट्टी से दातण करना, हाथ धोने, चूला का ठी वना के रखणे, या लूण गेरु प्रमुख प्रथवीकाय का बेपार इत्यादि जो जो पृथवी कायका आरभ है उसको घटावे, विना वाजवी न करे

२ अपकाय—पाणीका जीव नित्य कूवे, तलाव, वावडी, नल प्रमुख की मर्यादा करे, विशेप न लगावे, और स्नान करनेका काम प डे तो निवाण (सरोवर) में प्रवेस कर (अंदर जाकर) स्नान न करे, क्यों कि अपने शरीरको लगा हुवा गरम पाणीका फरस जितने दू पाणीमें वह के जाता है, वो सव जीव जल मरते हैं कितनेक मि थ्यात्वीयोंकी देखावेख मुरदे की राख हड्डी पाणीमें डालते हैं, यह भी श्रावकको करना अयोग्य है क्यों कि मरें पीछे इस शरीर के नाश वंत पदार्थको कैसी ही यत्ना करो तो भी जीव स्वर्गमें नहीं जाता है, वो तो उस्की करणी के प्रभाव से जिस गतीमें जाना था वहा चल गया वो राख और हड्डी पाणीमें पडती है वहां के पाणीका हड्डीयों की उष्णतासे नजीकमें रहे मच्छादिक त्रसजीवोंका भी घमशाण हो जाता है कितनेक भालिये मिथ्यात्वीयों की देखा देखी ग्रहणमें सव घरमेंका पाणी ढोल देते हैं पूछने से कहते हैं, ग्रहण लग जाता हैं। परतु इतना नहीं विचारते हैं कि घरमें ढके हुवे पाणीको ग्रहण कहां से लग जाता है ? जो ग्रहण की छाया से वचा है, उसको ढोल के जिस पर ग्रहण की छाया पडी है उसको घरमें लाते हैं अच्छा, पा णीको ग्रहण लगता है तैसे दूध दही घी तेल आदि पदार्थको भी

लगता होगा तो फिर उसको क्यों नहीं डालो ? तव कहते है, उसमें द्रोव रखदेते है। अच्छा, तो फिर पाणीमें क्यों नहीं रखी ? परन्तु मुफत का पाणी ढोलनेका कौन विचार करे ? इनकी देखादेखी श्रावकको क भी नहीं करना ग्रहण लगने से कुछ भी अपवित्रता या चद्र सूर्यको किंचित् दु ख नहीं होता है श्रावककी करणी में कहा है, कि " घृत तणी परे वापरिये नीर, अणगल नीरमें मत धोवजे चीर " इस ओकडी को ध्यानमें लेनी चाहिये और घी, से भी ज्यादा कीमती पाणीको जानजा चाहिये, क्यों कि घी नहीं मिलने से कोइ मरता नहीं है, परन्तु पाणी नहीं मिलने से मर जाता है कितनेक पाणी पिये पहिले झलक डालते है (उपरका थोडा पाणी ढोल दते है,) यह भी अयोग्य है, और होली के दिनो में भी पाणी का ढोलना गेहर का खेलना आदिख्याल करना नहीं चाहिये इत्यादि पाणी की यत्ना श्रावकको सदा करनी

३ तेउकाय, अग्नीका, आरंभ विना व्याजबी श्रावकको नहीं करना चाहिये जो ओढनेका वस्त्र होय तो तापमें नहीं बैठना अग्नी ताप से रूप का विनाश होता है, शरीरमें सर्द गरमी कि बिमारी होती है, और वस्त्रादि लग जायतो मृत्यू से गांठ पडती है और अग्नी अग्नी, के ख्याल बहुत करते है, यह अनर्थक हिंसक लोकों के देखादेखि नहीं करना आतसवाजी दारु के ख्याल नहीं छोडना, इस स बहुत अनर्थ पैदा हाता है बहुत वक्त आदमी जैसे मर जाते है, तो दूसरे की क्या कहना ? अग्नी के आरंभका व्यसन तमाखु पीनेका यह भी श्रावकको नहीं चाहिये इसमें अग्नी के आरंभ उपांत तमाखु गांजे से शरीरका नुक्सान क्षय रोग होता है दिवाली के दिन लाखों के देखा देखी विशेष दीवे लगना, तथा आतस बाजी (दारुखाना) छोडना भी योग्य नहीं है, क्यों कि इसमें अग्नी सिवाय और भी पतंगिया आदिक त्रस जीव की घात होती है और लक्ष्मी जानेके बदल लक्ष्मीको (धनमें) लाय (अग्नी) तो पहिली ही लगाते हो, तो फिर लक्ष्मी कैसे आवेगी ? धूप दीप यज्ञ होम इत्यादि धर्म निमित अग्नी

का आरंभ जैनीको करना योग्य नहीं है अभी दश ही दिशाका जबर शस्त्र है

४ वायू काय श्रावकको पंखा लगाना योग्य नहीं हैं तथा झूलेमें हिंडोले में हीचना नहीं बने वहा तक उघाडे मुंहसे भी नहीं बोलना इस वायु काय की संपूर्ण दया पलनी बहुत ही मुशकीलहै

५ वनस्पति काय सो ' श्रावक ' बणे वहा तक सर्व लिलोती हरी कायका त्याग करे नहीं तो सचित-सजीव-कच्ची लिलोत्रीका त्याग करे, इतना ही नहीं तो ३२ अनत काय * का तो भक्षण तो क्या परन्तु स्पर्श ही नहीं करे

* १ सर्व कंद जाती जैसे स्त्रीका पट चीर फाडकर कचा गर्भनिकालते हैं, तैसे पृथवीको फाड कर कचा (कद कभी पकता नहीं हैं) कंद निकालते हैं २ सूरण कंद ३ वज्रकंद ४ हरी हलदी ५ अद्रक (आदा) ६ कचूरा ७ सतवारी ८ विराली ९ कुआरि १० थोहरी (थूवर) ११ गिलाइ (गुलवेल) १२ लसण १३ वसकरेला १४ गाजर १५ साजी वृक्षजाती है १६ लोडक (पद्मकदी) १७ गिरकरणी (नवे पत्तेकी बेल) १८ खीरकद १९ थेगकद २० हरीमोथ २१ लोण वृक्षकी छाल २२ खिलूडा कद २३ अमृत (अमर) वेल २४ मूला २५ भूफोडा २६ विरुवा (धान अनाजके अंकुरे) २७ ढकपथवो २८ सुकरवाल (कांदा) २९ पालको शाख ३० कच्ची इमली जिसम गुठली न बधी होय ३१ आलू ३२ पिंडालू यह ३२ अनतकाय तथा और भी मूग, चणे प्रमुख पाणीमें भिजानेसे अंकुर फूट आये सो भी अनतकाय गुठली वाले फलके अदर गुठली नहीं बधी सो तथा जिसकी नश सधी गाठ दिखती है सो जिसको तोडनेसे बराबर दो टुकडे हो जावें सो, पत्तेकी नशे दिखती हो सो नागरवेल प्रमुख, जिसको तोडनेसे दूध निकले सा, तथा सभी टूटनेसे वो जगह गरम १ लगे सो, इन लक्षणोंवाली वनस्पतिम भी अनत जीव गिणे जाते हैं यह सर्व श्रावक लोक के खाने योग्य नहीं है

इत्यादिक पांच ही स्थावरोंकी यथा सक्त यतना करनी मनमें विचारना की अवी जगतमें कान से बेरा आख से अन्धा एक इद्री करके हीन होता है, उसकी भी अपनेको दया आती है, कि बेचारे दु खी हैं, अपग है तो जो चार इद्री करके हीन हुये अर्थात् कान नहीं (बेरे) आँख नही (अन्धे) नाक नही (गुंगे) मुख नहीं (मुके) फक्त स्पर्श इद्री (काया) ही जिनके हैं, उन की तो विशेष ही दया पालनी चाहीये जो इन पाच स्थावरोंने पूर्व जन्ममें महा पाप किये हैं, जिससे बेचारे एकेंद्री पणा परवश पणा पाये हैं उनके कर्म तो वो भोगव रहे हैं अब अपण उनको सताकर—दु:ख देकर नवीन कर्मोका बंध किस लिये करना चाहिये ? * ऐसे श्रावक प्रथम व्रतमें त्रसकी हिंसाका सर्वथा त्याग कर स्थावर की यतना करे §

* गाथा—वह मारण अब्भक्खाण दाण परधण विलोवणाइण ॥
सव्व जहन्न उदओ, दस गुणिओ इक्कसिकयाण ॥ १ ॥
तिव्वयरे पउसेसय, गुणिओ सय सहस्स कोडिगुणोय ॥
कोडा कोडि गुणोवा, हुज्जविवागो बहुत रोवा ॥ २ ॥

अर्थ-किसीको मारना झूटा आल (कलंक) देना, पर धन हरण करना, यह पाप एक वक्त किये हुये जघन्य (थोडे से थोड) तो दश गुने उदय आते है जो विशेष द्वेष भाव रखकर किये होवे तो सो गुने भोगवने पडे, उससे भी ज्यादा द्वेष से किये होवे तो हजार गुने लाख गुने क्रोड गुने जावत् कोडाकोड गुने उदय आते है ऐसी तरह किये हुवे पाप भवोभव में दु:ख दाता होते है

§ ग्रन्थम कहा है कि—साधूजी तो वीस विश्वा दया पालते हैं, और श्रावकोंसे सवा विश्वा दया पलती है सो—

गाथा—जीवा सुहुमा थूला, संकप्पा आरंभ भवे दुविहा ॥
सवराह निरवराहा, सा विक्खा चेव निरविक्खा ॥ १ ॥

अर्थ—जीव दो प्रकारके है १ त्रस और २ स्थावर इनकी साधूजी तो सर्वथा प्रकारे रक्षा करते है और श्रावकसे स्थावरकी रक्षा होनी मुशकिल है, इस लिये वीस विश्वा दया में से दश विश्वा कम हुये और त्रस जीव की हिंसा के दो भेद १ संकल्प से (जाणकर) और २ आरंभ करते त्रस जीव मरजाय सो संकल्प कर त्रस की हिंसा के श्रावक के त्याग है, और आरंभ म यत्ना करते भी त्रस जीव मरते है, इस

पहिले व्रत के ५ अतिचार ❋ पहिला थूल प्राणातीपात वेर मण वृतका पच अइयारा पयाला अर्थात् पहिले वृतमें थूल (वडे-त्रस) प्राणी की घात (हिंसा) से निवृते (छोडे) इसके पाच अतीचार पाताल–अधोगतीमें ले जानेवाले जिनको–'जाणीयव्वा नसमारियव्वा' जाणपणा तो जरूर करना, पण समचारना–अगीकार करना नहीं क्यों कि जाणेगा सो ही उस से वच सकेगा जैसे जाणेगा की यह जेहर है, तो उस से वचेगा, और नहीं जाणेगा वो अमृत के भाव

लिये वरोक्त दया विश्वामें स पाचही विश्वा दया रही और सकल्प स भी हिंसा करने के दो भद है, ' स अपराधी और निरअपराधी, निर अपराधी को मारने के श्रावक के त्याग है, और चोर शत्रु सिंह आदी अपराधी जीवोंको मारने का कधी प्रसग होजाता है इस लिये पांच विश्वा में से अढाइ (२॥) विश्वा दया रही और निरअपराधी की हिंसा के दो भेद १ सपेक्षा और २ निरापेक्षा निरापेक्षा (विना कारण) तो निरअपराधी को मारन के श्रावक के त्याग है, परन्तु सपेक्षा निर-अपराधी की भी दया पलनी मुशकिल है कारण घाडे के बेल के चलाते सहम वायुकादि मार दे तथा स्वभाविक शरीरमें कृमी आदि की उत्पति होने से औषधादी उपचार करे इसलिये अढाइ विश्वा म से श्रा वक के सवा [१।] विश्वा ही दया रही ! इतनी भी गुणवत श्रावक पाल सकते हैं'

❋ जैसे किसी वस्तू के पचखाण हैं, और वस्तु किसी ठिकाणे पडी हैं उसको लेनेको उठे सो अतिक्रम, उसके पास जावे सों व्यतिक्रम, उसको ग्रहण करे सो अतिचार, और भोगव लेवे सो अनाचार इसमें स अतिक्रम व्यतिक्रम तो ससारियोंको सहज ही लग जाता है, इसका पाप तो विशेष कर पश्चाताप से शुद्ध होता है, अतिचार आलोयणा से तथा मिथ्या दुकृत देनेसे, आर अनाचार प्रायछित ले तप करने स शुद्ध होय

जेहरका भक्ष कर लेवेगा इसलिये जाणपणेकी जरूर है अब अतीचार कौन २ से 'तंजहा' सो जैसे हैं, वैसे 'आलोउ' कहता
१ बंधे–निबड बंधन से नहीं बांधे अर्थात् कुटुंब मित्र दास पशु (गाय बेल भेंस घोडे इत्यादि) जो अपने २ कार्य–काममें रीति प्रमाणेंमे चलते होवे, उनको किसी प्रकारका बंधन करना—दुःख देना योग्य नहीं हैं और वो कभी चूक जाय, हुकम उदल जाय, और जो क्षमा न रहे, तथा वो क्रूर द्रष्टी और कठोर वचन कहने से वो न समजे तो कदापि बंधनमें बांधना पडे तो कठण—मजबूत निबड बंधनसे बांधना नहीं, कि जिससे कापा पड जाय, घाव पड जाय, हलन चलन करने कि शक्ती न रहे अग्नी आदिक उपद्रव होनेसे वो अपनी जान नहीं बचा सके, ऐसा नहीं बांधे ऐसा बांधनेसे कोइ वक्त मृत्यु निपज जाय तो पचेंद्री की घात निपजे महा पातक लग जाय तथा सूवा—तोता—मैना—इत्यादि पक्षीयोंको पींजरमें रखना सो भी बंधन है, कदाक कोइ पक्षीके घाव लग जाय, और उससे उडा नहीं जाय, उस की रक्षा निमित पींजरमें रखना पडे तो, आराम हुये बंध मुक्त करे, सुवर्ण पिंजर और मिष्ट भोजनको भी पक्षी बंधन समजते हैं

२ 'वहे' कहता कठोर मारसे मारे नहीं अर्थात् बंधनादिकसे न समजे, क्षमा न रहे और उनको जेष्टिका (लकडी) आदिकका प्रहार करना पडे तो निर्दय होकर ऐसा प्रहार न करे कि जिससे उसके घाव पड जाय, रक्त छूट जाय, मुर्छा खाकर पड जाय, प्राणमुक्त हो जाय, ऐसा नहीं मारे और जिस ठिकाणे पहिले प्रहार किया हो उस ठिकाणे पर पीछा दूसरी वक्त प्रहार न करे, और मर्म स्थान सिर ग्रुदा गुह्येंद्री इत्यादि ठिकाणे न मारे क्यों कि उससे बहुत दुःख होता है

३ 'छविच्छेह' कहता–अवयवका छेदन करे नहीं अर्थात् स्वजन

मित्र पुत्र दास पशूके अंग उपांग इंद्रियोंका छेदन नहीं करे, बींदे नहीं, कितनक पुत्रादिकको दागीने–गहणे पहरानेको उनके नाक कान छेद त (बींधते) हैं यह कर्म जब्बर दस्तीसे श्रावकको करना योग्य नहीं हैं जो उनकी मरजी होवे तो उनकी वो जाने और कितनेक गाय भैंस अश्व आदिक पशूको सोभाके लिये नाथ पेरानेके लिये, नाक कान छेदते हैं. कानमें कंगुरे पाडते हैं, तथा साड बनाने त्रिसूल चक्र इत्यादि गर्म कर लगाते हैं पगमें खीले ठोकते हैं सींग पूछ काटते हैं. यह सोभा बनाने करते हैं, परंतु यों नहीं जानते हैं कि विचारे अनाथ जीवोंको नाहक त्रास होती है यह काम श्रावकको करना अनुचित (अयोग्य) है लोही विकार गुमडा आदिक निवारने अंगोपांगका छेदन करना पडे तो वो बात अलग है, परंतु आराम हुये पहिले उनके पास कोइ भी काम लेना नहीं, तकलीफ देना नहीं दया रखनी चाहीये

४ ' अइभारे ' कहता अतीभार भरे नहीं अर्थात् दास घोडा गाडी पोठिया इत्यादि पर गजा (शक्ती) उप्रांत तथा मर्यादा (जिस देशमें जितने २ सेरमणादिकका प्रमाण है उस) उप्रांत (ज्यास्ती) भार [बजन] भरे नहीं उसने परवश पणेसे आजीवीका चलाने वो भारको उठा भी लेवे तो उसके जीवको विशेष दुःख होता है, कभी मृत्यू भी निपज जाता है, और घोडे की पीठपर चाठी आदी पडी होय, बेल की गरदन घीसा गइ होय, तथा पशु लंगडता होय, खान पान विने या वृद्ध अवस्थाके कारणसे दुर्बल निर्बल हो गया होय, रोगादि कसे हीन शक्ती हुइ होय, कमी उमर हीण शरीरका होय, इत्यादि प शुओं या एसे ही मनुष्यपर बजन बिल्कुल नहीं लादना वो कभी लाभके मार उठना चावे, और अपनी शक्ती उसको साता उपजानेकी होवे तो विना महीनत लिये ही उसे साता उपजाणी, और निरोगी हुठ

पुष्टवजन उठाने योग्य पशुओंपर भी कभी वजन लादे तो देश कालकी या उस की शक्ती मर्यादा उप्रांत न भरे, मनुष्यसे अव्वल पूछ ले, कि तूं इत्ना वजन उठा सकेगा ? वो हा कहे तो बात अलग हे, परन्तु जब रदस्ती से नहीं देणा, और पशू पर प्रमाण से वजन भरा है, तो उस पर सवारी नहीं करनी सवारी करनी होय तो वजन की कसर रखनी और कोशोकी मर्यादा बंधी है, उस उप्रात नहीं चलाना, दया रखनी

५ 'भत्त पाणी विछेद' कहता अहार पाणी की अतराय नहीं देणी अर्थात् स्वजन मित्र दास पशू पक्षी आदि किसीने कोइ प्रकार के छोटा तथा बडा अपराध किया होय और आपसे क्षमा न होती हो य तो, उस अपराध के बदलेमें उसे भूखा प्यासा न मारे, क्यों कि भुख प्यास से जीवको बहोत तलतलाट (उचाट) रहता है क्रोध और धेटाइ (जडता) की वृद्धी होती है यों करने से उसके मनकी फिकर दूर हो जाती है, और वो जास्ती बिगड जाता है यह मनुष्य के लिये कहा अब जो पशुने किसी प्रकारका अपराध किया हो तो, वो तो बेचारा पशू अज्ञानी ही है बचा कोइ काम बिगाड देता है, तो सर्व कहते है जाने दो जी, अज्ञान, बालक है उस बच्चको छोड देते, है, तैसे उसको भी छोड देना और समजगिर से जो कूछ अपराध होता है, तो वहा जरुर विचार करना कि यह बिगाड इसने जान-बूज नहीं किया है कुछ कारण से या परवसपणे से किया है, तो उस बचन मात्रका ही दंड बहुत है परन्तु भुखे प्यासे नहीं रखना और भी कभी कोइ एसाही अन्याय कर दे की इसको भूख प्यासका दंड दिये विन सुधारा न होवे तो, उसको भोजन (आहार) नहीं देवे वहांतक आप भी नहीं जीमे कर्मीक ज्वरादिक रोग मिटाने भूखा प्यासा रखना पडे तो यह बात अलग है

और भी कितनेक दुष्कालादिक की वक्कमें, तथा अंग हीन निकम्मा हो जावे, वृद्ध जावे, तथा गाय भेस दूध देती बद हो जावे तब उनका दाणा वाग्र वंद कर देते हे चारा घास कमी कर देते है, या घर बाहिर निकाल देते है, और कितनेक कृतघ्न तो कसाइ आदिक पापी को वेच दते है यह भी बडी अयोग्यता–नीचता है, एसेही जो अपना कुटुम्ब निकम्मा हो जाय, मा बाप वृद्ध हो जाय तो ऐसा ही घातकीपणा उनकी तर्फ गुजारते हो क्या ? अरे मतलबसे तो सब ही पोपते हैं, परन्तु विन मतलबसे पोपे उनकी बलहारी है ? और उनका ही धन पाया लेखेंमें गिणा जाता है जो सच पूछो तो तुमारे कुटुंबसे तो तुमारे उपर पशु ज्यादा उपकार कर सक्के है देखिये –दूध दही, घी, छाछ मक्खन, [मसका] मावा, मलाइ और किस्तुरी जेसे उत्तम पदार्थ तृण भक्षी—निसार आहारी पशूओंसे ही प्राप्त होता है खेतमें हल चलना, कुवेंमेंसे पाणी निकालना, माल परगाव ले जाणा गर्म वस्त्रका साज देणा, इत्यादि अनेक काममें सहाय भुत पशु ही होते है सु मित्र की तरह प्रेम करने, सु शिष्यके जेसे भूख प्यास सीत ताप खाड पहाड ग्राम वन इत्यादि दू ख की दरकार न रखते कार्य साधने (करने) साधु की तरह थोडे आहारसे संतोप करने, सीपाइ की तरह रखवाली करने इत्यादि अनेक कामोमे पशु ही साहायक होते हे अरे पशुकी निर्माल्य वस्तू भी कितनी उपयोगमें आती है, सो देखिये ? गोमय (गोबर) से घर स्वच्छ करने' मुत्र से रोग गमाने, केससे गरमाल करने, इत्यादि काम आते हैं और मर पीछे अपना उपयागी पणा कायम रखने हैं चमडेसे अपने पावका रक्षण करते हे हड्डीये खेतीके खातमे काम आती हैं नशो बंधनमें काम आती हे इत्यादि अनेक महान उपकारी पशूको अपना मतलब

पूरा हुवे पीछे खान पान बंध करना, छुट्टा छोड देना, या कसाइयों-को देना यह वडी कृतघ्नता है यह काम किसी भी धर्मात्माओंको करना लाजिम नहीं हैं अपने शरीरकी जैसी की अपने कुटुंब की जैसी ही उनकी प्रती पालन करे सो ही दयावंत धर्मात्माके लक्षण हैं

यह पहिले अणुव्रतके पंच अतिचारोंका स्वरूप जाणकर इन दूषणसे अपणी आत्माको बचावेगा, दया भगवती की आराधना करेगा वो ऐश्वर्यता, निरोगता, वल, जस, जय, सर्व प्राप्त कर दोनों भवोंमें सुखी होकर अनुक्रमें मोक्षके अनंत सुख पायगा ऐसा जाण यथा शक्ति वृत ग्रहण कर शुद्ध पालो ❋

२ 'दूसरा अनुवृत थूलाओ मुषाइ वायाओ वेरमणं' दूसरा अणु (छोटा) वृत (पाप निव्रत) सो थूल (मोटा) मुषाइ (मृषा—झूट) से, वेरमण (निमते) सो अर्थात् गृहस्थावासमें रह कर सर्वथा प्रकारे साधू जैसे सत्य वचनी होना तो बहुत मुशकल है, क्यों कि संसारमें सहज स्वभावसे बोलते २ झुट बोला जाता है, जैसे, उठरे उठ पेहर दिन आया, और दिन तो घडी भी नहीं आया होगा इत्यादि जो सर्वथा झूट से निव्रता नहीं जाय तो भी श्रावकको पाच प्रकार की झूट नहीं बोलनी

१ 'कन्यालिक' कन्या के लिये अलिक (झुठ) नहीं बोलना *अर्थात् अपनी अपने कुटुंब की या परकी कन्याका लग्न (व्याव)* करना होय, तब कोइ सगे पूछे तब कुरुपीको रुपवंत, काणी, अन्धी, बोवडी, लुली, निर्बुद्धी, कुलेछनी, गुणहीन, अंगहीन, इत्यादि दुर्गण

❋ गाथा—धमाण रखषठा, फीरंति पहभो जहमहेयत्थ ॥
पढमवय रख्खणठा कीरासि वयाइ सेसाइ ॥ १ ॥

अर्थात—धनकी रक्षाके लिये जैसे पाल करत है तैसे पहिले व्रतकी रक्षाके लिये सब वृत पाल रुप जानना

की धरनेवाली होवे उसको फसाणे, दुर्गुण दाक खाली। प्रशंसा करके लग्न करादेवे फिर उस कन्या के दुर्गुण प्रगट हुये वो बेचारा जन्म भर दुःखी होवे और जिसने फंदेमें डाला है, उसे क्या आशीर्वाद देगा सो विचारो जैसा कन्याका कहा तैसे ही वर आश्री भी जानना सद्गुणी कन्याका लग्न दुर्गुणी अयोग्य वर के साथ करने से भी महा अनर्थ निपजता है इस कालमें महाजन जैसी उत्तम जाती में कन्याविक्रय करनेका अति नीच रिवाज चला है यह बडी शर्म की वात है अरे उत्तम जाती के वनिये ! कन्या के घरका पाणी भी नहीं पीते हैं ! तो उस विचारी अवलाको वेंच रुपे घरमें धरना कहां रहा ? कन्याविक्रय करनेवालेका हृदय कसाइ से भी अधिक कठिण होता हैं कसाइ तो पशूको मार के वेंचता हैं और वो तो अपने पेट के गोले (बच्चे) को वेचके ताव उम्मर रीबा २ के मारते हैं अरे बारह वरस की कन्याको साठ वर्ष के बूढे की साथ देनी ! 'बीबी घर जोग,' और 'मीया गोर जोग,' ! इस कन्याविक्रय के रिवाज से उत्तम कुलमें व्यभिचार, ओर माता से अन्याय, बालविधवापना, गर्भपात, बालहत्या, आतमघात, महाक्लेश, इत्यादि अनेक उपद्रव पैदा होते हैं देखिये मुसलमानों की नेकी, गरीब से गरीब हुवा तो भी कन्या की एक कोडी नहीं लेता है अपणी शर्का प्रमाण देता है तो जैन जैसे दयामूल पवित्र धर्मात्माको यह कसाइ ओर चंड्डाल से भी नीच विश्वासघाती काम करना बिलकुल अयोग्य है ऐसे ही नीच कुव्यसनी, मिथ्यात्वीको भी कन्या न देनी चाहिये यह स्वआत्मा पर आतमा ओर जगत डूबाणका काम नहीं करना चाहिये। इत्यादि कन्यालिक कर्म कहे जाते हैं तथा इस कन्यालिक शब्दमें सर्व द्विपद (दो पगवाली) वस्तू समजना जैसे किसीको दत्त (खोले) पुत्र

लेना होय तो दुर्गुणी पुत्र को लालचमें पड सद्गुण बतावे, फिर दुर्गुणी निकले उसको दुःखदाइ होवे, ऐसे ही किसी के कोइ नोकर रखना होवे तो, दुर्गुणीको कहे यह नोकर तो सत्यवत, सीलवंत, संतोषवत, दयावंत, प्रमाणिक, सहासिक, उद्यमी है, इत्यादि गुण कहकर रख देवे, फिर वो चोर जार निकल जाय तो रखनेवालेको पश्चाताप होवे ऐसे ही तोता मेना काबर प्रमुख पक्षी निर्गुणीका सद्गुणी कह बेंचे, कि इसे गाना नाचना बात करना अच्छा आता है और फिर वो वैसा नहीं निकले तो उसे पश्चाताप होवे इत्यादि द्विपदीक झूटसे निवर्तना

२ 'गवालिक' गायके लिये झूट नहीं बोले अर्थात् गाय थोडा दूध देती होवे तो उसे बेंचनेको किसी पुद्गलोंका संजोग मिलाकर, लेप लगाकर उसके स्तन फुगाकर कहे की देखिये इसके स्थन कैसे दूधसे भरे हैं, बहुत दूध देती है, बडी गरीब है, किसीका भी नुकसान नहीं करती है इत्यादि गुण कहके बेंच देवे ले जानेवाला कहे मुजब गुण नहीं निकलनेसे पश्चाताप करे इस गवाली शब्दमें सर्व चौपद वस्तु समज लेना गाय जैसे ही भैंस, बकरी, आदि पशुको जानना हाथी, घोडा, ऊंट, बैल विगेरे पशू की झूठी प्रशंसा करके बेंच देवे, और कहे मुजब गुण नहीं निकलनेसे उसे पश्चाताप होवे ऐसा गवालिक असत्यको सर्वथा वर्जना

३ 'भूवालिक' कहतां पृथवीके लिये झूट नहीं बोले भूमी दो प्रकार की १ खुली भूमी सो खेत, अडाण, बाग, वाडी इत्यादि में धान, फल, फूल, भाजी, की पैदा थोडी हाती होय और आप विशेष बतावे कि इसमें बहोत अच्छा और जादा अनाज पैदा होता है इन बागोंमें मीठे मधूरे सुगधी बहुत फल फूल होते हैं कुवा बावडी तला

अविक,सरोवर,को,कहे-इसका पाणी,बहु ,स्वादीष्ट—अखूट—स्वच्छ सु गंधी-है यह सब,खुली (,उघाडी,) भूमीका ,जानना ,ऐसे ही २ ढकी भूमी ,घर, दुकान, हवेली,,महल,,दुकान, नोरा प्रमुख जो ,कबे ,बंधे होय या ,उनमें मृतादि ,तथा सर्पादि का भय,होय, तथा,किस प्रकारका दुर्गुण होय तो भी, उसकी झूटी ,बडाइ ,करके कहे,यह ,निरुपद्रवी ,सा ताकारी मकान हैं यह सर्व वस्तु कहे प्रमाणसे उलटी निकल-जाय तो उस लेनेवालेको जबर पश्चाताप होवे तथा भूवालिक शब्दमें सर्व अपद (-पग विना की) सचित अचित मिश्र ,तीनों वस्तु जानना तक हलकेको चडते कहे, खोटा नाणा चलावे, किरियाणादिके काममें, भाव, तावमें झूट लगावे यह,सर्व ,झूट भूमालिक ,शब्दमें ,सर्व अपद वस्तु ग्रही हैं

४ 'थापण मोसो ',कहता ,थापणको दबाकर झूट बोले अर्थात कोइ विश्वासी मनुष्य अपने मित्र ,जान, अती मुशक्कलसे न्याय अ न्यायसे धन भेला ,कर अपने स्वजन मित्रसे छिपाकर रखणे के लिये मि त्रके यहा रखे कि यह धन मरे वक्तपर काम आयगा फिर वो धन ,देख मित्र द्रोहिता धारण ,कर लोमके ,वश ,विश्वास घातसे ,न डरता उस ,धन को छिपा देवे, गला डाले, बेच देवे, और उसका मालक मांगने आ वे तव एकदम नट जाय, और वश पुगे तो अपणी चोरी छिपाने उस गरीब बेचारेको झुटा चोर बनाकर उलटी फजीती करे कीजिये इससे उसके जीवको कितना दु ख होता होगा ? क्यों कि उसने मित्रपर विश्वास रख छिपाकर रखा था, उसका कोइ साक्षी दार तो है ही नहीं अरे इस नीचतासे कितनेक बेचारे प्राणमुक्त हो जाते है, कितने घाव ले हो जाते हैं, कितनेक झुर २ क मरते हैं और कितनेक उसको पू रा फजीत भी करते हे अरे बधु ! ऐसे घोर पातक, महा अन्याय का

से जो द्रव्य संपादन करते हैं, उस धनसे उनको कौनसा सुख प्राप्त होता है, ? और अन्यासे धन उपार्जन किये कितनेक काल टिकता है ? इसका भी विचार करना, और यह थापण मोसा कर्म अवस्य व र्जना यह थापण मोसा है चोरिमें, परन्तु इसमें झूट बोलने की मू ख्यता है, इसलिये इसको दूसरे व्रतमें लिया है

५ 'कुडी साख ' किसी के आपसमें लेन देन हूवा है, उसे आप पहिचानता नहीं, परन्तु उनके बोलने उपर से सत्यासत्य का निर्णय हो, गया और मालुम पडा की अपणा स्वजन मित्र तो साफ झूटा है, फिर उसका पक्ष धर, मुलायजेमें आकर राज में, पंचमें, झूटी साक्षी देकर झूटको सचा, और सचेको झूठा बनावे, तथा किसी प्रतीतदार मनुष्य के पास आकर कोइ कहने लगे की मै साफ झूटा हू, परन्तु मेरे पर यह महान संकट आकर पडा है, मेरी इज्जत जायगी, आप प्रती तदार हो अमूक झगडे में मूजे सचा कर देवो तो मै आपको अमुक रकम (लांच) देवुगा उस लाच के लोभमे आकर झूटी साक्षी (ग- वाइ) भरे बेचारे सत्यवत का लेवालको झूटा बनावे, उसकी इज्जत गमावे, यह महा अनर्थका काम है इत्ना तो सत्य समजाना के—

दुहा—पाप छिपाया न छिपे, छिपे तो मोटा भाग,
दावी दूबी न रहे, रुइ लपेटी आग ॥१॥

रुइमें दवाइ अमी छिपी न रहती है, यों पाप भी छिपाये नहीं छिपते है जब वो पाप प्रगट होते है तब मानहीन और राज पंच दंड भोगवे और परभवमें मूकता आदि अनेक दु ख भोगवे

यह पांच प्रकारकी मोटी झूटके श्रावकको दो करण (बोले नहीं, बोलावे नहीं) और तीन जोग (मन—वचन—काया) से सोगन होते है इसमें फक्त इन पांच काम करनेवाले को अच्छा जानने की

छुट्टी रही है निश्चयमें तो पांच ही अकर्त्तव्यके कामों की खुसी नहीं लानी, परन्तु अपने लाभके लिये खुसी आ जाती है, जैसे किसीने कहा तुमारी बाली कन्याको प्रपच कर बडे ठिकाणे परणा दी है अपणा खराब खेत घर बहुत कीमतमें बेच दिया है तुमारे पुत्रादिक को खोटी साक्षीसे छुडा दिया हैं अमूक थापणवाला मर गया है इत्यादि सूण सहज खूसी आ जाती है, इस पापसे जो आत्मा बचे तो बहुत अच्छी बात हैं

दूसरे व्रत के ५ अतिचार—१ 'सहसा भखणे' सहसात्कार किसीपर कूडा (खोटा) आल (कलंक) देवे किसी ज्ञानवंत, गुणवंत सीलवंत, आचारवंतैं, धनवत, बुद्धीवत, तपवंत, क्षमावत, इत्यादिक अनेक गुणवंत, की कीर्ति महिमा सुणकर वो सहन न होनेसे ईर्षामें भराकर, उनपर द्वेष भाव लाकर, खोटा (झुटा) आल चडावे, कहे कि क्या उनकी प्रशसा करते हो ? हम उनको अच्छी तरह जानते है, सीलवत नाम धराकर गुप्त व्यभिचार सेवते हैं, तपस्वी नाम धारणकर गुप्त आहार करते हैं, क्षमावंत उपरसे दिखते हैं, परन्तु बहुत वक्त क्रोध करते हैं, आचारी दिखते हैं परन्तु भीतर पोले हैं, बोलनेमें बडे होंशियार हैं पंडित बनते है परन्तु मैने प्रश्नादि पुछकर देख लिये हैं कूछ भी नहीं आता हैं ऐसे २ अनेक छोटे मोटे आल चडावे, गुणवंत की कीर्ती कम करे अछती (झूटी) वातों मुखसे बना कर गुणी के गुण ढाकना, यह बडा जबर पाप है ऐसे के सदा मलीन प्रणाम रहते है इसको वायस (काग) दृष्टी कहते हैं, जैसे काग ताजा माता हृष्ट पुष्ट पशुको देखकर दु खी होता हैं और दुबला रोगीको देख खुसी होता है; क्यों कि वहा उसे खानेको मिलता है ऐसे ही निंदक गुणीजन को देख छिद्र गवेसता है और छिद्र मिले खुसी होता है यह कूडे आ

ल देनेवाले इस भवमें और परभवमें अनेक रोग, दु:ख, वियोग करके पीडाते हैं मुखपाकादिक अनेक रोग भोगवते हैं

२ 'रहसा भक्खणे' रहस्य (गुप्त) बात प्रगट करी होय, अर्थात् किसीके कुलमें बाप दादाने तथा उसने कुछ अयोग्य अकार्य काम किया होय, वो सुण कर, देख कर, ध्यानमें रखे, और कुछ टटा (लड़ाइ) हो जाय तब अपना मोटाइपना, और उसका हलकाइपण करनेको, कहे, जानेत हैं क्या उचा नाक करके बालते हो ? तुमने तथा तेरे बाप दादाने ऐसे २ अकार्य अनर्थ किये हैं, सो भूल गये क्या ? बेचारा यह शब्द सुण शरमिंदा हो जाय विचारीये उसवक्त उसे वो वचन कितना खराब लगता होगा, सो तुम तुमारी आत्मा पर ही ख्याल करो कोइ तुमको एसा कहे तो केसा लगे ? भाइ अपनी २ धोतीमें सब नगे हैं ऐसा तो जगतमें विरलाइ (थोडा) होगा कि जिसमें एक सदगुण और एक दुर्गुण न होय अपणे दुर्गुण न देखते, दूसरे के देखने यह बडा अन्याय है समदृष्टी श्रावकको यह दुर्गुण आत्मामे धारण करना अयोग्य है कभी किसी की भी गुप्त बात अकार्यादिक प्रगट करना नहीं

और भी कितनेक मनुष्य एकांत मिलके कुछ सलाह करते होवें तब आप उनकी नेत्र हाथ प्रमुख की दूरसे चेष्टा देखकर कह कि यह सब मिलकर राज विरुद्ध बाता करते है या वेम लाकर राजमें जाकर चुगली खावे, की अमुक २ मिलकर राजद्रोह की सला करतेथे यह सुण विना कारण राजा उनको दु:ख देवे

और दो मित्रोंके आपसमें प्रिती होवे उसे तोडाने एकेकके विरुध बातों कर उनकी प्रिती तोडावे इत्यादि अनेक प्रकार रहस्य बातके है, जिसका भेद विवेकी श्रावक जाण, सागर जेसा गंभीर होवे

किसीको कोइ खराब बात द्रष्टीमें आ जाय तो भी आप प्रगट नहीं करे, तो अच्छी बात प्रगट करना किधर रहा ?

३ ' सदारामतेभए ' अपनी स्त्रीके मर्म न प्रकाशे अर्थात् सबसे ज्यादा प्रेम सती स्त्रीका अपने प्राणपतिपर रहता है स्त्रीयोंके पेटमें कोइ नवी बात सुननेमें आवे तो उसका सदाव नहीं होता है, तब अपना पेट खाली करने जाणे पति किसी को न कहेगे ऐसा विश्वासला अपने मनकी गुप्त बात पतीको कहे, सो बात पुरुषको अन्य पुरुषके आगे नहीं प्रकाशनी क्यों कि वो बात जो पीछे स्त्री सुण लेवे तो उसे पश्चाताप पैदा होवे और कूछ विचार न करते आत्म हत्या कर ले इत्यादि अनर्थ जाण स्त्री की गुप्त बात किसीको भी न कहनी

ऐसे ही पुरुषको लाजम है की अपणी गुप्त बात किसीके आगे न प्रकाशनी, जो कदा रहा नहीं जाय तो स्त्रीको तो कहना ही नहीं इतने पर ही मोह प्रध होकर कभी कोइ गुप्त बात स्त्रीके आगे कर द तो उत्तम स्त्रीयोंको लाजम है, कि अपने पति की गुप्त बात किसी के आगे न करे जो कभी करदे तो आत्मघातादि अनर्थ निपजे, तथा पतिप्रेमको गमावे इत्यावि अनेक दु ख होवे

ऐसे ही मित्र २ आपसमें कोइ बात करे, या कोइ अपनको अच्छा जान उसके दुःख प्रकासे, कोइ भोलपणसे गुप्त बात कर देवे तो, श्रावकको उचित है कि किसी के मर्म नही प्रकाशे सब सुण पेटमें धर लेवे इन तीन अतिचाराका मुख्य मतलब यह है की अपनेसे किसी गुणवंत के गुण ग्राम बने तो जरूर करना परतु दुगुण ता किसी के भी कभी प्रकाशना नहींज।

४ ' मोसो एवस ' कहता मृषा उपदेश न देवे, अर्थात् जितने अन्यमत के शास्त्र हैं, जिनमें हिंसादिक पाप आश्रका उपदेश होवे,

सो अष्टांग निमित मन्त्र जन्त्र तंत्र विगरे विगर पाप शास्त्रोंका उपदेश न करे, क्यों कि जिससे हिंसादिक अनेक अनर्थ निपजते हैं उसका हिस्सा उसे आता है और भी किसी के आपसमें झगडा होवे और वो सल्ला पूछने आवे तो आप उसे झूट ठग बाजी कर जीतनेका उपाव न सिखावे, स्त्रीकी राजकी देशकी भोजनकी इय चार विकथा नहींकरे, क्यों कि इस से विषयों की वृद्धि होती है, जिससे अनेक आरंभ निपजे श्रावकको विशेष बोलने की मना दी है * कार्य उत्पन्न हुवा कभी बो

* बोलने के विषय श्रावकके आठ गुण ग्रंथमें बताये है सो अवश्य धारण करो १ थोडा बोले; बहुत बोलनेवालेका मान नहीं रहता है, इस लिये थोडे शब्दमें बहुत मतलब निकले ऐसा बोलना २ थोडा तो बोले परतु वो भी मिष्ट (मीठा) बोलें सबको सुहाता, प्यारा वचन कहे क्यों कि अमुहाता वचन कटू वचन थोडा भी बोला दुःखदाइ होता है, निंदा पाता है इस लिये मधुर वचन सर्वमान्य होता है ३ मिष्ट तो बोले परतु अवसर देख बोले क्यों कि बिन अवसर की बोली बात खाली जाती है बक्तपर अच्छी बात भी अवसर बिन नुकशान करने वाली हो जाती है देखिये यों कोइ गाली देवे तो झगडा हो जावे और औरतों सबधी (ब्याइ) जमाइको अवसरसे हजारो हलकी २ गालियों सुना देती है, उसे वो प्रेमसे–खुश होकर सुनते हैं मुरदेको उठाते जय गजानद कहनेसे लडाइ हो जाती है क्या कि वो अछी बात भी अवसर बिन नुकशान करती है ४ अवसर देखे परतु चतुराइ से बोले, कि वो वचन सबको हितकर लगे, अपना १ रस खेंच ले वाक्य चातुरी वाला वही १ सभाका चित्त हरण कर लेता है ५ चतुराइसे तो बोल परंतु अहंकार रहित बोले अपनी १ बडाइ न करे अपने मुखसे अपनी बडाइ हीनता दरसाती है पर गुण उचारता निज गुण प्रगट करे ६ अभिमान रहित तो बोले परतु किसी के मम न प्रकाशे मार्मिक नम्र वचन भी दुःखदाइ होता है ऐसे मनुष्यको सहत की छुरी कहते हैं ७ मम मोसा तो न प्रकासे परतु शास्त्र की शाम्व युक्त वचन बोले शास्त्र वचन सर्व मान्य होता है ८ शास्त्र की शाख युक्त तो बोले परतु सर्व प्राण भूत जीवको साता कारी बोले क्यो कि शास्त्रमे भी हेय ज्ञेय उपादेय तीन प्रकारके वचन हैं कितनेक शास्त्रों के वचन भी बिन अवसर नहीं प्रकाशे जाते है जैसे "मूता क्षीयाण तम तमण" इस पदका अर्थ अवसरसे ही होता है इस लिये सबको साता उपजे एसा वचन बोले

लनेका काम पडे तो सत्य निर्दोष बहोत विचार कर ऐसा बोले की जिससे अपनी आत्मा पापसे न भराय

५ 'कुड लेह करणे' कहता खोटे लेख नहीं लिखे अर्थात् किसी से लेन देण होय या अदावदी (वैर वीरोध) होय तो उसको ठगने दगा बाजी कर खोटे लेख न लिखे सो रुपे की जगामें एक विंदु ज्यादा लगाके हजार कर दे तथा नाम ठाम जाणता होय, तो झुटा रुका बणा लांचदे गवाइ खडी कर, झूटी अरजी—फर्यादी कर दूसरे के अक्षर जैसे आप अक्षर लिखे, चिठी पत्री हुडी बनाकर पयइ चावे, जो न पटे तो राजमें फिरयादी कर लडे आप सत्तावंत होवे तो जीत जावे और उस बेचारे गरीबको नाहक खुवार करे उसको ऐसी खोटी फिरीयादीकी, या जुठे खतकी खबर पडती है, तब उसको धास का पड जाता है बहोत तलतलाट लगती है विचारा वो अपनी इज्वत (लज्जा) रखनेको गहने कपडे वेच, सिरपर करज कर, उसका सझा भरता है और उसको बहोत पश्चाताप होता है, और कितनेक तो धासका के लिये मर भी जाते है और जो वो खोटा लेख राज पचमें प्रगट हो जाय तो दड खोडा बेडी आदि शिक्षा भुक्ते इज्जत गमावे इत्यादिक अनेक दुर्गुण खोटे लेखमें हैं, ऐसे अन्यायसे पैदा किया द्रव्य वहुत काल टिकता नहीं है

अन्यायोपार्जित वित्तं, दश वर्षानि तिष्टति ।
प्राप्त षोडश वर्षे, सा मूलस्य विनश्यति ॥

अन्याय करक उपार्जन किया हुवा द्रव्य दश वर्ष रहे, और जो सोलह वर्ष रहे तो पहले के द्रव्यको ले कर चले जाता है

इस जक्तमें विशेष करके झुठ बोलने के मुख्य १४ कारन—
१ 'क्रोध के वश हो' क्यों कि क्रोध से आदमी कभी ऐसा जबर

वचन निकाल देता है कि जिससे पंचेद्री की घात हो जाय २ 'मा न कर के' अभिमान के वशमें हो ऐसे, २ गपोडे उडाता है, कि जाणे इस जैसा इस विश्वमें दूसरा कोइ है ही नहीं ३ 'कपट से' दगाबाजी तो झूटका मुल ही है ४ 'लोभ से' लोभी लोभ के वशमें हो खरे खोटेका कुछ बिचार ही नहीं रखता है लोभी वेपारीमें ही असत्यका वास है, ५ राग, प्रेमसे पूत्रादिकको खिलाते—रमाते ६ द्वेषसे रुष्टहो वैरीयों पर खोटे आल चडावे झूटी साक्षी फरीयादी करे ७ हास्यसे हंसी कितोलमें चडे हूये के गप्पे सप्पे मारने लगते हैं ८ भयसे डर से, राजा सेठ के डर से केइ झूट वोलना पडता है अपणा अन्याय छिपाता है ९ 'लज्जा से' कु कर्म कर छिपावे १० क्रिडासे, स्त्री-यादिक के सन्मुख ११ हर्ष से लाडकोड करता १२ 'शोक से उदा सीमें निश्वासे नाखता १३ दक्षिणतासे, अपनी चतुराइ वताणे, वि द्वता जणाने, विवाद में छलने १४ और वहुत वोलने से भी झूट लगती है यह १४ कारण झट वोलने के सत्यवत जान कर वर्जे

झूटके दुर्गुण—अप्रतीत होती है झूटे पर किसीका विश्वास नहीं, रहता है एक झूट के दुर्गुण से सब सद्‌गुण ढक जाते हैं झूटेको लोक गप्पी, लवाड, लुच्चा, (वदमाश) ठग, धुतारा, इत्यादि नामसे वोलाते है झूटसे अकाल मृत्यू निपजता है झूटेके मत्र जंत्र आदि विद्या सिद्ध नहीं होती है, इत्यादि अनेक दुर्गुण इस भवमें होते है, पर और भवमें, मूका वोवडा कडु भाषी, तोतला, दुर्गन्ध मूख वाला, मुगा और ऐकेन्द्रि आदि गतीमें जाता है, ऐसा जान सर्वथा झूट का त्याग करना चाहिये

कितनेक सच्चे वचन भी झूट जैसे है, जैसे अन्धेको अन्धा, काणेको काणा, कुष्टीको कुष्टी, नपुसकको नामर्द, चोरको चोर जार को जार, लवाडको लवाड, व्यभिचारीको व्यभिचारी गोलेका गोला,

इत्यादि जिस वचन करके दूसरेको दु ख होवे वो वचन सच्चे होवे तो भी झूट जानना ✽ ऐसे वचन नहीं बोलना

सत्य के सद्गुण –सत्यवत सबको विश्वासी होता है यशस्वी वल्लभ, वचन सिद्ध, सत्यके प्रभावेस विद्या मंत्र जंत्र तत्क्षण फली भुत होते है, धर्मका फल सत्यसे ही मिलता है लक्ष्मीका वास सत्यवत के घरमें ही होता है सत्यवतका कार्य शिघ्र होता है सत्यके प्रभावेस बडे २ रोग मिटते है बडे २ झगडेमें विजय पाता हैं, सत्यवंतको चिंता कम रहती है मुह नहीं छिपाणा पडता हैं सत्यवत की देवेंद्र न रेंद्र पुजा करते है, सन्मान देते हैं, बात कबूल करते है, सब काममें सल्ला लेते है सत्यसे सर्व दूश्मनका नाश हो देवलोकके सुख भोगव के अनुक्रमे अनत अक्षय मोक्ष के सुख मिलते है

३ ' तीसरा अणुव्रत थुलाओ अदीन्न–दाणाओ वेरमण ' कहता तीसरे छोटे वृतमें स्थुल (मोटी) अदीन्न–विन दिया, दाणाओ–ग्रहण करना—लेना, जिससे वेरमण–निवर्तना, अर्थात्–गृहस्थावासेंम रहकर छोटी चोरीसे तो निवर्तना मुशकिल है जैसे त्रण ककर धूल वगैरे नि मौल्य वस्तू ग्रहण करते किसी की आज्ञाकी दरकार नहीं गिनते है ऐसे ही कोइ मोल वस्तू लाये और वो निघा चुकसे सेरके ठिकाणे स-वासेर आगइ तो पावसेर पीछी कोन देने जावे ? इत्यादि अनेक स-सार व्यवहारी बावतोंमें सहज चौरी लग जाती है यह चौरी लोकोतर विरुद्ध तो है, परन्तू लोकीक विरुद्ध नहीं है इस चोरीस राजा प्रमूख

✽ श्लोक—न सत्य मपिभाषेत, पर पीडा कारण ॥
लोकेपि श्रूयते यस्मात् कौशिको नरक गत ॥ १ ॥

अर्थात्—जिस वचनसे दूसरेका दु:ख होवे ऐसा सत्य वचन भी नहीं बोलना लौकीक शास्त्रमें सुना जाता है कि दूसरेका दु:ख दाता सत्य वचन बोलनेसे कौशिक मुनि नर्क गये

दंड नहीं कर सके है, तो भी जो गृहस्थ इन चोरीसे अपनी आत्मा बचावे उनको धन्य है इनसे जो कभी आत्मा नहीं बचे तो नीचे कही हुइ पाच चोरी तो श्रावकको करना बिलकुल योग्य नहीं है —

१ ' खातर खणी ' कुदाली प्रमुख शस्त्रसे किसीके ग्रहादिक की भीत फोड, कमाड तोड, ताला तोड, या भींतादिक उलंघ उपरखाटसे उस के घरमें जाकर उसके द्रव्यादिक पदार्थका हरण करे सो

२ ' गठडी छोडी ' विश्वाससे कोइ नोली डब्बा, गठडी, अनाजका थैला, सदूक, पिटारा विगेरे रख जाय, और उसके गये पीछे कोइ युक्ती से उसमें की असल वस्तु निकाल, उसके बदले पीछा कुछ भर थोंका त्यों कर मालधणी आये उसके हवाले करे, और अपणी साहुकारी बताने कहे के संभाल ले भाई, तेने रखी थी वैसी है, पीछेसे कुछ कहेगा तो हम नहीं मानगे वो बिचारा विश्वासपर हा कहे, अपने घर जा उसे अती उमग से खोले और वो माल नहीं निकले तब उसेक मनमें कितना दु ख होता होगा, सो आप ही विचारो आपका एक पाइका नुकशान हो जाय तो अन्नसे प्रीति उतर जाती है और उस की जिंदगानीका निर्वाह तोड डाला इमसे ज्यादा क्या चोरी होती है ?

३ ' वाट पाडी ' रस्ता लूट करे अर्थात् जगल उजाडादि एक स्थलमे रस्तेपर बहुत टोली जमाके बैठ, मालधणी कोइ आवे जावे तब मारकूट उसका माल खोस (छीन) ले, ऐसे ही बहुत जने मिल धाड पाडे, खेत गाम घर बजार लूटे, तथा उचल्या धूतारा (पोटली बाज) पना करे, निधा चोरीके वस्तू उठा ले जाय, खीस्सा कतरले, दागीने (गेहणे) काट ले, बच्चेको उठा ले जाय, माल लेकर मारडाले, यह सर्व वाटपाडी कर्म कहे जाते हैं, महा अनर्थके काम हैं

४ ' ताला पड कूची ' तालेपर दूसरी कूची (कुंजी) लगाकर खोलकर चोरी करे, अर्थात् कोइ परगामादिक किसी कार्यके लिये जाती वक्त अपने घरको ताला लगाकर विश्वासू मित्रादिकके यह कूंची रख जाय, पिछिसे वो विश्वासू लालचके वस हो उस कूंचीसे उसका घर खोल सारे पदार्थ निकाल लेवे तथा दूसरेके वहांसे मोल दुसरेके ताले पर जमे ऐसी कूंची लाकर उसके घरका सार २ माल निकाल पीछा योंका त्यों कर ताला लगा चूप बैठे. घरधणी घरका सार पदार्थका हरण हुवा देख कित्ना दु खी होता होगा ? क्या करे किसका नाम लेवे ? मनमें झुरे, और दु खी होवे

५ ' पडी वस्तु धणीयाती जाणी लेवे ' कोइ वस्तु रस्तेमें पड गइ है, या रख के भूल गये है, और अपनेको उसके धणी की मालुम है कि यह वस्तु अमुक की है और फिर उसे छिपावे, अपनी करके रक्खे, तो चोरी लगे जो कदी यों वस्तू मिलजाय और धणीको नहीं जानता होय तो चार मनुष्य की साक्षी से उसे रखे, और धणी मिले तब चोकस कर जिसकी रकम जिसको देवे लोभका त्याग करे

यह पाच प्रकार की मोटी चोरी करने से सरकार तर्फ से शिक्षा मिलती है इज्जत जाती है विश्वास उठता है. इत्यादि अनेक दु ख होते हैं

इस तीसरे व्रत के पांच अतिचार जानने परतु आदरने नहीं सो १ ' तन्हाड ' चोर की वस्तु ले अर्थात् ऐसा विचार करे कि मैने पोते चोरी करने के त्याग किये हैं, परतु चोर की चोराइ वस्तु लेनेमें क्या हरकत है ? ऐसा विचार कर चोरीका बहुत कीमतका माल थोडी कीमतमें लेवे, लालचमें पडा हूवा कुछ गुणोंगुणको नहीं देखता विचारे कि आज बहुत अच्छा दिन ऊगा कि इतनी कमाइ हो गइ ?

तु ऐसा नहीं विचारे की जो प्रगट हो गइ तो इससे दूणा चोगणा न देते भी इज्जत रहेगी ? यह लालच गला कटाता है, फिर पश्चाताप रते हैं. कितनेक कहते हैं कि हमारेको क्या मालुम पडे कि यह ारीका माल है ? परतु लालच छोड जरा दीर्घ द्रष्टी से विचारे तो सहज भास होगा कि यह सो रुपेका माल पचासमें देता है सो क्या मुफतमें ाया है ? और चोर की बोली आंखो विचार बिलकूल छिपता नहीं है

२ 'तक्कर पउगे' चोरको साज देवे अर्थात् चोरको कहे कि म डरो मत, हुंस्यारी से चोरी करो, और मेरेको माल देवो, में तुमारा ाहायक हूं साहाय देने के लिये प्रश्न व्याकरणमें चोर की १८ प्रसूती कही है —

"चोर की १८ प्रसुती"

१ चोर के साथ मिल के कहे डरो मत, मैं तुमारे सामिल हूं, काम पडेगा तब साज देऊंगा २ चोर मिले तब सुख समाधी पूछे. ३ चोरको अंगुली आदि संज्ञा करके कहे कि अमुक ठिकाने चोरी करने जावो ४ आप प्रतीत दार–साहूकार बनके पहिले राजा सेठके धना- दिकके ठिकाने देख आवे और फिर चोरको बतावे कि अमुक जगे धन है ५ चोरी करने जावो और कोइ पकडनेवाला मिल जाय तो पहिले उसे छिपनेका ठिकाना बता दे ६ किसीको चोर की खबर लगी, और वो पकडने आवे, चोर नहीं मिलने से उस जानतेको पूछे कि चोर किधर गये ? वो जानता आप उनका धन लेने पूर्व गये होय तो पश्चि ममें बतावे, पश्चिममें गये होय तो पूर्व बतावे ७ चोरी करके आये हुये चोरोंको अपने घरमें माचा (खाट) पिलंगादि आसन सोने बेठने देवे ८ चोर चोरी करते कहींसे पड गये तथा शस्त्र गोली ल

गी जिससे अग उपागका भंग हुवा घाव लगा उसको घर पहुचाने आप घोडा प्रमुख वाहन दे ९ वाहनपर बेठकर जाने की शक्ती न होव तो आप अपने घरमें गुप्त रखे १० चोरका मारी २ माल आप लेकर भक्ती करे ११ चोरको ऊंचे आसन बैठावे चोर १२ अपने घरमें है, और उनको पकडनेवाले आये, तव आप उनको छिपाकर केवे क यहां नहीं हैं १३ चोरको खान पान माल पक्वान आदिक भोजन दे कर साता उपजावे जाते वक्त आगे खाणेको भाता बंधावे १४ जिस २ ठिकाणे उनको जो जो वस्तू की चाहाना होवे सो उनको गुप्त पण पहोंचावे १५ चोर थक्के आया होय उसको तैलादिक मर्दन करावे, उष्णोदकसे न्हवावे, गुल फटकडी आदि खवावे, अग्नीसे तपावे, घाव लगा होय वहा मलम पट्टी बाधे इत्यादि साता उपजावे १६ रसोइ निपजाने अग्नी पानी प्रमुख आप ला देवे १७ घवराकर आये उसे हवा कर शात करे १८ चोरके लाये हुये धन धान पशू प्रमूखको अपने घरमें बंदोवस्त के साथ रखे जो चाहिये सो देवे।

यह १८ प्रकारे चोरको साज देनेसे चोर ही कहना यह अठारे काम करनेवाला राजमें चौर जितनी ही शिक्षा पाते हैं

और भी चोरको कहे कि बेठे २ क्या करते हो ? बहोत दिन हूये चोरी करने क्यों नहीं जाते हो ? जावो अब तो कूछ माल लावो हम सब तुमारा माल खपा देवेंगे, कुछ फिकर मत करो तथा अमुक ठिकाणे कल गये थे, कूछ हाथ लगा कि नहीं ? बतावो जी! और भी कुदाली फोस प्रमुख उनको चाहिये सो शस्त्र का साज दे इत्यादि सब काम करनेवाले को चोर ही कहना यह काम श्रावकको करने उचित नहीं है इस लालचसे विवेकवत अवस्य बचेंगे

३ ' विरुद्ध रजाइ कम्मे ' राज विरुद्ध काम करे अर्थात्—गाम

। दश के राजाने अपने राजमें जिस २ वैपार या कार्य करने की र्यादा करी है, ना कही है, सो काम लेभ के लिये आप करे गुप्त ' इधर की उधर, उधर की इधर वस्तु लाकर वेचे, दाण चौरावे, इत्यादि ाज विरुद्ध काम करने से राजा दड दवे, इज्जत लेवे

४ ' कुडतोले कूडमाणे ' खोटे तोले, खोटे मापे रखे अर्थात् तो ; सो रती, मासा, सेर, मणादिक, और मापे पायली कुडा, तपेला, प्रमुख, ाथा गज–हत्थी प्रमुख खोटे रखे लेण के ज्यादा और देणे के कमती ो तथा देते वक्त हाथ चालाकी से तोलने मापनेमे चोरी करे देते कमी देवे, लेते ज्यादा लेवे गिणते २ आंकडेमें गडवड करदेवे इत्यादि कर्म विश्वासघातिक कहे जाते हैं विचारे गरीव लोक महा मेहनत के ाथ सर्व दिन अति कष्ट सहन कर चार आणे के पइसे लेकर वणियेकी दुकान पर आकर साहुकार कह कर वस्तु माग, उसे वो निर्दय दिखने के साहुकार और कर्म के चोर * वन कर विचारे के पलेमें चार आ ने ले कर दो आनेका भी माल न डाले, यह कितना जवर जुलम ? कैसी निर्दयता ! यह कर्म श्रावकको नहीं करने चाहिये

५ ' तपडी रुवग व्यवहारे ' तत् प्रतिरुप वस्तु मिलाकर वेचे, अर्थात् जैसा उस वस्तुका रुप है, वैसे ही रगकी उसेंमे मिलती कोइ

---

* श्लोक–लोल्ये न किंचित्क छायच किंचित ।
मापे न किंचि तुलया च किंचित ॥
किंचिच किंचिच्च समाहरति ।
प्रत्यक्ष चोरा वणिजा भवति ॥ १ ॥

अर्थ—कितनाक लालच देकर कितनाक, कला कर कर कितनाक माप म, कितनाक तोलमे, कुछ न कुछ चोर करके जरुर ही लेते है, इस लिये प्रत्यक्ष मे चोर वणिये ही है

हलकी कीमत की वस्तु उसमें मिला कर वेंचे घी, में ❀ चरबी प्रमुख
मिलाने, और उत्तम घी के भाव वेंचे यह भी एक जबर चोरी कही
जाती है तथा कोइ माल लेणे आवे तव उसे वानगी (नमुना) तो
अच्छे मालका वतावे, और देते वक्त चालाकी से खोटा माल दे देवे
तथा अच्छा और खोटा दोनो का मिलावट करके वेच देवे तथा चोरी की
वस्तू ली है, इसको छिपाणे भांग, तोड़े, गला, या दूसरा रग चढा,
पशूओं के अग उपांग छेदन भेदन कर, रुपप्रवर्तन कर वेच देवे यह
भी एक प्रकारकी चोरी है श्रावकको अनुचीत है, इन पांच ही प्रकार
के अतिचारोंका स्वरुप जाण विवेकी वरजे, एक ग्रंथमें लिखा है, कि
१ चोर, २ चोर के पास रहने वाला, ३ चोरसे वात करनेवाला, ४ चोरका

❀ अभी इस थोडे कालमे हिंदुस्थान मे मिलावटी वस्तूका प्रचार में
हुव हो गया है, पर मिलावटी वस्तू हिन्दूको ग्रहण करणा तो अलग रहा
परन्तु छीने लायक भी नहीं है देखिये घी सक्कर जैसे उत्तम पदार्थको
जो हर हमेशा उपभोगमे आवे उनमे ऐसी खराब वस्तुओंका भेल हो
ता है कि जो सच्चा हिंदूका बीज है वो उसका कभी स्पर्श नहीं करता
है गायको हिंद माता तरीके पुज्य मानते है और घीमें गायकी भैंसकी
बैलकी और सूयरकी चरबी मिलाते है, सक्करमें गाय बैलकी हड्डियोंका
चुरा मिलाते हैं बैलके रक्तसे धोते है केसरमे गायके मांसके धुवे मि
लाते हैं, साबण (साबू) मे ढोरोंकी चरबी मिलती हैं विलायती क
पडेपर चरबीका पांजल कल्प, देते हैं ऐसा २ अनेक नीचताका प्रसार
हो गया है यह बाता अभी बहुत वर्तमान पत्र (अखबारों) मे प्रसिद्ध
होने लगी है बहुत लोग जानते है, पढते हैं, परन्तु इमडके लाभी पैसा
प्रधान अपनी जाती—धर्म और जन्म भ्रष्ट होता है इस भवमे अनेक
दुष्ट रोगोंसे पिडाता और परभवमे नर्कके अनेक दुःख के भुक्त होना
ऐसा जानते ही ऐसी नीच वस्तूका स्विकार करते हैं, उनको क्याकहना

भद लेनेवाला ५ चोरकी वस्तु खरीदनेवाला या चोरको वस्तु वेचने वाला ६ चोरको खानपान देनेवाला ७ चारको मकान देणेवाला इन ७ को चोर ही कहना श्रावकको लाजिम है कि जो जो काम करने मे तीसरे व्रतका भग होवे, सो काम नहीं करना इतना ध्यानमें रखना कि चोरीका माल दोनों भवमें सुखका देणे वाला नहीं होता है योंविचार संतोप लाना जिस २ देशमें जैसा २ कर्म उचित होवे उसके विरुद्ध नहीं करना, और जैन धर्म की महिमा दिखाणे—दुष्कालादिक कोइ वक्तमें वस्तु बहुत महगी हो जाय, चौगुणे पाच गुणे भी जो दाम आते होय तो आप सतोप रख के दूणेसे ज्यादा न करे इससे लोकमें प्रसिद्ध होय की जैनी लोक बडे दयालु और संतोपी होते हैं ऐसेही व्याजमें भी सतोप करे, ज्यादा मिलता होय तो आप ग्रहण न करे

यह तीसरा सतोप व्रत के आराधने से सर्व लोकको विश्वास उपजानेवाला होता है लक्ष्मी की वृद्धि होती है, और न्याय से धन भेला किया हुवा बहुत काल टिक के सूख देणे वाला होता है कीर्तिका विस्तार होता है, राज के भडारमें, सेठकी दूकानमें जावें तो अप्रातित नहीं आती है, सदा निश्चित रहता है दया भगोती सदा हृदयेंम निवास करती है, त्याग पञ्चखाण शुद्ध निर्वाह कर सक्ता है राजमें पंचोंमें माननिय होता है, अनेक उपद्रवों से अपनी आत्माको बचाता है भाग्य से पाइ हूइ संपदा पर संतोप लाता है और काहा है की 'संतोप परम सूख' सतोप है सो ही परम सूखका ठिकाणा हैं सतोप से इस लोकमें अनेक सुख भूक्त आगेको स्वग मोक्ष के अनत सुख पाता है एसा जान सदा सतोपी वन रहना

४ "चोथा अणुव्रत थुलाओ मेहुणाओ वेरमण' चौथे छोटे व्रतमें स्थुल (मोटे) मैथुनसे निवतना, अर्थात्—गृहस्थ वासमें रहकर सर्व

था ब्रह्मचर्य पालना मुशकील है, क्यों कि और गती करते मनुष्य
गती में मैथूनका उदय ज्यादा है कारण जैसे शत्रू बलिष्ट होता
तब प्रती शत्रू अपनी सत्ता (ताकत) बहूत बताता है उसको दबा
दटाने जो शत्रू को प्रती शत्रू की प्रबलता देख और अपने बलकी
मराइ होवे तो वक्तपर उसे हटावे, अपणा हक्क कायम करे और
कायर हुवा तो प्रति शत्रु उसे अपने ताबेमें लेकर रगडेगा ही

भावार्थ–जीव की शक्ती कर्मोंको हटाने की मनुष्य जन्ममें ही प्रब
होती है तब कर्म (मोह) अपनी ताकद विशेष बताता है, जिस
विषय विकार की प्रबलता होती हैं जो जीवमें आपका मान हो
तो विषय उमरावको मार अपणा निजगुण रुप हक कायम करे, य
सुरवीरोंका काम है और जो कर्मके वशमे पडेगा वो उसकी यह चार
गतीमें विटंबणा करनेवाले है, ऐसा जाण सर्वथा विषयका ना
करना परन्तु अनत कालसे जिस की सगत उससे एकाएक
छूटणा मुशकिल है इस लिये ही ‘ श्रावक ’ पणेमें आसते २—
२ विषय वासना (इच्छा) कमी करे अर्थात् सर्वथा न बणे तो ‘
दारा सतोषी आवेशप मेहुणं सेवनके पच्चखाण ’ अथार्त् अपनी
को सतोष § उपजावे, या अपनी स्त्रीसे ही आप सतोप लावे, औ
परस्त्रीका सर्वथा त्याग करे, यह सदारा सतोष व्रतके त्यागीको दे

* नर्कमें भय सज्ञा ज्यादा, तिर्यंचमें आहार सज्ञा ज्यादा, देवतामें
लोभ सज्ञा ज्यादा और मनुष्य मे मैथून सज्ञा ज्यादाहोती है

§ देखिये इस शब्द पर जरा निघा लगाइये, श्रावक मथुन सेवत
सो फक्त अपनी स्त्री को सतोष उपजानके लिये, कुछ उनका विषय अ
भिलाषा नहीं है ऐसा श्रावकका लक्ष होना, तब श्रावक प
प्राप्त होता है

ता, की स्त्री (देवागना)के साथ मैथून सेवणेके पचखाण दो करण और तीन जोगसे होते है, अर्थात् आप सेवे नहीं, और दूसरेके पास सेवावे नहीं; मन वचन काया कर फक्त देवादिक की मैथून क्रिया की प्रशसा सुन मनमें खुसी आ जाती है, वचनसे वडाइ हो जाती है, कायासे इच्छा हो जाती है, इसलिये मन के तीन ही भागे खुले रहे हैं और मनुष्यणी तिर्यंचणी संबंधी एक योगसे, अर्थात् अपनी काया करके मैथून सेवूं नहीं, वाकी सेवावणा भला जानना वाकी रहता हैं क्यों कि संसारमें वैठे हैं, सहजमें पुत्रको कह दे, जावो भाइ अपन ठिकाने सोवो पुत्र की स्त्री मर जाय तो, तथा पुत्रादिक निमित दूसरा लग्न करावे और गाय भैंस घोडीका संयोग मिलावे इत्यादि कारणसे यह वृत निमेन एक करण एक यागसे सोगन होते हैं अव स्व (पोताकी) स्त्रीका जो आगार रखा है, सो फक्त उसको संतोष उपजाने, हाथ पकडकर उसको लाये हैं उस की आत्माको अ संतोष होनेसे आत्म हत्या, या व्यभिचारका संभव होने, जिससे अपनी जगतमें निंदा होवे, इत्यादि भयसे विषय सेवता है परतु उसमें ग्रधी पना नहीं, की दुनियामें सर्व सुखका सार ये ही मुजे मिला है, ऐसा फिर मुजे मिलेगा कि नहीं ऐसा उसमें आशक्त न होवे, क्यों कि अशक्तता है सो चिकणे कर्म वधनेका कारण है इसमें और भी छे पर्व (दूज, पांचम, आठम, इग्यारस, चौदश, पूनम, अमावस्या) * में ब्रह्मचर्य जरुर पाले ' विष्णु पुराण ' में कहा है कि—

* पांच पर्वका कारण शास्त्रमें कहा है कि जीव परभवका आयुष्य तीसरे भागमे बांधता है इस मतलबसे ही पर्व किये दिखते है वोलिये तीज और चोथ गइ पांचम पर्व आया छठ और सातम य ?ो भाग गये आठम पर्व आया नवमी और दशम गइ इग्यारस पर्व आया, वारस और ते रस गइ चौदश पर्व आया यों तीसरा भाग लिया है इन दिनोंमें पर भवका आयुष्यका बंध पडनेका सभव है, इस लिये इन दिनम तो अवश्य सर्व ससार कार्य छोड दया, सील सतोष-सामायिक पोषध आदि धर्म कार्यमें प्रवर्तना कि जिससे अशुभ गतिके आयुष्य का बंध नहीं पडे

श्लोक—चतुर्दश्यष्टमीचेव, अमावास्या च पूर्णिया ॥
पर्वाण्येय तानिराजेन्द्र, रविसक्रातिरेवच ॥ १ ॥
तेल स्त्री मास सभोर्ग, पर्वस्वेतेषु वै पुमान ॥
विष्मूत्र भोजन नाम, प्रयाति नरकमृत ॥ २ ॥

चतुर्दशी (चौदश) अष्टमी, अमावास्या, पूनम, ग्रहणके दिन, दीतवारको, संक्राती इन दिनोंमें तेलका, स्त्रीका, और मासका जो सेवन करता है, वो भिष्टा और मूत्रका सेवन करता है, और वो मरके नर्कमें जाता हैं कीजिये, इससे और क्या ज्यादा कहे ? इन दिनको स्त्री सेवन करनेसे जो गर्भ रहे, और पुत्र की प्राप्ती होय तो वो कूपुत्र कू लंछनी निकले ऐसा जान वर्जना और दिनको तो कभी भी स्त्री सेवन नहीं करना, क्यों कि इससे मोहोदय, निर्लज्जता, जास्ती होती है तथा संतती खराब होती है, और रात्रीको भी एक वक्तसे ज्यादा स्त्री संग नहीं करना, क्यों कि शास्त्र * (तदुसनियालिय) में कहा है कि

* गाथा—मेहूण सण्णा रुढो णयलक्स्व हणेइ सुहुम जीवार्ग ॥
केयलिणा पण्णत्ते सद्द हियव्वा सयाकाल ॥ १ ॥
अर्थ-मैथून सेवनमे नवलाख सुक्ष्म जीवोका घात होता है, ऐसी भी सर्वज्ञ प्रभुने फरमाया है, यह सच्चा श्रधना चाहिये
गाथा—इत्थी जोणीए समवती, बीन्द्रियातुवे जीवा ॥
इक्कोय दोय तिण्णिव, लक्स्वपुहुस उ उक्कस्स ॥ २ ॥
अर्थ स्त्रीकी योनीमे कभी एक कभी दो कभी तीन इसी तरह अधिक से अधिक कभी ना (९) लाख तक उत्पन्न होजाते हैं
गाथा—पुरिमेण सह गयाए तेसिं जीवाण होइ उद्दवण ॥
वणुगादिट्ठतेण, तत्ताय सिलागणाए ॥ ३ ॥
अर्थ-जैसे अग्नीमे तपाई हुई लोहेकी सलाई पास की नली में डालनेसे उसमे के तिल जल जाते हैं तैसे ही पुरुष जब संभोग करने लगता है तब योनीमे जितने जीव होते हैं उन सबोका नाश होजाता है

एक वक्त मैथुन सेवन किये पीछे बारे (१२) मुहूर्त योनी सचित रहती है अर्थात् जीव मरते हैं और उपजते हैं दूसरी वक्त मैथून सेवनेसे नवलाख सन्नी पचेंद्री और असख्याता असनी पचेंद्री की घात होती है ऐसा अनर्थका कारण जाण एक वक्त उप्रात मैथून नहीं सेवना विषय सेवन से निस्तेज, कमताकत, मदबुद्धी, प्रमिष्ट इत्यादिक अनेक दुर्गुण होते हैं और कितनी ही वक्त सेवन किया तो भी तृप्ती नहीं आती है विचारना कि देवांगना के * हजारों वर्ष के संयोग से तृप्ती न हुइ तो यह मनुष्य के अशुची क्षिण भंगूर विषय से क्या तृप्ती होगी ? यों विचार सतोष लाना, विषय इच्छा नित्य घटाना § गृहस्थका मैथुन सेवनेका मुख्य हेतु पुत्रोत्पात्तिका है सो तो फक्त स्त्री ऋतुकाल से निवृत हूये पीछे हैं फिर तो एक महीने आत्मा

गाथा—पचिंदिया मणुस्सा, एगणर भुत्राणारि गभाभि ॥
उक्कस्स णवलक्खा, जायती एगवे लाए ॥ ४ ॥

अर्थ—एकवार नारीका भोग करनेसे उस समय उस गर्भ में पचेन्द्रिय मनुष्य कमी १ नौलाख पर्यंत भी एकदम उत्पन्न होजाते हैं

गाथा—णवलक्खाण मज्झे; आयइ एक दुण्हे य सम्मती ॥
सेसापुण एमेयय विलय वच्चंति तत्थेव ॥ ५ ॥

अर्थ—उन नो लाख में से एक या दो ता जीव जाते हैं, अवशेष यों ही नष्ट हो जाते हैं मर जाते हैं

* विमानिक देवका दो हजार वर्ष, जोतषी देवका पन्नरसो वर्ष, भवनपती देवका हजार वर्ष, और वाण व्यतर देवका पांचसो वर्ष तक समोग रहता है

§ श्लोक—एक रात्रौ विनस्यपि, या गतिर्ब्रह्मचारिण ॥
नसा क्रतु सहस्रेण, प्राप्तशक्याग्रुधिष्टिर ॥ १ ॥

अर्थ—हे युधिष्ठिर ! एक रात्री ब्रह्मचार्य पालनेवालेकी जैसी उत्तम गति होती है, तैसी हजार यज्ञ करनेवाले का भी नहीं होता है

वशमें रखणी ही चाहिये विशेष विषय सेवन से गर्भ नाश होता है

इस चोथे व्रत की हिफाजत (बंदोबस्त) के लिये पंच अती चारोंका स्वरुप श्रावकको जानना परंतु आदरना नहीं सो कहते हैं

१ 'इतरिये परिगाहिय गमणे' थोडे काल की स्त्रीसे गमन करे, अर्थात् १ कितनेक परस्त्रीका त्याग कर ऐसी अभिलाशा करे की वेस्या तो किसी की स्त्री नहीं है, इस लिये इसको मैं द्रव्य दे कर मास वर्षादिकका करार (वायदा) करके रखू कि इतने दिन तक अन्यपुरुषका सेवन नहीं करना ऐसा बंदोबस्त कर लेवूं तो फिर यह मेरी स्त्री हुइ. ऐसा विचार कर उस के साथ संभोग करे तो पहला अतिचार लगे क्यों कि जो पंचों की साक्षी से ग्रहण की जाती है, वोही पतनी होती है, और सब पर स्त्री की गिनतीमें हैं + २ पाणी ग्रहण तो किया अर्थात् परण तो लिये, परतु जबतक वो रुतु प्राप्त न होवे तब तक भोगणे जोग नहीं हैं क्यों कि उसकी विषय पर रूची नहीं, फक्त परवश से पति की आज्ञाका स्विकार करती हैं जो वय प्रगमे विना स्वस्त्रीका सेवन करे तो यह अतीचार लगे

२ 'अपरि गाहीया गमणे' अपरणी (अविवाही) स्त्री से ग मन करे सो अर्थात् १ ऐसा विचारे की मैंने पर स्त्री के सोगन किये हैं, परतु यह तो कुँवारी है, किसी की स्त्री हुइ नहीं हैं, दूसरेका नाम न धरावे वहां तक इसके साथमें गमन करु तो मेरे व्रतका भग नहीं होगा ऐसा विचार कुवारीकासे गमन करे तो अतिचार लगे क्यों कि यह काम राज पच विरुद्ध है, अनीति है, गर्भ रहने से निंदा और

+ सुचना—चोथे व्रत के पहले अतीचारको पहली कलम और दूसरे अतीचारकी १—२—३ कलम साफ अनाचार रूप जाणनी ऐसा अर्थ करने की अच्छी रूढि है इस लिये यहां लिखी हैं पहिले अतिचार की १ कलम और दूसरे अतीचार की ४ थी कलम अतिचार कर जाणना

आत्मघात निपजे, वा किसी की पत्नी न हुइ तो तेरी कहा से आइ? अब्बी तो वो पराइ स्त्री है

२ कोइ ऐसा विचारे की यह विध्वा हो गइ, इसका मालक मर गया, अब मै इसका मालक होवूं तो क्या हरकत है? यों विचार विधवा से गमन करे तो यह अतीचार लगे, क्यों कि पती मर गया तो भी स्त्री उसी की वजेगी विधवा गमन से गर्भपात आत्मा घात निपजनेका संभव है

३ कोइ विचारे की वैस्या किसी की स्त्री नहीं है, इस के साथ गमन करनेमें क्या दोष है? ऐसा जान गमन करे तो दोष लगे

४ किसी की सगाइ (सादी) तो हो गइ है, परन्तु लग्न नहीं हुवा, तब मनमें विचारे कि यह तो मेरी ही स्त्री है, इसके साथ संगम करने की कौनसी हरक्त है? क्यों विचार उसके साथ गमन करे तो अतिचार लगे, क्यों कि लग्न हुये पहिले कोइ कारण निपज जाय, तो उसको दुसरा भी ग्रहण कर लेवे तथा पंच साक्षी विरुद्ध काम है

कुंवारी विधवा वैस्या या पर स्त्री * इनका गमन दोनों लोकमें दुःख देनेवाला होता है § १ जो स्त्री उसके पती की नहीं हुइ तो,

---

*सवैया-प्यारी कहे, सुणो, प्राण प्रिय! परनारके संग न जावणाजी, एक जान जावे दूजा जार कहे, तीजा गांठका माल खिलावणाजी; माइ पथ सुने फिट २ करे, तेरी कुजातीमें धुल नखावणाजी, राजा सुणे तब दंड लवे, और जूत्यों की मार पडावणाजी; ऐसे अवगुण जान हो प्राणपती' पर नारके संग न जावणाजी ॥ १ ॥

§ श्लोक-तस्मा धर्मार्थि मिस्त्याज्य पर दारोप सेवन ॥
नयति परदारास्तु, नरकानेकविंशति ॥ १ ॥

अर्थ-पर स्त्रीका गमन २१ वक्त नरक में डालता है, ऐसा जान धर्मात्मा पुरुष पर स्त्री सेवन त्यागते हैं

तेरी कहांसे होनेवाली ? और वेश्या तो महा कपट की खान, किसे की हुइ नहीं, होवे नहीं, और होवेगी नहीं जब तक धन देते हो त तक वो अन्धा, बैरा, लुला, पागला, वृद्ध, बाल कुष्टी, भंगी देडा नीच कू रुप सूगला—मलीन कैसा भी होवे उसे प्राणसे भी ज्याद प्यारा कहती है और धन खुटे प्राण प्यारे को धका मारके निकाल देती है ऐसी रचना देख कर भी जो पर स्त्री का सग नहीं छोडते है वो इस लोकमें फजीत (निर्लज्ज) होते है राज वह पच दंड पाते है सूजाक गरमी आदि बीमारी से सडके २ विना मोत रो रो के मर है २ और परभवमें नर्क में जाते हैं, वहां यम लोहे की गर्म पुतल करके चेटाते है, इत्यादि अनेक दु ख देते है, यह दोनो भवमें मह दु खका कारण ठिकणा जाण पर स्त्री का संग छोडनाजी

३ " अनग क्रिडा करणे " कहतां योनी सीवाय अनेरे अंग (शरीर) की साथ काम क्रिडा करे अर्थात् १ ऐसा विचारे की मैंने परस्त्री के साथ मेथुन क्रिया के सोगन लिये है कुछ अनग क्रिडा के त नहीं लिये है, यों विचार अधर चुंवन, कुचमर्दन, आलिंगन, इत्यादि करे परंतु यह अयोग्य कर्म है, श्रावकको तो परस्त्री के गुप्त अगोपाग देखना भी योग्य नहीं है, तो फिर अनग क्रिडा करनी कहां रही ! और अनंग क्रिडा भी व्यभिचार ही हैं यह कर्म हुये पीछे व्रत पा लना मुशकिल है इसलिये वर्जे, २ काष्ट की, मट्टी की, कपडे की, पत्थर की चमेड की इत्यादि पूतली के साथ काम क्रिडा करे सो भी अनंग क्रिडा की गिणतीमें है ३ कितनेक हस्त कर्म और नपूंसक सगमको भी अनंग क्रिडा कहते है यह सब कर्म महा मोहका, कर्मबंधका स्थानक है, व्यभिचार ही है, इन सब कर्मोंको आत्म हितार्थी श्राव क सर्वथा वर्जे

४ " पर विवहा करणे " कहता कूटुंब सिवाय दूसरेका व्याव लग्न करे अर्थात् गृहस्थको अपने न्याती गोती भाइबंध जिनकी माल की कर बेठे हैं, उनके लग्न विवाह करने से बचना तो बहुत मुशकिल है, परन्तु श्रावकको अन्य मतावलंबियों की तरह कन्यादानका पुन्य जान ब्राह्मणादिक की कन्या परणाना, तथा अपना मोटाइपणा कायम रखने आप अगवानी होकर सर्व गाम या देशवालेका सगा सबंधी न्यात जात सर्व जने के व्याव के काममें अगवाणी होकर सगपण (शादी) करावे यह महा कर्म बंधका कारण है, संसार वढानेका कारण है, मैथुन क्रिया की वृद्धि होणेका कारण है, और योग जोडा नहीं मिले तो दंपतियोंमें क्लेश होवे उसका अपशय उसको मिलना हैं इत्यादि अनर्थका कारण जाण श्रावक दूसरेके सगपण के झगडेमें तो नहीं ज पड, जितना कर्मबंधसे बचाव होय उतना बचे

५ ' काम भोगेसू तिव्वा भिलासा ' काम भोग की तीव्र (अ ति) अभिलासा (इच्छा) करे अर्थात् १ काम-छे राग तीसरागणी अनेक विणादिक वार्जित्रों के साथ से तल्लीन हो श्रवन करना स्त्री के गुह्य अगोपांग नम चित्रका वारंवार अवलोकन करना (देखना) २ भोग-फुल, अतरादि सुगंधी द्रव्य सदा सुंघना नित्य पाच (दूध दही, तेल, घी, मिठाइ) तथा नव (पांच पहिले-दारु मास मद्य (स-हेत) मक्खन) विगय नित्य भोगवे रसायण का सेवन करे वीर्य स्थमन गुटिका औषध लेवे नित्य षट रस भोगवे, वारवार आलिंगन चुंबनादि करे पुष्प शय्या अतर फूल लगा कर सोले शृंगार सज कर वाक पाक गेह कि स्त्री देख कर आशक हो जाय वसीकरण आक

सो पांचमा अतीचार इस तीव्र अभिलापा स या रसायणादिक के से वन से वहुथा शरीरमें व्याधी उत्पन्न होणेका सभव हैं शरीरमें धातु फुट निकलती हैं, सुजाक, सूल, भ्रमचित, कंपवायू, मूरछा, सुसती, विकलता क्षय रोग निर्बलतादिक वीमारीसे अकाल मृत्यू निपजती हें, और तीव्र अभिलापा से समय २ बन्ध कर्म ववते है, शास्त्रमें कहा है, कि 'काम पत्थेव माणा, अकामा जती दुग्गइ' काम की प्रार्थना करे और काम भोग सेवन नहीं करे तो भी मर कर नर्कादि दुर्ग तीमें जावे ऐसा जाण तिव्रभिलापा रुप पांचमा अतीचार सर्वथा वर्जे जो इच्छा रोकते भी न रुकती होय तो विगय त्यागे, तपस्या करे और ब्रह्मचारीके चरित्र और विषय निषधक पुस्तकोंका सदा पठन मनन करे

चौथे व्रतके पांच अतीचार टालके सर्व था प्रकारे मूल वृत ब्रह्मचर्य इसकी सम्यक प्रकारे जो आराधना करता है, उनकी देव दानव मानव सेवा करते है सर्व विश्वमें कीर्ती निवास करती है बुद्धि की प्रबलता होती है शरीरमें रुप तेज बल की वृद्धी होती है- दुश्मनके किये हूये मत्र जत्र कामण दूमण मूठइत्यादि कुछ नहीं चलते है, दुष्ट देव व्यंतरादिक किसी प्रकारका उपद्रव नहीं, कर सक्ते हैं, सीलके प्रभावसे अग्नी, पानी, रुप, समुद्र स्थल रुप, सिंह बकरी रुप, सर्प डोरी रुप, या फूलकी माला रुप, उजाड वस्ती रुप जेहर अमृत रुप इत्यादि सर्व अनिष्ट प्रादुर भाव पाकर शूभ रुप प्रगम, जाते है कोइ क्रोड सौनेये नित्य दान देवे और कोइ एक दिन सील पाले तो तूले नहीं ! सीलवत यहां अनेक सूख भूक्त आगेको स्वर्ग के और मोक्षके अनत सुख पाते हैं

५ पान्चमा अणुव्रत थुलाओ परिग्गहाओ वेरमण' कहता पान्चमे वृतमें श्रावक थुल (वहुत) परिग्रहसे निवर्ते अर्थात् सर्वथा परि

ग्रहका तो त्याग होना मुशकिल है क्यों कि गृहस्थका परिग्रह विन कार्य भार कैसे चले? तथा कहा है कि 'साधुके पास कोडी होय तो साधू कोडीका, और गृहस्थके पास कोडी नहीं होय तो कोडीका' इस लिये गृहस्थ द्रव्य रखते है, परन्तु ऐसा नहीं कहा है कि धनके लिये मर्यादा भंग करना, अति आशा करना, या वे मर्यादा हो रात दिन मारे २ फिरना क्यों कि कितनी भी महेनत करी तो भाग्य उप्रात लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती है और कितनी भी लक्ष्मी प्राप्ती हो गइ तो संतोष विन तृप्ती होने वाली नहिं कहा है 'जहा लाहो तहा लोहो लाहो लोहो पवढई' ज्यों ज्यों लाभमें वृद्धि होती है त्यों त्यों लोभमें वृद्धि होती है, तृष्णाको विन पालका तलाव कहा है, अर्थात् जिम तलावको पाल नहीं होती है उसमें कितना भी पाणी आया तो भी वो भरता नहीं है ऐसे ही लोभी मनुष्यको सर्व सृष्टीका द्रव्य प्राप्त हो, गयातो भी उसका पेट भरता नहीं हैं देखिये की एक वक्त जिनको पहरने कपडे और खाने अन्न नहीं मिलता था, वृक्षके पत्ते उनके वस्त्र और फल कंद जिनका अहार तथा मुंहको मट्टी लगाइ वोही उनका सृंगार, सो राजा महाराज हो गये तो भी उनका पेट नहीं भराया और ठिकाणे २ लाखो क्रोडो मनुष्यका कट्टा करजो सपूर्ण पृथवी पति हो जाय तोभी कभी पेट भराय क्या? जो अत्यंत हीन स्थीतिको प्राप्त हुये राजा महाराज हो गये उनकी इच्छा तृप्त न हुइ तो अहो भव्य? तुम लाख क्रोड कमानेसे क्या तृप्त हो जावोगे? तृष्णा है सो महा दुःख का कारण है, * और 'संतोष परमं सुख' संतोषी पर्म

* काव्य—यदुर्गामटवी मटति विकटं क्रमति देशान्तरं।
गाहन्ते गहन समुद्र मतनू क्लेशा कृषिकुर्वते ॥
सेवन्ते कृपण पतिगजगटा संगट्ट दुसंचर।
सर्पति मघन धनाधिल स्तल्लोभविस्फुर्जितम् ॥

सुखी कहा है इसलिये सम्यक व्रती श्रावकको परिग्रह की अ मर्यादा घस्य करनी परिग्रह नव प्रकारका

१ खत यथा पम्माण खेत (उघाडी भूमी) का इच्छित प्रमाण क रना अर्थात् खेत (वर्षादसे धान निपजे सो) अडाण (कुवा बावडी के पाणीस अनाज निपजे) बाग (अनेक फल फूल पैदा होवे सो) बाडी (अनेक भाजी शाक पैदा होवे सो) वन (एक प्रकारके बहुत वृक्ष होवे सो) तथा छुट्टी भूमीमें घांस प्रमुख निपजे सो, यह सब उघाडी भूमीका जाननी, बने वहां लग तो श्रावकको उपरोक्त वस्तुका संग्रह नहीं करना, क्यों कि यह सर्व महा आरंभ (सदा छे, कायका घमशान होवे) ऐसा ठिकाणा है- इस कर्ममें त्रस जीव की भी हरेक वक्त घात होती है महा दोपका ठिकाणा जाण छोडना जो नहीं, छूट सके तो, जितना चाहिये उतने नंग की एक दो जावत लप लगे उतने खेत अडाण वाग इत्यादि रखे उन की लंबाइ चोडाइ विगेरेका प्रमाण करे थोडसे काम चले वहां तक विशेष न रखे, और घटाता रहे

> नीचस्यापिचिरं चटुनिरचयं त्यायांति नीचैर्नत ।
> शत्रोरप्य गुणात्मनोपि विदधत्युच्चैर्गुणोत्कीर्तीम ॥
> निर्वेद न विदति किंचिद् कृतघ्नस्यापि सेवाकृत ।
> कष्टंकि म मनस्वीनोपि मनुज कुर्वंति वित्तार्थिना ॥

अर्थ—धनार्थीओं विषम अटवी में परिभ्रमण करते है विकट देशो को उल्लंघते है बडे २ समुद्रो तिरते है, महा कष्ट मय कृषी कर्म भी करते है कृपण की सेवा करत है, ऐसे मदोनमत्त गजेन्द्रवत जीवो धन लिये कष्ट सहते हैं नीच मनुष्योके आगे भी नम्रता युक्त वचन बहुत काल तक उचारते है नमस्कार भी करते है, शत्रुओके गुणानुवाद बो लते है कृतघ्नोकी सेवा करत है ऐसा भी मनुष्य धनके लिये क्या क्या नहीं करते है ! अर्थात् सर्व करते है

२ 'वत्थ यथा पम्माण' वत्थ (ढकी भूमी) का इच्छित प्रमाण करे अर्थात् घर (एक मंजल) महल (दो आदि बहु मजल) प्रासाद (शिखर बंध घर सो) तलघर (धरतीमें के भूवारे) हाट (व्यापारका मकान) इत्यादि ढकी भूमी—घरादिक इन की १–२ उप्रांत मर्यादा करनी, और लम्मबाइ चोडाइ ऊंचाइका भी प्रमाण करना जहां तक सीधा बणा हुवा मकान मिले, या अपनेको रहनेको होवे वहा तक नवीन मकान बंधानेका आरंभ नहीं करे, क्यों कि नवा मकान वनानेमें छे कायाका बहुत काल तक कुटारंभ होता है इस लिये चिकणे कर्म बंधका कारण हैं ऐसा पाप से डरे द्रव्य के जास्ती खरच सामे सहीं देखना परंतु पाप से आत्मा बचाना जो नहीं चले तो जितने घरादिक चाहिये उनकी लंबाइ चोडाइ ऊंचाइका प्रमाण कर ज्यादा बंधानेका त्याग करे और पाप घटे वहा तक घटावे

(३–४) 'हिरण सुवण यथा पम्माण' चादी सोनेका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् यह सोने चादी दो तरह से रहते हैं १ विना घडा चांदी, सोना, थेपी, लगडी प्रमुख २ घडा हुवा सोना चांदी प्रमुख सो मुद्रिका आदिक आभरण (गेहणा) इन के नंगका तथा वजन तोला सेर प्रमुख और कीमतका प्रमाण करे तथा चले वहां तक नये गेहणे घडावे नहीं क्यों कि घडानेमें अमी वायू पाणीका विशेष आरंभ निपजता हैं, और अमीका जहां आरंभ होता है वहां छे ही कायका आरंभ होनेका संभव है तय्यार दागीने मिलते कौन सुज्ञ श्रावक नवीन घडाने धातू गलानेका महा आरंभ करके कर्म बांधेगा ? जो कदापी नहीं चलता हो तो नंग वजन कमितका प्रमाण करे

५ 'धन पम्माण' धनका प्रमाण करे अर्थात् रत्न माणक हीरे पन्ने मोती मणी तुरमली लसनिया प्रवाल प्रमुख, तथा नगद नाणा,

रुप्या मोहर प्रमुख सिक्के नाणे इन की, नंग की और कीमतका प्र माण करे और नवीन खान खुदाकर, पत्थर चिराकर, नवीन जवेरात निकलावे नहीं, क्यों कि पृथ्वी खोदनेमें, पत्थर चीरनेमें, अनेक मसाले ल गानेमें, अनेक जीवोंका घमशाण होता है और मोती निकलाने सी पो चिरानी नहीं, क्यों कि सीप वेंद्री जीव हैं उनको चिरनेसे रक्त जैसा पाणी निकलता है और अराट शब्द कर वो रोती है, आक्रंद करती हैं यह महा अनर्थका कारण हैं जो सीधी सर्व वस्तु मिलती है तो नाहक कायको कर्म बाधना चाहिये ? इतने उप्रात नहीं सरता होय तो मर्यादा करे कि इतने उप्रात न करुंगा

६ ' धान प्पमाण ' धान (अनाज) का इच्छित प्रमाण करे, अर्थात् शाळ, गहूं, चणा, जवार, बाजरी, मक्की, आदि धान, तथा धान जैसे ही राजग्रा, खसखस, प्रमुख और भी वस्तु हैं, तथा धान शब्दमें सब खाद्य (खाणेके) पकवान, घी, गुड, सक्कर, मेवा, किराणा, लूण, तेल, प्रमुख सर्व जानना, इत्यादिक की मण सेरादि प्रमाण से मर्याद करे और इन पदार्थको बहुत काल तक सग्रह करके नहीं रखना, क्यों कि यह वस्तु बहुत काल तक टिक सकती नहीं है अनेक त्रस जी वोंकी उत्पत्ति हो जाती है इस लिये इनको रखणे के कालकी भी मर्यादा करनी चाहिये और बने वहा लग इनका वेपार नहीं करना, क्यों कि इस के सग्रह से अनेक त्रस जीवकी घात निपजती है तथा इस वेपारवाले के बहुत कर के खोटे प्रणाम रहत हे, यह दुष्काल पडना, बहूत चाहाते हैं कदापि इसके वेपार विन नहीं चले तो बजन की का ल की, मर्यादा करे घटे जितना पाप घटावे

७ ' दोपद यथा पम्माण ' कहता दो पगवाली वस्तुका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् १ बचपण से मोल ले कर रखे सो दास वर्ष मासा

दिक की मर्यादा कर के रखे सो कामकर (नोकर) तथा नित्य दाम दे कर रखे सो चेटक (चाकर) इत्यादिक बने वहा तक तो बहुत नोकर रखना ही नहीं, क्यों कि इस से प्रमाद बढता हैं और जितना अपने हाथ स यत्ना से काम होता है उतना उनसे हाना मुशकिल हे कदापि नहीं बने तो मर्यादा करे कि इतने उप्रात नहीं रखूंगा २ पक्षियोंका पालना सो भी दो पदमें गिना जाता है यह काम भी करना योग्य नहीं हैं ३ गाडी दो चक्र (चाक) वाले वाहणको भी दुपदमें गिनते हैं ४ और ऐसी भी मर्यादा करे की मेरे इतने पुत्र पुत्री हुये पीछे में ब्रह्मचर्य धारण करुंगा इत्यादि दो पदकी मर्यादा करे

८ 'चौपद यथा पम्माण' चौपदवाली वस्तुका यथा प्रमाण करे अर्थात् गाय भेंस, घोडे, ऊंट, बकरे इत्यादि पशूवोंका श्रावकको सग्रह नहीं करना, क्यों कि इनके सग्रह से वनस्पति (हरी) कच्चा पाणी और त्रस जीव मच्छर वग प्रमुख की विशेष घात करनी पडती है और एक अंतराय कर्म बंधनेका भी करन है- गाय भेंसादिकका दूध निकालने पहिले उसके बच्चेको छोडते हैं, उसके मूहमें दूधका घुट का आया के तुर्त छुडा लेते हैं, उस तडफडते त्रसाते हैं यह महा कर्म बधका कारण हैं कदापि चौपद रखे विन नहीं चले तो उनका प्रमाण करे की इतने उप्रात नहीं रखूगा

९ 'कुविय धातु पम्माण' तांबा, पीतल, कांसी, कथीर, सीसा लोहा इत्यादि धातु तथा इनके वर्तन (वासण) थाली लोटा प्रमुख जो कुछ घर कार्यमें लगे सो उनका वजनका नगका प्रमाण करे, और मिट्टीके लकडके वस्त्रके तथा कागज गला कर के शद्यादिक बनाते हे सो सब इसमे गिणे जाते हे, और कुविय शब्द घर वीखरेमें जो जो छोटे मोटे पदार्थो तथा पहरने ओडनेके वस्त्रादिक सब गिण लेना इन

के नग की वजन की और कीमत की मर्यादा करे विशेष घर विस्ते रा न वदावे कहा हैं की " सपत जितनी विपत "

यह नव प्रकारके परिग्रह की मर्यादा इस तरह करे कि जितनी अपने पास वस्तु है और इसमें अपणा गुजरान तावे उम्मर सुखे हो जायगा तो फिर ज्यादा आडंवर वढाके कर्म वंधका अधिकारी नाहक कोन होगा?

कितनेक कहते हैं, कि अपन संग्रह करके नहीं रखेंगे तो अपने वाल बचे पीछेसे क्या करेंगे? यह उनका कहना भोलपका है, क्यों कि निश्चयमें कोइ भी किसी को सुखी दु खी नहीं कर सक्ता है सव पूर्व जन्मसे जितने २ पुद्गल भोगवणेका सचय करके आते, हैं, उतना २ सयोग उनको सहज ही वन जाता है गरीव मा वापके पुत्र श्रीमत, और श्रीमतके पुत्र गरीव अनेक इस सृष्टीमें द्रष्टी आते है जो मां वापके घनसे वो सुखी दु खी होवें तो यह दशाको क्यों प्राप्त होवे? और भी गर्भमें जठराग्नी के तापसे वचकर वाहिर पडे तव आपको माताके दूध की जरुर थी सो कौन पैदा कर सक्ता है? परन्तु दैवयोग्यसे वक्त पर वो भी मिल जाता है, तो क्या खान पानादि इच्छित सामुग्री व कपर न मिलेगी? नाहक दूसरेके लिये अपन कर्मका वध कर दु खी क्यों होना? आगे आनदजी प्रमुख श्रावकोंने मर्यादा करी है सो उनके पास द्रव्य था उतने उप्रात द्रव्य की करी है आप की इतनी तृष्णा न रुके तो इच्छा प्रमाणे रख मर्यादा कर पापसे जरुर वचो कोइ कहेगा कि पास सो रुपेका धन नहीं और लाख उप्रात सोगन कर लिया तो उससे क्या फायदा? परतु " स्त्री चरित्र पुरुपस्य भाग्यं, देवा न जानाति कुतो मनुष्य " पुरुषके भाग्यको देवता भी नहीं जानता है कि यह गरीव आगे कौनसी उच्च स्थितीको प्राप्त होगा? गायों

ओर वकरीयो को चरानेवाले राजा महाराजा हो गये सो प्रत्यक्ष दिख ते है, इसे याद करो तथा मर्यादा होनसे तृष्णा रुक जाती है कि मुजे इस उप्रात नहीं रखना है, ज्यादा हाय दौड करके क्या करुं ! यों स तोप आने से उसको पर्म सुख की प्राप्ती होती है * इस लिये मयादा अवस्य ही करनी चाहिये यह व्रत एक करण तीन योगसे ग्रहण कि या जाता है मे रखु नहीं मन वचन काया करके पुत्रादिकको रखनेका कहना और रखतेको अच्छा जाननेका आगार है

इस पाचमें व्रतके पाच अतिचारका स्वरुप जानकर इन अति-चारोंसे इस वृतको बचाकर निर्मल रखना

१ ‘ खेत वत्थु पम्माणाइ कम्मे ’ खेत घरका प्रमाण अतीक्रमे (उलघे) अर्थात् १ पहिले पाच खेत रखे है, और फिर छटा खेत आ गया तो उन पाच खेतमेंसे एक खेत की पाल (मर्यादा) तोड उसमे मिला लेवे, तो अतिचार लगे क्यों कि प्रमाण करते वक्त ल-वाइ चोडाइ वगैरेका भी प्रमाण किया है, सो टूटे कदापि लंबाइ चौ डाइका प्रमाण नहीं भी किया होवे तो भी दोष लगे क्यों कि वो छटा खेत प्रत्यक्ष पाचमें मिलाया मन साक्षी देता है २ ऐसे ही वत्थु (घर) की वावतमें जानना पहिल घर रखे है, उससे ज्यादा आ जावे तो भीत फोड उसमें मिलावे तो अतिचार लगे और जास्ती घर आ या धर्मस्थान खाते दे देवे तो धर्म होवे

२ ‘ हीरण सुवर्ण पम्माणाइ कम्मे ’ चादी सोनेका प्रमाण अ

---

* गाथा—जहजह अप्पलोहो, जह २ अप्पपरिग्गहारंभो ॥
तहतह सुहपवड्डाइ, धम्मस्सय होइ ससिद्धि ॥ १ ॥
अर्थ—ज्यों ज्यों लोभ थोडा (कमती) होता आता है त्यों त्यों आ रंभ और परिग्रह कम होता है और त्यों त्यों सुख की और धर्म की वृद्धी होती है

तिक्मे अर्थात् घडे विना घड चांदी सोनेके ढेपे तथा दागीनेका प्र माण किया है, उससे जास्ती आ जाय तो पहिले के गेणेमें ताढ भाग मिला लेवे तथा विचारे कि यह प्रमाण तो मेरे है, कूछ मेरे पुत्रादिक के तो नहीं, और आप कमा कर उनको देवे तो भी अतिचार लगे हां धर्म खातेमें वापर देव तो पुन्य उपार्जन करे

३ 'धन धान पम्माणाइ कम्मे ' धन धानका प्रमाण अतिक्रमे अर्थात् नगद सोने रुपेका नाणेका तथा जवेरातका तथा धान(अ नाज़) का प्रमाण किया है, और मर्यादा उप्रात बढ जाय तो पुर्वोक्त प्रुत्रादिक की नेसरायमें करे तो पाप लगे धर्म—पुन्य काममें लगावे तो बचे

४ 'दोपद चौपद पम्माणाइ कम्मे ' दोपद नौकर मनुष्य पक्षी इ त्यादिका तथा चौपद गाय घोडी प्रमुखका प्रमाण किया है और उस उप्रांत जो कभी आ गये, उनको अपनी नेसरायमें रख तो पाप लगे तथा लाये पीछे बच्चे हूये होय तो उसका आगार रखणे का, पचख्याण के बक्तमें विवेक रखना जो आगार न रखा होय तो उनको दूसरे अ गम ठिकाणे पहोंचावे तब ही अतिचार से बचे और पशु पक्षी कोइ मरता होय उसे दया निमित छोड कर लाये वो दूसरे ठिकाणे जाणे अस मर्थ है, उसे दया निमित रखे तो दोष नहीं लोभ निमित्त रखे तो दोष लगे

५ 'कुविय धातु पम्माणाइ कम्मे ' तावा पितलादिक धातु तथा उनके बर्तन और सर्व घर बिखरा जिसकी मर्यादा करी है उस उप्रांत हो गया और उनको ताड फाड़ ताके एक करे, तथा पुत्रादिक स्वजन की नेसरायमें रखे, एक सुइ मात्र भी जो मर्यादा उप्रांत रख तो अतिचार लगे

इन पाच ही अतिचारको टाल कर शुद्ध व्रत पाले तृष्णा घ

कना कुछ ज्यास्ती धनसे ज्यास्ती सुख प्राप्त नहीं होता है धन पैदा करते वक्तमें भी भूख प्यास सीत ताप अनेक कष्ट सहन करने पड़ते है, पैदा हुये पीछे चौर अग्नी कुटुम्बादिक से बचा कर रखना पडता है भरनींद में से खटका सुन चोकके उठना पडता हैं यों आता ही दु:ख देता है और मूजी (कृपण) तो खरचते हुये रोते हैं दूसरे के नशीबमें न होय और आकर चला जाय तो भी रोना पडता है ऐसा अनर्थका — दु:खका मुल धन है तो हे भव्य! जो सर्वथा न छूटे तो मर्यादामें रह संतोष धारण करो दु:ख से बचो क्यों कि जितना तुमने सग्रह किया उतना कुछ तुमारा नहीं हैं, तुमारे काममें तो उसमें का थोडा ही हिस्सा आवेगा हजार घोडे हूवे तो एक पर ही चडोगे, तथा तुमारा तो वो ही है कि जो तुमने सुकृत्य दया धर्म—ज्ञान वृद्धीके कार्यमे लगाया सोइ आगेको पावोगे ऐसा जाण संतोष धरो तृष्णा घटावो जो इस सतोष व्रतको सर्वथा प्रकारे त्रियोग शुद्धीसे आराधेगा, वो सर्व सुखको किंचित कालमें प्राप्त करेगा सतोपीके पास लक्ष्मी स्थिर होकर रहती है यश की वृद्धी होती है लोकमें बहुमान होता है, हृदय सदा सतुष्ट रहता है सुखसे सर्व जिंदगानी गुजरती है, इस लोकमें अनेक सुख भोगवके पर भवमे स्वर्ग मोक्षके अनत सुख अनुक्रमें प्राप्त करता है

॥ इति पांच अणुव्रत सामाप्त ॥

तीन गुण वृत

अब तीन गुण वृतका बयान करते हैं पूर्वोक्त पांच अणवृतको गुण के करता, जैसे कोठारमें माल रखने से बिगडता नहीं हैं, तैसे तीन गुण वृत धारण करने से पाच अणुव्रतका जापता होता है

६ 'दिशी वेरमणव्रत' देशावरमें जाने के क्षेत्रकी मर्यादा करे अर्थात् जहा लग यह प्राणी दिशायों की मर्यादा नहीं करता है,

वहां लग इस जगतमें जितना पाप होता है उस की क्रिया (हिंसा) चली आती है यह दिशा जघन्य तीन (ऊंची नीची तिरछी), मध्यम छे (पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर ऊंची नीची), उत्कृष्ट दश (चार तो पूर्वादिक पहिले कही सो, और चार अमी, नैरुत्य, वायु, इशाण कूण तथा ऊची और नीची) और भेदातरसे अठारे (चार दिशी चार विदिशी आठ इनके आंतरे, और ऊची नीची) दिशी होती है *
इनमेंसे यहा पहिली कही सो तीन दिशा ही प्रमाण करनेके लिये ग्रहण करी जाती है

१ 'उड्ड दिशा यथापम्माण' ऊंची दिशामें जानेका प्रमाण करे अर्थात् १ पहाडपर, झाडपर, मेहल तीरस्थभ (मीनारेपर) चडनका, तथा विध्याधर दवताके विमानमें, गुब्भारेमें या यांत्रीक घोडे गरुड प्रमुखपर स्वार हो ऊचा जाना पडे तो उसकी मजल हाथकोशादिकके हिसाबसे मर्यादा करे २ कोइ ऐसा भी कहते है कि पश्चिमसे पूर्व की जमीन ऊची है, इस लिये पश्चिमके रहनेवालेको पूर्व दिशामें जानेका ऊत्र पणेका कोशादिकसे इच्छित प्रमाण करना चाहिये

२ 'अहो दिशी यथा पमाण' अधो (नीची) दिशीमें जानेका प्रमाण करे, अर्थात् गुफामें, भोयरेमें, तल घरमें, खदानमें, तथा पूर्वोक्त रीतिसे पूर्व दिशाका मनुष्य पश्चिममें जावे तो इच्छित नीचे उतरेने की मर्याद करे

३ 'तिरिय दिशा यथा पमाण' तिरछी दिशाका इच्छित प्रमाण करे अर्थात् पूर्वादिक चार दिशी विदिशीमें जानेका प्रमाण कर इस प्रमाणमें जितन कोश रखे हैं उसके अंदर की अव्रत तो आती है

* अठारे भाव दिशी—१ पृथ्वी २ पाणी ३ अग्नी ४ हवा ५ सूक्ष्म वनस्पति, ६ सख्यात जीवघाली ७ असख्यात जीवघाली ८ अनंत जीव घाली (यह ४ वनस्पति) ९ बेंद्री १० तेंद्री ११ चौंद्री १२ पचेंद्री (यह ४ त्रस तिर्यच) १३ समुत्सम १४ कर्म भूमी १५ अकर्म भूमी १६ अतर द्वीपा क मनुष्य १७ नर्क १८ स्वर्ग इन १८ भाव दिसी से जीव आता है

और सर्व, देश ऊणी तीनसे त्रीस चालीस (२४३) राजू की अव्रत (पाप) आनी वद हो गइ, और जो पच्चखाण किये हैं, उसके उप्रांत जाकर पापके पांच (हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह) आश्रव नहीं सेवे परंतु जीव छोडाने, साधुके दर्शन करने, या दिक्षा ग्रहण करे पीछे जावे पच्चखाण भंग न होवे इस व्रतके पच्चखाण दो करण और तीन जोग से होते हैं इस वृतके रक्षणके लिये पांच अतिचार जानकर छोडना चाहिये —

१ 'उड्ढ दिशी पमणाइ कम्मे' प्रमाण किये उप्रांत ऊंचा जावे अर्थात् ऊंची दिशामें जानेका कोशोंका जो प्रमाण किया है, उस उप्रांत जानकर जावे तो अनाचार लगे, और अजानमें जावे तो अतिचार लगे, परंतु इतना जरूर ध्यान रखना चाहिये कि मर्याद उप्रांत भूलकर गये बाद जहा याद आवे वहासे पीछा पल्ट जाय, आगे ना बढे, हवामें कोइ वस्तु उडजाय तो आप मर्यादा उप्रांत न जाय अपनी मर्यादामें वो वस्तु आकर पडजाय, तथा कोइ लाकर अपनको देवे उसे ग्रहण करे तो व्रतका भंग नहीं होवे ऐसे ही देवता विद्याधरादिक हरण कर जबरदस्तीसे ले जावे तो भी व्रत नहीं भगे परंतु वस यहांसे यहां तक पीछा मर्यादामें जो न आवे तो वहातक आश्रव नहीं सेवे

२ 'अहो दिशी पमणाइ कम्मे' नीची दिशीका प्रमाण अतीक्रमे, अर्थात् जैसी ऊंची दिशा की विधी कही वैसी ही नीची दिशा की जानना जो बावडीमें खाडमें मर्याद उप्रांत वस्तु पड गइ, या कोइ ले गया तो आप नहीं लावे अपने कहे विन कोइ दूसरा ला देवे तो व्रतका भंग न होवे

३ 'तिरिय दिशी पमणाइ कम्मे' तिरच्छी दिशाका प्रमाण अति क्रमे (उलधे) अर्थात पूर्व दिशा चार दिशा विदिशा की मर्यादा, ऊंची दिशा की तरह अजानमे ता अतिचार लागे रेल गाडीमें निद्रादिक के योगसे, या समुद्रमें झाज आदिकमें तोफानादिक के योगसे, जो मर्यादा उप्रात चला जाय, तो जहा स्मृति आवे वहांसे

शक्की होवे तो तुर्त पीछा आवे, नहीं अवाय तो मर्यादामें न आवे वहां तक आश्रवका सेवन न करे

४ ' खेत वुड्डी '' जमीन वधावे अर्थात् पूर्वादिक दिशामें ५०–५० कोश रखे है, और पूर्व दिशामें सो कोश जानेका काम आ गया, तब विचारे की मेरेको पश्चिम में जानेका काम पडताही नहीं है, इस लिये पश्चिमके ५० कोस पूर्वमें मिलाकर सो पूरे कर लेवे तो दोष लगे यों नहीं करना

५ ' सइ अंतरधा ' भ्रम चित्तसे; नशेके योगसे; या भूलकर कि मैंने इस दिशीमें ५० कोस रखे है कि सो, जहांतक पूरा निश्चय न होवे, वहा तक ५० उप्रात जावे तो अतिचार लगे याव शुद्ध न आवे वहांतक आगे नहीं जाना यह अतिचार टालकर छट्टावृत निर्मल पालेगा, उसको मोटा गुण तो यह हुवा कि ३४३ राजूकी बहुत अवृत मिटा दी, और किंचित रही, इससे तृष्णा रूकी, मन शात हुवा अव्रत रूकनेसे अनंत भव भ्रमण मिटाकर स्वर्ग सुख भोग शिघ्र मोक्ष पद प्राप्त करेगा

७ ' सातमा उवभोग परिभोग विह पच्चखाय माण ' कहता सातमे वृतमें उपभोग परिभोग की मर्यादा करे अर्थात् १ जो वस्त एक वक्तसे ज्यादा भोगवनेमें नहीं आवे जैसे आहार, पाणी, पकान, तंबोलादिक एक वक्त भोगव लिये पीछे निकम्मी हो जाती है, इस भोगको उपभोग कहते हैं, और २ जो वस्त वारवार भोगवनेमें आवे जैसे वस्त्र, स्त्री, मकान, वर्तन इत्यादिक को परिभोग कहते हैं इन उपभोग और परिभोग दोनोंके मुख्य २६ भेद किये है, सो इन २६ बोल्की मर्यादा करनेसे, सर्व जगतका मेरु जितना पाप है, सो घटाकर राइ जितना रहजाता है इन २६ बोलके नाम —

१ 'उलणीया विह' शरीरको पूछने (साफ करने) के टूवाल प्रमुख वस्त्र, २ 'दंतण विह'—दाँतको साफ करनेको दातणे मजण प्रमुख ३ 'फल विह'—वृक्षके फल आम्र जाम्व प्रमुख ४ अभगण विह—तेल फुलेल अतरे प्रमुख ५ 'उवट्टण विह' पीठी उगटणा तथा चिगटाइ निकालने हाथको गोवर, मट्टी, धूल, राख लगावे इत्यादि तथा साबु सारादिक जो शरीर साफ करने लगावे सो ६ 'मंजण विह'—स्नान (अंगोल) करे सो स्नान दो प्रकारके होते हैं १ देश स्नान सो गोढे नीचे पग खूनी तक हाथ, और गर्दन (गले) उपरका शरीर धोवे सो २ सर्व स्नान सो नख शिख सर्व शरीर पखाले सो ७ 'वत्थ विह' सूत्र उन रेसमादिकके पहरने ओढने के कपडे ८ 'विलेवणविह' केसर, चंदन, गोपीचदन, कूकुं इत्यादि सिरके लगाने (तिलक करने) की व-

---

१ श्रावक सचित मिट्टीसे तथा हरी लकडीसे दातण नहीं करे १ शोक निमित्त श्रावक अतरतेल शरीरको न लगाय, औषधादी निमित्त लगावे तो प्रमाण करे १ इस वक्तमें चरबीका साबुन बहुत आता है सो श्रावकका छीने लायक भी नहीं है, तो वापरना किधर रहा ! तथा खारादिक वस्त्रो लगाकर, और तेल आमले उगटणा शरीको लगाकर, नदी तलावके अंदर स्नान नहीं करे; क्या कि उसका रेला जाय वहातक जीवोंका सहार हो जाये १ स्नान करे तो गरम पाणी ठंडा पाणी न मिलावे और मोरीपर, छीलोग्रीपर, कीडी नगरपर स्नान करने बैठे नहीं

१ रेशमके कीडे मकडीके तरह अपने मुहमसे तंतु (तार) निकालकर अपन शरीरको लपेट लेते हैं, उनको पालने वाले लोक तुर्त उकळते पाणीमें डाल मार डालते है; क्यों कि वो कीड बाहिर निकलते है तब उस तारके टुकडे २ हो जाते हैं ऐसे त्रस जन्तूकी हिंसासे रेशम निपजता है इस लिये श्रावकको रेशम तथा रेशमी वस्त्र वापरने योग्य नहीं है

स्तु ९ 'पुष्पविह' चंपा चमेली केवडा गेंदा गुलाब इत्यादि फूलें १० 'आभरण विह' सिरपेंच, कानके, नाकके, हाथके, कमरके, पेरके, इत्यादिक ठिकाणे पहेरनेके सोने चांदी जडाउ गेणे (दागिणे) ११ 'धूपविह' पंचांग, दशांग, अगरबत्ती, (ऊदबत्ती,) या सुगंधी धूप तथा मिरचीआदी अन्य द्रव्य की दुर्गंधी धूपें १२ 'पेज विहं' यहा काफी, चनागरा, उकाली, काढा प्रमुख तथा ठंडाइ भाग इत्यादि १३ 'भखण विह' अपने घरमें वनाये हुये तथा हलवाइके यहा वनाये हुये पकान खाजा प्रमुख फीके लाडु जलेबी कलाकंद प्रमुख मीठे १४ उदन विह मुग चने मसुर प्रमुख की दाल १५ 'सुपविह' चावल (तांदुल) गहू प्रमुख २४ जातका अनाज पाठांतर एक चावलके जितने प्रकार होवे सो सर्व १६ 'विगय विह' दूध, दही, तेल, घी सक्कर, गुड, तलणी वगैरविगयादि १७ 'साग विह' शाक, मेवा,

१ फूलमें नरमाइके जागसे अनंत जीवोंका समय है तथा फूलमें त्रस जीव बहुत रहते हैं इस लिये फूलको छीना भी योग्य नहीं है कितनेक दम्भा दर्भी हरक कामम फूलका आरभ करते हैं तूरे, गजरे, भार छाग वगरा बनाते हैं यह काम भावकको करना बिलकुल अयोग्य है २ सुगंधी या दुर्गंधी धूपके धूमसे मच्छर प्रमुख बहुत त्रस जीव मरजाते हैं तथा अग्नि विन धूप होती नहीं है और अग्नी महा जबर दस्त ही दिशाम छ कायका शस्त्र है इस लिये धूप नहीं करना कोइ आपधी आदिक निमित्त धूप करना पडे सो बात जुदी है ३ भांगी सफेदकी मिगाइ भी छीन लागते भी नहीं है इसका तो पहिले ही बयान किया है और भावकको विशेष मिठाइ खाना नहीं चाहिये, यथा कि इस से बहुत कर्मी जीवोंकी उत्पत्ति, तथा शरीरमें व्याधी उत्पन्न करनेवाला माना है ४ भक्ष्य धान जो पदार्थ नरम है, पूरी वानके प्रमुख उस तपरणा काल है ५ दूध घी आदिक जो पदार्थ दो पोर पर उस पार विगय रहते है तथा पहुत विगय के खानेसे प्रमाद की वृद्धि होती है इस लिये ज्यादा नहीं खाना

मूले प्रमुख की भाजी तथा तोरुककड़ी आदि वेल फल १८ ' माहूर विह ' मधुर पदार्थ, बदाम पिसते द्राक्ष प्रमुख मेवा (मिठाइ) मूरब्बा प्रमुख १९ ' जीमण विह ' जितने प्रकारके पदार्थ भोजन (अहार) की वक्त खानेमें आवे सो २० ' पाणी विह ' नदी नल प्रमुख निवाण घरके पिरेंडे और पाणी जितना पीनेमें आवे सो, तथा सरबत २१ ' मुखवासविहं ' मुख सफा करनेके पदार्थ, पान, सुपारी, लवंग इलायची चूण खटाइ वगेरे २२ ' वाहन विह ' १ हाथी, घोडे, ऊठ, प्रमुख चरते हुये ,२ गाडी, वगी म्याना, पालखी प्रमूख फिरते ३ झाज, नाव, घाट मछवा, प्रमुख तिरते ४ गभारा, विमान, प्रमूख उडते २३ ' वाहा नी विह ' पग रक्षण पगरखी, मुइ, खडावे, मोजे वगेरे २४ ' सयण विहं ' सेज्या पलग ❀ माचा (खाट) कोंच, टेवल, खुरसी, पाट वगेरे २५ ' सचित विह ' सजीव पदार्थ कच्चा पाणी, कच्चे दाणे, (अनाज) कच्ची हरी—लिलोतरी लुण × वगेरे २६ ' दव विहं ' जि

---

१ बहुत घास रोगसे भरे हुवे हैं इस लिये सबथा न छूटे ता विशेष घास नहीं खाना औरकितनेक भाजीके पत्तेपर त्रस जीव होते हैं उसे पर्जना तथा भाषण महीनेमें शाख नहीं खाना, क्यों कि नवा पाणीका रोग से भरा होता है; पशु घास खाते है सा भी नहीं पचता है पतला गोबर करते हैं १ खीले—नाखवाली पगरखी तथा लकड की खडावा नही पहरनी; इसस त्रस जीव की घात होनेका संभव है

❀ पणं यहा नक निवार डोरी या बेतसे बुने हुये आसनपर सोना बैठना नहीं, कारण—उसके अतर (छेदी) में त्रस जीव आकर मर जाते हैं

+ श्रावकको सचीत वस्तु बिलकुल नहीं खानी; कितनेक हरीको त्याग सुखाकर खाते हैं, वे बडा अन्याय करते हैं आरंभ बढाते हैं तृष्णा न रुके तो सुखा साक सीधा बहुत मिलता है.

तने नाम तथा स्वाद पलटे उतने द्रव्य जैसे गहु ता एक वस्तु है, परन्तु इसके रोटी, बाटी, पूडी, वाफला, यह चार द्रव्य हो गये, ऐसे ही पू ही तो एकही वस्तु है, परन्तु एक पूडी तवे की, एक पूडी कडाइ की ऐसे दो द्रव्य हुये यों जितने नाम स्वाद पलटे उतने द्रव्य जानना

यह छब्बीस बोल कहे इसको विवेकी श्रावक अतःकरणमें विचारकर जो २ बहात आरंभ की वस्तु नजर आवे उसका सर्वथा त्याग करे और जो २ वस्तु भोगवे विन काम नहीं चलता होये तो उसकी गिनती तथा वजन की मर्यादा करे और उसमें से भी समे २ घटता रहे

और भी श्रावकको २२ प्रकारके अभक्ष्यका सर्वथा त्याग करना

'२२ अभक्ष्य '*

बडके फल, २ पीपल के फल ३ पिंपरीके (फेंफर) के फल- ४ उंबर (गुलर) के फल, और ५ कोटिंबडी (कबीट) यह पांच प्रकार के फल अभक्ष्य है, क्यों कि इनमें अनेक त्रस जीव रहत है, फोडे तब भर २ उडते हैं

६ मदिरा (दारु) महुडे की, खजूर (शींदी) की, द्राक्षकी, इत्यादिकको बहुत काल तक सडाते हैं, कि जिसमें कीडे पड जाते है फिर उसको यत्र और अमी पाणीके संयोग से अर्क (रस) निकालते हैं उसे दारु या सराब कहते है उसको पीनेसे आदमी वे शुद्ध–विकल बावला बण जाता है नशे के धुदेमें चडा हुवा निर्लज्ज शब्द बोलता है, और निर्लज्ज कर्म अपनी माता भगिनी से करने मेंभी नहीं चूकता है, इसे खाद्य अखाद्य (भक्षाभक्ष) का विचार नहीं होता है. बहुत नशे के चडने से चक्कर आते है, वान्ती (उल्टी) होती है मल

* यह २२ अभक्ष ग्रंथके आधारसे लिखे हैं इसके बाबत में कितने विचार करते है परंतु किसी भी विचारसे जितना आरंभ घट उतना अच्छा है

मुत्रादिक के ठिकाणे पड जाता हैं इज्जत और धन गमता है बहूत नशे के जोर से वक्त पर मृत्यु भी निपजती है नशे के उतारमें मिष्टान खानेको जी चाहता है उसके लिये दागिणे, वस्त्र, घर, बेचकर नगे बन जाते हैं, जो मिष्टान नहीं मिले तो स्त्री पुत्र आदि स्वजन को मारते हैं, घरमें बहूत वक्त क्लेश बना रहता है इत्यादि महा हिंसा महा दुर्गुणका ठिकाना है श्रावकको बिलकुल ही सेवन करने योग्य नहीं हैं

७ 'मास' १ जलचर (मच्छ कच्छादि पानीमें रहनेवाले जीवका) २ थलचर पृथवी पर चलनेवाले जीव १ गाय, भेंस, बकरे, प्रमुख, ग्राम के रहवासी पशू २ हिरण, सुसल्या, सूर रोज प्रमुख जगल के रहवासी पशू ३ खेचर आकाशमें उडनेवाले चिडी कमेडी मोर तोते प्रमुख पक्षी यह तीन प्रकार के पशू—जानवरोंका वध (घात) करने से मांस निपजता है यह विचारे पशू—और सृष्टी के अनेक कामों के करता, अनेक उत्तम २ पदार्थ के देनेवाले, जिनको विन अपराध से मार कर कृतघ्नी होना यह बडा अयोग्य काम है बडे राजा महाराजोमें यह रीति है कि कोइ महा गुनाह करके मुखमें त्रण लेलेवे तो उसे छोड देते हैं, और विचारे तणभक्षी—उत्तम पदार्थ के देनेवाले, निरपराधी, पशुओंकी घात करते बिलकुल लज्जा धर नहीं, यह बडी आश्चर्य की बात है १ विष्णु धर्मवाले कहते हैं, परमेश्वरने मच्छ कच्छ नरसिंह (सिंघ) वराह (सूर) अवतार धारण किया है और फिर भी उन्हों की सिकार खेलते हैं, यह कितनी जबर भूल है ? २ मुसलमान इस दुनियामें दो तरह के पदार्थ कहते हैं —१ आबी—पानी से पैदा होवे सो आनाज फल प्रमुख यह पाक (पवित्र) है २ और पेशावी—पेशाव (मूत्र) से पैदा हूवे आदम, जानवर सो नापा-

क हैं. पेशावको इतनी नापाक गिनते हैं, कि उसका दाग कपडेका न लगे इस लिये वजू करते हैं (पेशाव किये पीछे मिट्टी ठीकरे से पवित्रता करते है), और पेशाव से पेदा हुये गोसको खा जाते हैं, यह कितनी ताजुबकी बात ! मांस देखते खराब दिखता है रक्त हड्डी आदि अशुची पदार्थ से भरा हुवा है, दुर्गंध आती है स्वत ही मलीन है और इसके खाने से क्षय, गडमाल, रक्त पित्त, वात, पित्त, सन्धी वायु, ताव (बुखार), (मिटफीवर), अतीसार इत्यादि रोग पेदा होते है

यह मांस भक्षण हिंसाका मूल है अर्थात् हिंसा किये विन मांस पेदा होता नहीं हैं मांसाहारीको जाती कुजाती का भेद रहता नहीं हैं किसी भी पशूको देखकर रौद्र घातिक प्रणाम हो जाते हैं. अपवित्र रक्तसे भरा हुवा, क्षणमें कीडे पडे ऐसा, महा दुर्गंधी, वस्तु है. शुक्र (वीर्य) और रक्तसे पेदा हुवा है सत्पुरुषोने इसकी ठिकाने २ निंदा करी है * ऐसा कौन आत्म द्रोही मनुष्य होगा कि अपवित्र मास खायगा ? कितनेक कहते हैं कि हम सीधा मांस खाते हैं, इस

---

* श्लोक—मांसभक्षयिताऽमुत्र, यस्यमांस मिहाद्म्यहं;
एतन्मांसस्य मांसत्वे, निरुक्त मनुरब्रवीत् ॥ १ ॥

अर्थ–मनुजी कहते है जो जिसका मांस खाता है, वो जीव उसका भी दूसरे जन्ममें भक्षण करेगा ऐसा निरुक्तीसे मासका अर्थ होता है मनुस्मृती और जैनागममे भी कहा है

गाथा—आमसुय विपचमाणासु मांसपेसीसु ।
आयतिपमुवचाओ भणियो दुणिगोय जीवाणं ॥ १ ॥

अर्थ–कचेम, पकेमें, पकते हुएमें तथा अन्य भी मांसकी प्रत्येक अवस्थामे निगोद जीवाकी अप्रमाण उत्पति होती ही रहती हैं

लिये हिंसा नहीं लगती है परतु महात्मा श्री मनुने कहा है कि —

श्लोक–अनुमन्ता विशसित, निन्हन्ता कयविक्रही,
सम्कर्ता चोपहर्तांच, पश्चाद श्चेति घातका
[खादक श्चेति घातका]
मनुस्मृती पचम अध्याय तृतिय भाग

अर्थ–जीव बध करने की आज्ञा देनेवाले, काटनेवाले, मारने वाले, मोल लेनेवाले, बेंचनेवाले, पचानेवाले, देनेवाले, उठालानेवाले, और खानेवाले यह आठको घातिक कहे हैं

८ 'मध –सहेत सहत की मक्खीयोंने अनेक वनस्पतिका रस एक ठिकाने सग्रह करा है, और उसपर सवा बैठी रहती है, भील प्रमुख अनार्य लोक सेहत लेनेको अग्नी प्रयोगसे जलाकर तथा कबलमें उस की गठडी याथकर निचो डालते हैं, रस निकालते हैं, उससे कितनीक क्खीयों तथा उनके ईन्डे मरकर उस रसमें मक्खीयोंका रस मेला आ- ा है ऐसे अनर्थसे सहत पैदा होती है इस लिये सेहत (मध) भी भभक्ष्य–खाने योग्य नहीं हैं

९ लोणी–मक्खन छाछमेंसे बाहिर निकाले पीछे थोडही काल बाद फ्लण आदी केइ जीव पैदा हो जाते हैं तथा महा प्रमाद उन्मा- द का वढानेवाला है इस लिये यह भी अभक्ष्य है

१० 'हीम '–बर्फ यह एक कच्चे पाणीका असख्य जीवोंका पेंड होता है

११ 'विष' जेहर अफीम, वच्छनाग, सोमल, माजम, भाग, इत्यादि जेहरी पदार्थका सेवन करनेसे आतमघात निपजता है और आतमघात करनेवाले बहोत भवमें ऐस ही मरते हैं और जो शाक (मजे) निमित्ते खाते हैं, वो आगे उनको विष रुप हो जाता हैं

जब जाग नहीं बने तब सब शुद्धी भूल जाते हैं, अशक्त हो जाते हैं, और वक्तपर मृत्यु भी निपजती हे खाये पीठे लेहर आती है, जिसमें कुछका कुछ कर दते हैं इससे सरीरका रुपका, शक्तीका, तेजका, बलका नाश होता है और भी अफीम तैयार करे (बट्टी बनाते) हे, वहां अनेक कुथुवे (त्रस प्राणी) का घमशाण होता हे श्रावकको इसका सेवन अयोग्य है

१२ 'गडे '–आकाशमें पाणी जमने की योनी (गर्भस्थान) हे यहां शीत उष्णकी विशेपता होती है, तब वहा गर्भ रहता हे सा हे छे महीनेमें अंदाज गर्भ पक्ता है तब वर्षाद वर्षने से निरोगी पाणी पडता हे और बीचमें जो उस गर्भको प्रतिकुल वायु आदिक संजोग मिल तब अधुरा (अपक्क) गर्भ खिरजाता हे तब गडे–अर्थात् बंधे हुव पाणीके कक्कर गिला आकाशमेंसे पडती है यह असंख्य सुक्ष्म जीवोंका पिंड हैं, अभक्ष्य है

१३ 'सर्व मिट्टी ' गेरु, खडी, मेनसिल, पांच वर्ण की मिट्टी, लूण, यह सर्व असंख्य जीवोंका पिंड है और खानेसे पत्थरी मंदामी उदरवृद्धी, वगकोष्टादी रोग होते हे कची मिट्टी नहीं खानी चाहिये

१४ 'रात्री भोजन ' सूर्य अस्त हुये पीछे सूर्य उदय होवे वहां तक अन्न पाणी आदि सर्व खाद्य पदार्थ असाध्य हो जाते हैं दीवा और मशाल लगाइ ता भी सूर्य की बराबरी न हो सक्ती हैं रात्री भोजनमें इस वक्तमें बिल्ली की भिष्टा, उंदरके बच्च पीसकर, गिलेरि, मकरी, सर्पका गरल, आदि खाकर मरे जिसके अनेक दाखल मिल सक्ते हैं, इस लिय रात्री भोजन भी अभक्ष्य हे

१५ पपोट फल- दाडिम, जाम, तिजारेके डोडे, कि जो केवल बीजमय हैं जिसमें जितने बीज होते हैं उतने ही उसमें जीव हैं,

इस लिये अभक्ष्य है

१६ 'अनतकाय' पहिले व्रतमें ३२ अनतकाय कही सो भी अभक्ष्य है *

१७ 'अथाणा—अथाणा' केरी लिंबू प्रमुखका अभक्ष्य है क्यों कि यह थाडे कालमें पक्ता नहीं है तथा बहुत काल रहे पीठे फूलण और सडनेसे त्रस जीव की उत्पत्ति बहुत हो जाती है बहुत दिनका पाप पहिली ही करना पडता है. वो खूटे वहां तक जीवे की नहीं, पर पापका गठडा तो अपने सिरपर बाधके ले जाये, इस लिये अथाणा अभक्ष्य है

१८ 'घोलवडे' जो कच्चा दहीका घोल करके उसमें वडे डाल ते हैं सो

१९ रीगणे वेंगण भुट्टे इसमें बहुत बीज होते हैं और कुरुप होते हैं

२० 'अजाण फल' जिसका नाम गुण की मालुम न होय एसे के खानेसे अकाल मृत्यु निपजनेका संभव है

२१ 'तुछ फल' खाना थोडा और डालना बहुत ऐसे सीताफल,

---

* श्लोक—लशुनं गृजनं चैव, पलाडुं पिंड मूलकं ॥
मत्स्यो मांस सुरश्चेव, मूलकस्तु ततो अधिक ॥
वरं भुक्त पुत्र मांस, नचमूलक भक्षण ॥
भक्षण जायन्ति नरकं, वर्जने स्वर्ग गच्छति ॥

अर्थ-लशण गाजर, कांदा (प्याज) मूला, मच्छी, मदिरा इत्यादि का कदापि भक्षण नहीं करना जो कदापि खाने नहीं मिले तो पुत्र का मांस भक्षण करना श्रेष्ठ अच्छा है परन्तु परोक्त अभक्षोका भक्षण करना अच्छा नहीं क्यों कि भक्षण करनेवाला नरक में जाता है और छोडने वाला स्वर्ग में जाता है.

पद्मपुराण.

साटा (सेलडी), बोर, जानू आदि यह भी अभक्ष्य है ❋

२२ ' रस चलित ' जिस वस्तूका रस (स्वाद) विगड गय होए अर्थात् खट्टाका मीठा और मीठेका खट्टा हो गया, दुर्गन्ध आं लगी, उसमें असंख्य जीव उत्पन्न होनेका संभव है इस लिये अभक्ष्य है

यह २२ प्रकार ये अभक्ष्य कहे सो धर्मात्मा पुरुषोंको खाने ला यक नहीं है इस से असख्य जीवोंका बध, और उन्माद (मद) प्रा होता है, धर्म से वुद्धी भ्रष्ट होती है, और अनेक अनर्थ निपजते हैं ऐसा अनर्थका मूल सुज्ञ श्रावक जाण सर्वथा वर्जेंगे

इस सातमें व्रत के रक्षण के लिये २० अतिचार टालना चाहिये इन आतिचार के दो भेद कहे हैं १ भोजन से अर्थात् खाने के बाबत में पाच अतिचार टालना और २ कर्म से व्यापारकी बाबतमें १५ अतिचा टालना प्रथम भोजन के ५ अतिचार —

१ ' सचित अहारे ' सचितका अहार किया अर्थात् जिस श्रा वकको सचित्त भक्षण करणे के पच्चखाण है, और उनके भोजनमें को वस्तू आइ, उसकी पूरी समज न हुइ कि यह सचित या अचित हैं और निश्चय हुये विन उसे खावे तो अतिचार लगे तथा सचित व स्तू खानेका प्रमाण किया है उसकी विस्मृतिसे प्रमाण उप्रात सचित वस्तू खा लेवे तो अतिचार लगे और जाण कर वृत भग करे तो अ नाचार लगता है, चले वहा लग सर्व सचितका त्याग ही करना चाहिय

२ ' सचित पडिबुद्ध अहारे ' सचित प्रतिबधका अहार करे अ र्थात् सचित प्रतीबध उसे कहते है, जो उपर से अचित होवे, और भी

❋ कितनेक सांठा खाकर रस्तेमें छोते डाल देते है जिससे अनेक कीडी ये पग नीचे दब मरती है जिसका उपयोग रख कर यत्नाव करना चाहिये

तर सचित होवे जैसे आवा, खखुजा, खिरनी (रायण) वगैरे उपर-पका अचित, और भीतरकी गुल्टी सचित इनको खाने के लिये ऐसी इच्छा करे कि बीज सचित हैं, सो निकाल डालु, और खा जावू यों कर खावे तो अतिचार लगे २ तूर्त झाडसे उतरा हुवा गूद, तूर्त की चांटी हूइ चटणी, तत्कालका धोवण पाणी, इत्यादि अचेत हुये विन वापरे तो अतिचार लगे

३ 'अप्पोलियोसही भखणया' अपक वस्तु खावे अर्थात् केरीका शाख केले सीताफल वगैरा पकाने के लिये पराल (घास) प्रमुख में दवाये हैं, वो पूरे पके नहीं होय, थोडे दिनका अथाना, इत्यादि वस्तु अचेत की बूद्धी से भोगवे तो अतिचार लगे

४ 'दुप्पलियोसही भखणया' दूपक वस्तु भोगवे अर्थात् आधा कच्चा आधा पका होला [चणे के बुट (छोले) सिखे हुये] ऊंवी (गेहूंकी) मुट्टे (मकी के) पूख (जवारके) हुरडे (वाजरी के) इत्यादि घासमें सेके हुये, जिसमें कोइ दाना तो सिक गया, कोइ कच्चा रह गया, कितनेक मिश्र रहे, यह भोगवे तो अतिचार लगे

५ 'तुच्छो सही भखणया' खाणा थोडा और न्हाखणा वहोत साठा—सीताफल—बोर—होले—ऊंवी विगेरे खाय तो दोप यह सातमे वृत के भोजन आश्री पाच अतीचार कहे

अब कर्म (वेपार) आश्री १५ अतिचार —१ 'इंगाल कम्मे' कोयलेका वैपार अर्थात् १ हरे सूखे लकडको अग्नी से अधजले कर, पाणी से बूजा कर कोयले बना कर वेंचे २ जों कोयले जला कर आजीविका करे सोनार लुहार, कूम्भार हलवाइ, भाडभुजा, प्रमुखका वेपार सो भी इंगाल कर्म की गिनती है

२ वण कम्मे' १ वाग वावडी वगीचा लगा कर जिनमें फल

फूल, भाजी, वगैरा कदमुल घांस लकडी इत्यादि उत्पन्न कर काट, फूट तोड बेंचे सो २ वन कटाइ करे, जगलमेंसे लकडी काट मोली वनाकर सग्रह कर, लकड पीठ वनाकर लकडी वेचे तथा वांसके टोपले, सुपडी करंडी, वनाकर वेचे, वसोडका वेपार करे सो वन कर्म

३ ' साडी कम्मे ' गाडी, छकड, वग्गी ताग़े, म्याने, पालखी, नाव, झाज, वनाकर वेंचे, तथा इनके उपगरण पइडे पाठे आरे थभ वगैर वनाकर वेंचे

४ ' भाडी कम्मे ' गाडी घोडे, ऊंट वेल इत्यादिका संग्रह करके रखे और भाडे ले जावे तथा दूसरा लेने आवे तो देवे सो भाडी कर्म

५ ' फोडी कम्मे ' १ धरती खोदकर मट्टी, ककर, पत्थर सिला, रेलवाइ कोयले, आदिक वेचें २ कूवा वावडी कुड वनाकर वेंचे ३ घंटी ऊखल कुंडी प्रमुख वना कर वेचे ३ हल वखर चलाकर पृथ्वी (खेत) सुधार देवे, ४ चणा मुग आदिक की दाल वनाकर वेंचे, धान पीसनेका कुटनेका या खला करे, ५ सडकके पुलके तलावादिक वनानेका ठेका लेवे इत्यादि कर्मको फोडी कर्म कहते है यह पांच अयोग्य कर्म कहे

६ ' दंत वणिज ' हाथी के दांत तथा हड्डी यों * घुंघू (उल्लु) के वाघके नख हिरण वाघादिकका चर्म चमरी गायकी पूछ (चमर)§

---

* खड्डा खोद ऊपर, पतले घास विछा जिसपर कागज की हथणी खडी करते हैं उसके विश्वाससे हाथी उस खड्डेमें पड जाता है उसे मार उसकी हड्डीयोंके चूडे प्रमुख वहुत रकम वणाते है जो उसे खरीदते है पहरते है वापरते है वो हाथी के घातीक है जैनीयोमें हाथी दांतके चुडे पेहननका रिवाज अती खराब है इसे मिटाणा चाहिये सुणा है हड्डी के लिये फ्रांसदेशमें दरसाल १ हजार हाथी मारते है

§ जीवती चमरी गायकी दुमेसे पूछ काटके लाते है, उसके चमर वनते हैं यह वापरने योग नहीं है

सस, सीप, सींग, कोडी कस्तुरी, आदिक सर्व व्यापार इस दंत वणिजेंमें है

७ लख वणिज लाख * चपडी, गुंद, मणशिल, धावडीके फुल कसुंबा, हडताल, गुली, महुडे, साजी साबू वगैरे वेंचना सो सब लख वणिजमें लिया है,

८ ' रस वणिज ' दूध, दही, घी, तेल, गुड, काकव मध (सहत) मुरब्बा, सरबत, वगैरे

९ ' विष वणिज ' जेहरी वस्तू अफीम, बछनाग, सोमल, इत्यादि २ तरवार, तीर कटार, छूरी, बरछी, भाला, गुप्ती, तमंचा, बंदूक, तोप, सूइ, कतरणी, चक्कु, मूसल, सलमता, इत्यादि छोटे मोटे सर्व प्रकारके शस्त्र भी विषवणिजेंमें हैं

१० ' केस वाणिज ' १ बकरे कि उनके वस्त्र कंबल, बनात, दुशाल, प्रमुख सर्व उनी वस्त्र, जानना चमरी गायके केस भी इसमें गिने है मनुष्य, पशु, पक्षी, इत्यादि वेंचे सो जानना यह पाच प्रकार के अयोग्य वनियेके वाणिज जानना

११ ' जतु पीलण कम्मे ' घाणी (तिलादि पील कर तेल निकालने की) चरखी कोलु (साठा पीलने की) चरखा (कपास पीलनेका) तथा गिरनी, सचे, मील, अजन, घटा, घट्टी, इत्यादि जो वस्तू पीलने के यंत्र इनका वेपार करे सो

१२ ' निलछन, कम्मे ' १ बैल घोडा प्रमुख जीवोंके अंड फोडे इंद्री छेदे २ जनावरोंके कान, नाक, सींग, पुछ, छेदे काटे, ३ मनुष्यको नाजर करे, सो नीलछन कर्म

१३ ' दवग्गी दावणिया कम्मे ' खेतमें, बागमें, बहुत घास

---

* लाखको टोंचकर उसका रस निकालते हैं, उसकी लाल होती है जैसे मनुष्यका रक्त निकालते ।

या कचरा हो जाय उसे निवारने, तथा नवीन घास उगाने जूना, घास को जला देवे और कितनेक भील धर्म निमित्त ही वनमें लाय (आग) लगाते हैं १४ ' सर दह तलाग परिसोसणीया कम्मे ' सरोवर (धरती आदिक विन खादे पाणी भराय सो) द्रह (झरणेका पाणी आवे) तलाव (चार ही तर्फ पाल वाधी होय सो) और नदी, नाला, कूवा, वावडी, इनमें खेतको बगीचेको पाने या साफ करने पाणी उलीछे (निकाले) के सुकावे

१५ 'असंजइ पोषणीया कम्मे ' असंजती (अवृती) को पोष (पाल) कर वेंचे अर्थात् १ उदीर मारने बिल्ली, वल्ली मारने तथा सिकार खेलने कूत्ते पाले और वेंचे २ सालुकी मेना, तोता, कावर, मुरगा कबुतर सिखरा (बाज) इत्यादि पक्षीयोंको पालकर वेचे ३ दास पालकर वचे ४ तथा दासीयोंको आप खान देकर उनको गणिका जैसे कर्म अनेक पुरुषके साथ गमन करा कर उसका दाम जो पैदा होवे उसे आप रखे इत्यादि कर्मको असजती पोषणीया कर्म कहते हैं दया निमित पोषणे हरकत नही

इन पनरेंको कर्मादान कहते हैं, अर्थात कर्म आने के ठिकाणे है, यह पनरे ही महा अनर्थ के ठिकाणे, वर्ज कर्म बधके ठिकाणे अकृत निंदनीक जाण कर श्रावक सर्वथा प्रकारे तजे और सातमा वृत सम्यक परे आराधे पाल जो इस सातमे व्रतके २० अतिचार टालकर शुद्ध निर्दोष पालेगा वो इस भवमें निरोगता, अरोगता अल्पारंभी, सतोषी सुख से अपणा जीवीतव्यका निर्वाह करनेवाला होगा मेरु जितना जगतका सर्व पाप रोक कर फक्त राइ जितना अव्रत रह जायगा इस के पसाय स आगे स्वर्गादिक के अणोपम सुख भुगत थोडे कालमें मोक्ष पायगा

८ ' आठमो अनर्था दंड वेरमण वृत ' कहता अनर्थ दंडसे निवर्त अर्थात् संसारी जीव है जो आरंभ परिग्रह मोह मायाम फस रह

हैं, उनको सर्व प्रकारे दंड (पाप) से निवर्तना तो मुशकिल है, तो
भी दंड (पाप) के दो भेद किये हैं, १ अर्था दंड—सो शरीरका, कु
टुवका, आश्रितोंका, स्वरक्षण करने, छे काय जीवोंका आरंभ करना
पड़ता है यह आरंभ किये विन ससारमें निर्वाह होना बहुत मुशकि-
ल है श्रावक तो इस आरभका भी नित्य प्रती संकोच करते हैं, और
वक्तपर सर्वथा त्यागन की अभिलाषा करते है जो आरंभ करने रह
सो पाप से डरते पश्चाताप युक्त करते हैं सो अर्था दंड और २ अ
नर्था दंड, विना कारन जिससे मतलब तो कुछ नहीं निकले, और
हिंसादिक पाप होवे इस अनर्था दंडके चार प्रकार १ 'अवझाण च-
रियं' अव—खोटा ध्यान—विचारना—चिंतवना सो अव ध्यान चरित
अर्थात् इष्ट सजोग, और अनिष्टके वियोगका विचार करना इष्टके
संयोगसे आनद, और अनिष्टके सयोगसे उदासी मानना ऐसा ध्यान
ध्यावना श्रावकको जोग नहीं है क्यों कि विचार करनेसे कुछ फाय
दा होता नहीं है होनहार हो सो हुवा ही रहता है और खोटे वि-
चारसे नाहक कर्मका बंध हो जाता है ऐसा जान खोटा विचार नहीं
करना और कभी आवे तो, ऐसा विचारना कि रे जीव ! जो तेरेको
कभी पुन्योदयसे इष्ट वस्तुका सयोग मिले गया, तो तेरेको कौनसा
फायदा हुवा ? चेतनिक सुख प्रगट करनेकी कुछ पुद्गलोंमें सत्ता
नहीं है जो होय तो इनके सुखोंसे अनेक गुण अधिक देवताओके
सुख भोगव आया वहा ही तृप्ती नहीं हुइ, तो यहा क्षणिक अपवित्र
सुखोंसे क्या तृप्ती होने वाली है ? और अनिष्टका संयोग मिले तो यों
विचारे कि नर्क तिर्यंचादिक दुर्गतीमें परवश पने तू अनेक दु,ख स-
हन कर आया है, वैसे तो दु ख तुजे यहा नहीं हैं यों विचार कर
समभाव रखे, आर्त रौद्र ध्यानकर रागद्वेष करके नाहक कर्मोंका बंध
नही करे इतने विचारसे जो मन वशमें न रहे, और स्वजन तथा धन
के वियोगसे आर्त ध्यान उत्पन्न होवे तो एक मुहुर्तमें ज्ञानमे चित्त
शांत करले, परंतु सिर छाती कूटनी नहीं, हाय त्राय करना नहीं, स

ताप उपजाना नहीं शात रहना

२ 'पमाए चरिय' प्रमाद (आलस) चरित आचरे सो प्रमाद चरित अर्थात् प्रमाद ५ प्रकारके—

गाथा—मद विषय कसाय, निंद्दा विगाहा पंच भणिया ॥
एए पंच पम्माया, जीवा पाडंती संसारे ॥ १ ॥

अर्थ—१ मद अहंकार २ विषय—पंच इंद्रीके सुख की लोलुपता ३ कषाय—क्रोधादिक की उदरना ४ निंदा—दूसरे की निंदा करनी सो ५ विकथा स्त्री की, राजाकी, भोजन (आहार) की, देश देशांतर की कथा वार्ता करे सो, यह पांच ही कामे श्रावकको करने योग्य नहीं है और भी ८ प्रकार के प्रमाद कहे है सो —

गाथा—अन्नाणं ससउचेव, मिच्छानाण तहेवय ॥
रागो दोसो मइब्भंसो, धर्म्मंमि अ अणा हुरो ॥ १ ॥
जोगाणं दुप्पणी हाण, पमाओ अठहा भवे ॥
ससारुत्तार कामेण, सव्वहा वीज्जयव्वओ ॥ २ ॥

अर्थ—१ अज्ञान भाव धारन करना, २ विशेष (बात २ में) सदेह (वेम) धारन करना ३ मिथ्यात्वियो पुस्तको कि जिसमें विकथा कु उपदेश होवे उनको आप पढे दूसरको पढावे ४ स्वजन धन आदि पर अत्यन्त प्रेम रखना ५ दुशमन पर या मलिन वस्तु पर अत्यन्त द्वेष रखना ६ सदा भ्रमित चित रहना ७ धर्मात्मा का आदर सत्कार नहीं करना या धर्म करणी आदर पूर्वक नहीं करनी, ८ कु कल्पना, कु वचन उचार कु आचार आचर्ण कर कर मन वचन कायाके जोग को मलीन करना यह ८ प्रमाद को ससार समुद्र से पार होने के अभिलाषी सदा वरजत हैं

क्यों कि इससे किसी प्रकारका फायदा नहीं होता है, और कर्म बंधेज म होता हैं और भी प्रमाद चरित इसको कहते हैं कि संसारी जनको काम काज होवे तब तो ससार व्यवहार चलात ही हैं परन्तु निकम्मे हो जावे, निवरे होवे तब धर्म कर्म—ज्ञानाभ्यास करना छोड

जुवा—चोपट, गंजीफा, तास (पत्ते) वूद्धिवल, वगैरे खले कतुहल करके वक्त गमाना यह कर्म दोनो भवमें दु खदाइ हैं, इम ख्यालमें लगे पीछे भुख प्यास ठंड ताप निद्रादिक की शुद्ध नहीं रहती है, जिसे शरीरमें रोग पैदा होता है हार जीत होनेसे हारनेवाला अत्यत आर्त ध्यानेंमें प्रवेश करता है, शरमिंदा होता है वक्त पर वडे २ झगडे भी पैदा होते हैं इत्यादि औगुन जान यह ख्याल कितुहल श्रावक को करना योग्य नहीं, और निकम्म हुये पीछे चार जन मिलके धर्म कथा छोड इधर उधर के गपोडे मारे सो भी प्रमाद चरीत है ऐसे ही कितनेक निर्दोषी रस्ता छोड उजाडे में, हरी पे, मिट्टी पे उदार्यो के घर होहते, अनाज खुंदते, पाणीमें होकर जाते है ऐसे ही रस्ते में झाड आया तो डाली पत्ते तोड डालते है, पशूको लकडीका पगका प्रहार करते हैं, और उसी जगा छोड कर घास पर, अनाज के गंज पर, या थेले पर वेठते हैं दरवज्जा लगाते वक्त देखते पूजते नहीं दुध, दही, घी, तेल, छाछ, पाणी प्रमुख पतले पदार्थ के वरतन, उघाडे रखे लीपन, पीसन, खांडन, शिवणा, धोवणा इत्यादि काम, विन प्रतीलेखे, (देखे) करे यह सब प्रमाद चरित्र अनर्था दंड जानना इन कामों से फायदा कुछ नहीं, नुकसान वहुत होता हैं. इसलिये ही इसें अनर्था दंड कहा है, श्रावकको यह वर्जने योग्य हैं

२ 'हिंसपयाणे' हिंसाकारी वचन वोले अर्थात् जिस वचन बोलने से त्रस स्थावर जीवोंका बध होवे, ऐस निरर्थक वचन बोले चलो बेठे २ क्या करते हो ? स्नान कर आवो, असुक हरी वहुत स्वादिष्ट है अब तो सस्ती मिलती है चला ले आवो, अरे आलसू यों क्या वेठा हो, कुछ धधा करो दूकान माडो, वर्षा आइ घर सुधरावो, उनाला आया पाणी छिटाओ, शीयाला (जाडा) आया ताप करो, खेत सूधारो, हल चलावो

अनाज वाहो, सात न्हासो निवणी करो, सत पक गया काटो, स
करो, अनाज भरो, बेंचो, घर फोडो, नवा बंधावो, लीपो, छावो, र
भोजन (आहार) निपजावो, पाणी लावो, इत्यादि अनेक प्रकार
सावद्य-हिंशक वचन कर्म बंध के हेतु जाण श्रावक वरजे

सु कडेती सुपकोसि, सुछिन्ने सुहडे मडे ॥
सु ठिए सुलठेति, सावज्जं वज्जए मुनीं * ॥ १॥

उत्तराध्ययन दश वैकाल

सुकडे—यह मकान पकान वस्त्र भूषण इत्यादि बहूत अच्छा
नाया, सुपक्क—झाडके फल खाने योग उम्दा पके हैं. रसोइ उम्दा
काइ, क्या मसाला डाला बघार दिया सु छिने—इस फलको भाजी
कसी उमदा बारीक कतरा है, झाड काटके कैसा बराबर किया है
कडमें कैसी उम्दा कोरणी करी है सुहडे—बहोत अच्छा हुवा वो
ष्स—कृपण लूटा गया, उसका धन चोर हर गये दिवाला निक
गया, माल जल गया, डुब गया, इ कृपणका तो ऐसा ही हाल होन
चाहिये, सुमडे—क्या वो दुष्ट पापी कसाइ पाखडी अन्याइ मर ग
बहूत अच्छा हुवा सांप, बिच्छु, डांस, मच्छर, खटमल, यह तो मरे
कामके सूठीए—क्या असल जमाइ दुकान, पकान, दही, घर माल
दुर्रा गजरा, सुलठेति—यह कन्या या लडका कैसा सुदर है, इसे जल्दी
परनावो इत्यादि सावद्य—हिंशाकारी पाप कारी भाषा सर्वथा वरजे इ
पापकारी भाषा बोलनेमें कूछ फायदा नहीं है, इसलिये अनर्था दं
किया है

---

* गाथाका दूसरा अर्थ—अच्छा किया संथारा अच्छा पकाया सयम, अच्छा छेदा स्नेह, अच्छा हर्या मोह, अच्छा मरा पंडित मरण, अच्छी स्थापी समयमें आत्मा, अच्छा सोभता है इनको दिक्षा संयमका सि णगार जा बोले विन नहीं रहवाय तो ऐसी निर्वद्य भाषा बोले

४ ' पाप कम्मो वएसे ' पाप करनेका उपदेश देवे अर्थात् हिंशक वचक सो ससार निमित्त, और हिंशक उपदेश सो, धर्म निमित, धर्मशाला, देवालय बधावो कुवा निवाण खुदावो, मुल, पते, फल, फुल मारो, मुरगे, काट्रे, चडावो, धूप, दीप, करो, पसा लगावो यज्ञ होम करो तथा पाप शास्त्र जिसमे लडाइ झगडे, विषय, क्रिडा, कोकशास्त्र चौरासी आसनों की कथा, जोतिष, निमित, जंत्र, तत्र, मंत्र, औषध, अंजन सिधीयों वगेरेका उपदेश करे इस उपदेश से जितना आरंभ निपजे उसका भागीदार वो उपदेशक होता है और एसे पापी उपदेशकोंके हाथमें कुछ भी नहीं आता है, इसलिये यह भी अनर्था दंड है.

यह चार ही प्रकारके निरर्थक पापोंसे सुज्ञ श्रावक अपनी आत्मा बचावे, इस आठ में व्रतको निर्मल रखनेके लिये पाच अतिचारको जाण कर वरजे सो कहते है —

१ ' कदपे ' कद्रप जगे एसी कथा कर अर्थात् स्त्री योंके आगे पुरुषके, और पुरुषके आगे स्त्रीके, शृंगार, बोलना, हांसी मस्करी, करना, गुप्त अगोपागके नाम लेकर वार्तो कर कामविकार वडावे एसी बात करना योग्य नहीं हैं, क्यों कि इस करनेवाले सुननेवाले दोनोको काम उत्पन्न हो अनेक कु कल्पना (विचार) मनमें आवे, जिससे नाहक कर्म बध, होव और हाथ तो कुछ आव नहीं इससे अतिचार लगे

२ ' कुकुइए ' कुचेष्टा करे अर्थात् भ्रकुटी चडावे नेत्र टमकावे, होट बजावे नाक मराडे, मुख मलकावे हस्तांगुलीयादी कु तरह करे, अंग नचावे पगकी अगूली बजावे, दीन पणा कर, काम इच्छा जगावे, एसी चेष्टा करे यह सर्व कु चेष्टा श्रावकको करना कराना, होलीके दिनोमें नम रुप धारण करना, नाचना, कूदना, योग्य नहीं है

नाहक कर्म वधते है

३ ' मोहेरिए ' मुखारी वचन वोले अर्थात् वाचाल पणा करे असवध वचन उचारे, ममा चचाकी गाली देवे, रे तुं, गालीयों गावे चाग दोलकी वजावे, विकारीक ख्याल जोडे, यह सव खराव वचन काम स्नेहके जगानेवाले, महा कर्म वंधके कारण, ऐसा अनर्था दंड श्रावक वरजे, अज्ञानीयों की देखा देखी जो श्रावक ऐसे वचन वोलने लगा तो जगतमे निंदाका पात्र होगा वहुत वोलनेवाला सवके खराव लगता है और कभी मारभी खा लेता है ऐसे विचार करके वोलनेवालेको मुखारी वचन तो वोलना रहा ही कहां ?

४ ' संजुत्ताहीगरणें '' अधिकरण (शस्त्र) का सयोग मिलावे अर्थात उखल होय तो मुशल, और मूसल होय तो उखल नवा कराः ऐसे ही घट्टी (चक्की) का एक पुड होय तो दूसरा करावे चक्कू छूरे के ''हाथा नहीं होय तो हाथा लगावे वोठे होय तो धार करावे कुराडी हल भाला, वरछीको हाथा भाल लगाव इत्यादि उपकरणोंको अधूरेकों पूरे करने से महा अनर्थ निपजता हैं, क्यों कि अधुरे होते है वहा तक उपयोग (काम) मे नहीं आते हैं, और पूरे हूय पीछे उनसे हिंसा निपजती है उस सव आरभका हिस्सा सयोग मिलानेवाले को आयगा और भी एक विचारीये वात है कि जो अधुरे उपकरण होवे और कोइ मागने आवे तो सहज ही पाप कट जाता है और पुरे होवे तो आरभ की वृद्धी होवे, ऐसा जान पापकारी उपगरणोंका सयोग मिलाना वरजे तथा विशेप पापका उपकरणका सग्रह भी घर में नहीं करे जो पहिले क होवे तो वो ऐसे ही रख की दूसरे के हाथ न लगे ऐसे ही किसी पाप कार्य के विपयमें आप सफल पच होने अगवाणी भाग न लेवे व्याव की, खरच (ओसर) की, गुड सक्कर

गालने की परवानगी (इजाजत) कोइ मगे तो अपना वश चल वहा तक जवान न हलाव दिपवाली होली आदी आरंभ पर्वमें कोइ भी आरंभी काम लीपणा—रगना इत्यादि आप सब के पहिले न निकाले, कि जिसके देखा देखी सब करे उसका पाप उसे आवे इत्यादि पाप कामों से अपनी आत्मा बचावे

५ 'उपभोग परिभोग अइरत्ते ' उपभोग (एकवार भोगवनेमें आवे सो) परिभोग (वार २ भोगवणेमें आवे सो) आइरत्ते—अतिरक्त लुब्ध होवे, अर्थात् राग रागणीयों सुननेमें नाटक ख्याल देखनेमें, सूगव सूघनमें, रसवती (मनोज्ञ आहार) भोगवनेमं, स्त्रीयादिक सेवनेमें अती बहूत आशक्त होवे, हाहा करे वार २ कहे क्या मजा आती है जाने मोक्ष हाइ मिल गइ है, ऐसे प्रथ श्रावकको होना योग्य नहीं है, क्यों कि वहुत प्रद्ध होणे से बहूत वज्र कर्मका बंध होता है, जैसे रेसमकी गाठ छूटनी मुशकिल तैसे कर्म भी न छुटे कहां है:-

समजया सके पापस, अण समजया हरकत,
ध लुखा वे चीकणा, इण विध कर्म बधत ॥ १ ॥
समज सार ससारमें, समस्या टाल दोष,
समज २ कर जीवडा, गया अनता मोक्ष ॥ २ ॥

सृका लीपणा

समजगीर वो ही, कि जो पाप करता मनमें डर लावे जो डरगा, उसके कर्म जैसे रेतकी मुठी भीतको मारेन स नीचे गिर जाती है त्यों थोडे से ही कर्म छुट जाते हैं और लुब्ध होता है उसके कर्म जैसे पीचड (कावव) का गोला भीत पर लगाया तैसे चोंट जाता है, ऐसा जाण काम भागमे आशक्त न होवे, लुमवृति रखे या लुब्ध होव दोनो रुपमें वस्तुका प्रणाम तो एकसा हाता है फिर लुब्ध होकर नाहक कर्मका बन्ध क्या करना

यह पांच अतिचार कहे, और भी विवेकी श्रावक अनर्थ के काम अपनी मती से और शास्त्रकी नय से जान सर्वथा वरजे इस आठमा वृतको सम्यक प्रकारे आराधेगा सो अनर्था दंड से जीवके, बन्ध कर्म बंध ते है, उससे बचेगा होंशार रहने से अकाल मृत्यु से बचेगा, नुकशा नी से बचेगा, चिंता कमी होगी, यशस्वी, पूर्ण आयुष्यका भोगी हो कर सुखे २ जिंदगी पूरी कर के, देवलोक के सुख भोगव कर, अनु क्रमें मोक्षस्थान प्राप्त करेगा ८

यह ५ अणूव्रत, और ३ गुणव्रत जाव जीव के हैं

इति ३ गुणव्रत

'चार शिक्षा वृत'

शिक्षा वृत उसे कहते हैं, कि जैसे १ कोइ उत्तम पदार्थ किसी के सुपुर्त करके कहते हैं शिखामण देते हैं, कि इसको वार २ संभा-लते रहना, कीड़ा न लगे या नुकशान न होवे, ऐसे ही चार शिक्षा व्रतमें प्रवर्तनेसे पूर्वोक्त जो ८ व्रत की जाव जीव की मर्यादा करी है उसमें किसी प्रकारका दोष रुप कीडा न लगे, भंगरुप नुकशान न पडे, ऐसी संभाल करने कि फ़ुरसत मिलती हैं जिससे लगे हुवे दो पका ज्ञान और आवते कालमें निर्दोष रहने की शिखामण प्राप्त होवे २ जैसे शिक्षण (ज्ञान) लेनेको किसी बालकको पाठक अध्यापकके पास (मदरसेमें) बैठाते हैं, कि जिससे वो संसारमें होंस्यारीसे प्रवर्त अपनी आजीविका चलानेका कुटुंब निर्वाह वगैरा अभ्यास कर, फिर संसारमें उस प्रमाने प्रवर्त सुखी होवे, तैसे ही श्रावक शिक्षा व्रतमें प्र वेश कर, आठ व्रतोंको ग्रहण कर पालनेकी विधी यथा तथ्य धार, धर्म मार्ग यथोक्त विधीसे प्रवर्त, अपनी पराइ आत्माका कल्याण कर ३ शिक्षा नाम दंडका भी है पूर्वोक्त आठ वृतोंमें प्रमादके वश कोई

दोप लग जाय तो उस दोप से निवर्तन होने गुरु महाराज शिक्षा व्र-तमेंका कोइ भी शिक्षा (दंड) दे कर निर्दोप–शुद्ध करे इत्यादि कारणसे शिक्षावृत कहे हैं यह शिक्षा वृत चार प्रकारके होते हैं —

९ ' सामायिक व्रत ' में सामायिक करे, अर्थात इस सामायिक शब्दके तीन शब्द हैं सम, आय, इक सम कहता सम–बरावर ज-था तथ्यको जथातथ्य जाने, वो अजथा तथ्यको अजथा तथ्य जाने-गा २ सम कहतां शत्रु मित्र उपर समभाव रखे ३ सम–सब जीवों को अपनी आत्मा जैसे जाने ऐसे भाव रूप ' आय ' कहता लाभ जिससे मिले सो सामायिक- यह निश्चय सामायिक जानना और व्यवहार सामायिक करने की रीति ऐसी हैं, सर्व ससारके कामकाजसे निव्रत (दूर हो) अपने पास फूल पानादि सचित वस्तु न रखे अ-शुची रक्तादिसे भरे कपडे न रक्खे एकांत स्थान–पोंपध शाला–उपा-सरा—स्थानकमें यत्ना से जावे, एकात स्थानमें संसार स्वरुपको ब तानेवाले अंगरखी पगडी विगेरे खोलकर रक्खे, गेने दागीने भी उ तोर कर अलग धरे * पेरने की धोती और ओढनेका पंच्छ्र (दुपट्ठ) पडीलेहे (आंखोंसे सर्व देखे) फिर फासुक (निर्जीव) जायगा गो च्छा (पूजणी) से पूज (झाड) कर आसण (बेठका) बिछावे, फिर मूंहपतीको प्रतिलेहकर मुंहपर बाधे फिर गुरु महाराजको, तथा पूर्व उत्तर दिशा तर्फ पंच परमेष्ठी (अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु) को पंच अंग (दो हाथ दो गोडे मस्तक) धरतीका लगाकर ' तिखूत्तो ' तीनवार उठ बैठ, ' आयाहीणं ' बहुत दूर नहीं बहुत न जीक नहीं ऐसे रहके, ' पयाहीणं ' दोइ हाथ सिरपे फिराकर आवर्तन

* सामायिकमें दागीने नहीं रखने विपय दासखा उपाशक दशांगक छेटे अध्ययनमें कुडकोलीये श्रावक सामायिक करी है, वहां नाम कृतका मुद्रिका भी खोलके दूर रखी है

—प्रदक्षिणा करके, ' वंदामी ' गुण ग्राम करे, ' नमंसामी ' नमस्कार करे, ' सक्कारेमी ' सत्कार देवे, ' समाणेमी ' सन्मान देव, ' कल्लाण ' आप मेरे कल्याण कारी हो ' मगल ' आप मंगलिक हो, ' देवयं ' * आप धर्म देव हो, ' चेइयं ' आप ज्ञान वंत हो, ' पज्जुवासामी ' आप पूज्य हो, हो स्वामीजी ' मथेण वदामी ' मस्तक करके वांदणे योग्य हो इस पाठसे विधी युक्त वंदना कर कर कहे —

' आवस्यइ इच्छा कारण संदह सह भगवान इरिया वहिय प डीकमामी ' आवश्यकता है कि आप की आज्ञा होय तो हे, भगवान सामायिक करनेको आते हुवे रस्तेमें जो पाप लगा होय उससे निवर्तु तब गुरु महाराज कहे, ' इच्छं ' तुमारी इच्छा तब शिष्य— ' इच्छामी पडिकम्मिओ '—जो हुकम, प्रतिक्रमताहूं (निवर्तताहूं), ' इरिया वहीयाये ' रस्ते चलते, ' विराहणाए ' विराधना हुइ होए ' गमणा गमणे '—जाते आते, ' पाणकमणे ' प्राणी बेंद्रीयादी खूंद्या होए ' बीकमणे '—बीज दाणा (अनाज) खूंद्या होए 'हरी कमणे' —वनस्पती, ' उसा ' ओसका पाणी, ' उतिंग '—किडीनगरे, 'पणग'— लीलन, फुलण—' दग ' पाणी, ' ' मट्टी, ' मकडा '— § करोलिये ' सताणा' —सताप दिया ' संकमणे '—सकमे चलाये ' जो '—जो मे '—मेने ' जीवे ' जीव ' विराहीया '—विराधा होए वो ' ए किंदीया '—एकेंद्री ' बेंदीया '—बेंद्री ' तेंदीया '—तेंद्री ' चौरिंद्रीया '—चौरिंद्री ' पचिंदीया '—पचेंद्री ' अभीहया '—सामे आते

* देव पाच प्रकारके हैं देवाधी देव—आरिहत, नर देव—चक्रवती धर्म देव—साधू भाव देव—भवन पति आदि देव, और भी भव्य देव जो यहांसे मरकर आगे देवता होयगे सो

§ रस्तेमें मडा कर मकडी जैसे जीव रहते हैं सो

'वत्तीया'-मसल होय 'लेसिया'-रगड होय 'सघाइया'-भेले किये होय सघटीया'—छीया होवे 'परियाविया'—परिपाप उपजाया होए 'किलमिया'— किलमणा उपजाइ होए, 'उदविया' उद्वेग (चिंता) उपजाया हाये, 'ठाणा उठाणा'-एक स्थान से उठा दूसरे स्थान रखे होय. 'संकामीया'-सकट दिया होए 'जीवीयाओ विवरोवीया' जीवोंकि विराधना कियी होए तो 'तस्स मिच्छामी दुकड' यह पाप मिथ्या खोटे दुकत दूर होवो ॥ १ ॥ फिर रस्ते चलते जो पाप लगा होय, 'तस्स'—उसको, 'उतरी'—उतारने, 'करणे णं'-करता हू, 'पायछित करणेण' पाप निवारने, 'विस्सो ही करणे ण' विशुद्ध—निर्मल होणे, 'विसली करणेणं'—सल्ल रहित होणे, 'पावाण कम्माणं'-पाप कर्म निग्घाए निठाए' दूर करने के लिये, 'ठामी काउसग्ग' करता हूं कायोत्सर्ग (कायाका दु ख) (काउसगमे इतने आगार रहते हैं –) 'अन्नत्य'—इतना विशेप 'उसासिएणं'— उंचा श्वास लेवू 'निसासिएणं'—नीचा श्वास रखु 'खासीएण'— खांसीका 'छीएणं'—छीकका 'जंभाइएण'-उवासीका 'उड्डूएण' अग फरुके तो 'वायनिसग्घेण' अपान द्वार वायु सरे तो 'भमली' —चक्कर आवे तो 'पित'-पित पड तो 'मुच्छाए' मूरछा आवे सुहुमेहि-सुक्ष्म, अग सचा लेही-शरीर चलाय मान होवे सुहुमेही सुक्ष्म, खेली सचाले ही खेकार चलाय मान होवे सुहुमे ही-सुक्ष्म, दिठी सचाले ही-द्रष्ट (नेत्र) चलायमान होवे 'एव मय एहिं' * इत्यादिक 'आगारोहिं'-मरेको आगार हैं (इस उपरात) 'अभग्गो' नहीं भांगू 'अविराहीओ' नहीं विराधु 'हुज्जमे'-होवो मेरेको 'का-

* इत्यादि शब्दम, जीव रक्षाके निमित्त, अग्नीका योग या राजाका क्रोप होवे तो और सयम घतम कोइ भग लगता देख कायसग पार तो दोप नहीं लगे

उसग्गो '—कायोत्सर्ग कहां तक कि में ' जाव ' जहा तक, ' अरि हंताण ' अरिहंत शब्द कहुं, ' भगवताणं ' भगवानका नाम लेवु, 'न मुकोरीम' नवकार कहू, ' ताव ' वहां तक, ' काय ' काया, ' ठाणेणं ' एक ठिकाणे रखूगा, ' मोणेण ' बोलुगा नहीं, ' झाणेण ' धर्म ध्यान ध्याउंगा, ' अप्पाणं ' मेरा शरीर की, ' वोसीरामी ' ममत्व त्यागता हूं. इतना कहके दोनों हाथ बराबर रख, पगके अगुठे सन्मुख द्रष्टी रख, स्थिर हो खडा रहे मनेंमे प्रथम कही सो आवस्य ही इच्छा करन की पाटीका अर्थ विचारे कि-इन पापमेंका कोइ पाप मेरेको लगा तो नहीं वीवराविया तक अर्थ विचार फिर ' नमो अरिहंताणं ' कह काउसग्ग ठिकाने करे निर्विघ्न कायोत्सर्ग की सामाधी हुइ, उसकी खुशाली के लिये चोवीस तिर्थंकर कि स्तुती दो हाथ जोड इस्तरह करे—लोगस्स —लोकमें, उज्जोयगेरे—उद्योत * के कर्ता, धम्मतिथ्थ—धर्म के तीर्थ, अरह—इंद्रों के पुज्य, जिणे—जिनेंद्र (केवली आदि मुनी के मालक), अरिहंत—कर्म नाशक, (आपकी) कितिइसं—कीर्ती करूं, चोविसंपि—२४ तिर्थंकर, केवली—केवल ज्ञानीयों की, (२४ के नाम) उस्सभ—ऋषभ, मजीयं-अजित, च—ओर संभव,२ मभीणदण-अभीनंदनजी, च—ओर, सुमइं—सुमती, च—ओर, पद्मुम पहं—पद्मप्रभू, सुपासं—सुपार्श्व, जिणं—जिनेश्वर, च—ओर, चंदपहं—चंद्रप्रभू, वंदे-वंदता हूं, * सुविहं—सुबुद्धी, ‡ च—ओर, पुष्फदंत—पुष्पदंत, सीयल—शीतल, सीयंस—श्रेयांस, वासपूज्य—वास पुज्य, च—ओर, विम

* तिर्थंकर भगवान जन्मते है तब ही स्वर्ग मृत्यू और पाताल तीन लोकमें सुर्य जैसा प्रकाश हो जाता है और दिक्षा लिये पीछे केवल ज्ञान पाकर मिथ्यान्धकारका नाशक प्रकाशते है

* गुणाग्राम करता हुं ‡ नवमे तिर्थंकरको सुबुद्धी नामजी और पुष्पदंतजी एसे दो नाम हैं

ल—विमल मणंत-अणंत, च—और, जिणं-जिनेश्वर, धम्म—धर्म, शंति—शांती, च-और, वंदामी-मे वंदता हुं, कुंथु—कुंथु, अरह—अरिहंत, च-और, मल्लिं-मली, वंदे-वदता हुं, मुणीसुव्वय—मुनीसुवृत, नमी-नेमी, जीण-जिनेश्वर, वंदामी-मे वदता हुं, रिटनेमी-रिष्ट नेमी, पास-पार्श्व, तह-त्योंही, वद्धमाणं-वृधमान, च-और, एवमय-इन (२४ की), अभिथुआ—स्तुती करी, विहूय—दूर करी है, रये मल-कर्मरुप रजमेल, पहीण-निवृते हैं, जरमरणा-जन्म मरण से, चो विसंपि—चौवीसोही, जिणवरा-जिनेंद्र हैं तित्थयरा-तिर्थकरों, मे-मेरे पर, पसीयंतु-प्रसाद करो कितिये-वचन से कीर्ती करु, वदे-काया से वदना करु, महीया-मन से पूजा करु जे ए लोगस्स-लोकमें, उत्तम-श्रेष्ट, सिद्धा सिद्ध पुरुष है, आरुग्ग-आरोगता, बोहीलाभ-बोध (सम्यक्त्वका) लाभ, सामाहीवर-श्रेष्ट समाधी, मुत्तम-उत्तम, दिंतु-मुजे दवा चंदेसु-आप चन्द्रमा जैसे निम्मलयरा-निर्मल हो आइच्चेसु अहियं-सूर्यसे भी अधिक पयासयरा-प्रकाश करता हो सागरवर-समुद्र जैसे प्रधान, गंभीरा-गंभीर हो सिद्धा अह्मो सिद्ध भगवंत, सिद्धी सिद्ध (मोक्ष) स्थान, मम दीसंतु-मुजे बतावो (बक्षीस करो)

इतना कह कर फिर 'सामायिक' व्रत ग्रहण किया जाता है-सो गुरु महाराज तथा बडे भाइ हाजर होवे तो उनके पाससे प्रत्याख्यान ग्रहण करे और वो नहीं होवे तो आप पूर्व उत्तर सन्मुख मुख कर प्रत्याख्यान ग्रहण करे सो पाठ —

'करे'-करु, 'मी'-मे, 'भंते'-हे पुज्य, 'सामाइय'-चित्त समाधी-समता भाव रुप व्रत इस व्रतका नियम, 'सावज्ज जोग पच्च खामी'—सावद्य जिससे अन्य प्राणीका मृत्यू या दुःख होवे ऐसे याग प्रवतन रुप क्रियाके, पच्चखामि में प्रत्याख्यान (त्याग-सोगन) कर

ता हुं कितनी देर तक तो 'जाव नियम' जघन्य एक मुहुर्त (पहरका चौथा हिशा ४८ मिनिट) उत्कृष्ट जहांतक स्थिरता होवे वहांतक 'पज्जुवा सामी'=परमेश्वर की सेवा भक्ती करुंगा यह नियम ग्रहण 'दुविह' दो करण 'तिविहेणं' तीन योगसे * ग्रहण करता हूं दो करण कौनसे पूर्व कहा सो सावद्य काम 'न करेमी'—में करु नहीं 'नकारवेमी' मे दूसरेके पास कराउ नहीं 'मणेणं'—मन करके, वाया-वचन करके, 'कायण'—काया (शरीर) करके 'तस'—इस (पाप) से भते'—हे भगवान् 'पडीकमामि' प्रतिक्रमु-पीछा हटु + निवर्तु, 'निंदामी'—अव्रतमें रहके जो सावद्य कर्म किया है उस की निंदा करु कि मेने ये काम खोटा किया, 'ग्रहामी'—१ गुरुआदिक जेष्ट पुरुष की सन्मुख सावद्य कर्म की निंदा करु के हे पुज्य! मैं श्रावक नाम धरा मोह जालमें फस यह काम अयोग्य किया २ तथा गुरुवादिक जेष्ट की साक्षीसे व्रत ग्रहण कर, क्यों कि व्रत ग्रहण किये पीठे काइ गाढ कार्य आजाय, प्रणाम ठिकाणे न रहे, व्रत भग करने का इरादा हो जाय ता भी जिनकी साक्षी से लिया है, उनकी शर्म आजाय कि यह क्या कहेंगे फिर शर्म के मारे व्रत भग न कर सके इस लिये साक्षी से व्रत ग्रहण करता हु 'अप्पाण'=मेरी आत्मा के 'वासीरामी'=(सावद्य काम) वोसराता हू छोडता हू कि इतने

* दो करण और तीन योगके छ भागे ऐसे होते हैं— १ करु नहीं मनसे २ करु नहीं वचनसे ३ करु नहीं कायासे ४ कराबू नहीं मनसे ५ कराबू नहीं वचनसे ६ कराबू नहीं कायासे यह ६ हुये

\+ प्रतिक्रमणु—पडीकमणु भी इसे ही कहते हैं कि किये हुए पापों की याद कर पीछे हटना अर्थात् जैसे किसी को अजाणमे ठोकर लग गई, तो उसे पीछा खमाते हैं कि माफ करो ऐसे ही प्रतिक्रमणमे पापको याद कर पश्चाताप करता है, कि मैने यह खोटा किया है

देर तक सावद्य काम नहीं करुगा इस पाठ से नवमा व्रत धारण किया जाता है इसमें ' करतापि अन्नन समणू जाणामी, मनसा वायसा कायसा ' अर्थात् सावद्य काम करनेवालेको मन वचन काया करके अच्छा जानना खुला रहा है क्यों कि ग्रहस्थका मन निग्रह होना बहुत ही मुशकिल है सावद्य काम से निवृत कर सामायिक करी है उसकी लेहर आनेका संभव रहता है कोइ कह कि तुमारे पुत्र प्राप्ती, हुइ तो मन हुलसे वचन हकार निकले और काया करके मूहपर खुशी जना आवे इस लिये यह तीसरा कर्ण तीन योगसे खुला है

इस नवमे वृतको निर्मल आराधने पांच अतिचारका स्वरुप जान उनसे बचना

१ 'मण दुप्पडिहाणे' मनसे दुमति (खोटा) ध्यान प्रवृताया होय अर्थात् इस मनको शास्त्रमें विन लगाम का अश्व (घोडा) कहा है इस ो लगाम लगानेसे बावनेसे यह ज्यादा दौडता नहीं है अर्थात् पाप मार्गमें प्रवर्तते ता यह स्थिरभूत हो जाता है, और धर्म मार्गमें प्रवेश करत यह उछल २ कर पाप मार्गमें जाता है. इस लिये इसे सामायिक व्रतमें विराजे हुये श्रावक दश काममें जाते हुवे मन को रोको:-

' मनके दश ' :-१ ' अविवेक दोष ' -जिसको सामायिकका फलका ज्ञान न हो ऐसे जीवको कभी सामायिक कराके बैठा दिया तो वो विचार गा कि यों मुह बंध कर बैठने क्या धर्म होगा ? यह क्या धर्म लगा दिया है ? इत्यादि कल्पना करे.

२ ' यशो वाछा दोष ' में सबसे वडा हु, और मैं जो सामायिक करुंगा तो मुजे सब लोक धन्य २ करेंगे मुजे धर्मात्मा कहेंग, मेरी कीर्ती वडेगी, इत्यादि कल्पना करे

'३ धनेच्छा दोष' करुंगा समाइ तो होवेगा कमाइ' में री
हू धर्म से सूखी होउंगा अमुक २ धर्म ध्यान सामायिक जास्ती
ते हैं वो सूखी हैं वेसे में भी होवुगा

४ 'गर्व दोष' मेर जैसा निर्दोष त्रिकाल सामायिक करनेवा
और कोन है ?

५ 'भय दोष' एसा विचार कि मेरे बाप दादा धर्म बहुत क
ये सदा वाख्यानमें आगे बेठ सामायिक करते थे, जो मै नहीं क
तो लोक मेरी निंदा करेंगे कि ऐस दृढ धर्मीके पूत्र हो कर एक सा
यिक भी नहीं करते हैं, ऐसा विचारके करे.

६ 'वियाणा दोष, नियाणा करे कि मेरी सामायिकका फ
होय तो मुजे धन, पूत्र सुख, सपत, इच्छित इष्ट वस्तुका सजोग मि
दुःख जावो

७ संयम दोष—में काम छोड नित्य सामायिक करता हुं इस
मुजे फल मिलेगा कि नहीं, कि मेरी दोनों लोक की कमाइ व्यर्थ ज
यगी, यों सशय लावे

८ 'कषाय दोष' ४ कषाय के वश हो सामायिक करे, जैसे
१ झगडा होय तो आप रिसाके सामायिक करके बेठ जाय, २ छोटे
सब काम कर रहे हे, में बडा हूं सा सामायिक करू. ३ में सामायि
करुगा तो मुजे कुछ काम नहीं करना पडेगा ४ में सामायिक करु
तो मुजे कूछ माधी होयगी, इत्यादि विचारे

९ 'अविनय दोष' पुस्तक मालादि धर्म उपगरण तो नीचे
और आप ऊचा बेठे. साधु साध्वी आवे तो सत्कार न देवे, मन
सक्ल्प विकल्प रखे

१० 'अपमान दोष' १ अग अकडा करके बेठे कि इससे अ
कका अपमान होगा, तथा २ सामायिक का अपमान करे अर्थात जै

माल के सिर पर बोजा दिया, वो बिचारे की कब घर आवे और जा फेंक कर हलका होवू ऐसे ही विना मनसे किसीके शरमा शरमी कहने सुनने से सामायिक तो करली फिर घडियाल हलाया करे निट गिना करे, पूरी सामायिक न आते पारने की गडबड करे पूरी कि जाने सिरका बजन उतरा, फदसे छूट्या, इत्यादि कल्पना कर, मन दुप्रतीध्यान

ऐसे २ विचार करनेसे हाथ तो कुछ नहीं आता है और सामायकका महा फल हाथ आया निष्फल जाता है ऐसा जाण मन शुद्ध मल रखना चाहिये

२ ' वय दुप्पडि हाणे ' वचन दुप्रतिध्यान (खोटा) उच्चार किया य अर्थात् कितनेक का स्वभाव से ही जास्ती बोलनेका स्वभाव होता शुद्ध वचन निकालना मुशकिल हैं, और अशुद्ध वचन सहज ही निल जाता है, इसलिये सावद्य वचनका निरूंधन करनेको ही सामाक की जाती है. सामायिक व्रतधारी को दश प्रकार के वचनका उच्चार जि करना —

१ ' आलिक दोष झुट, बोले, असबध, असुहामेण खराब उच्चारे

२ ' सह सत्कार दोष ' जैसा उपजे वैसा वचन बोले अर्थात् योग्या ोग्य द्रव्य, क्षेत्रकाल, भाव, अवसर देखे विन मनमे आवे वैसा झट ोल देवे

३ ' असाधारण दोष ' सुश्रद्धका विनाश करनेवाला वचन बोले अन्य मतावलंबीयोंके आडंबर की महीमा करे खोट उपदेश कर साथी की श्रद्धा बिगाडे

४ ' निरापेक्षा दोष ' शास्त्र की अपेक्षा रहित, ऐकक वचनसे दुसरा वचन अमिलता, तथा आपसमे विरोध पडानेवाला, दूसरेको दु ख, उचाट उपजे ऐसा बोले.

५ ' संक्षेप दोष ' सामायिक की पटीयों प्रतिक्रमण नवकारादिक

जल्दी पूरा करने या दूसरके आगे निकलने छूट २ अधेर २ बोले पुरे कर

६ 'क्लेश दोष' दूसरे साथ जुना क्लेश उत्रे रे तथा मार्मिक वचन से नवा क्लेश उपजावे

७ विकथा दोष स्त्री की, देश देशातरकी राज सायनी की भोजन पक्वान की इत्यादि निरर्थक पाप बढानवाली विकथाओं करे सो

८ 'हास्य दोष' हँसी मस्करी कुतुहल करे, तथा अपग को चिढावे, हँसी करे

९ 'अशुद्ध दोष' नवकार सामायिक की पाटीयों शास्त्रके पाठ अर्थादि काना मात्रा ह्रस्व दीर्घ कमी जास्ती अशुद्ध अयोग्य शब्द उच्चारे, तथा अशुद्ध निर्लज्ज चकार मकारादि की गालियों देवे

१० 'मुम्मण दोष' ऐसा गडबडासे बोले कि सुननेवालेको बिलकूल समज नहीं पडे कुछ मुखमें कुछ बाहिर ऐसा शब्द उचारे

इत्यादि कु वचन उच्चारण करनेसे द्रव्ये तो अपयश और भावे आत्मा मलीन होती है फायदा कुछ नहीं निकलता है, तो फिर कौन सुज्ञ श्रावक खोटे वचन बोलकर सामायिकका महा लाभ गमावेगा!

३ 'काय दुपडी हणे' कितनेकको स्वभावसे ही काया की चपलता संकोचन पसारण हलन चलणादी की विशेषता रहती है जिससे बहुत वक्त अनर्थ निपजाता है उस अनर्थसे आत्मा निवारने सामायिक वृत धारण किया जाता है, सो सूज्ञोको लाजिम है कि बारे दोषोसे कायाको अवश्य बचावेग

१ 'अयोगासन दोष बैठने योग्य नहीं ऐसा आसनपर बैठे सो अर्थात्—१ पग उगर पग चडा कर बैठन से अभिमान मालूम पडता है, और बडों की असातना होती है, २ आसन (बैठका) के नाचे अस्तर लगाना तथा श्वेतरंग छोड दूसरे रंगका बैठका रखना सो भी

योग्य है, क्यों कि दापठ अदर तथा वेरगमें उस रगका जीव आ
से मरता है इसलिये यह अयोग्य आसन केह जाते है सामायिकमें
नो वर्जना

२ 'चलासन दोष' अस्थिर आसन बैठे अर्थात् १ शिला पाट प्र-
ख डग २ करते होवे वहा बैठे, क्यों कि उस नीचे जीव आकर मर
ाते है २ जिस जगे बैठनेसे वारम्वार उठना पडे वहां बैठे, तथा सामा
क करे पीछे विन कारन उठे बैठे तो हिंशा होनेका विग्रह होनेका
मव है.

३ 'चल द्रष्टी दोष' द्रष्टी की चपलता करे अर्थात् वारम्वार इधर
धर देखे, ख्याल तमासा नाटक स्त्री योंका शृगार अगोपांग चोर च
ल द्रष्टीसे विकार द्रष्टीसे अवलोकन करे, क्यों कि प्रगट देखे तो कोइ
ोक दये

४ ' सावद्य क्रिया दोष ' पापकारी काम करे अर्थात् ऐसा वि-
चारे कि फुरसत तो है नहीं, और सामायिक करनी है, तो सामायिक
रके नामा लेखा करु, कपडे सीवुं, आचित पाणी से लीपणा, कसीदे
काडना, लडकेको खिलाना, इत्यादि कामों में कौनसी जीव हिंसा होती
है ? ऐसा विचार कर सामायिक में ऊपरोक्त काम करे तो दोष लगे
क्यों कि यह संसारी काम है सो सावद्य हैं सामायिकमें धर्मकार्य छोड
अन्य सर्व काम करने की सर्वथा मना है

५ ' आलबन दोष ' अन्यका आसरा लेकर बैठे सो दोष अर्थात्
भींतका, स्थमका, कपडे की गठडीकी प्रमुखका टेका लेकर नहीं बैठ,
क्यों कि टेका लेने स उमपर चलता जीव दब कर मर जाता है तथा
निद्रादिक प्रमादका सभव है वृद्ध रोगी तपसी अशक्त से जो कभी
टेके [आधार] विन नहीं बैठा जाय तो विना पूजा (झाडे) किसी
अवलंबन न लेवे, बहुत हलन चलन न करे

६ ' अकुचन पसारण दोप ' शरीर सकोचें पसारे अर्थात बैठे२ कोचवा जाय तब हाथ पाव लंबे पसारे मेले करे पग पसार के बैठे इत्यादि करे सो दोप

७ ' आलस दोप ' अंग मरोड, उबासी लेवे, शरीरको इधर उधर डाले, सो दोप

८ 'मोडन दोप' हाथ पग अंगुली प्रमुख शरीरके करड के मों तो दोप

९ ' मल दोप ' निकम्मे बैठे २ शरीरका मेल उतारे, पूंजे विन खाज खिने सो दोप

१० ' विमासन दोप ' गलेको हाथ लगा नीची धुन कर ससा कार्य की देन लेन घर बंधा वेपार वणज इत्यादिक विमासण (चिंता)करे

११ ' निद्रा दोप ' निद्रा लेवे, सामायिक भी होयगी और निंद भी निकल जायगी ?

१२ ' वयावच दोप ' विन कारण हाथ पग पीठ दबावे चपा तो दोप

इत्यादि प्रकारसे काया प्रवर्तानेसे अनेक छोटे मोटे जीवका वध होता है और धर्म की हीनता लगती है इसलिये सामायिकका फल प्राप्त होना मुशकिल है इसलिये ऐसे अकार्यसे कौन सुज्ञ सामायिक गमायग ?

यह १० मनके, १० वचनके, और १२ कायाके, सर्व मिलके ३२ दोप पूरे हुये यह तीसरा अतिचार हुवा

४ 'सामाइ यस ससय सकरणियाए ' ससयमें सामायक पुरी करे अर्थात् निद्राके मुर्छाके चिंताके वस हो स्मृती भूल जायकी मरी सामायिक आइ के न आइ उस सशयसे निवर्ते विन सामायिक पारे तो दोप लगे

५ 'सामाइयस अणवठियस अकरणीयाये' सामायिक करनेका अवसर आया तो भी सामायिक न करे तो, अर्थात् ससार कार्यमें फसे हुयेसे धर्म क्रिया होनी मुशकिल है और उसे निवर्तन हुए—फ़ुरसद मिले ही जो धर्म क्रिया न करे तो फिर धर्म पायेका क्या फायदा हुवा, इसलिये अवसर पाकर धर्म क्रिया न करे तो अतिचार लगे,

यह नवमें वृतके पांच अतिचार टालकर शुद्ध सामायिक व्रत करना

प्रश्न—ऐसी निर्दोष सामायिक तो इस कालमें होनी मुशकिल है इस लिये सदोष सामायिक करते तो सामायिक न करे सो ही उत्तम है

समाधान—ऐसा कहना तो ऐसा हुवा कि खावू तो पक्वान ही खावूं, नहीं तो भुखा ही मरू, पेहरु तो रत्न कम्बल, नहीं तो नंगा ही फिरु, ऐसा विचार वाला तो विन मोत मर जायगा! और जो पक्वान खाने की अभिलाषा धर पक्वान न मिले वहातक रोटिसे पेट भरे और पक्वानकी इच्छा रखे, तो कभी पक्वान भी मिले, ऐसे ही शुद्ध सामायिक करने की अभिलाषा रख, और शुद्ध न होवे वहातक जैसी वने वैसी करे, तो वक्त पर शुद्ध सामायिक भी हो जायगी जितनी सक्कर पडे उतना मिठा जरुर होगा मनमें तो शुद्ध सामायिक की अभिलाषा है और काल दोष प्रमादादिक के कारण से न होवे तो उसका पश्चाताप करे नित्य शुद्ध करनेका उद्यम करे एकदम कोइ भी काम सुधरना मुशकिल है लिखत २ अक्षर, गाते २ स्वर सुधरता है ऐसे ही पढते २ पंडित होते हैं जो पहिली खराब अक्षर देख कर लिखना छोडे, और दुष्कर विद्या आती देख पढना छोड दे तो मुर्ख ही रह जाय, फिर सुधरने की आसा तो किधर ही रही ऐसे ही नित्य

सामायिक करते और शुद्ध की वांछा रखते कभी शुद्ध सामायिक भी होगी जरा निश्चय सामायिक के अर्थ पर निघा देनो, कि एक समय मात्र भी शुभ प्रणाम आ जाय तो उसकी सामायिक निपज गइ तो क्या एक मुहूर्तमें एक समय भी शुद्ध प्रमाण नहीं होते होंगे ? ऐसा समज नित्य प्रति अवस्य सामायिक करना चाहिये

प्रश्न—सब दिनभर अनेक पाप कर, एक दो सामायिक करी इससे क्या फायदा?

समाधान—देखिये, पतगको आकाशमें उडाते है तब सेंकडो हाथ डोर छोड फक्त दो अगुल डोर हाथमें रखी या कुवेमें लोटे के साथ सेंकडा हाथ डोर छोड फक्त दो अंगुल डोर हाथमें रखी तो खेंचके लोटेको और पतंगको प्राप्त कर सक्ते हैं और विचारे की दो अगुल हाथमें रही तो क्या हूवा, और गइ तो क्या ? ऐसा विचार दो अगुल डोर छोड दवे तो पतग और लोटा दोनोको गमावे ऐसे ही सर्व जन्म तो संसार रुप कुपमें डाल दिया है, फक्त दो घडी रुप सामायिक वृत की नित्य प्रती आराधना करी तो तारेगा तब ज्ञानादि त्रीरत्न हाथमें ले सकेगा इसलिये सामायिक अवस्य ही करना चाहिये

यह सामायिक व्रत है सो दो घडीका सयम ही है संयम जावजीवका होता है इसलिये खान पान सयनादि कार्य की नियमित छुट्टी है, और सामायिक स्वल्प काल की हैं, इसलिये यह बदावस्त किया है

सामायिक के फलकी गाथा, संबोध सित्तरी की—

दिवसे २ लक्ख देइ सुवन्नस्य खंडीये एगो ।
इयरो पुन सामाइय, न पहूपहो तस कोइ ॥ * ॥

कोइ नित्य प्रत्य एक २ लाख खंडी (२० मणकी एक खंडी) सोनैया दान में दवे और कोइ एक सामायिक करे तो उसे एक सामायिकके

---

* दोहा—लक्ष खंडी सोना तणी, लक्ष वर्ष दे दान
सामायिक तुल्य नहीं, भाख्यो श्री भगवान

ल्य वो दान नहीं

समाइय कुण तो समभाव, सावउ अघडीय दुग्ग।
आउ सुरस बधइ इति अमिताइ पलियाइ ॥ १ ॥
बाणवइ कोडीउ लख्या गुण साठि सहस्य पण वीस।
नवसय पण वीसाए, सतिह अड भाग पलियस्य ॥ २ ॥

जो श्रावक समभावसे दो घडी की सामायिक करेगा वो ९२ क्रोड, ५९ लाख, २५ हजार, ९ सो, २५ पल्योपम और एक पलके आठ भाग करना उसमें के ३ भाग, इतना देवताका आयु बांधे, और नर्कका आयुष्य बांधा होय तो तोड देवे

अन्यमतावलंबी क्रोड पूर्व लग मास २ तप करे, तणाग्रपर आवे इतना अन्न और अजलीमें आवे इतना पाणी पारने के दिन लेवे, उसका पून्य और ज्ञानयुक्त दो घडीकी करणी अर्थात् सामायिकका फल के सोलमें हिस्सेमें भी नही हें

ऐसा महा लाभका कारण, जन्म मर्ण निवारनेवाली, चित्त समाधीकी करनेवाली, मोक्ष पथ लगानेवाली, आतमरुप अनत शक्ती के प्रकाश करनेवाली, राग द्वेष शत्रुओंका नाश करनेवाली, ज्ञानादि त्रीरत्न के लाभको देनेवाली, 'सामायिक' हमेशा करनी चाहिये ज्यास्ती न वने तो त्रिकाल (फजर दो पहर और स्याम) तो अवस्य ही करना इन त्रिकालोंमें त्रिज्ञभक देवका आगागमन रहता हे उस वक्त अपने शुद्ध प्रणाम रहें और पुन्य प्रगटने होव तो सहज महा लाभकी प्राप्ती हो सकती हे जो त्रिकाल न वने तो फजर स्याम यह दो वक्त जरुर करनी क्वापि कार्य वाहुल्यानास दो वक्त न वने तो, नित्य एक वक्त तो जरुर ही करनी चाहिये अन्य जन भी कहते हें कि 'आठ पहर घरकी तो दो घडी हरकी,' तथा 'अठ पहर कामकी तो

दो घडी राम की ' अर्थात् आठ पहर अकार्यमें लगाते हो तो दो घडी तो जरुर नित्य प्रत्ये आत्मकल्याण के मार्गमें लगानी ही चाहिये

जो यह नवमा वृतका तहा मनसे सम्यक् प्रकारे आराधन करेगा वो यहा अनेक सुख भोगव कर स्वर्ग सुखका अनुभव ले, आगे मोक्ष पावेगा

१० 'दिशावकासीव्रत' कहतां दिशा की मर्यादा करे अर्थात् छट्टे वृतमें जो छे दिशा की मर्यादा करी सो तो जाव जीव की जाननी, परंतु कुछ उतने कोश जानेका काम नित्य पडता नहीं तो नाहक इतनी छुट्टी रख पापमे क्यों डूबना ? इस लिये ' दिन २ प्रते '–नित्य (हमेशा) जितना काम पडे उतनी ' प्रभात से प्रारभी ' सुब्ह (सवेरे) से ही ' पूर्वादिक छेही दिशाकी मर्यादा करी है '—पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण ऊंची नीची यह छेही दिशामें कोश की गिनती कर, उप्रात (आगे) जाने के पच्चखाण (सोगन) करे, कि मेरेको आज एक घडी, या एक पहर, या चार पहर, या आजसे इतने दिन, पक्ष, मास, तक इस मेरे बिस्तर (बिछोने) के, घर के, गाव के, या माइल, कोश, योजनादि उप्रात नहीं जाउंगा सो भी ' स्वइच्छा, काया करके ' मेरी इच्छासे, और मेरी कायासे, अर्थात् देवता या विद्याधर हरण कर ले जाय, राजा निकाल दे, तथा उन्माद आदि रोग से परवसपने चला जाउं सो बात जुदी (अलग), और मैं कायासे न जावुं इसका मतलब यह है कि किसी नोकरको भेजना पडे, या खत (पत्र) देना पडे, सो भी बात अलग है इन कारणों उप्रांत जाने के पच्चखाण है. सो किसके पच्चखाण है कि ' आगे जाकर पांच आश्रव सेवने के पच्चखाण ' मरजाद उप्रांत जाकर पंच आश्रव (हिंसा–झूट–चोरी–मैथुन –परिग्रह) के काम नहीं करुंगा परतु जीव छोडानेको, मुनीराज के दर्शनको या किसी धर्म कार्य के लिये यतना से जावे, और धर्म सिवाय अन्य काम किंचित ही नहीं करे, तो व्रतका भंग न होवे यह पच्चखाण दो करण और तीन योग से होते हैं. सामायिक की तरह

जानना अब 'पूर्वादिक' ठे दिशा के माय अदर जो भूमीका मोकली रखी है 'ते मांहे' उसके अदर भी द्रव्याविक की मर्यादा करनी, अर्थात् दशमें व्रतके धरण हारको जो सातमे व्रतमें २६ बोलकी मर्यादा जाव जीव की करी है, उत्नी वस्तु कुछ हमेशा भोगवनेमें नहीं आती है, परतु जो अव्रत न मिटावे ता सबका पाप आवे, इस लिये यहा उसमें से भी सकोचन करना अर्थात् नित्य नियम धारना जितनी वस्तु भोगवनेमें आवे उस उप्रांत त्यागन करना इस मर्यादा के सतरे भेद किये हैं सो —

१७ नित्य नियम-१ 'सचित'—बने वहातक तो दशमे व्रत धारीको सचितके सर्वथा त्यागन करना, जो कदापी नहींज चले अर्थात् व्यसन पूरा करना ही पडे तो सचित (सजीव) १ मट्टी—लूण, या लूण डाला हुवा चूरण, कि जिसको किये पीठ व्रष्टी (वर्षाद) न हुइ होए ऐसा २ पाणी—सरोवर, या पीरेंडे, नल, प्रमुख ३ अग्नी—चूला, दीपक, हुक्का, वीडी प्रमुख ४ वायू—पंखा, पक्खी, भूला, वाजित्र प्रमुख ५ वनस्पति—भाजी, फल, फूल, कच्चा अनाज, विगेर के तोलकी मर्यादा करे, कि इतने उप्रात न लगावूंगा २ 'द्रव्य' —खाने के पदार्थ के नाम, तथा स्वाद पल्टे उतने ही द्रव्य होते हैं उस्की, गिनती करे, की आज इतने उप्रात नहीं खावूगा ३ 'विगय' —दुध, दही, घी, तेल, मिठाइ, इनमें से एक तो नित्य जरुर ही त्यागे, और लगे उनके वजनकी मर्यादा करे ४ पन्नी—पगरखी, बूट, मोजा, वगैरे की गिनती कर चल वहातक चमड की तथा खाले (नाल) वाली नहीं पहर ५ 'तंबाल'—पानमें तो अनत कायका संभव है, कितने पके (पीले) पानको अचेत गिनते हैं सो अयोग्य है, पान सूके विन निर्जीव न हावे इस लिये बने वहा लग श्रावकको पान

नहीं खाना और लोंग सुपारी इत्यादिक के बजनका प्रमाण कर ६ ‘ कुसुम ’—फूल तो सूघना ही नहीं, और तमाखु, (तपखीर–छींकणी) या कोइ औषध सूंगणेका काम होवे तो वजनका प्रमाण कर ७ ‘ वत्थ ’–रसम के वस्त्र तो वापरना ही नहीं, और सुत, ऊन, सण, इत्यादिक के वस्त्र के हाथका या नगका प्रमाण करे ८ ‘ सयण ’–ब ने वहा लग खाट पिलंग पर नहीं सोना, और पाट, गादी, सतरजी, इत्यादि बिछवने की लंबाइ चोडाइ के हाथ, या नंगका प्रमाण करे ९ ‘ वाहण ’–चरते—घोडे हाथी प्रमुख, फिरते—गाडी बग्गी म्याना प्रमुख तिरते—झाझ नाव प्रमुख, उडते—वीमान गुम्भारे प्रमुखका नंगका प्रमाण करे १० ‘ विलेवन ’—तेल पीठी वगैरे शरीरको ल- गाना पडे, तथा केसर चदन वगैरे तिलक करना पडे, उसके बजनका, या प्रकारका प्रमाण करे ११ ‘ अवभ ’—बने वहा तक तो ब्रह्मचर्य पाले, नहीं तो एक वक्त उप्रात त्याग करे स्त्री भरतार एक ही सेज पर सयन नहीं करे भेले रहने से, एकेकका श्वासोश्वास एकेकको ल गनेसे, रोग उत्पन्न होता है, तथा तिव्र अनुराग से कठिण कर्म बंधत हैं १२ ‘ दिशा ’—पहिले कहे मुजब ठे दिशाकी मर्यादा करे १३ ‘ न्हावण–धोवण ’ छोटी स्नान, बडी स्नानका, तथा कपडे धोनेका, वक्तका या नंगका प्रमाण करे विन छणे पाणी से न्हाव धाव नहीं विशेप पाणी ढोले नहीं १४ ‘ भत्तेसु ’—खाने पीनेका आहार पाणी के बजनका प्रमाण करे बने वहांतक ओंठा (झूटा) न डाले यह चउदे, और १५ ‘ अस्सी ’–पचेंद्री की घात होवे ऐसा हथियार नहीं चलावे और चप्पू सुइ, कतरणी, लकडी के नग की मर्यादा करे १६ ‘ मस्सी ’—बहुत दिन स्याइ एक दुवातमें भर के न रखे, तथा बहुत सकड मुह की दवात न रखे, और दुवात, कलम, कागज, या जवरात कपडे, किराणे आदी बेपार के नंगका प्रमाण करे १७ ‘ कस्सी ’–कृषी खेतीवाडीका कर्म श्रावकको करना योग्य नहीं हैं आसामी आदिक

रखे तो प्रमाण करे यह सतरे नियमकी मर्यादा नित्य फजर करे, और स्यामको याद कर ले कि मैंने कित्नी वस्तू रखीथी, और कीत्नी लगी, जो स्मृती चूकसे ज्यादा लग गइ होय तो, मिच्छामी, दूक्कृत्यादि प्रायच्छित ले शुद्ध होवे फिर रातकी मर्यादा करे इन सतरे नियम के पचखाण 'एगविह' तिविहेण एक करण और तीन योग से होते हैं अर्थात् मैं मन वचन काया करके करुगा नहिं, इसमें दूसरे के पास करानेका, और करतेको अच्छा जाननेका आगार रहा है

दश पच्चखाण भी इस दशमे व्रतमें ग्रहण किये जाते है

१ 'सूरे ऊगे नमोकारसहिय पचक्खामि, अन थ्यणा भोगेण, सहस्सागारेण वोसीरे' अर्थात् नोकारसी (पोरसीका चौथा भाग तथा नोकार गिन के पारे सो) इसमें दो आगार १ अनथ्याणा भोगेण–भूलकर कोइ वस्तु मुखमें डाल देवे, २ काम करते मुखमें उछलकर पड जाय, जैसे गायका दूध निकालते उसका छांटा उडकर मुखमें पड जाय

२ 'सुरे ऊगे पोरसीहय पचाखामि, अनथ्यणा भोगेण, सहसा गारेण, पछन्न कालेणं, दिशा मोहिण, साहुवयणेण सव्व समाहि वित्तिया गारेण, वोसीरे' दुसरे पोरसीके पचाखाणमें ६ आगार, १–२ दो का अर्थ पहिले हुवा सो, और ३ बादलमें सुर्य छिप जाय और वक्त की मालुम न पडे तो, ४ दिशा की भूल पडनेसे, कितना दिन आया ऐसा मालुम न रहनेसे खाय सो ५ काइ वक्त उत्कृष्ट कार्य होणेसे गुरु हुकम करे तो, ६ सर्व समाधीसे शरीर रहित हो गया, पर वस पड गया होय तो

३ 'सूरे ऊगे पूरि मढ पचखामि, अन्नथ्यणा भोगेणं, सहस्सा गारेण, पछन्न कालेण, दिशा मोहेण, साहूवयणेणं, महत्तरागारेण, सव्व समाही वित्तिया गारेण, वोसीरे' दो पोरसी के पचखाणमे ७ आगार हैं उसमें से छेका अर्थ तो पहिले हुवा, और ७ मा 'महत्तरागारेण' सा कोइ महा मोटा उपकारका काम होय तो

४ 'एगासण पचखामि' अन्नथणा भोगेणं, सहस्सागारेणं,

सागारी आगारेण, आउट्टण पसारेण, गुरु अभुठाणेण, परिठावणिया गा रेण, महत्तरा गारेणं सव्व समाही वतिया गारेण वोसीरे एकासेणेक पचखाणमें ८ आगार, जिसमें से दोका अर्थ तो पाहिले कहा है, और ३ गृहस्थ आ जाय और उठना पडे तो ४ हाथ पाव सकोचने पसारने पडे तो, ५ गुरु पधारे और सत्कार देने ऊभा होना पडे तो, ६ दुसरे साधूके आहार बद जाय, वो परिठवणे जावे, उसे भोगवे तो, ७-८का अर्थ पहिले लिखा है

५ ' एकल ठाण पचखामी ' अन्नत्थणा भोगेणं, सहस्सागारेणं, सागारी आगारेण, गुरु अभुठाणेण, परिठावणीया गारेणं, सव्व समाही वतिया गारेण वोसीरे ' एकल ठाणा (एक ठिकाणे हलन चलन करे, विन आहार करे सो) के ७ आगारका अर्थ पहिले हुवा

६ ' आय बिल पचखामी ' ' अन्नयणा भोगेण, सहस्सागारेण लेवालेवेण गिहत्थ ससठण, उखित विवग्गेण, परिठावणीया गारेण, म हत्तारगारेणं, सव्व समाहि वत्तीया गारेण, वोसीरे ' आबिल (एक ही अनाज लुखा पाणीके साथ एक ठिकाणे बैठे एक ही वक्त खावे सो) के आगार ८, जिसमे से (१ -२-६-७-८) इनका अर्थ तो पहिले हुवा ३ सहज लेप लग जाय, जैसे लुखी रोटी चोपडी पर रखनेसे लगे ४ आहार देनेवाले के हाथ विगय से भरे होवे और वो देवे सो ५ गुड प्रमुख सुखी वस्तू उसपर रखके उठा ली उसका रहसा लग जाय सो और का अर्थ पहिले हुवा

७ ' सुरे ऊगे अभतठं पचखामी ' ' अनथ्यणा भोगेण, सह स्सागारेण, परिठावणिया गारेण महत्तरागारेण सव्व समाही वितिया गारेणं, वोसीरे उपवास (आठ पहर ४ चार ही आहार (भोजन) नहीं भोगवे सो) के ५ आगार, अर्थ हुवा

८ ' दिवस चरिम पचखामी ' 'अन्नथ्यणा भोगेण सहस्सा गारेण महतरा गारेण, सवसमाही वितिया गारेणं, वोसीरे ' पिछेका दिन ोहासा रहे तव चार ही आहारके त्याग करे सो दिवस चर्म, इसके४ ागार, अर्थ हुवा

९ गठ सहीय पचरखामी ' अन्नथा भोगेण, सहस्सा गारेणं, म तरागारेणं सव्य समाहि वितिया गारेणं वोसीरे ' किसी कपडेको या ोटिको गांठ लगाकर नियम करे, की में इस गाठको नहीं खोलुंगा हां तक कुछ खाबुगा पीवुगा नहीं सो गंठी पचखान इसके ❀ ४ ागार, अर्थ हुवा

१० ' निविगइयं पचखामी ' ' अन्नथ्यणा भोगेण, सहस्सागारेणं न्ना लेवेणं, गिहत्थ संसठेण, उखित्त विवग्गणं, पडुचमखिपणं, परिठा णीयागारेणं, महतरागारेण, सव्वसमाहिवतीयागारेण, वोसीरे ' नीवी इसमें दुध, दही, घी, तेल, मिठाइ यह पांच वस्तु नहीं खावे कोइ ुक्खी टंडी रोटी ठाछेमे खाते है) इसके ९ आगार उसमेंसे आठ ागारका अर्थ तो पहिले हुवा और ९ किसी वस्तु के पडेमे विगय ्रगाइ होय और माल्हुम नहीं पडते भोगवनेमें आ जाय तो,

इन दश पचखाणोंमें ❀ साहुवयेण, सागारी आगारेणं, परि

---

* ऐसे ही मुठी पचम्मान होते है कि, आहार (भोजन) करुंगा वहां तक बाये हाथ की मुट्ठी भीड रखुगा

❀ इन दशही पच्चखाणमें जो तिविहार करना होय (पाणी पीणा होय) तो असणां खाइम साइमं यह शब्द मिलाना और चोविहार करना होय तो असणा पाणां खाइम साइम यह शब्द मिलाणां ऐसे ही सब पच्चाखाणा जाणना—जैसे—उगेसुरे नमुकारसीय पच्चखामि चोविहंपिआहारं असणा पाणां खाइम साइम- अनथ्थाणा भोगेणं स हसागरेणा वोसीरे

ठवणीयागारेण, गिहत्थ ससठेण यह आगार साधु आसरी जानने ऐसे ही छोटे मोटे जितने पचखाण है उन सबका दशमें व्रतमें समा वेस होता है इस लिये इस व्रतमें सब वृतों (११ व्रत) का समावेस होता है, यह दशमे व्रत करने का अब्बी दो तरहका रिवाज द्रष्टीगोचर होता है १ गुजरातमें तो फजरसें सुबूसे ही उपासरा—स्थानकमें आकर इस मतमें लिखे मुजब दिशा की और उपभोग परिभोग कि मर्यादा करते है सब दिन साचितका त्याग कर सीधा निपजा हुवा, आहार मिले उसे भोगवते है और सब दिन रात धर्म ध्यान करते है २ मालवा मेवाड मारवाड दक्षिणमें जिस श्रावकने उपवासके दिन पाणी पीया, अफीम, तमाखू, खाइ या स्यामको थोडा दिन रहते आया वो दशमा वृत (दशमा पासा) करते हैं परन्तु किसी तरह अव्रत रोक वृत धारण करे उसमें नफा है इस दशमे व्रतको निर्मल रखने पाच अतिचारका स्वरुप जाण वर्जना

१ ' आण वण पउगे ' जितनी भूमिका मर्यादामें पहिले रखी है उसके बाहिरसे वस्तु दुसरे के पास मगावे तो अतिचार लगता है

२ ' पेन्नावण पउगे ' मर्याद उप्रात कोइ वस्तु भेजे (मोकले) तो आतिचार लगे, क्यों कि इस वृतमें दिशी की मर्यादा दो करण तीन जोगसे की है इसलिये मगाना और भेजना दोना बंद हुवा है करना–कराना दोनो बद हुवे है

३ ' सद्दाणुवा ' विचारे कि मेरेको मर्यादा उप्रात दूसरेको भेजना तो कल्पे नहीं, परन्तु जिसने मेरे काम है वो आ गया है तो उसे बुला लेवु यों विचार उसे बोलावे तो अतिचार लगे, क्यों कि तीन जोगसे त्याग किया है जिसने वचनका योग बूलाना भी बद हुवा है

४ ' रूवाणुवा ' एसा विचारे, बोलना तो बद हैं परन्तु छींक

ागासी खेंकार इत्यादि करु वो मरे को देख लेवेगा तो मेरे पास आ
ायगा यों विचार आप आपणी मर्यादाकी भूमीमें रह ऊचा नीचा
। उसे बतावे इसारा जनावे, तो अतिचार लगे क्यों कि इसमें वचन
ौर काया दोनो जोग प्रवर्तते है-

५ 'बहीया पोगल पखेवा' एसे ही कंकर काष्ट तृण प्रमुख उ-
पर डाल, संकेत कर, उसे बोलावे तो भी अतिचार लगे

यह तो फक्त दिशी की मर्यादा आश्री ५ अतिचार कहे सुज्ञ
ावक इसके अनुसार से ही जो द्रव्यादिक की मर्यादा खरी है, उस के
ा अतिचारोंको जानेगा, कि नियम किये हैं उस १ उप्रांत वस्तु भोगवे
हीं २ अब्वी रहन दो, फिर में भोगवूंगा ऐसा कहे नहीं ३ विचारे
हीं कि कब वृत पुरा होवे और उसे खावू, पेरु, भोगवू! क्यों एक
रण और तीन जोगसे पच्चखाण है, सो अपने भोगवने आश्री तीन
ागका वेपार रुका हे ४ अन्य वस्तुके बखान करे नहीं कि यह वस्तू
हि मनहर है ५ और मर्याद करके जो वस्तू रखी है, उसमें अतिरक्त
ोवे नहीं ऐसा विचारे कि धन्य है सर्वव्रती पुरुषोको, कि जो सर्व
मव्रतको रोक निराश्रवी हो विचरते है धिकार है मरेको कि में इत्ना
ी नहीं छोड सक्ता हूं ऐसी लुख वृत्ति रखे ऐसे उपभोग परिभोग
(१७ नियम १० पच्चखाण) के अतिचार टालकर शुद्ध वृतका आ-
ाधन करे

यह दशमा वृत * हरवक्त, हमेशा, पूर्वे करी हुइ मर्यादामें से

* १ सब भी इसी यतन हैं— सर्वथा ब्रह्मचर्य २ सर्वथा हरीका त्याग ३ सर्वथा कच्चा पाणीका त्याग ४ सवथा चोविहार—रात्री चार अहार भोगवनके त्याग ५ सवथा सचित के त्याग जीवनपर्यंत पाच ही आराध सके तो बहुत उत्तम है नहीं तो १ मका ? तो नित्य सर्व श्रावकको धारण जरूर ही करना चाहिये

संकाच २ के करनेका है क्षुद्र श्रावक अवसर पाकर, तथा तिथीआ
दिकका उत्तम संयोग पाकर, इसकी आराधना यथाशक्ति जरुर
करो क्यों कि इसमें विशेष देहको कष्ट दनेका काम नहीं है फ
इच्छा निरोधका ही मामला है प्रमाद आलस कमी करन से यह
त्य ही निपज सक्ता है इस वृत के आराधने से जैसे मंत्रवादी मंत्र
प्रभाव से साप बिछूका जेहर हटा कर फक्त डंक के ठिकाने ले आत
है, थोडी २ क्षण २ रहती है, तैसे गुरु रुप मंत्रवादी, श्रावक की स
जक्क की क्रिया रोक देते हैं और थोडीसी रह जाती है संतोषका साग
सर्वका मित्र बनानेवाला, मोक्षका मार्ग है इस वृतको धार स्वर्ग सु
भूक्त अनुक्रमे मोक्ष प्राप्त करेंगे

११ मा 'पापध वृत' इग्यारमे वृतमें पौषा करे अर्थात् छे
काय के जीवको पोषे तथा ज्ञानादिकसे अपनी आतमाको–धर्मको
पोषे सो पोषा इस पोषाको ग्रहण करने की विधी ऐसी है–

अठार (१८) दोष से निवर्तन होवे तब शुद्ध पोषा होता है
इन में से छ दोष तो पोषा किये पहिले टालना सो,

१ कोइ ऐसा विचार करे कि, कल तो मेरे पोषा है, सो स्नान
हजामत कुछ कराना नहीं है, इस लिये, आज करलूं यों विचार स्ना
नादि करे तो दोष २ पोसह के पहिले दिन मैथुन सेवे तो दोष ३
कल उपवास है, इस लिये आज खूब खा पी लेवूं यों विचार सरस
आहार नसा वगैरे भोगवे तो दोष ४ पोषा के निमित वस्त्र धुवावे
तो दोष ५ पोषा के पहिले दिन गेणा पेहरे तो दोष. पोषेमें तो धात
मात्र रखने की मनाइ है ६ पोषा के लिये वस्त्र रंगावे तो दोष, यह
छे काम पोषा के पहिले दिन नहीं करना और ग्रंथोंमें भी कहा है
कि पोषे के पहिले दिन 'एगं भत्तं च भोयणं,' एक वक्त ही भोजन
करना ब्रह्मचर्य और शुभ ध्यान युक्त पहिली रात्री गुजार, दूसरे दिन
सुयगडांगजी के दूसरे श्रुतस्कंध सातमे अध्ययनमें कहे प्रमाणे 'अ

अपेक्षाए ' अर्थात् ' निद्रा से निवर्तन हो कर तुर्त दूसरा काम न किये पोषा धारे ' निद्रासे निवृत राइसी (रात्रीका) प्रतिक्रमण ८ फिर पोषेमें जो वस्त्र ७२ हाथ के अंदर रखे है, उसे प्रतिलेखे अर्त् आँखोंसे देखे, और जो जीव हाथ से लेने जैसा न होए उसे पूंणी (गोछे) से पूंज कर अलग करे उनमें जीव प्रवेश न कर के ऐसा रखे फिर ' आवस्यइ ' ' तसुत्तरी ' की पाटी कह कायोत्सर्ग १ कायोत्सर्ग ' आवस्यइ ' की पाटि कहे पारके ' लोगस्स ' कहे. र कहे कि पडी लेहणमें छे कायकी विराधना करी होय तो तस्स च्छामी दुक्कड फिर दूसरी वक्त आवस्यइ, तसुत्तरी की पाटी कही वस्यहीका काउसग कर लोगस्स कही पोसह पचखे सो पाठ.

इग्यारमो, ' पडीपूणी ' 'प्रती पूर्ण पोसह व्रत ' गुणको पोषणेका वृत जिसमें) ' असण ' — अन्न (अनाज) के, पार्ण पाणीके खाइमं खडी (मेवा मिठाइ) ' साइम —स्वादिम (तंबोल) ' चउ विहं ' ह चार ही, ऽपी इन उमात और भी खान पान या सुघने आदि र्व, ' आहारं '—आहारके, ' पच्चखामी '—पच्चखाण, ' सोगन ' अभ '—(मैथून) सेवनेके पच्चखाण ' माला '—फुल सूवर्णादिक कि ाला ' वनग ' —दुसरे आभरण (गहणे) ' विलेवण ' —तल चनादिका शरीरके विलेपन (लगाने) का ' पच्चाखाण '—सोगन, मणी' —हीरे पन्ने आदि जवेरात ' सोवन ' —सोने रुपेके नाणेका पचखाण ' —सोगन ' सत्थ मुसलादिक ' —मुसल तरवारादि सर्व स्त्रके और ' सावज्जजोग ' – जिस मन वचन कायासे किसी भी जीवको किंचित दुःख होवे ऐसे प्रवर्तानेके ' पच्चाखाण '—सोगन इस व्रतेंमे इतने सोगन होते हैं) ' जाव अहोरत्तं ' —एक दिन

और एक रात [अष्ट प्रहर] के ' पजुवासामी ' —प्रभु की पर्यु
सना सेवा, करुगा[यह वृत] ' दुविहं ' दो करण ' तिविहेण '-तीन
गसे [दो करण]में ' न करे मि '– करु नहीं ' नकारेवमी ' –दूसरे
पास कराबू नहीं [तीन योग] ' मणेण ' –मनेसे, ' वायाए ' –व
नसे, ' कायेणं ' –कायासे ' तसभते पडीककामी निंदामी, ग्रहामि अ
प्पाणं वोसीरामी

इसतरह यह वृत धारण किये पीछे गुरु सामने तथा पूर्व उ
सन्मूख मुख करके डावा गोडा ऊंचो कर जीमणा गोडा धरतीको लग
दो नमोथ्थूण कहे फिर कोइ छुट्टा गृहस्थके पास से आज्ञा ग्रहण क
कि औघा पूंजणी, भाजन या मात्रादिक पठेवणेको जो वापरनेमें आ
उनकी आज्ञा ग्रहण करे फिर लघूनीति आदिक कारण उत्पन्न हो
तव पहिले पीतल, मिट्टी आदिक भाजन की योजना कर रखी होव
उसमें निवेडे, मकानके वाहिर निकलती वक्त ' आवस्य ही ' २ श
कहे, फिर जिहां अचित (निर्जीव) भूमी होवे वहां, द्रष्टीसे देख
फिर ' अणूजणहाजसागं ' कह परिठवे (यतनासे चौडा २ डाले) पि
' वोसीरे ' २ कहकर स्थानकर्मे प्रवेश करती वक्त ' निसही ' २ कहक
प्रवेश करे यतनासे भाजन रख पूर्वोक्त रीतिसे ' अवस्य ही ' का क
योत्सर्ग करे मात्रादिक परिठवता छही काय की विराधना करी हो
उसका ' मिच्छमी दुक्कडं ' देवे और कदापि वही नीति (दिशा) व
कारण पड जाय, तो जैसा पोपाका भेप है वैसे ही तरह रहे, कदा
शरम आती होय तो वस्त्रसे सिर मुख ढांक किसी श्रावकके यहा
अचत पाणी लाटे प्रमूख लेकर, अचेत भूमीकार्मे निवेडे, और स
क्रिया लघूनीत पठेवते करी, वैसी करे यह पोपार्मे कारणसे निवर्त
की विधी कही

अव पोपा को ग्रहण किये पीछ १२ दोप से वचना सो पो
लिये पीछे –१ अवृतीको सत्कार देवे, वैठनको विछोना देवे, हाथ पा
दावे तो दोप २ शरीरकी विभूपा करे, केश दाढी मूछ सवारे, धोती क

टली जमावे वगैरे. ३ अपने तथा दुसरेके शरीरका मेल उतार ४
नेंद्रा जास्ती लेवे तो दोष अर्थात पोषामें विनको तो सोना नहीं
है रातको पहर रात गये पीछे प्रमाद निवारे, और पीछली पहर रात्री
हे तब जाग्रत होकर धर्मध्यान ध्यावे ५ गोच्छा से शरीर पुजे विन
खाज खिने (कुचरे) तो दोष ६ देशदेशातर की राज रजवाड की ल-
डाइ झगडेकी स्त्रीयोके शृगार की विलास की भोजन निपजानेकी
स्वाद की इत्यादि पाप कथा करे तो दोष ७ चाडी—चुगली—निंदा
करे तो दोष ८ संसारी वैपार वजण लेनदेन की तथा खाली गप्पे सप्प
मारे तो दोष ९ अपना शरीर, तथा स्त्री यादिकका शरीर, अनुराग
(प्रेम) द्रष्टी करके देखे तो दोष १० नाते मिलावे तुमारा यह गोत्र
है और मेरा या मेरा अमुकका यह गोत्र है इसलिये तुम मेरे या मेरे
अमुकके सगे लगते हो, ११ जिसके पास सचित वस्तु होय, या उ-
घाड मुख से बोलता होय उस से बोले तो दोष १२ हाँसी मस्करी,
तथा रुदन सोक संताप करे तो दोष

यह छे पहिले के और १२ यह यों १८ दोष टाल कर पोषा
होवे सो शुद्ध है इस पोषध व्रतको निर्मल रखणे पाच अतिचारको
निवारना सा —

१ 'अप्पाडि लेहीय दुप्पडी लेहीये सेज्जा सथारए' पोषह कर
लिये अव्वलसे ही निर्वद्य मकान की योजना चाहिये, अर्थात् घर दु
कान से अलग उपासरा स्थानादिक होय तो बहुत अच्छी बात, नहीं
तो जिहा अनाज हरी, पाणी, किडीनगरा फूल, फल, इत्यादि सचित
वस्तु न होय, या किसी प्रकार के उपद्रव उपजने जैसी जगह न होए
ऐसी जगाको अच्छी तरह सुक्ष्म द्रष्टी से देख कर वापरे, तथा जब उठ
ने बैठनेका जिस २ जगह काम पडे, वहा देखे विन बैठे तो अतिचार
लगे तथा कुछ देखे कुछ न देखे, चचल द्रष्टीसे देखे, विप्रीतपण देखे
तो भी अतिचार लगे

२ 'अप्पमज्जीय दुप्पमजीय सेज्जा सथारए' पूर्वोक्त रितीके

मकानमें द्रष्टी से देखने जो जीवादिक की सका पड जाय तो रजहरण गुच्छादिक से पुंजे (झाडे) कचरा प्रमुख रहने से उसके आश्रित त्रस जीव आकर मरनेका ममव है इसलिये पोपध करने की जगह साफ रखे जो यत्ना से नहीं पूजे, तथा थोडा पुजा नहीं पूजा बराबर नहीं पूजे, चचल चित से पुजे तो अतिचार लगे

३ ' अप्पडी लहीय दुप्पडी लेहीय उच्चार पास वण भूमी ' ल घुनिति—वडीनीति, तथा पितादिकका उठाव हो जाय तो, पहिले उ सके लिये आप पहिले दिन होय वहातक जगाको देख लेवे, कि जहा अनाज, हरी, कुथवे, किडीयादीक न होवे फिर जब काम पडे तब वहा द्रष्टी से पडीलेह (देख) के यत्ना स काम निवडे जो जगा देख नहीं रख या चचल चितसे बराबर न देखे तो अतिचार लगे

४ ' अप्पमजीय दुप्पमजीय उच्चार पासवण भूमी ' जो प्रथम वडी-नीती, लघु—निती, पित की भूमीका की प्रतिलेहना कर रखी है उसमे कारणसे निवर्तन होत जो कोइ जीव की शंका पड जाय तो रजोहरणादिक्से पुजे जो बराबर न पूंजे, तथा स्थिर चितसे न पूजे तो दोप लगे

५ ' पोसहस्स सम्मं अणणू पालणयाए ' पोसा और उपावास स म्यक प्रकारे न आराधा होए,, अर्थात् जैसी विधी पोपह करने की व ताइ ह उस विधी प्रमाणे पोपा न किया होय, तथा करके यथा विधी न ग्या होय, पोस में विचार कि मेरे आज अमूक काम था मैने निरर्थक पोसा किया तथा कब पोपा पुरा होवे और अमुक कार्य शिघ्र करू अमुक वस्तु लाघू, निपजावू, खावु तथा पारनेक लिये ये ये वस्तु निपजानी है इत्यादि विचारक बहुत हलन चलन करें असम्बन्ध वचन वोले, अत्नामे कार्य करे तो अतिचार लगे

यह पाच अतिचार और अठारह दोप रहित होवे सो शुद्ध पोसा कहा जाता है

एसी रिती से विशेष न वने तो महीनाके छे (२ अठमका उप

वास और चउदश अमावस्या तथा चउदश आठपकी के चार पुनमका वेला यो ६) ऐसे तो जरुरही करना चाहिये े नहीं बने तो चार २ ही नहीं बन तो पक्खीके दो दिनस तो जरुर ही करने चाहिय अन्य लोक भी कहते है कि ' महीनेके अठाइस दिन गधे की तरह चर, परन्तु मेरे भाइ दो एकादशी तो कर ' इसलिये एक महिनेमें दो दिन जरुर ही निकाल ना चाहिये इस वक्त धर्मात्माहो जग रुढीसे (देखा देखी) आठम चउ दशके उपवास तो करते है, परन्तु पोषा नहीं करते है, यह वडी ताजुब की वात है जग धंधा इत्ना प्यारा लगता है कि खानेके दिन तो नहीं छुटे सो नहीं छुटे, परन्तु भूखे मरे उस दिन भी नहीं छोडे और कित नेक पोषाका नाम रखने सब दिन घर धंधा कर दिन अस्त होते २ दोडते २ आते है, झट बिस्तर डाल, कपडे खोल, दट्टा वध, हाथ जोड धोती की लाग खोलते खोलते कहते है, कराइये महाराज ! इग्यारमा पोसा, मैंने पाणी नहीं पीया है पोसा पचक्ख ताण खुंटी जो सोते है तो दिन उगा देते है? उठे नमोहुत्थुणं नमो त्थुणं कहके मत्थएण वंदामी करते घर भाग जाते है ! हा हा देखिये ससार की लालसा कैसीजबर है ऐसेको पोका क्या फल करणीका फल होताहागा ? तो निष्फल नहीं जानेका परन्तु इनको निर्जरा होनी मुशक्लि है, ऐसी खाटी चाल निकालने वाला, विगाड देत हैं सुज्ञ श्रावक तो आत्मकल्याणक लिये निदोष पोसा कर महा लाभ उपराजता है द्रव्य पोसा करनेसे अर्थात् चक्रवृत वासुदेव जो खड साधने तेलाका पोसा कर देवताकी आराधना करते है, सो उनके देव आधीन हो जाते, तो जो वाञ्छा रहित तप कर, उसके कर्म कटक कटे इसमें सन्देहही क्या ? देखिये एक पोषाका कितना फल होता है सो २७०० क्रोड, ७७ क्रोड ७७ लाख हजार, ७ से ७७ पल्योपम झाजरा १ पोसा करनेसे इतना देवताका आयुष्य बांधता है यह तो व्यवहा

रिक पोसेका फल है और जो अंत करण की शुद्धीसे आणदजी काम देवजी प्रमुख श्रावकोंने पोषा कियाथा सो एकावतारी (एक भव कर मोक्ष गामी) हुये ऐसा जाण जो इस व्रतको यथातथ्य आराधेगा वो यहा अनेक सुख भोगवके स्वर्ग सुखका अनुभव ले मोक्ष प्राप्त करेगा

१२ 'अतिथि सविभाग वृत' अतिथि उनको कहते है कि जिन के आनेकी थीती नहीं कि * अमुक दिन अमुक वक्त आयेंगे, नित्य भी नहीं आवे, ऐसे तीसरे के तीसरे दिन भी नहीं आवे, जो अण चिंते अचानक आ जावे सो ही अतिथि—साधू ऐसे साधू के लिये, भोजन करने वैठते वक्त नित्य अवस्य ऐसा विचारे कि यह दोष रहित शुद्ध आहार मेरे सन्मूख आया है, इस वक्त जो कोइ मुनीराज पधार जाय तो इसमें से कुछ उनको वेहरा (दे) कर कृतार्थ होउं ऐसा विचार कर अपने चारही तर्फ देखे, कि कोइ सचित वस्तुका संग्घट्टा तो नहीं है जो होय तो आप उस से दूर रखे, और दरवाजे सन्मुख देखे कि महाराज पधारे क्या! इतनेमें कोइ साधू मुनीराज दृष्टी आ जाय तो आप उस भोजनकी यत्ना करे, कि उसम कोइ जीव न पड सके, ऐसी यत्ना कर तुत मुनी के सन्मुख आय, और अर्ज करे कि हे पूज्य? पावन करो इत्यादि आग्रह पूर्वक विनती करे जो महा राज अपने घरमें पधारे तो वहुत हर्ष पूर्वक घरमें भोजन शालामें आ कर उन 'समण' जिनने समाये (खपाये) है क्रोधादि रिपूको—तपवत निर्ग्रंथे—निग्रथ द्रव्ये परिग्रह रहित, भावे कर्म गाठ से न वंधाय, एसे को 'फासुक' फ्रासुक-अचित, 'एसाणि जेण' एषणिक-निर्दोष-सूजती १ 'असन' अन्न की जात रांधी, सेकी, तली, भूजी, इत्यादि सर्व, २

---

* श्लोक—तिथि पर्वोत्सवा' सर्वे, त्यक्तापे महात्मना;
अतिथि तवि आनिथा, श्वेपमभ्यागत विदुः ॥ १ ॥

अर्थ—जिन महात्माने तिथी पर्व उत्सव आदि सर्वका त्याग किया है अर्थात्—अमूक स्थिती या पर्व के दिन ही अमुक के घरसे भिक्षा लेना ऐसा जो नियम बाध कर नहीं आते हैं; उनको अतिथी कहना और बाकी के भिक्षूको अभ्यागत कहे जाते हैं

पाणं '—अचित पाणी,—धोवण, उष्ण, छाछ, सान्का रस, इत्यादि
र्वे, ३ ' खाइम '—खादिम,—सूखडी, पकान, मेवा, मिठाइ, प्रमुख,
' साइम '—स्वादिम लवंग, सुपारी, चूरण, खटाइ, प्रमुख, ५ 'वत्थं'
वस्त्र, सूतके, सणके, रेशमके, इत्यादि, ६ ' पडिगह '—पडगा—पा-
, लकडके, तूंबेके, मिट्टीके, इत्यादि, ७ ' कंबल '—उनके वस्त्र, क-
ल, बनात, प्रमूख, ८ ' पायपूछण '—बिछानका जाडा वस्त्र, यह ८
स्तु मुनीको आवगी दी जाती है, अर्थात् देकर पीछी ग्रहण नहीं क
जाय ९ ' पीढ '—छोटे पाट, बाजोट प्रमुख १०' फलग '—बडे पाठ
यनके लिये, ११ ' सेज्जा '—मकान सज्झाय करने, वखाण वाचने, या
हनेके लिये १२ ' संथारह '—बिछानेके लिये गेहूंका, शालका, को-
वका, इत्यादि पराल, १३ ' ओसह '—ओषध सूंठ कालालूण, या
लेंड्र मेका, तथा सेखणेको गरम किया सो लूण, काली मिरच, वगैरा
स्कर वस्तु १४ ' भेषज '—चूरण, गोली, सत पाकादिक तेल इत्यादि
४ प्रकार वस्तुमें से जो हाजर होवे सो सर्व आमतरे, गडबड न करे,
जो निर्दोष—सूजता लेनेवाले होवे उनको झूट बोलकर असूजता—
दोष न देवे जो शुद्ध लेनेवालेको अशुद्ध देवे तो अधूरा आयुष्य
ावे, अर्थात् दूसरे जन्ममें बालपणेमें या जुवानपणेमें, मृत्यू पावे इस
ठये जैसा होय वैसा कहदे इतने उप्रात कोइ जो कहे कि हे आयूष्य
त गृहस्य ! यह हमारेको नहीं कल्पे, तब गृहस्थ अपने अंतराय कर्म
ी प्रबलता जाने, पश्चाताप करे, और उसविन किसी प्रकारके त्याग
र देवे और जैसा है वैसा कह उप्रात ही कोइ रस लपट साधू ग्रह-
करलेवे तो गृहस्थको कुछ दोष नहीं क्यों कि गृहस्थके अभंग
ार है जितनी वस्तू मुनीको खपे सो उल्ट प्रणाम स वेहरावे जित
ा पात्रमें पडे उतना ही ससार की लायमें से बचा समजे दान ले
र साधुजी जावे तब, आप सात आठ पग पहोंचानेका जावे फिर
दिना कर कहे कि—हे पूज्य ! आज अच्छा लाभ दिया ऐसे ही कृ
ा वारवार कीजिये जो मुनीराज ग्राममें न होवे तो ऐसी चिंतवणा

करे कि–धन्य है वो ग्राम नगर की जहा मुनीराज विराजते हैं,
धन्य है वो श्रावक श्राविकाको जो चौदे प्रकारका दान देके
लेते हैं, मैं निर्भागी दान दिये विन आहार करता हूं इतना वि
दरवाजे के तर्फ देखे, * क्यों कि साधूका कुछ भरोसा नहीं, आं
ही अप्रतिबंध विहार करते पधार जाय तो किसे मालुम ? यह
बारमे वृतवाले श्रावक की रीति कही

इस व्रतका लाभ लेने के लिये पाच अतिचारका स्वरुप जान क

१ 'सचित निखेवणिया' दान देनेकी वस्तु सचितपर रखे,
र्थात् कितनेक भारी कर्मी जीव की ऐसी इच्छा होय कि—यह
मेरे या मेरे कुटुबके निमित निपजाइ है, जो साधूजी आ गये तो
से ना तो नहीं कही जायगी, इस लिये ऐसी रखू की वो ले न उ
इत्यादि प्रणामसे अचित साधू के लेने जैसी वस्तुको सचित्तपे रख

२ 'सचित पेहणिया'–पूर्वोक्त बुद्धीसे सचित वस्तुसे आ

* गाथा—पढम जइन साउन । अप्पाणं पण मिउण पारेइ ॥
असइ असुविहि याण । भूजइ अकर दिसालोअे ॥ १ ॥
साहून कप्पणिज्ज । जनवि दिन्न काहि किंपितहे ॥
धीरा जहुत कारी । सुसावगा त न भुजति ॥ २ ॥
वसही सयणा सण । भत्त पाण भेसज्ज वथ पत्ताइ ॥
जइ विन पज्जात धणो । थोवाउ विअ थोवय देइ ॥३॥ उपदेशम

अर्थ–सु श्रावक पहिले साधूको यथा विधिसे आहार आदिक दे
यथा विधि से पारना करते हैं जो कभी साधू का जोग न होय
दिशावलोकन कर परना करत है ॥ १ ॥ साधू को कल्प ऐसा जा
हार होवे और साधू का जोग होवे तो उनको वहराये विन सु श्रा
भोगवते नहीं हैं ॥ २ ॥ स्थान, सेजा, अन्न पाणी, औषध, भोज
वस्त्र पात्र आदिक जो अपने पास होए उसमें कुछ भी हिस्सा स
का जरुर ही देना द्रव्य विशेष न हो तो भी थोडे मे से थोडा
यथा शक्ती सु श्रावक वृतेही रखते हैं ॥ ३ ॥

। (यह दोनो अतिचार टालनेके लिये दानेश्वरी श्रावकको जरु
ान रखके जो जो वस्तु साधूके देने योग्य है उसे सचित पदार्थ के
स रखे नहीं यह वरती लती वक्त उपयोग रखे)

३ 'कालाइ क्कमे'—काल अतिक्रमे पीछे भावना भावे, अर्थात्,
ितनेक अभिमानी श्रावक दान देने की वक्त कमाड लगा रख
या असुजता रहे, और वक्त टले पीछे स्थानकम आकर सर्व लोकोंके
मक्ष कहे कि, यों क्या महाराज! गरीब श्रावकपर कृपा कमी दिख
। है? इतने दिन पधारका हुय कभी घर ही पावन नहीं किया, क-
। तो कृपा करो! तथा कितनेक तो कहे की महाराज तो वड २ के
र पधारते हे गरीबके यहा माजी रोटी लेने क्यों आवे? इत्यादि
निक वातें सुन लाक जाने कि वडा भाविक श्रावक है यों ठगाइ
रे तो अतिचार लग

४ 'परोवयसे' १ वस्तू तो घरमें है परतु नहीं देनेके भावसे कहे
के महाराज यह वस्तू तो मेरी नहीं है, में कैसे देवू? २ आप तो सुजता
; परंतु अभिमानमे दूसरेको कहे, अरे महाराज आये है, इनको कुछ
; दो *

५ 'मछीयाए'—१ ऐसा विचारे कि—साधू तो पीछे पड है
जो न देवूंगा तो लोकमें अपयश होगा एसा जान देवे, २ सरस २
वस्तू छोड, निरस दवे ३ अभिमान करे कि—मेरे जैसा दूसरा कोइ
दातार नहीं है तब ही फिर २ महाराज मेरे यहा आते हैं ४ साधूके
मलीन वस्त्र और गात्र देख दूगच्छा करे ५ यह तो मेरी सम्प्रदाय—
गच्छ के साधू नहीं है, इनको क्या देनू? इत्यादि विचार करे तो पा
चमा अतिचार लग

यह पात्र अतिचार तथा और भी इन जैसे अतिचारका स्वरुप
जान अनत लाभार्थी पुरुष सर्व दोषको तजके लाभके अवसर लाभ लेते हैं

* जिनके हाथसे दान दिया जाता है उनको ही दानका फल होता
है दान देने कि वस्तू जिसकी होती है उसे दलाली मिलती है

सूत्र–तहरूव समणं वा, महण्ण वा, सजय, विरय, पडिहय,
पच्चक्खाय, पाव कम्मो, हिलिता, निन्दिता, खिंसिता,
गिरहिता, अवमानिता, अमणुन्नेण अपीइ कारगाणं,
असण, पाण, खाइनेण, साइमेण, तेणं पडिलाभिता
असुह दीहाओ अत्ताए कम्मं पकरेति

अवस्यक सूत्र

अर्थात्–तथा रूप (जैन लिंग धारी) साधू अथवा, श्राव
सयमवंत, व्रतवंत, पाप कर्मके त्याग किये है जिनोंने, ऐ सो की नि
करे चिडावे, अप (हलके) वचन वोले, अपमान–अशातना
और उनको शरीरमें व्याधी–रोग उत्पन्न होवे ऐसा आहार, पाणी
खान, मुखवास, प्रतीलाभे (देवे) ऐसा पापिष्ट प्राणी इन पाप क
करके आगमिक कालमें दु ख २ से जन्म पूरा होवे ऐसे स्थान लम्ब
वहुत आयुष्य वाला होवे

इस विश्वमें कितनेक ऐसे भारी कर्मी जीव हैं कि सुपात्र दा
का जोग मिलते ही लोभ द्वेष पक्षपात के वश होकर लाभ गमा दे
हैं, और दूसरेको देनेकी अंतराय देते हैं कि इनको दान न देना चाहि

ऐसे ही कितनक साधु पक्षपात से या द्वेष बुद्धी से अपनी
प्रदाय और गच्छ छोड कर दूसरे साधुको दान देन की ना कहते
सोगन कराते है, यह भी जवर अतराय कर्म वाधते हैं. और भा
लोक भी इस उपदेशको धारण करके दानांतराय उपार्जन कर लेते

वावा फकीर ब्राह्मणादिक गृहस्थ से भी अन्यपक्ष के साधुक
खराव जानते हैं, यह वडी मोह दशा है

कितनेक राग भाव से दान देते हैं कि यह मेरे ससार पक्ष
सगे हैं, इस लिये इनको जरूर ही देना चाहिये, ऐसे ही कितनेक द्वे
करके यों जानते हैं कि—यह विचारे अपन साधू इनको अपन न दे
तो दूसरा कोन देवेगा ? इन दोनों बुद्धी से दान देना सो भी दो
का कारण है

सर्व व्रतोंमें यह वारमा व्रत आति श्रेष्ट है क्यों कि इग्यारे व्रत

। तिर्यंच भी ❀ पाल शक्ते है और वारमा व्रत तो फक्त आर्य क्षेत्र
सी मनुष्य महा पुन्य जोग २ मिले निपजा सके है इस व्रतके।
ाराधनेवाले यहा यश सपदाका अखड सुख भोगते है, तिर्थंकर पद
राजते हैं, जुगलीयापणा प्राप्त करते है, और देव लोकके सुख भाग
र अनुक्रमें मोक्ष पाते है

यह पांच अणुवृत, तीन गुणवृत, चार शिक्षावृत, सर्व बारा वृत पूर्ण
ये इसमें से कोइ की विशेष शक्ती न होए तो, एकही व्रत धारण
रे, और विशेष शक्तीवंत होय तो, यथा शक्ति १२ वृत धारण करे

गाथा—कय वय कम्मो तहसील वच गुण वंच उज्जुव वहारि
गुरु सु सुमो पवयण, कुसलो सल्लु भावउ सधो ॥ १ ॥

अर्थात्—१ किये है वृत आविक कर्म जिनोने, २ सील आदि
ण भी जिनके सत्य है, ३ सत्य न्याय गुनोके ही पक्षी है, ४ निष्क
टि सरल पनेसे व्यवहार का साधना करते है, ५ गूरु महाराज की तथा
वेधि सदा सेवा भक्ति करते है, ६ प्रवचन—जिनशास्त्रों का अभ्यास
र कुशल है इत्यादि गुण युक्त होवे उन्हे भाव श्रावक निश्चय से
ानना

इग्यारे श्रावककी प्रतिमा

ऐसे वारे वृत पाल्ते जो कभी जास्ती वैराग्य प्राप्त हो जाय तो

❀ असंख्यातमा भरुण घर मिपमें सख्यात जोजनका लंबा चाडा मानसरोवर (तलाव) है जिसमें यहां वृत भग करनेवाले श्रावक मरकर मच्छ होते है यहां जोतषी देवता क्रीडा करने आते है उनको देख जाती स्मरण ज्ञान प्राप्त होता है जिससे वो यहां पीछे ११ व्रत धारण करते है संवर समायिक पापा प्रतिक्रमण करते है यहां से मरकर जोतषी देवता होते है फिर मनुष्य देवादिक के जन्म कर, पीछे भव में मोक्ष प्राप्त करते है

११ पडिमा (प्रतिमा) अंगीकार करे तब पहिले अपने घरमें बडा पुत्र बडा भाइ जो कोइ योग्य होय उसे घरका भार सब सुपर्त करके धर्मोपकरण, बेठके, पूंजणी, पुस्तक, धर्मशास्त्र, मातरीया, बिछाणे वगैरे लेकर पौषधशालामें तथा स्थानकमें आकर धर्म क्रिया करे

१ ' दर्शण प्रतिमा '—एक महीना तक सम्यकत्व निर्मल पाले, शका कक्षादिक दोष किंचित न लगावे संसारीको मुजरा सलाम न करे और एकांतर उपवास करे २ ' वृतप्रतिमा '—दो महीने तक वृत निर्मल पाले, अतिचार लगावे नहीं, सदा शुभ उपयोग रख और बेले २ पारणे करे ३ ' सामायिक प्रतिमा ' तीन महीने तक नित्य त्रिकाल सामायिक ३२ दोष रहित जरूर करे, और तेले २ पारणा करे ४ ' पौषध प्रतिमा ' चार महीने तक महीने के छे पोसे १८ दोष रहित जरूर करे और चोले २ पारणा करे ५ ' नियम पडिमा ' पांच महीने तक १ स्नान करे नहीं २ हजामत करावे नहीं ३ पगरखी पहेरे नहीं ४ धोतीकी १ लाग खूली रख ५ दिनका ब्रम्हचर्य पाल, और पचोले २ पारणा कर ६ ' ब्रम्हचर्य पडिमा ' छे महीने तक नव वाड विशूद्ध ब्रम्हचर्य पाले. और छे उपवास के पारणे करे ७ ' सचित परिहार प्रतिमा ' सात महीने तक सर्व सचित (सजीव) वस्तुका त्यागन करे, और सात २ उपवास के पारणे करे ८ ' अणारभ पडिमा ' आठ महिने तक आपके हाथसे छे ही काय जीवोंका वध करे नहीं और आठ २ उपवासके पारणेकर ९ ' पेसारभा प्रतिमा '—नव महीने तक दूसरे के पास आरभ करावे नहीं और नव २ उपवासेक पारणे कर १० ' उविठ्ठ रुत प्रतिमा '—पडिमा धारी श्रावकके लिये छ कायका आरभ करके कोइ वस्तु निपजाइ होय तो दश महीने तक आप भोगवे नहीं, दश २ उपवास पारणा करे ११ ' समण भूय पडिमा ' ई

यारे महीने तक साधू जेसे लिंग (भेप) धारण करे फक्त इतना फरक दाढी मूछ और * सिरका लोच करे. फक्त शिखा (चोटी) रखे, रजोहरण (ओघे) की दडीपर कपडा नहीं चडावे धातु (पीतल तांबे) के पात्र रखे स्वजातीमें भिक्षा करे ४२ दोष टाल शुद्ध आहार ग्रहण करे कोइ कहे पधारो महाराज, तब कहे मैं साधू नहीं हु श्रावक की इग्यारेमी प्रतिमा वह रहा हुं, फिर उपासरेमें आकर वो लाया हुवा आहार मूर्छा रहित भोगवे और इग्यारे २ उपवास पारणा करे इन ११ प्रतिमा में जो अलग २ क्रिया कही है सो पिछे पडिमा की क्रिया यूक्त आगे की प्रतिमामे प्रवर्ते किसी प्रकार खामी न डाले इन ११ प्रतिमा वहणेमें साढी पाच वर्ष लगते है

यह इग्यारे प्रतिमा पूर्ण हुये पीठे, कितनेक तो पीठे घरको चले जावे कोइको वैराग्य आवे तो दिक्षा लेवे और समर्थाइ घटी देख आयुष्य नजीक आया देख कोइ सथारा करके आत्म कार्यसिद्धी करे एसे जघन्य सम्यकत्व, मध्यम बारा व्रत, उत्कृष्ट इग्यारे पडिमा धारी यों तीन तरहके श्रावक होते हैं

आगारी सामाइयंगाइ सढ्ढी काएण फासए ।
पोसह दुहउ पक्ख एग राय न हावए ॥
एवं सिक्खा समावन्ने, गिहीवासे विसुवए ।
मुच्चइ छवि पवाउ, गच्छे जरव्वस लोगय ॥ २४ ॥

श्री उत्तराध्यन सूत्रके छठे अध्यायमें फरमाया है कि जिसकी दिक्षा ग्रहण करणे कि शक्ती न होय वो गृहस्थ वासमें रहकर शुद्ध सम्यकत्व युक्त सामायिकादिक वृत शुद्ध श्रद्धा करके श्रधे, और काया करके फरस, अर्थात् करेतथा दोनो पक्षकी पोषणा करे अर्थात् ससारमें हैं इस लिये संसार पक्ष की भी पोषणा करणी पडती है सो लुखवृतिसे जल कमल वत अलिप्त

* शक्ति नहीं होय तो खुर मुंडन करावे

रहकर करे और सर्वमें सार एक धर्म पदार्थको जाना है सो वक्तो वक्त हुल्लास प्रणामसे धर्म पक्षको भी पोषे परन्तु धर्म क्रियामें एक रात्री की भी हाणी नहीं करे अर्थात ससारके कोइ कार्यमें हरकत हो जाय उस की फिकर नहीं परन्तु धर्म कार्यमें तो किंचित ही हरकत नहीं करे ऐसी रीति जो चार शिक्षा व्रत युक्त तथा बारह विशूद्ध व्रत युक्त, गृहस्थाश्रममें रह कर धर्म पालेगा वो यह मल मूत्र से भरा हुवा उदारीक शरीरका त्यागन कर (छोडकर) अत्यूतम देव गतीको प्राप्त करेगा, और थोडेही भव कर मोक्ष के अनत सुख पावेगा

इति परमपूज्य श्री कहानजी ऋषिजी महाराज के सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनी श्री अमोलख ऋषिजी महाराज विरचित् श्री " जैन तत्वप्रकाश " ग्रथका द्वितीय खडका " सागारी धर्म " नामक पचम प्रकरण
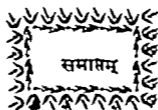
प्रकरण ६.

आंतिक शुद्धि,

मृत्यु मार्गे प्रवर्तस्य, वीतरागो ददातु मे।
समाधि बोध पाथेय, यावन्मुक्तिपुरी पुर ॥ १ ॥

मृत्यू महोत्सव

हो श्री वितराग भगवान ! मे मृत्यु मार्गमें प्रवेशकरता हु, इसलिये आपसे प्रार्थना करता हु कि मेरेको चितकी समाधा और ज्ञानादि श्रीरत्न के लाभ रुप बोध (साहाय) देकर मुक्ति पुरीमें पहुचाइये

जेसे कोइ प्रदेशमें रहता हुवा पिता अपने पुत्रको घर पहुचाते वक्तमें साथ भाता (रस्तेमें खानेके लिये सूकडी) देकर उसे रस्तसे वाकेफ करता हे, कि इस रस्तेसे सुखे २ घरको पहुचे जावेगा, वो उस भाताके साह्यसे अपने पिताके बताये हुये रस्तसे निज ग्रामको प्राप्त करता हे तेसे ही हे कृपाल वितराग पिता मुजे समाधी बोध रुप भाता दीजिये और मार्ग बताइये कि जिस भाते की साहाय्यस आपके हुकम मुजब मोक्षमें पहुच जावु

'सतरहा प्रकार के मरण'

१ 'अविचिक मरण' सो समय २ आयू कम होता हे सो

२ ' तद्भव मरण ' वृतमान पर्यायका अभाव होवे सो

३ ' अवधी मरण ' आयुष्य पूर्ण हूवे मरण निपजे सो

४ ' आद्यत मरण ' सर्वसे और देश से आयु छुटे सो, तथा दोनो भवमें एक सा मरण निपजे सो

५ ' बाल मरण ' ज्ञान दर्शन चारित्र रहित अज्ञान दिशामें मरे सो, तथा विष (जहर) भक्षण कर, शास्त्रेस अगोपांग का छेदनकर, अग्निमें जल, पाणी में डूब, पहाड से पड, इत्यादि से आत्म घात करमे सो बाल मरण

६ ' पण्डित मरण ' ज्ञान दर्शन चारित्र की आराधना सहित समाधी भावसे देह त्यागे सो

७ ' आसन मरण ' सयम से भ्रष्ट होकर मरे सो

८ ' बाल पण्डित मरण श्रावक समाधी भावसे मरे सो

९ ' स शल्य मरण ' माया निदान, मिथ्या दर्शण इन तीन शल्य में के किसी शल्य को हृदय में रख मरे सो

१० पलाय मरण ' प्रमाद के वश पड मरे, तथा प्रणामों में अस्यंत सकल्प विकल्प होने से प्राण मुक्त होवे सो

११ ' वशार्त मरण ' इद्रियों के, कषाय के, वेदनाके, हाँसी के इत्यादि के वश हो मरण निपजे सो

१२ ' विप्रण मरण सयम शील आदि व्रतोंको निर्वाह नहीं होने से आतम घात कर मरण करे सो,

१३ ' गृद्ध पृष्ट मरण ' संग्राम में शूरत्व धारण कर मरे सो

१४ ' भक्त प्रत्याख्यान मरण ' यथा विधी सथारा कर मरे सो

१५ ' इगित मरण ' सथारा कर दूसरे पास चाकरी नहीं करावे सो

१६ ' पादोपगमन मरण ' आहार और शरीर दोनोका त्याग करे सो

१७ 'केवली मरण ' केवल ज्ञानी भगवंत का देह उत्सर्ग होवे सो

यह १७ प्रकारके मरण अष्ठ पाहुड सूत्रके ५ में भाव पाहुड में कहे हैं

और भी इस जक्तमें मरण दो प्रकारसे होते हैं, ऐसा श्री उत्तराध्ययनजीमें कहा है

बालाण अकामंतु मरण असइ भवे ।
पडियाणं सकामंतु, उक्कोसेणं सइ भवे ॥
अध्ययन ५

बाल अज्ञानी जीव अकाम मरणसे मरते हैं उनको इस विश्व में अनत जन्म मरण करने पडते हैं और पंडित पुरुष सकाम मरणसे मरते हैं वो एक ही वक्त मृत्यूसे जन्म मर्ण मिटाके अजरामर पद प्राप्त करते हैं

अब यहां सकाम (पंडित) मरणका स्वरुप कहते हैं, कि जिस के जानने से जिसका प्रतिपक्षी अकाम मरण सहज ही समज जावोगे

सम्यक् ज्ञानी पुरुषको सहज ही समाधी–सकाम मरण मरने की अभिलाषा रहती है वो निरतर ऐसी भावना भाते हैं कि हे प्रभो ! वो दिन कब होवे की मैं सर्व प्रपंच से निवर्त समाधी मरण प्राप्त करु ! मरण की इच्छा करनी इसको कितनक ग्रन्थ खराब गिनते हैं, परंतु यह तो सत्य समजो कि जो जन्मा है सो तो एकदिन अवस्य ही मरेगा जैसे कोइ सूरवीर क्षत्रीय राजाने सुना कि बडा जब्बर शत्रु चढाइ करके आया है यों सुन वो वीरक्षत्रीय उस शत्रुका पराजय करनेको सब प्रकार के सुखका त्यागन कर, चतुरगिणी शैन्यको ले प्रबल शत्रु के कटकको अपने पराक्रम से धुजाता हुवा पराजय कर, अपना राज्य निर्विघ्न करे तैसे ही समाधी मरण की इच्छा करनेवाला महात्मा, कालरुप शत्रुको नजीक आया जान, उसकी शैन्यका पराजय करनेको, ज्ञानादि चतुरंगिणी शैन्यसे प्रवर्या, अपने शात दांत तेजसे कालका पराजय कर, मोक्षस्थान रुप अपना राज्य कायम करे इस तरह काल शत्रुका पराजय होता है, उसके ३ नाम है —१ 'सथारा' –बिछोनेको सथारा कहते हैं अर्थात् छेला (फिर नहीं करना पडे ऐसा) बिछोने पर विराजे अंतका बिछोना कर सो संथारा २ 'अ-

२ 'तद्भव मरण' वृतमान पर्यायका अभाव होवे सो

३ 'अवधी मरण' आयुष्य पूर्ण हूवे मरण निपजे सो

४ 'आद्यत मरण' सर्वसे और देश से आयु छुटे सो, तथ दोनो भवमें एक सा मरण निपजे सो

५ 'वाल मरण' ज्ञान दर्शन चारित्र रहित अज्ञान दिशा मरे सो, तथा विप (जहर) भक्षण कर, शास्त्रेस अगोपांग का छेदनक अग्निमें जल, पाणी में डूब, पहाड से पड, इत्यादि से आत्म घात करम सो वाल मरण

६ 'पण्डित मरण' ज्ञान दर्शन चारित्र की आराधना सहि समाधी भावसे देह त्यागे सो

७ 'आसन मरण' सयम से भ्रष्ट होकर मरे सो

८ 'वाल पण्डित मरण श्रावक समाधी भावसे मरे सो

९ 'स शल्य मरण' माया निदान, मिथ्या दशण इन ती शल्य में के किसी शल्य को हृदय में रख मरे सो

१० पलाय मरण' प्रमाद के वश पड मरे, तथा प्रणामों में अ स्यंत सकल्प विकल्प होने से प्राण मुक्त होवे सो

११ 'वशार्त मरण' इन्द्रियों के, कपाय के, वेदनाके, हाँसी के इ त्यादि के वश हो मरण निपजे सो

१२ 'विप्रण मरण सयम शील आदि व्रतोंको निर्वाह नहीं होने से आत्म घात कर मरण करे सो,

१३ 'गृद्ध पृष्ट मरण' सग्राम में शूरत्व धारण कर मरे सो

१४ 'भक्त प्रत्यास्यान मरण' यथा विधी सथारा कर मरे सो

१५ 'इगित मरण' सथारा कर दूसरे पास चाकरी नहीं कराव सो

१६ 'पावोपगमन मरण' आहार और शरीर दोनोका त्याग करे सो

१७ 'केवली मरण' केवल ज्ञानी भगवंत का देह उत्सर्ग होवे सो

यह १७ प्रकारके मरण अष्ठ पाहुड सुत्रके ५ में भाव पाहुड में कहे है

स्वल्प (थोडे) कालका संथारा सो, नवकारसी आदि तप करना उसे कहा जाता है तथा साधूजी और श्रावकजी रात्रीको सयन करते (सोती) वक्तमें, अवस्यह आदि पूर्वोक्त विधि से चार लोगस्सका काउसग कर प्रगट लोगस कहे, हाथ जोड कहे कि ' भसंति, दसंति सारति, मरंती किं वि उवसग्गेण मम आउ अंत भवति तओ सरीर सम्बंध, मोह, ममत्व, चउविहं पि आहारं वोसिरे, सुहसमाहीएणं, निंदा वइकीति तस्स आगार, आर्थत् जो मेरे इस शरीको कोइ सर्पादिक आयुष्य भक्षण करे, अमी प्रयोग से जल जाय, कोइ शस्त्रादिक से मर जाय, या पूर्ण हो जाय इत्यादि कोइ भी उपसर्गसे मेरेआयुष्यका अत हो जाय तो मेरे शरीरसे, और कुटुम्ब संपतसि मोह ममत्वको वोसिराता हू-छोडता हूं. और सूख समाधे निद्रासे मुक्त होवू-जागृत होवू तो मेरेको सर्व आगार है, मे छुट्टा हु इतना कहके नमस्कार (नवकार) मन्त्रका स्मरण कर सोवे इसे ' सागारी सथारा ' कहते है यह सागारी सथारा वाला सूखे समाधे जागृत हो जाय तो पुर्वोक्त रीतिसे चार लोगस्सका काउसग्ग करे फिर कहे ' पाडिक्कमामि '-निद्राके पापसे निवर्त हु ' पगामीसज्जाय ' हदसे ज्यादा बिछाना किया होय ' निगाम सिज्जाय ' औछा बिछाना किया होय ' सथारा उवटनाये ' पूजे विगर पग हाथा दि संकोच (भेले) किये होय ' परियट्टणाये ' लम्बे किये होय ' अउट्टणाये पसारणाए ' वार २ लम्बे भेल किये (संकोचे पसरे) होए ' छप्पइ संघट्टणाये ' ज्यू खटमलादिक जीवको दवाये होए ' कुइण कक्कराइए ' उघाडे मुखसे बोला होवे 'छीए' छीका होवू ' जभाइए ' उबासी ली होय ' आमोसे ससर खामोस ' किसी भी सचित वस्तु की विराधना करी होए ' आउल माउलाय ' आकूल व्याकुल हुवा घवरा या होवू ' सुवण वतियाए ' स्वप्नमें ' इत्थी विपरियासियाए ' स्त्रीया

दिक्से विषय सेया ' देठी विपरिया सियाए ' द्रष्टी (बुद्धी) सा
होए ' मण विपरिया सियाए ' मन खोटा प्रवर्ता होय ' पाण भे
विपरिया सियाए ' आहार पाणी भोगवे (खाये) होए ' जोमे रा
अइयार कउ ' जो रात्रीमें (निद्रामें) अतीचार—पाप दोष लगा
' तो तस्स मिच्छामी दुक्कड ' वो सब पाप दूर होवो * इत्ना
फिर कहना कि ' सागारी अणसणस्स पच्चखाण ' सागारी (आ
यूक्त) सथारा किया था उसके पच्चखाण (सोगन) ' समका
जिनाज्ञा मुजब या उपयोग युक्त, ' फासीय'—मेरी कायासे फरस
लियं ' पाले ' तिरिय ' किनारे पहोचाये ' कितिय ' अच्छे
' सोहिय ' —शुद्ध निभाय, ' अराहीय ' आराधे (इतनेपर भी
' अणाए —जिनाज्ञाका ' अणपालिता '—यथा तथ्य पालन ' न भ
न हुवा होय तो ' तस्स मिच्छामी दुकड ' § पाप दूरहोवो

२ ' भत्त पच्चखाण ' दूसरे साधुको साधूवों की साहाय स
श्रावकको श्रावका की साहायसे किया सो इसमें कोइ तीन अ
क और कोइ चार अहार के त्याग करते है जिसकी रीती

श्लोक—उपसर्ग दुर्भिक्ष जर सिरू जायच नि प्राति करे ।
धमाय तनु विमोचन माहु सल्लेखना मार्या

अर्थात्—जिसको मिटाने का प्रतीकार नहीं बनी आय,
उपसर्ग आये दुर्भिक्ष पड, जरा (ब्रद्ध पण) और रोग होते जो
की रक्षा के अर्थ शरीरका त्याग करे, उसे गण धरोने सलेपना फरमा

* यह पाठ रात्री सथर पाठका और पाप पालका निवास नि
हुए सदा कहना चाहिये

§ यह पाठ—हरकोइ पचख्खाण—सामायिक पोसा या नोकारसी
दिक सबका पारती वक्त पाला जाता है

' सलेषणा '

' अपश्चिमा '–जो समाधी मरण करने को तैयार हुये है, उन के पीछे दुनियामें कोइ भी काम वाकी नहीं रहा अर्थात् जो सर्व काम से निवर्त, सर्व वाछा रहित हुये, सो ' मरणांति ' मरण के अं तमें अर्थात् किसी भी लक्षण से अपने आयुष्यका अंत आया मालूम हो जाय तब ' सलेहणा ' — सलेषणा अपने आत्मामें जो २ सल्य होय उसकी गवेषणा करे अर्थात इस जन्ममें आये पीछे तथा सम्य-क्त्व–वृत धारण करे पीछे जो कोइ प्रकारका पाप लगा होए–वृत का भंग हूया होए, उसको प्रायछित तपमें कहे, मुजब गुणवंत साधूक आगे साधूका जोग न होए तो, वैसे श्रावक आगे, श्रावकका जोग नहीं होय तो साध्वी (आर्याजी) के आगे, जो आर्याजीका जोग नहीं होए तो, श्राविका के आगे, और कोइका भी जोग न होए तो जंग लमें जहा कोइ नहीं होए ऐसे एकांत स्थलमें तथा शुभ स्थानमें पुर्व और उतर सन्मुख खडा हो, श्री मंदिर स्वामीको वंदना कर जोरसे कहे कि हे प्रभो ! मेरे से जो जो अन्याय हुवे है, इसके लिये मेरी धारणा प्रमाणे अमुक २ प्रायछित ग्रहण करता हुं ऐसे कह शल्येसे रहित होवे ऐसे आलोयणा '—आलोचना विचारना करके सर्व पाप से अपनी आत्माको निर्मल करे फिर कर्म कलंक दुर होनेको ' झूसना ' करे अर्थात् जैसे काले कोयलेको अग्नीमें झोंस श्वेत राख करते है, तैसे ये आत्मा कर्म कलंक करके काली हो रही है उसे उज्व वल—पवित्र करनेको सलेषणा—समाधी मरण करते है

[यह समाधी मरण (संथारा) ग्रहण करने की विधी] प्रथम तो स्थान–' पोषधशाला ' पोषध करनेका मकान अर्थात् जहा किसी

प्रकारकी खाने पाने की भोग विलास की वस्तु न होए, तथा अन्यस
सारीयों के शब्द सुनाते न होय, तथा त्रस स्थावर जतु की घात हने
जैसी न होए, ऐसे निदोंषी मकानमें, तथा निर्दोष जगल पहाड़ आ
दिक जो चित समाधीको योग्य जगा लगे उसे ' पूर्जीने ' रजू हर
गोछादि से यत्ना से आस्ते २ पूज, किसी पाटीयादिकमें यत्नासे क
चरा ग्रहण कर एकात जहा बहुत मनुष्यका अगमन न होए ऐसे ठि
काणे छीदा २ (चोडा २) पठोवे (डाले) फिर उच्चार–वडी नीत
[दिशा] के लिये, पास—लघुनीत (पेशाब) वण–वमण (उल्टी)
हो तो उसके लिये, और भी सेंकार—नाकका मेल आदिक जो कुछ
पठोंवणे जैसी वस्तु होय उसके लिये उसको न्हाखणे के लिये ' भूमीका
जायगा पडिलेही आंखोंसे देखे कि जहा—हरी अकूंडे, दाणे, कीडी
प्रमुख के नगरे न होय क्यों कि सथरा किये पीछे जो मल मुत्र नि
वारनेका काम पड जाय तो वक्त पर तकलीफ न पडे अयत्ना न
होवे इसलिये पहिले देख रख, फिर पोषधशालामे आकर ' गमनाग
मनी पडिकम्मीने ' अर्थात यह प्रतिलेखणादि क्रिया करते, जाण अ
जानमें कोइ भी त्रस थावर जीवकी विराधना (हिंसा) हुइ होए तो
उस से निवर्तने, पूर्वोक्त विधी स अवस्यइ की पाटीका कायोत्सर्ग
करे. फिर दाभादिक संथारा सथरीने गेंहु, चांवल, कोद्रव, राल, तृण
प्रमुखका घास होए, उसमें दाने तथा लट प्रमूख जीव न होए, ऐसा
परालका सथरा [विछावणा.] संथरी (विछाव) साडे तीन हाथ लंबा
और सवा हाथ चोडा उसपर स्वच्छ–निर्मल श्वेत वस्त्र ढाककर, फिर
दर्भादिक सथारा दूहीने ' उस दर्भादिकके सथारे (विछावने) पर
यत्नासे बेठे, [सो किस तरह बेठे] ' पूर्व तथा उतर दिशा ' सूर्य उ
दय होय सो पूर्व दिशा, और उससे डावी तर्फ उतर दिशा, यह दोना

दिशामें से एक दिशा की तरफ मुख करके 'परियंकादिक आसन वेसीने' पालखी घालकर वैठे और जो वैठने की शक्ती न होय तो फिर मरजी प्रमाणे स्थिर आसन करे फिर 'कारेयल 'करतल दोनो हाथ की हथेलीयों 'सपगहीय' भेली (एकठी) करके, 'दशनह'— दोनो हाथके दश नख (अंगुली) भेलीकर 'सिरसा वत' मस्तकपर आवर्तन करे, जैसे अन्यमती उनके दवो की आरती उतारते—घूमा ते है, तैसे दोनो हाथ मस्तकपर जीमणी वाजुसे घुमता डावी वाजु तर्फ जोडे हुये हाथ लावे, ऐसे तीन वक्त घमाकर (फिराकर) फिर 'मत्थेण अजली कट्टु' मस्तकपर दोनो जोडे हुये हाथ स्थिर रखकर 'एव वयासी' यों बोले 'नमोथ्थु' नमस्कार यूद्ध स्तुती करता हूं [किनकी करता हू तो] 'अरिहताणं' अरिहंत की, 'भगवताणं' भगवंत की आप कैसे हो? 'आदीगराणं' —धर्मके आद्य कर्तो, 'तित्थयराणं' —तिथिके कर्ता 'सहस सूद्धाण'— स्वय मेव प्रतिबोध पाये 'पुरुसुत्तमाण उतम पूरुष 'पुरुष सिहाणं'—पुरुषसिंह, 'पूरुषवर पूडरियाण' - पूरुपोमें प्रधान पुंडरिक कमल जैसे 'पुरुष वर गध हत्थीण' पूरुष में प्रधान गंधहत्थी जैसे 'लोगूतमाणं' लोकमें उतम, 'लोग नाहाण' सर्व लोकके नाथ 'लोग हियाण' हित कर्ता 'लोग पइवाणं जगत दीपक, 'लोक पजोयगराण' तिलोक सुर्य, 'अभयदयाण' अभय दाता, 'चक्खुदयाण' ज्ञाने चक्षुदाता 'मग दयाणं मोक्ष मार्ग दाता, 'शरण दयाण'-शरण दाता, 'जीवदयाण'-जीवितव्य दाता 'बोही दयाण'-बोध दाता, 'धम्म दयाणं'-धर्मदाता, 'धम्म देसीआण'-धर्मके उपदेशक, 'धम्म नायगाणं —धर्म नायक, 'धम्म सारहीण'—धर्म सार्थवाही, धम्म वर चाउरत चक्क वटीणं'—धर्म चक्रवृत 'दिवो ताणं शरण गइ पइठा'-द्वीप समान आधार भूत, अपडी हय

प्रकारकी खाने पाने की भोग विलास की वस्तु न होए, तथा अन्य
सारीयों के शब्द सुनाते न होय, तथा त्रस स्थावर जतु की घात
जैसी न होए, ऐसे निर्दोसी मकानमें, तथा निर्दोष जगल पहाड
दिक जो चित समाधीको योग्य जगा लगे उसे ' पूजीने ' रजू
गोछादि से यत्ना से आस्ते २ पूज, किसी पाटीयादिकमें यत्नासे
चरा ग्रहण कर एकात जहा बहुत मनुष्यका अगमन न होए ऐसे
काणे छीदा २ (चोडा २) पठोवे (डाले) फिर उच्चार-वडी नी
[दिशा] के लिये, पास—लवूनीत (पेशाब) वण–त्रमण (उल्टी
हो तो उसके लिये, और भी सेंकार—नाकका मेल आदिक जो
पठोंवणे जैसी वस्तु होय उसके लिये उसको न्हाखणे के लिये ' भूमीक
जायगा पहिलेही आखोंसे देखे कि जहां—हरी अंकूरे, दाणे, की
प्रमुख के नगरे न होय क्यों कि सथरा किये पीछे जो मल मुत्र नि
वारनेका काम पड जाय तो वख्त पर तक्लीफ न पडे अयत्ना
होवे इसलिये पहिले देख रख, फिर पोषधशालामे आकर ' गमनाग
मनी पडिकम्मीने ' अर्थात यह प्रतिलेखणादि क्रिया करते, जाण अ
जानमें कोइ भी त्रस थावर जीवकी विराधना (हिंसा) हुइ होए तो
उस से निवर्तने, पूर्वोक्त विधीं स अवस्यइ की पाटीका कायोसर्ग
करे फिर दाभादिक संथारा सथरीने गेंहु, चांवल, कोद्रव, गल, तृ
प्रमुखका घास होए, उसमें दाने तथा लट प्रमुख जीव न होए, ऐसे
परालका सयरा [बिछावणा,] संथरी (बिछाव) साडे तीन हाथ लं
और सवा हाथ चोडा उसपर स्वच्छ–निर्मल श्वेत वस्त्र ढांककर, फि
दर्भादिक सथारा द्रोहीने ' उस दर्भादिकके सथारे (बिछावने) प
यत्नासे बैठे, [सो किस तरह बैठे] ' पूर्व तथा उतर दिशा ' सूर्य उ
दय होय सो पूर्व दिशा, और उससे डावी तर्फ उतर दिशा, यह दोनं

आत्माकी निंदा करे, 'निशल्य थइ'—तीन प्रकार के सल रहित
अर्थात् किसी प्रकार की गुप्त बात न रखे ऐसा निर्मल होकर
आवते काल के 'सव्व पाणाइ वायाओ पच्चखामी' सर्वथा प्र-
रे प्राणातिपात (जीव हिंसा) का पच्चखाण सोगन करे, हिंसा
ह 'सव्व मुसावायं पच्चखामी'—सर्वथा प्रकारे झूट बोलने के प-
खाण 'सव्व अदीन्नं दाणाओ पच्चखामी'—सर्वथा अदत्ता दान
पच्चखाण करे 'सव्व मेहूण पच्चखामी'—सर्वथा, मैथूनका पच्चखा
करे ऐसेही 'सर्व'—सर्वथा 'कोह'—क्रोध के, 'माणं'—मान
'माय'—कपट के, 'लोह'—लोभ के, 'राग'—प्रेम के, 'द्वेष'
द्वेष के, 'कलह'—क्लेश के. 'अभ्याख्यान'—खोटे आल देने के.
शून्य'—चुगली के, 'परपरवाद'—निंदा के, 'रत्यारत्य'—खु
नाराजी के. 'माया मोसो'—कपट युक्त झूट के, 'मिथ्या दंशण
ल्य के'—जिनेश्वर के मार्ग सिवाय अन्य मजहब की श्रद्धा प्रतीत
, 'एव अठार पाप स्थानक पच्चखाने'—यों १८ ही पाप के और जा
जगतमें 'अकरणीज्ज जोग'—अकर्तव्य करन जोग काम नहीं हैं,
से जगत निंद्य खोटे कर्म करने के 'पच्चखामि' पच्चखाण करे यहा
वोक्त पच्चखाण कहातक कहा है कि 'जावजीवाय' जाव जीव, ताव,
मार तक, किसी भी प्रकारका पाप नहीं करुगा 'तिविह तिविहेण'
तीन करण और तीन योगसे यह पच्चखाण होते है, सो तीन करण
ाम 'न करे मि' पूर्वोक्त कामम नहीं करुगा, 'न कारवेमी' दूसरक
ास नहीं करावूगा, और 'करतपि अन्नं न समणु जाणामि' ऐसा
ा काम जो दूसरा कोइ करता होगा, उसको मै अच्छा भी नहीं जा-
ुगा तीन जोग 'मणसा'—मनसे इच्छु नहीं, 'वायसा'—वचनसे
हूं नहीं, 'कायसा'—कायासे करु नहीं 'इम अठारे पाप पचखीने

चरनाण दंशण धराणं '—अप्रतिहत ज्ञान दर्शनके धारी, ' वियट छउ
ण ' निवर्ते है छद्मस्थ अवस्थासे, ' जिणाण जावयाण '—कर्मोरु
आप जीते, दूसरेको जिताते है, 'तिन्नाणं तारियाण '—आप तीरे, द
को तारे, ' बुद्धाण वोहियाणं '—आप बुज दूसरेको बुजावे, ' मुच
मोयगाणं '—आप छुटे, दूसरेको छुडावे ' सवन्नुण सव दरिसिणं'—
जाना देखे, ' शिव ' निरुपद्रवी, मयल '—अचल, ' मरुय '—आरोग
मणंत '—अनत मखय '—अक्षय, ' मव्वाबाह '—अबाधिक, ' मपुण
विती '—पुनरावृती रहित, ' सिद्धी गइ नाम धेय ठाणं '—सिद्ध स्था
सपताण '—पाये, ' नमो जिणाण '—नमस्कार ओ जिनेश्वर, जि
भयाण –जीते भयका

यह नमथ्थुणका पाठ सिद्ध भगवंतको कहा, ऐसे ही दूस
वक्त अरिहत भगवतके करे विशप इत्ना ' सिद्धि गइ नाम धेयं ठा
सपाविउ कामस्स '—सिद्ध गती के अभिलाषी, ऐसा कहे, और स
वैसा ' एम अरिहत सिद्धने वदणा नमस्कार करी ' यों अरिहत औ
सिद्धको विधी पूर्वक वंदना नमस्कार करके ' वर्तमान काल ' अ
है इसी वक्तमें जो विराजमान होवे ' पोता के धर्मगुरु धर्माचार्यजी
धर्मोदश क दाता धर्म मार्गमें लगानेवाले गुरु महाराजको ' वंदना
मस्कार करी ' गुण ग्राम और सविनय नमस्कार करके, फिर ' पूर्वे
व्रत आदया ' इस वक्त पहिली जा २ त्याग वृत पच्चखाण नियम
हण किये थे, उनमें ' दाप अतिचार लाग्या होय ' जा कोइ उस
जान अजान स्ववस परवस माहवस दोष लगा हाय सब्व ' आलाइ
प्रगट कह देवे कि मैने ऐसे कर्म किये हैं, ' पडिकमी '—फिर आ
पेम कम नहीं करे, तथा किये हुयेका पश्चाताप करे, ' निंदी '—निं
करे कि मैंने खोटे कर्म किये, ' ग्रही '—गुरुकी साखमे पश्चाताप क

ऐसे आत्माकी निंदा करे, 'निशल्य थइ –तीन प्रकार के सल रहित होवे अर्थात् किसी प्रकार की गुप्त बात न रखे ऐसा निर्मल होकर फिर आवते काल के 'सव्व पाणाइ वायाओ पच्चखामी' सर्वथा प्रकारे प्राणातिपात (जीव हिंसा) का पच्चखाण सोगन करे, हिंसा छोडे 'सव्व मुसावायं पच्चखामी'–सर्वथा प्रकारे झूट बोलने के पच्चखाण 'सव्व अदीन्न दाणाओ पच्चक्खामी'–सर्वथा अदत्ता दानका पच्चखाण करे 'सव्व मेहूण पच्चखामी'–सर्वथा, मैथूनका पच्चखाण करे ऐसेही 'सव —सर्वथा 'कोह'—क्रोध के, 'माण'—मान के, 'माय'—कपट के, 'लोहं'—लोभ के, 'राग'—प्रेम के, 'द्वेष'–द्वेष के, 'कलहं'–क्लेश के 'अभ्याख्यान'—खोटे आल देने के 'पैशून्य'—चुगली के, 'परपरावाद'—निंदा के, 'रत्यारत्य'—खुशी नाराजी के- 'माया मोसो'–कपट युक्त झूट के, 'मिथ्या दर्शण सल्य के'–जिनेश्वर के मार्ग सिवाय अन्य मजहब की श्रद्धा प्रतीत के, 'एव अठार पाप स्थानक पचखीने –यों १८ ही पाप के और जो इस जगतमें 'अकरणीज्ज जोग'–अकर्तव्य करने जोग काम नहीं हैं, ऐसे जगत निंद्य खोटे कर्म करने के 'पच्चखामि' पच्चखाण करे यहा पूर्वोक्त पचखाण कहातक कहा है कि 'जावजीवाय' जाव जीव, ताव, उम्मर तक, किसी भी प्रकारका पाप नहीं करुगा 'तिविह तिविहेण' –तीन करण और तीन योगसे यह पच्चखाण होते हैं, सो तीन करण नाम 'न करे मि' पूर्वोक्त काममें नहीं करुगा, 'न कारवेमी' दूसरके पास नहीं करावूगा, और 'करतंपि अन्नं न समणु जाणामि' ऐसा जो काम जो दूसरा कोइ करता होगा, उसको में अच्छा भी नहीं जानूगा तीन जोग 'मणसा'=मनसे इच्छु नहीं, 'वायसा'—वचनसे कहु नहीं, 'कायसा —कायासे करुं नहीं 'इम अठारे पाप पचखीने

यह तर्तसिके भागेस अठोरे पाप अकर्त्तव्यके त्याग करके फिर 'सव्व' सर्वथा प्रकारे, 'असण'—अन्नके, 'पाण' पाणीके, 'खाइम'=सुखडीके 'साइम—मुखवासके, 'चउविहंपि'—यह चारही आहार, ओर 'अधिक कहता जो कोइ खाने, पीने, सूंघणे या आखमें डालने की जो वस्तु है उन सर्वको पच्चखामी—पच्चखाण करके फिर 'जं' जो, 'पियं'—प्रियकारी, 'इम—ये प्रत्यक्ष 'शरीर शरीर' 'इठं इष्टकारी, अर्थात् जेमे इष्ट देव की भक्ती करते है, तैसे इसकी भक्ती करके पाला हुवा, 'कत' कत कारी, जैसे स्त्रीको भरतार वल्लभ लगता है, तैसे मुजको यह शरीर वल्लभ लगा, 'प्रिय प्रियकारि जैसे सत् पुरुषको सती स्त्री प्यारी लगती है, तैसे यह शरीर मुजे प्यारा लगा, (ओर भी इस दुनियामें शरीर से ज्यादा कोइ भी प्यारी वस्तू नहीं) 'मणुन्नं'-अच्छा उमदा मणाण'-मनोज्ञ मन गमता 'धीज' इस शरीरसे ही जीव धैर्य धर सकता है 'विसासियं'—इस शरीको जीवको पूर्ण विश्वास (भरोसा) है, 'समयं'—इस शरीको माननीय कर रखा है, 'अणुमय'—अणुतर प्रधान इस शरीरको ही जाण रखा है, 'बहुमयं' बहोत बंदोवस्त (हिफ़ाजत) करके इसको पाला इस शरीरपर कैसी ममत्व करी—कितनी यतना करी सो द्रष्टात से कहते हैं —'भन्ड करन्डग समाणं'—जैसे लाभी गृहस्थ गहणा (आभूषण) के करन्डीये (डब्बे) को हिफ़ाजत से रखता है, प्राण से ज्यादी जानता है, तेम इस शरीरका जापता किया तथा 'रयण करन्डग भूया' जेम देवता रत्नोंके भुषण के करनडियेको जापत स रखते है, तैसे इस शरीरका जापता करके रखा कीनस २ कामोंसे उपद्रवों स बचाया सो कहते है 'माणंसीया'—अब शीतकाल आगया, रखे मेरे बदनको शीत लगे, ऐसा विचार पाहिले से ही ऊन वस्त्र कोट, कमेज, साल दुसाल आदिका

दोवस्त कर रखा और सीत प्राप्त हुये चार ही तर्फ से ढांक हूप किं-
चेत हवा न लगने दी 'माण उन्ह' ग्रीष्म ऋतुमें गरमी से मेरा जीव
घबरायगा ऐसा जान पतले वस्त्र शीतादक वगैरे की तजवीज कर
ली, और शीतापचार के लिये अनेक पखे पंखाये क झपट, पुष्प
शय्या विगेरे से हवामहलमें लहरों लेते काल गुजारा 'माणंखुहा' रखे
मेरको भूख लगेगी, ऐसा विचार, पहिले ही खानपान, मेवा, मिष्टान,
इत्यादि इच्छित रुचिकर वस्तुका संग्रह कर रखा और क्षुधा प्राप्त होव
तब भोगव कर तृप्त हुये 'माण पिवासा' रखे मेरेको प्याम लगे
ऐसा विचार कर शीतोदक करने मटकी, कुँजे, वर्फ, गंड, सरवत इत्या
दि कइ वन्दोवस्त करके रखे और वक्त पर भोगव शात हुये 'माण-
वाला' रखे मुजे व्याल (सर्पादिक) जीव काटे, ऐमा विचार के
मन्त्र जडी प्रमुख योग्य वदावंस्त करके रखा 'माण चोरा' रखे मुजे
ठग चोर लुटार इत्यादि दुष्ट जन आकर सतावे, या मेरा धनादि हरण
करे, ऐसा समज ढाल तरवार वंदूक आदि शस्त्र, तथा सीपाइ, ताला
कुंभादादिकका पक्का वदावस्त करके रखा 'मण दंश मसगा' रखे
मेरे शरीरका डास, मच्छर, खटमल इत्यादि उपद्रव करे ऐसा विचार म-
च्छरदानी करे, या महा पापी हो धुवे से विचारे जीवोंको मार, अपने
वदनको अराम दिया 'माण वाहिया' रखे मेरे वदनमें कोइ प्रकारकी
व्याधी उत्पन्न होवे, तथा वाइ (वादी) करके मेरा शरीरको तकलीफ
होवे ऐसा विचार जुलावादि औषधका सेवन किया 'पीतीयं' रखे
मेरेको पित्तका उठाव होवे एसा विचार सुंठादिकके मोदक सेवन कर
जापता किया 'सभीमं' लेष्मका रोग उत्पन्न होवे ऐसा विचार खिफ-
लादिकका सेवन किया 'सन्नीवाइय' रखे सन्नी पात होवे यों विचार
उष्ण पदार्थका सवन किया, (यह मुख्य ३ त्रिदोष (रोग) के नाम
लिये) और भी इस जक्कम 'विरहा रोगायका' ज्वरादि अनेक प्रका
रके रोग करके शरीरको दुःख होवे ऐसा विचार, अनेक महा आरभ
करके औषधीयोंका सेवन किया तथा 'पारिसह' रखे मुजे शत्रु आ-

दिक की तर्फसे दुःख हाए, ऐसा विचार उसका बंदोस्त करे ' उवसग व्यंतरादिक देव की तर्फसे मुजे उपसग होवे, ऐसा विचार मन्त्र जः तावीजादिकसे बदोबस्त करे इत्यादि प्रकारे ' पासा फूंसति फसे दुःख 'फूसंति' फरसे (होवे) ऐसा विचार अनक प्रकारके बंदावस्त से इस शरीरको बचाया यह मेरी असमज हुइ, क्यों कि इतने वदो वस्त करने पर भी यह मुजे दगा देने लगा अब मै इस शरीरको ' चरमहिं ' चरम (छेला) ' उसास निसासेहिं ' श्वासोश्वास रह वह तक ' वोसिरामी ' वोसिराता हु, छोडता हू ममत्व भाव त्यागन करता हू, ❀ अब कूछ भी होवो तो मैं इस शरीरका नहीं, ओर यह शरीर मरा नहीं ' तिकट्ट ' ऐसा निश्चय धारकर, ओर पूर्वोक्त रितीसे इस शरीरको वोसीराकर ' काल अणव कख माणे विहरामि ' काल (मरण) की वाछा नहीं करता हुवा विचरे (रह)

ऐसी रितीसे समाधी मरण—सलेपणा—सथारा ग्रहण करे,समभाव रखे इस सलेपणा के पांच अतिचारका स्वरुप जानकर सर्वथा वर्जे

१ ' इह लोग सस पउगे ' इस लोक्के सुख की वाछा करे अर्थात् जो मेरे संथारेका फल होय तो मुजे मर पीछे यहां राज पद राणी पद, सेठ—सेठाणी पद, रिद्धी सिद्धी संपदा, सायबी पाउं रुपवत धनवंत, सूखी होवुं

---

* श्लोक—यस्त विज्ञानवान भवत्यमनस्का सदाऽशुचिः ।
नस तत्पदमाप्नोतिस सारचाधि गच्छति ॥ १ ॥
यस्तु विज्ञानवान् भवति समनस्कः सदा शुचिः ।
सतुत त्पद माप्नोति यस्माद् भूयो न जायते ॥ २ ॥

अर्थात्—जो विवेक रहित मनके पीछे चलता है वो सदा अपवित्र रहता है और शाश्वपद (मोक्ष) को प्राप्त नहीं होता है अर्थात् भ्रमन संसार में परिभ्रमण करता है १ और जो विवेक संपन्न मनको जीतने वाला निरंग्र शुद्ध भाव युक्त होता है वह उस आनन्द (मोक्ष) पद का प्राप्त होता है कि फिर उत्पन्न होना नहीं पडे

२ 'पर लोग संस पउगे' परलोक के सुख की अभीलाषा करे ...ता, देवागना, इद्र इद्राणी, अहमेंद्रादी देव दिव्य तेजवत होवू,ऐ- ... वाछा करी

यह दोनो तरह की वाठा करने योग्य नहीं हैं, क्यों कि इस वा...से वो वहुत करणीका फल थोडेमें नाश हो जाता है और करणी ...सीभी होवे तो वो फल व्यर्थ जाता है ऐसा जाण इस लोकपरलोकके ...चित फल की अभिलाषा न करे, सम प्रमाण रख एकात मोक्ष के सा- ...ने द्रष्टी रखके प्रवर्ते

३ 'जीवीया' सस उपगे 'सथारा लिये पीछे आयुष्य की आसा ...र अर्थात् महीमा पूजा देखकर ऐसी इच्छा करे कि में कैसा जैन ...र्म दिपा रहा हू, जो में वहूत जीवूगा तो जैन धर्म की वहूत महिमा ...गा, इसलिये मेरा मथारा वहुत दिन चले

४ 'मरणा संस पउगे' मरने की इच्छा करे अर्थात क्षुधा वे- ...नीका या अन्य वदनीका जोर जास्ती होय तो ऐसी इच्छा करे की जल्दी मरजावूं तो अच्छी वात

यह दोनो प्रकारके विचार करना अयोग्य हे क्यों कि ऐसी ...च्छासे कुछ आयुष्य कमी जास्ती होता नहीं है जितना वाधा है, ...तना ही भोगवना पडेगा, परन्तु कर्म बध हो जाते हैं

५ 'काम भोग सस पउगे' काम भोग रुप सुख मिलने की ...भिलाषा करे अर्थात इस करनीका फल होवो तो चक्रवर्त वलदेवके ...स, भी वेवी कामधेनु इत्यादि रिद्धी, राग रागणीयो नाटक, चेटक, ...गध, खान, पान, स्त्री यादि सबंधी भाग इत्यादिक प्राप्त होवो, ऐसी ...च्छा करे

इन पांच ही प्रकारके कू विचारोंसे आत्मा को निवारके सदा ...र्म ध्यान, शुक्ल ध्यान ध्याता प्रवर्ते

दिक की तर्फसे दुःख हाए, ऐसा विचार उसका बंदोबस्त करे ' उवस
व्यंतरादिक देव की तर्फसे मुजे उपसग होवे, ऐसा विचार मन्त्र
तावीजादिकसे बदोवस्त करे इत्यादि प्रकारे ' पासा फुंसति ' फ
दु ख 'फुसंति' फरसे (होवे) ऐसा विचार अनक प्रकारके बंदाव
से इस शरीरको बचाया यह मेरी असमज हुइ, क्यों कि इतने ब
वस्त करन पर भी यह मुजे दगा देने लगा, अब मैं इस शरीर
' चरमहिं ' चरम (छेला) ' उसास निसासेहिं ' श्वासोश्वास रह
तक ' वोसिरामी ' वोसिराता हुं, छोडता हु ममत्व भाव त्यागन क
हु, ✻ अब कुछ भी होवो तो मैं इस शरीरका नहीं, और यह शरीर
नहीं ' तिकट्ठ ' ऐसा निश्चय धारकर और पूर्वोक्त रितीसे इस शरी
वोसीराकर ' काल अणव कख माणे विहरामि ' काल (मरण) की वां
नहीं करता हुवा विचरे (रहे)

ऐसी रितीसे समाधी मरण–सलेषणा–संथारा ग्रहण करे,समभ
रखे इस सलेषणा के पांच अतिचारका स्वरुप जानकर सर्वथा वर्जे

१ ' इह लोग सस पउगे ' इस लोकके सुख की वांछा करे
र्थात् जो मेरे संथारेका फल होय तो मुजे मर पीछे यहा राज प
राणी पद, सेठ–सेठाणी पद, रिद्धी सिद्धी संपदा,सायबी पाउ रूप
वनवंत, सुखी होउं

✻ श्लोक–यस्त विज्ञानवान भवत्यमनस्का सदाऽशुचिः ।
नस तत्पदमाप्नोतिस सारंचाधि गच्छति ॥ १ ॥
यस्तु विज्ञानवान् भवति समनस्कः सदा शुचिः ।
सतुत त्पद माप्नोति यस्माद् भूयो न जायत ॥ २ ॥

अर्थात्–जो विवेक रहित मनके पीछे चलता है वो सदा अपवित्र
रहता है और शान्तपद (मोक्ष) को प्राप्त नहीं होता है अर्थात् म
नंत संसार में परिभ्रमण करता है १ और जो विवेक संपन्न मनको
जीतने वाला निरंत्र शुद्ध भाव युक्त होता है वह उस आनन्द (मोक्ष
पद को प्राप्त होता है कि फिर उत्पन्न होना नहीं पडे

तराह नाश न होता है शरीर रहा ता क्या, और गया तो क्या? ा और जाते मेरा स्वभाव तो एक्साही रहेगा फिर शरीरके विनाश चिंताका क्या कारण?

६ हे जिनेंद्र! इतने दिन में जानता था कि यह शरीर मेरा हैं ु अव मुजे सत्यभास हुवा कि यह शरीर किसीका न हुवा, और होगा जो मेरा होता तो मेरे हुकममें क्यों नहीं चला? यह प्रत्यक्ष । जरा और मृत्यू अवस्थाको क्यों प्राप्त होता है?

७ अरे भोले जीव! इस शरीरको माता पिता पुत्र वनावे, इ भगिनी भ्रात वनावे, पुत्र पुत्री तात वनावे, स्त्री भरतार वनावे, तेरा जाने, यह एक शरीर इतनेका कैसे होव? जो होवे तो कोइ का विनाश होते रख लेवे! इस लिये शरीर और कुटुम्ब कोइ भी । नहीं है तूं सर्व से भिन्न चिदात्मक पदार्थ है

८ यह सपत तो-जैसे इन्द्रजाल का माया वदल की छाया, म राज, दुर्जनकाज, जैसी क्षणभगूर है तूं क्यों मोह धरता है?

श्लोक-वाला यौवन सपदा परिगत क्षिप्र क्षितौ लक्ष्यते ।
वृद्धत्वेन युवा जरा परिणतो व्यक्तं समा लोक्यत ॥
साऽपि क्कापिगत कृतान्त वशत्तो न ज्ञायते सर्वथा ।
पश्यै तद्यदि कौतक किमपरैं रैतैरिन्द्र जाले सखे ॥ १ ॥

अर्थात्-अहो मित्र यह तेरा शरीर काल के वश हुवा स्वभाव सदा इन्द्रजाल क जेसा तमाशा करता है, इस तो तूं जरा ज्ञान ष्टि कर के अवलोकन कर, देख! एक वक्त यह शरीर बालक वजता ा उस वक्त इसकी छवि वडी रम्यमनहर लगती थी और फिर पुद्‌ग ों के प्रावृतन से यही शरीर यौवन अवस्थाको प्राप्त हुवा तब इसकी मजव ही सुशोभित रगत हुइ और कुछ कालान्तर से यह शरीर वृद्ध अवस्थाको प्राप्त होते एक वडी निंदनिय दुगछनिय अपनेको स दिंदित वनाने वाला वन जाता है तो अन्यका कहनाही क्या! ऐसा स शरीर का प्रत्यक्ष तमाशा देखते भी इस परसे ममत्व मयोंकी नि

१७ जेसे भोग भूमी के मनुष्य–जुगलियेंको इच्छीत सुख प्र नेवाले कल्पवृक्ष होते हें, और कल्पवृक्ष का स्वभाव हे कि उसक नीच बेठ शुभाशुभ जेसी वाच्छा करे वेसे फलकी प्राप्ती होती हे, तेसे अपन इच्छा पूरनेवाला कल्पवृक्ष समान यह मृत्यू प्राप्त हुआ हे, अब इसके छायामें बेठ कर जो अशुभ इच्छा विषय कषायदिक धारण करोग त नर्क तिर्यचादि अशुभ गती प्राप्त होगी और सम, समवेग, त्याग, त, नियम, सत्य, सील, क्षमा, सतोष, समाधी भावका सवन करोगे त स्वर्ग सुख के भुक्ता हो एक भवसेमोक्ष प्राप्त करोगे

१८ जरजरित अशुची अपवित्र देह से छुडाकर देव जेसा दि व्य रुप मरण ही दे सक्ता हे

१९ जेसे मुनी महाराज अनेक नय उपनय प्रत्यक्ष परोक्ष द्रष्टं तों से शरीरका स्वरुप बताकर ममत्व दूर कराते हें, तेसे यह मेरे बदनमें रोग पेदा हुवा हे सो मेरेको प्रत्यक्ष प्रमाणसे उपदेश कर्ता हे कि हे पु रुष' तुं इस शरिर पर क्यों ममत्व करता हे? यह देह तेरी नहीं हे, यह तो मेरे पती (काल) की भक्ष हे!

२० जहा तक इस शरीरमें किसी प्रकार की व्याधी न होए वहां तक इस उपरसे ममत्व न उतरे, और विशेष २ इस की पोषणा कर पुष्ट करे यों पोसते २ ही जब रोग प्राप्त होता हे, और अनेक उ पचार करते रोग नहीं मिटता हे, तब इस देह उपरसे स्वभाविक ही प्रेम कमी हो जाता हे इसलिये मुनीराजसे भी ज्यादा उपदशक–देह से ममत्व छोडानेवाला उपकारी मेरे तो रोग ही हुवा हे

२१ रे जीव ' इस रोगको देखकर जो तू घबराता होय, सचमुच जो तुजे रोग खराब लगता होय,इस दु:खसे कटाला आता होय, तो, बाह्य औषधीयोंका सेवन छोड, क्यों कि यह रोग कर्माधीन हे और औषधीयोंमें कुछ कर्मको हटाने की सत्ता नहीं हे कदापि औषधोपचा रस एकवा रोग मिट गया तो क्या हुवा? मिठा रोग तो सं ख्यात असख्यात कालमें पीछा प्राप्त हो जाता हे इसलिये जिनेंद्र रुप

र्व रोग और सर्व चिकित्साके ज्ञाता महा वैद्य की फरमाइ हुइ समा
ो मरण रुप महा औषधीका सेवन कर, की जिससे सर्व आधी व्या
ो उपाधीका नाश हो अजरामर अनत अक्षय अव्याबाध मोक्ष सुख
मेले.

२२ जो वेदनाका उठाव ज्यादा होय तो आप मनमें ज्यादा
ुशी होय की जैसे तिव्र तापसे सुवर्ण शिघ्र निर्मल होता है, तैसे इ
ा तिव्र वेदनीसे मेरे कर्म रुप मेल शिघ्र दूर होगा ऐसा विचार वेदनीका
ुख समभाव सहन करे

२३ नर्कमें तेने परवश पणे अनंत वेदना सहन करी, परतु जि-
नी निर्जरा न हुइ, उत्नी निर्जरा अबी जो तू समभाव रख कर सहेगा
ो तुजे होगी

२४ जो देनदार नम्रतासे साहुकारको सो रुपेके बदले ७५ रुपे
देकर फारकती मागे तो मिल सक्ती है और करडाइ करे तो सवाये दा-
म देनेसे भी छूटका होना मुशकिल है तैसे यह कर्म रुप लेनदार लना
लेने खडे है, तो तु नम्रतासे इनको देना चुका फारकती लेनेका प्र-
यत्न कर, फारकती ले छुटका कर

२५ यह तो जरुर जान दिया विन मोक्ष कदापि न मिलेनकी

२६ जैसे भाव आनेसे निर्माल्य वस्तुको बचकर वनिक महा ला
भ प्राप्त करता है, तैसे ही जो स्वर्ग मोक्षके अतिंद्रीय सुख मुनी महा
राज पांच महाव्रत इन्द्रियदमनादि अनेक जप तप संयम करके प्राप्त कर
ते है वो सुख प्राप्त करनेका यह मृत्यू रुप अत्युत्तम मोका (अवसर)
आया है सो अब जरा समभाव धारण कर, जिससे स्वर्ग मोक्ष सुखका
भोक्ता होय

२७ रे आत्मन्! तेने इतने दिन जो ज्ञानादिकका अभ्यास
किया है सो इस समाधी मरणमें सम प्रणाम रखनेके लिय, सो अब
याद कर

२८ जिस वस्त्रको वापरते बहुत दिन होजाते है, जिससे विशेष

परिचय होता है, उससे स्वभावस ही मोह कमी होता है, तैसे ही इस शरीरसे जान

यों शरीरसे ममत्व उतरी हुइ देखकर, कोइ कहे कि, यह शरीर तो तुमारा नहीं है, परतु इस मनुष्य जन्मके शरीर की पर्यायको प्राप्त होकर शुद्ध उपयाग व्रत संयमका साधन करते हो, इस लिये ऐसे उपकारी शरीरका रक्षण करना उचित है, परन्तु विनाश नहीं करना

तो उसका समाधान यह है कि—अहो भाइ ? तुमारा कहना सत्य है, हम भी यों ही जानते हैं, कि मनुष्य जन्ममें ही आत्म सिद्धि का आराधन हो सक्ता है, ऐसा दूसरमें होना दुर्लभ है परन्तु जिस काम निपजानेको यह शरीर पाये है, वो निपजे वहा तक यह शरीर कुछ हमारा वैरी नहीं हैं कि जिससे हम इसका विनाश करे, परन्तु हम प्रयत्न करते न रहे तव क्या इसके विनाश होते आत्म गुणका तो विनाश नहीं किया जाय ! जैसे साहुकार वैपार कर द्रव्य कमानेको दुकान कि हिफाजत कर रखता है, ओर उस दुकानके साहास अनेक द्रव्य उपार्जन कर उसमें रखता है, कोइ वक्त उस दुकान में अग्नि प्रयोग होनसे लाय लगे, तब वो वेगरी उसका उपाय चल वहांतक तो उस दुकानका और धनका दोनो का रक्षणका उपाय करता है इतनेपर भी जो दुकानका नहीं बचती देखे ता उसमें से अपना धन छोड उपाय कर बच जितना बचाता है, परन्तु दुकानके पीछे अपना धन नहीं गमाता है, तैसे ही यह शरीर रुपी दुकान के साहास अनंत आत्म गुण तप संयम की कमाइ होती थी, और इसपर किसी प्रकार का विघ्न नहीं होवे वहातक इसको खानपान वस्त्रादिक की साहायता देरखी, और राग रुप अग्नी प्रयोग होते औषध उपचार कर ही बचाया परन्तु अब मृत्युरुप महा लाय (अग्नी) लगी है, यह कोइ भी उपाय से नहीं बूजे, दुकान नहीं बचती दिखे, इसलिये हम हमारे आत्म गुण की हिफाजत करने इस झोपडीको जलती छोड, आत्म गुणकी संभाल करनेमें लगे है जो हमारे को इस देह की कुछ परवा नहीं है

ात्म गुण के पासायसे सब सुख प्राप्त कर सकेंगे ऐसा जाण भेद विज्ञानी
रुप समाधी मरण करतो वक्त सथारे सलेषणामें किंचित् ही प्रणामो
ा अस्थिरता न करे

आतिक शुद्धी के ४ ध्यान *

पूर्वोक्त रीती से प्रणाम की स्थिरता करके चित समाधी से
त्तरोत्तर ४ ध्यान धरे

१ 'पदस्थ' प्रथम तो नवकार लोगस्स नमोथ्थूण वगैराका
मरण करे

२ 'पिंडस्थ' देहका स्वरुप, तथा लोकका स्वरुप दूसरे प्रकरण
' कहा सो विचारे देह चेतन्य की भिन्नता लेखे, और विचारे कि
ा इस ससार में कुछ सार होता तो इसे तिर्थंकर भगवान क्यों छो
ते ? इत्यादि विचार

३ "रूपस्थ" अरिहंत प्रभू के गुण पहिले प्रकरणमें कहे प्र
ाणे, तथा अरिहत की शक्ती और आत्म शक्ती की एकत्वता करे.

४ "रुपातीत" सिद्ध के गूण और सिद्ध स्वरुप से अपनी
मात्मा की एकत्रता कर, कि मेरी आत्मा सिद्ध जेसी सत्-चित्—
आनद युक्त अनत अक्षय अव्याबाध अनन्त ज्ञानमय, अनत दर्श-
मय अनत चारित्रमय, अनत तपमय, अनत वीर्यमय, अरुपी, अ
खंड, अजर, अमर, अविनासी, अकषायी, अनुपाधी, शांत स्वरुप
सिद्ध स्वरुपमय है

श्लोक—अशब्द मस्पर्श मरुप मव्यय ।
तथा ऽ रस नित्य मगन्ध वच्चयत ॥
अनाद्य नन्त महतः पर ध्रुव निचायत
मृत्यु मुखा त्प्रमुच्यत ॥ १९ ॥ कठ प । वग तृतिय वल्ली

अर्थात—शब्द स्पर्श रस रूपगन्ध इनसे रहित अविन्यासी सदा
एकसा उत्पन्न प्रलयरहित अनत अति—सुक्ष्म अचल इतने गूनासे जो

* इन चार ध्यानोंका विस्तार से अवलोकन करने मरि वनाइ
हुइ ध्यान कल्पतरु पुस्तक का अवलोकन कीजीयेजि

संयुक्त ऐसे परमात्मा को जानने से प्राणी मृत्यु से छुट जाता है, अर्थात् वो भी वैसाही बन जाता है

ऐसी शुद्ध भावना शात चित से भावते सर्व जीव की साथ मित्र भाव रखते अनुकूलता—निश्चलता-समाधी भाव से देह मुक्त हो, सर्व सूख स्वर्ग सुख इद्र अहेमद्रादिक के पदका भोक्ता होय एकांत उज्वल सम्यक द्रष्टीपणा पाय वहासे आयूष्य, भवस्थितिका क्षय कर, उत्तम जाती कुल के विपे जन्म ले. पूर्व धर्मके पसायेस विषय भावमें अलुब्ध हुवा २ सयम आराध, शुद्ध किया यथाख्यात चारित्र कि आराधना कर चार घनघातिक कर्मका अत कर, केवल ज्ञान प्राप्त करे फिर भूमंडके अनत जीवोंपर अनत उपकार कर आयूष्यके अत बाकीके चार अघातिक कर्मका क्षय कर, समाधी युक्त अनत अक्षय अव्यबाध मोक्ष-सिद्ध सुख पावे

ॐ शांति, शांति, शांति,

एसे धम्मे धुय नितीए, सासए जिण देशीय।
सिझा सिझसि चाणण, सिझासति तहावरे तिबेमी॥

यह सूत्र और चारित्र धर्मका सविस्तर यथामति बयान किया सो धर्म ध्रुव (निश्चल) है, नित्य (सनातन) है, शाश्वत (अनत) है श्री जिनेश्वर भगवानने द्वादस जातकी प्रपदोंमे प्रगट उपदेशा है इस धमको यथा तथ्य आराधकर गये कालमें अनत जीव मोक्ष गतीको प्राप्त हूए हैं, वर्तमान काल में सख्याते जीव मोक्ष सुख प्राप्त कर रहे है, और इस ही धर्मको आवते कालमे अनत जीव आराधकर मोक्षके अनत सुखको प्राप्त करेंगे

और इस वक्तमें ये ही धर्म सर्व जीवको—' हीयाए ,—हितका कर्त्ता, ' सुहाए ' सुखका कर्त्ता, ' खेमाए'—क्षेम—कल्याणका कर्ता, ' निसेसाए '—आत्माका निस्तारका कर्ता, ' अणुगामी भवीस्सइ '— अनुक्रमें सिद्ध गतीका देनेवाला होगा

तथास्तु

वि ज्ञा प्ती

सुज्ञ पाठक गण ! इस " जैनतत्व प्रकाश " ग्रंथ, कि जो सर्व श्री जि
नेश्वरने फरमाये हुये मुल सुत्रों की साहायसे व कितनेक ग्रंथों
और विद्वानों की साहायसे तयार किया है इसमें जो कुछ
दोष होवे जो याजूपर रख उसमेंका सदुपदेश तर्फ ही दृष्टी
रखना और इस तरह गुणानुरागी हो अपनी आत्माको
लाभ पहुचाना ऐसी प्रार्थना है क्या कि भव्य जीवों
को लाभ पहुचानके लिये ही मैंने य तकलीफ उ
ठाइ है मैं नहीं समझता हु कि मैं विद्वान हु
परन्तु परोपकारकी बुद्धीसे य साहास किया
है इस लिय मेरे आशापर दृष्टि रख
दोषोंको क्षमा कर गुण ही
लेनकी विनती है

ता १ अक्टोबर १९११ ग्रंथ २

फाटक आणि क० यांचे छा० छा० रेसिडेंसी बाजार हैद्राबाद दक्षिण